सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

४८

(सितम्बर १९३१ – जनवरी १९३२)

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय
भारत सरकार

भूमिका

इस खण्डमें १२ सितम्बर, १९३१ से ३ जनवरी, १९३२ तककी सामग्री दी गई है। इन दिनों लन्दनमें गोलमेज परिषद्का दूसरा अधिवेशन चल रहा था और कांग्रेसके एकमात्र प्रतिनिधि या राष्ट्रीय स्वरके एकमात्र प्रवक्ताके रूपमें गांधीजी भी उसमें शामिल हुए थे। इस परिषद्में गांधीजी "शान्ति-सुलह स्थापित करनेके उद्देश्य" (पृष्ठ २) से शामिल हुए थे, क्योंकि देशमें "काफी उथल-पुथल और लड़ाई-झगड़े हो चुके" (पृष्ठ १) थे, और यदि कोई समाधान ढूँढ़ा जा सकता था तो प्रयत्न करके देख लेना आवश्यक था। वसे, परिषद्के परिणामोंके सम्बन्धमें गांधीजी आरम्भसे ही शंकाग्रस्त थे। भारतके वातावरणमें उन्हें इस बातका कोई लक्षण दिखाई नहीं देता था कि अंग्रेजोंके हृदयमें कोई परिवर्तन हुआ है और वे सत्ताके त्यागके लिए तैयार हैं। इसलिए उन्होंने बहुत संकोच-विकोचके बाद परिषद्में भाग लेनेकी स्वीकृति दी थी। गांधीजी की आशंका निराधार नहीं थी। लन्दनमें सप्ताह-भरके अन्दर ही वे सरकारी मन्तव्योंकी "घोर अनिश्चिततासे अधीर हो उठे" (पृष्ठ २९), और ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, उन्हें इस बातकी अधिकाधिक प्रतीति होती गई कि "भारत तथा कांग्रेसके विरुद्ध खड़ी ताकतोंका" उन्होंने "गलत अन्दाजा लगाया था" (पृष्ठ २५३)। इस प्रकार परिणामकी दृष्टिसे तो गांधीजी अपने शान्ति-सुलहके उद्देश्यमें प्रायः विफल ही हो गये, किन्तु उन्होंने अपने इस लन्दन-प्रवासको निरर्थक नहीं जाने दिया। उन्होंने इस अवसरका उपयोग इंग्लैण्डके लोकमतको भारतकी परिस्थितियोंसे अवगत करानेके निमित्त किया, और साथ ही ब्रिटेन तथा भारतकी नई साझेदारीकी अपनी कल्पनाको इंग्लैण्डके प्रभावशाली जनोंके मानसमें प्रतिष्ठित करनेका प्रयास किया। उनकी कल्पनाकी इस नई साझेदारी का आधार शासक और शासितका सम्बन्ध नहीं, वरन् दो समकक्ष मित्रोंका सम्बन्ध था, और इस साझेदारीका उद्देश्य मात्र पारस्परिक हितोंको साधना नहीं, बल्कि अखिल विश्वका कल्याण करना था। इंग्लैण्डसे लौटते हुए उन्होंने विलेन्यूवमें रोमाँ रोलाँसे भेंट की। कुछ समय वे इटलीमें रुके तो वहाँ मुसोलिनीसे भी भेंट की और फिर वैटिकन सिटीके भी दर्शन किये, "जहाँ क्रूसपर चढ़े ईसा मसीहकी सजीव प्रतिमाको" देखकर वे भाव-विभोर हो उठे। अपनी यात्राका संक्षिप्त विवरण देते हुए उन्होंने स्वयं लिखा, "उस जीवन्त दृश्यने मुझे इस तरह बाँध लिया था कि वहाँसे अलग होते हुए मुझे लगभग वियोगका दुःख अनुभव हो रहा था। वहाँ मुझे यह समझते देर नहीं लगी कि व्यक्तिके ही समान राष्ट्रका निर्माण भी शूलीकी पीड़ा, कष्टोंकी आँच सहनेसे ही सम्भव है" (पृष्ठ ४८०)।

गांधीजी की दृष्टिमें भारतके संघर्षका, राजनीतिक स्वतन्त्रतासे परे, एक व्यापकतर, एक नैतिक महत्त्व था। जब गांधीजी का जहाज ब्रिटेनके तटको छूनेवाला था, तभी 'ईवनिंग स्टैंडर्ड'के माध्यमसे विश्वको अपना सन्देश देते हुए उन्होंने कहा: "यदि भारत सत्य और अहिंसाके बलपर स्वतन्त्रता प्राप्त कर लेता है तो मुझे पूरा विश्वास है कि विश्व-शान्तिके क्षेत्रमें इस युगका यह सबसे बड़ा योगदान होगा" (पृष्ठ १)। अमेरिकाको दिये एक सन्देशमें इसी विषयको पल्लवित करते हुए उन्होंने कहा: "संसार रक्तपातसे बिलकुल तंग आ गया है। वह अपने उद्धारका कोई नया रास्ता ढूँढ़ रहा है और . . . नये रास्तेके लिए व्याकुल संसारको वह रास्ता दिखानेका गौरव-पद शायद इस प्राचीन देश भारतको ही प्राप्त होगा" (पृष्ठ १०)। भारतकी राष्ट्रीयताको गांधीजी अन्तर्राष्ट्रीयताकी भावनासे भिन्न नहीं मानते थे, क्योंकि "जिस क्षण हम सत्य और अहिंसारूपी साधनका सहारा लेते हैं उसी क्षण हमारी देशभक्ति अन्तर्राष्ट्रीयतामें परिवर्तित हो जाती है।" इसलिए उनकी दृष्टिमें, इन साधनोंके द्वारा भारतकी स्वातन्त्र्य-प्राप्तिमें अन्ततः विश्वका कल्याण निहित था (पृष्ठ ४)। लन्दनमें भारतीय विद्यार्थियोंकी एक सभामें उन्होंने स्पष्ट शब्दोंमें कहा, यह बात स्वयं ब्रिटेन की जनताके हितमें है कि परिषद् सफल हो। कारण, "पंजाबमें मैंने ब्रिटिश स्वभाव के घिनौने रूपको जाना है। . . . मेरा उद्देश्य अपने पास उपलब्ध सभी साधनोंसे इस तरहके दुष्काण्डको रोकना है। अपने लोगोंके कष्टोंको रोकनेसे भी अधिक मुझे मानव-स्वभावके पाशवीकरणको रोकनेकी चिन्ता है। . . . जो लोग अपना पाशवीकरण कर लेते हैं वे न केवल अपने-आपको, बल्कि मानव-जातिको भी नीचे ले जाते हैं" (पृष्ठ १६१)। उनका विचार था कि चूँकि हम सब एक ही परम पिताकी सन्तान हैं और सबमें एक ही परम तत्त्व व्याप्त है, इसलिए "हम प्रत्येक व्यक्तिके — चाहे वह हमारी जातिका हो या किसी औरका — पापके भागीदार हैं" (पृष्ठ १६१)।

परिषद्में होनेवाली राजनीतिक चर्चामें गांधीजी ने जो रुख अपनाया उसका आधार कांग्रेस द्वारा उनको दिया गया कार्य-निर्देश था। इस निर्देशमें कांग्रेसने पूर्ण स्वराज्यकी राष्ट्रीय माँगको दोहराया था। पूर्ण स्वराज्यका मतलब था शासनके अन्य विषयोंके अतिरिक्त सेना, वित्त और परराष्ट्र-नीतिपर भी जनताका पूर्ण नियन्त्रण। गांधीजी को जो-कुछ करना था, इस राष्ट्रीय माँगको ध्यानमें रखकर ही करना था। हाँ, उन्हें ऐसे छोटे-मोटे "फेर-बदल करनेकी छूट" अवश्य दी गई थी "जो भारतके हितके लिए स्पष्टतः आवश्यक हों" (पृष्ठ १९)। इस कार्य-निर्देशमें गांधीजी को ब्रिटेनके साथ ऐसी साझेदारी कायम करनेकी गुंजाइश भी दिखाई दी जिसमें दोनों पक्षोंको पूरी बराबरीका दर्जा हासिल हो और प्रत्येकको अपनी इच्छानुसार उससे अलग होनेका अधिकार हो। इसी लक्ष्यको ध्यानमें रखकर उन्होंने गोलमेज परिषद्की संघ-संरचना समितिके समक्ष कहा: "ये दो महान् राष्ट्र मिल-जुलकर क्या नहीं कर सकते? एक ओर आपका यह राष्ट्र है — संख्यामें थोड़े किन्तु बहादुर

लोगोंका राष्ट्र, जिसकी बहादुरीका इतिहास इतना उज्ज्वल है कि उससे अधिक उज्ज्वल इतिहास शायद दुनियाके किसी भी राष्ट्रका नहीं होगा . . . और दूसरी ओर हमारा यह अत्यन्त प्राचीन राष्ट्र है — करोड़ों लोगोंका यह राष्ट्र, जिसका अपना एक प्राचीन और गरिमामय इतिहास है, जो आज हिन्दू और इस्लाम इन दो महान् संस्कृतियोंका प्रतिनिधित्व करता है" (पृष्ठ २१)। अपने इस इंग्लैण्ड-प्रवासमें गांधीजी ने परिषद्के अन्दर और उसके बाहर जो अनेक भाषण और वक्तव्य दिये, उनमें इस साझेदारीके विचारका उल्लेख उन्होंने बार-बार किया।

परिषद् और उसकी विभिन्न समितियोंकी बैठकोंके दौरान जिन विवादास्पद प्रश्नोंकी चर्चा हुई उनके सम्बन्धमें गांधीजी का दावा यह था कि कांग्रेस ब्रिटिश भारत और देशी नरेशोंके अधीनस्थ भारत, दोनोंके करोड़ों मूक और अभावग्रस्त जनोंका सच्चा प्रतिनिधि करती है और इन मूक मानवोंके हितोंके समक्ष समाजके शेष सभी वर्गोंके हितोंको गौण बनकर रहना पड़ेगा। अतः, उन्होंने वयस्क-मताधिकारका पक्ष-पोषण किया और इस बातका विरोध किया कि संविधानमें ब्रिटेन या भारतके किसी भी विशेष वर्गके हितोंको संरक्षण दिया जाये। इसी प्रकार उन्होंने मुसलमान और सिख, इन दो बड़े अल्पसंख्यक समुदायोंके अतिरिक्त अन्य किसी भी वर्गको विशेष प्रतिनिधित्व दिये जानेका विरोध किया। किन्तु देशी नरेशोंकी विशेष स्थितिको स्वीकार करते हुए उनके प्रति उन्होंने समझौतेका रुख अपनाया और उनसे जो-कुछ कहा, वह उनकी उदारताकी वृत्तिपर भरोसा रखते हुए ही कहा। देशी नरेश संघमें शामिल होनेको तैयार थे, इसके लिए गांधीजी ने उनकी बड़ी प्रशंसा की, लेकिन "आम जनताके बीचसे आनेवाले, आम जनताके आदमी और समाजके निम्नतम वर्गका प्रतिनिधित्व करनेके लिए" प्रयत्नशील व्यक्तिकी हैसियतसे उन्होंने उनसे अनुरोध किया कि "वे जो भी योजना बनाकर समितिके स्वीकारार्थ पेश करें उसमें" भारतके दीन-दुःखी जनोंको ध्यानमें रखकर उनके द्वारा दिये गये एक-दो "सुझावोंको भी स्थान दें" (पृष्ठ ३२)।

उस समयकी राजनीतिक विचारधाराके सन्दर्भमें गांधीजी का वयस्क-मताधिकारका सिद्धान्त लोगोंको बड़ा क्रान्तिकारी जान पड़ा। किन्तु गांधीजी "गाँवके गरीबसे-गरीब लोगोंके बीच हिल-मिलकर" रह चुके थे और अपने निजी अनुभवोंके आधारपर उन्हें जनसाधारणके प्रभुत्वसे कोई भय नहीं लगता था। इसके विपरीत उनकी धारणा तो यह थी कि "गरीबोंके बीच, खुद अस्पृश्योंके बीच . . . मानवताके कुछ सर्वोत्कृष्ट नमूने" देखनेको मिल सकते हैं (पृष्ठ ३४)। उन्होंने कहा कि वयस्क-मताधिकारसे न केवल मुसलमानोंकी, बल्कि दलित वर्गों, ईसाइयों और श्रमिक वर्गों, सबकी उचित आकांक्षाओंकी पूर्ति होगी। किन्तु मतदाताओंकी बड़ी संख्यासे जो कठिनाइयाँ उत्पन्न हो सकती थीं, उन्हें दूर करनेके विचारसे उन्होंने गाँववार निर्वाचक इकाइयोंपर आधारित अप्रत्यक्ष निर्वाचन-पद्धति अपनानेका सुझाव रखा। इस पद्धतिके

अनुसरणसे प्रत्याशी और मतदाताके बीच सीधा सम्पर्क स्थापित हो सकता था। लेकिन परिषद्में इस सुझावको समर्थन नहीं मिला, यहाँतक कि अल्पसंख्यक समुदायोंके प्रतिनिधियोंकी ओरसे भी नहीं।

कांग्रेसने एक संयुक्तक निर्वाचक-मण्डलकी योजना बनाई थी, जिसमें मुसलमानों और सिखोंके लिए स्थानोंके आरक्षण और उनके धार्मिक अधिकारोंको संवैधानिक संरक्षण देनेकी व्यवस्था थी। लेकिन अगर यह योजना स्वीकार न हो तो कांग्रेस हिन्दू, मुसलमान और सिख प्रतिनिधियोंको स्वीकार्य कोई भी अन्य समाधान मान लेनेको तैयार थी। गांधीजी ने अनौपचारिक वार्ता द्वारा तीनों समुदायोंके प्रतिनिधियोंके बीच कोई समझौता करानेका पूरा प्रयत्न किया, लेकिन वह फलित नहीं हो सका। अन्तमें प्रतिनिधिगण इस बातपर सहमत हो गये कि यह प्रश्न प्रधान मंत्री रैम्जे मैकडॉनाल्डके निर्णयपर छोड़ दिया जाये। प्रतिनिधियोंने प्रधान मंत्रीके पास इस आशयका जो अनुरोध भेजा, उसपर गांधीजी ने हस्ताक्षर नहीं किये; क्योंकि उनकी रायमें मैकडॉनाल्ड जो पंचनिर्णय देते वह व्यक्तिकी हैसियतसे नहीं, बल्कि प्रधान मंत्रीके रूपमें देते।

दलित वर्गोंके लिए पृथक् निर्वाचक-मण्डलकी व्यवस्थाका गांधीजी ने प्रबल विरोध किया। उनकी मान्यता थी कि ऐसी व्यवस्थासे तो "हिन्दू समाज दो सशस्त्र छावनियोंमें बँट जायेगा" (पृष्ठ १७७)। डॉ० अम्बेडकरकी पृथक् निर्वाचक-मण्डलकी माँगके पीछे जो मनोभावना काम कर रही थी उसके औचित्यको उन्होंने पूरी तरहसे स्वीकार किया, किन्तु साथ ही कहा कि "उन्हें [डॉ० अम्बेडकरको] जो भारी अन्याय भोगना पड़ा और शायद जो कटु अनुभव हुए हैं उनके कारण उनका विवेक कलुषित हो गया है" (पृष्ठ ३३०)। दलित वर्गोंके लिए पृथक् निर्वाचक-मण्डलकी व्यवस्थामें उन्हें अस्पृश्यताके स्थायी बन जानेकी सम्भावना दिखाई दी। उन्होंने पूछा कि "क्या अछूत सदा अछूत ही रहेंगे? . . . अस्पृश्यता जीवित रहे, इसकी अपेक्षा मैं यह अधिक अच्छा समझूँगा कि हिन्दू धर्म डूब जाये" (पृष्ठ ३३०)। उस माँगके स्वीकृत हो जानेसे "हिन्दू धर्ममें जो विभाजन" होता, वह उन्हें असह्य था। उन्होंने सम्पूर्ण गम्भीरताके साथ घोषणा की कि "इस चीजका विरोध करनेवाला यदि मैं अकेला रहूँ, तो भी मैं अपने प्राणोंकी बाजी लगाकर इसका विरोध करूँगा" (पृष्ठ ३३१)। और चन्द महीने बाद ही यरवडा जेलमें आमरण अनशन आरम्भ करके गांधीजी ने अपने इस संकल्पको साकार कर दिखाया।

यूरोपीय समुदायकी विशेष प्रतिनिधित्वकी माँगका विरोध करते हुए उन्होंने उस समुदायके प्रतिनिधियोंको स्मरण दिलाया कि आजतक "यूरोपीयोंका वर्ग विशेष सुविधा-प्राप्त वर्ग रहा है। उन्हें वह सारा संरक्षण प्राप्त रहा है जो यह विदेशी सरकार उन्हें दे सकती थी।" इसलिए गांधीजी ने उनसे अनुरोध किया कि "वे कुछ दिन अपने हितोंके लिए विशेष सुरक्षाकी माँग करना छोड़कर आम जनताकी सद्भावनापर निर्भर

रहनेकी कोशिश करके तो देखें" (पृष्ठ ३९)। वह वर्ग केवल विशेष प्रतिनिधित्वकी ही नहीं, अपने व्यापारिक हितोंको संवैधानिक संरक्षण दिये जानेकी भी माँग कर रहा था। गांधीजी ने उसकी इस माँगका विरोध भी उतनी ही दृढ़ताके साथ किया। उन्होंने स्पष्ट शब्दोंमें कहा: "ब्रिटिश व्यापार यदि भारतीय हितोंके प्रतिकूल है तो रक्षाकी कोई भी व्यवस्था भारतमें उसे बचा नहीं सकेगी। ब्रिटिश या भारतीय, प्रत्येक 'हित' को इस कड़ी कसौटीपर परखना होगा कि वह जनताके हितमें है या नहीं" (पृष्ठ ६७)। इसी प्रकार वे "सभी जन्मजात भारतीय प्रजाजनोंके अधिकारोंकी समानताकी गारन्टी" पर भी सहमत होनेको तैयार नहीं थे। इसका कारण बताते हुए उन्होंने कहा: "भारतकी भावी सरकारको . . . परिस्थितियोंको समान करनेके लिए लगातार वह काम करना पड़ेगा जिसकी मौजूदा सरकारने उपेक्षा की, अर्थात् जिन लोगोंको प्रकृतिने अथवा स्वयं सरकारने कृपा करके धन और अन्य सुविधाएँ प्रदान की हैं, उनके विरुद्ध और भूखों मरते भारतीयोंके पक्षमें उसे बराबर भेदभाव करना पड़ेगा" (पृष्ठ ३४९)। उनके विचारसे भारतके आर्थिक पुनर्निर्माणके प्रयत्नमें इंग्लैण्ड-जैसे उन्नत देशोंको आदर्श मानकर नहीं चला जा सकता था। भारत-जैसे अविकसित देशके लिए यह आवश्यक था कि वह "अपना ही अर्थशास्त्र , . . अपनी ही उद्योग-पद्धति विकसित" करे, और "मूल उद्योगोंको यदि राज्य अपने अधिकारमें न भी ले तो कमसे-कम उनके संचालन, प्रबन्ध और विकासमें तो उसकी आवाज प्रमुख" हो ही (पृष्ठ ३५५)। इस सबके परिणामस्वरूप यूरोपीयोंके विरुद्ध ही नहीं, भारतीय पूँजीपतियोंके खिलाफ भी भेदभाव हो सकता था। संघ-संरचना समितिके समक्ष दिये गये जिस भाषणमें गांधीजी ने यह चेतावनी दी थी उसे कतिपय प्रेक्षकोंने "साफ-साफ बोल्शेविक विचारोंसे प्रेरित" बताया और उससे उनके "मित्रोंमें बेचैनी पैदा हो गई" थी (पृष्ठ ४५७)।

सेनापर जनप्रतिनिधियोंके नियन्त्रणसे सम्बन्धित गांधीजी के विचार भी बहुतोंको अव्यवहार्य लगे होंगे। उन्होंने देखा कि "भारतीय सेना तो ब्रिटिश हितोंकी रक्षाके लिए है" (पृष्ठ ३३८), इसलिए उन्होंने पूरी निर्भीकताके साथ कहा कि यदि उस पर भारतका नियन्त्रण स्थापित नहीं किया जा सकता तो अच्छा यही होगा कि उसे भंग कर दिया जाये। फिर भी उन्हें आशा थी कि सेनाको भंग करनेकी स्थिति नहीं आयेगी और सैनिक कमान हस्तान्तरित करते समय ब्रिटिश सत्ताधारी भारतीय सेनाके भारतीय और अंग्रेज सैनिकोंको भी "एक नया सबक सिखायेंगे"—यह सबक कि भविष्यमें उन्हें ब्रिटेनके हितोंकी नहीं, बल्कि भारतके हितोंकी रक्षा करनी है। उन्होंने अंग्रेजोंके उदात्त भावोंको जगाते हुए कहा: "ग्रेट ब्रिटेनका यह गौरवपूर्ण विशेषाधिकार और कर्त्तव्य होना चाहिए कि वह अब हमें अपनी प्रतिरक्षाके संचालनके रहस्योंमें दीक्षित करे। हमारे पंख कतर देनेके बाद यह उसका कर्त्तव्य हो जाता है कि वह हमें पंख दे, जिससे हम उसी प्रकार उड़ सकें जैसे ब्रिटेनवाले उड़ते हैं" (पृष्ठ ३४०)।

स्पष्ट था कि ब्रिटिश सरकार गांधीजी की माँगोंको कुछ कम करके भी स्वीकार करनेकी मन:स्थितिमें नहीं थी। ब्रिटेन गम्भीर आर्थिक संकटमें पड़ा हुआ था और लेबर सरकार अपना बहुमत खो बैठी थी। परिषद्का अधिवेशन चल रहा था, इसी बीच ब्रिटेनमें आम चुनावोंके भी आदेश जारी कर दिये गये। कंजर्वेटिव पार्टी प्रबल बहुमतसे विजयी हुई। किन्तु चुनावोंके बाद एकदलीय सरकार बनानेके बजाय राष्ट्रीय सरकार बनाई गई और प्रधान मंत्रीके पदपर रैम्जे मैकडॉनाल्ड ही कायम रहे। इन परिवर्तनोंके बीच कोई बड़ा निर्णय सम्भव नहीं था, किन्तु ब्रिटिश सरकारने इस चीज को जो रूप दिया वह यह था कि साम्प्रदायिक समस्याका समाधान न हो पानेके कारण ही संविधान-रचनामें वांछित प्रगति नहीं हो सकी। लगता है, गांधीजी इस चालको पहले ही ताड़ गये थे। अल्पसंख्यक-समस्या समितिको विभिन्न समुदायोंके प्रतिनिधियोंकी अनौपचारिक वार्त्ताकी विफलताकी सूचना देते हुए उन्होंने कहा, असफलताके कारण "भारतीय प्रतिनिधि-मण्डलके गठनमें ही निहित थे।" प्रतिनिधिगण सरकार द्वारा मनोनीत किये गये थे और इसलिए वास्तवमें उनकी कोई प्रातिनिधिक हैसियत नहीं थी। इसके अतिरिक्त समितिकी चर्चामें "वास्तविकताकी भावनाका अभाव" था, क्योंकि प्रतिनिधियोंको यह नहीं मालूम था कि उन्हें "क्या मिलनेवाला है।" इस गतिरोधसे निकलनेके मार्गका संकेत करते हुए उन्होंने कहा कि साम्प्रदायिक समस्याका समाधान "स्वराज्यके संविधानका शिखर हो सकता है, उसका आधार नहीं हो सकता, . . . साम्प्रदायिक मतभेदोंका हिमशैल स्वतन्त्रताके सूर्यकी गर्मीसे गल जायेगा" (पृष्ठ १२९)। परिषद्के बाहर गांधीजी ने अपने विचार कहीं अधिक दो टूक ढंगसे व्यक्त किये। उन्होंने ब्रिटिश सरकारपर "फूट डालो और राज करो" की नीतिका अनुसरण करनेका आरोप लगाया। उन्होंने कहा, "जबतक विदेशी शासन-रूपी पच्चर कायम है और वह अधिकाधिक गहरा धँसता जा रहा है तबतक हम आपसमें विभक्त ही रहेंगे। पच्चरका काम ही यही है" (पृष्ठ २०४)। उनका कहना था कि सरकार एक बार यह घोषणा करके तो देखे कि "भारतीयोंमें आपसमें सहमति हो या न हो, हम तो भारतको छोड़ने ही जा रहे हैं" (पृष्ठ २०५)। उन्होंने विश्वास दिलाया कि यदि सरकार ऐसा करे तो निश्चय ही भारतके विभिन्न समुदायोंके बीच सहमति हो जायेगी। लेकिन सरकार तो "केवल भारतका शोषण करनेके लिए नौकरशाहीकी सत्तामें साझेदारी" देनेको तैयार थी और यह चीज भारतीयोंके बीच "फूटके बीज बोती" थी (पृष्ठ २०५)।

भारतकी राष्ट्रीय माँगके प्रति ब्रिटेनकी जनतामें सहानुभूतिके अभावका एक मुख्य कारण गांधीजी को यह लगा कि उन लोगोंको भारतकी वास्तविक स्थितिका भान ही नहीं था। इस सन्दर्भमें उन्होंने एक नौजवान क्वेकरके इस कथनका उल्लेख किया कि "जबतक हम लोगोंको [अंग्रेजोंको] बचपनसे ही सच्चे और यथार्थ इतिहासकी नहीं, बल्कि गलत इतिहासकी शिक्षा दी जा रही है, तबतक आपके यहाँ आनेसे कोई

लाभ होनेवाला नहीं है।" भारतकी स्थितिका सही बोध करानेके लिए उन्होंने अंग्रेजोंके सामने "दो अचूक कसौटियाँ" रखीं। उन्होंने उनसे पूछा: "यह तथ्य है या नहीं कि भारत आज दुनियाका सबसे गरीब देश है? यह तथ्य है या नहीं कि . . . इस देशको पौरुषहीन बना दिया गया है?" (पृष्ठ १२१) उन्होंने यह स्वीकार किया कि जनताको स्वयं भारतके सूदखोरों और साहूकारोंने लूटा है, और इसलिए "अगर हमारा तरीका हिंसात्मक होता तो भारतीय बनिये गोलीसे उड़ा दिये जानेके पात्र माने जाते। लेकिन, अंग्रेज बनिये तो इस व्यवहारके सौ गुना अधिक पात्र हैं। . . . मुझे तो इतिहासमें इतनी असंगठित और विनम्र जातिके इतने संगठित शोषणका कोई दूसरा उदाहरण ही दिखाई नहीं देता" (पृष्ठ २०६)।

मशीनोंके सम्बन्धमें गांधीजी के विचारोंको सुनकर भारतके अनेक हितेच्छु भी चक्करमें पड़ गये। इसलिए उनके इंग्लैण्ड-प्रवासके दौरान इस विषयपर उनसे बार-बार प्रश्न पूछे गये। चार्ली चैपलिनको मशीनोंके प्रति अपनी अरुचिका मनोवैज्ञानिक कारण बताते हुए उन्होंने कहा: "मशीनके कारण हम अतीतमें इंग्लैण्डके अधीन हो गये और हम अपनेको पराधीनतासे केवल इसी तरह मुक्त कर सकते हैं कि हम मशीनसे बनी सभी चीजोंका बहिष्कार करें" (पृष्ठ ५३)। उन्होंने एच० एन० ब्रेल्सफोर्ड के समक्ष यह स्वीकार किया कि "केवल थोड़े-से निष्ठावान आदमी ऐसे हैं जो बिना मशीनके सादा जीवन बिता सकते हैं। जनसाधारणका उसके बिना काम नहीं चलेगा" (पृष्ठ १५२)। एक अन्य प्रसंगपर उन्होंने कहा: "शल्य-चिकित्साके औजार बनानेके लिए मैं जटिलसे-जटिल यन्त्रोंको अपनाना चाहूँगा" (पृष्ठ ४२६)। एक अमेरिकी संवाद-दाताके प्रश्नोंके उत्तर देते हुए गांधीजी ने स्वीकार किया कि वे मशीनोंके विरोधी थे, किन्तु वहीं "जहाँ वह उत्पादन और वितरणको चन्द हाथोंमें सीमित कर देनेका साधन बन जाता है", क्योंकि "जो चीज सर्वसाधारणको सुलभ न हो सके उसे" वे "अपने लिए त्याज्य" मानते थे (पृष्ठ १८४)। जहाँतक थोक उत्पादनका सम्बन्ध था, यह चीज भी अपने-आपमें ऐसी नहीं थी जो गांधीजी को पसन्द न रही हो। स्वयं चरखा भी तो प्रकारान्तरसे थोक उत्पादनका ही एक साधन था — लेकिन यह ऐसा साधन था जिससे लोग अपने घरोंमें ही उत्पादन कर सकते थे और लाखों घरोंमें इस तरह अलग-अलग किये गये उत्पादनको मिलाकर देखनेसे उसका परिणाम थोक उत्पादन ही तो था। वे जिस चीजको गलत मानते थे वह थी — "कमसे-कम लोगों द्वारा अत्यन्त जटिल यन्त्रोंकी सहायतासे अधिकसे-अधिक उत्पादन" (पृष्ठ १८३)। राज्य-नियन्त्रित उत्पादन और वितरणके रूसी प्रयोगके सम्बन्धमें उन्होंने कहा, "अगर यह बल-प्रयोगपर आधारित न होता तो मैं इस व्यवस्थापर मुग्ध हो जाता" (पृष्ठ १८३)।

कुछ सभाओंमें गांधीजी राजनीतिके बजाय उन विषयोंपर बोले, जिनका उनके हृदय-देशसे अत्यधिक निकटका सम्बन्ध था। अपने गिल्डहाउस चर्चके भाषणमें उन्होंने

स्वयं स्वीकार किया कि "यद्यपि मेरा ध्येय बाहरसे राजनीतिक लगता है, इसकी जड़ें आध्यात्मिक हैं" (पृष्ठ ५५)। "अनैतिकता और असत्यसे अछूता रहने" के लिए स्वैच्छिक दारिद्रचके आदर्शको प्राप्तिकी दिशामें अपनी क्रमिक प्रगतिका वर्णन करते हुए उन्होंने स्वीकार किया कि "प्रारम्भमें वह एक कठिन संघर्ष था और — जैसा कि मेरी स्मृतिमें आज भी स्पष्ट है — अपनी पत्नी और अपने बच्चोंके साथ वह एक तरहका मल्लयुद्ध था" (पृष्ठ ५६)। लेकिन "एक समय ऐसा भी आया जब उन चीजोंको त्यागना" उनके लिए "वास्तविक उल्लासकी बात हो गई" जिनके वे अभ्यस्त हो चुके थे और उनका त्याग करके उन्हें ऐसा लगा जैसे उनके "कन्धोंसे एक बड़ा बोझ उतर गया।" वे "अब निश्चिन्त चल-फिर" सकते थे "और अपने भाइयोंकी सेवाका कार्य भी खूब आरामसे और पहलेसे अधिक आनन्दके साथ" कर सकते थे (पृष्ठ ५७)। गांधीजी का विचार था कि स्वैच्छिक गरीबीके आदर्शको अपने जीवनमें सम्पूर्णतः उतारनेके लिए शरीरका मोह त्यागना भी आवश्यक है। उन्होंने कहा: "यह (शरीर) आपको एक अस्थायी सम्पत्तिके रूपमें दिया गया है" तथा "ईश्वरकी इच्छा पर यह शरीर भी समर्पित किया जा सकता है; और जबतक यह मेरे पास है, इसका उपयोग दुराचार, भोग-विलास या आनन्दके लिए नहीं, बल्कि सेवाके लिए होना चाहिए, और जाग्रत अवस्थामें इससे सब समय सेवा ही करनी चाहिए" (पृष्ठ ५९)। ईसाई धर्म-प्रचारक संस्थाओंके एक सम्मेलनमें बोलते हुए उन्होंने बताया कि वे धर्मान्तरणके विरुद्ध क्यों थे। उन्हींके शब्दोंमें, "प्रार्थना करनेवाले का यह विश्वास होता है कि ईश्वर रहस्यात्मक ढंगसे काम करता है, और वह यह चाहता है कि जिस सत्यको उसने स्वयं देखा है वह समस्त संसारको प्राप्त हो। वह औरोंमें बँट जाये, इसके लिए वह प्रार्थना करता है। और वह सत्य आगे बढ़ता है, उसके पंख लग जाते हैं। . . . धर्म गुलाबकी तरह है" (पृष्ठ १३५)। उनके लिए आदर्श मिशनरी, आदर्श धर्म-प्रचारक तो एन्ड्रयूज थे, जो ईसाई धर्मका उपदेश नहीं देते थे, बल्कि उसे अपने जीवनमें उतारते थे (पृष्ठ १३६)। उन्होंने यह तो स्वीकार किया कि इन संस्थाओंने परोक्ष रूपसे भारतकी सेवा की है, किन्तु साथ ही यह भी कहा, "मुझे ऐसा महसूस होता है कि मैं भी उसी पिताकी पूजा करता हूँ, यद्यपि एक भिन्न रूपमें करता हूँ। 'गॉड' के रूपमें उसकी पूजा करना मेरे लिए उचित नहीं होगा। वह नाम मुझपर कोई प्रभाव नहीं डालता, पर जब मैं उसे रामके रूपमें सोचता हूँ तो वह मुझे पुलकित कर देता है। . . . उसमें कितनी कविता है" (पृष्ठ १४१)! गांधीजी मानते थे कि परमेश्वरकी — उस एकमात्र परम सत्यकी — अभिव्यक्ति अनेक प्रतीकोंके द्वारा हो सकती है और इसलिए मनुष्यको संस्थाओंकी बेड़ियोंमें जकड़ना गलत है, सत्यकी प्रतीतिको केवल अपनी ही संस्था, अपने ही धर्मकी इजारेदारी मानना भ्रम-मात्र है। धर्मके सम्बन्धमें ऐसा ही भ्रामक विचार रखनेवाले एक आलोचकको उत्तर देते हुए उन्होंने कहा: "आपका ईश्वर तो मेरा भी है, . . . बावजूद इसके कि आप मेरे ईश्वरमें विश्वास नहीं

करते। . . . मनुष्य सदा अच्छा ही होता है और अगर वह सही रास्तेसे भटकता है तो केवल बुरी संस्थाओंके कारण ही भटकता है" (पृष्ठ ४२८)।

धर्म और कलाके पारस्परिक सम्बन्धपर अपने विचार प्रकट करते हुए गांधीजी ने कहा: "उन दोनोंमें मूल अनुभूतिका क्षेत्र मनुष्यका ईश्वरसे सम्बन्ध होता है। . . . ईश्वरके साथ मनुष्यका सम्बन्ध ही सदा जीवनका केन्द्रीय अनुभव रहेगा" (पृष्ठ १६५)।

गांधीजी का यह इंग्लैण्ड-प्रवास राजनीतिक दृष्टिसे विफल हो गया जान पड़ता था, किन्तु उन्हें इसका तनिक भी दुःख नहीं था। उन्होंने वल्लभभाईको लिखा, "यहाँ मेरा सब काम परिषद्के बाहर ही होता है" (पृष्ठ २५८)। फ्रेंड्स ऑफ इंडियाकी सभामें उन्होंने कहा कि "अपने कार्यके सम्बन्धमें यदि मुझे पस्त करनेवाली जबरदस्त कठिनाइयोंका सामना करना पड़ रहा है तो कांफरेंस और कमेटियोंके बाहर मुझे आनन्द और उल्लास भी प्राप्त हो रहा है" (पृष्ठ १२९)। लंकाशायरके मजदूरोंके पास गांधीजी के खिलाफ शिकायतका कारण था, किन्तु उनकी लंकाशायर-यात्रा भी व्यक्तिगत दृष्टिसे अत्यन्त सफल रही। वहाँ "सड़कोंके किनारे एकत्रित लोगोंकी भीड़ने स्वेच्छासे" उनके प्रति "जिस गहरे प्रेमका प्रदर्शन किया", उससे वे विचलित हो उठे और उस प्रसंगका वर्णन करते हुए उन्होंने लिखा, "उस प्रेमको मैं अपने जीवनकी एक सुन्दर स्मृतिके रूपमें सदा सँजोकर रखूंगा" (पृष्ठ ८४)। परिषद्के पूर्णाधिवेशनमें अपने भाषणका समापन करते हुए उन्होंने कहा: "मैं यहाँसे हजारों अंग्रेजोंकी मैत्री का सौभाग्य प्राप्त करके जा रहा हूँ। . . . मेरे अभागे देशपर चाहे जो आ पड़े, इस आतिथ्य और इसके स्नेहकी स्मृति मेरे मनसे कभी नहीं मिटेगी" (पृष्ठ ४०५)। "सिंहावलोकन" शीर्षक लेखमें इसी विषयकी चर्चा पुनः करते हुए उन्होंने लिखा: "ईस्ट लन्दनमें रहते हुए मुझे मानव-स्वभावके सर्वोत्तम पक्षका परिचय मिला और मेरे इस सहज विश्वासकी पुष्टि हुई कि अन्दर उतरकर देखें तो पूर्वी और पश्चिमी दुनिया-जैसी कोई चीज नहीं है। . . . अगर मेरे इंग्लैण्डके और भी निकट आनेकी कोई गुंजाइश थी तो इस अनुभवने मुझे उसके और निकट ला दिया है" (पृष्ठ ४७९)।

इंग्लैण्डसे लौटते हुए जब गांधीजी विलेन्यूवमें रोमाँ रोलाँसे मिलने तीन दिन स्विट्जरलैण्डमें ठहरे तब वहाँ उन्होंने कई सभाओंमें भाषण दिये। ऐसी ही एक सभामें "सत्य क्या है?" इस प्रश्नका उत्तर देते हुए उन्होंने कहा, "जो हमारी अन्तरात्मा कहे, वही सत्य है" (पृष्ठ ४४८)। किन्तु साथ ही उन्होंने यह चेतावनी भी दी कि "हर व्यक्तिका अपनी अन्तरात्माकी आवाज सुन सकनेका दावा उचित नहीं है", क्योंकि "जिसमें विनय नहीं है, वह कभी भी सत्यको प्राप्त नहीं कर सकता" (पृष्ठ ४४९)। एक अन्य सभामें उन्होंने कहा: "ईश्वर-प्रेमके बिना सच्चा मानव-प्रेम मैं असम्भव मानता हूँ" (पृष्ठ ४५५)। रेड क्रॉसके मानव-दयाके कार्योंके लिए उसकी प्रशंसा करते हुए उन्होंने यह सुझाव दिया, "उसे युद्धके बाद सहायता देनेकी बात

नहीं सोचनी चाहिए, युद्धके बिना सहायता देनेकी बात सोचनी चाहिए।" उन्होंने कहा: "मेरी इस बातपर विश्वास कीजिए कि लाखों लोग ऐसे हैं जो अपनी ही गलतीसे कष्टमें पड़े हुए हैं", और इन्हें "भावी अहिंसात्मक संस्थाओं" की सहायता और मार्गदर्शनकी आवश्यकता है (पृष्ठ ४६६)।

शुद्धि तथा हृदय-परिवर्तनके साधनके रूपमें कष्ट-सहनकी शक्तिका बोध गांधीजी को पहले भी था, किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि इस इंग्लैण्ड-प्रवासके दौरान उनके इस बोधमें और भी गहराई आई। इंग्लैण्डमें वुडब्रूककी क्वेकर बस्तीकी एक सभामें उन्होंने कहा कि १९२० से ही "मेरी यह प्रतीति बढ़ती गई है कि जनताके लिए जो चीजें आधारभूत महत्त्वकी हैं वे केवल बुद्धिपूर्वक समझाने-बुझानेसे ही नहीं मिल जातीं, बल्कि उनकी कीमत कष्ट-सहनके रूपमें चुकानी पड़ती है", क्योंकि "हमें लोगोंको समझा-बुझाकर ही सन्तुष्ट नहीं हो जाना चाहिए, बल्कि उनके हृदयको भी प्रभावित करना चाहिए" (पृष्ठ २०८)।

स्वदेश वापस लौटते हुए जहाजपर 'बड़े दिन' के असवरपर दिये एक प्रवचनमें उन्होंने समझाया कि यदि हम "संघर्षके बीच . . . शान्तिका अनुभव" करना चाहते हैं तो हमें "उस संघर्षको दूर करनेके लिए अपने सम्पूर्ण जीवनको नष्ट" करना पड़ेगा, "अपने प्राणोंकी बलि चढ़ा" देनी होगी; क्योंकि जिस प्रकार "ईसाका चमत्कारपूर्ण जन्म एक शाश्वत घटना है, उसी प्रकार इस झंझावातसे भरे जीवनमें शूलीपर चढ़ना, आत्मबलिदान करना भी एक शाश्वत घटना है" (पृष्ठ ४८६)। इसलिए भारत लौटकर जब उन्होंने देखा कि सविनय अवज्ञा पुनः आरम्भ करना अनिवार्य हो गया है तब उन्होंने रवीन्द्रनाथ ठाकुरको पत्र लिखकर उनसे अनुरोध किया, "जो यज्ञाग्नि सुलगाई जा रही है, उसमें आप जो सर्वोत्तम समिधा डाल सकते हैं, वह डालें" (पृष्ठ ५३७)।

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए हम निम्नलिखित संस्थाओं, व्यक्तियों, पुस्तकोंके प्रकाशकों तथा पत्र-पत्रिकाओंके आभारी हैं :

संस्थाएँ : साबरमती आश्रम संरक्षक तथा स्मारक न्यास और संग्रहालय (साबरमती आश्रम प्रिजर्वेशन ऐंड मेमोरियल ट्रस्ट), नवजीवन ट्रस्ट और गुजरात विद्यापीठ ग्रंथालय, अहमदाबाद।

व्यक्ति : श्रीमती गंगाबहन वैद्य, श्री नारणदास गांधी, राजकोट; श्री नारायण देसाई, बारडोली; और प्रेमाबहन कंटक, सासवड।

पुस्तकें : 'इंडिया इन १९३१-३२', 'ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स', 'इंडियन राउण्ड टेबल कॉन्फरेन्स (सेकेण्ड सेशन) : प्रोसीडिंग्स ऑफ द प्लेनरी सेशन्स', 'इंडियन राउण्ड टेबल कॉन्फरेंस (सेकेण्ड सेशन): प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐण्ड माइनॉरिटीज कमिटी', 'दैट स्ट्रेंज लिटिल ब्राउन मैन — गांधी', 'बापुना पत्रो — २ : सरदार वल्लभभाईने', 'बापुना पत्रो —४ : 'मणिबहेन पटेलने', 'बापुना पत्रो — ६ : गं० स्व० गंगाबहेनने', 'बापूज लेटर्स टु मीरा', 'माई ऑटोबायोग्राफी' और 'हेलिफैक्स'।

पत्र-पत्रिकाएँ : 'अमृतबाजार पत्रिका', 'इन्टरनेशनल अफेयर्स', 'इंडियन न्यूज', 'इंडियन रिव्यू', 'ईवनिंग स्टैंडर्ड', 'क्लिथरो एडवर्टाइज़र ऐंड टाइम्स', 'गिल्ड-हाउस', 'जॉन बुल', 'ज्यूइश क्रॉनिकल', 'टाइम्स', 'टेक्स्टाइल मर्क्युरी ऐंड आर्गस', 'ट्रिब्यून', 'डेली टेलीग्राफ', 'डेली मेल', 'डेली वर्कर', 'डेली हेराल्ड', 'नवजीवन', 'नेशन', 'न्यूज क्रॉनिकल', 'न्यूयॉर्क टाइम्स', 'पोस्ट', 'फ्रैंड', 'बर्मिंघम पोस्ट', 'बॉम्बे क्रॉनिकल', 'बॉरोज ऑफ पॉपलर ऐंड स्टेपनी', 'ईस्ट लन्दन एडवर्टाइज़र', 'ब्रिटिश वीकली', 'मैंचेस्टर गार्डियन', 'यंग इंडिया', 'यॉर्कशायर पोस्ट', 'रिकंसिलिएशन', 'लेबर मंथली', 'संडे ऑब्ज़र्वर', 'संडे टाइम्स', 'स्टेट्समैन', 'स्पेक्टेटर', 'हरिजन', 'हिन्दुस्तान टाइम्स' और 'हिन्दू'।

अनुसंधान व सन्दर्भ-संबंधी सुविधाओंके लिए अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी पुस्तकालय, इंडियन कौंसिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्स पुस्तकालय, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय का अनुसंधान और सन्दर्भ विभाग (रिसर्च ऐंड रेफरेंस डिवीजन) और श्री प्यारेलाल नैयर, नई दिल्ली हमारे धन्यवादके पात्र हैं। प्रलेखोंकी फोटो-नकल तैयार करनेमें मदद देनेके लिए हम सूचना एवं प्रसारण मन्त्रालयके फोटो-विभाग, नई दिल्लीके भी आभारी हैं।

पाठकोंको सूचना

हिन्दीकी जो सामग्री हमें गांधीजी के स्वाक्षरोंमें मिली है उसे अविकल रूपमें दिया गया है। किन्तु दूसरों द्वारा सम्पादित उनके भाषण अथवा लेख आदिमें हिज्जोंकी स्पष्ट भूलोंको सुधारकर दिया गया है।

अंग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करनेमें अनुवादको मूलके समीप रखनेका पूरा प्रयत्न किया गया है, किन्तु साथ ही भाषाको सुपाठ्य बनानेका भी पूरा ध्यान रखा गया है। छापेकी स्पष्ट भूलें सुधारनेके बाद अनुवाद किया गया है और मूलमें प्रयुक्त शब्दोंके संक्षिप्त रूप यथासंभव पूरे करके दिये गये हैं। नामोंको सामान्य उच्चारणके अनुसार ही लिखनेकी नीतिका पालन किया गया है। जिन नामोंके उच्चारणमें संशय था उनको वैसा ही लिखा गया है जैसा गांधीजी ने अपने गुजराती लेखोंमें लिखा है।

मूल सामग्रीके बीच चौकोर कोष्ठकोंमें दी गई सामग्री सम्पादकीय है। गांधीजी ने किसी लेख, भाषण आदिका जो अंश मूल रूपमें उद्धृत किया है, वह हाशिया छोड़कर गहरी स्याहीमें छापा गया है, लेकिन यदि कोई ऐसा अंश उन्होंने अनूदित करके दिया है तो उसका हिन्दी अनुवाद हाशिया छोड़कर साधारण टाइपमें छापा गया है। भाषणकी परोक्ष रिपोर्ट तथा वे शब्द जो गांधीजी के कहे हुए नहीं हैं, बिना हाशिया छोड़े गहरी स्याहीमें छापे गये हैं। भाषणों और भेंटकी रिपोर्टोंके उन अंशोंमें, जो गांधीजी के नहीं हैं, कहीं-कहीं कुछ परिवर्तन किया गया है और कहीं-कहीं कुछ छोड़ भी दिया गया है।

शीर्षककी लेखन-तिथि जहाँ उपलब्ध है वहाँ दायें कोनेमें ऊपर दे दी गई है। परन्तु जहाँ वह उपलब्ध नहीं है वहाँ उसकी पूर्ति अनुमानसे चौकोर कोष्ठकोंमें की गई है, और आवश्यक होनेपर उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। जिन पत्रोंमें केवल मास या वर्षका उल्लेख है उन्हें आवश्यकतानुसार मास या वर्षके अन्तमें रखा गया है। शीर्षकके अन्तमें साधन-सूत्रके साथ दी गई तिथि प्रकाशनकी है। गांधीजी की सम्पादकीय टिप्पणियाँ और लेख, जहाँ उनकी लेखन-तिथि उपलब्ध है अथवा जहाँ किसी दृढ़ आधारपर उसका अनुमान किया जा सका है, वहाँ लेखन-तिथिके अनुसार और जहाँ ऐसा सम्भव नहीं हुआ वहाँ उनकी प्रकाशन-तिथिके अनुसार दिये गये हैं।

साधन-सूत्रोंमें 'एस० एन०' संकेत साबरमती संग्रहालय, अहमदाबादमें उपलब्ध सामग्रीका, 'जी० एन०' गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्लीमें उपलब्ध कागज-पत्रोंका, 'सी० डब्ल्यू०' सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय (कलेक्टेड वर्कस ऑफ महात्मा गांधी) द्वारा संगृहीत पत्रोंका और 'एस० जी०' सेवाग्राममें सुरक्षित सामग्रीका सूचक है।'

सामग्रीकी पृष्ठभूमिका परिचय देनेके लिए मूलसे सम्बद्ध कुछ परिशिष्ट भी दिये गये हैं। अन्तमें साधन-सूत्रोंकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित कालकी तारीखवार घटनाएँ दी गई हैं।

विषय-सूची

१. भेंट : 'ईवनिंग स्टैंडर्ड' के प्रतिनिधिको[1]

१२ सितम्बर, १९३१

जोरोंकी बारिश हो रही थी। गांधीजी खुरदरी खादी धारण किये हुए थे। उन्होंने अपना कन्धा उचकाते हुए कहा :

मुझे वर्षा पसन्द नहीं। अभी-अभी सुना है कि इस साल आपके यहाँ गर्मीकी ऋतु आई ही नहीं। लेकिन अगर मैं भारतमें शान्ति स्थापित कर सकूँ तो मुझे इस मौसमको भी झेलनेमें कोई एतराज नहीं होगा।

मैं 'ईवनिंग स्टैंडर्ड' के जरिये दुनियाको एक सन्देश[2] देना चाहता हूँ :

> यदि भारत सत्य और अहिंसाके बलपर स्वतन्त्रता प्राप्त कर लेता है तो मुझे पूरा विश्वास है कि विश्व-शान्तिके क्षेत्रमें इस युगका यह सबसे बड़ा योगदान होगा।
>
> मो० क० गांधी

मैं इतना ही चाहता हूँ कि भारतमें शान्ति स्थापित हो जाये और इसमें मैं ब्रिटेनकी जनताकी सहायता चाहता हूँ। मैं सरकारको परेशान नहीं करना चाहता, उसकी मदद करना चाहता हूँ। मैं यहाँ क्यों आया? इसलिए आया हूँ कि मैंने लॉर्ड इर्विनको इसके लिए वचन दिया है। अपने वचनका पालन करनेसे कभी किसीका कोई नुकसान नहीं हुआ है। मैंने भी अपना वचन निभाया है। अब सवाल यह है कि शान्तिसे मेरा तात्पर्य क्या है? शब्दकोशमें आप ऐसा लिखा पायेंगे कि यह युद्धका विपरीतार्थक शब्द है। हमारे यहाँ काफी उथल-पुथल, लड़ाई-झगड़े हो चुके हैं। अब हम शान्ति चाहते हैं। मुझे ऐसा सन्देशवाहक कहा गया है जिसे किसीका प्रतिनिधित्व करनेका कोई अधिकार नहीं है। यह तो सरासर गलतबयानी है। मुझे यह अधिकार प्राप्त है और देनेवाले लोग हैं भारतकी जनता।

इसके बाद गांधीजी ने मुझे टाइप किया हुआ एक पृष्ठ दिया और उसके आखिरी अनुच्छेदकी ओर इंगित किया। वह इस प्रकार था : "कांग्रेस महात्मा गांधीको अपना प्रतिनिधित्व करनेके लिए नियुक्त करती है और उन्हें प्रतिनिधित्व करनका अधिकार देती है।"

यह अधिकारपत्र है या नहीं? मैं तो कहता हूँ कि है। आप पूछते हैं, मैं चरखा क्यों चलाता हूँ। यह धैर्यके अभ्यासका एक बड़ा साधन है। जब आपकी पत्नी

१. **ईवनिंग स्टैंडर्ड**के प्रतिनिधिने गांधीजी से, जब वे इंगलिश चैनल पार कर रहे थे, उस समय नौकामें ही मुलाकात की थी।

२. यह लिखित सन्देश था।

नाराज हों, आप भी कातने लगें। आप पूछते हैं कि मैं सोमवारको मौन रखनेका अपना व्रत तोड़ूँगा या नहीं। जरूरत हुई तो तोड़ूँगा।[1] वैसे तो अपना व्रत कायम रखनेकी मेरी बड़ी इच्छा है, लेकिन अगर उन लोगोंने बहुत आग्रह किया तो बोलूँगा।

गांधीजी ने मुझे बताया कि वे लन्दनमें अपनी लँगोटी ही पहनेंगे, लेकिन ठंडसे बचनेके लिए शाल और कम्बल ओढ़ा करेंगे। वे किसी रंगशालामें नहीं जायेंगे।

किसी समय मैं लीसियम जाया करता था। शेक्सपियरके नाटक मुझे अच्छे लगते थे। अप्रतिम एलेन टेरी मुझे बहुत पसन्द थी; मैं उसे पूजता था। लेकिन यह तबकी बात है जब 'मेलोड्रामा' (अतिनाटक)का चलन नहीं हुआ था। लन्दनमें मेरे किसी रंगशालामें न जा पानेका कारण सिर्फ यही है कि मेरे पास समय नहीं रहेगा।

मैं उबा देनेवाला वैसा मनहूस बूढ़ा आदमी नहीं हूँ जैसा मुझे चित्रित किया जाता है। सच तो यह है कि मैं बहुत खुशमिजाज आदमी हूँ। [इस अर्थमें] अगर आप मुझे 'स्कॉच' कहें तो वह गलत नहीं होगा। मैं अपने पैसे-पैसेका खयाल रखता हूँ।

पिछली बार विश्व-युद्ध प्रारम्भ होनेके ठीक बाद, ६ अगस्त, १९१४ को, इंग्लैंडके समुद्र-तट पर था। आज मैं यहाँ शान्तिकी खोजमें वापस आया हूँ।

[अंग्रेजीसे]

ईवनिंग स्टैंडर्ड १२-९-१९३१

२. भाषण: फ्रेंड्स हाउस, लन्दनमें[2]

१२ सितम्बर, १९३१

आजकी शाम आप मुझसे ऐसी अपेक्षा तो नहीं ही करेंगे कि मैं आपका ज्यादा समय लूँ या मैं जिस कामको लेकर यहाँ आया हूँ, उसके बारेमें कुछ ज्यादा कहूँ। लेकिन, सामान्य रूपसे मैं आपसे एक बात कहना चाहूँगा। मैं शान्ति-सुलह स्थापित करनेका उद्देश्य लेकर यहाँ अपने मित्रोंके साथ आया हूँ। मैं और मेरे मित्र महान् अंग्रेज राष्ट्रके अतिथि हैं। मुझे उम्मीद है कि हम अपने कामके सिलसिलेमें जितने

१. गोलमेज परिषद्‌की संघ-संरचना समिति (फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी) की बैठक १४ सितम्बरको होनेवाली थी, उस दिन सोमवार था।

२. रायटरके अनुसार गांधीजी फोकस्टोनसे लन्दन शामके ४-१० पर पहुँचे और यद्यपि उस समय वर्षा हो रही थी, फिर भी लोग इतनी अधिक संख्यामें उमड़े आ रहे थे कि पुलिसके लिए एहतियात बरतना जरूरी हो गया। उन्हें गाड़ीसे सीधे फ्रेंड्स हाउस ले जाया गया। स्वागत समितिकी ओरसे उनका स्वागत करते हुए लॉरेन्स हाउसमैनने कहा: "... महात्मा गांधी, यदि इजाजत हो तो कहूँ कि आप एक अनोखे आदमी हैं — अपने देशवासियोंके लिए भी और हमारे देशवासियोंके लिए भी। आप हृदयसे इतने शुद्ध और सच्चे हैं कि हमारे मनमें शंका पैदा हो जाती है कि क्या ऐसा हो सकता है। आप इतने सरल हैं कि हममें से कुछ लोग हैरतमें पड़ जाते हैं।"

दिन भी यहाँ रहेंगे उसके अन्तमें आप ऐसा नहीं मानेंगे कि मैंने आपके आतिथ्यका किसी प्रकारसे दुरुपयोग किया है। मुझे आशा है कि जैसे-जैसे समय बीतता जायेगा, आप उस उद्देश्यकी व्याप्तिको समझते जायेंगे जिसकी खातिर कांग्रेसने मुझे यहाँ भेजा है। आप इस बातका भी ध्यान रखेंगे कि कांग्रेसकी ओरसे बोलनेके अधिकारसे युक्त प्रतिनिधिके रूपमें मेरी अपनी कुछ सीमाएँ, कुछ मर्यादाएँ होंगी। मुझे तो कांग्रेससे जो आदेश प्राप्त हुए हैं, उनकी सीमाओंमें रहकर ही काम करना है। उस आदेशपत्रमें ऐसे कुछ शब्द अवश्य हैं, जिनकी रूसे मुझे अपनी इच्छानुसार काम करनेकी कुछ छूट मिल जाती है, लेकिन बाकी मामलोंमें, सभी बुनियादी मामलोंमें तो मैं बिलकुल बँधा हुआ ही हूँ।[1] कांग्रेसने मुझे अपना विश्वास दिया है और यदि मुझे अपने-आपको उस विश्वासके योग्य सिद्ध करना है तो मुझे उस आदेशकी सीमाओंका उल्लंघन कदापि नहीं करना चाहिए।

मैं विनम्रतापूर्वक कहूँगा कि कांग्रेस एक सदुद्देश्यको लेकर चल रही है — ऐसे उद्देश्यको लेकर जिस पर किसी भी राष्ट्रको गर्व होगा। कांग्रेस करोड़ों मूक और क्षुधार्त्त मानवोंके लिए विशुद्ध स्वतन्त्रता चाहती है। कांग्रेस उनका सही प्रतिनिधित्व कर सके, इस उद्देश्यसे उसने इस स्वतन्त्रताकी प्राप्तिके साधनके रूपमें सत्य और अहिंसाको चुना है।

मैं यह भली-भाँति जानता हूँ कि सभी कांग्रेसियोंका आचरण उस साधनके अनुरूप नहीं रहा है, और मैं यह भी जानता हूँ कि अगर हम कांग्रेसी सत्य और अहिंसाके नाम पर असत्य और हिंसामय व्यवहार करेंगे तो सारी दुनिया हम पर थूकेगी। लेकिन मैं जानता हूँ कि कांग्रेसके श्रेष्ठतम कार्यकर्त्ताओंने अपने जीवनमें सत्य और अहिंसाके सारको उतारा है और यह मेरे लिए सबसे बड़े सन्तोषकी बात है। . . .

मैं जानता हूँ कि हमारे बीच हिंसामें विश्वास करनेवालोंका भी एक दल है। मैं उनमें से बहुत-से नौजवानोंको जानता हूँ। उनके साथ मैं रहा हूँ, उनके बीच घुल-मिलकर उनको देखा है, उनके साथ बातचीत भी की है। मैंने और मेरे बहुत-से सहयोगियोंने उन्हें उस चीजकी ओरसे विमुख करनेकी कोशिश की है, जिसे हम गलत मानते हैं। लेकिन साथ ही मैं यह भी जानता हूँ कि हमारे और उनके बीच उद्देश्यकी एक समानता भी है। वे स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए व्याकुल हैं — स्वतन्त्रता, जिस पर भारतका हक है, जो उसका जन्मसिद्ध अधिकार है। मैंने सार्वजनिक तौर पर और निजी बातचीतमें भी उनसे कहा है और आज फिर कहता हूँ कि उनके कार्योंसे कांग्रेस बड़ी अटपटी स्थितिमें पड़ जाती है, उनकी गतिविधियाँ

१. १४-९-१९३१ के **बॉम्बे क्रॉनिकल,** १५-९-१९३१ के **ट्रिब्यून,** और १६-९-१९३१ के **हिन्दुस्तान टाइम्स**में प्रकाशित रायटरकी रिपोर्टमें उपर्युक्त वाक्यके बजाय यह कहा गया है : "गांधीजीने इस बात पर जोर दिया कि उन्हें कांग्रेसके आदेशके अनुसार ही चलना चाहिए जिसके कुछ शब्द ऐसे हैं कि मेरे लिए अपनी इच्छानुसार काम करनेकी कोई छूट नहीं रह जाती। लेकिन बाकी सभी मामलोंमें और सभी बुनियादी मामलोंमें वे अपनी इच्छानुसार बरतनेको बिलकुल स्वतन्त्र हैं।"

प्रगतिकी घड़ीकी सुईको पीछे ढकेलती हैं। सत्य और अहिंसाके सिद्धान्तमें विश्वास रखनेवाले कांग्रेसी इस बातको भली-भाँति समझते हैं कि स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए हिंसाका सहारा लेनेवाले ये नौजवान न केवल अपना, बल्कि देशका भी नुकसान करते हैं और सबसे ज्यादा नुकसान तो उन करोड़ों मूक मानवोंका करते हैं जिनका उल्लेख अभी मैंने किया है।

भले ही हम राष्ट्रवादी हों, भले ही हम प्रबल देशभक्त हों, लेकिन जिस क्षण हम सत्य और अहिंसा-रूपी साधनका सहारा लेते हैं उसी क्षण हमारी देशभक्ति अन्तर्राष्ट्रीयतामें, विश्वप्रेममें परिवर्तित हो जाती है। हमारी देशभक्तिकी अवधारणा ही कुछ ऐसी हुई है कि हम स्वतन्त्रता चाहते हैं तो किसी अन्य देश अथवा व्यक्तिकी स्वतन्त्रता पर हाथ डालनेके लिए नहीं। हम 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' अथवा 'अधिकतम लोगोंका अधिकतम हित' वाले नियममें विश्वास नहीं करते। हम तो सबका — ईश्वरकी सृष्टिके तुच्छतम प्राणीका — सर्वाधिक कल्याण-साधन हो, इस नियममें विश्वास रखते हैं। और यदि भारत स्वतन्त्रताका अपना अधिकार प्राप्त कर लेता है, यदि वह इन साधनोंसे अपनी आजादी हासिल कर लेता है तो क्या आप नहीं मानते कि यह भारतके लिए ही नहीं, बल्कि सारी दुनियाके लिए बहुत अच्छी बात होगी?[१]

लेकिन कुछ और बात भी है। आप तो भारत सरकार और कांग्रेसके बीच हुए समझौतेके बारेमें जानते ही होंगे। यह एक पवित्र समझौता है जो एक नेक अंग्रेज, लॉर्ड इर्विनके प्रयत्नोंसे सम्पन्न हो पाया है। मैंने उनसे बार-बार यह वादा किया था कि अगर सम्भव हुआ तो मैं लन्दन अवश्य आऊँगा। सो ज्यों ही मुझे ऐसा लगा कि रास्ता खुल गया है, मैं भागा-भागा लन्दन पहुँच गया हूँ।

इसके बाद श्री गांधीने सभी अंग्रेज पुरुषों और स्त्रियों से भारतीय समस्याका अध्ययन करनेका अनुरोध करते हुए कहा कि इसमें मैं आपकी कठिनाई समझता हूँ, क्योंकि अभी आप लोग अपने घरेलू मामलोंसे निबटनेमें लगे हुए हैं और यह सर्वथा उचित है। [उन्होंने आगे कहा :]

मेरी यह कामना है कि अंग्रेज स्त्री-पुरुषोंके मनमें यह सत्य उतर जाये कि जबतक ब्रिटेन और भारतके आपसी व्यवहारका हिसाब-किताब दुरुस्त नहीं कर लिया जाता तबतक ब्रिटेनका 'बजट' सही तौरसे सन्तुलित नहीं हो पायेगा।

अन्तमें श्री गांधीने श्रोताओंसे कहा कि आप लोग मेरे अंगीकृत कार्यको सफल बनानेके लिए काम करें, क्योंकि उससे भारतकी ही नहीं, सारी दुनियाकी भलाई होगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन न्यूज, २२-९-१९३१ और **ट्रिब्यून,** १५-९-१९३१

१. यहाँ तकका अंश **इंडियन न्यूज** से लिया गया है और शेष **ट्रिब्यून** से।

३. तार : लॉर्ड इर्विनको

किंग्सले हॉल बोउ
लन्दन ईस्ट
[१२ सितम्बर, १९३१][1]

लॉर्ड इर्विन
गैरोबी बकथोर्प (यॉर्क्स)

हर्ष है कि आखिर आपको यह सूचित कर पा रहा हूँ कि मैं यहाँ पहुँच गया हूँ। जब भी आपको सुविधा हो, आपसे मिलना चाहूँगा।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७९०६) से।

४. भेंट : समाचारपत्रोंको

लन्दन
१२ सितम्बर, १९३१

एक मुलाकातके दौरान श्री गांधीने मुझे उन माँगोंका सार बताया जो वे कांग्रेसकी ओरसे पेश करनेवाले हैं। उन माँगोंके अनुसार :

१. कांग्रेसका लक्ष्य पूर्ण स्वराज्य है।

२. पूर्ण स्वराज्यका मतलब है, सेना, विदेशी मामलों, वित्त और आर्थिक नीति-पर नियन्त्रण।

३. एक निष्पक्ष न्यायाधिकरण द्वारा ब्रिटिश सरकारके आर्थिक सौदोंकी जाँच।

उन्होंने कहा कि कुछ ऐसे शब्द अवश्य हैं जिनकी रूसे मुझे अपनी इच्छानुसार काम करनेकी थोड़ी छूट मिल जाती है; अन्यथा तो मुझे जो समादेश दिया गया है, उससे बँधा हुआ हूँ।

श्री गांधीने यह भी कहा कि यद्यपि हिन्दू-मुस्लिम समस्या बहुत टेढ़ी है, लेकिन इसका कोई कामचलाऊ समाधान ढूँढ़ पानेकी आशा मैं कभी नहीं छोड़ूँगा।[2]

१. तारसे स्पष्ट है कि गांधीजी ने इसे लन्दन पहुँचनेके कुछ ही देर बाद भेजा होगा।

२. यहाँ तकका अंश **संडे टाइम्स** के प्रतिनिधिके साथ हुई मुलाकातके विवरणसे लिया गया है और आगेका हिस्सा **ट्रिब्यून**में प्रकाशित रायटरके एक प्रतिनिधिके साथ हुई मुलाकातके विवरणसे उद्धृत किया गया है।

श्री गांधीने कहा कि कोई कामचलाऊ समाधान ढूंढ़ पानेकी आशा में कभी नहीं छोड़ूँगा। मैं बराबर आशान्वित हूँ। मैं मुसलमानोंके साथ मतभेद दूर करनेके लिए मनमें कोई भी अन्यथा विचार रखे बिना सब-कुछ करनेको तैयार हूँ। मैं तो सादे कागज पर दस्तखत करके मुसलमानोंको दे देने और फिर वे उसपर सत्य समझ-कर जो-कुछ लिख दें, उसके लिए संघर्ष करनेको तैयार हूँ।

श्री गांधीने इस बातपर जोर दिया कि मुसलमानों द्वारा की गई कोई भी माँग सारे मुस्लिम समाजकी ओरसे की गई माँग होनी चाहिए। उन्होंने आगे कहा:

यह बात मैं किसी प्रयोजनसे ही कह रहा हूँ, क्योंकि एक छोटा-सा संगठन है जिसे राष्ट्रवादी मुस्लिम दल कहते हैं। मैं यह नहीं कह सकता कि इसके समर्थकोंकी संख्या कितनी है, लेकिन उस दलके साथ मैं कोई धोखेबाजी नहीं कर सकता।

उन्होंने कहा, मेरा काम मुसलमानोंके दोनों दलोंको एक साथ लाना है।

[अंग्रेजीसे]

संडे टाइम्स, १३-९-१९३१ और **ट्रिब्यून,** १५-९-१९३१

५. भेंट: समाचारपत्रोंको

लन्दन

१२ सितम्बर, १९३१

आज किंग्सले हॉलमें[1] एक मुलाकातके दौरान श्री गांधीने कहा:

मैं लंकाशायर जानेको तैयार, बल्कि उत्सुक हूँ। मैं उत्तरी क्षेत्र भी जाना चाहता हूँ और मैंचेस्टर तो अवश्य जाना चाहता हूँ। मुझे बहुत-से पत्र और तार मिले हैं, जिनमें मुझसे वहाँ आनेको कहा गया है और यह भी कि अगर मैं गोलमेज परिषद्में न भी जाऊँ तो वहाँ जानेसे ही मेरा इंग्लैंड आना सफल हो जायेगा। मेरा वहाँ जाना या न जाना वहाँके लोगों पर निर्भर है। अगर वे चाहते हों कि मैं आऊँ तो इसके लिए उन्हें बस इतना-भर कह देना पड़ेगा कि 'आइए'।

मैं यह समझ सकता हूँ कि विदेशी वस्त्रोंके सम्बन्धमें हमने जो-कुछ किया है, उसको लेकर यहाँ बहुत-सी गलतफहमियाँ फैली हुई हैं। अगर मैं वहाँ गया और उनसे बातचीत हुई तो मैं चाहूँगा कि वे मुझसे सवाल-जवाब करें। मैं उनसे अपनी बात बिना किसी दुराव-छिपावके कहूँगा।

श्री गांधीने कहा कि जो प्रचार किया गया है उससे लंकाशायरके लोगोंका मन कहाँ तक प्रभावित हुआ है, यह तो मैं नहीं जानता, लेकिन आशा तो मैं यही रखूँगा कि अगर कोई गलतफहमी हो तो मैं उसे दूर कर दूँ और वैसा करनेके लिए मैं

१. म्यूरियल लेस्टर द्वारा लन्दनके ईस्ट एण्ड क्षेत्रमें स्थापित एक समाजसेवाकी संस्था; गांधीजी ने अपने लन्दन-प्रवासके दरम्यान वहीं ठहरना पसंद किया था।

कुछ भी उठा नहीं रखूँगा। अगर मैं वहाँ जाऊँगा तो मैं मुख्यतः श्री सी० एफ० एन्ड्रयूजके मार्ग-दर्शनमें चलूँगा, क्योंकि वे लंकाशायरमें काम करनेवाले बहुत-से स्त्री-पुरुषोंको जानते हैं और बहुत-से मिल-मालिकोंसे भी उनका सम्पर्क रहा है।

जब उनसे भारतके लोगोंके लिए सन्देश माँगा गया तो उन्होंने कहा:

उनसे कहिए कि मन, वचन और कर्मसे अहिंसाका पूरा पालन करना तथा कांग्रेसके रचनात्मक कार्यक्रमको पूर्ण रूपसे लागू करनेका प्रयत्न करना ही मेरे लिए उनकी सबसे अच्छी सहायता होगी।

इंग्लैंडके मौसमके बारेमें वे कुछ ज्यादा शिकायतके लहजेमें नहीं बोले। उन्होंने कहा कि इसको तो मैं पहले भी कई वर्ष झेल चुका हूँ और इससे अच्छी तरह वाकिफ हूँ। साथ ही उन्होंने यह भी कहा कि इस बार जबकि यहाँ मेरे रहने-सहने वगैरहका ढब कुछ दूसरा होगा, इस मौसमका मुझपर क्या असर होगा, यह मैं नहीं कह सकता। वैसे मौसमकी सर्दीका खमियाजा मित्रोंके प्रेमकी गरमाहट पूरा कर देगी।

किसीने उनसे पूछा कि क्या वे सोमवारको, अर्थात् अपने मौनवारको भी संघ-संरचना समितिकी बैठकमें जायेंगे। इसपर उन्होंने कहा:

मैं तो अपने-आपको प्रधान-मन्त्री और भारत मन्त्रीकी इच्छा पर छोड़ दूँगा। वे जैसा चाहेंगे वैसा ही करूँगा। यदि उन्हें मेरा वहाँ जाकर चुप बैठना असुविधा-जनक नहीं लगता तो मैं खुशी-खुशी वहाँ जाकर बैठककी कार्यवाही देखूँगा।

किंग्सले हॉलके पास रहनेवाले लोग श्री गांधीको देखने और उनसे मिलनेकी आशा लगाये हुए हैं। श्री गांधीका कहना है कि वे बेशक उनसे मिलनेकी आशा रखते हैं। उन्होंने कहा:

अगर ऐसा नहीं होता तो मैं यहाँ आता ही क्यों? मैं आशा करता हूँ कि वे यहाँ आयेंगे और मैं उनमें से कुछके घर जा कर उनसे मिल सकूँगा, बशर्ते कि कुमारी लेस्टर ऐसी व्यवस्था कर दें जिससे मुझे वहाँ जाते कोई देख न सके।

गोलमेज परिषद्में शामिल होनेवाले मुसलमान प्रतिनिधियोंमें से एक हैं श्री शौकत अली। कल एक मुलाकातके दौरान उन्होंने बताया कि साम्प्रदायिक समस्याको लेकर वे श्री गांधीसे चार बार मिल चुके हैं और इन मुलाकातोंके परिणामस्वरूप ज्यादा अच्छे आसार नजर आने लगे हैं। जब श्री गांधीसे पूछा गया कि क्या वे उनकी इस रायसे सहमत हैं तो उन्होंने कहा:

हाँ, सहमत तो हूँ ही। जब दो आदमी — और खासकर ऐसे दो आदमी जो लगातार दस साल तक एक-दूसरेके दोस्त रहे हैं — आपसमें मिलकर बातचीत करते हैं तब प्रगति तो होती ही है। आशा तो बराबर बनी हुई है, लेकिन सब-कुछ इस बात पर निर्भर है कि यहाँ क्या होता है। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, समझौतेके मार्गमें कोई कठिनाई नहीं आयेगी, क्योंकि व्यक्तिशः मैं तो मुसलमानोंकी माँगें स्वीकार कर ही लूँगा।

मैं लॉर्ड रॉदरमेयर और श्री विन्स्टन चर्चिलसे पत्र लिखकर एक मुलाकातका अवसर देनेका निवेदन करने जा रहा हूँ। यह कोई मजाककी बात नहीं है। मैं तो अपने विरोधियोंसे बराबर कहता रहा हूँ वे मुझे मिलनेका अवसर दें। इस तरह मुझे अपनी स्थिति समझानेका मौका मिल सकता है। मैं यह पता करने जा रहा हूँ कि ऐसे कौन-से लोग हैं जो मेरे भी मित्र हैं और श्री चर्चिलके भी। मैं उनके ऐसे ही किसी मित्रके माध्यमसे उनसे सम्पर्क स्थापित करनेकी कोशिश करूँगा।

मैं तो सुलह-शान्ति स्थापित करनेके लिए कटिबद्ध होकर ही यहाँ आया हूँ। वैसे तो ऐसी शान्ति ईश्वर ही दे सकता है, लेकिन इस दिशामें जो-कुछ करना सहायक हो सकता है, उसे करनेसे मैं बाज नहीं आऊँगा।[१]

एक विख्यात अमेरिकी एजेंसीके एक प्रतिनिधिने आशान्वित स्वरमें पूछा: "क्या ऐसी कोई सम्भावना है कि आप स्वदेश लौटते समय अमेरिकाके रास्ते जायें?"

नहीं, अमेरिकाको मेरी जरूरत नहीं है। अमेरिका अभी मेरा स्वागत करनेको तैयार नहीं है। 'मेरा' से मेरा मतलब है मेरे सन्देशका। मेरे मित्रोंने मुझे वहाँ न जानेकी सलाह दी है और मेरे अन्दर भी कहीं कोई कह रहा है कि उनकी सलाह ठीक ही है। सम्भव है, वे मुझे लेकर काफी हो-हल्ला करें और मुझे बहुत-सी सभाओंमें भी बुलायें, लेकिन अन्तमें इससे कुछ बननेवाला नहीं है। मैं भारतमें अपना काम करके ही अमेरिकाको अपना सन्देश सबसे अच्छी तरह दे रहा हूँ। साथ ही ऐसी बहुत-सी बातें हो रही हैं जिनसे पता चलता है कि अमेरिकावाले मेरे काममें रुचि ले रहे हैं। वहाँसे सैकड़ों पत्र मेरे पास आते हैं। हो सकता है कि वे केवल मेरे हस्ताक्षर लेनेके बहाने-भर हों, लेकिन मेरे काममें उनकी रुचि तो है ही।

[अंग्रेजीसे]

मैंचेस्टर गार्डियन, १४-९-१९३१ और **बॉरोज़ ऑफ़ पॉपलर ऐंड स्टेपनी ईस्ट लन्दन ऐडवर्टाइज़र,** १९-९-१९३१

१. यहाँ तकका अंश **मैंचेस्टर गार्डियन** से लिया गया है और शेष **बॉरोज़ ऑफ पॉपलर ऐंड स्टेपनी ईस्ट लन्दन ऐडवर्टाइज़र** से।

६. अमेरिकाके लिए प्रसारित वार्त्ता[1]

१३ सितम्बर, १९३१

मेरे विचारसे, भारतीय परिषद् (इंडियन कांफरेन्स) के जो परिणाम होंगे उनका प्रभाव भारत पर ही नहीं, सारे संसार पर पड़ेगा। भारत अपने-आपमें लगभग एक महादेश है। मानव-जातिका पाँचवाँ हिस्सा यहीं बसता है। इसकी सभ्यता संसारकी प्राचीनतम सभ्यताओंमें से है। इसकी परम्पराएँ हजारों-हजार वर्ष पुरानी हैं, और दुनिया यह देखकर दंग है कि इनमें से कुछ तो आज भी अपने मूल रूपमें ज्यों-की-त्यों बनी हुई हैं। इसमें सन्देह नहीं कि कालके थपेड़ोंने अन्य अनेक संस्कृतियों और संस्थाओंकी तरह इस सभ्यताके भी विशुद्ध रूपको बदला है, प्रभावित किया है।

यदि भारतको अपने सुदूर अतीतके वैभवको स्थायित्व प्रदान करना है तो वह स्वतन्त्रता प्राप्त करके ही ऐसा कर सकता है। हमारे संघर्षकी ओर सारी दुनियाका ध्यान गया है। इसका कारण यह नहीं है कि हम भारतीय अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए लड़ रहे हैं। वास्तवमें इसका कारण यह है कि हमने उस स्वतन्त्रताको प्राप्त करनेके लिए जो उपाय अपनाये हैं वे अनुपम हैं, और, जहाँतक इतिहाससे मालूम होता है, उन्हें ऐसी किसी भी जातिने नहीं अपनाया है, जिसका कोई विवरण उपलब्ध है।

हमने जो उपाय अपनाये हैं वे हिंसाके या रक्तपातके उपाय नहीं हैं, और न वे उस अर्थमें कूटनीतिक उपाय हैं, जो अर्थ इस शब्दका आजकल लगाया जाता है। वे उपाय तो विशुद्ध सत्य और अहिंसा हैं। फिर कोई आश्चर्य नहीं कि सफल और शान्तिपूर्ण क्रान्ति सम्पन्न करनेके इस प्रयत्नकी ओर दुनियाका ध्यान खिंच गया है। आज तक तो राष्ट्र आपसमें पशुओंकी तरह ही जूझते रहे हैं। उन्होंने जिन्हें अपना शत्रु माना है उनसे जी-भरकर बदला लिया है।

बड़े-बड़े राष्ट्रों द्वारा अपनाये गये राष्ट्रगानों पर ध्यान देते हैं तो हम पाते हैं कि उनमें तथाकथित शत्रुके अमंगलकी कामना की गई है। उनमें उन्होंने अपने शत्रुओंका नाश कर देनेकी प्रतिज्ञा की है और यहाँ तक कि इस सबमें ईश्वरका नाम जोड़ने और उससे सहायता देनेकी प्रार्थना करनेमें भी कोई संकोच नहीं किया है। हम भारतवालों ने इस तरीकेको बदल दिया है। हमें लगता है कि जिस नियमसे पशु-जगत् संचालित होता है उस पर मानव-जगत्को नहीं चलना चाहिए। वह नियम मानवीय गरिमाके विरुद्ध है।

१. यह प्रसारण कोलम्बिया ब्रॉडकास्टिंग सर्विस पर किंग्सले हॉलसे किया गया था। फिशर कृत **लाइफ ऑफ़ महात्मा गांधी** के अनुसार गांधीजी ने अपना यह अलिखित भाषण प्रारम्भ करनेसे पहले कहा था: "क्या मुझे उसमें बोलना है?" भाषण समाप्त होनेके बाद उन्होंने कहा था: "अच्छा तो अब भाषण समाप्त हुआ।" इसे रेडियो सुननेवाले लाखों लोगोंने भी सुना था।

खुद मैं तो रक्तपात करके देशकी स्वतन्त्रता प्राप्त करनेकी अपेक्षा आवश्यकता होने पर युगों तक उसकी प्रतीक्षा करते रहनेके लिए तैयार हूँ। अपने प्रायः पैंतीस वर्षोंके सतत राजनीतिक अनुभवोंके बाद मेरा अन्तर्मन तो मुझसे यही कहता है कि संसार रक्तपातसे बिलकुल तंग आ गया है। वह अपने उद्धारका कोई रास्ता ढूंढ़ रहा है और मैं अपने मनमें यह सुखद विश्वास लेकर चल रहा हूँ कि शायद नये रास्तेके लिए व्याकुल संसारको वह रास्ता दिखानेका गौरव-पद इस प्राचीन देश भारतको ही प्राप्त होगा।

इसलिए दुनियाके तमाम बड़े राष्ट्रोंको इस महान् संघर्षमें भारतके साथ हार्दिक सहयोग करनेके लिए मैं निस्संकोच आमन्त्रित करता हूँ। करोड़ों लोग अपने राष्ट्रको उचित गरिमा और सम्मानका पद दिलानेके लिए प्रतिशोधस्वरूप अपने हाथ उठाये बिना कष्ट-सहन कर रहे हैं — यह दृश्य वास्तवमें देखने और अपनी स्मृतिमें प्यारसे सँजो रखने लायक होगा।

मैंने कष्ट-सहनको आत्मशुद्धिकी प्रक्रिया कहा है। मेरा यह निश्चित मत है कि यदि कोई अपनी स्वतन्त्रता गँवाता है तो अपनी कमजोरीके कारण ही। हममें क्या दोष हैं, यह मैं जानता हूँ और उनपर मेरा मन दुःखी होता है। भारतमें दुनियाके सभी प्रमुख धर्मोंके लोग बसते हैं और बड़ी लज्जाके साथ हमें यह स्वीकार करना पड़ता है कि हम आपसमें ही बँटे हुए हैं; हिन्दू और मुसलमान एक-दूसरेकी जानके ग्राहक बने हुए हैं। यह और भी लज्जाका विषय है कि हम हिन्दू लोग अपने कई करोड़ भाइयोंको इतना पतित मानते हैं कि उनका स्पर्श भी नहीं करना चाहते। मैं तथाकथित 'अस्पृश्यों'की बात कह रहा हूँ।

जो राष्ट्र स्वतन्त्र होनेके लिए प्रयत्नशील हो, उसके लिए ये छोटी कमजोरियाँ नहीं हैं। आप देखेंगे कि आत्मशुद्धिके बल पर किये जा रहे इस संघर्षमें अस्पृश्यताके अभिशापके निवारण और भारतके विभिन्न धर्मावलम्बी तमाम वर्गों और समुदायोंके बीच एकताकी स्थापनाको हमने अपने ध्येयका एक प्रमुख अंग बनाया है।[1]

इसी दृष्टिसे हम अपने देशसे मद्यपानके अभिशापको भी दूर करनेका प्रयत्न कर रहे हैं। हमारे लिए सौभाग्यकी बात है कि शराब और मादक द्रव्योंका सेवन हमारे यहाँ बहुत कम लोग — मुख्यतः कारखानोंमें काम करनेवाले मजदूर और ऐसे ही कुछ अन्य लोग — करते हैं।

हमारे लिए यह भी सौभाग्यका विषय है कि हमारे देशमें शराब और मादक द्रव्योंके सेवनको सचमुच एक अभिशाप माना जाता है। फिर भी, इसमें सन्देह नहीं कि अपने समाजसे इस बुराईको दूर करनेकी हमारी यह लड़ाई बहुत कठिन है।

मुझे यह कहते हुए दुःख — सचमुच बहुत दुःख — हो रहा है कि वर्तमान सरकारने इस बुराईको राजस्वका एक प्रमुख साधन बना लिया है। इससे प्रतिवर्ष लगभग पचीस करोड़ रुपये प्राप्त होते हैं। लेकिन, मुझे यह कहते हुए हर्षका अनुभव हो रहा है कि भारतकी स्त्रियोंने अपने-आपको अवसरके उपयुक्त सिद्ध किया है। वे

१. यहाँ मूलमें तीन शब्द म्यूरियल लेस्टर कृत **एंटरटेनिंग गांधी** नामक पुस्तकसे लिये गये हैं।

शान्तिपूर्ण तरीकेसे इस बुराईको दूर करनेका प्रयत्न कर रही हैं। उनका तरीका यह है कि वे शराबी लोगोंसे शराब छोड़ देनेके लिए पूरी उत्कटतासे अनुनय-विनय करती हैं और इसी तरह वे शराब-विक्रेताओंसे भी शराब न बेचनेका अनुरोध करती हैं। जो लोग इन दो कुटेवोंके शिकार हैं, उनपर इस सबका काफी असर हुआ है।

काश कि मैं अभी यह कह पाता कि कमसे-कम इस एक काममें हमें शासकोंका हार्दिक सहयोग मिल रहा है। सरकार कोई कानून न भी बनाती और सिर्फ हमें अपना सहयोग देती तो मैं कहनेका साहस करता हूँ कि हमने इस सुधारको सम्पन्न कर दिखाया होता और अपने इस दुःखी देशसे शराब और मादक द्रव्योंका नामोनिशान मिटा दिया होता।

एक ऐसी शक्ति भी है जिसका अपना रचनात्मक महत्त्व है और जिसे राष्ट्रने इस संघर्षके दौरान प्रकट किया है। १,९०० मील लम्बे और १,५०० मील चौड़े इस देशमें बिखरे ७,००,००० गाँवोंमें रहनेवाले करोड़ों अर्धवुभुक्षित मानवोंके लिए हम जो इतनी अधिक चिन्ता कर रहे हैं वह इसी शक्तिका रूप है। यह बड़े दुःखका विषय है कि ये सीधे-सादे ग्रामीण लोग वर्षके लगभग छः महीने बेकार रहते हैं और इसमें उनका अपना कोई कसूर नहीं होता।

यह बात बहुत पुरानी नहीं है कि इस देशका प्रत्येक गाँव दो मानवीय आवश्यकताओं, भोजन और वस्त्रके मामलेमें आत्म-निर्भर हुआ करता था। लेकिन हमारा दुर्भाग्य कहिए कि ईस्ट इंडिया कम्पनीने उस पूरक धन्धेको और यहाँके लाखों कतैयोंको समाप्त कर दिया। ये वही कतैये थे जो इतना बारीक सूत निकालते थे जितना बारीक सूत आज तक कोई आधुनिक यन्त्र भी नहीं निकाल पाया है और जो अपनी कुशल अँगुलियोंके कौशलके कारण सारी दुनियामें विख्यात थे। कम्पनीने यह सब कैसे किया, इस विषय पर चुप रहना ही अच्छा होगा। लेकिन इसका परिणाम यह हुआ कि एक दिन इन ग्रामवासी कतैयोंने पाया कि उनका वह नेक धन्धा तो समाप्त हो चुका है। तबसे भारत उत्तरोत्तर अधिकाधिक गरीब होता गया है।

कोई इस चीजके खिलाफ चाहे जो दलील दे, लेकिन यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि ईस्ट इंडिया कम्पनीके भारत-आगमनसे पूर्व ये ग्रामवासी बेकार नहीं थे, और आज जो भी चाहे जाकर देख ले कि वे बेरोजगार हैं। इसलिए इस बातको समझने में किसी विशेष प्रयत्न या जाँच-पड़तालकी जरूरत नहीं थी कि यदि वे वर्षके छः महीने काम नहीं कर सकेंगे तो उन्हें भूखों ही रहना पड़ेगा।

तब क्या मुझे इन करोड़ों अर्ध-वुभुक्षित मानवोंकी ओरसे दुनियासे यह अनुरोध करनेका अधिकार नहीं है कि वह स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए व्याकुल इस जातिके त्राणके लिए आगे आये?

[अंग्रेजीसे]

न्यूयॉर्क टाइम्स, १४-९-१९३१

७. किंग्सले हॉलमें प्रवचन

१३ सितम्बर, १९३१

उन्होंने कहा कि यदि हम ईश्वरमें विश्वास करते हैं तो स्वाभाविक है कि उससे प्रार्थना करें। कहते हैं, शरीरके लिए जितनी महत्त्वपूर्ण खुराक है, आत्माके लिए उतनी ही महत्त्वपूर्ण प्रार्थना है। यद्यपि यह कथन सच है, किन्तु प्रार्थना आत्माके लिए उससे कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है जितनी कि खुराक शरीरके लिए है। कारण यह है कि हम कभी-कभी भोजन किये बिना भी रह सकते हैं और उससे शरीरको अच्छा ही महसूस होगा, लेकिन प्रार्थनाके बिना रहनेकी बात तो सोची ही नहीं जा सकती। उन्होंने कहा :

भोजन करनेमें हम ज्यादती भी कर सकते हैं, लेकिन प्रार्थना चाहे जितनी करें, वह अधिक नहीं होगी।

[अंग्रेजीसे]
न्यूज क्रॉनिकल, १४-९-१९३१

८. सन्देश : 'टाइम्स' को

[१४ सितम्बर, १९३१के पूर्व]

मैं शान्ति-स्थापनाके जिस प्रयोजनको लेकर इंग्लैंड आया हूँ, उसमें मैं प्रत्येक अंग्रेज स्त्री और पुरुषकी सद्भावना चाहता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
टाइम्स, १४-९-१९३१

९. पत्र : लॉर्ड इर्विनको

१४ सितम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

कलसे मैं काममें जुट जाऊँगा। मैं जो-कुछ भी कर रहा हूँ और करूँगा, सबमें आपका और आपके साथ हुई बातचीतका[१] खयाल बना हुआ है और बना रहेगा।

[अंग्रेजीसे]
हैलिफैक्स, पृष्ठ ३१६-७

१. गांधीजी और लॉर्ड इर्विनमें हुई इस बातचीतके विवरणके लिए देखिए खण्ड ४५।

१०. भेंट : 'बॉम्बे क्रॉनिकल' के प्रतिनिधिको

लन्दन
१४ सितम्बर, १९३१

'क्रॉनिकल' के लिए दी गई एक खास भेंटके दौरान आज महात्माजी ने कई प्रश्नोंके उत्तर दिये। प्रतिनिधिने उनसे पूछा कि क्या संघ-संरचना समितिकी सोमवारकी बैठकमें लॉर्ड सैंकेने समितिके विचारार्थ सरकारकी नई योजनाकी घोषणा की थी और क्या महात्माजी को ऐसा लगता है कि कांग्रेस ऐसी किसी योजनाको स्वीकार करेगी जो उस चीजसे कम पड़ती हो जिसे उसने दिल्ली समझौतेकी पुष्टि करके स्वीकार किया है। इसपर गांधीजी ने कहा :

लॉर्ड सैंकी जो योजना पेश करना चाहते हैं, उसके पेश किये जानेसे पहले ही उस पर कुछ कहना मेरे लिए मुनासिब नहीं होगा।

प्र० – संघ-शासनकी योजनाके अनुसार तो संघमें ऐसी अलग-अलग इकाइयाँ शामिल रहेंगी जिनमें से कुछमें ब्रिटिश भारतमें प्रचलित शासन-प्रणाली लागू रहेगी और कुछमें देशी राज्योंमें प्रचलित शासन-प्रणाली। फिर क्या आप ऐसा मानते हैं कि इस योजनाके अधीन लोकतन्त्र और निरंकुश तन्त्रमें सामंजस्य बैठा पाना सम्भव होगा ?

उ० – दोनों ओर से समझौतेकी भावना हो तो यह मुझे कोई कठिन तो नहीं लगता।

प्र० – गोलमेज परिषद्में देशी राज्योंकी जनताका प्रतिनिधित्व तो हो नहीं रहा है। इस हालतमें क्या आप ऐसा समझते हैं कि कांग्रेस देशी राजाओंको अपने-अपने राज्योंमें लोकतान्त्रिक शासन-पद्धति स्वीकार करनेके लिए मजबूर कर सकती है ?

उ० – राजा लोग कर तो सकते हैं बहुत-कुछ, लेकिन वास्तवमें वे करेंगे क्या, यह मैं नहीं कह सकता।

प्र० – परिषद्में राष्ट्रवादी मुसलमानोंका कोई प्रतिनिधि शामिल नहीं है। इस स्थितिमें क्या आप ऐसा मानते हैं कि हिन्दू-मुस्लिम समस्या पर किसी भी हद तक सफलतापूर्वक विचार किया जा सकता है ?

उ० – यह काम अगर लगभग असम्भव नहीं तो कठिन तो होगा ही। लेकिन मुझे बराबर यही लगता है कि डॉ० अन्सारीके प्रतिनिधि चुने जानेमें चाहे जो-कोई भी बाधक हुआ हो, उसने भयंकर भूल की है।

प्र० – तीनों दलोंकी राष्ट्रीय सरकारने हाल ही में ऐसी घोषणा की है कि भारतीय मामलेके सम्बन्धमें ब्रिटिश नीतिमें कोई परिवर्तन नहीं होगा। इस घोषणाको

ध्यानमें रखते हुए भी क्या आप यह सोचते हैं कि बाह्य परिस्थितियाँ ऐसी हैं जिनसे यह आशा की जा सकती है कि भारत कराची प्रस्तावके अनुसार औपनिवेशिक स्वराज्य प्राप्त कर लेगा?

उ० — इस सवालमें दो गलतियाँ जान पड़ती हैं। आप समझते हैं कि मैं जो तमाम प्रतिकूल परिस्थितियोंके बावजूद आशा लगाये हुए हूँ उसका कारण बाह्य परिस्थितियाँ हैं। लेकिन वास्तवमें मैंने बम्बईमें जो-कुछ कहा और अपने जिस कथनमें मुझे अब भी कोई परिवर्तन करनेका कारण नहीं दिखाई देता वह यह था कि यद्यपि आशा रखनेका कोई आसार नजर नहीं आ रहा है, फिर भी एक जन्मजात आशा-वादी होनेके नाते मैं प्रतिकूल परिस्थितियोंमें भी आशा नहीं छोड़ सकता। आशाके लिए कोई कारण, कोई आधार नहीं होता। यह तो अपने उद्देश्यकी सचाई और साधनोंकी शुद्धता पर निर्भर है।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १५-९-१९३१

११. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

लन्दन
१५ सितम्बर, १९३१

मैं इसे प्रतिक्रियावादी मानता हूँ। इस तरहके विधेयकसे उन लोगोंको चिन्ता होना स्वाभाविक है जो यह आशा और विश्वास रखते हैं कि गोलमेज परिषद्के परिणामस्वरूप निश्चय ही सत्ता भारतकी जनताके हाथोंमें आ जायेगी।

इसलिए मुझे भरोसा है कि सरकार तनिक सोच-विचार करने पर इस विधेयकको वापस ले लेगी, और कमसे-कम केन्द्रीय विधान सभाके सदस्य तो इसका विरोध करेंगे ही।[2]

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १६-९-१९३१

१. गांधीजी ने यह वक्तव्य प्रेस विधेयककी व्यवस्थाओंको पढ़नेके बाद दिया था। कहनेको इसका उद्देश्य मार-काट या हिंसाकी वृत्तिको भड़कानेवाले लेखोंका प्रकाशन रोकना था, किन्तु वास्तवमें इसके लागू हो जाने पर अखबारोंका मुँह ही बन्द हो जाता।

२. ३ अक्टूबर, १९३१ को केन्द्रीय विधान सभाने इसे २४ के मुकाबले ५५ मतोंसे पास कर दिया।

१२. भाषण: संघ-संरचना समितिके समक्ष[1]

लन्दन
१५ सितम्बर, १९३१

लॉर्ड चान्सलर महोदय, महाराजागण और मित्रो,

प्रारंभमें ही मुझे यह स्वीकार करना चाहिए कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसकी स्थितिको आपके सामने रखते हुए मुझे बड़ा अटपटा लग रहा है। मैं यह बता देना चाहूँगा कि मैं जो इस समितिमें और यथासमय गोलमेज परिषद्में शामिल होनेके लिए लन्दन आया हूँ सो अपने मनमें यही भावना लेकर आया हूँ कि आप सबके साथ पूरा सहयोग करूँगा और इस बातकी भरसक कोशिश करूँगा कि हमारे बीच अधिकसे-अधिक बातोंपर सहमति हो सके। मैं महामहिमकी सरकारको इस बातके लिए भी आश्वस्त कर देना चाहता हूँ कि मैं किसी भी अवस्थामें अधिकारियोंको किसी परेशानीमें नहीं डालना चाहता और न चाहूँगा। मैं यहाँ एकत्र अपने सहयोगियोंको भी यही आश्वासन देना चाहता हूँ——हमारे बीच चाहे जितने मतभेद

१. गोलमेज परिषद्का दूसरा अधिवेशन ७ सितम्बरसे १ दिसम्बर, १९३१ तक चला। इसमें कुल ११२ प्रतिनिधि शामिल हुए थे — २० ब्रिटिश सरकारके, २३ देशी राज्योंके और ६९ ब्रिटिश भारतके। गांधीजी दूसरे अधिवेशनमें कांग्रेसके एकमात्र प्रतिनिधिके रूपमें शामिल हुए थे। प्रधान मन्त्री रैम्जे मैकडॉनल्ड परिषद्के अध्यक्ष थे। दूसरे अधिवेशनका आरम्भ परिषद्के सभी सदस्योंकी बैठकसे नहीं हुआ। संघ-संरचना समितिकी बैठक दुबारा ७ सितम्बरको शुरू हुई और अल्पसंख्यक-समस्या समितिकी २८ सितम्बरको। इसके बाद २८ नवम्बरको फिर पूर्णाधिवेशन प्रारम्भ हुआ। परिषद्की दूसरी समितियोंकी बैठक दुबारा नहीं हुई।

संघ-संरचना समितिकी अध्यक्षता लार्ड सैंकीने की और उसे जिन विषयों पर विचार करना था वे इस प्रकार थे:

१. संघीय विधानमण्डलमें कितने सदस्य हों और उसका गठन कैसा हो।
२. संघीय विधानमण्डलके सदस्योंके निर्वाचनसे सम्बन्धित प्रश्न।
३. संघीय विधानमण्डलके दोनों सदनोंके आपसी सम्बन्ध।
४. संघ तथा उसके घटकोंके बीच वित्तीय साधनोंका बँटवारा।
५. मन्त्रिमण्डल और विधानमण्डलसे उसके सम्बन्ध।
६. संघीय तथा प्रान्तीय विधानमण्डलोंके बीच विधायक अधिकारोंका बँटवारा और संघीय विषयोंके सम्बन्धमें कानून बनानेका देशी राज्यों पर प्रभाव।
७. संघीय सरकार, देशी राज्यों और प्रान्तोंके बीचके प्रशासनिक सम्बन्ध।
८. संघीय न्यायालय।

समिति पहले चार और फिर आठवें विषय पर ही अपनी रिपोर्ट दे पाई। अल्पसंख्यक समस्या समितिमें कोई सहमति नहीं हो सकी।

हों, मैं उनके मार्गमें किसी प्रकारकी बाधा नहीं डालूँगा। इसलिए यहाँ मेरी स्थिति पूर्ण रूपसे आपकी और महामहिमकी सरकारकी सद्भावनापर निर्भर है। यदि किसी अवस्थामें मुझे लगा कि मुझसे परिषद्को कोई लाभ नहीं होनेवाला है तो मैं उससे अलग हो जानेमें कोई संकोच नहीं करूँगा। जिन लोगोंके जिम्मे इस समिति और परिषद्की व्यवस्थाका भार है, उनसे भी मैं कह सकता हूँ कि वे मुझे संकेत-भर कर देंगे तो मैं बेहिचक इस सारी कार्यवाहीसे अलग हो जाऊँगा।

मुझे ये सब बातें इसलिए कहनी पड़ रही हैं कि मैं जानता हूँ, कांग्रेस तथा सरकारके बीच बुनियादी मतभेद हैं, और सम्भव है, मेरे और मेरे सहयोगियोंके बीच भी कोई बड़े मतभेद हों। इसके अलावा मैं एक मर्यादाके भीतर ही काम कर सकूँगा –– मैं तो भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसकी ओरसे काम करनेवाला एक मामूली और अदना-सा एजेंट-भर हूँ। और यहाँ यदि हम एक बार फिर इस बातका स्मरण कर लें कि कांग्रेस क्या है और उसका उद्देश्य क्या है तो यह ज्यादा अच्छा रहेगा। उस हालतमें आप शायद मुझे अपनी सहानुभूति दे सकेंगे, क्योंकि मैं जानता हूँ कि मेरे सिर पर जो जिम्मेदारी आ पड़ी है, वह बहुत भारी है। यदि मैं गलती नहीं करता तो कहूँगा कि कांग्रेस भारतका सबसे पुराना राजनीतिक संगठन है। यह लगभग ५० वर्ष पुरानी है और इस कालमें यह बिना किसी व्याघातके हर साल अपना अधिवेशन करती आई है। यह संस्था अपने नामके अनुरूप एक राष्ट्रीय संस्था है। यह किसी विशेष समुदाय, अथवा वर्ग या हितका प्रतिनिधित्व नहीं करती। इसका दावा है कि यह भारतके समस्त हितों और सभी वर्गोंका प्रतिनिधित्व करती है। मुझे यह बताते हुए अत्यन्त हर्ष का अनुभव हो रहा है कि कांग्रेसकी स्थापनाकी बात सबसे पहले एक अंग्रेजके मनमें उठी। वे अंग्रेज सज्जन थे एलन ऑक्टैवियस ह्यूम, जिन्हें हम कांग्रेसका जनक कहते थे। उस संस्थाके पालन-पोषणका श्रेय दो पारसियोंको प्राप्त है। एक तो थे फीरोजशाह मेहता। दूसरे थे दादाभाई नौरोजी, जिन्हें सारा भारत सहर्ष अपना बुजर्ग नेता कहा करता था। प्रारम्भसे ही इस संस्थामें मुसलमानों, ईसाइयों, ऐंग्लो-इंडियनों, बल्कि कह सकता हूँ कि सभी धर्मों और सम्प्रदायोंको न्यूनाधिक यथेष्ट प्रतिनिधित्व प्राप्त रहा है। स्वर्गीय बदरुद्दीन तैयबजीने तो कांग्रेसके साथ अपनेको एकाकार ही कर दिया था। कांग्रेसके अध्यक्ष मुसलमान भी हुए हैं और पारसी तो हुए ही हैं। और इस समय मुझे कमसे-कम एक भारतीय ईसाईका भी नाम याद आ रहा है। मेरा मतलब डब्ल्यू० सी० बनर्जीसे है। फिर, कालिचरण बनर्जी थे, जिनका कांग्रेससे अटूट सम्बन्ध था और जिनसे अधिक सच्चे भारतीयके दर्शन करनेका सौभाग्य मुझे कभी नहीं मिला। अभी मुझे श्री के० टी० पालकी अनुपस्थिति बहुत खल रही है और मुझे विश्वास है कि आप सबको भी खल रही होगी। वैसे, मुझे ठीक-ठीक तो मालूम नहीं है, लेकिन जहाँतक मालूम है उसके आधारपर कह सकता हूँ कि यद्यपि वे औपचारिक रूपसे कभी कांग्रेसके सदस्य नहीं रहे, लेकिन वे पक्के राष्ट्रवादी थे। आज हमें अपने बीच स्वर्गीय मौलाना मुहम्मद अलीकी भी कमी उतनी ही खल रही है, और आप जानते ही

हैं कि वे भी कांग्रेसके अध्यक्ष थे। इस समय कांग्रेस कार्य-समितिके १५ सदस्योंमें से ४ मुसलमान हैं। महिलाओंने भी कांग्रेसके अध्यक्ष-पदको सुशोभित किया है। एक तो थीं डॉ० एनी बेसेंट और उनके बाद हुईं श्रीमती सरोजिनी नायडू। वे इस समय कार्य-समितिकी सदस्या भी हैं। इस प्रकार आप देख सकते हैं कि कांग्रेसमें वर्ग या धर्मका कोई अन्तर नहीं किया गया है और न स्त्री-पुरुषका ही कोई भेद बरता गया है।

अपने स्थापना-कालसे ही कांग्रेस तथाकथित 'अस्पृश्यों' के लिए काम करती आई है। एक समय ऐसा था जब कांग्रेस अपने प्रत्येक वार्षिक अधिवेशनके साथ एक सामाजिक कांफरेंसका भी आयोजन किया करती थी। यह कांफरेंस कांग्रेसका एक अभिन्न अंग थी और स्वर्गीय रानडेने अपनी अन्य प्रवृत्तियोंके साथ-साथ इस कांफरेंसके काममें भी अपनी पूरी शक्ति लगा दी थी। आप देखेंगे कि उनके नेतृत्वमें सामाजिक कांफ्रेंसके कार्यक्रममें अस्पृश्यता-निवारणको एक प्रमुख स्थान दिया गया था। लेकिन १९२०में कांग्रेसने इस दिशामें एक बड़ा कदम उठाया और अस्पृश्यता-निवारणके प्रश्नको अपने राजनीतिक कार्यक्रमका एक महत्त्वपूर्ण अंग बना लिया। जिस प्रकार कांग्रेसने हिन्दू-मुस्लिम एकताको — हिन्दू-मुस्लिम एकतासे उसका तात्पर्य सभी वर्गोंकी एकतासे रहा है — स्वराज्य-प्राप्तिके लिए अनिवार्य माना, उसी प्रकार उसने अस्पृश्यताके अभिशापके निवारणको भी पूर्ण स्वराज्य प्राप्त करनेकी एक अनिवार्य शर्त माना। कांग्रेसने जो स्थिति १९२० में अपनाई वह आज भी कायम है। इस तरह आप देख सकते हैं कि कांग्रेस अपने नामके साथ जुड़े राष्ट्रीय विशेषणको सच्चे अर्थोंमें चरितार्थ करनेके लिए प्रारम्भसे ही प्रयत्नशील रही है।

और यदि यहाँ उपस्थित आप महाराजागण मुझे कहनेकी इजाजत दें तो कहूँगा कि बिलकुल प्रारम्भिक अवस्थामें कांग्रेसने आपके हितोंकी रक्षाका भी प्रयत्न किया। मैं इस समितिको यह स्मरण करा दूँ कि कश्मीर और मैसूरके मामलेको उठानेवाले भारतके वे बुजुर्ग नेता दादाभाई नौरोजी ही थे और मैं सम्पूर्ण विनम्रताके साथ यह कहूँगा कि ये दोनों राजघराने दादाभाई नौरोजी तथा कांग्रेसके सत्-प्रयासोंके कुछ कम ऋणी नहीं हैं। सच तो यह है कि देशी राज्योंके घरेलू और आन्तरिक मामलोंमें कोई दस्तन्दाजी करनेसे अपना हाथ रोके रहकर कांग्रेस आज तक भारतके राजाओंकी सेवा करनेकी कोशिश करती रही है।

इसलिए मैं आशा करता हूँ कि मैंने कांग्रेसका यह जो संक्षिप्त परिचय देना ठीक समझा, उसे जान लेनेके बाद यह समिति तथा कांग्रेसके दावोंमें किसी प्रकारकी रुचि रखनेवाले अन्य लोग भी यह समझ सकेंगे कि इसने अपने लिए जो दावा किया है उसका औचित्य साबित करनेकी भी कोशिश की है। मैं जानता हूँ कि यदा-कदा वह अपने दावेको सही साबित करनेमें विफल भी रही है, लेकिन मैं यह कहनेका साहस करता हूँ कि यदि आप उसके इतिहासपर गौर करें तो पायेंगे कि वह अधिक अवसरोंपर सफल ही रही है और ज्यों-ज्यों समय बीतता गया है, उसकी सफलता बढ़ती गई है और असफलता घटती गई है। सबसे बड़ी बात

तो यह है कि कांग्रेस तत्त्वतः उन करोड़ों मूक, अर्धबुभुक्षित मानवोंका प्रतिनिधित्व करती है जो भारत-भरमें बिखरे ७,००,००० गाँवोंमें बसे हुए हैं — फिर चाहे वे, जिसे ब्रिटिश भारत कहते हैं, उस हिस्सेके रहनेवाले हों या जिसे भारतके देशी राज्य कहा जाता है, उस क्षेत्रके निवासी हों। ऐसे प्रत्येक हितको, जिसे कांग्रेस रक्षणीय मानती है, इन करोड़ों मूक मानवोंके हित-साधनमें सहायक होना है; और इसलिए आपको यदा-कदा विभिन्न हितोंके बीच ऊपरी तौरपर कुछ टकराव देखनेको मिलता है। लेकिन अगर इन हितोंके बीच कोई वास्तविक टकराव हो तो मुझे कांग्रेसकी ओरसे यह कहनेमें कोई हिचक नहीं है कि उस हालतमें वह इन करोड़ों मूक मानवोंके हित-साधनके लिए बाकी सभी हितोंका बलिदान कर देगी। अतएव कांग्रेस तत्त्वतः किसानोंका संगठन है और वह उत्तरोत्तर किसान-संगठन ही बनती जा रही है। आपको — समितिके भारतीय सदस्योंको भी — शायद यह जानकर आश्चर्य होगा कि आज कांग्रेस अपने अखिल भारतीय चरखा संघ नामक संगठनके जरिये लगभग २,००० गाँवोंकी कोई ५०,००० स्त्रियोंको रोजगार दे रही है और इनमें से कदाचित् ५० प्रतिशत मुसलमान हैं तथा कई हजार स्त्रियाँ 'अस्पृश्य' वर्गकी हैं। इस प्रकार हमने रचनात्मक कार्यके सहारे इन गाँवोंमें प्रवेश किया है। और हम इस बातके लिए प्रयत्नशील हैं कि ७,००,००० गाँवोंमें से प्रत्येक गाँव हमारी इस रचनात्मक प्रवृत्तिकी परिधिमें आ जाये। यह काम अतिमानवीय है, लेकिन यदि इसे मानवीय प्रयत्नोंसे सम्पन्न किया जा सकता हो तो आप शीघ्र ही पायेंगे कि कांग्रेसने अपनी यह प्रवृत्ति इन तमाम गाँवोंमें शुरू कर दी है और वह उन्हें चरखेका सन्देश दे रही है।

मैं उम्मीद करता हूँ कि कांग्रेसके इस प्रातिनिधिक स्वरूपका परिचय पा लेनेके बाद, आप मुझे दिये गये कांग्रेसके आदेश (मेंडेट)को सुनकर आश्चर्य नहीं करेंगे। आशा है, वह आदेश आपके कानोंको अप्रिय नहीं लगेगा। आप यह मान सकते हैं कि कांग्रेस ऐसा दावा कर रही है जिसे किसी तरह सिद्ध नहीं किया जा सकता। लेकिन वह दावा जैसा भी है, उसे मैं कांग्रेसकी ओरसे अधिकसे-अधिक विनम्र ढंगसे, किन्तु साथ ही पूरी दृढ़ताके साथ आपके सामने प्रस्तुत करने जा रहा हूँ। मैं अपनी पूरी आस्था और शक्तिसे उस दावेकी पैरवी करने यहाँ आया हूँ। यदि आप मुझे इस बातकी प्रतीति करा दें कि मैं जो-कुछ कह रहा हूँ, सचाई उससे उलटी है और कांग्रेसका दावा इन करोड़ों मूक मानवोंके हितोंके विरुद्ध है तो मैं अपनी बातपर फिरसे विचार करूँगा। यदि कोई मुझे अपना दृष्टिकोण समझा सके तो उसे समझनेको मैं बराबर तैयार रहता हूँ, लेकिन इसके बावजूद यदि मुझे कांग्रेसके एजेंटके रूपमें ठीक काम करना है तो अपनी सम्मतिमें वैसा परिवर्तन करनेसे पूर्व मुझे अपने कांग्रेसके मालिकोंसे परामर्श करना होगा।

अब मैं कांग्रेस द्वारा दिया आदेश-पत्र पढ़ूँगा ताकि आप सब मुझपर लगी मर्यादाओंको साफ-साफ समझ सकें। यह है कराची कांग्रेस द्वारा पास किया गया प्रस्ताव :—

कार्य-समिति तथा भारत सरकारके बीच हुए अस्थायी समझौतेपर विचार करनेके बाद यह सभा उसकी पुष्टि करती है और यह स्पष्ट कर देना चाहती है कि कांग्रेसका पूर्ण स्वराज्यका लक्ष्य ज्यों-का-त्यों कायम है। यदि ब्रिटिश सरकारके प्रतिनिधियोंके साथ किसी कांफरेंसमें कांग्रेसके किसी प्रतिनिधि-मण्डलके शामिल होनेका कोई रास्ता खुला रहता है तो वह प्रतिनिधि-मण्डल उसी लक्ष्यकी पूर्तिके लिए काम करेगा और विशेष रूपसे इस बातको ध्यानमें रखकर काम करेगा कि सेना, विदेश-नीति, वित्त और राजस्व तथा अर्थसे सम्बन्धित नीतिपर राष्ट्रका नियन्त्रण स्थापित हो सके; भारत अथवा इंग्लैंडको अपने सिर कौन-कौन-से आर्थिक दायित्व लेने चाहिए, यह तय करनेके लिए एक निष्पक्ष न्यायाधिकरण द्वारा भारतमें ब्रिटिश सरकारके आर्थिक सौदोंकी जाँच कराई जा सके; और दोनोंमें से प्रत्येक पक्षको यह साझेदारी अपनी इच्छानुसार समाप्त कर देनेका अधिकार प्राप्त हो सके। लेकिन कांग्रेस प्रतिनिधि-मण्डल इन मुद्दोंमें ऐसे फेर-बदल स्वीकार करनेको स्वतन्त्र होगा जो भारतके हितोंके लिए स्पष्ट रूपसे आवश्यक हों।

इसके बाद प्रतिनिधिकी नियुक्तिकी बात है।

इस आदेश-पत्रके प्रकाशमें मैंने गोलमेज परिषद् द्वारा नियुक्त अनेक उपसमितियोंके अस्थायी निष्कर्षोंको यथाशक्ति पूरे ध्यानसे पढ़नेकी कोशिश की है। मैंने प्रधान मन्त्रीके उस वक्तव्यको भी ध्यानपूर्वक पढ़ा है जिसमें उन्होंने महामहिमकी सरकारकी सुविचारित नीति प्रस्तुत की है। वैसे तो मेरे समझनेमें भूल भी हो सकती है, लेकिन जहाँतक मैं इस दस्तावेजको समझ पाया हूँ, कांग्रेसका जो लक्ष्य और दावा है, उससे यह बहुत पीछे रह जाता है। यह सच है कि मुझे जरूरत पड़नेपर कांग्रेसके लक्ष्यमें ऐसे फेर-बदल स्वीकार करनेकी छूट दी गई है जो भारतके हितके लिए स्पष्टतः आवश्यक हों, लेकिन ऐसे फेर-बदलको इस आदेश-पत्रमें कही गई बुनियादी बातोंसे तो मेल खाना ही चाहिए।

यहाँ मैं आपको दिल्लीमें सरकार तथा कांग्रेसके बीच हुए उस समझौतेकी शर्तोंका स्मरण कराना चाहता हूँ जिसे मैं एक पवित्र और हर हालतमें पालन किया जाने लायक समझौता मानता हूँ। उस समझौतेमें कांग्रेसने संघ-शासनके सिद्धान्तको, इस सिद्धान्तको कि जिम्मेदारी केन्द्रके हाथोंमें हो, स्वीकार किया है और साथ ही यह सिद्धान्त भी मंजूर किया है कि भारतके हितोंके लिए जितने जरूरी हों उतने रक्षात्मक पूर्वोपाय भी किये जाने चाहिए।

कल किसी प्रतिनिधिने — मुझे नाम नहीं याद आ रहा कि किस प्रतिनिधिने — एक मुहावरेका प्रयोग किया था, जिसका मुझपर बहुत असर हुआ। उन्होंने कहा था, "हम केवल राजनीतिक संविधान नहीं चाहते।" मुझे नहीं मालूम कि उस वाक्यको सुनते ही मेरे मनमें उसका जो अर्थ उभरा, वही अर्थ वक्ताके मनमें भी था

या नहीं। लेकिन मैंने मनमें तत्काल कहा, इस वाक्यसे एक बहुत अच्छा मुहावरा मेरे हाथ लग गया है। वास्तवमें स्थिति यही है कि कांग्रेसको — और व्यक्तिगत रूपसे अपने बारेमें कहूँ तो मुझे भी — किसी ऐसे राजनीतिक संविधान-मात्रसे सन्तोष नहीं होगा जो देखनेको तो भारतको वह सब-कुछ दे दे जो वह राजनीतिक दृष्टिसे चाह सकता है, किन्तु वास्तवमें कुछ भी न दे। यदि हम पूर्ण स्वराज्य प्राप्त करनेको कटिबद्ध हैं तो वह किसी प्रकारकी अहंकारकी भावनाके कारण नहीं। हम पूर्ण स्वराज्य इसलिए नहीं चाहते कि दुनियाके सामने कह सकें कि देखो, हमने ब्रिटेनवालों से अपने सारे सम्बन्ध तोड़ लिये। इसके विपरीत आप खुद इस आदेश-पत्रमें ही पाते हैं कि कांग्रेसके मनमें साझेदारी, ब्रिटेनवालों के साथ सम्बन्ध रखनेकी बात है, लेकिन ऐसा सम्बन्ध जैसा दो बिलकुल बराबरके साझीदारोंके बीच होता है। एक समय ऐसा था जब मुझे ब्रिटिश प्रजा होने और कहे जानेपर गर्वका अनुभव होता था। अब कई वर्षोंसे मैंने अपनेको ब्रिटिश प्रजा कहना बन्द कर दिया है। ब्रिटिश प्रजा कहे जानेसे तो मैं एक बागी कहा जाना बेहतर समझूँगा। लेकिन मेरी यह आकांक्षा अवश्य रही है और आज भी है कि मैं इस साम्राज्यका नागरिक नहीं बल्कि राष्ट्रमण्डलका नागरिक बनूं। सम्भव हो तो किसी साझेदारीकी व्यवस्थाके अधीन — मैं उसका और ईश्वरकी मर्जी ऐसी हो तो एक स्थायी साझेदारीकी व्यवस्थाके अधीन — नागरिक बनना चाहता हूँ। किन्तु यह साझेदारी एक राष्ट्र द्वारा दूसरे पर थोपी गई साझेदारी नहीं होनी चाहिए। इसीलिए आप यहाँ देखते हैं कि कांग्रेसकी माँग यह है कि दोनों में से प्रत्येक पक्षको एक-दूसरेसे अपने सम्बन्ध तोड़ लेने, साझेदारीसे अलग हो जानेका अधिकार होना चाहिए। इसलिए स्वभावतः इस साझेदारीको अनिवार्य रूपसे दोनोंके लिए लाभप्रद होना चाहिए।

एक बात, जो मैंने अन्यत्र भी कही है, यहाँ फिर कहना चाहूँगा। हम जिस समस्या पर विचार करनेके लिए एकत्र हुए हैं, उसकी दृष्टिसे भले ही वह अप्रासंगिक हो, लेकिन मेरे लिए अप्रासंगिक नहीं है। मेरा मतलब इस बातसे है कि मैं यह अच्छी तरह समझ सकता हूँ कि ब्रिटिश राजनयिक आजकल आर्थिक समस्याको हल करनेमें पूरी तरहसे फँसे हुए हैं। हमें उनसे ऐसी ही आशा भी थी। इसलिए जब मैं जहाजसे लन्दन आ रहा था तब स्वभावतः मेरे मनमें यह प्रश्न उठा कि क्या इस समय इस परिषद्का होना ब्रिटेनके मन्त्रियोंपर एक बोझ नहीं होगा, क्या हम खामखाह बीचमें टपक पड़नेवाले नहीं माने जायेंगे। लेकिन फिर मैंने मनमें कहा कि हो सकता है, ऐसी बात न हो, हमें ऐसे आदमी न माना जाये। हो सकता है, खुद ब्रिटेनके मन्त्री ही घरेलू मामलेकी दृष्टिसे भी गोलमेज परिषद्की कार्यवाहीको अत्यन्त महत्त्वपूर्ण मानते हों।

हाँ, भारतको तलवारके बलपर भी कब्जेमें रखा जा सकता है। भारतको तलवारके जोरपर अपने कब्जेमें रखनेकी ब्रिटेनकी सामर्थ्यमें मुझे कभी क्षण-भरको भी सन्देह नहीं हुआ है। लेकिन ग्रेट ब्रिटेनकी समृद्धिमें, उसकी आर्थिक मुक्तिमें कौन सहायक हो सकता है — दासताकी बेड़ीमें जकड़ा किन्तु विद्रोही भारत या ब्रिटेनके सुख-दुःखमें

हाथ बँटानेवाला, बुरे दिनोंमें उसके कन्धेसे-कन्धा मिलाकर खड़ा होनेवाला एक सम्मानित साझेदार भारत? हाँ, जरूरत पड़ी तो अपनी मर्जीसे ब्रिटेनके कन्धेसे-कन्धा मिलाकर वह भारत उसके दुश्मनोंके खिलाफ लड़नेको भी आयेगा। लेकिन वह लड़ाई किसी भी जाति अथवा व्यक्तिके शोषणके लिए नहीं होगी—होगी तो जहाँतक हम अनुमान कर सकते हैं सारे संसारके कल्याणके लिए ही होगी। मैं अपने देशके लिए आजादी जरूर चाहता हूँ, लेकिन सच मानिए कि अगर मेरा बस चले तो वह आजादी मैं इसलिए नहीं चाहता कि एक ऐसे राष्ट्रका सदस्य होनेके नाते, जिसकी जनसंख्या पूरी मानव-जातिका बीस प्रतिशत है, मैं दुनियाकी किसी भी अन्य जाति अथवा किसी भी व्यक्तिका शोषण करूँ। यदि मैं अपने देशकी वह स्वतन्त्रता चाहता हूँ तो मैं तबतक उसका पात्र नहीं हो सकता जबतक कि सबल या दुर्बल दूसरी प्रत्येक जातिके वैसी ही स्वतन्त्रताके उपभोग करनेके अधिकारको मैं श्रद्धा और सम्मानकी दृष्टिसे नहीं देखता।

और इसलिए आपके इस सुन्दर द्वीप-समूहके निकट पहुँचते हुए मैंने मनमें सोचा कि हो सकता है, मैं ब्रिटिश मन्त्रियोंको यह बात समझा सकूँ कि एक महत्त्वपूर्ण साझेदारके रूपमें, शक्तिके बलपर नहीं बल्कि प्रेमके रेशमी धागेसे आपके देशके साथ बँधा भारत आपके बजटको—केवल एक ही वर्षके लिए नहीं बल्कि अनेकानेक वर्षोंके लिए—सन्तुलित करनेमें शायद सच्चा सहायक हो सकता है। ये दो महान् राष्ट्र मिल-जुलकर क्या नहीं कर सकते? एक ओर आपका यह राष्ट्र है—संख्यामें थोड़े किन्तु बहादुर लोगोंका राष्ट्र, जिसकी बहादुरीका इतिहास इतना उज्ज्वल है कि उससे अधिक उज्ज्वल इतिहास शायद दुनियाके किसी भी राष्ट्रका नहीं होगा, जो गुलामीकी बुराईके खिलाफ लड़नेके लिए प्रसिद्ध है और जिसने निर्बलोंका संरक्षक और सहायक होनेका कमसे-कम दावा तो कितनी ही बार किया है, और दूसरी ओर हमारा यह अत्यन्त प्राचीन राष्ट्र है—करोड़ों लोगोंका यह राष्ट्र, जिसका अपना एक प्राचीन और गरिमामय इतिहास है, जो आज हिन्दू और इस्लाम इन दो महान् संस्कृतियोंका प्रतिनिधित्व करता है, जिसमें अगर आप इजाजत दें तो कहूँ कि ईसाइयोंकी भी एक खासी बड़ी तादाद है और जरथुस्त्री धर्मके तो सभी अनुयायी, वे शानदार लोग शामिल हैं, जो संख्यामें नगण्य होते हुए भी परमार्थ-वृत्ति और व्यापारिक साहस-उद्यममें लगभग अद्वितीय हैं—निश्चय ही पीछे तो किसीसे नहीं हैं। हमारे देशमें ये सारी संस्कृतियाँ केन्द्रित हैं। और मान लीजिए ईश्वर हिन्दुओं और मुसलमानों दोनोंको, जिनके प्रतिनिधि उपस्थित हैं, सद्बुद्धि दे और वे अपने मतभेद भुलाकर आपसमें एक सम्मानप्रद समझौता कर लें तो फिर आप उस राष्ट्रको और अपने राष्ट्रको एक साथ मिलाकर स्थितिकी कल्पना कीजिए। अब मैं एक बार फिर मनमें सोचता हूँ और आपसे पूछता हूँ कि स्वतन्त्र भारत, ग्रेट ब्रिटेनकी ही तरह पूर्ण रूपसे स्वतन्त्र भारत और ग्रेट ब्रिटेनके बीच कायम सम्मानजनक साझेदारी क्या दोनोंके लिए लाभ-प्रद सिद्ध नहीं हो सकती—इस महान् राष्ट्रकी घरेलू समस्याओंके समाधानकी दृष्टिसे भी। और अपने मनमें इसी स्वप्न और आशाको सँजोकर मैंने ब्रिटिश द्वीप-समूह पर कदम रखा और आगे भी उस स्वप्नको मनमें सँजोये रहूँगा।

और इतना कह देनेके बाद मैं समझता हूँ, मैंने सब-कुछ कह दिया है। अब तफसीलकी बातें आप खुद ही तय कर लें, मुझसे उनके बारेमें ज्यादा कहनेकी आशा न रखें, यह बतानेकी अपेक्षा न करें कि सेनापर नियन्त्रणसे मेरा क्या मतलब है, विदेशी मामलों, वित्त, राजस्व तथा आर्थिक नीतिपर नियन्त्रणका मैं क्या अर्थ लगाता हूँ, या कि आर्थिक सौदोंसे ही मेरा क्या तात्पर्य है। इन आर्थिक सौदोंके बारेमें कल एक मित्रने कहा था कि ये तो ऐसे सौदे हैं जिनका सम्मान हर हालतमें किया ही जाना चाहिए, ये तो पवित्र सौदे हैं। मैं ऐसा नहीं मानता। अगर किसी साझेदारीमें शामिल होनेवाले और उससे अलग होनेवाले साझेदारोंके बीच माल-मिल्कियतका हिसाब-किताब होता है तो उनके सौदोंकी जाँच और उनमें आवश्यक हेर-फेर करना जरूरी होता है। इसलिए यदि कांग्रेस यह कहे कि राष्ट्रको इसका पता होना चाहिए कि उसे कौन-सी जिम्मेदारियाँ लेनी चाहिए और कौन-सी नहीं लेनी चाहिए तो इसके लिए उसे किसी असत्य आचरण या अपराधका दोषी नहीं माना जा सकता। इस लेखा-परीक्षा, इस जाँचकी माँग केवल भारतके ही हकमें नहीं, बल्कि दोनोंके हकमें की जा रही है। मेरा यह निश्चित मत है कि अंग्रेज जनता भारतपर ऐसा कोई बोझ नहीं लादना चाहती जिसे ढोनेकी अपेक्षा उससे औचित्यपूर्वक नहीं की जा सकती। और मैं कांग्रेसकी ओरसे यह घोषणा करता हूँ कि जिस बोझको ढोना उसके लिए उचित होगा, उससे इनकार करनेकी बात वह कभी नहीं सोचेगी। यदि हमें एक ऐसे ईमानदार राष्ट्रके रूपमें कायम रहना है जिसकी दुनियामें साख हो तो हम अपना खून-पसीना बहाकर अपने कर्जका एक-एक पैसा चुकायेंगे।

इस आदेश-पत्रकी धाराओंके बारेमें आपको आगे कुछ बताने और इन धाराओं का कांग्रेसी लोग जो अर्थ लगाते हैं वह अर्थ आपके सामने स्पष्ट करनेकी जरूरत मैं नहीं समझता। अगर ईश्वरकी यह इच्छा हुई कि मैं इस विचार-विमर्शमें, इन चर्चाओंमें भाग लेता रहूँ तो इन चर्चाओंके दौरान ही मैं इन धाराओंके फलितार्थ आपके सामने स्पष्ट कर सकनेकी आशा रखता हूँ। जैसे-जैसे यह विचार-विमर्श आगे चलेगा, मेरे सामने सुरक्षात्मक पूर्वोपायोंके सम्बन्धमें भी अपनी बात कहनेका अवसर आयेगा ही। लेकिन लॉर्ड चांसलर महोदय, मैं समझता हूँ, इस समय तो आपकी उदारता और अनुग्रहका लाभ उठाकर मैं किंचित् विस्तारसे काफी-कुछ कह चुका हूँ। वास्तवमें मैं आपका इतना अधिक समय नहीं लेना चाहता था। लेकिन मुझे लगा कि यदि मैं इस अवसरपर भी अपना हृदय खोलकर आपके सामने अपनी चिर-पोषित आकांक्षा न रख दूँ तो मैं उस उद्देश्यके साथ न्याय नहीं कर पाऊँगा जिसका प्रतिपादन आपके, उप-समितिके आप सदस्योंके सामने और हम भारतीय प्रतिनिधियोंके मेजबान ब्रिटिश राष्ट्रके सामने करनेके लिए मैं यहाँ आया हूँ। मेरी यही लालसा है कि जब मैं ब्रिटिश द्वीप-समूहसे प्रस्थान करूँ तो मनमें यह विश्वास लेकर करूँ कि ग्रेट ब्रिटेन और भारतके बीच समान साझेदारी कायम होनेवाली है। आपके बीच रहते हुए मैं इससे अधिक और क्या कर सकता हूँ कि हृदयसे ईश्वरसे उस स्थितिके साकार होनेकी प्रार्थना करता रहूँ।

लॉर्ड चांसलर महोदय, मैंने लगभग पैंतालीस मिनटका समय ले लिया है, किन्तु आपने मुझे बीचमें न रोककर मुझ पर जो कृपा की है, उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। मैं इतने अनुग्रहके योग्य नहीं था और इसलिए एक बार फिर आपको धन्यवाद देता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबिल कांफरेंस (सेकेंड सेशन) प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐंड माइनॉरिटीज कमिटी, खण्ड १, पृ० ४१-४७

१३. भाषण : लेबर पार्टीके संसद्-सदस्योंकी सभामें[1]

लन्दन
१६ सितम्बर, १९३१

आज शाम श्री गांधीने कामन्स सभाके लेबर पार्टीके सदस्योंके समक्ष भाषण दिया। . . .

अपने भाषणमें उन्होंने बताया कि उन्हें इंग्लैंड इस निर्देशके साथ भेजा गया है कि उन्होंने जो वचन दिया है, उसपर वे दृढ़ रहेंगे। तात्पर्य पूर्ण स्वराज्य प्राप्त करनेके वचनसे था। उनके विचारसे भारतकी ग्रामवासी जनताके हितोंके लिए ऐसा स्वराज्य आवश्यक है। इस प्रशासनके कारण और उन लोगोंको जो कर देने पड़ते हैं, उनकी वजहसे वे भूखों मर रहे हैं।

श्री गांधीकी एक बात मजदूर दलीय श्रोताओंको बहुत विशिष्ट मालूम हुई। तात्पर्य उनकी इस दलीलसे है कि मशीनोंको तिलांजलि दे दी जाये और गाँववालों को अपने हाथोंसे काम करने दिया जाये। उन्होंने कहा कि यदि कोई ग्रामीण लोगोंसे पूछे कि मैं ही उनका नेतृत्व क्यों करता हूँ तो वह पायेगा कि ऐसा इसलिए है कि वे अपनी आशाओं और आकांक्षाओंको व्यक्त नहीं कर सकते और उन आशाओं और आकांक्षाओंको वाणी मैं देता हूँ।

श्री गांधीने कहा कि मैंने लॉर्ड इर्विनसे वादा किया था कि मैं गोलमेज परिषद्में शरीक होऊँगा। उसी वादेको पूरा करनेके लिए मैं यहाँ आया हूँ। जो बातें 'पूर्ण स्वराज्य' में आती हैं, वे अगर किन्हीं अन्य शब्दोंमें भी आ जायें तो मैं उन्हें भी उतनी ही तत्परतासे स्वीकार कर लूँगा जितनी तत्परतासे इन शब्दोंको स्वीकार किया है। मैं सार चाहता हूँ, थोथा नाम नहीं। मैंने अपने ऊपर सावधानी बरतनेके

१. यह सभा हाउस ऑफ कामन्सके ग्रैन्ड कमिटी रूममें हुई थी; उपस्थित व्यक्तियोंमें कुमारी म्यूरियल लेस्टर, श्री लेन्सबरी, संसद्-सदस्य और जे० एफ० होराबिन, संसद-सदस्य भी थे।

जो-कुछ सामान्य नियम लगा रखे हैं, उन्हें त्यागकर मैं आप लोगोंको अपनी वे भावनाएँ समझाना चाहता हूँ, जो वास्तवमें मेरे करोड़ों देशभाइयोंकी भी भावनाएँ हैं।

उन्होंने पूर्ण स्वराज्य और सेना तथा विदेशी मामलोंपर भारतीयोंके नियन्त्रणकी अपनी माँगें दोहराईं। दूसरे शब्दोंमें, वे भारतके लिए वैसी ही स्वतन्त्रता चाहते हैं जैसी स्वतन्त्रताका उपभोग ग्रेट ब्रिटेन कर रहा है। उन्होंने कहा कि भारत इससे कम किसी भी चीजसे सन्तुष्ट नहीं हो सकता। मुझे अपनी ओरसे कोई समझौता करनेका अधिकार नहीं दिया गया है, यद्यपि इस एक चीजके लिए आश्वस्त कर दिये जानेपर आप मुझे अनेक समझौते करते पायेंगे। लेकिन अगर ऐसा न हुआ तो मैं कोई समझौता नहीं कर पाऊँगा। मैं भारतको दुनियाकी किसी भी जातिके लिए खतरेका कारण बनानेके लिए पूर्ण स्वराज्य नहीं चाहता। यदि मेरा बस चले तो मैं तो ग्रेट ब्रिटेन और भारतके बीच सच्ची मित्रता कायम करना चाहता हूँ।

मैं ब्रिटिश शासन और सत्ताके प्रति एक जाना-माना विद्रोही हूँ, लेकिन मेरे हजारों देशभाई उसके प्रति छिपे तौरपर विद्रोहका भाव रखते हैं, क्योंकि जो कष्ट और असुविधाएँ प्रकट विद्रोहीको सहनी पड़ती हैं, उन्हें वे सहन नहीं करना चाहते। मैं चाहता हूँ कि अगर आपके मनमें इससे कोई उलटी धारणा हो, कोई भ्रम हो तो उसे दूर कर लीजिए। लोग यदि ब्रिटिश जुएको अपने कन्धोंसे उतार फेंकना और पूर्ण रूपसे स्वाधीन हो जाना चाहते हैं तो उसका कारण यह है कि वे भूखों मरना नहीं चाहते। बाहरी शत्रुओंसे देशके बचावके लिए भारतमें इतनी अधिक सैनिक शक्तिकी आवश्यकता नहीं है। मुझे तो बताया गया है कि अगर दुर्भाग्यवश कोई दूसरी लड़ाई हुई तो वह पहलीसे भिन्न और बहुत अधिक भयंकर होगी। मुझे यह याद दिलानेकी जरूरत नहीं है। हमने तो अब अपनी इन कठिनाइयोंसे अन्तिम बार लड़ लेनेके लिए अपनी कमर कस ली है और मैं चाहता हूँ कि यहाँ उपस्थित लोगोंसे यदि बने तो भारतको उस दुर्दिनसे बचाइए।

अब श्री शिनवेलने कहा कि कोयलेकी खानोंमें काम करनेवाले हजारों भारतीय मजदूर अंग्रेज नहीं, भारतीय खान-मालिकोंके ही अधीन तो काम करते हैं, और मैं देखता हूँ कि मजदूरोंके प्रति भारतीय खान-मालिकोंका रवैया अंग्रेज खान-मालिकोंकी तुलनामें बहुत अधिक प्रतिक्रियावादी और क्रूरतापूर्ण है। तो आप ब्रिटिश शासनके बारेमें जो-कुछ कहते हैं, उसका मेल आप भारतीय उद्योगपतियोंके प्रतिक्रियावादी रवैयेसे कैसे बैठा सकते हैं?

श्री गांधीने कहा कि जब मैं बोल रहा था तो मेरे मनमें कोयलेकी खानों अथवा बम्बई और कलकत्ताके कारखानोंमें काम करनेवाले कुछ हजार मजदूरोंकी समस्या नहीं थी। मैं जमींदारों या मिल-मालिकोंकी वकालत नहीं करता।

मुझे जो-कुछ कहना है, उसका इस बातसे कोई सम्बन्ध नहीं है कि भारतीय उद्योगपति अंग्रेजोंसे अधिक क्रूर हैं या नहीं। मुझे उस तरहके शोषण-अत्याचारके

बारेमें कुछ नहीं कहना है, जो भी कहना है, गाँवोंमें रहनेवाले भारतीयोंके जीवन-स्तरके बारेमें कहना है। मेरी शिकायत तो उस प्रणालीके खिलाफ है, जिसके द्वारा गाँववालों की एक-एक बूँद रक्तका दोहन किया जा रहा है। कोयलेकी खानोंमें काम करनेवाले मजदूर पीड़ित जरूर हैं, लेकिन वे भूखों नहीं मर रहे हैं, और मैं उन लोगोंकी बात कह रहा हूँ जो सचमुच भूखों मर रहे हैं। भारतके चौरासी प्रतिशत लोग गाँवोंमें रहते हैं और मौजूदा व्यवस्थाके द्वारा उनका एक-एक बूँद खून चूसा जा रहा है, और इन लोगोंको सालमें छः महीने अनिवार्य रूपसे बेकार रहना पड़ता है। यदि ब्रिटेनके मजदूर छः महीने बेकार रहें और उन्हें कोई वेतन-भत्ता न मिले तो क्या वे भी भूखों नहीं मरने लगेंगे — विशेषकर तब जब कि उन्हें बेकारीकी अवस्थामें भी सरकारको कर भी देना पड़े?

इसके बाद लंकाशायरके एक सदस्यने श्री गांधीसे पूछा कि वे लंकाशायरके मालके बहिष्कारका औचित्य कैसे ठहराते हैं।

श्री गांधीने कहा कि भारतको लंकाशायर, जापान या इटली अथवा दुनियाके किसी भी हिस्सेमें तैयार सूती वस्त्रोंके बजाय अपने यहाँ तैयार किये सूती वस्त्रोंका प्रयोग करनेकी स्वतन्त्रता होनी चाहिए। यह बहिष्कार अंग्रेजोंके खिलाफ नहीं है। बाहरसे सूती कपड़े खरीदना आप भारतका कोई कर्त्तव्य तो नहीं मानते? मुझे तो सिर्फ गाँवोंके पक्षका समर्थन करना है और विदेशी वस्त्रोंके बहिष्कारकी सारी योजना उन्हींके हितोंका ख्याल करके बनाई गई है।

यदि हम गाँवों या मिलोंमें अपनी जरूरतका कपड़ा आप ही तैयार कर रहे हैं और केवल उसीका उपयोग कर रहे हैं तो क्या कोई नैतिक अपराध कर रहे हैं? इस तरह हम प्रतिवर्ष साठ करोड़ रुपये सीधे गरीबोंकी जेबोंमें डाल रहे हैं। क्या ऐसा कोई भी नैतिक नियम है जिसके अनुसार मेरे लिए लंकाशायरके कपड़ोंको प्राथमिकता देना लाजिमी हो, ताकि लंकाशायरके उन मजदूरोंका भरण-पोषण हो जो इतने वर्षोंसे उन ग्रामीण लोगोंको दरिद्र बनाये हुए हैं? लंकाशायरका उत्थान भारतके ग्रामीण उद्योग-धन्धोंके ध्वंसावशेषपर हुआ है।

यहाँ सर नॉर्मन एंजेलने पूछा कि भारतीय उद्योगोंको आज जो संरक्षण दिया जा रहा है, क्या उसका परिणाम यही नहीं होगा कि लंकाशायरके मालका स्थान बम्बई और कलकत्ताका माल ले लेगा और यदि बम्बईके उद्योगोंका विकास किया जाता है और भारतका औद्योगीकरण किया जाता है तो क्या गाँवकी सालमें छः महीनेकी बेकारी ज्यों-की-त्यों नहीं रह जायेगी? यह स्थिति तो ब्रिटिश सत्ताकी समाप्तिके बाद भी बनी ही रहेगी।

उत्तरमें श्री गांधीने कहा कि मैं अपनी सारी शक्ति गाँवोंकी दशा सुधारनेमें लगा रहा हूँ और बहिष्कार आन्दोलन ग्रामीण लोगोंके हकमें ही चलाया जा रहा है। जब उनके सामने सिर्फ अपने यहाँके मिलोंसे ही निबटनेकी समस्या रहेगी तब

वे उससे आसानीसे निबट लेंगे। मिल-मालिकोंने हमसे यह समझौता किया है कि वे ग्रामीण उद्योग-धन्धोंके साथ होड़ नहीं करेंगे। यह ग्रामीण उद्योग बहुत बड़ा उद्योग है। वह २,००० गाँवोंमें चल रहा है और इससे उन गाँवोंमें रहनेवाले १,००,००० लोगोंको जीविका मिलती है। आज एक-तिहाई कपड़ा हाथकरघों पर ही बुना जा रहा है, यद्यपि वे मिलोंमें काते सूतका ही उपयोग करते हैं। मैं हाथ-कता सूत चाहता हूँ। मैं चाहता हूँ कि अंग्रेज लोग हाथ-कताईके इस यन्त्रको सर्वांगपूर्ण बनानेके लिए मुझे अपने कौशलका लाभ दें। और आपको यह जानकर खुशी होगी कि एक अंग्रेज इंजीनियरने मुझे हाथ-करघेका एक अपेक्षाकृत सरल नमूना दिया है, जिसपर ज्यादा अच्छी तरह बुनाई हो सकेगी। उसके लिए वे मुझसे कुछ ले नहीं रहे हैं, बल्कि अपना वह आविष्कार भेंटके तौरपर दे रहे हैं। यह बहिष्कार आन्दोलन देशी मिलोंके लाभके लिए नहीं है और अगर उन्होंने इसे कुचलनेकी कोशिश की तो खुद ही कुचल जायेंगी।

संसद-सदस्य श्री टाउटने कहा कि श्री गांधीके उत्तरसे तो यही लगता है कि बार-बार जो यह कहा जा रहा है कि बम्बईके मिल-मालिक बहिष्कार आन्दोलनमें आर्थिक सहायता दे रहे हैं, उसमें कोई सचाई नहीं है।

श्री गांधीने कहा कि बम्बईके मिल-मालिकोंने बेशक सहायता दी है और किसी हदतक उदारतासे दी है, लेकिन आन्दोलनका सारा हिसाब-किताब सबके देखनेके लिए खुला पड़ा है। बहिष्कार आन्दोलनको ग्रामीण लोगोंसे भी सहायता मिली है। यदि वे चाहें तो भारतीय मिलोंका बहिष्कार भी शुरू कर सकते हैं। मैं ग्रामीण उद्योगके एक विशेषज्ञकी हैसियतसे बोल रहा हूँ और मेरा यह दावा है कि अगर किसी भूचालमें बम्बई और कलकत्ताकी सभी मिलें बरबाद हो जायें और सभी बाहरी देश भी भारतको कपड़ा देना बन्द कर दें तो भारत महीने-भरके अन्दर अपने ग्रामीण उद्योगके बलपर देशकी कपड़ेकी सारी जरूरत पूरी कर सकता है।

इसपर एक अन्य मजदूरदलीय सदस्यने पूछा कि अगर दूसरे देश भारतका पटसन और चाय खरीदना बन्द कर दें तो भारत क्या करेगा? अगर भारत लंकाशायरसे कपड़ा नहीं खरीदता तो फिर हम उससे चाय कैसे खरीद सकते हैं?

श्री गांधीने उत्तरमें कहा कि यह तो खरीदने-बेचनेवालेकी मर्जीपर निर्भर है। अगर दुनिया हमारा माल नहीं खरीदना चाहती तो हम भी उसपर उसे जबरदस्ती नहीं थोपना चाहते। हम इन चीजोंका उत्पादन इसलिए करते हैं कि इनकी माँग है, और अगर दूसरे देश इन्हें नहीं खरीदेंगे तो हमें कोई और उद्योग शुरू करना होगा।

कुमारी विल्किसनने पूछा कि वैज्ञानिक आविष्कारोंका लाभ उठानेसे इनकार करना क्या प्रतिक्रियावादी नीति नहीं है, मानव-मेधासे उत्पन्न नई-नई चीजोंका उपयोग न करनेका आग्रह रखनेका परिणाम क्या भारतको सदा गरीब बनाये रखना न होगा?

श्री गांधीने कहा कि मैं तो भारतको यन्त्र-मात्रके प्रयोगसे विमुख करनेकी कोशिश कर रहा हूँ। हमारे यहाँ ऐसे करोड़ों लोग हैं जो ये सारे काम अपने हाथोंसे कर सकते हैं, और ऐसे यन्त्रोंका प्रयोग करना आत्मघातके समान होगा जिनके सहारे चन्द हजार मजदूरोंके श्रमसे जरूरतका सारा कपड़ा तैयार किया जा सकता हो। मैं मानता हूँ कि जबतक मैं इन लोगोंको कोई और धन्धा देनेकी स्थितिमें नहीं हूँ तबतक वैसा-कुछ करना अनैतिक होगा।[1]

[अंग्रेजीसे]

मैंचेस्टर गार्डियन, १७-९-१९३१

१४. भेंट : 'टेक्स्टाइल मर्क्युरी' के सम्पादकको

लन्दन

१७ सितम्बर, १९३१

'टेक्स्टाइल मर्क्युरी' के सम्पादकने श्री गांधीको पहलेसे ही सभी प्रश्न लिखकर दे रखे थे। उनके उत्तर देनेसे पहले उन्होंने कहा कि मैं एक सन्देश प्रचारित करना चाहता हूँ और आशा करता हूँ, लंकाशायर सूती वस्त्र-उद्योगमें लगे सभी लोग उसे सहानुभूतिपूर्वक ग्रहण करेंगे और समझेंगे। उन्होंने कहा :

मैं जानता हूँ कि प्रश्न बड़ा जटिल है, लेकिन अगर दोनों देशोंके बीच सद्भावना कायम हो जाये तो निराश होनेका कोई कारण मुझे दिखाई नहीं देता। इसकी एक अनिवार्य शर्त यही है कि आज भारतीय पक्षको हानि पहुँचाने और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके खिलाफ तरह-तरहकी अफवाहें फैलानेके लिए इंग्लैंडमें जो गन्दा प्रचार चल रहा है, उसका डटकर विरोध करना चाहिए; और ऐसा प्रचार चल रहा है, यह तो बहुत अच्छी तरह सिद्ध किया जा सकता है।

इंग्लैंडमें रहते हुए यदि मैं गलतफहमियोंके सभी कारण दूर कर सकूँ तो इसे मैं अपना सौभाग्य मानूँगा। अगले सप्ताह मैं इसी उद्देश्यसे लंकाशायर जा रहा हूँ। वहाँ मैं अपने मनमें सर्वथा मैत्रीपूर्ण भाव लेकर जाऊँगा। मैं सभीको अपनेसे सवाल-जवाब करनेके लिए आमन्त्रित करूँगा और यह वचन देता हूँ कि मैं सब-कुछ खुले हृदयसे कहूँगा, कोई दुराव नहीं करूँगा।

प्र० : भारतमें लंकाशायरके कपड़ेके व्यापारके ह्रासका असली कारण क्या है?

उ० : मेरे विचारसे इसका कोई एक नहीं, बल्कि अनेक कारण हैं। बेशक, इसका एक कारण बहिष्कार आन्दोलन भी था और है। मुख्य कारण यह है कि जापानने लंकाशायरको मात दे दी। ध्यान रखना चाहिए कि बहिष्कार केवल लंकाशायरके

१. सभा समाप्त होने पर किंग्सले हॉल जानेके पूर्व गांधीजी ने वहीं अपनी प्रार्थना भी की।

सूती वस्त्रोंका ही नहीं, बल्कि तमाम विदेशी सूती वस्त्रोंका किया जा रहा है, लेकिन इसके बावजूद जापानने लंकाशायरकी तुलनामें बहुत अधिक प्रगति की है। तीसरा कारण तो सार्वभौम है —— अर्थात् सभी जगह लोगोंकी जीवनके लिए आवश्यक वस्तुएँ खरीदनेकी क्षमता भी कम होती जा रही है। चौथा कारण है भारतीय मिलों द्वारा अधिकाधिक कपड़ेका उत्पादन, और पाँचवाँ तथा अन्तिम कारण है, भारतके ग्रामीण लोगोंके अन्दर अपनी जरूरतका कपड़ा अपने ही घरोंमें तैयार कर लेनेकी बढ़ती हुई इच्छा।

प्र० : क्या लंकाशायरके व्यापारको उखाड़नेके लिए कोई सक्रिय आन्दोलन चल रहा है?

उ० : दिल्ली समझौतेके बादसे तो किसी और विदेशी प्रतिस्पर्धीको तरजीह देकर लंकाशायरके व्यापारको उखाड़नेके लिए सक्रिय अथवा किसी भी प्रकारका कोई आन्दोलन नहीं चल रहा है। अलबत्ता देशी कपड़ेको —— चाहे वह मिलका बना हो या हाथका बना —— प्राथमिकता देना जारी है।

प्र० : क्या वहाँ जापानी मालको प्राथमिकता दी जाती है? अगर दी जाती है तो क्यों?

उ० : इस समय तो निश्चय ही जापानी मालको कोई प्राथमिकता नहीं दी जा रही है।

प्र० : क्या भारतमें कपड़ेकी खपतकी स्थितिमें कोई परिवर्तन नहीं आया है? यदि कोई कमी आई है तो उसका प्रतिशत क्या है?

उ० : मेरा ख्याल है कि कमी आई है, लेकिन उसे साफ देखा नहीं जा सकता।

प्र० : लंकाशायर भारतके साथ अपना व्यापार कैसे बढ़ा सकता है? सम्भावनाएँ कैसी हैं? यहाँ सवाल कीमतका है, अथवा स्तर या ब्रिटेन-विरोधी प्रचारका?

उ० : लंकाशायर जिस एक उपायसे भारतके साथ अपना व्यापार बढ़ा सकता है, वह मैंने कुछ महीने पहले बताया था।[१] मान लीजिए कि भारतके साथ इंग्लैंडका हार्दिक समझौता हो जाता है और भारत देशी मिलोंमें और हाथसे जो कपड़ा तैयार करता है, उससे उसकी जरूरत पूरी नहीं होती और बाकी कपड़े उसे विदेशोंसे खरीदने पड़ते हैं। उस हालतमें सभी विदेशी कपड़ोंके मुकाबले लंकाशायरके कपड़ोंको प्राथमिकता दी जायेगी। हाँ, मालके स्तर और कीमतका विचार तो तब भी करना ही पड़ेगा, लेकिन तब वह दोस्ताना तरीकेसे आपसमें तय कर लेनेका मामला होगा।

प्र० : भारत अपनी कपड़ेकी आवश्यकताका कितना प्रतिशत देशमें बने कपड़ेसे ही पूरी कर सकता है? इसमें से कितना मिलोंका बना होता है और कितना हाथ-करघोंका?

उ० : मेरे विचारसे तो यदि कुछ थोड़ी-सी सुविधाएँ मिल जायें तो वह बड़ी आसानीसे अपने गाँवोंमें ही पर्याप्त कपड़ा तैयार कर सकता है और जो-कुछ कमी

१. देखिए खण्ड ४७, पृष्ठ २५५–६।

रह जायेगी उसे देशी मिलोंमें बने कपड़ेसे पूरा किया जा सकता है। इस समय भारतमें जितने कपड़ेकी खपत उसका एक-तिहाई हाथ-करघों पर तैयार होता है, एक-तिहाई मिलोंमें और शेष एक-तिहाई आयात किया जाता है।

'टेक्स्टाइल मर्क्युरी' और उसके माध्यमसे लंकाशायरको मेरा यही सन्देश है कि लोग पूर्वाग्रहोंके कारण इस सारे प्रश्नको उलझायें नहीं, बल्कि इसके सभी परिणामों और प्रभावोंको ध्यानमें रखकर इसपर विचार करें।

[अंग्रेजीसे]
टेक्स्टाइल मर्क्युरी, १८-९-१९३१

१५. भेंट : 'न्यूज क्रॉनिकल' के प्रतिनिधिको

लन्दन
[१७ सितम्बर, १९३१][1]

मुझे ईस्ट एंड बड़ा पसन्द है — खासकर सड़कोंपर उछलते-कूदते छोटे-छोटे बच्चे। वे बड़ी आत्मीयतासे मेरा अभिवादन करते हैं। चालीस वर्ष पहले जब मैं लन्दनमें था, उस समयकी स्थितिपर विचार करता हूँ तो पाता हूँ कि सामाजिक परिस्थितियोंमें बहुत अधिक परिवर्तन आ गया है। भारतकी गरीबीको देखते हुए तो लन्दनमें कुछ भी गरीबी नहीं है। यहाँ सड़कोंसे गुजरते हुए मैं हर घरके बाहर बोतल-भर दूध और अन्दर पट्टीनुमा दरी बिछी देखता हूँ और बैठकमें शायद एक पिआनो भी होता है।

भारतमें करोड़ों लोग केवल लँगोटी ही पहनते हैं। इसीलिए मैं भी लँगोटी ही पहनता हूँ। लोग मुझे अर्ध-नग्न कहते हैं। मैं भारतके निर्धनतम लोगोंसे अपना तादात्म्य स्थापित करनेके लिए जान-बूझकर ऐसा करता हूँ। लन्दनमें जो चीज मुझे बहुत अच्छी लगती है वह यह है कि यहाँ गरीबों और अमीरोंके बीच उतना ज्यादा अन्तर नहीं है। जब मैं रोज रातको मोटरमें बैठकर बो की ओर जाता हूँ तो देखता हूँ कि मैं जैसे-जैसे वेस्ट एंडसे ईस्ट एंडकी ओर बढ़ता हूँ, वैसे-वैसे अमीरी बहुत धीरे-धीरे घटती जाती है और गरीबी बढ़ती जाती है। ऐसा कहना शायद अतिरंजित नहीं होगा कि भारतमें जो जीवन-स्तर अमीरोंका है, वह लन्दनमें गरीबोंका है।

गोलमेज परिषद्के बारेमें बोलते हुए श्री गांधीने कहा :

जो स्थिति है, उससे मैं बहुत चिन्तित हूँ। हम बहुत ही कम प्रगति कर पा रहे हैं। हम पाँच दिनसे यहाँ हैं और इतने समयमें हम जो-कुछ कर पाये हैं वह

१. साधन-सूत्रमें तिथि नहीं दी गई है। लेकिन संवाददाता कहता है कि गांधीजी से उसने 'कल' मुलाकात की। यदि उसने यह भेंट-वार्ता १८ को तैयार की हो तो भेंट १७ को ही हुई होगी।

चार-पाँच घंटेमें ही किया जा सकता था। सरकारने तो बिलकुल चुप्पीका रुख अपना लिया है। वह कुछ भी कहनेमें इतनी सावधानी बरतती है कि उसकी स्थिति क्या है, कुछ पता ही नहीं चलता। जबतक वह अपने विचार स्पष्ट नहीं करती, हम आगे नहीं बढ़ सकते। हमें मालूम होना चाहिए कि वह कहाँतक जानेको तैयार है। इस सप्ताह मैं बहुत नरमीसे बोला हूँ, लेकिन कह नहीं सकता कि इस घोर अनिश्चितताको, जिसका कोई कारण दिखाई नहीं देता, मैं कबतक बरदाश्त कर पाऊँगा। सरकार बराबर तटस्थ नहीं बैठी रह सकती, उसे इधर या उधर जाना ही होगा।

[अंग्रेजीसे]

न्यूज क्रॉनिकल, १९-९-१९३१

१६. भाषण: संघ-संरचना समितिके समक्ष

लन्दन
१७ सितम्बर, १९३१

लॉर्ड चान्सलर महोदय,

शीर्षक-२[1] पर हो रही इस बहसमें मैं बहुत हिचकिचाहटके साथ भाग ले रहा हूँ। हमारे विचारार्थ जो अनेक मुद्दे दर्ज हैं, उनके सम्बन्धमें मैं बादमें बोलूँगा। सोमवारसे मेरा मन कुछ बातोंको लेकर बड़ा परेशान रहा है और अगर आप इजाजत दें तो पहले मैं उन्हीं बातोंकी चर्चा करके अपने मनके उस बढ़ते हुए बोझको हलका करूँ। इस समितिमें हुई बहसोंको मैंने बहुत ही ध्यानसे देखा-सुना है। पहले मैंने प्रतिनिधियोंकी सूचीकी ओर ध्यान नहीं दिया था, लेकिन अब जब उसका अध्ययन किया तो सबसे पहले जिस बातको लेकर मेरा मन परेशान हो उठा वह यह है कि हम लोग राष्ट्रके चुने हुए प्रतिनिधि नहीं, बल्कि सरकारके चुने हुए प्रतिनिधि हैं, जबकि यहाँ आये लोगोंको राष्ट्रका ही प्रतिनिधित्व करना चाहिए था। मैं भारतके विभिन्न दलों और समुदायोंको निजी अनुभवसे जानता हूँ, इसलिए जब प्रतिनिधियोंकी सूचीकी ओर ध्यान देता हूँ तो पाता हूँ कि इसमें बहुत-से महत्त्वपूर्ण नाम शामिल नहीं हैं। और इसलिए मेरा मन यह सोचकर व्यथित हो उठता है कि प्रतिनिधियोंके चुनावमें वास्तविकताको ताकपर रख दिया गया। मेरे मनमें वास्तविकताकी अवहेलनाका भाव जगनेका दूसरा कारण यह है कि मुझे लगता है, इन कार्यवाहियोंका तो कोई अन्त ही नहीं है और हम लगभग कोई प्रगति नहीं कर रहे हैं। यदि हम इसी तरह चलते रहे तब तो इस समितिके सामने उठाये विभिन्न प्रश्नोंपर बालकी खाल खींचनेवाले अन्दाजसे बहस करनेके अलावा और कुछ नहीं कर पायेंगे।

१. संघ-संसदके सदस्योंके चुनावसे सम्बन्धित सवाल।

सो लॉर्ड चान्सलर महोदय, सबसे पहले तो मैं, आप हम सबके प्रति जितना अधिक धैर्य — और इजाजत हो तो कहूँ कि सतत शिष्टता और सौजन्य — दिखा रहे हैं, उसके लिए आपके साथ अपनी हार्दिक सहानुभूति व्यक्त करता हूँ। और आप समितिकी कार्यवाहियोंके सिलसिलेमें जितना अधिक कष्ट उठा रहे हैं, उसके लिए मैं आपको सचमुच बधाई देता हूँ। मैं आशा करता हूँ कि आपके और हमारे सामने जो काम पड़ा हुआ है, उसके अन्तमें वह अवसर भी आयेगा जब मैं आपको इस बातके लिए बधाई दे सकूँगा कि आपने हमें कुछ ठोस परिणाम सामने रखनेमें समर्थ बनाया या वैसा करनेको मजबूर किया।

अगर इजाजत हो तो अब मैं महामहिमके सलाहकारोंके खिलाफ एक नम्र शिकायत पेश करूँ। उन्होंने सात समुद्र पारसे हम सबको यहाँ बुलाया है, और जैसा कि मैं समझता हूँ, यह जानते हुए बुलाया है कि हममें से सभी उतने ही व्यस्त आदमी हैं जितने कि वे स्वयं हैं। हमें अपना-अपना काम छोड़कर यहाँ आना पड़ा है। सो अब जब उन्होंने हम सबको यहाँ बुला लिया है तो क्या उनके लिए यह सम्भव नहीं कि वे कुछ ऐसा करें जिससे हम लोग अपने कार्यमें आगे बढ़ें? क्या मैं आपके माध्यमसे उनसे यह अनुरोध नहीं कर सकता कि वे लोग यह तो बतायें कि उनके मनमें क्या है? यदि वे हमारा मतामत जाननेके लिए कुछ ठोस प्रस्ताव लेकर सामने आयें तो मुझे बड़ा हर्ष होगा; और यदि आपके सामने मैं यह बात कह सकूँ तो कहूँगा कि मुझे लगता है, सही तरीका भी यही होगा कि वे ऐसे प्रस्ताव लेकर सामने आयें। यदि ऐसा-कुछ किया जाये तो मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि हम अच्छे या बुरे, सन्तोषजनक या असन्तोषजनक किसी-न-किसी निष्कर्षपर पहुँच ही जायेंगे। लेकिन अगर यह समिति केवल ऐसी एक वाद-विवाद-समिति बनकर रह जाती है, जिसका प्रत्येक सदस्य अलग-अलग व्यक्तियों द्वारा उठाये मुद्दोंपर जोरदार तकरीरें झाड़ता है तो मैं नहीं समझता कि हम यहाँ जिस प्रयोजनसे एकत्र हुए हैं उसे सिद्ध करनेमें कोई योग-दान दे सकेंगे या उस दिशामें कोई प्रगति कर सकेंगे। मुझे लगता है कि यदि आप कर सकें तो कोई ऐसी उप-समिति नियुक्त कर देना ज्यादा लाभदायक होगा जो आपके सामने निर्णयार्थ कुछ ठोस मुद्दे पेश कर सके। ऐसा हो जानेसे हमारी कार्यवाहियाँ ठीक समयपर पूरी हो सकेंगी।

मैंने यह सुझाव सिर्फ आपके और सदस्योंके विचारार्थ सामने रख देनेका साहस किया है। आप शायद उन्हें महामहिमके सलाहकारोंके विचारार्थ उनके सामने रखेंगे। मैं यह चाहता हूँ कि वे हमारा मार्ग-दर्शन करें, नेतृत्व करें और वे क्या चाहते हैं, यह साफ-साफ बतायें। मैं उनसे यह जानना चाहता हूँ कि यदि हम उन्हींको अपने भाग्यका निर्णायक बना दें तो वे क्या करेंगे। अगर वे हमारी सलाह और राय जाननेका सौजन्य दिखायेंगे तो हम उन्हें अपनी सलाह और राय देंगे। मेरे विचारसे इस घोर अनिश्चितता और अन्तहीन विलम्बकी स्थितिसे वह स्थिति सचमुच बहुत अच्छी होगी।

इतना कहकर अब मैं दूसरे शीर्षकके सम्बन्धमें दो-चार बातें कहूँगा। यहाँ मेरे सामने भी वही कठिनाई आती है जो सर तेज बहादुर सप्रूके सामने आई थी। यदि

उनकी बातोंको मैंने ठीक समझा है तो उन्होंने यही कहा कि उन्हें इस बातसे बड़ी परेशानी हो रही थी कि उनसे विभिन्न उपशीर्षकोंपर बोलनेको तो कहा जा रहा है, किन्तु उन्हें यह नहीं मालूम कि वास्तवमें मताधिकारका स्वरूप क्या होगा। यही कठिनाई मेरे सामने भी खड़ी है। लेकिन इसके अलावा भी एक कठिनाई है। मैंने समितिके सामने कांग्रेसका आदेश-पत्र रखा था और मुझे प्रत्येक उपशीर्षकपर उसी आदेश-पत्रको ध्यानमें रखकर बोलना पड़ेगा। इसलिए इन उपशीर्षकोंमें से कुछके सम्बन्धमें मुझे इस आदेश-पत्रको ध्यानमें रखकर ही सुझाव देने या अपने विचार व्यक्त करने होंगे; और यदि समितिको यह मालूम नहीं होगा कि वास्तवमें वह किस उद्देश्यको लेकर चल रही है तो स्वभावतः मैं जो भी विचार रखूँगा, वह वास्तवमें किसी कामका नहीं होगा। उस विचारका तो केवल इस आदेश-पत्रके सन्दर्भमें ही कोई मानी होगा। मैं क्या कहना चाहता हूँ, यह बात जब मैं इन उपशीर्षकों पर विचार करने लगूँगा तो स्पष्ट हो जायेगी।

उपशीर्षक (१) के सम्बन्धमें जहाँ मोटे तौर पर मेरी हार्दिक सहानुभूति डॉ० अम्बेडकरके साथ है, वहाँ बुद्धिके धरातल पर मैं श्री गैविन जोन्स तथा सर सुल्तान अहमदसे पूरी तरह सहमत हूँ। यदि यह समान विचार रखनेवाले समान उद्देश्योंसे परिचालित ऐसे सदस्योंकी समिति होती जिन्हें अपने मत देकर किसी निष्कर्ष पर पहुँचनेका अधिकार होता तो मैं डॉ० अम्बेडकरके साथ बहुत दूर तक जा सकता था। लेकिन हमारी स्थिति ऐसी नहीं है। यह तो बेतरतीब ढंगसे चुने बेमेल लोगोंकी एक मण्डली है, जिसका प्रत्येक सदस्य शेषसे सर्वथा स्वतन्त्र है और इसलिए उसे किसी भी सामान्य नियमका खयाल किये बिना अपनी राय देनेका अधिकार है। इसलिए मेरी नम्र सम्मतिमें, हमें देशी राज्योंसे यह कहनेका कोई अधिकार नहीं है कि उन्हें क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए। ये राज्य बड़ी उदारतासे हमारी सहायताके लिए आगे आये हैं और इन्होंने कहा है कि वे हमारे साथ संघमें शामिल होंगे, तथा शायद अपने कुछ ऐसे अधिकारोंको भी छोड़ देंगे जिनका उपभोग वे अन्यथा किसी प्रकारकी दस्तन्दाजीके बिना करते। ऐसी स्थितिमें मैं तो यही कर सकता हूँ कि सर सुलतान अहमदने जो विचार व्यक्त किया और शायद श्री गैविन जोन्सने जिस पर विशेष आग्रह किया, उस विचारका मैं पूरा अनुमोदन करूँ। मेरा तात्पर्य उनके इस विचारसे है कि हम अधिकसे-अधिक यही कर सकते हैं कि देशी राज्योंसे अनुरोध-आग्रह करें और उन्हें अपनी कठिनाइयाँ समझायें। साथ ही मुझे लगता है कि हमें भी उनकी विशेष कठिनाइयोंको समझना चाहिए। इसलिए मैं उदारमना देशी राजाओंके सम्मुख केवल एक-दो बातें ही रखूँगा और उनसे उन पर सहानुभूतिपूर्वक विचार करनेको कहूँगा और चूँकि मैं आम जनताके बीचसे आनेवाला आम जनताका आदमी हूँ और समाजके निम्नतम वर्गका प्रतिनिधित्व करनेकी कोशिश कर रहा हूँ, इसलिए मैं उनसे अनुरोध करूँगा कि वे जो भी योजना बनाकर इस समितिके स्वीकारार्थ पेश करें उसमें मेरे उन सुझावोंको भी स्थान दें। मैं यह महसूस करता हूँ और जानता हूँ कि वे हृदयसे अपनी रैयतका कल्याण चाहते हैं। मैं जानता

हूँ कि वे उनके हितोंकी विशेष रक्षा करनेका दावा करते हैं; लेकिन अगर सब-कुछ ठीक-ठीक चला तो वे जन-भारतके — यदि मैं ब्रिटिश भारतको यह नाम दे सकूँ तो — अधिकाधिक सम्पर्कमें आयेंगे, और तब जिस प्रकार भारतके उस हिस्सेके लोग देशी राज्योंके सुख-दु:खको अपना बना लेना चाहेंगे उसी प्रकार वे भी जन-भारतके लोगोंके सुख-दु:खको अपना बना लेना चाहेंगे। आखिरकार भारतके इन दोनों हिस्सोंमें कोई मौलिक भेद तो है नहीं। यदि किसी सजीव शरीरको दो हिस्सोंमें बाँटा जा सकता हो तो भले आप भारतको भी दो हिस्सोंमें बाँट दीजिए। यह अनादि कालसे एक देशके रूपमें कायम रहा है और कोई भी कृत्रिम सीमा इसे विभाजित नहीं कर सकती। देशी राज्योंकी प्रशंसामें यह कहना ही होगा कि जब उन्होंने साहसके साथ खुलेआम संघके पक्षमें अपना मत व्यक्त किया तो वास्तवमें उन्होंने यह दावा पेश किया कि वे भी उसी खूनसे हैं जिस खूनसे हम हैं — वे हमारे सगे हैं। वे और कुछ कर भी नहीं सकते थे। हममें और उनमें सिवा इसके कोई भेद नहीं है कि हम साधारण जन हैं और वे हैं —— या यों कहिए कि ईश्वरने उन्हें बनाया है —— उच्च कुलोत्पन्न व्यक्ति, राजा। मैं उनका शुभेच्छु हूँ, मैं हर तरहसे उनकी समृद्धिकी कामना करता हूँ। मैं ईश्वरसे यह भी मनाता हूँ कि उनकी अपनी समृद्धि और अपना कल्याण उनके प्रिय प्रजाजनोंके हित-साधनमें सहायक सिद्ध हो। इसके आगे मैं कुछ नहीं कहूँगा, कुछ कह भी नहीं सकता। मैं तो उनसे केवल विनती ही कर सकता हूँ। जैसा कि हम जानते हैं, वे संघमें शामिल हों या न हों, यह उनकी इच्छा पर निर्भर है। हमारे हाथमें यह है कि हम उनका संघ-प्रवेश सुगम बना दें। इसी तरह उनके बसकी बात यह है कि वे ऐसी स्थिति उत्पन्न करें जिससे हम अपनी बाँहें पसारकर संघमें उनका स्वागत करें। मैं जानता हूँ कि इस आदान-प्रदानकी भावनाके बिना हम संघ-शासनकी कोई निश्चित योजना नहीं बना सकेंगे; या अगर बना भी लेंगे तो बादमें हममें झगड़े होंगे और हम एक-दूसरेसे फिर अलग हो जायेंगे। इसलिए यदि हम पूरे मनसे संघ-शासनकी किसी योजनाको स्वीकार न कर सकें तो ऐसी योजना बनानेकी अपेक्षा तो कोई योजना न बनाना ही बेहतर होगा। यदि हम कोई योजना बनायें तो पूरे मनसे बनायें।

अब दूसरे शीर्षकको लें। देखता हूँ, इस शीर्षक पर वास्तवमें निर्योग्यताओंके सवालको ही — अर्थात् निर्योग्यताओंकी व्यवस्था की जाये या नहीं, इसी बातको — ध्यानमें रखकर विचार किया गया है। यद्यपि मैं पूर्ण रूपसे लोकतन्त्रवादी होनेका दावा करता हूँ, फिर भी मैं निस्संकोच कहूँगा कि यह बात मतदाताओंके अधिकारोंसे सर्वथा संगत है कि उम्मीदवारीके सम्बन्धमें कुछ निर्योग्यताओंकी व्यवस्था की जाये और इसी तरह किसी सदस्यको सदस्यतासे च्युत करनेके सम्बन्धमें भी कतिपय निर्योग्यताएँ निर्धारित कर दी जायें। इन निर्योग्यताओंका स्वरूप क्या हो, इस सम्बन्धमें मैं इस समय कुछ नहीं कहना चाहता। मैं सिर्फ यह कह रहा हूँ कि निर्योग्यताएँ लगानेके विचार और सिद्धान्तका मैं पूरे मनसे समर्थन करूँगा। 'नैतिक भ्रष्टाचार' शब्द-समुच्चयको सुनकर मुझे भय नहीं लगता। इसके विपरीत इसे मैं एक अच्छा

मुहावरा मानता हूँ। सच तो यह है कि हम चाहे जितना विचार-विमर्श करनेके बाद किसी शब्दको चुनें, कठिनाइयाँ तो फिर भी बनी ही रहेंगी। लेकिन कठिनाइयोंपर पार पानेके लिए तो न्यायाधीश होते ही हैं। कठिनाई उत्पन्न होनेपर न्यायाधीश हमारी सहायताको आगे आयेंगे और हमें बतायेंगे कि 'नैतिक भ्रष्टाचार' में कौन-सी बातें आती हैं और कौन-सी नहीं आतीं। और यदि कहीं ऐसा हुआ कि सविनय प्रतिरोध करनेवाले मुझ-जैसे किसी आदमीको 'नैतिक भ्रष्टाचार' का दोषी ठहराया जाता है तो मैं उसका बुरा नहीं मानूँगा। हो सकता है, इसके कारण कुछ लोगोंको कष्ट उठाना पड़े, लेकिन इसीलिए मैं यह कहनेको तैयार नहीं हूँ कि किसी प्रकारकी निर्योग्यताएँ लगाई ही न जायें और अगर लगाई जाती हैं तो वह मतदाताके अधिकारका हनन होगा। यदि हम कोई कसौटी कायम करने या उम्र-सम्बन्धी कोई सीमा रखने जा रहे हैं तो चरित्र-विषयक कोई मर्यादा भी होनी ही चाहिए।

अब तीसरी बात – अर्थात् प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष निर्वाचनके प्रश्नको लें। यदि इस समय यहाँ लॉर्ड पील मौजूद होते तो पाते कि इस विषय पर उनके विचारोंसे मैं सारतः सहमत हूँ। मुझे इस विषयका गहरा ज्ञान नहीं है, मैं तो अपने सामान्य ज्ञानके आधार पर ही बोल रहा हूँ और मुझे कहना यह है कि 'अप्रत्यक्ष निर्वाचन' शब्दोंसे भी मुझे भय नहीं लगता। मैं नहीं जानता कि इन शब्दोंका कोई प्राविधिक अर्थ भी है या नहीं। अगर होगा भी तो मुझे वह मालूम नहीं है। मैं अपना आशय अभी स्पष्ट करता हूँ। चाहे उसे 'प्रत्यक्ष निर्वाचन' कहा जाये या 'अप्रत्यक्ष निर्वाचन', मैं तो निश्चय ही जगह-जगह जाकर इसके पक्षमें बोलूँगा और शायद निर्वाचनकी उस पद्धतिके पक्षमें एक खासा बड़ा जनमत भी तैयार कर लूँगा। मैं जो पद्धति सुझाने जा रहा हूँ वह आवश्यक है, क्योंकि वयस्क मताधिकारका मैं पक्का हिमायती हूँ। कांग्रेस-जनोंकी इसमें दृढ़ आस्था है। वयस्क मताधिकार एकाधिक कारणोंसे आवश्यक है। मेरी हद तक इसका एक निर्णायक कारण यह है कि इसके द्वारा मैं सभीकी उचित आकांक्षाओंकी — केवल मुसलमानोंकी नहीं, तथाकथित अस्पृश्यों, ईसाइयों और श्रमिकों, सभी वर्गोंकी आकांक्षाओंकी — पूर्ति कर सकता हूँ। मैं इस विचारको सहन नहीं कर सकता कि जिसके पास धन है उसे तो मताधिकार प्राप्त हो, लेकिन ऐसा चरित्रवान् व्यक्ति इससे वंचित रहे जो धनवान् या शिक्षित नहीं है; या यह कि दिन-रात अपना खून-पसीना एक करनेवाले किसी ईमानदार श्रमिकको सिर्फ इस कारण यह अधिकार न दिया जाये कि उसने गरीब होनेका अपराध किया है। यह मेरे लिए असह्य बात है। मैं तो गाँवके गरीबसे-गरीब लोगोंके बीच हिल-मिलकर रहा हूँ। और इस बात पर मैंने गर्वका अनुभव किया है कि लोग मुझे अछूत मानते हैं। इसलिए मैं यह भी जानता हूँ कि इन गरीबोंके बीच, खुद अस्पृश्योंके बीच, आपको मानवताके कुछ सर्वोत्कृष्ट नमूने देखनेको मिलेंगे। इन अस्पृश्य भाइयोंको मताधिकार न दिया जाये, इससे तो कहीं अच्छा मैं यह मानूँगा कि खुद मुझे ही यह अधिकार न मिले। मुझे साक्षरताके सिद्धान्तका कोई मोह नहीं है। मैं यह नहीं मानता कि मतदाताको पढ़ना-लिखना

और गुणा-भाग करना आना ही चाहिए। मैं यह अवश्य चाहता हूँ कि मेरे देश-भाइयोंको लिखना-पढ़ना आये। लेकिन तब मैं यह भी जानता हूँ कि यदि उनको मताधिकार दिलानेके लिए उन सबके पढ़ाई-लिखाई सीख लेने तक इन्तजार करना पड़ा तब तो मुझे अनन्त काल तक इन्तजार ही करते रहना पड़ेगा। लेकिन मैं उतने समय तक प्रतीक्षा करनेको तैयार नहीं हूँ। मैं जानता हूँ कि इनमें से करोड़ों लोगोंमें मताधिकारके ठीक प्रयोगकी क्षमता है, लेकिन अगर हम उनमें से सभीको मताधिकार दे दें तो उन सबके नाम मतदाता-सूचीमें दर्ज करना और ऐसे निर्वाचन-क्षेत्र, जिनके साथ ठीक न्याय किया जा सके, बना सकना बिलकुल असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य हो जायेगा।

मैं लॉर्ड पीलकी इस आशंकाको सही मानता हूँ कि यदि निर्वाचन-क्षेत्र बहुत बड़े होंगे तो उम्मीदवारोंके लिए सभी लोगोंके व्यक्तिगत सम्पर्कमें आना अथवा समय-समय पर उनसे सम्पर्क बनाये रखकर किसी मामले पर उनके विचार जान सकना असम्भव होगा। यद्यपि मैंने कभी विधायक बननेका प्रयास नहीं किया है, फिर भी इन निर्वाचकोंसे मेरा साबका पड़ा है और मैं जानता हूँ कि मुझे कितनी मुश्किलोंसे गुजरना पड़ा है। मुझे इन विधायक संस्थाओंके सदस्योंके अनुभवोंकी भी जानकारी है। इसलिए हम कांग्रेस-जनोंने इस सम्बन्धमें एक योजना बनाई है, और यद्यपि मौजूदा सरकारने हम पर एक समानान्तर सरकार खड़ी करनेका आरोप लगाया है, फिर भी मैं अपने तरीकेसे उस आरोपको स्वीकार भी कर सकता हूँ। हमने कोई समानान्तर सरकार तो स्थापित नहीं की है, लेकिन हमारा यह मंसूबा जरूर है कि किसी दिन हम वर्तमान सरकारको स्थान-च्युत कर दें और धीरे-धीरे विकास-क्रमसे गुजरते हुए समय आने पर उस सरकारका सारा दायित्व अपने हाथोंमें ले लें।

गत चौदह वर्षोंसे मैं भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके विधानों और नियमोंके मसौदे तैयार करता आया हूँ। उससे पहले दक्षिण आफ्रिकाकी एक ऐसी ही संस्थाके[1] लिए लगभग बीस वर्षों तक मैंने यही काम किया है। इस दौरान मैंने जो अनुभव प्राप्त किये वे सब अगर आपको बताना चाहूँ तो आशा है, आप अन्यथा न मानेंगे। कांग्रेसके संविधानमें लगभग वयस्क मताधिकार-जैसी ही चीज है। हम चार आनेका बहुत मामूली-सा वार्षिक शुल्क भी लेते हैं। वह शुल्क यदि इस मामलेमें लगा दिया जाये तो मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी। यहाँ फिर मैं लॉर्ड पील द्वारा व्यक्त आशंकासे अपनी सहमति प्रगट करता हूँ। आशंका यह है कि हमारे गरीब देशमें चुनावोंके प्रबन्धमें ही बहुत ज्यादा पैसा खर्च हो सकता है। मैं ऐसी स्थिति नहीं आने देना चाहूँगा और इसलिए यह पैसा इकट्ठा करनेपर भी राजी हूँ। लेकिन अगर मुझे कोई यह समझा सके कि यह चार आनेका शुल्क भी लोगोंपर भार-रूप होगा तो तो मैं उसे भी उठा लूँगा। मगर जो भी हो, कांग्रेसमें यह शुल्क लिया जाता है।

हमारी निर्वाचन-पद्धतिकी एक और भी विशेषता है। मतदान-पद्धतियोंकी जहाँ तक मुझे जानकारी है, उसके अनुसार पंजीयन-अधिकारीको मतदाता-सूचीमें उन सभी

१. नेटाल भारतीय कांग्रेस और फिर ट्रान्सवाल ब्रिटिश भारतीय कांग्रेसके लिए।

लोगोंके नाम दर्ज कर लेने पड़ते हैं जिनके बारेमें वह समझता है कि उन्हें मत देनेका अधिकार है। इसलिए कोई व्यक्ति चाहे मतदान करना चाहे या न चाहे, मतदाता-सूचीमें अपना नाम दर्ज करानेकी उसकी इच्छा हो या न हो, उसका नाम उसमें आ जाता है। इसी तरह एक दिन नेटालके डर्बन नगरमें मैंने एकाएक अपना नाम मतदाता-सूचीमें पाया। वहाँके विधानमण्डलमें विभिन्न दलोंकी जो स्थिति थी, उसमें किसी प्रकारके परिवर्तनमें योगदान देनेकी मेरी कोई इच्छा नहीं थी। मतदाता-सूचीमें अपना नाम दर्ज करवानेकी मैंने कभी परवाह ही नहीं की। लेकिन जब किसी उम्मीदवारको मेरे मतपत्रकी आवश्यकता हुई तो उसने मुझे बताया कि मतदाता-सूची में मेरा भी नाम है। तभी मुझे मालूम हुआ कि मतदाता-सूची कैसे तैयार की जाती है। हमारे पास यह विकल्प है कि जो मतदान करना चाहे, उसे मताधिकार दिया जा सकता है। इसलिए जो लोग मतदान करना चाहें उन्हें मतदाता-सूचीमें अपने नाम दर्ज करवानेकी पूरी छूट है। इसमें स्त्री-पुरुषका कोई भेद नहीं किया जायेगा। अलबत्ता, मताधिकार देनेमें उम्र तथा अन्य बातोंके सम्बन्धमें जो शर्तें लगाई जा सकती हैं, उन्हें पूरा करना जरूरी होगा। मेरा खयाल है, इस तरहकी योजना लागू करनेसे मतदाता-सूची इतनी बड़ी नहीं हो पायेगी कि उसे सँभालना कठिन हो जाये।

यदि उक्त योजनाको स्वीकार कर लिया जाये तब भी मतदाताओंकी संख्या लाखों होगी। इसलिए गाँव और केन्द्रीय विधान-मण्डलको एक-दूसरेसे जोड़े रखनेके लिए कोई व्यवस्था करना जरूरी है। केन्द्रीय विधान-मण्डल और भारतीय कांग्रेस कमेटीमें कुछ बातोंमें समानता है। इसी प्रकार प्रान्तीय विधान-मण्डलोंसे मिलती-जुलती हमारी प्रान्तीय संस्थाएँ हैं। हमारी संस्थामें भी कुछ मामूली कानून बनते हैं और हमारा भी अपना एक प्रशासनिक संगठन है। हमारी अपनी कार्यकारिणी परिषद् भी है। यह बिलकुल सच है कि उस कार्यकारिणीको संगीनोंका साहाय्य प्राप्त नहीं है, लेकिन अपने निर्णयोंको लागू करानेके लिए हमारे पास उससे भी कोई बहुत बड़ी चीज है, जिसके बलपर हम अपने लोगोंसे अपने निर्णयोंका पालन करवाते हैं, और आजतक हमारे मार्गमें ऐसी कोई भी बाधा नहीं आई है जिसे हम पार न कर पाये हों। मैं यह नहीं कहता कि हमने सभी परिस्थितियोंमें सदा अपने आदेशोंका पूरा पालन करवाया है; लेकिन गत सैंतालीस वर्षोंसे कांग्रेस चल रही है और साल-दर-साल इसका रुतबा बढ़ता ही गया है। आपको बता दूँ कि प्रान्तीय परिषदोंको अपने चुनावोंका नियमन करनेके लिए उपनियम बनानेका पूरा अधिकार प्राप्त है। उसके मूलाधार, अर्थात् मतदाताओं पर लगाई निर्योग्यताओं-सम्बन्धी व्यवस्थामें तो वे कोई परिवर्तन नहीं कर सकतीं, लेकिन बाकी सब बातें वे जैसे चाहें कर सकती हैं। इसलिए यहाँ मैं केवल एक प्रान्तका उदाहरण देता हूँ, जहाँ ऐसा किया जाता है। वहाँ गाँव अपनी छोटी कमेटियाँ चुनते हैं। ये कमेटियाँ ताल्लुका कमेटियोंका चुनाव करती हैं और फिर ये ताल्लुका कमेटियाँ जिला कमेटियाँ चुनती हैं और अन्तमें जिला कमेटियाँ प्रान्तीय परिषदोंका चुनाव करती हैं। अब ये प्रान्तीय परिषदें अपने प्रतिनिधि केन्द्रीय विधायक संस्थामें — यदि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीको यह नाम दिया

जा सके तो—भेजती हैं। हमने तो अपनी संस्थामें इसी पद्धतिसे काम लिया है। अगर यहाँ भी हम कुछ ऐसी ही व्यवस्था करें तो मुझे उस पर कोई आपत्ति नहीं होगी। लेकिन एक दूसरा तरीका भी है। हमें याद रखना चाहिए कि भारतमें ७,००,००० गाँव हैं। मेरा खयाल है, इनमें देशी राज्योंके गाँव भी आ जाते हैं। आँकड़े मुझे ठीक-ठीक मालूम नहीं हैं हो सकता है, मैं गलती भी कर रहा होऊँ। जन-भारतमें शायद ५,००,००० या इससे कुछ अधिक गाँव होंगे। तो इस प्रकार हमारी प्रस्तावित व्यवस्थामें ५,००,००० इकाइयाँ हो सकती हैं। इनमें से प्रत्येक इकाई अपना प्रतिनिधि चुनेगी और ये प्रतिनिधि, अगर आप लोगोंको स्वीकार होगा तो, केन्द्रीय या संघीय विधायक संस्थाके लिए प्रतिनिधि चुनेंगे। मैंने आपको योजनाकी एक मोटी रूप-रेखा-भर दी है। अगर आपको यह पसन्द आये तो तफसीलकी बातें बादमें तय की जा सकती हैं। यदि हम वयस्क मताधिकारके सिद्धान्तको अपनाने जा रहे हैं तो मुझे लगता है कि हमें ऐसी किसी योजनाका सहारा लेना ही पड़ेगा जैसी कि मैंने सुझाई है। जहाँ-कहीं इसको अमलमें लाया जा रहा है, मैं सप्रमाण कह सकता हूँ कि यह बहुत सफल सिद्ध हो रही है और इन प्रतिनिधियोंके माध्यमसे साधारणसे-साधारण ग्रामवासीसे भी सम्पर्क स्थापित करनेमें कोई कठिनाई नहीं हुई है। यह पद्धति निर्विघ्न रूपसे काम करती रही है, और जहाँ-कहीं लोगोंने इस पर ईमानदारीसे अमल किया है, इसमें ज्यादा समय भी लगते नहीं देखा गया है और खर्च तो लगभग कुछ भी नहीं होता पाया गया है। इस योजनाके अन्तर्गत मैं किसी उम्मीदवार द्वारा साठ-साठ हजार, बल्कि एक-एक लाख रुपये खर्च करनेकी बात सोच भी नहीं सकता। मुझे मालूम है कि कुछ मामलोंमें एक-एक लाख रुपये तक खर्च किया गया है। दुनियाके इस सबसे गरीब देशके लिए मैं इस राशिको भयावह मानता हूँ।

इस उपशीर्षककी चर्चा करते हुए मैं द्विसदनीय विधानमण्डलोंके सम्बन्धमें भी अपने विचार—चाहे वे जैसे और जिस लायक हों—व्यक्त करना चाहूँगा। यदि इस बातसे आपकी भावनाओंको चोट न पहुँचे तो मैं कहूँगा कि इस सम्बन्धमें मैं श्री जोशीके विचारोंसे सहमत हूँ। मैं साफ बता दूँ कि द्विसदनीय विधानमण्डलके प्रति मुझे कोई मोह नहीं है और न इसमें मेरी दृढ़ आस्था ही है। मुझे ऐसा कोई भय नहीं है कि लोक-निर्वाचित सदन उत्साहातिरेकमें अपना विवेक खो सकता है और जल्दबाजीमें ऐसे कानून पास कर दे सकता है जिन पर बादमें उसे पछताना पड़े। मैं यह नहीं चाहूँगा कि लोक-निर्वाचित सदनके खिलाफ बातें कहकर पहले उसे बदनाम किया जाये और फिर उसके सम्बन्धमें चाहे जैसा निर्णय कर लिया जाये। मैं मानता हूँ कि लोक-निर्वाचित सदन अच्छे-बुरेका विचार करनेमें भली-भाँति समर्थ है और इस समय चूँकि मैं दुनियाके सबसे गरीब देशके सन्दर्भमें यह सब कह रहा हूँ, इसलिए यह भी कहूँगा कि हमें जितना कम खर्च उठाना पड़े उतना ही अच्छा है। मैं इस विचारको एक क्षणके लिए भी स्वीकार नहीं करता कि यदि लोक-निर्वाचित सदन पर कुछ अंकुश रखनेके लिए विशिष्टोंका कोई सदन न होगा तो लोक-

निर्वाचित सदन देशका नाश कर देगा। मुझे ऐसा कोई भय नहीं है। अलबत्ता मैं ऐसी स्थितिकी कल्पना कर सकता हूँ जब दोनों सदनोंके बीच जोरोंसे ठन जाये। जो भी हो, यद्यपि इस सम्बन्धमें मैं कोई निश्चयात्मक रवैया नहीं अपना सकता, किन्तु खुद मेरी तो यह पक्की राय है कि हमारा काम एक ही सदनसे चल सकता है और उसके बहुत-से फायदे भी हैं। यदि हम अपने मनको इस बातके लिए मना सकें कि हमारा काम एक ही सदनसे चल सकता है तो निश्चय ही हम बहुत सारे खर्चसे तो बच ही सकते हैं। मैं लॉर्ड पीलके इस विचारसे पूर्णतः सहमत हूँ कि हमें नजीरोंकी चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं है। हम तो खुद ही एक नया उदाहरण कायम करेंगे। आखिरकार भारत एक पूरा महाद्वीप है। किन्हीं भी दो जीवन्त मानवीय संस्थाओंके बीच पूर्ण समानता-जैसी कोई चीज है ही नहीं। हमारी अपनी अलग परिस्थितियाँ हैं, अपनी अलग मान्यताएँ हैं। मैं तो यह मानता हूँ कि हमें नजीरोंकी परवाह किये बिना कई प्रकारसे अपने लिए एक नया ही रास्ता बनाना होगा। इसलिए मुझे लगता है कि यदि हम एक-सदनीय विधायिका आजमाकर देखें तो यह कोई गलत काम नहीं होगा। बेशक आप इसे, मानव-बुद्धिके लिए जहाँतक सम्भव है, निर्दोष और सर्वांगपूर्ण बना दें, लेकिन सन्तोष एक ही सदनसे करें। अब चूंकि मेरे विचार ऐसे हैं, इसलिए उपशीर्षक ३ और ४के सम्बन्धमें मुझे कुछ कहने की जरूरत नहीं रह जाती।[१]

तो अब मैं उपशीर्षक ५, अर्थात् विशेष निर्वाचन-क्षेत्रों द्वारा विशेष हितोंके प्रतिनिधित्वके सवाल पर आता हूँ। यहाँ मैं जो-कुछ कह रहा हूँ, उसे कांग्रेसका ही विचार समझिए। कांग्रेसने हिन्दू-मुस्लिम-सिख समस्याके सम्बन्धमें विशेष रूपसे विचार करनेकी बात किसी तरह स्वीकार कर ली है। इसके कुछ ऐतिहासिक कारण हैं। वह इस सिद्धान्तको अब और किसी समुदायके सम्बन्धमें किसी भी रूपमें लागू नहीं करने देगी। मैंने यह सुना कि विशेष हितोंका दावा करनेवालों की सूचीमें कौन-कौन आते हैं। जहाँ तक अस्पृश्योंका सम्बन्ध है, अभी तक मैं यह नहीं समझ पाया हूँ कि डॉ० अम्बेडकर क्या कहना चाहते हैं। लेकिन इतना तो है ही कि अस्पृश्योंके हितोंका प्रतिनिधित्व करनेका गौरव अकेले अम्बेडकर साहबको ही प्राप्त नहीं होगा, उसकी भागीदार कांग्रेस भी बनेगी। उनके हित कांग्रेसको उतने ही प्रिय हैं जितने कि भारतके किसी भी अन्य जनसमुदाय अथवा व्यक्तिके हित प्रिय हो सकते हैं। इसलिए मैं किसी और जनसमुदायके सम्बन्धमें विशेष प्रतिनिधित्वका सिद्धान्त लागू करनेका तीव्र विरोध करूँगा। वयस्क मताधिकारके अधीन मजदूरोंके संगठनों आदिको तो विशेष प्रतिनिधित्वकी जरूरत होती ही नहीं; जमींदारोंको तो कतई नहीं होती। इसका कारण मैं बताता हूँ। कांग्रेसका ऐसा कोई इरादा नहीं है कि वह जमींदारोंसे उनकी जमीन-जायदाद छीन ले; और न इन मूक और दरिद्र लोगोंके मनमें ही ऐसा-कुछ है। उसके बजाय कांग्रेस यह चाहेगी कि जमींदार लोग अपने-अपने काश्त-

१. उपशीर्षक ३ का सम्बन्ध संघीय विधानमण्डलके दोनों सदनोंके पारस्परिक सम्बन्धोंसे और उपशीर्षक ४का संघ और उसकी इकाइयोंके बीच वित्तीय साधनोंके बँटवारेसे था।

कारोंके न्यासियोंकी तरह रहें। मैं समझता हूँ, जमींदारोंको ऐसा सोचकर गर्वका अनुभव होना चाहिए कि उनकी रैयत, ये करोड़ों ग्रामवासी बाहरसे आनेवाले या खुद काश्तकारोंमें से खड़े होनेवाले लोगोंके बजाय उन जमींदारोंको अपने उम्मीदवार और प्रतिनिधि बनाना ज्यादा पसन्द करेंगे। इसलिए होगा यह कि जमींदारोंको अपने किसानोंसे जा मिलना होगा, उनके सुख-दुःखको अपना सुख-दुःख बना लेना होगा। और यदि वे ऐसा करते हैं तो इससे अच्छा, इससे उदात्त और क्या हो सकता है? लेकिन अगर जमींदार लोग विशेष व्यवहार और दो सदन होने पर किसी एक सदनमें या एक ही लोक-निर्वाचित सदन होने पर उस सदनमें पृथक प्रतिनिधित्वका आग्रह रखेंगे तो मुझे लगता है, वे हमारे बीच वास्तवमें फूटके बीज बोयेंगे; और इसलिए मैं आशा करता हूँ कि जमींदारों अथवा ऐसे ही किसी अन्य हितकी ओरसे इस तरहकी कोई माँग नहीं की जायेगी।

और अब मैं अपने यूरोपीय भाइयोंकी समस्याको लेता हूँ। स्वभावतः श्री गैविन जोंस उनका प्रतिनिधित्व करनेका दावा करते हैं। लेकिन मैं उनसे नम्रतापूर्वक कहना चाहूँगा कि अबतक यूरोपीयोंका वर्ग विशेष सुविधा-प्राप्त वर्ग रहा है। उन्हें वह सारा संरक्षण प्राप्त रहा है जो यह विदेशी सरकार उन्हें दे सकती थी और उसने उन्हें दिल खोलकर संरक्षण दिया है। श्री गैविन जोंसने कहा है कि वे भयभीत हैं, किन्तु यदि अब यूरोपीय लोग भारतीय जनताके साथ अपने भाग्यको जोड़ लेनेके लिए तैयार हों, उसके सुख-दुःखको अपना सुख-दुःख बना लेना चाहते हों तो उन्हें डरनेका कोई कारण नहीं है। श्री गैविन जोंसने किसी विशेष दस्तावेजसे कुछ पढ़कर सुनाया। मैंने वह दस्तावेज नहीं पढ़ा है। हो सकता है, कुछ भारतीय ऐसा भी कहें कि "ठीक है, अगर यूरोपीय लोग, अंग्रेज लोग चाहते हैं कि हम उन्हें चुनकर भेजें तो समझ लीजिए कि हम उन्हें चुनने नहीं जा रहे हैं।" लेकिन मैं वादा करता हूँ कि उन्हें मैं सारे भारतमें घुमाकर यह दिखा दूँगा कि यदि वे हमारे सुख-दुःखको अपना सुख-दुःख बना लेनेको तैयार हैं तो लोग किसी भारतीयके मुकाबले उन्हें तरजीह देंगे। उदाहरणके लिए, चार्ली एन्ड्र्यूजको लीजिए। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि वे भारतके चाहे जिस निर्वाचन-क्षेत्रसे खड़े हो जायें, वे बिना किसी कठिनाईके चुनाव जीत जायेंगे। आप उन्हींसे पूछिए कि क्या भारतमें सर्वत्र लोगोंने बाँहें फैलाकर उनका स्वागत नहीं किया है। मैंने यूरोपीयोंसे अनुरोध किया है कि वे कुछ दिन अपने हितोंके लिए विशेष सुरक्षाकी माँग करना छोड़कर आम जनताकी सद्भावना पर निर्भर रहनेकी कोशिश करके तो देखें। एक बात कहनेकी इजाजत दें तो मैं कहूँगा कि संरक्षणात्मक व्यवस्थाओंपर भरोसा करके चलना संरक्षण चाहनेका गलत तरीका होगा। वे भारतमें हमारा ही एक हिस्सा बनकर रहें। मैं तो चाहूँगा कि वे इसी तरह रहें और उनसे इसी तरह रहनेकी विनती करूँगा। जो भी हो, मेरा यह निश्चित विचार है कि कांग्रेस ऐसी किसी भी योजना पर सहमत नहीं होगी जिसमें विशेष हितोंको संरक्षण दिया गया हो। वयस्क मताधिकारकी व्यवस्था कर देनेसे तो विशेष हितोंको अपने-आप सुरक्षा प्राप्त हो जाती है।

जहाँतक ईसाइयोंका सम्बन्ध है, यदि मुझे एक ऐसे ईसाईका साक्ष्य देनेकी इजाजत दी जाये जो अब हमारे बीच नहीं रहे तो मैं बता दूँ कि उन्होंने साफ कहा था: "हम किसी प्रकारका विशेष संरक्षण नहीं चाहते।" और मेरे पास ईसाई संगठनोंके इस आशयके पत्र पड़े हुए हैं कि वे कोई विशेष संरक्षण नहीं चाहते और उन्हें जो भी संरक्षण प्राप्त करना होगा, अपनी सेवाके बलपर प्राप्त करेंगे।

द्वितीय सदनके सम्बन्धमें एक बात पूछना चाहता हूँ। क्या इसकी सदस्यताके लिए किन्हीं विशेष योग्यताओंकी व्यवस्था की जानेवाली है? लेकिन द्वितीय सदनके बारेमें मेरे क्या विचार हैं, यह तो आप जान ही गये हैं। इसलिए सदस्यताकी अर्हता प्राप्त करनेसे सम्बन्धित योग्यताओंके सवालपर मुझे कुछ कहनेकी जरूरत नहीं है।

अब मैं एक बहुत ही नाजुक मुद्दे पर आ रहा हूँ। वह है वफादारीकी शपथका मुद्दा। फिलहाल इसपर मैं कोई राय नहीं दे सकूँगा, क्योंकि मैं यह जानना चाहता हूँ कि वास्तवमें भारतको कौन-सा राजनीतिक दर्जा मिलने जा रहा है। अगर उसे पूर्ण स्वतन्त्रताका दर्जा मिलने जा रहा है, अगर भारतको पूर्ण स्वाधीनता मिलनी है तो स्वभावत: वफादारीकी शपथ भिन्न प्रकारकी होगी। यदि उसे एक आधीन देशका दर्जा मिलने जा रहा है तब तो उसमें मेरे लिए कोई स्थान ही नहीं होगा। इसलिए आज इस सवालपर कोई राय जाहिर करना मेरे लिए सम्भव नहीं है।

और अब आखिरी मुद्दे—अर्थात् इस मुद्देको लें कि अगर प्रत्येक सदनमें मनोनीत सदस्योंकी व्यवस्था की जानी है तो वह व्यवस्था कैसी हो? इस विषयपर मुझे यही कहना है जो योजना कांग्रेस-जनोंने बनाई है, उसमें मनोनीत सदस्योंके लिए कोई स्थान नहीं है। विशेषज्ञ लोग सदनमें आयें, जिन्हें किसी खास विषयपर सलाह देनेको बुलाया जाये ऐसे लोग आयें, यह तो मैं समझ सकता हूँ। वे सलाह देंगे और फिर सदनसे चले जायेंगे। लेकिन इस बातका तो मुझे कोई औचित्य दिखाई नहीं देता कि उन्हें सदनमें मत देनेका अधिकार दिया जाये। अगर हम विशुद्ध लोकतन्त्रकी स्थापना करना चाहते हैं तब तो मत देनेका अधिकार केवल लोक-निर्वाचित प्रतिनिधियोंको ही दिया जा सकता है। इसलिए जिस योजनामें मनोनीत सदस्योंको स्थान दिया जाये उसपर मैं सहमत नहीं हो सकता।

लेकिन मनोनयनका सवाल फिर मुझे उप-शीर्षक ५ पर ले आता है। कांग्रेसमें विशेष मामलोंके सम्बन्धमें कुछ व्यवस्था की गई है। हम चाहते हैं कि विधायक संस्थामें महिलाएँ चुनी जायें, यूरोपीय लोग चुने जायें, ईसाई चुने जायें और बेशक अस्पृश्य लोग चुने जायें। मैं यह बात अच्छी तरह जानता हूँ कि ये अल्प-संख्यक समुदाय काफी बड़े-बड़े हैं। अब मान लीजिए, निर्वाचन-क्षेत्रोंका रवैया ठीक नहीं रहता, वे स्त्रियों, या यूरोपीयों, या अस्पृश्यों अथवा, समझ लीजिए, जमींदारोंको नहीं चुनते और उनके ऐसा रवैया अपनानेका कोई उचित कारण नहीं है। इस परिस्थितिके निराकरणके लिए मैं संविधानमें एक ऐसी धाराकी व्यवस्था कराना चाहूँगा जिसके बलपर निर्वाचित विधायिका सभाको उन लोगोंको चुननेका अधिकार दिया जा सके जिन्हें चुना तो जाना चाहिए था लेकिन जो चुने नहीं गये। शायद मेरा आशय

स्पष्ट नहीं हो पाया। अब मैं एक उदाहरण देकर समझाता हूँ। हमारी कांग्रेसकी एक प्रान्तीय परिषद्में ठीक इसी ढंगका एक नियम है। हमने यह दायित्व तो निर्वाचन-क्षेत्रोंपर डाल दिया है कि उन्हें अमुक संख्यामें महिलाओं, अमुक संख्यामें मुसलमानों और अमुक संख्यामें अस्पृश्योंको चुनकर परिषद्में भेजना होगा। अगर वे वैसा नहीं कर पाते तो उनके चुनावकी व्यवस्था यह निर्वाचित संस्था करती है। वह उन लोगोंको चुनती है जिन्हें निर्वाचकोंने न चुननेका कोई उचित कारण न होते हुए भी नहीं चुना। निर्वाचन-क्षेत्र गलत आचरण न कर पायें, इसलिए अगर ऐसी कोई धारा संविधानमें जोड़ दी जाये तो मैं उसका स्वागत करूँगा। लेकिन पहले तो मैं निर्वाचन-क्षेत्रोंपर इतना भरोसा करके ही चलूँगा कि वे सभी वर्गोंके लोगोंको चुनेंगे और जाति-गोत्रकी भावनाके चक्करमें नहीं पड़ेंगे। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि कांग्रेसजनोंकी मनोवृत्ति जात-पाँत अथवा ऊँच-नीचकी भावनाके बिलकुल खिलाफ है। कांग्रेस पूर्ण समानताकी भावनाका विकास कर रही है।

मुझे खेद है कि मैंने आपका इतना अधिक समय ले लिया, लेकिन लॉर्ड सैंकी, इस बातके लिए मैं सचमुच आपका कृतज्ञ हूँ कि आपने मेरे प्रति इतना सौजन्य और उदारता दिखाई।[१]

सर सुल्तान अहमद : अगर आप इजाजत दें तो मैं श्री गांधीसे एक सवाल पूछना चाहता हूँ। उन्होंने कहा है कि अगर किसी समुदायके लोग एक अपेक्षित संख्यामें नहीं चुने जाते तो श्री गांधी निर्वाचनका अधिकार किसी और संस्थाको दे देना चाहेंगे।

श्री गांधी : नहीं, मैंने ऐसा नहीं कहा। चुनाव तो वही लोग करेंगे जो जनता द्वारा चुन कर आये हैं।

श्री अय्यंगार : आपका मतलब विनियुक्ति (को-ऑप्शन) से अतिरिक्त सदस्य चुननेकी व्यवस्थासे है?

श्री गांधी : आप विनियुक्ति कहना चाहें तो विनियुक्ति ही कहें। मैं तो इस विषयका सामान्य ज्ञान रखनेवाला आदमी ही हूँ। इसलिए आप मुझसे बिलकुल ठीक भाषाके प्रयोगकी अपेक्षा तो नहीं ही करेंगे।

सर सुल्तान अहमद : लेकिन क्या इसका मतलब यह नहीं है कि कुछ विशेष समुदायोंके लिए सुरक्षित स्थान होंगे?

श्री गांधी : नहीं, ऐसा नहीं है। मैं तो यह कह रहा हूँ कि संख्या निर्धारित किये बिना उस तरहकी एक धारा रखी जा सकती है। लेकिन अगर संख्या भी निर्धारित कर दी जाये तो मुझे आपत्ति नहीं होगी और आप इस बातका ध्यान रखियेगा कि मैंने इस विषयपर जो बात कही, उसका मुसलमानोंसे कोई सम्बन्ध नहीं था।

सर सुल्तान अहमद : नहीं, नहीं, मैं मुसलमानोंकी बात तो कर ही नहीं रहा हूँ। मैं तो उन चार वर्गोंके सम्बन्धमें बोल रहा हूँ जिनका आपने उल्लेख किया

१. इसके बाद लॉर्ड सैंकी अध्यक्षकी कुर्सीपर से उठ गये और उनका स्थान लॉर्ड लोथियनने ग्रहण किया।

है — मतलब कि व्यापारी, श्रमिक, जमींदार आदि। मुसलमानोंसे तो इसका कोई सम्बन्ध ही नहीं है। वे इसमें शामिल नहीं हैं।

श्रीमती सुब्बरायन: क्या मैं भी महात्मा गांधीसे एक सवाल पूछ सकती हूँ? आपने महिलाओंकी स्थितिका उल्लेख किया है। मान लीजिए, केन्द्रीय विधायिका सभामें कोई भी महिला सदस्या नहीं चुनी जाती। उस हालतमें क्या आप उस विधायिका सभाको महिलाओंकी विनियुक्तिका अधिकार देनेवाली धाराकी व्यवस्था करवाना चाहेंगे?

श्री गांधी: मैं ऐसी विधायिका सभाका बहिष्कार करूँगा। जो विधायिका सभा एक उचित अनुपातमें महिला सदस्याएँ नहीं चुनेगी उसका मैं बहिष्कार करूँगा और जब मैं यह बात कह रहा हूँ तो समझ लीजिए कांग्रेसकी ओरसे भी कह रहा हूँ। निश्चय ही उनके लिए संरक्षणकी पूरी व्यवस्था रहेगी। यह कैसे किया जा सकता है, यह तो बिलकुल सीधी-सी चीज है। लेकिन विशेष निर्वाचन-क्षेत्रोंकी व्यवस्था करनेमें मेरी सहमति कभी नहीं होगी।

श्रीमती सुब्बरायन: विशेष निर्वाचन-क्षेत्र नहीं; लेकिन मान लीजिए कि आम चुनावोंमें महिलाएँ नहीं चुनी जातीं, तो उस हालतमें तो आप केन्द्रीय विधायिका सभाको महिलाओंका चुनाव करने देंगे?

श्री गांधी: उस हालतमें निर्वाचित विधायक उनका चुनाव करेंगे और जबतक चुनाव नहीं कर लेंगे तबतक उन्हें अपनी कार्यवाही चलानेका अधिकार नहीं होगा।

सर अकबर हैदरी: क्या एक सवाल मैं भी पूछ सकता हूँ? आपने ५,००,००० गाँवों या मतदाता-मण्डलोंकी बात कही है। क्या वे पहले प्रान्तीय परिषदोंके सदस्य चुनेंगे और फिर ये परिषदें संघीय विधायिकाके लिए सदस्य चुनेंगी; या आप प्रान्तीय परिषदों तथा संघीय विधायिका सभाके लिए अलग-अलग निर्वाचक-मण्डलोंकी व्यवस्था कराना चाहेंगे?

श्री गांधी: श्रीमन्, सर अकबर हैदरीके खास सवालका जवाब देनेसे पहले क्या मैं यह कह सकता हूँ कि अगर आप मेरी सुझाई योजनाकी मोटी रूप-रेखाको स्वीकार कर लेते हैं तो ये सब बातें तो सचमुच बिना किसी कठिनाईके तय की जा सकती हैं। सीधे उनके सवालके जवाबमें मैं यह कहूँगा कि मैं जो योजना प्रस्तुत करनेकी कोशिश कर रहा था उसके अन्तर्गत गाँव तो किसी भी विधायिका सभाके लिए सदस्य नहीं चुनेंगे। वे तो निर्वाचकों, मतदाताओंको चुनेंगे। प्रत्येक गाँवके निवासी एक आदमीको चुनेंगे और उससे कहेंगे कि "आप अपने मताधिकारका प्रयोग हमारे लिए कीजिएगा।" वह आदमी प्रान्तीय अथवा केन्द्रीय विधायिका सभाके चुनावके निमित्त उनका एजेंट होगा।

सर अकबर हैदरी: तब तो उस आदमीकी दो हैसियतें होंगी — एक ओर प्रान्तीय परिषद्का सदस्य चुननेकी और दूसरी ओर केन्द्रीय विधायिकाका सदस्य चुननेकी?

श्री गांधी : हाँ, उसकी दो हैसियतें हो सकती हैं। लेकिन, आज तो जब मैं बोल रहा था उस समय मेरे मनमें केन्द्रीय विधायिकाकी ही बात थी। वैसे मैं प्रान्तीय विधायिकाके सम्बन्धमें भी बेशक यही पद्धति लागू करना चाहूँगा।

सर अकबर हैदरी : क्या आप इस प्रकार निर्वाचित प्रान्तीय विधायिका द्वारा संघीय विधायिकाके निर्वाचनके लिए कोई गुंजाइश नहीं रखना चाहेंगे?

श्री गांधी : ऐसा तो नहीं है कि मैं उसके लिए कोई गुंजाइश ही नहीं रहने दूँगा, लेकिन यह चीज मुझे ठीक नहीं लगती। अगर "अप्रत्यक्ष निर्वाचन" का यह विशेष अर्थ है तो फिर समझ लीजिए कि मैं उसके लिए कोई गुंजाइश नहीं रखता। इसलिए "अप्रत्यक्ष निर्वाचन" शब्दोंका प्रयोग मैं सामान्य अर्थमें ही कर रहा हूँ। अगर इसका ऐसा कोई विशिष्ट अर्थ हो तो मुझे नहीं मालूम।

बड़ौदाके महाराजा गायकवाड़ : इसी पद्धतिका अनुसरण तो हम लोग भी कर रहे हैं।

श्री गांधी : हाँ, महाराजा साहबकी योजना मुझे मालूम है।

बड़ौदाके महाराजा गायकवाड़ : इसका उद्देश्य यही है कि वर्ग या जाति अथवा धर्मका खयाल किये बिना प्रत्येक व्यक्तिको मत देनेका अधिकार दिया जाये।

श्री गांधी : हाँ, हाँ, मुझे मालूम है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबिल कांफरेंस (सेकेंड सेशन) : प्रोसिडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐंड माइनॉरिटीज कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ १५६-१६६

१७. पत्र : लॉर्ड विलिंग्डनको

किंग्सले हॉल,
एस० डब्ल्यू० ई० ३
१८ सितम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका ४ तारीखका हवाई डाकसे भेजा गया पत्र पा कर बड़ी राहत मिली। उसी डाकसे मुझे सरदार वल्लभभाई पटेल और पण्डित जवाहरलाल नेहरूके भी पत्र मिले, जिनमें मुझे सूचित किया गया था कि आपने उन्हें बहुत ही कृपापूर्ण पत्र लिखे हैं। इस सबसे मेरा बोझ हलका हो गया है और मैं इसके लिए आपका कृतज्ञ हूँ। आपने डॉ० अन्सारी, सेठ जमाल मोहम्मद और बिड़लाके सम्बन्धमें लिखे मेरे पत्रपर तुरन्त ध्यान दिया, इसके लिए भी मैं आपका कृतज्ञ हूँ। मेरा खयाल है कि यथासमय मुझे भारत-मन्त्रीका पत्र भी मिल जायेगा।

खान अब्दुल गफ्फार खाँ के बारेमें आप जो कहते हैं मैं उसे समझता हूँ और इस बातकी सराहना करता हूँ कि उनके बारेमें आपने साफ-साफ बातें लिखी हैं।

पर मुझे आशा है कि घटनाएँ आपके निष्कर्षको अनुचित ही सिद्ध करेंगी। आपको शायद यह मालूम नहीं है कि उनका अंग्रेजीका ज्ञान सीमित है। वे अंग्रेजीमें सुसंगत पत्र नहीं लिख सकते और उन्हें किसीकी सहायता लेनी होती है। फिर भी मैं यह मानता हूँ कि उनके सचिवका आपके सचिवको मुलाकातकी व्यवस्था करनेके लिए लिखना भोंड़ापन है। परन्तु मैं चाहूँगा कि आप अब्दुल गफ्फार खाँको अपने हृदयमें थोड़ा स्थान दें। मुझे वे पूर्णतया विश्वसनीय और एक अच्छे कार्यकर्त्ता लगे हैं।

चटगाँव हत्याकाण्ड पर मैं आपके जितना ही दुःखी हूँ और पागल नौजवानोंको उनके गलत रास्तेसे हटानेके लिए जो-कुछ कर सकता हूँ, कर रहा हूँ।

आपको यह बताते हुए मुझे खुशी होती है कि सभी वर्गोंके लोगोंसे मुझे सच्ची सहानुभूति ही मिली है। आपको मालूम ही है कि मैं जान-बूझकर लन्दनके ईस्ट एण्डमें और एक ऐसी संस्थामें ठहरा हूँ जो ईस्ट एण्डके मजदूरोंकी सेवाके लिए बनाई गई है। इसलिए मैं रोज सीधे-सादे गरीब लोगोंके सम्पर्कमें आता हूँ, और जब वे मुझे अभिवादन करते हैं तो बड़ी प्रसन्नता होती है। मैं पराये लोगोंके बीच रह रहा हूँ, ऐसा मुझे महसूस ही नहीं होता।

बाकी बातोंके बारेमें अभी, इतनी जल्दी, मैं कुछ कह नहीं सकूँगा।

आशा है, आप और लेडी विलिंग्डन, दोनों पूर्ण स्वस्थ और सानन्द होंगे।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७७७८) से।

१८. पत्र : विलियम एच० यूकर्सको[1]

[१८ सितम्बर, १९३१के पश्चात्]

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। भारत यदि स्वतन्त्र हो जाता है तो इसका अर्थ यह नहीं होगा कि तब ब्रिटिश भारतीय चाय-बागान या अन्य ब्रिटिश हित जब्त कर लिये जायेंगे। इसके विपरीत, हर न्यायोचित हितकी पूरी-पूरी रक्षा की जायेगी। परन्तु यह निश्चित है कि एक निष्पक्ष न्यायाधिकरण सभी विदेशी और अन्य हितोंकी न्याय्यताकी जाँच करेगा।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७७९४) से।

१. न्यूयॉर्कके **टी ऐंड कॉफ़ी ट्रेड जरनल**के सम्पादक। १८ सितम्बरके अपने पत्रमें उन्होंने गांधीजीसे पूछा था कि स्वतन्त्र भारतकी उनकी योजनाओंका चाय उद्योग पर क्या प्रभाव पड़ सकता है।

१९. मैं क्या चाहता हूँ

सम्पादकने इस स्तम्भमें मुझसे यह बतानेको कहा है कि "मैं क्या चाहता हूँ।" यह शीर्षक भ्रामक है। मैं तो यहाँ केवल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसका एक प्रतिनिधि हूँ और कांग्रेससे अलग कुछ नहीं चाहता। इसलिए, "मैं क्या चाहता हूँ" का अर्थ, यह है कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस क्या चाहती है।

तो मैं पाठकोंको पहले अपने स्वामी, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसका परिचय दूँ। यह भारतका शायद सबसे पुराना राजनीतिक संगठन है और समूचे भारतका प्रतिनिधि होनेका दावा करता है। मैं जानता हूँ कि कुछ लोग इस दावेको नहीं मानेंगे। पर मैं केवल यही कह सकता हूँ कि यह दावा सेवाके अधिकारसे बना है।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस सैंतालीस वर्षसे कुछ अधिक पुरानी है। इसे एक अंग्रेज, एलन ऑक्टेवियस ह्यूमने जन्म दिया था। हिन्दुओंके अलावा, मुसलमान, पारसी और ईसाई भी इसके अध्यक्ष रह चुके हैं। दो महिलाएँ, डॉ० एनी बेसेंट और श्रीमती सरोजिनी नायडू, भी इसकी अध्यक्ष रह चुकी हैं। इसके सदस्योंमें जमींदार भी हैं।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस व्यक्तियोंकी पूजा नहीं करती। वह वर्गों, धर्मों और स्त्री-पुरुषोंमें भेदभाव नहीं करती। उसने सदा तथाकथित अस्पृश्योंके पक्षका समर्थन किया है और पिछले कुछ सालोंसे उसने एक अस्पृश्यता-विरोधी समिति स्थापित कर रखी है, ताकि अस्पृश्यताको तेजीसे खत्म किया जा सके।

परन्तु भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके इस दावेका, जिसे न तो चुनौती दी गई है और न दी जा सकती है, आधार इस तथ्यमें है कि वह भारतके सात लाख गाँवोंमें बसे देशकी कुल आबादीके ८५ प्रतिशतसे भी अधिक मूक व निर्धन लोगोंका प्रतिनिधित्व करती है।

इस महान् संगठनके नामपर मैं दावा करता हूँ:

(१) भारतके लिए पूर्ण स्वाधीनताका।

(२) इसमें ऐच्छिक और पूर्ण समानतापर आधारित साझेदारीके लिए स्थान रहेगा।

(३) इसमें संघ-योजना या ऐसे संरक्षणोंके लिए भी स्थान रहेगा जो भारतके हितमें स्पष्टतः आवश्यक हो सकते हैं।

मैं आशा करता हूँ कि 'डेली मेल' के पाठक कांग्रेसकी ओरसे निर्भीकतापूर्वक रखे गये इस दावेसे भयभीत नहीं होंगे। 'दूसरोंसे अपने प्रति जैसे व्यवहारकी अपेक्षा रखते हो, तुम खुद भी उनके साथ वैसा ही व्यवहार करो।' उन्नीस सौ साल पुरानी इस बुद्धिमत्तापूर्ण कहावतके आधारपर, मैं यह आशा करता हूँ कि भारतकी स्वतन्त्रता, जिससे कि वह ब्रिटिश शासनके कारण वंचित रहा है, अंग्रेज नर-नारियोंको बुरी नहीं लगेगी।

स्वयंसिद्ध सत्यके लिए किसी तर्ककी आवश्यकता नहीं है। स्वाधीनता हर राष्ट्रका जन्मसिद्ध अधिकार है।

भारतका भी यह अधिकार है। परन्तु यहाँ यह बताना अप्रासंगिक न होगा कि ब्रिटिश शासनके अधीन भारत अधिकाधिक निर्धन और दुर्बल होता गया है। ग्राम-उद्योग नष्ट हो गया है और पूरे राष्ट्रको निरस्त्र कर दिया गया है। अपने पूरे अर्थोंमें केवल पूर्ण स्वतन्त्रता ही भारतको सुखी और शक्तिशाली बना सकती है।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
डेली मेल, १९-९-१९३१

२०. बच्चोंके साथ चर्चा

१९ सितम्बर, १९३१

कल तीसरे पहर किंग्सले सेटिलमेंटके हॉलके बीचोंबीच फर्शपर बैठे श्री गांधीने बो इलाकेके बच्चोंके एक दलसे भेंट की, जिसमें कोई भी बच्चा १२ वर्षसे अधिकका नहीं था। आयोजन सर्वथा अंतरंग था। मिस लेस्टरके एक-दो सहायकों, जिन्दादिल श्री और श्रीमती जॉर्ज लैंसबरी और भावनगरके शालीन दीवान सर प्रभाशंकर पट्टणीके सिवा, वहाँ कोई भी बड़ी उम्रका आदमी मौजूद नहीं था।

परन्तु (एक संवाददाता लिखता है) इस भेंटके तुरन्त बाद श्री गांधीने स्वयं मुझे उसके बारेमें सब बातें बताईं।

भारतके मौसम, भारतीय बच्चों द्वारा खेले जानेवाले खेलों और इसी तरहकी दूसरी बातोंके बारेमें जब प्रश्न किये जा रहे थे तो एक बच्चेने मुझसे मेरी भाषाके विषयमें पूछा।

इससे मुझे वह मौका मिल गया जिसे कि मैं चाहता था, और मैं उन्हें बहुत-से शब्दोंके समान उद्गमके बारेमें बताने लगा। मैंने 'पेटर,' 'फादर' और हिन्दू 'पिता'; तथा 'मेटर,' 'मदर' और हमारा अपना 'माता' शब्द लिया। जब मैंने उनसे यह पूछा कि इससे क्या साबित होता है तो वे बोले, "इससे यह साबित होता है कि हम सब एक ही नस्लके हैं।"

इसपर मैंने कहा, तो हम सब एक ही परिवारके हैं और हमें परस्पर मित्र होना चाहिए; और उन्होंने मेरी यह बात मानी।

फिर मैंने लड़कोंसे पूछा कि क्या उनमें से कोई हमलेका जवाब हमलेसे देता है। दस-बारह बहादुर लड़कोंने अपने हाथ उठा दिये। इससे मुझे अहिंसाके सिद्धान्त पर उन्हें एक छोटा-सा पाठ देनेका मौका मिल गया। उसके बाद मैंने पूछा कि दरअसल उन्हें उसके बजाय क्या करना चाहिए। "मित्रता कर लेनी चाहिए," उन्होंने जवाब दिया, और मैंने कहा कि यह बात उन्हें याद रखनी चाहिए।

लन्दनके बच्चे मुझे इतने अच्छे लगते हैं कि यहाँ और जिन घरोंमें मैं आज सुबह गया था, दोनों जगह उनसे मिलकर मुझे बड़ा आनन्द मिला।

इस भेंटके फलस्वरूप, कुछ बच्चोंने अपना यह संकल्प प्रकट किया है कि उनका एक छोटा-सा शिष्टमण्डल भारतीय बच्चोंके नाम मैत्रीका एक सन्देश लेकर श्री गांधीके पास जायेगा।

[अंग्रेजीसे]
संडे ऑब्जर्वर, २०-९-१९३१

२१. भाषण: स्वागत-समारोहमें[1]

लन्दन
१९ सितम्बर, १९३१

मैं अपने देशके करोड़ों भूखे लोगोंका प्रतिनिधित्व करनेके लिए इंग्लैंड आया हूँ और ईस्ट एण्डके लोगोंके बीच अपनेको पाकर मुझे बहुत ही खुशी हो रही है। जिस स्नेहके साथ मेरा स्वागत किया गया है वह मेरे लिए सदा एक बहुमूल्य निधि बना रहेगा।

भारतके गरीब लोगोंके प्रतिनिधिकी हैसियतसे मैं जिस तरहकी पोशाक पहनता हूँ उससे कौतूहल पैदा होगा, मैं यह जानता था। पर मुझे ऐसा लगता है कि मेरे इस स्वागतका कारण कौतूहलके अलावा कुछ और है।

[अंग्रेजीसे]
संडे टाइम्स, २०-९-१९३१

२२. पत्र: गुंट्रम प्रूफरको

[१९ सितम्बर, १९३१के पश्चात्]

पत्रके लिए धन्यवाद। जर्मनीकी यात्राके बारेमें[2] सोचना अभी असामयिक होगा।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७७९८) से।

२३. गुजरातकी खादी

यदि गुजरातकी खादीको गुजरात ही इस्तेमाल नहीं करता तो और कौन करेगा? गुजरातकी खादी मोटी है, टिकाऊ नहीं है और महँगी है, यह कहकर यदि गुजराती उसका बहिष्कार कर देते हैं तो फिर उसे कौन इस्तेमाल करेगा? अन्य लोग उसे क्यों इस्तेमाल करें? इसी प्रकारके बहानोंके कारण धर्म नष्ट हुए हैं, देश

१. इसका आयोजन म्यूरियल लेस्टरने किंग्सले हॉलमें इस उद्देश्यसे किया था कि उनके कुछ मित्र गांधीजीसे मिल सकें।

२. गुंट्रम प्रूफरने १९ सितम्बरके अपने पत्रमें गांधीजीसे अनुरोध किया था। कि वे स्वदेश लौटते समय जर्मनी पधारें।

तबाह हुए हैं और मनुष्योंका पतन हुआ है। यदि गुजरातकी खादी मोटी और खुरदरी लगती है तो उसे महीन और मुलायम बनायें। यदि वह महँगी है तो उसकी खपत बढ़ जानेपर वह अवश्य सस्ती हो जायेगी।

सब लोग यह जानते हैं कि दस वर्ष पहले गुजरातमें जैसी खादी बनती थी उसकी अपेक्षा आज वह महीन, टिकाऊ और सस्ती है। यदि खपत बढ़ जाये तो उसमें और अधिक सुधार हो सकता है। किन्तु सुधार होना, न होना तो गुजरातियोंके हाथकी बात है। वे उसे महँगी कहकर अस्वीकार कर सकते हैं या फिर महँगी होनेके बावजूद अपनी मानते हुए उसे अपनाकर उसकी किस्ममें सुधार कर सकते हैं और उसे सस्ता भी बना सकते हैं।

इस शुभ उद्देश्यको ध्यानमें रखते हुए एक खादी-भक्तने यह सुझाव दिया है कि प्रान्तीय समितिको गुजराती खादी-सप्ताह मनाना चाहिए। उस सप्ताहके निमित्तिसे जहाँ-जहाँ गुजरातकी खादी इकट्ठी हो गई हो उसे वहाँसे मँगा लिया जाये और स्वयंसेवक और स्वयंसेविकाएँ घर-घर फेरी लगाकर उसे बेच डालें। कुल मिलाकर गुजरातमें उत्पादित खादी इतनी कम है कि यदि चाहे तो अकेला अहमदाबाद ही उसे खरीद सकता है। सप्ताह किस प्रकार मनाया जाये, यह बात मेरे बतानेकी नहीं है। पूरी खादी इकट्ठी करके और सम्बन्धित उत्पादन-केन्द्रोंको पैसा चुकाकर समिति को पूरी कीमतका औसत निकाल लेना चाहिए और किसी तरहका नुकसान या घाटा उठाये बिना उसे बेच देना चाहिए। व्यापारमें चीज नुकसान उठाकर भी बेची जाती हैं। किन्तु यहाँ बात व्यापारकी नहीं, बल्कि देशप्रेमकी है। देशप्रेमके लिए खरीदार चाहे जितना दाम दे सकता है। जिस प्रकार कोई माँ अपने कुरूप या ऐसे बच्चेको, जिसके पालन-पोषणपर बहुत अधिक खर्च हो रहा हो, छोड़ नहीं देती, बल्कि उसके कल्याणके लिए तबाह तक हो सकती है, यदि गुजरात भी वैसा ही कुछ करे, तो वह काफी होगा। गुजरातको तबाह नहीं होना पड़ेगा; शायद कुछ अधिक कीमत-भर देनी पड़ेगी।

खादी-भक्तका दूसरा सुझाव यह है कि गुजरातके कार्यकर्त्ताओंको गुजरातकी खादी ही इस्तेमाल करनी चाहिए।

गुजरातकी खादीकी खपत बढ़ानेके और भी बहुत-से उपाय सुझाये जा सकते हैं, किन्तु वैसा करनेकी चाह-भर होनी चाहिए। जहाँ चाह है वहाँ राह निकल ही आती है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २०-९-१९३१

२४. भेंट : 'पोस्ट' के प्रतिनिधिको

लन्दन

[२० सितम्बर, १९३१][1]

भेंटके दौरान जब ब्रिटेनके प्रति उनके रुखका जिक्र आया तो उन्होंने कहा :

मुझे ब्रिटिश लोगोंसे नहीं बल्कि ब्रिटिश शासनसे नफरत है।

ब्रिटिश अधिकारियोंके भारतसे हटा लिये जानेसे, गांधीजीके खयालमें, कोई भारी मुश्किल पेश नहीं आयेगी। वैसे, उन्होंने यह बात स्पष्ट की कि उनमें से कुछ यदि भारतमें रहना चाहेंगे तो रह भी सकेंगे, "पर, हमारी शर्तों पर।" मैंने पूछा कि क्या वे इस चीजका समर्थन करेंगे कि भारतीय, सरकारी कार्यका अनुभव प्राप्त करनेकी दृष्टिसे, ब्रिटिश शासनमें पद-ग्रहण करें। गांधीजी ने जवाब दिया कि असहयोगके दिनोंमें तो उन्होंने वस्तुतः इसके विरुद्ध सलाह दी थी, और जहाँतक अनुभवका प्रश्न है वह कोई बहुत महत्त्व नहीं रखता। भारत स्थित ब्रिटिश अधिकारियोंकी कुशलताके सम्बन्धमें उन्होंने कहा :

वे अपने ढंगसे और अपने निजी हितके लिए कुशल हैं।

आगे और प्रश्नोंसे पता चला कि गांधीजी का संकेत केवल उन अधिकारियोंके कार्योंकी ओर था जो वर्तमान व्यवस्थाको चला रहे हैं। फिर भी मुझे ऐसा लगा कि इस विषयपर कुछ और प्रकाश डाला जाना उपयोगी होगा, और मैंने पूछा : "आपने जमीनका लगान आँकने और अन्य मामलोंमें ब्रिटिश अधिकारियोंकी प्रायः आलोचना की है। समय-समय पर आपने जिन रिपोर्टोंको चुनौती दी है, क्या आपके खयालमें वे जान-बूझकर भ्रामक बनाई गई थीं?" गांधीजी ने जवाब दिया :

नहीं, ऐसा नहीं किया गया है; या किया भी गया है तो कभी-कभी ही। पर अन्याय तो हुआ। मरीजको जान-बूझकर मारा गया या अज्ञानवश या वह केवल संयोगवश मर गया, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता।

भेंटके अन्तमें गांधीजी ने दो वाक्य दोहराये, जिनका उपयोग वे पहले भी कर चुके थे।

१. भेंटका स्थान लन्दन था और यह रविवारको सुबह हुई थी। इसके पत्रमें प्रकाशित होनेसे पहले चार रविवारोंको गांधीजी लन्दनसे बाहर थे। इस तरह इसकी सम्भावित तिथि २० सितम्बर हो सकती है।

मैं जिस तरह भारतके लिए स्वतन्त्रताकी कामना करता हूँ उसी तरह सभी राष्ट्रोंके लिए करता हूँ, और मेरे खयालमें, भारतकी स्वतन्त्रताका अर्थ विश्वकी स्वतन्त्रता है।[1]

[अंग्रेजीसे]

पोस्ट, २४-१०-१९३१

२५. भेंट : श्रीमती नाइटको

लन्दन

[२० सितम्बर, १९३१]

गांधीजी मेरठके कैदियोंके लिए[2] कुछ नहीं करेंगे। उनके मामलेको वे यह कहकर छोड़ रहे हैं कि वाइसरायके साथ उनके समझौतेके बाद जो आम माफी दी गई उसमें वे नहीं आते, क्योंकि वे अहिंसावादी नहीं हैं।

यह चीज लन्दनमें हुई गांधीजी और श्रीमती नाइटकी भेंटमें साफ हुई। श्रीमती नाइट मेरठके एक कैदी लेस्टर हचिन्सनकी माँ हैं, जो जमानतपर रिहा किया गया है, और जेलमें भोगी यातनाओंके कारण इस समय बहुत अधिक बीमार है।

गांधीजी ने यह भी कहा कि वे जानते हैं कि हचिन्सन बहुत अधिक बीमार है, पर वे उसके लिए कुछ नहीं कर सकते।

यह पूछने पर कि क्या वे मेरठ केसके सवालको गोलमेज कान्फ्रेन्समें नहीं रख सकते, उन्होंने जवाब दिया कि वे ऐसा नहीं कर सकते, क्योंकि कान्फ्रेन्सकी कार्रवाई गुप्त और अन्तरंग है।

[अंग्रेजीसे]

डेली वर्कर, २१-९-१९३१

१. रिपोर्टके अन्तमें लिखा था : "अपने पतले-दुबलेपनके बावजूद वे प्रभावशाली हैं; और इस तरहका वैयक्तिक आकर्षण तो मुझे अबतक कभी अनुभव ही नहीं हुआ था। यह विनम्र व्यक्ति अजेय है, यह बात मैं अक्सर कहता रहा हूँ; पर इसकी सचाई मैंने केवल अभी महसूस की है। गांधीजी की विनम्रता आदमीको भावाभिभूत कर देती है।

२. मेरठके जिला-मजिस्ट्रेटकी सूचनापर भारतीय दण्ड संहिताकी धारा १२१ (ए) के अन्तर्गत कलकत्ता, मद्रास, लखनऊ, पूना, चाँदपुर और इलाहाबादमें २८ ट्रेड यूनियन नेताओंकी गिरफ्तारी हुई थी। मुकदमा साढ़े चार वर्षसे भी ज्यादा समय तक चला था और उसमें कई अभियुक्तोंको लम्बी सजाएँ दी गई थीं। गांधीजीके अनुसार इस मुकदमेका हेतु लोगोंको आतंकित करना था।

२६. पत्र : सुशीला गांधीको

किंग्सले हॉल, बो
लन्दन, ईस्ट
२२ सितम्बर, १९३१

चि० सुशीला,[1]

तुम्हारा पत्र मिला। परिषद्‌की बैठकमें भाग लेते हुए यह पत्र लिख रहा हूँ। साथमें महादेव, प्यारेलाल, देवदास और मीराबहन भी हैं। आजकल जो ठण्ड पड़ रही है उसे सहन किया जा सकता है। लेकिन यहाँ काम बहुत अधिक बढ़ गया है। क्या परिणाम निकलेगा, यह तो मैं नहीं कह सकता। अभी एक महीना तो यहाँ रहूँगा ही। मणिलालका तार जरा देरसे मिला था। तुम दोनोंकी यहाँ आनेकी इच्छा तो होती ही होगी किन्तु उस इच्छापर अंकुश रखना ही उचित होगा। मेरे साथ रहकर इस देशको अच्छी तरह नहीं देखा जा सकता; खर्च बहुत होगा, जो हमारी सामर्थ्यके बाहरकी बात है।

जयाशंकर अपने दुःखोंसे मुक्ति पा गये। अब यदि दोनों भाई वहीं रह जायें तो बहुत अच्छा हो। जबतक तुम वहाँ हो तबतक वहाँके कामको चमकाना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४७८६) से।

२७. पत्र : जमना गांधीको

२२ सितम्बर, १९३१

चि० जमना,

तुमने पुरुषोत्तमका पत्र पढ़ा ही होगा। अब मेरी सलाह है कि हम उसकी सगाईकी बात भूल जायें। तुम इतना याद रखना कि जब वह तैयार होगा तो मैं उसके लिए योग्य सहचरी खोज देनेको तैयार रहूँगा। यदि वह आजन्म ब्रह्मचर्यका पालन कर सके तो हमें प्रसन्न होना चाहिए।

आशा है, तुम्हारा स्वास्थ्य अच्छा होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८४९) से; सौजन्य : नारणदास गांधी

१. मणिलाल गांधीकी पत्नी।

२८. पत्र : पुरुषोत्तम गांधीको

२२ सितम्बर, १९३१

चि० पुरुषोत्तम,

तेरा सुन्दर पत्र मिला। तेरा कल्याण ही है। यदि जमना तेरी सगाईकी बात सोचती रहती है तो इसमें दु:खी होनेका कोई कारण नहीं है। जबतक तेरा मन निर्विकार रहता है अथवा तू विवाहकी इच्छा नहीं करता तबतक तुझे कोई विवश नहीं कर सकता। बल्कि मेरी ओरसे तो तुझे मदद ही मिलेगी।

तू काम अच्छा कर रहा है। अभी तो यहाँ हमें एक महीने रहना पड़ेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९०३) से; सौजन्य: नारणदास गांधी

२९. भेंट : चार्ली चैपलिनसे[1]

लन्दन

२२ सितम्बर, १९३१

गांधीजी ने उनका नाम नहीं सुना था, पर जाहिर है, वे गांधीजी के चरखेके बारेमें सुन चुके थे। इसलिए पहला प्रश्न उन्होंने गांधीजी से यही किया कि वे मशीनोंके खिलाफ क्यों हैं। गांधीजी को इस प्रश्नसे खुशी हुई और उन्होंने उन्हें विस्तारसे यह बात समझाई कि भारतकी पूरी किसान आबादी छः महीने बेकार रहती है, इसलिए उसे उसके पहलेके सहायक उद्योगमें फिरसे लगाना उनके लिए महत्त्वपूर्ण हो जाता है।

चार्ली चैपलिन: तो यह केवल कपड़ेके बारेमें है?

गांधीजी: बिलकुल। कपड़े और भोजनके मामलेमें हर राष्ट्रको आत्मनिर्भर होना चाहिए। हम आत्मनिर्भर थे और फिर वैसा ही होना चाहते हैं। इंग्लैंडको, बड़े पैमानेके अपने उत्पादनके कारण, अन्यत्र बाजारकी तलाश रहती है। हम इसे शोषण कहते हैं, और शोषक इंग्लैंड संसारके लिए एक खतरा है। यदि यह बात ठीक है तो सोचिए कि भारत जब मशीनोंको अपनाकर अपनी आवश्यकताओंसे कई गुना अधिक कपड़ा तैयार करने लगेगा और इस तरह वह भी शोषक बन जायेगा तो वह दुनियाके लिए कितना बड़ा खतरा होगा।

१. भेंट डॉ० कटियालके घर, केनिंग टाउनमें हुई थी। रिपोर्ट महादेव देसाईके "लंदन लैटर" और चार्ली चैपलिनकी पुस्तक **माई ऑटोबायोग्राफी** से ली गई है।

चार्ली चैपलिन : तो प्रश्न केवल भारत तक सीमित है? लेकिन मान लीजिए आपको भारतमें रूसकी तरहकी स्वाधीनता मिलती है, और आप अपने बेरोजगारोंके लिए अन्य काम खोज सकते हैं, और सम्पत्तिके बराबर बँटवारेकी गारण्टी कर सकते हैं, तब तो आप मशीनकी उपेक्षा नहीं करेंगे? आप कामके घंटे कम करने और श्रमिकको आरामके लिए अधिक समय देनेका समर्थन करेंगे?

गांधीजी : बेशक।[1]

चार्ली चैपलिन : जैसा कि स्वाभाविक है, मेरी भारतकी आकांक्षाओं और उसके स्वाधीनता-संघर्षसे सहानुभूति है। फिर भी मशीनसे आपको जो चिढ़ है उसने मुझे कुछ उलझनमें डाल दिया है।

गांधीजी : आपकी बात मैं समझता हूँ। पर उन लक्ष्योंपर पहुँच सकनेसे पहले भारतको अपनेको अंग्रेजी शासनसे मुक्त करना चाहिए। मशीनके कारण हम अतीतमें इंग्लैंडके अधीन हो गये, और हम अपनेको पराधीनतासे केवल इसी तरह मुक्त कर सकते हैं कि हम मशीनसे बनी सभी चीजोंका बहिष्कार करें। इसीलिए हमने प्रत्येक भारतीयके लिए अपना सूत कातना और अपना कपड़ा बुनना देशके प्रति उसका एक कर्त्तव्य बना दिया है। यह इंग्लैंड-जैसे अति शक्तिशाली राष्ट्रपर आक्रमणका हमारा अपना ढंग है——और, निःसन्देह, अन्य कारण भी हैं। भारतकी जलवायु इंग्लैंडसे भिन्न है; और उसकी आदतें और आवश्यकताएँ भी भिन्न हैं। इंग्लैंडमें ठंडे मौसमके कारण कठिन उद्योग और पेचीदा अर्थव्यवस्था आवश्यक हो जाती है। आपको खाना खानेके उपकरणोंकी जरूरत पड़ती है, जबकि हम अपनी अँगुलियोंको काममें लाते हैं। और इस तरह यह चीज बहुत-सी भिन्नताओंका रूप ग्रहण कर लेती है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ८-१०-१९३१, और **माई ऑटोबायोग्राफी**,

३०. भाषण : संघ-संरचना समितिकी बैठकमें

लन्दन
२२ सितम्बर, १९३१

लॉर्ड चान्सलर,

भारत-मन्त्रीने कल बहुत ही सुचिन्तित वक्तव्य दिया था, और सर अकबर हैदरीने उस वक्तव्यमें दिये गये सुझावोंका पूरे दिलसे समर्थन किया है। इसलिए कांग्रेसकी ओरसे मैं अपना यह कर्त्तव्य समझता हूँ कि इस सम्बन्धमें उसकी स्थिति स्पष्ट कर दूँ।

ब्रिटिश राष्ट्रपर आज जो संकट छाया है उसमें हर विचारशील कांग्रेसीकी उससे सहानुभूति होनी चाहिए। परन्तु भारतमें जिस ढंगकी कार्रवाई की गई

१. इससे आगेका अंश चार्ली चैपलिनकी **माई ऑटोबायोग्राफी** से लिया गया है।

है[१] उसपर यदि मैं आश्चर्य और दुःख प्रकट नहीं करता हूँ तो मैं अपने दायित्वके प्रति सच्चा नहीं रहूँगा। मैं अपनी सीमाएँ जानता हूँ। वित्तीय विषयोंकी मेरी जानकारी बिलकुल प्राथमिक स्तरकी है। इसलिए उसके गुण-दोषोंकी परीक्षाका कार्य मुझे कांग्रेसके विशेषज्ञोंपर छोड़ देना चाहिए। परन्तु मुझे जो चीज पीड़ा दे रही है वह यह तथ्य है कि भारतमें यह निर्णय विधानमण्डलोंकी, जैसी भी वे हैं, उपेक्षा करके लिया गया है, और वह भी एक ऐसे समयमें जब यहाँ हमसे शीघ्र ही पूर्ण उत्तरदायी सरकारकी स्थापना पर विचार करनेकी अपेक्षा की जा रही है। भारत सरकारकी यह कार्रवाई विचित्र है और, मेरी विनम्र रायमें, भारत सरकारके कठोर और अनम्य रुखका असंदिग्ध प्रमाण है। यह चीज साफ है कि राष्ट्रके लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण विषयोंके सम्बन्धमें हमें, हमारे लिए क्या अच्छा है, यह निर्णय करने योग्य समझना तो दूर, इस लायक भी नहीं माना जाता कि हमसे परामर्श किया जाये। इस दृष्टिकोणकी मैं अपनी पूरी शक्तिसे निन्दा करता हूँ; और इन परिस्थितियोंमें, जहाँतक कांग्रेसका सवाल है, मुझे खेद है कि मैं भारतमें की गई कार्रवाइयोंका, जैसा कि भारत-मन्त्री चाहते हैं, समर्थन नहीं कर सकता।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउण्ड टेबिल कांफरेंस (सेकेण्ड सेशन): प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐण्ड माइनॉरिटीज कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ २७८-७९

३१. पत्र: 'मैंचेस्टर गार्डियन' को

लन्दन
२३ सितम्बर, १९३१

महोदय,

मेरा ध्यान सोमवार, २१ सितम्बरके 'मैंचेस्टर गार्डियन' में छपे एक पत्रकी ओर आकर्षित किया गया है। उसमें कुछ ऐसे टिकटोंकी ओर ध्यान दिलाया गया है जिनपर "ब्रिटिश मालका बहिष्कार करो" शब्द छपे हैं। यदि इस तरहके टिकटोंका उपयोग किसी कांग्रेसी अधिकारीने ५ मार्च, १९३१के समझौतेके बाद किया है, तो यह साफ-साफ उस समझौतेके विरुद्ध है जिसमें यह घोषणा की गई है कि भविष्यमें केवल आर्थिक बहिष्कारकी ही अनुमति दी जानी चाहिए। परन्तु इस तरहके टिकट, निःसन्देह समझौता होनेसे पहले संघर्षके दिनोंमें प्रयुक्त किये गये थे। इस

१. वित्तीय संकटके बाद सरकारने २१ सितम्बरको स्वर्णमान छोड़नेके अपने निर्णयकी घोषणा की थी। एक आदेश जारी कर, सरकारको स्वर्ण या पौंड बेचनेके उसके उस दायित्वसे मुक्त कर दिया गया था जो उस पर मुद्रा अधिनियमके अनुसार आता था, और २२ से २४ सितम्बर तक तीन दिनकी छुट्टी घोषित कर दी गई थी। **इंडिया इन १९३१-३२**।

तरहके टिकट समझौतेके बाद प्रयुक्त नहीं हो सकते। जहाँ-कहीं मुझे समझौतेका कोई उल्लंघन दिखाई दिया है, मैंने तुरन्त उसे रोकनेका यथाशक्ति प्रयास किया है।

आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
मैंचेस्टर गार्डियन, २६-९-१९३१

३२. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

लन्दन
२३ सितम्बर, १९३१

हमने अपने मतभेदोंपर विचार-विमर्श किया और बातचीत बहुत ही मित्रतापूर्ण रही।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, २६-९-१९३१

३३. भाषण : गिल्डहाउस चर्चमें[2]

लन्दन
२३ सितम्बर, १९३१

आपको मुझसे यह सुनकर आश्चर्य होगा कि यद्यपि मेरा ध्येय बाहरसे राजनीतिक लगता है, पर मैं आपको यह विश्वास दिलाना चाहूँगा कि इसकी जड़ें — यदि मुझे इस शब्दको प्रयुक्त करनेकी अनुमति हो तो कहूँगा — आध्यात्मिक हैं। यह बात आम तौरपर विदित है, यद्यपि इसपर शायद विश्वास नहीं किया जाता, कि मैं कमसे-कम अपनी राजनीतिको नैतिकता, आध्यात्मिकता और धर्मसे विच्छिन्न न होनेका दावा करता हूँ। मेरा यह दावा रहा है — और यह दावा व्यापक अनुभवपर आधारित है — कि जो आदमी ईश्वरकी इच्छाको जानने और उसका अनुसरण करनेकी कोशिश कर रहा है वह जीवनके किसी भी क्षेत्रको अछूता नहीं छोड़ सकता। अपने सेवा-कार्यके दौरान मैं इस निष्कर्षपर भी पहुँचा कि यदि जीवनका कोई ऐसा क्षेत्र है

१. गांधीजी ने यह वक्तव्य रिट्ज होटलमें आगाखाँ से अपनी भेंटके बाद काफी रात गये दिया था। इस भेंटकी कोई रिपोर्ट उपलब्ध नहीं हैं।

२. सभा फ्रैंसिस्कन सोसाइटीके तत्त्वावधानमें हुई थी और डॉ० मॉड रॉयडन उसके सभापति थे। विषय था "स्वेच्छासे अपनाई गई गरीबी"।

जहाँ नैतिकता, सत्य, ईश्वरका भय आवश्यक नहीं है, तो वह क्षेत्र बिलकुल छोड़ देना चाहिए।

परन्तु मैंने यह भी देखा है कि आजकी राजनीति राजाओंकी चिन्ताकी चीज नहीं रह गयी है, बल्कि वह समाजके सबसे निचले स्तरको प्रभावित करती है और कटु अनुभवसे मैंने यह जाना है कि यदि मैं समाज-सेवा करना चाहता हूँ तो मैं राजनीतिको छोड़ नहीं सकता।

कृपया यह मत सोचिए कि मैं आज रात आपके सामने राजनीतिपर बोलना चाहता हूँ और स्वेच्छासे अपनाई गई गरीबीको किसी-न-किसी तरीकेसे राजनीतिसे जोड़ना चाहता हूँ। ऐसा मेरा इरादा नहीं है। यह सब तो मैंने आपको केवल इस बातकी पृष्ठभूमि बतानेके लिए कहा कि मैं किस तरह इस विश्वासपर पहुँचा कि किसी भी सामाजिक कार्यकर्त्ताके लिए, या ऐसे राजनीतिक कार्यकर्त्ताके लिए जो इस समय साधारण राजनीतिमें व्याप्त घिनौनी अनैतिकता और असत्यसे अछूता रहना चाहता है, स्वेच्छासे अपनाई गई गरीबी आवश्यक है। उस जीवनसे आती दुर्गन्ध कुछ लोगोंको इतनी दम घोटनेवाली लगी है कि वे इस निष्कर्षपर पहुँच गये हैं कि राजनीति ईश्वरसे डरनेवाले व्यक्तिका क्षेत्र ही नहीं है।

मुझे ऐसा लगता है कि यदि सचमुच ऐसा होता तो यह मानव-जातिके लिए एक अभिशाप होता। जो-कुछ मैं अब कह रहा हूँ उसकी रोशनीमें आप खुद यह देखिए कि संसारके इस एक सबसे बड़े नगरमें आपकी प्रत्येक गति-विधि, प्रत्यक्ष या परोक्ष रूपसे, क्या राजनीतिसे जुड़ी नहीं है।

तो, जब मैंने अपनेको राजनीतिक गोरखधन्धेमें उलझा पाया तो मैंने अपने-आपसे पूछा कि अनैतिकता, असत्य और जिसे राजनीतिक लाभ कहते हैं, उससे बिलकुल अछूता रहनेके लिए मेरे लिए क्या-क्या आवश्यक है।

अपनी इस खोजमें मैंने कई बातोंका आविष्कार किया, जिनकी चर्चा मुझे आज नहीं करनी है। पर यदि मैं भूलता नहीं हूँ तो यह गरीबीकी आवश्यकता मुझे सबसे पहले महसूस हुई।

फिर मैंने गरीबीका वरण कैसे किया, इसका पूरा विवरण मैं आपको नहीं देना चाहता हूँ, यद्यपि वह दिलचस्प हैं और मेरे लिए तो पवित्र भी हैं। पर मैं आपको केवल इतना ही बता सकता हूँ कि प्रारम्भमें वह एक कठिन संघर्ष था और — जैसा कि मेरी स्मृतिमें आज भी स्पष्ट है — अपनी पत्नी और अपने बच्चोंके साथ वह एक तरहका मल्ल-युद्ध था।

वह जो भी कुछ रहा हो, पर मैं इस निश्चित निष्कर्षपर पहुँचा कि यदि मुझे उन लोगोंकी सेवा करनी है जिनके बीचमें मेरा जीवन ढला है और जिनके कष्टोंको मैं रोज देखता हूँ तो मुझे सारी सम्पत्तिका, हर तरहके परिग्रहका त्याग करना होगा।

यह कहना सच नहीं होगा कि यह विश्वास जब मुझमें जगा तो मैंने हर चीजका तुरन्त त्याग कर दिया। मैं आप लोगोंके आगे यह स्वीकार करता हूँ कि पहले-पहल

प्रगति धीमी रही, और अब जब मैं संघर्षके उन दिनोंका स्मरण करता हूँ तो मुझे यह याद आता है कि वह आरम्भमें कष्टदायी भी था। परन्तु, ज्यों-ज्यों दिन बीतते गये, मैंने देखा कि मुझे 'बहुत-सी अन्य 'चीजें भी, जिन्हें मैं अपनी समझा करता था, छोड़नी होंगी और फिर एक समय ऐसा भी आया जब उन चीजोंको त्यागना वास्तविक उल्लासकी बात हो गई। और तब एक-एक कर, लगभग ज्यामितीय प्रगतिके साथ, चीजें मुझसे छूटती गईं। अपने उन अनुभवोंका वर्णन करते हुए मैं यह कह सकता हूँ कि मेरे कन्धोंसे एक बड़ा बोझ उतर गया और मुझे ऐसा महसूस हुआ कि मैं अब निश्चिन्त चल-फिर सकता हूँ और अपने भाइयोंकी सेवाका कार्य भी खूब आरामसे और पहलेसे अधिक आनन्दके साथ कर सकता हूँ। तब कैसा भी परिग्रह मेरे लिए एक झंझट और बोझ हो गया।

उस आनन्दके कारणकी खोज करनेपर मैंने देखा कि मैं किसी चीजको अपनी मानकर अपने पास रखता हूँ तो मुझे उसकी सारी दुनियासे रक्षा करनी होती है। मैंने यह भी देखा कि बहुत-से ऐसे लोग हैं जिनके पास वह चीज नहीं है, यद्यपि वे उसे चाहते हैं और भूखे अकाल-पीड़ित लोग मुझे अकेला पाकर यदि उस चीजमें न केवल हिस्सा बँटाना बल्कि मुझसे उसे छीनना चाहें तो मुझे पुलिसकी भी सहायता लेनी होगी। और मैंने अपने-आपसे कहा : यदि वे उसे चाहते हैं और ले लेते हैं, तो वे ऐसा किसी द्वेषपूर्ण उद्देश्यके कारण नहीं करते हैं, बल्कि इसलिए करते हैं कि उन्हें उसकी मुझसे अधिक जरूरत है।

और फिर मैंने अपने-आपसे कहा : परिग्रह मुझे पाप लगता है। मैं कुछ चीजोंको केवल तभी अपने पास रख सकता हूँ जब मुझे यह मालूम हो कि अन्य लोग, जो उस तरहकी चीजोंको अपने पास रखना चाहते हैं, उन्हें अपने पास रख सकते हैं। लेकिन हम यह जानते हैं — हममें से हरएक अपने अनुभवसे यह कह सकता है — कि इस तरहकी चीज असम्भव है। इसलिए एक ही बात है जिसे सब अपने पास रख सकते हैं और वह है अपरिग्रह, यानी कुछ भी अपने पास न रखना। दूसरे शब्दोंमें स्वेच्छासे समर्पण।

इसपर आप मुझसे यह कह सकते हैं कि आप, स्वेच्छासे गरीबीके अलावा और किसी भी तरहकी कोई चीज न रखनेकी बात करते हुए भी, अपने शरीरपर बहुत-सी चीजें धारण किये हुए हैं। और जो-कुछ मैं अब कह रहा हूँ यदि आप उसके अर्थको केवल सतही तौरपर ही समझें तो आपका यह ताना सही भी होगा। परन्तु वस्तुतः आशय उसकी भावनासे है। जबतक आपका शरीर है आपको उसे ढकनेके लिए कुछ-न-कुछ चीज लेनी होगी। लेकिन तब आप शरीरके लिए जितना भी ले सकते हैं उतना नहीं लेंगे, बल्कि यथासम्भव कमसे-कम — बस जिससे काम चल सके-उतना ही लेंगे। आप अपने रहनेके लिए बहुत-से भवन नहीं, बल्कि सिर छिपाने लायक कमसे-कम स्थान लेंगे। और यही बात भोजन और अन्य चीजोंके बारेमें होगी।

इस तरह आप यह देख सकते हैं कि जिसे आप और हम आजकल सभ्यता समझते हैं और जिस स्थितिको मैं परमानन्दकी स्थिति कह रहा हूँ और एक अत्यन्त

वांछनीय स्थितिके रूपमें आपके आगे रख रहा हूँ, उनमें प्रतिदिन संघर्ष चलता है। एक ओर तो सभ्यता या संस्कृतिका आधार आपकी सभी जरूरतोंका बढ़ना समझा जाता है। आपके पास यदि एक कमरा है, तो आप दो कमरे, तीन कमरे चाहेंगे, जितने ज्यादा होंगे आप उतने ही ज्यादा खुश होंगे। इसी तरह, आप अपने घरमें जितना भी फर्नीचर रख सकते हैं उतना रखना चाहेंगे। इस सिलसिलेका कोई अन्त नहीं है और आपके पास जितनी अधिक चीजें होंगी उतना ही अधिक आप संस्कृति या इसी तरहकी किसी चीजका प्रतिनिधित्व करेंगे। मैं शायद इस बातको उतने सुन्दर ढंगसे नहीं रख रहा हूँ जैसे कि उस सभ्यताके समर्थक रखेंगे, पर मैं इसे आपके आगे उस तरह रख रहा हूँ जिस तरह कि मैं इसे समझता हूँ।

दूसरी ओर आप देखते हैं कि आपके पास जितनी कम चीजें होंगी, जितनी कम आपकी इच्छाएँ होंगी, आप उतने ही अच्छे रहेंगे। अच्छे किस बातमें? इस जीवनका आनन्द लेनेमें नहीं, बल्कि अपने भाइयोंकी आप जो सेवा कर रहे हैं उसका आनन्द लेनेमें, जिस सेवाके लिए आपने अपने-आपको — तन, मन और आत्माको — अर्पित कर दिया है।

आप देखेंगे कि यहाँ पाखण्ड और छलके लिए काफी स्थान है, क्योंकि कोई भी स्त्री-पुरुष अपने-आपको या अपने पड़ोसियोंको धोखा देनेके लिए यह कह सकता है: "भावनात्मक रूपसे मैंने सब-कुछ त्याग दिया है और मैं इन चीजोंको केवल बाहरी तौरपर ग्रहण किये हुए हूँ। आपको मेरे कामकी नहीं, बल्कि मेरे इरादेकी जाँच करनी चाहिए और अपने इरादेका केवल मैं ही अकेला साक्षी हूँ।" यह एक फंदा है और मौतका फंदा है। तो फिर आप एक गज चौड़े और दो, तीन या चार गज लम्बे कपड़ेके टुकड़े तकको अपने पास रखना न्यायोचित कैसे ठहराते हैं? आप जब यह जानते हैं कि यदि आप उस कपड़ेके टुकड़ेको छोड़ दें तो कोई उसे ले लेगा — किसी द्वेषके कारण नहीं, बल्कि इसलिए कि उसे उसकी जरूरत है, क्योंकि उसके पास कपड़ेका वह टुकड़ा तक नहीं है — तो आप अपने शरीरको थोड़ा-बहुत ढकनेके लिए कपड़ेके उस टुकड़े तकको अपने पास रखना न्यायोचित कैसे ठहरा सकते हैं? मैंने देखा है, खुद अपनी आँखोंसे देखा है कि लाखों लोगोंके पास कपड़ेका उतना टुकड़ा तक नहीं है। तो फिर अपने पास कुछ भी न रखनेके अपने इरादेके साथ आप इस चीजको अपने पास रखनेकी संगति कैसे बैठा सकते हैं?

इस उलझन, इस कठिनाई, जीवनके इस अन्तर्विरोधसे निकलनेकी एक राह है: यदि आपको ये चीजें अपने पास रखनी ही पड़ें तो आप इन्हें अपने पास इस तरह रखिए कि जिन्हें इनकी जरूरत है वे भी उनका उपयोग कर सकें। उस हालतमें यदि कोई आकर आपके इस कपड़ेके टुकड़ेको चाहेगा तो आप इसे उससे बचाकर नहीं रखेंगे, आप दरवाजे बन्द नहीं करेंगे और इन चीजोंकी रक्षार्थ अपनी सहायताके लिए निश्चय ही पुलिस नहीं बुलायेंगे।

साथ ही आपको, जो-कुछ दुनिया आपको देती है, उससे ही सन्तोष करना है। दुनिया आपको कपड़ेका यह टुकड़ा दे भी सकती है और नहीं भी दे सकती,

क्योंकि यदि आप अपने पास कुछ नहीं रखते हैं तो स्वभावत: आप अपने पास मुद्रा भी नहीं रखेंगे जिससे आप कपड़ा या भोजन खरीद सकें। आपको तब पूर्णतया दुनियाके दानपर रहना होता है। और दानी लोग आपको जब कोई चीज देते भी हैं तब भी वह चीज आपकी मिल्कियत नहीं होती है। आप उसे केवल इस पुख्ता इरादेके साथ अपने पास रखते हैं कि जो भी उसे लेना चाहेगा उसे वह दे दी जायेगी। यदि कोई आदमी आकर आपसे उसे छीननेके लिए बल-प्रयोग करता है, तो आप नजदीकके किसी पुलिसके सिपाहीके पास उसकी रिपोर्ट करने नहीं जायेंगे और यह नहीं कहेंगे कि आप पर हमला हुआ है। उस हालत में तो आपके मनमें ऐसा खयाल ही नहीं आयेगा कि आपपर हमला हुआ है।

तो मेरे मनमें, स्वेच्छासे अपनाई गई गरीबीका यह अर्थ है। मैंने आपके आगे एक आदर्श रखा है। डॉक्टर रॉयडनने कहा है कि मैं स्वेच्छासे अपनाई गई गरीबीका संसारमें सबसे बड़ा व्याख्याता हूँ। अपने बारेमें इस तरहके किसी भी दावेको मैं, पूरी विनम्रताके साथ, अस्वीकार करता हूँ। ओर ऐसा मैं आपसे झूठी विनयके कारण नहीं कह रहा हूँ, बल्कि इसे सच मानते हुए गम्भीरतापूर्वक कह रहा हूँ। मैंने आपको स्वेच्छासे अपनाई गई गरीबीकी अपनी धारणाकी केवल एक झलक दी है। और मुझे यह बात आपके आगे मान लेनी चाहिए कि उस आदर्शतक पूरी तरह पहुँचनेसे मैं अभी बहुत दूर हूँ। उस आदर्शतक पूरी तरह पहुँचनेके लिए मेरे मनमें यह पक्का इरादा और विश्वास होना चाहिए कि इस पृथ्वी पर किसी भी चीजको सम्पत्तिके रूपमें अपने पास रखनेकी मुझे इच्छा नहीं है और न होनी चाहिए —यहाँ तक कि इस शरीरको भी रखनेकी इच्छा नहीं है, क्योंकि यह शरीर भी एक सम्पत्ति है।

यदि आप चर्चके अनुयायी हैं, अर्थात् यदि आप ईश्वरमें आस्था रखते हैं, तो मेरी तरह आपका यह विश्वास होना ही चाहिए कि शरीर और आत्मा एक चीज नहीं है, बल्कि शरीर आत्मा या भीतरकी रूहके लिए केवल एक घर, एक अस्थायी बसेरा है। और यदि आपका यह विश्वास है—मैं माने लेता हूँ कि आपका यह विश्वास है—तो इससे निष्कर्ष यही निकलता है कि यह शरीर तक आपका नहीं है। यह आपको एक अस्थायी सम्पत्तिके रूपमें दिया गया है और जिसने इसे आपको दिया है वह आपसे इसे ले भी सकता है।

इसलिए अपने भीतर इस पूर्ण विश्वासको रखते हुए मेरी निरन्तर यही इच्छा होनी चाहिए कि ईश्वरकी इच्छा पर यह शरीर भी समर्पित किया जा सकता है; और जबतक यह मेरे पास है, इसका उपयोग दुराचार, भोग-विलास या आनन्दके लिए नहीं, बल्कि केवल सेवाके लिए होना चाहिए, और जाग्रत अवस्थामें इससे सब समय सेवा ही करनी चाहिए।

यदि यह बात शरीरके बारेमें सच है, तो कपड़ों और उन बहुत-सी दूसरी चीजोंके बारेमें तो, जिनका हम उपयोग करते हैं, कितनी अधिक सच होगी?

इस विश्वासपर पहुँचने और इतने साल इसपर जमे रहनेके बाद मैं अब आपको अपने विरुद्ध यह साक्षी देता हूँ कि स्वेच्छासे अपनाई गई गरीबीकी पूर्णावस्था

पर मैं अभी नहीं पहुँचा हूँ। मैं इस अर्थमें तो गरीब जरूर हूँ कि उस आदर्शपर पहुँचनेके लिए संघर्ष कर रहा हूँ, लेकिन गरीब शब्दको आम तौरपर जिस अर्थमें प्रयुक्त किया जाता है उस अर्थमें गरीब नहीं हूँ।

वस्तुतः एक बार तो किसीके चुनौती देने पर मैंने यह कहा था कि अपने पड़ोसियों और दुनियाके लोगोंको मैं पृथ्वीका सबसे अमीर आदमी लगता हूँ, क्योंकि दरअसल सबसे अमीर आदमी वह है जो अपने पास कुछ नहीं रखता पर जिसके लिए हर चीज मौजूद है।

और जिन्होंने स्वेच्छा-गृहीत गरीबीके इस व्रतका वस्तुतः यथासम्भव पूरी तरह पालन किया है (मानव-प्राणीके लिए बिलकुल पूर्णता तक पहुँचना तो असम्भव है, इसलिए कहना चाहिए कि मनुष्यके लिए जहाँतक सम्भव है वहाँतक पूरी तरह पालन किया है), जो उस आदर्श स्थिति पर पहुँच गये हैं, वे इस बातकी साक्षी देते हैं कि जब आप अपनी हर चीजका त्याग कर देते हैं तो सचमुच आपको संसारका सारा खजाना मिल जाता है। दूसरे शब्दोंमें, आपको वह सब मिल जाता है जो वस्तुतः आपके लिए आवश्यक है — ऐसी हर चीज आपको मिल जाती है। यदि भोजन आवश्यक है तो भोजन आपके पास आयेगा।

आपमें से बहुत-से स्त्री-पुरुष प्रार्थनाको अपने जीवनमें सबसे महत्त्वकी वस्तु मानते हैं, और मैंने यह बात बहुत-से ईसाइयोंके मुँहसे सुनी है कि प्रार्थना करने पर उन्हें भोजन मिला है, कि प्रार्थना करने पर उन्हें हर चीज मिल जाती है। मैं इस बातपर विश्वास करता हूँ। परन्तु मैं चाहता हूँ कि आप मेरे साथ एक कदम और आगे बढ़ें और इस चीजपर विश्वास करें कि जो स्वेच्छासे पृथ्वीकी हर चीजको, शरीर तकको, छोड़ देते हैं, अर्थात् जो हर चीजको छोड़नेके लिए तैयार रहते हैं (और ऐसे लोगोंको आलोचनात्मक ढंगसे और कड़ाईके साथ अपनी परीक्षा करनी चाहिए तथा अपने विरुद्ध प्रतिकूल निर्णय देनेको सदा तैयार रहना चाहिए) — जो इस मार्गका पूरी तरह अनुसरण करते हैं, वे वस्तुतः यह देखेंगे कि उन्हें कभी कोई कमी नहीं रहेगी।

मैं आपके आगे यह स्वीकार करूँगा कि जब मैं यह महसूस करता था कि ईश्वरने पृथ्वीकी दौलतका कुछ भाग मुझे दिया है और जब मैं अपने पास बहुत-सी चीजें रखता था, तब मुझे चीजें प्राप्त करनेकी उतनी सुविधाएँ नहीं थीं जितनी कि इस समय हैं। सेवाके लिए धन और जरूरतकी हर चीज प्राप्त करनेकी निश्चय ही तब मुझमें अबसे लाखवाँ हिस्सा भी योग्यता नहीं थी।

मैं जब वकालत करता था, रुपया कमाता था और कितनी ही चीजें अपने पास रखता था, सेवाकी भावना मुझमें तभी पैदा हो गई थी। परन्तु उस समय मुझमें सेवाके लिए हर चीज प्राप्त करनेकी क्षमता निश्चय ही नहीं थी। लेकिन आज मैं आपको इस बातकी साक्षी दे सकता हूँ कि मुझे कभी कोई कमी नहीं रही है (यह चीज मेरे लिए अच्छी है या बुरी, मैं नहीं जानता — ईश्वर ही जानता है)।

कुछ समय बाद जब मैंने स्वेच्छासे सब-कुछ छोड़ दिया, जब मुझे किसी भी ऐसी चीजकी, जिसे मैं अपनी कह सकूँ, लालसा नहीं रही, और मैं हर चीजमें — जो

मेरे पास थी—पड़ोसियोंको अपना साझी बनाने लगा, तो फिर शीघ्र ही काफी हद तक मैं उस स्थितिपर पहुँच गया जहाँ मुझे लगा कि मुझे कोई कमी नहीं है। (मैं हर चीजमें सारी दुनियाको तो अपना साझी बना नहीं सकता। लेकिन यदि मैं पड़ोसियोंको अपना साझी बनाता हूँ और पड़ोसी भी यही कहते हैं, तो मैं सारी दुनियाको ही साझी बना लेता हूँ। सीमित शक्तिवाला मानव प्राणी बस इतना ही कर सकता है।)

कमीका भी शाब्दिक अर्थ नहीं लेना चाहिए। ईश्वरको मैंने इस पृथ्वी पर सबसे कड़ा स्वामी पाया है और वह आपकी पूरी तरह परीक्षा करता है। और जब आपको ऐसा लगता है कि आपकी आस्था आपका साथ नहीं दे रही है या आपका शरीर आपका साथ नहीं दे रहा है और आप डूबने लगे हैं, तो वह किसी-न-किसी रूपमें आपकी मददको आ जाता है और आपके आगे यह सिद्ध कर देता है कि आपको आस्था छोड़नी नहीं चाहिए, कि वह सदा आपके पास ही है और पुकारने पर आ सकता है, पर अपनी शर्तों पर, आपकी शर्तों पर नहीं। मैंने यही देखा है। वस्तुतः मुझे एक भी मौका ऐसा याद नहीं आता जब बिलकुल आखिरी घड़ीमें उसने मेरा साथ न दिया हो। आपके आगे मैं यह बात फिर दोहरा सकता हूँ कि मुझे भारतका सर्वश्रेष्ठ भिखारी होनेकी ख्याति प्राप्त है। और जैसा कि मेरे आलोचक आपको बतायेंगे, एक बार मैंने एक करोड़ रुपया इकट्ठा किया था। पौंड, शिलिंग, पेंसमें यह कितना हुआ—यह तो मैं हिसाब लगाकर बता नहीं सकता, पर यह एक बहुत ही बड़ी रकम है (लगभग ७,५०,००० पौंड), पर मुझे इसे इकट्ठा करनेमें कोई कठिनाई नहीं हुई। और तबसे, अपने अन्तःकरणमें गहरे झाँकने पर, किसी भी कारण, मुझे ऐसा एक भी अवसर याद नहीं आता जब कोई संकट उप-स्थित होने पर मुझे सेवाके लिए आवश्यक कोई चीज न मिली हो।

लेकिन आप कहेंगे: यह प्रार्थनाका फल है। यह केवल प्रार्थनाका फल नहीं है, यह अपरिग्रहके इस व्रतका या स्वेच्छासे अपनाई गई गरीबीके व्रतका एक वैज्ञा-निक परिणाम है। आप कैसी भी किसी भी, चीजको अपने पास रखना नहीं चाहते हैं और अपने जीवनको इसलिए जितना सरल बनाते हैं, जितना अपरिग्रहका पालन करते हैं, आपके लिए उतना ही अच्छा रहता है।

जैसे ही आप उस अवस्थामें पहुँचते हैं, आप कोई भी चीज प्राप्त कर सकते हैं। आप उन निस्सार वस्तुओंको भी प्राप्त कर सकते हैं, जिन्हें दुनिया सम्पत्ति कहती है परन्तु यदि आप एक बार भी उन्हें प्राप्त करते हैं और अपने पास रखते हैं तो यह शक्ति आपमें से तुरन्त चली जायेगी। आपको कुछ भी अपने लिए नहीं लेना चाहिए। यदि आप लेते हैं, तो बस आप नष्ट हो गये। मैंने बहुत बार ऐसा होते देखा है। बहुत-से आदमियोंने कहा है: "जी हाँ, ईश्वरने मेरी धन या सम्पत्तिकी प्रार्थनाका अब फल दिया है, इसलिए मैं अब इसे—इस कोहनूर हीरेको, या जो भी चीज वह हो—अपने पास रखूँगा।" लेकिन वह उसके लिए बस अन्तिम अवसर होगा। वह उस हीरेकी फिर रक्षा नहीं कर सकेगा।

इसलिए आपके सम्मुख इस समय मैं जो महान् चीज रख रहा हूँ वह यह है कि आप सेवाके लिए संसारके सभी साधन प्राप्त कर सकते हैं। जिसका इसमें विश्वास नहीं है उसे यह एक दर्पपूर्ण उक्ति लग सकती है। परन्तु जैसा कि मेरा विश्वास है, यह कथन दर्पपूर्ण नहीं है कि सेवाकी अपनी योग्यताके अनुसार, आप सेवाके लिए पृथ्वीके सभी साधन प्राप्त कर सकते हैं। यदि आप सेवाके निमित्त संसारके सभी साधन प्राप्त करना चाहते हैं, तो केवल यही काफी नहीं है कि आप ईस्ट एंडके कुछ घरोंमें जायें, वहाँ रहनेवालोंके कष्टका पता लगायें और ताँबेके कुछ सिक्के उनके आगे फेंक दें। उसके बदले तो आपको संसारके सभी साधन प्राप्त नहीं होंगे, बल्कि ईश्वर आपके आगे भी ताँबेके कुछ सिक्के फेंक देगा।

परन्तु यदि आप अपने-आपको, तन, मन और आत्माको समर्पित कर देते हैं, और अपने-आपको संसारको दे देते हैं, तो मैं कहता हूँ कि दुनियाके खजाने आपके चरणोंमें होंगे, आपके आनन्दके लिए नहीं, बल्कि सेवाके आनन्दके लिए, केवल सेवाके लिए।

आपके सम्मुख दी गई मेरी इस वार्त्तासे मेरे खयालमें हमें जो शिक्षा लेनी चाहिए वह आज सचमुच बहुत ही समयोचित है। आप मेरी इस बात पर विश्वास करें कि मैं इस राष्ट्रके साथ उसकी मुसीबतमें पूरे दिलसे सहानुभूति रखता हूँ। आपकी वित्तीय कठिनाईका कोई अपना इलाज तो शायद म पेश कर नहीं सकूँगा। आप इतने महान् और इतने सूझ-बूझवाले हैं कि अपना इलाज खुद मालूम कर सकते हैं। परन्तु मैं आपसे यह कहूँगा कि मौजूदा मुसीबतमें आप इस विचार पर मनन करें।

श्री सी० एफ० एन्ड्रयूजने मेरा ध्यान किसी पत्र-लेखकके एक पत्रके उत्तरमें लिखे गये प्रधान मन्त्रीके पत्रकी ओर आकर्षित किया है और मुझे बताया है कि इस पत्रका क्षेत्रीय रेलवेमें सर्वत्र, और शायद भूमिगत रेलवेमें भी, एक विज्ञापन की तरह उपयोग किया जा रहा है। पत्र कुछ इस प्रकार है: "आपको केवल ब्रिटिश माल ही खरीदना चाहिए; ब्रिटिश मजदूरोंको ही नौकर रखना चाहिए और ज्यादासे-ज्यादा चीजें खरीदनेकी कोशिश करनी चाहिए।" यह एक ऐसा इलाज है जो मुझे मालूम है। लेकिन मैं आपको यह सुझाव देना चाहता हूँ कि दुनियाकी मुसीबतको दूर करनेके लिए स्वेच्छासे गरीबी अपनानेका यह विचार एक मूल विचार है। इसमें सन्देह नहीं कि आप अपनी सूझ-बूझसे इस कठिनाईको पार कर लेंगे और तब आपको लगेगा कि कोई भी चीज गलत नहीं थी। परन्तु यदि आपकी अनुमति हो तो मैं यह कहूँगा कि यह शायद अदूरदर्शिता होगी, क्योंकि अब शायद वह समय आ गया है जब मूल्यों पर फिरसे विचार होना चाहिए।

लेकिन मुझे विवादमें नहीं पड़ना चाहिए। मैं यह सुझाव केवल उन्हीं लोगोंको दे सकता हूँ जो सेवाके लिए स्वेच्छासे गरीबीकी आवश्यकताको अनुभव करते हैं। मैंने यह शुभ बात आज रात इसलिए नहीं रखी है कि सभी इसे स्वीकार कर लें। वैसे मैं यह कह सकता हूँ कि अपने अन्तःकरणमें मैं ऐसा अनुभव करता हूँ कि यदि हम सब स्वेच्छासे गरीबीका व्रत ले लें तो यह दुनिया चौपट नहीं हो जायेगी,

एकदम मूर्खोंकी दुनिया नहीं बन जायेगी। पर मैं यह जानता हूँ कि यह चीज प्रायः असम्भव है। ईश्वरके लिए तो सभी कुछ सम्भव है, पर मनुष्यकी दृष्टिसे सोचने पर यही कहना समझदारी है कि यह असम्भव है। किन्तु, वस्तुतः यह असम्भव नहीं है। जिन्होंने अपने-आपको पूरी तरह अपने भाइयोंकी सेवाके लिए समर्पित कर दिया है, उनके लिए तो मैं यह चीज पूर्णतया अनिवार्य मानता हूँ कि वे स्वेच्छासे गरीबीका व्रत लें।

आप खुद यह जाननेकी कोशिश कीजिए कि आपके सामने आज जो यह भारी राष्ट्रीय समस्या उपस्थित है, क्या इस तरह आप इसके समाधानमें बहुत ही ठोस रूपसे सहायता नहीं पहुँचाते हैं।

जो लोग अपना वेतन या जिस चीजकी भी उनसे अपेक्षा की जाती है उसे देना न चाहते हों, उन्हें यदि कानूनसे उसे देनेके लिए बाध्य किया जाये, तो इस तरह आप इस समस्याको सुलझा नहीं सकेंगे। जब वे कहेंगे कि "हम क्या कर सकते हैं? हम विरोध करना नहीं चाहते; हम विरोध कर नहीं सकते," तब वस्तुतः उनका मन उन्हीं चीजोंके लिए लालायित रहेगा जो उनसे छीनी जा रही हैं।

लेकिन कल्पना कीजिए कि इस लालसाके बीच सेवकोंका एक दल ऐसा उभरता है जो स्वेच्छासे गरीब बन जाता है। वे उन लोगोंके लिए जिन्हें यह मालूम नहीं है कि स्वैच्छिक गरीबी क्या होती है, क्योंकि वे सिर्फ मजबूरीकी गरीबीको ही जानते हैं, प्रकाश-स्तम्भकी तरह होंगे। मैं अपने उन भाइयोंके पास जाकर जो भूखों मरते हैं स्वैच्छिक गरीबीकी बात नहीं करता हूँ। मैं उन्हें यह नहीं समझाता हूँ कि यदि वे मजबूरीकी गरीबीको स्वैच्छिक गरीबीमें बदल लें तो उनके लिए कितना शुभ होगा। इस पृथ्वी पर ऐसा कोई जादू नहीं है। यह एक कष्टदायी प्रक्रिया है और इससे पहले कि मैं उनसे स्वैच्छिक गरीबीकी बात कर सकूँ, उनके पास जीवनकी आवश्यक चीजें होनी चाहिए।

होता यह है कि मुझ-जैसा कोई आदमी जब उनके बीच जाकर यथाशक्ति उन्हींका-सा जीवन बिताता है, तो वह उनके दिलोंमें आशाकी एक किरण पैदा कर सकता है। मुझ-जैसा आदमी जो इलाज उन्हें सुझायेगा उसे वे मान लेंगे। यदि मैं उन्हें कोई फौरी इलाज सुझा न सकूँ, तो भी उन्हें मुझ-जैसे आदमीके रूपमें कमसे-कम एक मित्र तो मिलेगा ही। वे कहेंगे : "इसके पास कुछ नहीं है, फिर भी यह खुश है; ऐसा कैसे है?" मुझे उनके साथ बहस करनेकी जरूरत नहीं होगी; वे खुद अपने-आपसे बहस करने लगेंगे।

अपने अनुभवकी इन अमूल्य निधियोंमें मैं पृथ्वीके हर व्यक्तिको अपना साझी कैसे बना सकता हूँ? मैं ऐसा नहीं कर सका। लेकिन आज, जब मैंने स्वैच्छिक गरीबी पर बोलनेका दायित्व लिया है, मैं कुछ हद तक अपने इन अमूल्य अनुभवोंमें यहाँ उपस्थित कुछ सौ लोगोंको ही नहीं बल्कि लाखों लोगोंको अपना साझी बना रहा हूँ। मैं आपको बताऊँ कि यह स्वैच्छिक गरीबी आदमीको जो आनन्द, सुख और क्षमता प्रदान करती है उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। मैं केवल यही कह सकता हूँ; इसे आजमाओ, परीक्षण करो, इसकी खुद जाँच करो।

आपने इतनी एकाग्रताके साथ मेरी बात सुनी इसके लिए मैं आपका आभारी हूँ। प्रार्थनाका समय होनेमें अभी पूरे दस मिनट रहते हैं, इसलिए आपमें से कोई यदि मुझसे कोई प्रश्न पूछना चाहे तो मुझे उससे खुशी होगी। आपके मनमें जो भी हो उसे कहनेमें आपको संकोच नहीं होना चाहिए। आपका कोई भी प्रश्न, चाहे वह कितना ही अटपटा क्यों न हो, मुझे कभी बुरा नहीं लगेगा।

प्रश्न: क्या महात्माजी हमें यह बतायेंगे कि भारी रकमें इकट्ठा करना वे कैसे न्यायोचित समझते हैं, जबकि ईसा, बुद्ध और अन्य महान् धर्मगुरुओंने, जो स्वेच्छासे गरीबीका पालन करते रहे, कभी भी भारी रकमें नहीं माँगी थीं और न ली थीं। उन्होंने जो-कुछ हमें बताया, उसके साथ मैं इसका मेल नहीं बैठा पा रहा हूँ।

उत्तर: क्या इन महान् गुरुओंने कभी धन नहीं माँगा था या नहीं लिया था? ईसाके बाद बहुत-से ईसाइयोंने, जो गरीबीमें आस्था रखते थे, धन लिया था और उसे सेवाके लिए प्रयुक्त किया था। और बुद्धके विषयमें तो, जिन्होंने कहते हैं, अपने जीवन-कालमें कई संस्थाएँ स्थापित की थीं, मैं और भी विश्वासके साथ यह कह सकता हूँ। धनके बिना वे उन संस्थाओंको स्थापित नहीं कर सकते थे। कहा यह जाता है कि जिन्होंने अपने-आपको तन, मन और आत्मासे समर्पित कर दिया था, उन्होंने अपना धन भी दिया था और उसे बुद्धके चरणोंमें धर दिया था, और बुद्धने उसे प्रसन्नतासे स्वीकार किया था – परन्तु अपने लिए नहीं।

प्रश्न: हमें अपने भाइयोंकी सेवा क्यों करनी चाहिए?

उत्तर: इसलिए कि हम उनके द्वारा ईश्वरकी एक झलक देख सकें, क्योंकि उनमें भी वही आत्मा है जो हममें है, और जबतक हम यह समझते नहीं हैं तबतक ईश्वर और हमारे बीच एक दीवार खड़ी रहती है। यदि हम उस दीवारको तोड़ना चाहते हैं तो उसका आरम्भ अपने भाइयोंके साथ अपनेको एकाकार करनेसे होगा।

[अंग्रेजीसे]

गिल्डहाउस, २३-९-१९३१

३४. भाषण : पार्लियामेंटके सदस्योंकी बैठकमें[१]

लन्दन
२३ सितम्बर, १९३१

कांग्रेसका ध्येय पूर्ण स्वाधीनता है और पूर्ण स्वाधीनताका अर्थ किसी भी रूपमें अलगाव नहीं है और न कभी रहा ही है, और इसमें बिलकुल बराबरीकी साझेदारी, जो किसी भी पक्षकी इच्छापर समाप्त हो सके, निषिद्ध नहीं है। मुझे यह बात विचित्र लगी है कि अंग्रेज, जो स्वयं पूर्ण स्वतन्त्रतासे कम किसी चीजपर कभी सन्तुष्ट नहीं रहे हैं, इस दावेका विरोध कर रहे हैं या मजाक उड़ा रहे हैं। मेरा यह खयाल है कि कोई भी राष्ट्र या जन-समुदाय, अपने राष्ट्रीय अधिकारके प्रति सचेत हो जानेके बाद, पूर्ण स्वाधीनतासे कम किसी चीजपर कभी भी सन्तुष्ट नहीं होगा।

इसका अर्थ हमारे लिए अपनी प्रतिरक्षा पर पूर्ण नियन्त्रण, अपने विदेशी मामलों पर पूर्ण नियन्त्रण और वित्त पर पूर्ण नियन्त्रण है। इन मुद्दों पर छिड़ी बहसने बहुचर्चित शब्द "संरक्षण" को जन्म दिया है। मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि पिछली गोलमेज परिषद्ने अस्थायी रूपसे जिन संरक्षणोंकी व्यवस्थाकी थी, आपको उनकी बात मालूम है। कांग्रेसकी ओरसे, मुझे यह कहनेमें कोई संकोच नहीं है कि कांग्रेस उन संरक्षणोंको स्वीकार नहीं करेगी। यदि हमारा सेना या प्रतिरक्षा पर कोई नियन्त्रण नहीं है — और गोलमेज परिषद्के अस्थायी आरक्षणोंके अनुसार विदेशी मामले भी एक आरक्षित विषय हैं — तो यह निश्चय ही पूर्ण स्वाधीनता नहीं है, यह मामूली किस्मका स्वशासन तक नहीं है। यदि कोई व्यक्ति अपनी रक्षाके लिए दूसरों पर निर्भर है तो वह स्वशासनका उपभोग नहीं करता है।

मैं जानता हूँ कि यह तर्क दिया गया है कि भारत अपनी रक्षा करनेकी योग्यता नहीं रखता है। मेरा कहना यह है कि अंग्रेजोंके आगमनसे पहले हम आक्रमणोंको सफलतापूर्वक झेल पाये थे। आक्रमण बहुत हुए, पर हम अति प्राचीन कालसे चली आ रही अपनी सभ्यताको अक्षुण्ण रख सके।

हम भारतके लोग निःशस्त्र हैं और यह निःशस्त्रता स्वेच्छा-जनित नहीं, बल्कि ऊपरसे थोपी हुई है। ब्रिटिश भारतकी अपेक्षा तथाकथित नरेशोंके भारतमें हिन्दू और मुसलमान अधिक शान्तिसे रह रहे हैं। बेशक कुछ दंगे हुए हैं, पर मेरा कहना यह है कि ब्रिटिश शस्त्र उन्हें रोकनेके लिए काफी नहीं हैं। यदि ब्रिटिश सेनाएँ हटा ली जाती हैं, तो इसका अर्थ, जैसा कि कभी-कभी कहा जाता है, भारतके लिए "आत्महत्या" नहीं होगा।

१. यह सभा कॉमनवेल्थ ऑफ इंडिया लीगके तत्त्वावधानमें कॉमन्स सभामें हुई थी। मॉर्ले इसके सभापति थे और पार्लियामेंटके तीनों दलोंके सदस्य इसमें उपस्थित थे।

अपनी प्रतिरक्षाका कार्यभार सँभालनेका अर्थ यह नहीं है कि हमें प्रत्येक ब्रिटिश सैनिक या अधिकारीको हटा देना चाहिए। यदि ब्रिटिश सैनिक या अधिकारी कृपा-भावसे हमारी सेवा करना चाहेंगे तो वे भारतमें रहेंगे।

इसके बाद श्री गांधीने कहा कि जो लोग यह कहते हैं कि भारतके अधीन ब्रिटिश लोग इस प्रकार कभी सेवा नहीं करेंगे, उन्हें मैं समझ नहीं पाता हूँ।

यदि भारतके साथ ठीक-ठीक बराबरीके आधारपर कोई समझौता करना है, तो क्या यह रुख उसके लिए ठीक होगा?

पूर्ण स्वाधीनताका अर्थ सेनापर पूर्ण नियन्त्रण होना चाहिए। इसका अर्थ यह है कि सैनिक सत्तापर असैनिक (सिविल) सत्ताका पूर्ण नियन्त्रण होना चाहिए, कि सेना असैनिक सत्ताकी स्वीकृतिके बिना कार्य नहीं करेगी।

श्री गांधीजीने फिर कहा कि भारतवासियोंका यह खयाल है कि भारतमें जो प्रशासन है वह संसारमें सबसे अधिक खर्चीला है और भारत उसे अब और बरदाश्त नहीं कर सकता।

मेरा यह विश्वास है कि भारतके लिए उन संरक्षणोंको स्वीकार करना और स्वाधीनताके सारके बजाय महज उसके बाहरी खोलको लेनेके लिए राजी हो जाना आत्मघातके समान होगा।

इन संरक्षणोंको स्वीकार करनेका अर्थ अपने राजस्वको ८० प्रतिशत तक उड़ा देना होगा। क्या आप यह मानते हैं कि हम अपनी शिक्षा, स्वास्थ्य, अस्पतालों, सड़कों और रचनात्मक कार्योंका खर्च केवल २० प्रतिशत राजस्वसे, जो हमारे पास शेष रह जाता है, चला सकते हैं? और ये कार्य ऐसे हैं जिन्हें हर हालतमें शुरू करना ही है, बल्कि एक पीढ़ी पहले ही शुरू कर देना चाहिए था।

ऐसी स्वाधीनताको मैं छुऊँगा भी नहीं। जो सरकार, मुझे मालूम है, पाँच-दस सालमें दिवालिया हो जानी है, उसका कार्य-भार सँभालनेकी अपेक्षा मैं मजबूरीकी पराधीनतामें रहना और अपने-आपको विद्रोही घोषित करना कहीं अच्छा समझूँगा। कोई भी अंग्रेज, यदि वह हमारी जगह हो तो, उसे स्वीकार नहीं करेगा। आप देखेंगे कि आपके साथ सहयोग करने और गुलाम बननेकी अपेक्षा — क्योंकि मेरी विनम्र रायमें इन संरक्षणोंका यही अर्थ है — मैं एक सत्याग्रहीकी हैसियतसे संघर्ष करते हुए अपना खून बहाऊँगा।

यूरोपीयोंके लिए "संरक्षण" के विषयमें श्री गांधीने कहा:

मुसलमानोंका अपनी रक्षाके लिए कहना और सिखोंका कहना मेरी समझमें आ सकता है, और अछूतोंका तो और भी ज्यादा समझमें आ सकता है। लेकिन यूरोपीयोंका, यानी शासकोंका, तीस करोड़ गुलामोंसे या रैयतसे — उन्हें आप चाहे कैसे भी मीठे नामसे क्यों न पुकारें, वास्तवमें हैं तो वे रैयत या गुलाम ही — अपनी रक्षाकी बात कहना मेरी समझसे परेकी चीज है। आपको हमारे साथ सद्भावनाके साथ रहना चाहिए। जिन लोगोंकी आप सेवा करते हैं, क्या उन्हींसे आप अपनी रक्षा चाहते हैं?

ब्रिटिश व्यापार यदि भारतीय हितोंके प्रतिकूल है तो रक्षाकी कोई भी व्यवस्था भारतमें उसे बचा नहीं सकेगी। ब्रिटिश या भारतीय, प्रत्येक 'हित' को इस कड़ी कसौटीपर परखना होगा कि वह जनताके हितमें है या नहीं।

साझेदारीका अर्थ साझीके साथ अनुग्रहपूर्ण व्यवहार जरूर है। परन्तु उस अनुग्रहपूर्ण व्यवहारमें स्वभावतः यह शर्त रहेगी कि माल ऐसा होना चाहिए जिसकी भारतमें जरूरत हो और उसका स्तर और मूल्य प्रामाणिक होना चाहिए। ब्रिटिश टाइपराइटर और ब्रिटिश घड़ी खरीदना मैं ज्यादा अच्छा समझूँगा, चाहे मुझे उनके लिए कुछ अधिक ही दाम क्यों न देने पड़ें। और तीस करोड़ साझेदारोंके सिरसे जब वह बोझ, जो धीरे-धीरे उन्हें डुबाये दे रहा है, उतर जायेगा तो उनका भी यही रुख होगा। मैं ऐसे भारतकी कल्पना कर रहा हूँ जो शायद बिलकुल बराबरीके आधार पर ग्रेट ब्रिटेनके साथ रहेगा। ऐसी साझेदारीको, जो पृथ्वीकी किसी भी नस्लके शोषणके लिए कायम नहीं की गई होगी और एक-दूसरेके लिए हितकारी होगी, देखनेके लिए स्वयं देवता नीचे उतरेंगे, क्योंकि वह पृथ्वीके सभी राष्ट्रोंकी भलाईके लिए होगी। भारत संसारके आगे सीना ताने खड़ा होगा, पर वह किसी भी अन्य राष्ट्रका शोषण नहीं करेगा; क्योंकि शोषणके कड़वे फलको वह स्वयं चख चुका है।

[अंग्रेजीसे]
इंडियन न्यूज, ८-१०-१९३१

३५. पत्र : नारणदास गांधीको

२४ सितम्बर, १९३१

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। मुझे यहाँ तो वहाँसे भी कम समय मिलता है। ११-१२ बजे सो पाता हूँ। ४ बजे मीराबहन सबको उठा देती है। प्रार्थनाके बाद मैं फिर सो जाता हूँ और सवा छः बजे उठकर घंटे-भरके लिए टहलने जाता हूँ। यहाँ जो-कुछ चल रहा है उसकी खबर तो तुम्हें अन्य पत्रोंसे मिल ही जाती होगी। मेरी तबीयत अच्छी रहती है। असल ठंड तो अभी शुरू ही नहीं हुई है। आशा है, आश्रमका वातावरण दिन-प्रति-दिन शुद्ध होता जा रहा होगा और प्रार्थना, चरखायज्ञ तथा अन्य प्रवृत्तियोंमें सभी लोग रसपूर्वक तथा नियमित रूपसे भाग लेते होंगे।

समय-समयपर वहाँके पूरे समाचार मुझे लिखते रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से।

३६. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

२४ सितम्बर, १९३१

चि० गंगाबहन (बड़ी),

आशा है, तुम निश्चिन्त और स्वस्थ होगी। मैं सभी पत्र तुरन्त नहीं पढ़ पाता, अतः मैं नहीं जानता कि तुम्हारा पत्र आया है या नहीं। मुझे हर सप्ताह लिखती रहना और उनमें अपना हृदय उँड़ेलना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – ६ : गं० स्व० गंगाबहेनने। सी० डब्ल्यू० ८७८६ भी; सौजन्य : गंगाबहन वैद्य

३७. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

२४ सितम्बर, १९३१

चि० प्रेमा,

तू अब शान्त है, यह तो नारणदासने लिखा है। लेकिन मुझे पत्र लिखना तूने अभीतक शुरू नहीं किया, यह दुःखकी बात है। तू ऐसा कर सकती है जिससे तेरी चिन्ता मुझे बिलकुल न रहे। ज्यादा अभी नहीं लिखूंगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२६४) से। सी० डब्ल्यू० ६७१३ भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक।

३८. संघ-संरचना समितिकी बैठककी कार्यवाहीके कुछ अंश

लन्दन

२४ सितम्बर, १९३१

सर तेजबहादुर सप्रू : . . . अन्य देशोंके अनुभवसे यह सिद्ध हो गया है कि जनतन्त्रीय संविधान नौकरशाही संविधानोंसे बहुत अधिक खर्चीले होते हैं। मेरा मतलब यह है कि यदि हममें से किसीका यह खयाल हो कि एक जनतन्त्रीय संविधान अपनाकर हम खर्च कम कर सकेंगे, तो वह अपने कल्पित स्वर्गमें रह रहा है। इसके लिए आम तौरपर जो मुहावरा इस्तेमाल किया जाता है, वह मैं नहीं करूँगा। पार्टी संगठन उभरेंगे; पार्टी कोष स्थापित करने होंगे; पाश्चात्य संविधानोंका सारा यन्त्र-तन्त्र और ताम-झाम खड़ा करना होगा, तभी हम अपने दायित्वको पूरा कर सकेंगे। सेवाओंमें वेतन यदि घटाकर ५०० रुपये भी कर दिया जाये और श्री जिन्ना-जैसे वकीलोंके लिए यदि एक अधिकतम आय भी निर्धारित कर दी जाये, तो भी महात्मा गांधीके सामने जनतन्त्रीय संविधानकी आवश्यकताओंको पूरा करनेके लिए धन जुटानेकी समस्या रहेगी ही।

गांधीजी : नहीं, मैं तुरन्त बीकानेर या पोरबंदरमें जाकर शरण लूँगा!

महाराजा बीकानेर : आपका वहाँ स्वागत किया जायेगा। हमारे लिए यह एक सम्मानकी बात होगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबिल कान्फरेंस (सेकेंड सेशन) : प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐंड माइनॉरिटीज़ कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ ३४६, ३७१

३९. भेंट : 'जॉन बुल' के प्रतिनिधिको

लन्दन

[२५ सितम्बर, १९३१ या उसके पूर्व]

मैं एक बहुत ही सामान्य लड़का था और अपनी भावी नियतिका मुझे आभास तक नहीं था। नंगे पाँव मैं गलियोंमें दौड़ा करता था और दूसरे लड़कोंके साथ खेला करता था।

मैं एक भारतीय स्कूलमें पढ़ता था, क्योंकि मेरा जन्म —— जैसा कि कुछ लोग सोचते हैं, आफ्रिकामें नहीं —— भारतमें ही हुआ था। मेरा बचपन सुखसे बीता और मुझमें किसी भी तरहकी कोई विलक्षणता नहीं थी। जिस रियासतमें मेरा जन्म हुआ, मेरे पिता उसके दीवान थे।

भारतका नेतृत्व करनेका आह्वान मुझे अचानक किसी इलहामकी तरह नहीं मिला। वह जब मिला तो वैसे ही मिला। बल्कि ऐसा कहूँ कि मुझे उसका ज्ञान धीरे-धीरे हुआ। मैंने अनशन और आत्मसंयमसे अपनेको उसके लिए तैयार किया। मेरा राजनीतिक कार्य मेरी आध्यात्मिक तैयारीमें से ही उभरा।

आप मुझसे पश्चिमकी गरीबीसे पूर्वकी गरीबीकी तुलना करनेके लिए कह रहे हैं? यह असम्भव है। दोनोंकी तुलना नहीं हो सकती। पूर्वमें गरीबी उस हद तक है जिसकी पश्चिममें कल्पना तक नहीं की जा सकती। हजारों लोगोंके पास खानेको कुछ भी नहीं है और सिर छिपानेको कोई स्थान नहीं है।

आप पूछते हैं कि यदि मुझे सत्ता प्राप्त हो जाये तो मैं अपने स्वप्न कैसे पूरे करूँगा, "लाखों मूक और भूखे लोगों" को उनकी जड़तासे जगाने, मुखर बनाने और भोजन देनेके लिए मैं क्या करूँगा।

मैं उनसे काम कराऊँगा — चरखे पर और हाथ-करघे पर। मैं उन्हें शिक्षा दूँगा और वह भारतीय पद्धति पर होगी।

मैं नई सड़कें बनवाऊँगा। सुन्दर सड़कें, जो मनुष्य और पशु दोनोंके लिए सुखदायी होंगी। नये भारतकी जो तसवीर मेरे मनमें है उसमें गाँव एक-दूसरेसे जुड़े होंगे और अपने उद्योग-धन्धोंसे सुखी होंगे।

भारत जब स्वतन्त्रता प्राप्त कर लेगा तो परिस्थितियाँ ही यह निर्देशित करेंगी कि मैं राष्ट्रके प्रमुखका स्थान लूँ या चुपचाप अपने आश्रमको लौट जाऊँ।

मुझे प्रिय तो वापस लौटना ही होगा, पर यदि नेतृत्वका भार मेरे कंधों पर आया तो उसे वहन करनेमें मुझे कोई झिझक नहीं होगी। मेरे अन्दरकी आवाज जो राह दिखायेगी मैं उसी पर चलूँगा।

क्या मैं अमेरिका जाऊँगा? मुझे निमन्त्रण मिले हैं, पर इस विषयमें भी मेरे अन्दरकी आवाज मुझसे जैसा कहेगी मैं वैसा ही करूँगा।

आप पूछते हैं: क्या यह एक सचमुचकी और सुस्पष्ट आवाज है? नहीं। यह अन्तःकरणकी आवाज है। गौण विषयोंपर मैं समझौता करनेको तैयार हूँ, पर मुख्य विषयोंपर नहीं।

जी हाँ, निश्चय ही मैं यह मानता हूँ कि सफल स्वराज्यके लिए भारतीय नरेशोंका सहयोग आवश्यक है।

भारतके शत्रुओंका यह कहना है कि ब्रिटिश शासनके हटते ही हिन्दू और मुसलमान एक-दूसरेका गला काटने लगेंगे, मैं इस बात पर विश्वास नहीं करता। हम पहले सत्रहवीं सदीमें — अंग्रेजोंके आगमनसे पहले — पूरी एकतासे साथ-साथ रहे हैं और आगे भी इसी तरह रहेंगे।

लेकिन मान लीजिए, हमें लड़ना पड़ा, तो हम लड़ेंगे। आप पूछते हैं, क्या विजय हिन्दुओंकी होगी। नहीं, विजय किसी भी पक्षकी नहीं होगी। भारतमें संघर्ष छिड़ सकता है, पर हममें सुलह हो जायेगी और हम किसी समझौतेपर पहुँच जायेंगे।

हम इससे पहले भी लड़े हैं और फिर हममें मेल हो गया है। हिन्दू और मुसलमान, दोनों पक्षोंके नेताओंमें सुलह हो जायेगी।

लड़ेंगे कौन? आम लोग नहीं लड़ेंगे। वे आजकी तरह आगे भी पूरी शान्तिसे रहते रहेंगे। जिन्हें अपने स्वार्थ साधने हैं वे ही लड़ेंगे। मैं समझता हूँ, ब्रिटेनको स्वराज्य देना होगा। देर-सबेर वह आकर ही रहेगा।

मेरी पत्नी मेरे लिए असाधारण भली सिद्ध हुई है, और मेरे शारीरिक हिता-हितका वही खयाल रखती है। उससे मेरा विवाह कैसे हुआ? मेरे माँ-बापने वह विवाह तय किया था, क्योंकि भारतमें ज्यादातर माँ-बाप ही विवाह तय करते हैं, पर मैं उसे पहलेसे जानता था और हममें प्रेम भी था।

मैंने जीवन दक्षिण आफ्रिकाकी एक मुसलमान फर्मके कानूनी सलाहकारकी हैसियतसे शुरू किया। जब मैंने देखा कि वहाँ भारतीयों पर अत्याचार होता है, तो मैंने सोचा कि उनके हितोंके लिए खड़े होना मेरा कर्त्तव्य है। इसलिए मैं दक्षिण आफ्रिकामें बस गया, और मैं सफल रहा। जिन निर्योग्यताओंको दूर करानेके लिए हम लड़ रहे थे, वे दक्षिण आफ्रिकाकी सरकारके साथ हुए एक समझौते द्वारा दूर कर दी गईं।

स्वराज्यमें भारतमें महिलाओंकी स्थिति क्या होगी? वे हमारी सहकर्मी और सहयोगी होंगी और उन्हीं अधिकारों और सुविधाओंका उपभोग करेंगी जो पुरुषको प्राप्त होंगी।

नहीं, यहाँ अपने इतने सारे हमदर्द पाकर मुझे कोई अचम्भा नहीं हुआ। मुझे इसकी पूरी आशा थी। मुझे आशा है कि ग्रेट ब्रिटेनके लोग भारतके दावेके पूर्ण औचित्यको महसूस करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

जॉन बुल, २६-९-१९३१

४०. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

लन्दन
२५ सितम्बर, १९३१

हमारी बातचीत अच्छी और मैत्रीपूर्ण — बहुत ही मैत्रीपूर्ण रही।

[अंग्रेजीसे]

मैंचेस्टर गार्डियन, २६-९-१९३१

१. गांधीजीने यह वक्तव्य लॉर्ड इर्विनसे अपनी भेंटके बाद दिया था। भेंट लॉर्ड इर्विनके निवास-स्थान पर, ईटन स्क्वेयरमें हुई थी और दो घंटे बीस मिनट चली थी। उस बातचीतकी कोई रिपोर्ट उपलब्ध नहीं है।

४१. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

लन्दन
२५ सितम्बर, १९३१

लंकाशायरकी इस बहुत ही छोटी यात्रामें, मैं खास तौर पर सूती कपड़ेके व्यवसायमें लगे वहाँके श्रमजीवियोंको यथासम्भव अधिकसे-अधिक देखना चाहूँगा और जब भी मौका मिलेगा उनसे मिलना और दिल खोलकर बातचीत करना चाहूँगा।

[अंग्रेजीसे]
मैंचेस्टर गार्डियन, २६-९-१९३१

४२. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको

स्प्रिंगवेल गार्डेन विलेज
२६ सितम्बर, १९३१

मैं इंग्लैंड और अब लंकाशायर कठिनाईमें से निकलनेका कोई मार्ग खोजने आया हूँ। बेरोजगारी चाहे किसी भी देशमें हो, सदा बुरी है, और मैं यदि उसे कम करनेमें किसी भी रूपमें कोई योग दे सका तो मुझे उससे सबसे अधिक प्रसन्नता होगी। लेकिन मैं लंकाशायर और ग्रेट ब्रिटेनके अन्य भागोंके अंग्रेजोंके सक्रिय सहयोगके बिना कुछ भी कर सकनेमें असमर्थ हूँ।

जो गरीबी मैंने देखी है उससे मुझे दुःख होता है, और यह जान कर तो और भी अधिक दुःख होता है कि इस बेरोजगारीमें मेरा भी एक तरहका हिस्सा है। फिर भी यह जानकर उस दुःखसे कुछ राहत मिलती है कि मेरा ऐसा अभीष्ट कदापि नहीं था। यह उन कदमोंका नतीजा है जो मैंने इसलिए उठाये, और मुझे इसलिए उठाने पड़े, कि बेरोजगारोंकी दुनियाकी उस सबसे बड़ी फौजके प्रति, यानी भारतके लाखों भूखे लोगोंके प्रति, यह मेरा एक कर्त्तव्य था। उनकी गरीबी और कंगालीकी तुलनामें लंकाशायरकी गरीबी नगण्य लगती है।

इसीलिए मैं अधिकसे-अधिक अंग्रेजोंसे मिलने और उनकी मनःस्थितिको समझनेकी कोशिश कर रहा हूँ और उनके आगे भारतकी सही स्थिति, उसे जिस रूपमें मैं समझता हूँ, रखनेका प्रयत्न कर रहा हूँ।

[अंग्रेजीसे]
संडे ऑब्जर्वर, २७-९-१९३१

१. गांधीजीने यह वक्तव्य शामको यूस्टनमें लंकाशायरके लिए रेलगाड़ीपर चढ़ते समय दिया था।

४३. बातचीत : कपड़ा-उद्योगके प्रतिनिधियोंसे[1]

एजवर्थ
२६ सितम्बर, १९३१

श्री गांधीने अपने भाषणमें भारतके सम्बन्धमें अपनी आर्थिक नीतिकी रूपरेखा काफी विस्तारके साथ पेश की। उन्होंने समझाया कि खादीका एक उद्देश्य भारतीय ग्रामवासियोंमें आत्मसम्मानकी भावना पैदा करना है और इस तरह उसका एक सामाजिक महत्त्व भी है। उन्होंने भारतीय गरीबीकी बहुत हृदय-विदारक तसवीर खींची और कहा कि लंकाशायरकी मौजूदा हालतसे मुझे दुःख हुआ है, किन्तु उसकी यह हालत भारतकी हालतसे तो अनन्त गुनी बेहतर है।

प्र० : क्या आर्थिक उद्देश्यसे किये जानेवाले बहिष्कारसे राजनीतिक हेतुसे प्रेरित बहिष्कारको अलग करना सम्भव है?

उ० : जब बहिष्कारका एकमात्र उद्देश्य ब्रिटेनको दण्डित करना था — जैसा कि १९३० में था, जब लोग ब्रिटिश मालकी जगह अमेरिका और जर्मनीमें बना हुआ माल खरीदते थे — तब तो निश्चय ही वह राजनीतिक उद्देश्यसे प्रेरित था। उस समय तो ब्रिटेनमें बनी मशीनों तकका बहिष्कार किया गया था। किन्तु अब हम जो कर रहे हैं वह आर्थिक बहिष्कार ही है, जैसा कि वह मूलतः था। आप उसे बहिष्कार कह सकते हैं, किन्तु वस्तुतः वह लोगोंको शिक्षित करनेका आन्दोलन है, या ऐसा कहिए कि आत्मशुद्धिका प्रयत्न है। उसके द्वारा हम लोगोंसे यह अनुरोध कर रहे हैं कि वे अपना पुराना धन्धा फिर अपना लें, आलस्य छोड़ दें और कितनी भी स्वल्प क्यों न हो, अपने पसीनेकी कमाई खायें, भिक्षा पर पलनेका खयाल छोड़ दें।

प्र० : लेकिन उसमें भी राजनीतिक रंग तो रहेगा, क्योंकि आप विदेशोंके मालपर अपनी मिलोंके मालको तरजीह देंगे ही।

उ० : बहिष्कार मिलोंके हितमें शुरू नहीं किया गया था। सच तो यह है कि हमारे इस प्रथम रचनात्मक प्रयत्नका आरम्भ स्थानिक मिल-मालिकोंके साथ झगड़ेसे

१. गांधीजीके साथ कपड़ा उद्योगके प्रतिनिधियोंकी इस भेंटका आयोजन कपड़ा उद्योग संगठनोंकी संयुक्त समिति (ज्वाइंट कमिटी ऑफ कॉटन ट्रेड ऑर्गनाइजेशन्स) के अध्यक्ष टी० डी० बार्लोने तीसरे पहर अपने घरपर किया था और उसमें कपड़ा उद्योगके कई प्रमुख प्रतिनिधि उपस्थित थे। **मैंचेस्टर गार्डियन**के अनुसार गांधीजी ४० मिनट बोले किन्तु उनके भाषणकी पूरी रिपोर्ट प्राप्त नहीं है, क्योंकि वहाँ कोई रिपोर्टर नहीं था। किन्तु उपस्थित व्यक्तियोंमें से कुछने गांधीजीके भाषणके अपने विवरण **मैंचेस्टर गार्डियन**को भेजे थे (देखिए परिशिष्ट १)। यहाँ भाषणकी जो संक्षिप्त रिपोर्ट दी गई है वह **मैंचेस्टर गार्डियन**से ली गई है और प्रश्नोत्तरवाला हिस्सा महादेव देसाईके **यंग इंडिया**में प्रकाशित "गांधीजी— लंकाशायरमें" शीर्षक लेखसे।

हुआ था। हमारे करोड़पति इस आन्दोलनका समर्थन कर रहे हैं, यह बात सही है; किन्तु वे हमारी नीतिका नियन्त्रण नहीं करते बल्कि हम ही उन्हें प्रभावित करनेकी कोशिश कर रहे हैं। और जब हम लोग गाँवोंमें जाते हैं तो हम उनसे भारतीय मिलोंका कपड़ा पहननेको नहीं कहते, खादी पहनने या अपनी जरूरतकी खादी खुद बनानेको कहते हैं तथा हरएक कांग्रेसीसे यह अपेक्षा की जाती है कि वह खादी पहनेगा।

प्र० : आप जो भी कहें, आप अधिकाधिक राजनीतिक सत्ता प्राप्त करनेकी कोशिश कर रहे हैं और यह निश्चित है कि वह आपको मिल जायेगी और ज्यों ही आपको राजनीतिक सत्ता प्राप्त होगी त्यों ही ये मिल-मालिक लोभवश न्याय-अन्यायका खयाल छोड़कर टैरिफकी ऊँची दीवारें खड़ी कर देंगे और आपके गाँवोंके लिए लंकाशायरके कपड़ा-उद्योगसे भी कहीं ज्यादा गम्भीर खतरा बन जायेंगे।

उ० : अगर ऐसी विपत्ति आई और मैं उस समय जीवित हुआ तो मैं यह कहनेका साहस करता हूँ कि तब जो होगा उसमें मिलोंका नाश हो जायेगा और वास्तविक राजसत्ता मिलनेपर तो सार्वत्रिक वयस्क मताधिकार आ जायेगा और उस हालतमें धनाढ्य वर्गोंके लिए गरीब ग्रामवासियोंके हितोंको कुचलना असम्भव हो जायेगा।

प्र० : क्या आपको ऐसा नहीं लगता कि जिस तरह अमरीकियोंने पुनः शराब पीना शुरू कर दिया है उसी तरह आपके यहाँ भी लोग मिलका कपड़ा फिर पहनने लगेंगे?

उ० : नहीं, मुझे ऐसा नहीं लगता। अमेरिकाकी वह शराबबन्दी एक शक्तिशाली सरकार द्वारा अनिच्छुक जनता पर थोपी हुई चीज थी। वहाँ लोगोंको शराबकी आदत थी। मद्यपानका फैशन था। भारतमें मिलका कपड़ा कभी फैशनकी चीज नहीं रहा, जबकि खादी फैशनमें दाखिल हो गई है—प्रतिष्ठित समाजमें प्रवेश पानेका अधिकारपत्र बन गई है। और असल बात तो यह है कि जो भी हो, मैं अपने देशवासियोंके आर्थिक उद्धारके लिए लड़ता ही रहूँगा। यह तो आप स्वीकार करेंगे कि यह एक ऐसा लक्ष्य है जिसके लिए जीने और मरनेमें मनुष्य अपनेको कृतार्थ मान सकता है।

प्र० : आपकी यह लड़ाई एक ऐसे दुश्मनके खिलाफ होगी जिसके मुकाबलेमें आपका बल अपर्याप्त सिद्ध होगा। आर्थिक प्रतियोगितामें निहित लोभका प्रवाह इतना प्रबल होगा कि उसे रोकनेके लिए किया गया हरएक उपाय विफल हो जायेगा।

उ० : आप गोया यह कह रहे हैं कि ईश्वर धनके देवताके हाथों पराजित होता रहा है और होता रहेगा। लेकिन मेरा विश्वास है कि भारतमें वह पराजित नहीं होगा।

[अंग्रेजीसे]

मैंचेस्टर गार्डियन, २८-९-१९३१ और **यंग इंडिया**, १५-१०-१९३१

४४. बातचीत : कपड़ा-उद्योगके प्रतिनिधियोंसे[1]

डारवेन
२६ सितम्बर, १९३१

आप कृपया मुझे यह बताइए कि मानव-समाजके उस पंचमांशके उद्धारके लिए, जो भुखमरीकी जिन्दगी जी रहा है और जिसकी आत्मसम्मानकी भावना बिलकुल चुक गई है, मैं क्या करूँ। यह एक ऐसा सवाल है जिसपर लंकाशायरके बेरोजगार मजदूरों तकको विचार करना चाहिए। आपने मुझे लंकाशायरकी ओरसे १८९९-१९०० के दुर्भिक्षके दौरान दी गई सहायताकी याद दिलाई है। आपकी उस सहायताके लिए हम बदलेमें गरीबोंके आशीर्वादके सिवा और क्या दे सकते हैं? मैं आपको न्यायोचित व्यापारकी सुविधाका आश्वासन देने आया हूँ। लेकिन उसे दिये बिना ही मुझे वापस जाना पड़ा तो उसमें मेरा कोई दोष नहीं होगा। मेरे मनमें किसी तरहकी कटुता नहीं है। मैं तो जीवोंमें जिन्हें निम्नतम माना जाता है उनके साथ भी बन्धुताका दावा करता हूँ। तो फिर जिन अंग्रेजोंके साथ हमारा सम्बन्ध — उससे कल्याण हुआ हो या अकल्याण – पिछले सौ वर्षोंसे रहा है और जिनमें मेरे कुछ प्रियतम मित्र हैं उन अंग्रेजोंका बन्धु होनेका दावा तो मैं कर ही सकता हूँ। भला क्यों न करूँ? आप देखेंगे कि मैं एक सीधा आदमी हूँ जिससे सम्बन्ध निबाहना बहुत आसान है, किन्तु यदि आप इस दोस्तीके हाथको अस्वीकार कर देते हैं तो मैं चला जाऊँगा – अपने मनमें कटुता लेकर नहीं, बल्कि इस भावनाके साथ कि आपके हृदयोंमें जगह पाने योग्य पवित्रता मुझमें नहीं थी।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १५-१०-१९३१

४५. भेंट : बेरोजगार मजदूरोंके शिष्टमण्डलको[2]

स्प्रिंगफील्ड गार्डन विलेज
२६ सितम्बर, १९३१

५ मार्चको अस्थायी समझौतेपर दस्तखत होनेके बादसे विदेशी कपड़ोंके बहिष्कारसे भिन्न ब्रिटिश कपड़ेके विशेष बहिष्कार-जैसी कोई बात अब नहीं रही है। राष्ट्रके

१. गांधीजी मेयरसे मिलनेके लिए डारवेन गये थे। मेयरने कपड़ा-उद्योगके दोनों पक्षोंका प्रतिनिधित्व करनेवाले थोड़े-से लोगोंको उनसे मिलनेके लिए बुलाया था। यह रिपोर्ट गांधीजीकी लंकाशायर-यात्राके महादेव देसाई द्वारा लिखित विवरण "गांधीजी इन लंकाशायर" (गांधीजी — लंकाशायरमें) से ली गई है।

२. महादेव देसाईके "गांधीजी इन लंकाशायर" (गांधीजी — लंकाशायरमें शीर्षक लेखसे उद्धृत।

रूपमें तो हमने सारे विदेशी कपड़ेके बहिष्कारका संकल्प किया है, किन्तु इंग्लैण्ड और भारतमें सम्मानजनक समझौता हो जानेकी — यानी स्थायी शान्ति हो जानेकी — हालतमें मैं सारे दूसरे विदेशी कपड़ोंकी तुलनामें लंकाशायरके कपड़ेको परस्पर स्वीकृत शर्तोंपर तरजीह देनेमें नहीं हिचकूँगा — अलबत्ता, यह उसी हदतक सम्भव होगा जिस हदतक हमें अपने कपड़ेमें रह गई कमीकी पूर्ति करनेकी जरूरत होगी। लेकिन उससे आपको कितनी राहत मिलेगी, यह मैं नहीं जानता। आपको यह तो समझ ही लेना चाहिए कि दुनियाके सारे बाजार अब आपके लिए खुले नहीं रह गये हैं। आपने जो-कुछ किया वही सब आज दूसरे राष्ट्र भी कर रहे हैं। भारतीय मिलें भी अब दिन-प्रतिदिन अधिक कपड़ा पैदा करेंगी। यह तो आप नहीं चाहेंगे कि लंकाशायरकी सहायता करनेके लिए मैं भारतीयोंके अपने व्यवसायकी वृद्धि करनेके प्रयत्नोंपर रोक लगाऊँ।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १५-१०-१९३१

४६. भाषण : लंकाशायरमें

[२६/२७ सितम्बर, १९३१][1]

यहाँ फैली हुई बेरोजगारी देखकर मुझे दुःख हुआ है। लेकिन यहाँ भुखमरी या अर्ध-भुखमरी नहीं है। भारतमें ये दोनों हैं। यदि आप भारतके गाँवोंमें जायें तो आप वहाँ उन ग्रामवासियोंकी आँखोंमें सम्पूर्ण निराशा झाँकती देखेंगे, आपको वहाँ भूखसे अधमरे अस्थि-पंजर या सजीव शव नजर आयेंगे। अगर भारत इन लोगोंको काम-धन्धेके रूपमें भोजन मुहैया करके उन्हें संजीवन प्रदान कर पाये तो वह दुनियाकी एक बड़ी सेवा करेगा। आज तो भारत एक अभिशाप है। हमारे देशमें एक ऐसी पार्टी भी है जो भुखमरीसे पीड़ित इन लाखों लोगोंका मर जाना पसन्द करेगी ताकि बाकी लोग जीवित रह सकें। मैंने इस समस्याका मानवीय हल ढूँढ़ निकाला है। मेरा हल यह है कि इन लोगोंको ऐसा काम दिया जाये जिससे वे परिचित हैं, जिसे वे अपनी झोंपड़ियोंमें कर सकते हैं, जिसे करनेके लिए औजारों आदिके रूपमें बहुत पूँजीकी आवश्यकता नहीं होती और जिस कामके द्वारा तैयारकी गई चीजें आसानीसे बेची जा सकती हैं। यह एक ऐसा कार्य है जिसपर लंकाशायर भी ध्यान दे सकता है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १५-१०-१९३१

१. "गांधीजी इन लंकाशायर" (गांधीजी — लंकाशायरमें) शीर्षक लेखसे उद्धृत। अपने इस लेखमें महादेव देसाईने भाषणकी तिथि और स्थानका स्पष्ट उल्लेख नहीं किया है।

४७. लिपि-सुधार

भाई किशोरलाल मशरूवाला लिखते हैं:[१]

मैं यह पत्र केवल परिचर्चाके विचारसे प्रकाशित कर रहा हूँ। इस सम्बन्धमें मेरी अपनी कोई विशेष राय नहीं है, किन्तु मैं इसके महत्त्वको समझता हूँ। भाई किशोरलालने विद्वानोंकी राय माँगी है। लिपि-सुधारका निर्णय उसके गुण-दोषके आधार पर नहीं होगा, बल्कि उसकी लोकप्रियता पर निर्भर होगा। इस दृष्टिसे 'नवजीवन' के पाठकोंकी राय माँगना उचित ही है। यदि विद्वान और सामान्य जन इसके पक्षमें होंगे तो सम्भव है, पत्रकार भी इसका समर्थन करें।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २७-९-१९३१

४८. पारसियोंका विरोध

गत १० अगस्तको श्री आबिद अली आदि कांग्रेसके पिकेटरोंके साथ जो दुर्व्यवहार किया गया उसकी निन्दा करते हुए एक विरोध-पत्रक प्रकाशित किया गया है, जिस पर १७५ पारसियोंने हस्ताक्षर किये हैं। इन हस्ताक्षरकर्त्ताओंमें बैरिस्टर, डाक्टर, सॉलिसीटर, प्रोफेसर आदि भी हैं। यह विरोध प्रकट करनेके लिए मैं इन हस्ताक्षरकर्त्ताओंका अभिनन्दन करता हूँ। किन्तु साथ ही मुझे यह भी कह देना चाहिए कि इन उपद्रवोंमें जिन लोगोंका हाथ था उनपर इस विरोधका शायद ही कोई प्रभाव पड़ेगा। वस्तुत: आवश्यकता है शराब बेचनेवालोंसे व्यक्तिगत सम्पर्क साधनेकी, उनके लिए कोई दूसरा प्रतिष्ठित धंधा ढूँढ़ निकालनेकी, उसके सम्बन्धमें उपयुक्त योजना बनानेकी और उनके इस मौजूदा धंधेके खिलाफ पारसियोंमें मजबूत लोकमत उत्पन्न करनेकी है। शराबके इन विक्रेताओंकी दलील यह है कि यदि हम लोग यह धंधा छोड़ दें तो उसे कोई दूसरा शुरू कर देगा। मैंने उनसे यह कहा है कि यदि वे यह धंधा छोड़ देते हैं तो उसके परिणामस्वरूप पारसी समाजके बाहर भी ऐसा लोकमत उत्पन्न हो जायेगा कि दूसरोंके लिए भी यह अनीतिपूर्ण धंधा अपनाना असंभव हो जायेगा। मैंने इस सम्बन्धमें 'नवजीवन'[२] में

१. पत्रका अनुवाद यहाँ नहीं दिया जा रहा है। पत्र-लेखकने गुजराती लिपिमें सुधारके लिए कुछ सुझाव दिये थे ताकि उसे नागरी लिपिके अधिक निकट लाया जा सके।

२. तात्पर्य शायद ३०-७-१९३१ के **यंग इंडिया** में प्रकाशित "प्रोहिबिशन वर्क इन मलवाण" (मलवाणमें मद्य-निषेध-कार्य) शीर्षक लेखसे है और यहाँ भूलसे **नवजीवन** लिखा गया प्रतीत होता है। लेखमें भंडारी समाज द्वारा सविनय अवज्ञा आदोलनके प्रभावमें ताड़ी निकालनेका धन्धा छोड़ दिये जानेकी चर्चा थी।

रत्नागिरि जिलेके भंडारी समाजके उदाहरणका उल्लेख किया है। उन लोगोंने शराब बेचनेका अपना परम्परागत धंधा छोड़ कर शराबके खिलाफ युद्धका श्रीगणेश किया। अनेक कोलियोंने भी ऐसा ही किया है। इसलिए यदि पारसी भी इस सुधारको अपनायें तो यह तो नहीं कहा जा सकेगा कि उन्होंने इस दिशामें पथ-प्रदर्शन किया है किन्तु उन्हें एक अच्छे उदाहरणके अनुसरणका श्रेय अवश्य मिलेगा और यह भी कहा जायेगा कि उन्होंने एक ऐसे व्यापारकी जड़ खोदनेके देश-हितकारी कार्यमें अपना योगदान दिया है जिससे मजदूर-वर्गकी अपूरणीय हानि हो रही थी।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २७-९-१९३१

४९. पत्र : दादूको

रेलगाड़ीमें
२७ सितम्बर, १९३१

प्रिय दादू,

हाजी इस्माइल भाभाने पत्र लिखकर शिकायत की है कि सत्याग्रही हिंसापूर्ण आचरण कर रहे हैं। जूनमें हुई सभामें वे अपने साथ घातक हथियार लेकर गये थे, और वे मुस्लिम महिलाओंसे गैरवाजिब फायदा उठा रहे हैं। मैंने उनको लिखा है कि इस बारेमें तुमको लिख रहा हूँ। मैं चाहूँगा कि तुम उनसे मिलो। हमारा कर्त्तव्य है कि विरोधियोंके दृष्टिकोणको भी समझें और जहाँ-कहीं उनकी आपत्तियोंको दूर कर सकते हैं, उन्हें दूर करें।

मुझे आशा है कि वहाँका मामला ठीक चल रहा होगा।

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४९०५) से।

५०. भाषण : वयस्कोंके स्कूलमें[1]

वेस्ट ब्रैडफोर्ड
२७ सितम्बर, १९३१

श्री गांधीने अपना भाषण आरम्भ करते हुए कहा कि मैं लंकाशायरवालोंके इस विचारसे सहमत हूँ कि इस देशमें आज जो बेरोजगारीकी समस्या उठ खड़ी हुई है उसका आंशिक कारण भारतमें मेरे द्वारा उठाया गया कदम है। मैं यह स्वीकार करता हूँ कि राजनीतिक रुचिके बहुत-से लोगोंने बदलेकी भावनासे बहिष्कार शुरू किया है और उन्हें इंग्लैंडको चोट पहुँचानेमें आनन्द आता है। मगर मेरे लिए यह कोई आनन्दका विषय नहीं है, और मेरे गिरफ्तार हो जानेके बाद आन्दोलनने, वह अन्यथा जैसा हो सकता था, उससे कुछ भिन्न रूप ले लिया। यदि सरकारने लॉर्ड इर्विनके नाम लिखे मेरे उस पत्रके[2] पीछे खड़ी ताकतको समझा होता जिसमें मैंने प्रसिद्ध ग्यारह-सूत्री माँग रखी थी तो इतिहास कुछ और ही ढंगसे लिखा जाता। मेरी गिरफ्तारीके बाद बहिष्कार एक सर्वव्यापी नारा बन गया। मेरी अपनी योजना तो सारे विदेशी कपड़ेके बहिष्कारकी होती, लेकिन सारा सूत्र-संचालन जनताने अपने हाथोंमें ले लिया, बहिष्कार आन्दोलनको ब्रिटिश मालके बहिष्कारका रूप दे दिया और जापानी कपड़े, अमेरिकी टाइपराइटर वगैरह खरीदती रही।

मार्चमें[3] मेरे जेलसे छूटनेपर ब्रिटिश मालका बहिष्कार बन्द हो गया, लेकिन मेरे कहनेपर विदेशी मालका बहिष्कार जारी रखा गया। इसके बाद श्री गांधीने शराब तथा मादक पदार्थों और विदेशी कपड़ेके बहिष्कारके सम्बन्धमें लॉर्ड इर्विनसे हुई अपनी वार्त्ता, लॉर्ड इर्विनकी ब्रिटिश कपड़ोंका बहिष्कार समाप्त करवानेकी चिन्ता, इसके खिलाफ दी गई दलीलों, और लॉर्ड इर्विनके अन्तमें इस बातपर राजी हो जानेकी चर्चा की कि वे बहिष्कार समाप्त किये जानेपर आग्रह रखकर समझौतेकी सम्भावनाओंको खतरेमें नहीं डालना चाहते।

अपने अन्य भाषणों और वक्तव्योंकी तरह यहाँ भी श्री गांधीने ब्रिटेनके ३०,००,००० बेरोजगारोंकी तुलना भारतके ३०,००००,००० बेरोजगारोंसे की। उन्होंने

१. सभा हेज़ फार्म गेस्ट हाउसमें आयोजित की गई थी। यहीं यह स्कूल चलाया जाता था और गांधीजी रातमें यहीं ठहरे थे।

२. यह पत्र वाइसरायके निजी सचिवके नाम लिखा गया था; देखिए खण्ड ४३, पृष्ठ २-९।

३. गांधीजी जनवरीमें रिहा हुए। गांधी-इर्विन समझौतेके अनुसार ब्रिटिश मालका बहिष्कार समाप्त किया गया। देखिए खण्ड ४५, परिशिष्ट ६।

बेरोजगारोंको दिये जानेवाले गुजारा-भत्तेको आत्म-सम्मानकी भावनाके खिलाफ कहा और बताया कि किस प्रकार भारतमें हड़तालोंका नेतृत्व करते हुए उन्होंने गुजारा-भत्तेकी बातको बिलकुल तिलांजलि दे दी थी और हड़तालियोंको निठल्ले रहनेके बजाय बहुत कम मजदूरीपर भी कोई और काम करनेको प्रेरित किया था। उन्होंने उन हड़तालियोंकी भी चर्चा की जिन्हें बुनाईका प्रशिक्षण देकर स्वावलम्बी बनना सिखाया गया था।

इसके बाद श्री गांधीने अपने इस विचारका पल्लवन किया कि भारतकी गरीबी ब्रिटिश नीतिका — सौ साल पहले लंकाशायरकी मशीनोंके बलपर भारतके पुराने वस्त्र-उद्योगको समाप्त कर देनेका — परिणाम है। उन्होंने कहा कि जिन लोगोंकी आजीविकाके सहायक साधन (जिसके बलपर उन्हें जमीनसे मिलनेवाली रोटीके अलावा और भी जो चीज अपेक्षित है वह चीज मिल जाती थी)को नष्ट किया गया, अगर उन स्वत्ववंचित लोगोंकी सन्तानें अपनी स्थितिको फिरसे सुधारनेकी कोशिश करती हैं तो उस सहायक धन्धेको नष्ट करनेवालोंकी सन्तानोंको उसपर कोई शिकायत नहीं करनी चाहिए।

उन्होंने कहा कि अब यह तो असम्भव है कि लंकाशायर अपना पहला व्यापारिक वैभव फिरसे प्राप्त कर ले, और अगर वह ऐसी कोशिश करता है तो मैं उसमें सहायक नहीं हो सकता। इसी तरह मैं भारतीय कपड़ा-मिलोंको सहारा देनेके लिए कुछ नहीं कर सकता। हो सकता है, किसी दिन मुझे उनके विनाशके लिए प्रयत्न करना पड़ जाये, लेकिन इस समय वे ग्रामवासियोंके रोजगार पानेके मार्गमें बाधक नहीं हो रही हैं, और इसीलिए मैं उनके अस्तित्वको बरदाश्त कर रहा हूँ। मैं गाँव-वालोंसे यह नहीं कहता कि उन्हें देशी मिलोंके ही कपड़े खरीदने चाहिए। मैं तो उनसे यह कहता हूँ कि उन्हें विदेशी कपड़े नहीं खरीदने चाहिए और अपनी जरूरतके कपड़े खुद तैयार करने चाहिए।

श्री गांधीने भारतके ग्रामीण लोगोंकी दशाका वर्णन करते हुए कहा कि उनकी औसत मासिक आय ७ शिलिंग ६ पेंस है। यदि इसमें ३ शिलिंग और जुड़ जायें तो यह उनके लिए बहुत बड़ी बात होगी। जिन लोगोंने चरखेको अपना लिया है, उनपर आज कर्जका कोई बोझ नहीं है। इसके बाद उन्होंने गाँवोंके खेलते हुए बच्चों द्वारा सूत कातनेकी क्रियाका बड़ा ही काव्यात्मक वर्णन किया और धनाभिमानियों द्वारा दानमें दिये मुट्ठी-भर चावलपर जीनेवाले ग्रामीण लोगोंकी अवस्थाका और जब कताईका शानदार काम उनके घरोंमें चल रहा होता है उस समयकी उनकी स्थितिका अन्तर बताया। लंकाशायरवालोंसे उन्हें एक ही सांत्वना देनेवाली बात कहनी थी। वह यह कि भारतके उन करोड़ों अभावग्रस्त मानवोंके मनमें उनके प्रति कोई दुर्भावना नहीं है और वे यह भी नहीं जानते कि लंकाशायर क्या है। उन लोगोंके तनपर चिथड़के अलावा और कोई वस्त्र नहीं होता।

इसपर से गांधीजीको स्वभावतः अपने पहनावेके विषयमें कहनेका खयाल आया। उन्होंने कहा कि मैं करोड़ों भूखे-नंगे मानवोंका सच्चेसे-सच्चा प्रतिनिधि दिखना चाहता हूँ। मुझे सम्राट् महोदयके समक्ष उपस्थित होनेका अवसर आये तो वहाँ भी मैं अपनी यही लँगोटी पहनकर जाऊँगा, क्योंकि ऐसा न करनेपर मैं अपनेको अशिष्टताका दोषी मानूँगा। उन करोड़ों लोगोंको अपनी लज्जा-निवारणके लिए जितने कपड़ेकी जरूरत होती है, उससे गज-भर भी अधिक कपड़ेका इस्तेमाल करना मैं अपने लिए अशोभनीय मानता हूँ। उन लोगोंको दिनमें एक ही वक्त खाना मिलता है, दूधका वे स्वाद भी नहीं जानते और गर्मीके मौसममें उन्हें कभी-कभी घास-पातपर भी गुजारा करना पड़ता है। ये करोड़ों लोग आपके दरवाजोंपर दस्तक दे रहे हैं। अन्तमें श्री गांधीने कहा कि मुझे लगता है कि इंग्लैंडने अपने सुख-वैभवका महल उन करोड़ों लोगोंकी कब्रोंपर खड़ा किया है, लेकिन अब उसे वैसा नहीं करना चाहिए।

फिर बातचीतके दौरान श्री गांधीने अपनी यह दलील दोहराई कि हो सकता है, लंकाशायरकी व्यापारिक स्थिति पहले ही इतनी बिगड़ चुकी हो कि बहिष्कार आन्दोलनके इस अपेक्षाकृत हलके-से झटकेको भी सँभाल पाना उसके लिए मुश्किल हो गया हो, इस बातमें कोई सन्देह नहीं कि यह आन्दोलन उसके व्यापारमें मन्दी आनका अकेला नहीं, बल्कि अनेक कारणोंमें से सिर्फ एक कारण है। इसके बाद उन्होंने लंकाशायरके व्यापारमें कमी आनेके उन अन्य कारणोंका उल्लेख किया जो आज दुनियामें मौजूद हैं। उन्होंने अपना यह सुझाव भी दोहराया कि अगर ग्रेट ब्रिटेनके साथ कोई ठीक समझौता हो जाये तो सरकारकी ओरसे लंकाशायरके साथ एक ऐसा अनुबन्ध किया जा सकता है कि भारत उससे माल खरीदेगा — लेकिन साल-दर-साल घटती हुई मात्रामें। लेकिन उन्होंने यह स्वीकार किया कि इससे केवल इतना ही होगा कि लंकाशायर कुछ समयके लिए अपनी कठिनाइयोंसे पार पा लेगा।

एक व्यक्तिने जब यह कहा कि आपकी नीति तो एक खतरनाक ढंगकी राष्ट्र-वादिताकी नीति लगती है तो श्री गांधीने उसका प्रतिवाद करते हुए कहा कि मैं तो सिर्फ यह चाहता हूँ कि भारत खाने-कपड़के सम्बन्धमें स्वावलम्बी हो किन्तु बाकी सभी तरहके विदेशी मालके लिए उसका दरवाजा खुला रहे। अन्तमें श्रोताओंसे विदा लेते हुए उन्होंने जापानके व्यावसायिक तरीकोंके बारेमें कुछ बातें कहीं, और उन्हें समझाया कि लंकाशायरके लिए बेहतर यह होगा कि भारतकी ओरसे अपना ध्यान हटाकर दुनियामें जो आर्थिक संकट मौजूद है और जिसमें भारतका योग समुद्रमें बूंदके समान है, उसका खयाल करते हुए अपनी समस्याओंको सुलझाये।

[अंग्रेजीसे]

क्लिथरो ऐडवर्टाइज़र ऐंड टाइम्स, २-१०-१९३१

५१. भेंट : बेरोजगार मजदूरोंके शिष्टमण्डलको[1]

वेस्ट ब्रैडफोर्ड
२७ सितम्बर, १९३१

यदि मैं आपको सबकुछ साफ-साफ न बता दूँ तो उसका मतलब यह होगा कि मैं आपके साथ कपट कर रहा हूँ, मैं आपका सच्चा मित्र नहीं हूँ। . . . पिछले मार्च महीनेमें मैंने लॉर्ड इर्विनको शराब और विदेशी कपड़ोंका बहिष्कार करनेकी छूट देनेपर राजी करनेके लिए उनसे बहुत अनुनय-विनय की थी। उन्होंने कहा कि आप सद्भावके प्रदर्शनके तौरपर तीन महीनेके लिए बहिष्कार बन्द करके चाहें तो उसे फिर शुरू कर सकते हैं। मैंने कहा कि तीन महीने तो क्या, मैं इसे तीन मिनटके लिए भी बन्द नहीं कर सकता। आपके यहाँ तीस लाख लोग बेरोजगार हैं, लेकिन हमारे यहाँ वर्षके छः महीने लगभग तीस करोड़ लोग बेरोजगार रहते हैं। आप अपने यहाँके बेरोजगार लोगोंको प्रति व्यक्ति प्रति मास औसतन ७० शिलिंग गुजारेके लिए देते हैं। हमारी तो मासिक आय ही प्रति-व्यक्ति औसतन ७ शिलिंग ६ पेंस है। उस कारीगरका यह कहना बिलकुल सही है कि वह अपनी ही नजरोंमें गिर गया है। मैं निश्चय ही यह मानता हूँ कि किसी भी मनुष्यके लिए बेकार रह कर दानपर गुजारा करना बहुत पतनकारी चीज है। मैंने एक हड़तालका नेतृत्व किया था; उस दौरान मैं इस बातको सहन नहीं कर सका कि हड़ताली लोग एक दिनके लिए भी बेकार रहें। मैं उनसे पत्थर तोड़ने या रेत ढोने और सार्वजनिक सड़कोंकी मरम्मत वगैरहका काम लेता था और अपने साथी कार्यकर्त्ताओंसे भी उनके काममें हाथ बँटानेको कहता था। इसलिए जरा सोचिए तो कि तीस करोड़ लोगोंका बेरोजगार रहना, आत्म-सम्मानकी भावनासे विहीन, ईश्वरके प्रति आस्थासे रहित करोड़ों लोगोंका प्रति-दिन पतितावस्थामें पहुँचते जाना — यह कितनी भयंकर बात है! मैं उनके सामने ईश्वरकी बात करनेकी हिम्मत नहीं करता। यदि उनसे ईश्वरकी बात करना उचित हो तब तो वहाँ खड़े उस कुत्तेसे भी ईश्वरकी बात करनेमें कोई हर्ज नहीं होगा। उनकी आँखोंमें नूर नहीं है। उनका ईश्वर तो उनकी रोटी है। उनके पास मैं ईश्वरका कोई सन्देश लेकर तभी जा सकता हूँ जब उनके सामने किसी पवित्र कामका सन्देश लेकर जाऊँ। अच्छा-सा नाश्ता करके अच्छे कलेवेका इन्तजार करते हुए तो ईश्वरकी चर्चा बड़े मजेमें की जा सकती है। लेकिन जिन करोड़ों लोगोंको दिनमें दो वक्त भी खानेको नहीं मिलता, उनके सामने मैं ईश्वरकी बात कैसे करूँ? उन्हें तो ईश्वरके दर्शन रोटी और उसके साथ और भी जो-कुछ

१. गांधीजी कई शिष्टमण्डलोंसे मिले थे, लेकिन महादेव देसाईने, जिनकी लिखी "गांधीजी इन लंकाशायर" (गांधीजी लंकाशायरमें) शीर्षक रिपोर्टसे यह भेंट-वार्ता ली गई है, इस शिष्टमण्डलके नाम-धामके बारेमें कुछ नहीं बताया है।

अपेक्षित है, उसीमें हो सकते हैं। रोटी तो, खैर, भारतके किसान अपनी जमीनसे पा रहे थे। मैंने उनके सामने चरखेको पेश किया, ताकि रोटीके साथ और भी जो-कुछ आवश्यक है, वह उन्हें प्राप्त हो सके। और आज अगर मैं ब्रिटेनकी जनताके सामने लँगोटी पहनकर आया हूँ तो इसलिए कि उन करोड़ों अर्धबुभुक्षित और अर्ध-नग्न मानवोंके एक-मात्र प्रतिनिधिके रूपमें यहाँ आया हूँ। हमने यह प्रार्थना की है कि हम अपने प्राणोंको ईश्वरकी कृपाकी स्निग्ध धूपमें जुड़ायें। मगर मैं आपसे कहता हूँ कि जबतक करोड़ों अभावग्रस्त मानव आपका दरवाजा खटखटा रहे हों तबतक आप वैसा नहीं कर सकते। आप कष्टमें हों, तब भी उनकी तुलनामें सुखी ही हैं। मुझे इस सुखसे कोई जलन नहीं है। मैं आपके लिए शुभकामनाएँ करता हूँ, लेकिन आप भारतके करोड़ों दीन-हीन लोगोंकी कब्रों पर अपनी समृद्धिका महल खड़ा करनेकी न सोचें। मैं यह नहीं चाहता कि भारत दुनियासे बिलकुल कटकर रहे, लेकिन मैं यह भी नहीं चाहता कि वह अपने खाने-कपड़ेके लिए दूसरे देशों पर निर्भर रहे। हम वर्त्तमान संकटसे निकलनेका उपाय तो कर सकते हैं, लेकिन मैं आपको बता दूँ कि आपको लंकाशायरके पुराने व्यापारिक वैभवको फिरसे लौटा लानेकी आशा नहीं रखनी चाहिए। यह असम्भव है। नीतिकी दृष्टिसे इस प्रक्रियामें मैं आपकी मदद नहीं कर सकता . . .[1] मान लीजिए एकएक मेरी साँस रुक जाती है और कुछ देर तक मुझे कृत्रिम श्वासोच्छ्वासकी विधिसे सहायता पहुँचाई जाती है और मैं फिर साँस लेने लगता हूँ। उस हालतमें क्या मुझे बराबर उस कृत्रिम विधि पर ही निर्भर रहना चाहिए और अपने फेफड़ोंका प्रयोग करना ही नहीं चाहिए? नहीं, वैसा करना आत्मघात होगा। मुझे अपने फेफड़ोंको मजबूत बनाने और अपने प्रकृत साधनोंपर ही जीनेकी कोशिश करनी चाहिए। आपको ईश्वरसे प्रार्थना करनी चाहिए कि भारत अपने फेफड़ोंको मजबूत बनाये। आप अपने कष्टोंका दोषी भारतको न ठहरायें। आप संसारकी उन ताकतोंका विचार कीजिए जो आपके खिलाफ काम कर रही हैं। वस्तुस्थितिको बुद्धिके प्रकाशमें देखिए।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १५-१०-१९३१

१. साधन-सूत्रके अनुसार।

५२. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

वेस्ट ब्रैडफोर्ड
२७ सितम्बर, १९३१

यहाँ आकर निश्चय ही मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई है और मुझे अधिकसे-अधिक प्रेम और सौजन्य ही मिला है। श्रमिकों और मालिकोंकी विभिन्न मण्डलियोंसे मैं मिला हूँ और उनके साथ मेरा बहुत ही मैत्रीपूर्ण विचार-विमर्श चला है।

मुझे ऐसा लगता है कि लंकाशायरकी व्यथाको मैंने कुछ जाना है, और मेरा हृदय कष्ट भोगते श्रमिकोंके लिए सहानुभूतिसे भरा है। मैंने श्री डेविसका कारखाना और वह पूरा शेड देखा है, जहाँ करघे बेकार पड़े हैं। अपनी निजी स्थिति और कांग्रेसकी स्थिति मैंने उनके आगे स्पष्ट कर दी है। मैंने उन्हें यह बता दिया है कि यदि स्थायी समझौता हो गया तो भारतसे किस हदतक सहायता मिल सकती है। परन्तु मुझे इस तथ्यसे भी पीड़ा होती है कि बेरोजगारी इतनी व्यापक है कि भारतसे जो सहायता आ सकती है वह एक छोटे-से वर्गको ही प्रभावित करेगी।

मुझे ऐसा लगा है कि लंकाशायरकी विपत्तिके लिए भारतीय बहिष्कारकी अपेक्षा विश्वकी परिस्थितियाँ कहीं अधिक जिम्मेदार हैं। पिछले साल भारतीय बहिष्कारके अपने तीव्र रूपमें आनेसे पहले भी, भारतके साथ लंकाशायरका व्यापार कुल उत्पादनके १५ प्रतिशत भागसे बहुत अधिक नहीं था। मेरे खयालसे बहिष्कारका कुप्रभाव उसपर ३ प्रतिशतसे ज्यादा नहीं पड़ा है, या उससे थोड़ा ही अधिक हो सकता है।

इसलिए, जहाँतक भारतका सम्बन्ध है, यह प्रश्न बहुत ही छोटी परिधितक सीमित है। लंकाशायरकी वर्त्तमान विपत्तिको कम करने या बिलकुल दूर करनेके लिए और क्या किया जा सकता है, यह कहना मेरे लिए धृष्टता होगी। जहाँतक भारतका प्रश्न है, मैं आपको यह बता ही चुका हूँ कि अधिकसे-अधिक क्या सम्भव है। अन्तमें कोई परिणाम चाहे निकले या न निकले, पर कर्मचारियों और मालिकोंके साथ दो दिनके घनिष्ठ सम्पर्कने मुझे यह दिखा दिया है कि लंकाशायरके लोगोंने अपनी विपत्तिको बहुत ही बहादुरीसे सहा है और इस बातसे मुझे बहुत अधिक सन्तोष हुआ कि भारतके प्रति उन्होंने कोई कटुता नहीं दिखाई है। इसे मैं एक शुभ लक्षण मानता हूँ।

लंकाशायरके श्रमजीवी लोगोंसे मुझे सदा भद्र व्यवहारकी ही आशा थी। पर कल सड़कोंके किनारे एकत्रित लोगोंकी भीड़ने स्वेच्छासे मेरे प्रति जिस गहरे प्रेमका प्रदर्शन किया, उसके लिए मैं बिलकुल तैयार नहीं था। उस प्रेमको मैं अपने जीवनकी एक सुखद स्मृतिके रूपमें सदा सँजो कर रखूँगा।

बस, मुझे इतना ही कहना था।

१. साधन-सूत्रके अनुसार, गांधीजी प्रेस रिपोर्टरोंके दलसे दोपहरमें मिले थे।

यह पूछनेपर कि क्या वे इस बयानकी, जो उनका ही बताया जाता है, पुष्टि कर सकते हैं कि यदि भारतको स्वराज्य प्राप्त हो गया तो वे विदेशोंसे आयात होनेवाले सारे कपड़ेपर पाबन्दी लगाना स्वीकार कर लेंगे और सिर्फ लंकाशायरके कपड़ेका ही आयात होने देंगे, गांधीजीने कहा :

सभी विदेशी कपड़ेपर पाबंदी लगकर सिर्फ लंकाशायरके कपड़ेकेका आयात मैं उसी हदतक स्वीकार करूँगा जिस हदतक विदेशी कपड़ा भारतकी जरूरतोंको पूरा करनेके लिए आवश्यक होगा। जैसा कि आवश्यक है, उसकी कोटि और कीमतके प्रतिमानके बारेमें शर्तें रखनी होंगी, परन्तु वे आपसमें तय हो सकती हैं।

यह पूछनेपर कि अपना सूती कपड़ा खुद बनानेकी भारतकी नीतिका क्या उसके कच्चे मालके निर्यातपर असर नहीं पड़ेगा, गांधीजीने कहा कि भारत दुनियके अन्य राष्ट्रोंसे या इंग्लैंडसे, राष्ट्र-विशेषके साथ रियायती व्यवहारकी व्यवस्था करनेवाली किसी धाराके अधीन, सूती कपड़ेके थान ही नहीं बल्कि और भी बहुत-सी चीजें खरीदेगा। उन्होंने कहा :

भारत अपनी सभी जरूरतोंके लिए पूरी तरह आत्मनिर्भर न तो है और न लम्बे अरसेतक होगा। उदाहरणके लिए, भारत इस समय भारी मात्रामें लोहेका सामान, चीनी आदि आयात करता है।

प्र० : क्या आप इस बातसे सहमत हैं कि आयात किये जानेवाले मालमें कमी होनेसे उसके साथ-साथ भारतीय रुईकी माँगमें भी कमी हो जायेगी?

उ० : कपास कोई ऐसी खास फसल नहीं है कि यदि वह एक बार उगाई गई है तो सदा ही उगाई जानी चाहिए। काश्तकार बदली हुई परिस्थितियोंके प्रति तुरन्त अपनी प्रतिक्रिया दिखायेगा और जो अन्य फसलें लाभदायक हैं उन्हें उगायेगा।

यह पूछनेपर कि क्या वे जापानी सूती कपड़ेको विशेष रूपसे रोकेंगे, गांधीजीने कहा :

मैं जापानी कपड़ेके थानोंपर और अन्य थानोंपर भी और प्रत्येक अन्य विदेशी मालपर प्रतिबंधक शुल्क लगाऊँगा। यह जापानके विरुद्ध भेद-भावका सवाल नहीं होगा। उसके खिलाफ मुझे कोई शिकायत नहीं है। मैं केवल अपना सामान अपने साझीसे लूँगा। जापान या किसी अन्य राष्ट्रकी चीजें यदि मैं इसलिए नहीं लेता हूँ कि उन चीजोंको मैं खुद बना रहा हूँ, तो उन्हें कोई शिकायत नहीं होनी चाहिए, और यदि मैं उन चीजोंको अपने साझीसे लेता हूँ तो भी उन्हें कोई शिकायत नहीं होनी चाहिए।

प्र० : वह सब स्वराज्यपर निर्भर है ना?

उ० : हाँ, वह सब पूरी तरह स्वतन्त्र इच्छा और अपनी मर्जीकी चीज होनी चाहिए। मैं भारतको हानि पहुँचाकर लंकाशायरका फायदा नहीं करूँगा। यदि मुझे और विदेशी कपड़ेकी जरूरत है और यदि इंग्लैंड मेरा साझी है, तो उससे उसे न लेना मेरी मूर्खता होगी।

प्र० : मान लीजिए यह वार्त्ता टूट जाती है ?

उ० : तब भगवान ही भारतको बचाये। भारतको तब कष्टोंकी अग्निमें से गुजरना होगा। भारतको जबतक उसकी स्वतन्त्रता नहीं मिलती है, भारतके शान्ति प्राप्त करनेका प्रश्न ही पैदा नहीं होता। यह एक निश्चित बात है।

यह पूछनेपर कि क्या वे आशान्वित हैं, गांधीजीने कहा :

यह सब ईश्वरके हाथमें है। कुछ कहना बहुत ही कठिन है।

प्र० : आप क्या यह महसूस करते हैं कि इंग्लैंडकी वर्त्तमान राजनीतिक परिस्थितिके समझौतेकी सम्भावनाएँ खतरेमें पड़ गई हैं ?

उ० – ब्रिटिश राजनीतिज्ञ यदि इस निष्कर्षपर पहुँचते हैं कि वर्तमान समस्याको सुलझानेके लिए भारतके साथ समझौता जरूरी नहीं है तो ये सम्भावनाएँ खतरेमें पड़ जायेंगी, या पड़ सकती हैं। अगर वे यह महसूस करें कि इसे टाला जा सकता है, तो खतरा है। लेकिन अगर वे यह महसूस करें कि घरेलू समस्यासे निबटनेमें भारतके प्रश्नका ध्यान रखना ही है, तब तो निश्चय ही घरेलू समस्याके कारण इस प्रश्नको कुछ अधिक महत्त्व भले ही न मिले, लेकिन इसका जितना महत्त्व रहा है, उतना तो रहेगा ही।

इस जिज्ञासाके उत्तरमें कि यदि आम चुनाव होता है तो वे क्या उसके समाप्त होनेतक प्रतीक्षा करेंगे, गांधीजीने कहा :

मैं यहाँ अनिश्चित कालतक प्रतीक्षा करना नहीं चाहता हूँ। यहाँ प्रतीक्षा करते हुए समय बिताना मेरे लिए असुविधाजनक होगा। यदि अगले सप्ताह पार्लियामेंट भंग कर दी जाती है तो मेरा रुख ब्रिटिश मन्त्रियोंके रुखसे निर्धारित होगा कि वे क्या करना चाहते हैं। वे समय बिताना, परिषदकी कार्रवाइयोंको स्थगित करना, या प्रभावी निर्णयोंको स्थगित करना चाहते हैं, तो मैं निश्चय ही चला जाना चाहूँगा। परिषद् फिर शुरू होनेपर मैं लौटूँगा या नहीं, यह उस परिस्थितिपर निर्भर होगा जो उस समय मेरे सामने होगी। मैंने निश्चय ही यह नहीं सोचा था कि परिषद् स्थगित हो सकती है, मैंने तो बल्कि यह सोचा था कि अन्तिम निर्णयपर पहुँचा जा सकेगा।

प्र० : आपके खयालमें प्रगति हुई है या पीछे हटे हैं ?

उ० : मेरे खयालसे न प्रगति हुई है और न पीछे हटे हैं।

प्र० : क्या आप प्रगतिकी प्रत्याशा रखते हैं ?

उ० : यह एक पेचीदा समस्या है।

प्र० : क्या कांग्रेस किसी निष्कर्षपर पहुँच गई है ?

उ० : किसी ठोस निष्कर्षपर नहीं पहुँची है। यह कठिन है।

प्र० : क्या आपने ब्रिटिश मन्त्रियोंको यह बता दिया है कि यदि आम चुनाव हुआ तो आपकी योजनाएँ क्या हैं ?

उ० : मेरी कोई योजनाएँ नहीं हैं। मेरी योजनाएँ क्या होंगी, मुझे नहीं मालूम।

मुद्रा-सम्बन्धी एक प्रश्नके उत्तरमें श्री गांधीने कहा कि वे अपनेको इसका विशेषज्ञ नहीं मानते हैं।

[अंग्रेजीसे]

क्लिथरो ऐडवर्टाइज़र ऐंड टाइम्स, २-१०-१९३१

५३. भेंट : शिष्टमण्डलको[1]

वेस्ट ब्रैडफोर्ड
२७ सितम्बर, १९३१

श्री गांधीने कहा कि उनके मनमें न तो लंकाशायरके खिलाफ और न इंग्लैंडके खिलाफ कोई दुर्भावना है। उन्होंने कहा, यद्यपि मैं बहिष्कार आन्दोलनका जनक होनेका दावा कर सकता हूँ, किन्तु यह आन्दोलन कटुताकी भावनासे प्रेरित होकर नहीं शुरू किया गया। यह मुख्यतः एक आर्थिक नीति है। मैं इस आन्दोलनके माध्यमसे विदेशी वस्त्रोंके बहिष्कारके लिए उतना उत्सुक नहीं हूँ जितना कि भारतीयोंको इस बातपर राजी करनेके लिए कि वे मशीनसे बने किसी भी प्रकारके कपड़ेका उपयोग न करें। मैं यह मानता हूँ कि इस उद्देश्यको सिद्ध करना लगभग असम्भव है, फिर भी मैं जहाँतक सम्भव है, वहाँतक उन्हें मशीनके बने कपड़ेको खरीदनेसे विमुख करना चाहता हूँ। श्री गांधीने शिष्टमण्डलका ध्यान इस तथ्यकी ओर आकर्षित किया कि भारतमें सालमें छः महीने ऐसी परिस्थितियाँ रहती हैं कि किसानोंके पास लगभग कोई काम नहीं रहता, क्योंकि इन महीनोंमें वे खेतोंमें काम नहीं कर सकते। इसलिए इन छः महीनोंतक किसान लगभग भुखमरीकी अवस्थामें रहते हैं। मैं यह चाहता हूँ कि इस अन्तरालमें किसान बुनाईका काम करें, ताकि वे थोड़ी-बहुत कमाई कर सकें। इसलिए हजारों भारतीय फिरसे चरखेको अपना रहे हैं, और पिछले एक-सवा वर्षमें एक लाखसे अधिक किसान कताई या बुनाईका काम करने लगे हैं।

महात्माजीने कहा कि राजनीतिमें मुझे कोई रस नहीं मिलता। मेरे हृदयको जिस बातकी लगन है वह सिर्फ हमारे अपने वर्गके लोगोंका नैतिक उत्थान है। इस देशमें आनेके बादसे वस्तु-स्थितिका खुद ही अध्ययन करनेपर मैंने यह महसूस किया है कि लंकाशायर निश्चय ही आजकी भारी व्यापारिक मन्दीसे परेशान है। मैं चाहता हूँ कि लंकाशायरके लोग यह समझें कि गरीबीमें भी कम और ज्यादा गरीबी-जैसी कोई चीज होती है और यदि आप इस तरह देखें-सोचें तो पायेंगे कि भारतमें जैसी गरीबी है, उस लिहाजसे तो आप लोग बहुत अच्छे हैं। यदि हम भारतके लखपतियोंको

१. गांधीजी क्लिथरो बुनकर-संघके शिष्टमण्डलसे तीसरे पहर मिले थे। शिष्टमण्डलके नेता संघके अध्यक्ष एच० एल० पार्किन्सन और मन्त्री जी० ब्रेम थे और उसमें चार बेरोजगार बुनकर भी शामिल थे।

भी शामिल करके चलें तो भी वहाँके लोगोंकी औसत मासिक आय प्रति व्यक्ति ७ शिलिंग ६ पेंस ही है। इसीसे आप सोच सकते हैं कि गरीबोंमें भी गरीब उन लोगोंकी अवस्था कैसी होगी।

श्री ब्रेमने पूछा कि क्या ऐसा कुछ नही किया जा सकता जिससे लंकाशायरके भी कष्ट दूर हों और भारतके भी।

श्री गांधीने कहा कि अगर गोलमेज परिषद्के निर्णयसे में सन्तुष्ट हो सका तो वादा करता हूँ कि भारतमें जापानी और इतालवी कपड़ोंका आयात बन्द करवानेके लिए मुझसे जो-कुछ भी बन पड़ेगा, करूँगा और भारत अपने बनाये कपड़ोंसे अपनी आवश्यकताकी पूर्ति जहाँतक नहीं कर पायेगा वहाँतक उसकी पूर्त्ति करनेका पहला अवसर लंकाशायरको दिलवानेकी कोशिश करूँगा। लेकिन साथ ही आप इस तथ्यको भी नजरअन्दाज न करें कि भविष्यमें भारतके साथ लंकाशायरके व्यापारमें मन्दी ही आती जायेगी।

[अंग्रेजीसे]

क्लिथरो ऐडवर्टाइजर ऐंड टाइम्स २-१०-१९३१

५४. मैं, मेरा चरखा और महिलाएँ

मैं यहाँ क्यों आया हूँ? मेरा विश्वास किस चीजमें है? मैं कैसा भारत बनाऊँगा? मेरा उत्तर यह है कि सबसे बढ़कर मैं यहाँ सत्यकी — उसे मैं जिस रूपमें जानता हूँ उस रूपमें — रक्षा करनेके लिए आया हूँ, क्योंकि मैं मानता हूँ कि यह जीवनका आधार-स्तम्भ है। बाकी सबकुछ इसी पर निर्भर है। सबसे पहले और सबसे बादमें, बल्कि सदा, सर्वोपरि महत्त्व उसीका है। और सभी बातोंमें सत्यको सबसे पहला स्थान देना सम्भव है। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मैंने सदा ऐसा करनेकी कोशिश की है। मेरी राजनीतिक आकांक्षाओंमें असत्य और धोखा-धड़ीको कोई स्थान नहीं है।

मैंने अपने बारेमें तरह-तरहके वर्णन पढ़े हैं। कुछमें मुझे सन्त कहा गया है, कुछमें धूर्त। मैं न सन्त हूँ और न धूर्त। मैं जो-कुछ बनना चाहता हूँ और आशा है कि जो-कुछ बननेमें किसी हदतक मैं सफल हो पाया हूँ, वह है एक सच्चा और ईश्वरसे डरनेवाला आदमी। लेकिन मैं अपने बारेमें जो-कुछ पढ़ता हूँ, उससे मुझे कोई नाराजगी नहीं होती। क्यों होनी चाहिए? मेरा एक अपना जीवन-दर्शन है और अपना काम है। प्रतिदिन मैं कुछ देर चरखा चलाता हूँ। चरखा चलाते हुए मैं सोचता भी हूँ। मैं बहुत-सी बातोंके सम्बन्धमें सोचता हूँ। लेकिन उन विचारोंसे मैं कटुताको बराबर दूर ही रखनेकी कोशिश करता हूँ।

आप जरा मेरे इस चरखेको परखकर देखिए। आपको जितना मैं सिखा सकता हूँ, उससे बहुत अधिक यह सिखा सकता है। यह आपको धैर्य सिखायेगा, उद्योग

करना सिखायेगा और सादगीकी सीख देगा। यह चरखा भारतके करोड़ों क्षुधार्त्त मानवोंके लिए मुक्तिका प्रतीक है।

मेरी लँगोटी

मेरे पहनावेकी, जिसे अखबारोंमें लँगोटी कहा गया है, आलोचना की जाती है, उसका मजाक उड़ाया जाता है। मुझसे पूछा जाता है कि मैं इसे क्यों पहनता हूँ। जान पड़ता है, कुछ लोगोंको मेरा यह पहनावा बुरा भी लगता है।

जब अंग्रेज लोग भारत जाते हैं तब क्या वे यूरोपीय पोशाकको छोड़कर भारतीय पोशाक पहनने लगते हैं जो वहाँकी आबोहवाके लिए बहुत ज्यादा उपयुक्त है? नहीं, वे ऐसा नहीं करते। और यही उन लोगोंके प्रश्नका उत्तर है जो मुझसे पूछते हैं कि यहाँ इंग्लैंडमें मैं यह भारतीय पोशाक, जिसे पहननेका मैं आदी हूँ, क्यों पहनता हूँ।

यदि मैं यहाँ एक अंग्रेज नागरिककी तरह रहने और काम करनेके लिए आऊँ तब तो मुझे इस देशके रीति-रिवाजोंके अनुसार चलना ही चाहिए और अंग्रेजोंवाली पोशाक पहननी चाहिए। लेकिन मैं तो यहाँ एक बड़ा और विशेष उद्देश्य लेकर आया हूँ और मेरी लँगोटी — अगर आप इसे लँगोटी ही कहना पसन्द करें तो — मेरे मालिकोंकी, भारतकी जनताकी पोशाक है। मुझे एक पवित्र थाती सौंपी गई है, मुझे एक विशेष काम करनेके लिए नियुक्त किया गया है। इसलिए मैं तो वही पोशाक पहनूंगा जो मेरे उद्देश्यकी प्रतीक है। मेरा जो तरह-तरहका वर्णन किया जाता है, वह मुझे दिलचस्प लगता है, कभी-कभी तो वह मजेदार भी लगता है। लेकिन मैं तो केवल अपने देशभाइयोंका प्रतिनिधि हूँ और उन्होंने मुझे जो काम सौंपा है, उसे पूरा करनेकी कोशिश कर रहा हूँ।

हाँ, मैं महिलाओंको पूर्ण रूपसे पुरुषके समान दर्जा दिये जानेमें विश्वास रखता हूँ, और मैं जिस भारतका निर्माण करना चाहता हूँ, उसमें उन्हें वह दर्जा प्राप्त होगा। मेरे साथ जो इतनी सारी महिला कार्यकर्त्रियाँ काम कर रही हैं, उसका कारण मेरे खयालसे मेरा ब्रह्मचर्य और महिलाओंके प्रति मेरी सहज सहानुभूतिकी भावना है।

आपने शायद ऐसा सुना होगा कि मेरे देशमें महिलाएँ पुरुषोंके अधीन हैं। ऐसा सिर्फ देखनेमें ही है। वास्तवमें उनका प्रभाव सदासे बहुत प्रबल रहा है। सदियोंसे महिलाएँ पुरुषोंके साथ कन्धेसे-कन्धा मिलाकर काम करती आई हैं। अगर वे काम करना बन्द कर दें तो बहुत-से पुरुष भूखों मरने लगेंगे।

खिलौना बननेकी प्रवृत्ति

फसलें उगानेमें स्त्री-पुरुष दोनों साथ-साथ मेहनत-मशक्कत करते हैं। उनका जीवन बड़ा कठिन है। स्त्री-पुरुषका भेद उन वर्गोंके बीच ज्यादा है जिनके पास धन-सम्पत्ति और पर्याप्त अवकाश है। धनके कारण वे स्त्रियाँ अपनी उपयोगिताको भूल गई हैं, अपने इस गुणको उन्होंने ताकपर रख दिया है। इस प्रकार सम्पन्न स्त्रियोंमें मात्र एक शोभाकी वस्तु, एक खिलौना बनते जानेकी प्रवृत्ति आ गई है।

मैं चाहता हूँ कि सभी पदों, व्यवसायों और रोजगारोंके दरवाजे स्त्रियोंके लिए खुल जायें। अन्यथा सच्ची समानता नहीं आ सकती। लेकिन मैं हृदयसे यह आशा करता हूँ कि हमारे देशकी स्त्रियाँ अपना प्राचीन गृह-लक्ष्मीका दर्जा बनाये रखेंगी, उसके अनुसार आचरण करती रहेंगी।

इस उच्च पदसे उन्हें कभी च्युत नहीं करना चाहिए। वास्तवमें वह एक निरानन्द गृहस्थी होगी जिसका केन्द्र-बिन्दु स्त्री नहीं होगी। उदाहरणके लिए, जिस परिवारमें पत्नी टाइपिस्टका काम कर रही हो और वह घरमें शायद ही कभी रहती हो, उस परिवारके सुखी होनेकी मैं कल्पना नहीं कर सकता। बच्चोंकी देख-रेख कौन करेगा? और बिना बच्चोंके, गरीब गृहस्थीके इन सबसे जगमगाते जवाहरातोंके बिना, कोई घर क्या घर है?

सबसे पहले परिवार

ऐसे परिवारोंके उदाहरण दिये जा सकते हैं जिनमें चतुर महिलाएँ बाहर जाकर जीविका उपार्जित करती हों, अधिक पैसा कमाती हों और उस पैसेसे किसीको बच्चोंकी देख-रेख करनेके लिए रखकर बच्चोंके लिए ज्यादा ही कर पाती हों। लेकिन जो स्त्रियाँ अपवादरूप हैं, उनको तो अपवाद ही माना जायेगा। अपवाद तो जीवनके हर क्षेत्रमें होते हैं, लेकिन उनसे हम कोई सामान्य धारणा कैसे बना सकते हैं?

सामान्यतः परिवारके पालन-पोषणके लिए वित्तोपार्जनका कार्य पिताको ही करना चाहिए। और यदि उसे यह प्रतीति हो कि उसके घरमें सुख-शान्ति है तो वह अपना कार्य और अच्छी तरह कर सकता है। किसी बच्चेको दुलार-भरी उस सेवासे वंचित करना जो कि उसे उसकी माँ ही दे सकती है, उस बालकके प्रति गम्भीर अन्याय है।

बच्चोंका लालन-पालन करना और उनका चरित्र-निर्माण करना स्त्रीका काम है। यह काम बड़ा महत्त्वपूर्ण भी है। मैं स्त्रियोंके लिए पुरुषोंके साथ समानताका दर्जा अवश्य चाहता हूँ, लेकिन अगर माँ अपने बच्चोंके प्रति अपना पवित्र कर्त्तव्य निभानेमें चूक जाती है तो उस भूलके परिमार्जनका कोई उपाय नहीं है।

नृवंश-शास्त्रकी दृष्टिसे हमारी जाति कुछ भी हो, पारिवारिक जीवन तो सबसे पहली और सबसे महत्त्वपूर्ण चीज है। उसकी पवित्रता सदा बनी रहनी चाहिए। उसी पर राष्ट्रके कल्याणका आधार है। परिवारका प्रभाव सदा बना रहता है — चाहे वह इष्ट सिद्ध हो या अनिष्ट। इस बातमें तो कोई सन्देह हो ही नहीं सकता, और यदि पारिवारिक जीवनमें प्राप्त होनेवाली पवित्र सुरक्षा कायम नहीं रहती तो कोई भी राज्य टिका नहीं रह सकता। इक्के-दुक्के ऐसे व्यक्ति हो सकते हैं जो किसी बड़े सिद्धान्त या आदर्श पर चलते हुए मेरी ही तरह पारिवारिक जीवनकी शीतल छायाको छोड़कर आत्म-त्याग और ब्रह्मचर्यका व्रत ले लें; लेकिन जनसाधारणके लिए तो पारिवारिक जीवनको कायम रखना आवश्यक है।

[अंग्रेजीसे]

डेली हेराल्ड, २८-९-१९३१

५५. पत्र : सर सैम्युअल होरको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
२८ सितम्बर, १९३१

प्रिय सर सैम्युअल,

साथमें तीन तारोंकी[1] नकलें भेज रहा हूँ। आज सुबह लंकाशायरसे लौटा तो ये तार यहाँ पड़े हुए थे। मैंने अभी पिछले दिनों आपको जो बात समझानेकी कोशिश की थी, इन तारोंसे उनकी पुष्टि होती है।

तारोंमें आप श्री बिड़लाके नामका उल्लेख देखेंगे। वित्तीय मामलोंके वे अधिकृत जानकार हैं। मैं चाहूँगा कि सर हेंनरी स्ट्रैकॉश और श्री बिड़ला तथा मुद्रा-सम्बन्धी समस्याओंपर अच्छा अधिकार रखनेवाले अन्य भारतीयोंकी एक बैठक बुलाई जाये।[2]

अगर भारत सरकारका पक्ष मजबूत है तो मुझे मानना चाहिए कि इन भारतीय विशेषज्ञोंको कायल करनेमें उसे कोई कठिनाई नहीं होगी।

श्री वल्लभभाई और कोई नहीं, स्वयं कांग्रेस अध्यक्ष सरदार पटेल ही हैं।

हृदयसे आपका,

संलग्न पत्र ३
परम माननीय सर सैम्युअल होर

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८६९) से।

१. इन तारोंमें, जिनमें से एक वल्लभभाई पटेलने और एक बम्बईके व्यापारिक संघ-मण्डलने भेजा था, उस अध्यादेशका विरोध किया गया था। जिसके द्वारा रुपयेको स्टर्लिंगसे जोड़कर उसका मूल्य १८ पेंस निर्धारित कर दिया गया था। इससे भारतकी रही-सही स्वर्ण-संचितिके भी उसके हाथोंसे निकल जानेका खतरा था।

२. स्ट्रैकॉशने अपने नाम लिखे गांधीजीके पत्र (देखिए अगला शीर्षक) का उत्तर देते हुए कहा था कि उन्हें श्री बिड़लासे मिलकर खुशी होगी। बैठक ६ अक्तूबरको हुई थी।

५६. पत्र : सर हेनरी स्ट्रैकॉशको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०–१
२८ सितम्बर, १९३१

प्रिय सर हेनरी,

भारतसे प्राप्त तारोंकी प्रतियाँ मैं साथमें भेज रहा हूँ। अब आप किसी निर्णयपर पहुँचनेमें मेरी कठिनाईको समझ सकेंगे।

इन तारोंको देखकर यदि आप लिख सकें तो अपने तर्कको फिरसे लिख भेजिएगा। मैं उसका अध्ययन करूँगा और पूरी जानकारी और निर्देशके लिए आपसे मिलना चाहूँगा।

हृदयसे आपका,

सर हेनरी स्ट्रैकॉश, के० सी० बी०

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८६८) से।

५७. पत्र : तेजबहादुर सप्रूको

२८ सितम्बर, १९३१

प्रिय डॉ० सप्रू,

अभी-अभी प्राप्त तीन तारोंकी प्रतियाँ इस पत्रके साथ आपको भेज रहा हूँ। इन्हीं तारोंके आधारपर मैंने मन्त्री महोदयको पत्र भेजा है।[1] साथमें उस पत्रकी प्रति भी भेज रहा हूँ। मेरी सलाह है कि आप इस मसलेपर श्री बिड़ला या प्रोफेसर शाह या दोनोंसे बातचीत करके एक राय बनायें और बने तो मन्त्रीको लिखें मेरे पत्रके मुद्दोंका समर्थन करें।

क्या मैं आपसे यह पत्र श्री शास्त्री व जयकरको भी दिखानेको कह सकता हूँ?

रंगस्वामीने मुझे बताया कि आप ऐसा महसूस करते हैं कि मैं आपसे सम्पर्क नहीं रख रहा हूँ। आप मुझे सदा अपना आज्ञानुगामी ही समझें। यदि मुझे यह पता लग जाये कि आप मेरे विचारोंको जानना चाहते हैं तो आपको अपने विचार बताकर मुझे बहुत प्रसन्नता होगी। मैं ऐसा महसूस करता रहा हूँ कि मुझे बहुत-से महत्त्वपूर्ण मामलोंमें आपके समर्थनका भरोसा नहीं रखना चाहिए। यदि मुझे यह पता चल जाये कि मेरा ऐसा सोचना गलत है, तो यह मेरे लिए सबसे बड़ी खुशीकी

१. देखिए "पत्र: सर सैम्युअल होरको", २८-९-१९३१।

बात होगी। मेरी इस धारणाके अलावा अगर आप मेरे संकोची स्वभावकी ओर भी ध्यान दें तो मुझमें ऊपरसे अलगावकी जो प्रवृत्ति दिखाई देती है, उसका पूरा कारण आपकी समझमें आ जायेगा।

हृदयसे आपका,

संलग्न पत्र : ३

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८६७) से।

५८. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

लन्दन
२८ सितम्बर, १९३१

हमारी ढाई घंटे दिल खोलकर बातचीत हुई। कोई गतिरोध पैदा नहीं हुआ है, लेकिन अभी यह कहना जल्दबाजी होगी कि इस बातचीतका क्या नतीजा निकलेगा और यह बातचीत आगे चलेगी या नहीं।

[अंग्रेजीसे]
डेली टेलीग्राफ, २९-९-१९३१

५९. पत्र : एच० हारकोर्टको

८८, नाइट्सब्रिज,
लन्दन, डब्ल्यू०
२९ सितम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र[2] मिला; धन्यवाद। मैं अभी बहुत व्यस्त हूँ, इसलिए मैं आपको भेंटके लिए जल्दी समय नहीं दे सकता। यदि आप १३ अक्टूबरको ९.३० पर ८८, नाइट्सब्रिजमें आ जायें तो मुझे आपसे मिलकर खुशी होगी।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत एच० हारकोर्ट
११९, जिप्सी हिल
अपर नॉरवुड, एस० ई० १९

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८२४) से।

१. गांधीजीने आगाखाँसे रातमें रिज होटलमें बातचीतके बाद यह वक्तव्य दिया था। भेंटकी रिपोर्ट उपलब्ध नहीं है।

२. श्री हारकोर्ट भारतमें जिला अधिकारी रह चुके थे, और उन्होंने सेवा-निवृत्तिके बाद भारतपर एक पुस्तक लिखी थी। उन्होंने गांधीजीसे भेंटके लिए समय माँगा था।

६०. पत्र : शॉ डेसमंडको

८८, नाइट्सब्रिज,
लन्दन, डब्ल्यू०–१
२९ सितम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके स्नेहपूर्ण पत्र[१] के लिए धन्यवाद। यदि आप सुविधापूर्वक ८८, नाइट्स-ब्रिजमें . . .[२] बजे आ सकें तो आपसे मिलकर मुझे खुशी होगी।

हृदयसे आपका

श्रीयुत शॉ डेसमंड
लेस्टर हाउस
मोन्टपेलियर रो
ट्विकेनहम

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८८२) से।

६१. पत्र : ए० फेनर ब्रॉकवेको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
२९ सितम्बर, १९३१

प्रिय श्री फेनर ब्रॉकवे,

आपका इसी १८ तारीखका पत्र मिला। 'आइरिश फ्री प्रेस' को मैं एक सन्देश पहले ही दे चुका हूँ।

मुझे श्री वेलेराके सचिवसे भी मिलनेका सुयोग प्राप्त हुआ था। क्या आपके मित्र श्री फॉक्सको कोई सन्देश[३] चाहिए? अभी तो मेरे पास कहनेको कुछ रह नहीं गया है।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८८०) से।

१. आयरलैंडके प्रसिद्ध पत्रकार एवं कवि डेसमंडने कहा था कि मुझे अब विश्वास नहीं रहा कि भारत स्वतन्त्रताके लिए तैयार है। उन्होंने गांधीजीसे भेंटके लिए समय माँगा था।

२. यहाँ साधन-सूत्रमें ही स्थान खाली है।

३. ब्रॉकवेने लिखा था कि फॉक्स मेरे मित्र हैं और वे आइरिश फ्री प्रेसमें काम करते है। उन्होंने यह भी लिखा था कि वे आपसे (गांधीजीसे) अपने अखबारके लिए कोई सन्देश चाहते हैं।

६२. पत्र : एच० स्टैनली जेवन्सको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
२९ सितम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र[1] पाकर बड़ी प्रसन्नता हुई। आपको जब भी अवकाश हो, आ जाइए, लेकिन मैं चाहूँगा कि आप जिस समय यहाँ पहुँचेंगे उस समय मैं यहाँ रहूँगा या नहीं, यह जाननेके लिए आप (स्लोन ४२३२ पर) टेलीफोन कर लें। मैं इतना अधिक व्यस्त हूँ कि मुलाकातका निश्चित समय आपको सूचित नहीं कर रहा हूँ। लेकिन, अगर आपसे मिलना सम्भव हो तो मुझे मिलकर प्रसन्नता होगी। मिलनेके स्थानका पता है — ८८, नाइट्सब्रिज।

हृदयसे आपका,

श्री एच० स्टैनली जेवन्स
११, रसेल स्क्वेयर मैंशंस,
१२२, साउथम्पटन रो, डब्ल्यू० सी० १

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८८६) से।

६३. पत्र : फ्रेडरिक बी० फिशरको[2]

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
२९ सितम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके भक्त-हृदयसे निकली सद्भावनाओंको पढ़कर मेरा हृदय गद्गद् हो गया। विश्व-शान्ति और निःशस्त्रीकरणपर अमेरिकी ईसाइयोंको मेरा यही सन्देश है कि यह प्रश्न ऐसा नहीं है जिसके सम्बन्धमें आदान-प्रदानकी नीतिसे काम लिया जाये। अगर कभी सच्ची शान्ति और निःशस्त्रीकरण हुआ तो वह अमेरिका-जैसे किसी सबल राष्ट्रके पहल करनेसे ही होगा — चाहे दूसरे राष्ट्रोंकी सहमति और सहयोग उसमें हो या न हो।

१. अर्थशास्त्रके सेवा-निवृत्त प्राध्यापक स्टैनली जेवन्सने गांधीजीसे मुलाकातका समय माँगा था।

२. अमेरिकी पादरी, **दैट स्ट्रेंज लिटिल ब्राउन मैन – गांधी** के लेखक। वे १९२० से ३० तक कलकत्तामें रहे थे। उन्होंने गांधीजीसे अमेरिकी ईसाइयोंके लिए सन्देश देनेको कहा था।

संघर्षके बीच शान्तिको प्राप्त करने और ईश्वरकी प्रेम-शक्ति और हमारी रक्षा करनेकी उसकी क्षमताका अनुभव करके सभी शस्त्रोंका त्याग करनेके लिए किसी व्यक्ति अथवा राष्ट्रके लिए यह आवश्यक है कि उसे अपने-आपमें विश्वास हो और यह भरोसा हो कि ईश्वर सबका रक्षक है। और जबतक सबल राष्ट्र निर्बल राष्ट्रोंका शोषण करना पाप नहीं मानने लगते तबतक मैं ऐसी शान्ति असम्भव ही समझता हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

परम पूज्य बिशप फिशर
मार्फत — 'क्रिश्चियन हेराल्ड'
न्यूयॉर्क

[अंग्रेजीसे]
'दैट स्ट्रेंज लिट्ल ब्राउन मैन — गांधी'में प्रकाशित मूल पत्रकी अनुकृतिसे; एस० एन० १७८७२ भी

६४. पत्र : एवलिन क्लेयरको[1]

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
२९ सितम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका इसी २४ तारीखका पत्र मिला। तदर्थ धन्यवाद।

आपकी सोसाइटीके दोपहर अथवा रातके भोजमें मैं सहर्ष शामिल होऊँगा — और किसी कारण नहीं तो केवल पुरानी स्मृतियोंको ताजा करनेके लिए ही। लेकिन मैं चाहूँगा कि आप मोटे तौरपर ऐसी दो-चार तारीखें बता दें जिनमें से किसी एक दिन आप आयोजन करना चाहती हों, और साथ ही यह भी कि उसमें कितना समय लगनेकी सम्भावना है।

हृदयसे आपका,

कुमारी एवलिन क्लेयर
फ्रूटेरियन सोसाइटी
डॉडिंगटन, केंट

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८३७) से।

१. फ्रूटेरियन सोसाइटी (फलाहारी-मण्डल) की अवैतनिक मन्त्री।

६५. पत्र : ए० फेनर ब्रॉकवेको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
२९ सितम्बर, १९३१

प्रिय श्री फेनर ब्रॉकवे,

मेरठ-केसके कैदियोंसे सम्बन्धित घोषणापत्रके[1] साथ भेजे आपके पत्रके लिए धन्यवाद। मैंने अपने ढंगसे कोशिश की है और यहाँ भी कर रहा हूँ, लेकिन मैं समझता हूँ कि मुझसे इस घोषणापत्र पर हस्ताक्षर करनेको न कहा जाये। इसका पहला कारण तो यह है कि इससे, मैं और आप जिस उद्देश्यका पक्ष-पोषण करना चाहते हैं, उसीको क्षति पहुँच सकती है।

दूसरा कारण यह है कि आपसे कही गई सारी बातोंको मैं सही नहीं मानता।[2]

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८७७) से।

१. यह घोषणापत्र प्रार्थनापत्रके ढंगका था और इसमें कहा गया था: "हम नीचे हस्ताक्षर करनेवाले लोग उन लोगोंकी गिरफ्तारी और लगातार कैदमें रखे जानेका तीव्र विरोध करते हैं जिनपर मेरठ, भारतमें सम्राट्के खिलाफ षड्यन्त्र करनेके आरोपमें मुकदमा चलाया जा रहा है।

"हम मानते हैं कि इन ३१ राजनीतिक कैदियोंको मार्च, १९२९ में इसलिए गिरफ्तार किया गया था कि उन्होंने, जिन असह्य परिस्थितियोंमें भारतीय मजदूरोंको काम करना पड़ता है, उनके खिलाफ मजदूरोंके विद्रोहका नेतृत्व किया और वे सफलतापूर्वक ऐसे श्रमिक-संगठन खड़े कर रहे थे जो ब्रिटिश साम्राज्यवाद और भारतीय शोषकोंके लिए सचमुच एक चुनौती थे।

"इन कैदियोंको मुकदमेके सिलसिलेमें दो वर्षसे भी अधिक समयतक जेलमें रखा गया है; कई सौ गवाहोंकी गवाहियाँ ली गई हैं और श्रमिक-वर्गका झण्डा उठानेवाले इन बहादुरोंपर चलाये मुकदमेमें सरकारने हजारों पौंड खर्च किये हैं।

"हम न केवल उनकी बिना शर्त और तत्काल रिहाईकी माँग करते हैं, बल्कि यह माँग भी करते हैं कि उन गढ़वाली बन्दूकचियोंको तुरन्त रिहा कर दिया जाये जिन्होंने अपने देशभाइयोंके निहत्थे समूहपर गोलियाँ चलानेसे इनकार करनेकी बहादुरी दिखाई और फलत: जिन्हें आजीवन कारावासका दण्ड दिया गया है।" (एस० एन० १७८४०)। फेनर ब्रॉकवेने गांधीजी से, अगर वे ठीक समझें तो, इसपर अपने हस्ताक्षर करनेको कहा था।

२. साधन-सूत्रमें यह वाक्य जिस रूपमें है उसका अनुवाद यही होता है।

६६. पत्र : जी० हाइनीजको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
२९ सितम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

आपने मुझे पत्र लिखा और मेरे स्वास्थ्यके लिए इतनी चिन्ता दिखाई, इस कृपाके लिए धन्यवाद।

आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि यद्यपि मैं संतरेका रस और शहद मिलाकर नहीं लेता,[1] लेकिन प्रतिदिन तीन संतरे और सुबह-सुबह नींबूके थोड़े-से रसके साथ शहद भी अवश्य लेता हूँ।

हृदयसे आपका,

श्रीमती जी० हाइनीज
एबॉट्सफोर्ड
१०, मार्केट प्लेस, वार्विक

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८८३) से।

६७. पत्र : एस० एस० जहीरको[2]

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०-१
२९ सितम्बर, १९३१

प्रिय जहीर,

तुम लोग मुझसे अलगसे क्यों मिलना चाहते हो? क्या विद्यार्थियोंकी किसी सभामें तुम नहीं मिलोगे? मैं चाहता हूँ, ये सभाएँ ऐसी हों जहाँ तुम लोग मुझसे चाहे जो भी प्रश्न पूछ सको। इससे एक सही उद्देश्यकी पूर्त्ति होगी और मेरा बहुत-सा समय भी बचेगा।

हृदयसे तुम्हारा,

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८७४) से।

१. श्रीमती हाइनीज नर्स थीं और उन्होंने गांधीजी को "थोड़ा-सा संतरेका रस और शहद प्रतिदिन" लेनेका सुझाव दिया था।

२. एस० एस० जहीरने गांधीजी के राजनीतिक अथवा सामाजिक विचारोंसे सहमति न रखनेवाले कुछ भारतीय विद्यार्थियोंकी ओरसे उनसे मिलनेका समय माँगा था।

६८. पत्र : क्रिश्चियन शेल्डरुपको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
२९ सितम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके इसी २१ तारीखके पत्रके लिए धन्यवाद। नॉर्वेको बिलकुल छोड़ दिया गया हो, ऐसा कुछ मुझे तो मालूम नहीं है।

खैर, जो भी हो, आप जो लेख चाहते हैं,[1] उसे न लिख सकनेके लिए मुझे क्षमा करेंगे। मुझे एक मिनटकी भी फुरसत नहीं है। अगर मैं नॉर्वे बिलकुल आ ही न पाऊँ तो मुझे फिर लिखिएगा। हो सकता है, तब मैं कुछ लिखकर आपको भेज सकूँ।

हृदयसे आपका,

डॉ० क्रिश्चियन शेल्डरुप
ओसलो विश्वविद्यालय, नॉर्वे

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८१०) से।

६९. पत्र : जे० थियोडोर हैरिसको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
२९ सितम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

श्री अलेक्जैंडरने[2] आपका पत्र मुझे दिया है। मैं अगले बुधवारको डॉ० मॉण्टे-सरीसे[3] मिलनेकी आशा कर रहा हूँ। अगर वे ठीक १० बजे यहाँ नहीं पहुँच पाईं तो भी मैं उनकी प्रतीक्षा करूँगा।

हृदयसे आपका,

श्री जे० थियोडोर हैरिस
४, ग्राहम रोड, ई०-८

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८७३) से।

१. क्रिश्चियन शेल्डरुपने **फ्रिट ऑर्ड** नामक पत्रिकाके लिए गांधीजीसे "आजके मनुष्यके लिए ईसा मसीहका सन्देश" पर अपने विचार लिख भेजनेका अनुरोध किया था।

२. हॉरेस अलेक्जैंडर।

३. शिक्षाशास्त्री डॉ० मारिया मॉण्टेसरी; इनकी मुलाकातके लिए देखिए शीर्षक १०१।

७०. पत्र : आर० बी० ग्रेगको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
२९ सितम्बर, १९३१

प्रिय गोविन्द,

तुम्हारा गत २७ जुलाईका पत्र[1] मिला। अगर मैं भारतको फिरसे वस्तु-विनिमय-पद्धति अपना लेनेके लिए राजी कर सकूँ तो सचमुच यह बहुत बड़ी बात हो। लेकिन, मैं नहीं समझता, अभी इसके प्रति किसी भी हलकेसे कोई अनुकूल प्रतिक्रिया दिखाई जायेगी। लेकिन, इसके अलावा भी उस दिशामें बहुत-कुछ सम्भव है और उनको आजमाकर देखा जा रहा है।

मेरे पास समयकी बड़ी कमी है, इसलिए इसमें ज्यादा तफसीलमें नहीं उतर रहा हूँ।

यह पत्र मैं लन्दनमें बैठकर लिखा रहा हूँ। मुझे लगा कि ईश्वर मुझे यहाँ आनेका स्पष्ट निर्देश दे रहा है, सो मैं यहाँ चला आया। अगर मैं तुम्हें विस्तारसे बताऊँ कि मुझे कैसे लन्दन आना पड़ा, तो तुम भी आश्चर्यमें पड़ जाओगे — जब सब-कुछ समाप्त हो गया लगता था तब फिर यह कैसे हो गया? मैं तो आश्रमके लिए प्रस्थान करनेके लिए अपना सामान बाँध रहा था लेकिन हुआ यह कि जिस जहाजसे मैं आया उसपर पहुँचनेके लिए विशेष गाड़ी पकड़नेकी जल्दीमें मुझे आधे घंटेके अन्दर सारा सामान बाँधकर ठीक करना पड़ा।

१. पत्रमें लिखा था: "... हालमें मेरे मनमें एक सवाल उठता रहा है कि स्वतन्त्रता-प्राप्तिके बाद यदि भारत अपने यहाँ सदियों पूर्व प्रचलित लगानकी उस व्यवस्थाको लागू कर दे जिसमें किसानोंको अपनी उपजका एक हिस्सा राज्यको देना पड़ता था, तो क्या यह उनके लिए एक बहुत बड़ी राहत नहीं होगी। ... इधर मैंने अपने एक अंग्रेज मित्रसे बातचीत की, जो पहले हारवर्ड कालेजमें अध्यापक थे। ... उनका नाम है एच० जे० लास्की। उन्होंने मुझे बताया कि पहली गोलमेज परिषद्में वे न्यायमूर्ति सैंकीके मुख्य साचिविक सहायक (चीफ सेक्रेटेरियल एसिस्टेंट) थे। ... स्पष्ट ही उनको कुछ ऐसा भ्रम हो गया है कि वहाँ जिन आर्थिक संरक्षणोंका प्रस्ताव किया गया है, वे व्यवहारमें भारतीयोंके ही नियन्त्रणमें रहेंगे, हालाँकि मेरी समझमें नहीं आता कि मैग्नाकार्टासे परिचित कोई भी ईमानदार अंग्रेज ऐसा कैसे सोच सकता है। ... और अब चूँकि सरकारने प्रतिनिधियोंकी सूचीमें मालवीयजी का भी नाम शामिल कर लिया है, इसलिए मुझे लगता है, ब्रिटिश सरकार ऐसा मानती है कि आपपर जितना प्रभाव मालवीयजी का है, उतना और किसीका नहीं है। इस तरह वह एक ओर लॉर्ड इर्विन द्वारा और दूसरी ओर मालवीयजी द्वारा आपको प्रभावित करनेकी कोशिश करेगी। ... ये दोनों आदमीके रूपमें बहुत ईमानदार और अच्छे हो सकते हैं; लेकिन मैं नहीं समझता कि जिस प्रणालीकी रक्षा करनेकी वे कोशिश कर रहे हैं उसके दोषोंसे वे वाकिफ हैं। ..." (एस० एन० १७३९४)

प्रो० लास्कीसे तो मैं मिल भी चुका हूँ और उनसे मैं काफी निकट-सम्पर्क बनाये हुए हूँ।

ऐसा मत मानना कि मालवीयजी और श्रीमती नायडू यहाँ कांग्रेसकी मर्जीके खिलाफ आये हैं। वे यहाँ इसलिए आये हैं कि उनका एक स्वतन्त्र दर्जा है और वे कांग्रेसकी सहमतिसे आये हैं। कांग्रेस उन्हें प्रतिनिधि-मण्डलमें शामिल भी कर सकती थी, लेकिन मुझे कांग्रेसका एकमात्र एजेंट नियुक्त करनेका निर्णय पूरा विचार-विमर्श करने के बाद किया गया और उस निर्णयके बहुत-से कारण थे, जिससे उसे किसी भी वजहसे बदला नहीं जा सकता था।

यहाँ क्या चल रहा है, उसका पूरा विवरण देनेको मेरे पास समय नहीं है। जो-कुछ हो रहा है, उसमें से ज्यादातर तो अखबारोंसे मालूम ही हो जाता होगा। शेष सब महादेव या प्यारेलाल अथवा देवदाससे या मीराको समय मिला तो उससे मालूम हो जायेगा।

सबको मेरा स्नेह-वन्दन,

शुभाकांक्षी,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४६६५)से; एस० एन० १७८७६ भी।

७१. पत्र : जूलियट ई० ब्लूमको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
२९ सितम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके इसी १३ तारीखके पत्रके लिए धन्यवाद। मेरा खयाल है, आपने औपनिवेशिक स्वराज्यका जो अर्थ[1] उद्धृत किया है, वह प्रशंसनीय है। लेकिन, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसका उद्देश्य तो बराबरकी साझेदारी या सन्धि-सम्बन्ध कायम करना है। स्वशासित उपनिवेशोंमें तो आमतौरपर अंग्रेजीभाषी जातियाँ ही रहती हैं, जिन्हें दूसरे शब्दोंमें "अंगज राष्ट्र" भी कहा जाता है। इस अर्थमें भारत एक विजातीय

१. जूलियट ई० ब्लूमने, जो कोलम्बिया विश्वविद्यालयकी छात्रा थीं, लॉर्ड बालफोर द्वारा औपनिवेशिक स्वराज्यकी की गई परिभाषा उद्धृत करते हुए गांधीजी को पत्र लिखा था। उस परिभाषाके अनुसार औपनिवेशिक स्वराज्यका मतलब था : "ब्रिटिश साम्राज्यके अन्तर्गत आनेवाले ऐसे स्वशासित समुदाय जो एक-दूसरेकी बराबरीके दर्जेके हों और अपनी घरेलू या विदेशी नीतिके किसी भी क्षेत्रमें किसी भी प्रकारसे किसीके अधीन न हों, यद्यपि ताजके प्रति वफादारीके सामान्य सूत्रसे एक-दूसरेसे संयुक्त हों और स्वेच्छासे ब्रिटिश राष्ट्रमण्डलके सदस्यके रूपमें एक-दूसरेसे सम्बद्ध हों।" पत्र-लेखिकाने गांधीजी से औपनिवेशिक स्वराज्यकी अपनी परिभाषा बतानेको कहा था।

राष्ट्र है, इसलिए उचित रूपसे तो वह केवल एक साझेदार या सन्धि-सम्बन्धोंमें बँधा मित्र ही हो सकता है।

जो कथन मेरा बताया गया है और जिसे आपने उद्धृत किया है,[1] वह तो उस बातसे ठीक उलटा है जो मैंने हजारों मंचोंसे कही है। अहिंसा-धर्म तो ऐसा धर्म है जिसमें उससे तनिक भी भिन्न आचरणकी कोई गुंजाइश ही नहीं है। इसलिए मैंने ऐसी कोई बात नहीं कही होगी जिससे किसी भी प्रकारसे इस धर्मके मूल्यका क्षय होता हो। कांग्रेसने अपने आचरण और सिद्धान्तमें स्वेच्छासे ही हिंसाको कोई स्थान नहीं दिया है, क्योंकि वह यह मानती है कि यही सही चीज है। लेकिन, भारत और इंग्लैंडके राष्ट्र-संघके सदस्य होने-भरसे दोनोंमें से किसीके हिंसाका सहारा लेनेकी सम्भावना खत्म नहीं हो जायेगी। अगर इनमें से कोई भी राष्ट्र हिंसाका सहारा लेना चाहे — इंग्लैंड भारतपर अपना प्रभुत्व बनाये रखनेके लिए और भारत उस प्रभुत्वसे निकलनेके लिए — तो राष्ट्र-संघकी सदस्यता उसे उससे रोक नहीं सकती। आज भी जो स्थिति है उसमें भारत नाम-मात्रको ही संघका सदस्य है; वह उसका सदस्य अपने अधिकारके बलपर नहीं, बल्कि ग्रेट ब्रिटेनकी संरक्षकताके बलपर और उसीकी इच्छासे है।

हृदयसे आपका,

कुमारी जूलियट ई० ब्लूम
७७१, वेस्ट एंड ऐवेन्यू
न्यूयॉर्क, सं० रा० अ०

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८७८)से।

७२. पत्र : वी० जी० कूर्माको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
२९ सितम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

पत्रके[2] लिए धन्यवाद। मैं इतना ज्यादा व्यस्त हूँ कि आपको मिलनेका कोई निश्चित समय देनेकी हिम्मत नहीं कर सकता। अगर आप किसी दिन सुबह १०

१. जुलियट ब्लूमने अपने पत्रमें गांधीजीके कथनके रूपमें यह वाक्य उद्धृत किया था : "स्वतन्त्रतासे वंचित ३६ करोड़ लोग सदैव अहिंसाका पालन करते नहीं रह सकते।" देखिए खण्ड ४७, पृष्ठ ४६४-६५।

२. वी० जी० कूर्माने, जो भारत सरकारके दक्षिण आफ्रिका-स्थित एजेंटके निजी सचिव रह चुके थे, लिखा था कि उन्हें गांधीजी को दक्षिण आफ्रिकी भारतीय कांग्रेसका एक सन्देश देना है। इसी उद्देश्यसे उन्होंने उनसे मिलनेके लिए समय माँगा था।

बजे ८८, नाइट्सब्रिज आ जायें तो मैं आपको कुछ-एक मिनटका समय देनेकी कोशिश करूँगा।

मैं चाहूँगा, आप मुझे जो-कुछ भी बताना चाहें उसे लिख रखें। मैं आपसे वादा करता हूँ कि आपकी टिप्पणियाँ पढ़ जाऊँगा और उनमें उठाये किसी भी सवालपर आपसे बातचीत करना जरूरी लगा तो फिर आपसे मिलूँगा।

हृदयसे आपका,

श्री वी० जी० कूर्मा
रैगलन होटल
अपर बेडफोर्ड प्लेस, डब्ल्यू० सी०-१

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८८५) से।

७३. पत्र : एच० सी० ढाँडाको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
२९ सितम्बर, १९३१

प्रिय ढाँडा,

इधर कई दिनोंसे पत्रकी प्रतीक्षा करता रहा हूँ।[1] जब भी तुम्हारी इच्छा हो, आकर मुझसे ८८, नाइट्सब्रिजमें मिल लो। अगर ऐसा हो कि जिस समय तुम आओ उस समय मैं अपने आवासपर न रहूँ या किसी और काममें व्यस्त रहूँ तो मिलनेके लिए उसी दिनका कोई और समय निश्चित करा लेना।

हृदयसे तुम्हारा,

श्री एच० सी० ढाँडा
८६, विक्टोरिया रोड
ऑक्सफोर्ड

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८८१) से।

१. एच० सी० ढाँडा लाला दुनीचन्दके पुत्र थे। इनके २४ सितम्बरके पत्रके अनुसार शायद दुनीचन्दने उनके बारेमें गांधीजी को लिखा था।

७४. पत्र : आर्थर हैरिसनको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
२९ सितम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

पत्रके[1] लिए धन्यवाद। अगर आप . . .[2] तारीखको ८८, नाइट्सब्रिज आ जायें तो मैं आपको कुछ मिनटका समय दे सकता हूँ।

हृदयसे आपका,

श्री आर्थर हैरिसन
ब्रदरहुड ऑफ द वे हाउस
६१, ह्यू स्ट्रीट, एस० डब्ल्यू०-१

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८२५) से।

७५. पत्र : सर हेनरी स्ट्रैकॉशको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
३० सितम्बर, १९३१

प्रिय सर हेनरी,

पत्रके लिए धन्यवाद। आपकी और श्री बिड़लाकी आगामी बातचीतमें मैं सहर्ष शामिल होऊँगा। क्या अगले शनिवारको ११ बजेका समय आपके लिए ठीक रहेगा? आपका उत्तर मिलनेपर मैं श्री बिड़लाको बातचीतके समयके बारेमें लिखूँगा।

हृदयसे आपका,

सर हेनरी स्ट्रैकॉश, के० सी० बी०

अंग्रेजीकी फोटो-नकलसे (एस० एन० १७८८७)।

१. आर्थर हैरिसन "सर्मन ऑन द माउंट" (गिरि-प्रवचन) पर आधारित ब्रदरहुड ऑफ द वे नामक आन्दोलनसे सम्बद्ध थे। उन्होंने गांधीजी से मुलाकातके लिए समय माँगा था।

२. साधन-सूत्रमें यहाँ स्थान खाली है।

७६. पत्र : एस० एन० हाजीको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू० ई०
३० सितम्बर, १९३१

प्रिय हाजी,

पत्रके लिए धन्यवाद। 'सिटीजन'[१] (नागरिक) शब्दकी परिभाषाके सम्बन्धमें भेजी आपकी टिप्पणी पाकर प्रसन्नता हुई। यह मेरे काम आयेगी।

हृदयसे आपका,

श्री एस० एन० हाजी
रंगून

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १७६७९)से।

७७. पत्र : पेस्टर फॉरेलको

नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
३० सितम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

भारतीय आन्दोलनपर सुन्दरम्के भाषणकी खबर देते हुए आपने जो तार[२] भेजा है, उसके लिए धन्यवाद देता हूँ; और मेरे कार्यके प्रति आपकी सहानुभूति

१. गोलमेज परिषद्में तेजबहादुर सप्रूने कहा था कि 'इंडियन सिटीजन' ('भारतीय नागरिक') की ऐसी परिभाषा की सकती है, जिससे उसमें भारतमें रहनेवाले अंग्रेजोंको भी शामिल किया जा सके। इसपर आपत्ति करते हुए एस० एन० हाजीने लिखा था कि इस तरह तो ब्रिटिश सरकारके किसी भी नागरिकको चाहे वह अंग्रेज हो या दक्षिण आफ्रिकी, कनैडियन हो या आस्ट्रेलियाई, भारतमें जन्मे भारतीयोंकी बराबरीके ही अधिकारोंका उपभोग करनेका हक मिल जायेगा। उन्होंने यह सुझाव दिया था कि 'सिटीजन' शब्दकी ऐसी परिभाषा की जाये जिससे उसमें भारत-विरोधी उपनिवेशोंके नागरिक शामिल न हो सकें।

२. तार इस प्रकार था : "कल रात गांधीजी के आन्दोलनपर भाई सुन्दरम्के भाषण सुननेको एकत्र भारतके स्वीडिश मित्र आपके कार्यके प्रति अपनी सहानुभूति और उसकी सफलताके लिए शुभकामनाएँ भेजते हैं।" पेस्टर फॉरेलने ही इस सभाकी अध्यक्षता की थी। (एस० एन० १७८४६)

तथा उसकी सफलताके लिए की गई आपकी शुभकामनाओंके लिए अपनी कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ।

हृदयसे आपका,

हर पेस्टर फॉरेल
स्वीडिश चर्च
बर्लिन

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८९८)से।

७८. पत्र : डॉ० मॉड रॉयडनको

लन्दन
३० सितम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

पत्रके लिए धन्यवाद। आपसे मिलना और आप लोगोंकी सभामें भाषण देना[1] मेरे लिए सौभाग्यका विषय था। आपके लोगोंने मुझे चन्दा दिया और अब अगर मैं वह राशि फिर आपको दे दूँ तो आपको परेशानी क्यों होनी चाहिए? इस भेंटका मैं इससे अच्छा और कोई उपयोग नहीं कर सकता था।[2]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
गिल्डहाउस, नवम्बर १९३१

७९. भेंट : रैम्जे मैकडॉनाल्डसे[3]

लन्दन
३० सितम्बर, १९३१

गांधीकी बातोंसे ऐसा कोई संकेत नहीं मिला कि वे परिषद्को भंग कर देना चाहते हैं। उनकी शिकायत यह थी कि यह परिषद् निरर्थक है, क्योंकि केवल वही जनताके सच्चे प्रतिनिधि हैं और शेष लोग तो सरकारके नामजद किये हुए हैं। उनका खयाल था कि जो लोग मुसलमानों और दलित वर्गोंके प्रतिनिधियोंके रूपमें आये

१. देखिए "भाषण: गिल्डहाउस चर्चमें" २३-९-१९३१।

२. गांधीजी चाहते थे कि चन्देकी राशिका उपयोग वहाँके बेरोजगारोंके बीच किये जानेवाले कामके लिये किया जाये।

३. इस दफ्तरी टिप्पणीके अलावा इस मुलाकात की और कोई रिपोर्ट उपलब्ध नहीं है।

हैं, इन दोनों समुदायोंका उनसे कहीं अच्छा प्रतिनिधित्व स्वयं गांधी कर सकते हैं। यदि उन्हें सबका प्रतिनिधि मान लिया जाये तो वे और ब्रिटिश सरकार पूरे सवालका निबटारा कर सकते हैं। प्रधान मन्त्रीने कहा कि परिषद् कमसे-कम इस हृदतक तो सफल हुई ही कि इसके कारण गांधी लन्दन आये और यहाँ सरकारसे उनका सीधा सम्पर्क हुआ। उन्होंने गांधीकी बातोंका खण्डन करते हुए कहा कि सविनय अवज्ञा आन्दोलन गलत चीज है और उससे ब्रिटिश सरकारके भारतके प्रति अपनी सदिच्छाओंको कार्य-रूप देनेके मार्गमें केवल बाधा ही पड़ती है।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९३८१)से। सौजन्य: इंडिया ऑफिस पुस्तकालय

८०. भाषण : भारतीय व्यापार-मण्डलमें[1]

लन्दन
३० सितम्बर, १९३१

गांधीजी ने कहा कि राष्ट्रहितमें भारतके व्यापारियों द्वारा किये गये बलिदानोंसे मैं भली-भाँति अवगत हूँ। उन्होंने बहुत-कुछ किया है, लेकिन राष्ट्र उनसे अभी बहुत अधिककी आशा रखता है। दादाभाई नौरोजी और सर फीरोजशाह मेहताको श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए गांधीजीने कहा कि उन दोनों नेताओंने इस बातको समझ लिया था कि जबतक भारतके व्यापारी लोग कांग्रेसकी प्रवृत्तियोंके साथ सहयोग नहीं करते तबतक भारत अपने स्वतन्त्रताके लक्ष्यकी ओर ठीक प्रगति नहीं कर सकता।

जो लोग सचमुच जानते हैं कि भारत क्या चाहता है, उनके विचारोंकी कोई परवाह न करके भारत-मन्त्रीके निर्देशपर वित्तीय मामलोंके सम्बन्धमें भारत सरकार जो हेराफेरी कर रही है, उसकी गांधीजी ने आगे आलोचना की।

आपकी तरह मेरा मन भी इस बातसे आशंकित है कि आज हमारे मनमें यह आशा तो जगा दी गई है कि सत्ता हमें हस्तान्तरित कर दी जायेगी, किन्तु वास्तवमें केन्द्रके रवैयेमें तो किसी प्रकारके परिवर्तनका संकेत ही नहीं मिलता। मुझे लगता है कि सत्ता हमें एकाएक नहीं मिलने जा रही है, लेकिन अगर महामहिमके सलाहकार सचमुच बड़े-बड़े परिवर्तनोंकी बात सोच रहे हों तो हमें ऐसे मामलोंमें उन परिवर्तनोंका कुछ पूर्वानुभव तो करा ही दिया जाना चाहिए।

कांग्रेस बहुत सोच-समझकर ही इस निष्कर्षपर पहुँची थी कि वित्तीय मामलोंपर पूर्ण नियन्त्रण रखे बिना किसी भी प्रकारका स्वशासन राष्ट्रकी आवश्यकताओंकी पूर्ति

१. भारतीय व्यापार-मण्डलने होटल मेट्रोपोलमें गांधीजी के सम्मानमें एक स्वागत-समारोहका आयोजन किया था।

नहीं कर सकता। मुझे जो प्रादेशपत्र दिया गया है उसके एक हिस्सेमें इसी बातपर तो जोर दिया गया है कि प्रतिरक्षा, विदेशी मामलों और वित्तपर पूर्ण नियन्त्रण प्राप्त किये बिना स्वराज्य लेनेका कोई मतलब नहीं है। मैं तो ऐसी किसी भी सरकारके उत्तरदायी सरकार कहे जानेकी कल्पना ही नहीं कर सकता जिसका इन मामलोंपर नियन्त्रण न हो।

उन्होंने भारतमें व्यापार करनेवाली ब्रिटिश पेढ़ियोंको आश्वस्त किया कि उनके ऐसे हितोंको राष्ट्रीय सरकारकी ओरसे कोई खतरा नहीं है जिन्हें उन्होंने न्यायोचित और वैध तरीकेसे निर्मित किया है और जो भारतकी आम जनताके महत्त्वपूर्ण हितोंके खिलाफ नहीं है।

कोई भी संरक्षणात्मक उपाय भारतकी सद्भावनाकी बराबरी नहीं कर सकता। भारतके पूर्ण स्वराज्य प्राप्त कर लेनेके बाद भी यहीं बने रहनेकी इच्छा रखनेवाला व्यक्ति अगर भारतकी सद्भावनापर भरोसा करके चलेगा तो उसका कोई नुकसान नहीं होगा। मगर इस सद्भावनाके बिना चाहे जितने भी सावधानीपूर्वक चुने शब्दोंमें संरक्षणात्मक उपाय किये जायें, उनकी कीमत उस कागजके बराबर भी नहीं होगी जिस पर वे लिखे जायेंगे। प्रतिनिधिगण जिस भारी समस्यापर अपना दिमाग लड़ा रहे हैं, उसके समाधानमें तो ऐसे संरक्षणात्मक उपाय सहायक होनेके बजाय बाधक ही होंगे।

गांधीजी ने कहा कि साम्प्रदायिक प्रश्नके सम्बन्धमें, जो सचमुच बहुत पेचीदा है, कांग्रेसने तो लाहौर प्रस्ताव और फिर उसमें कार्यसमिति द्वारा किये संशोधन-परिवर्धनके रूपमें अपनी नीति अधिकसे-अधिक स्पष्ट शब्दोंमें रख दी है।[1]

उसके बाद तो मैं अपनी ओरसे केवल यह निजी आश्वासन ही दे सकता हूँ कि कोई समाधान ढूँढ़नेके लिए मैं कुछ भी उठा नहीं रखूँगा, लेकिन साथ ही आपको यह भी बता दूँ कि मैं अपने रास्तेमें बहुत बड़ी-बड़ी बाधाएँ देख रहा हूँ। मैं तो आपसे शुद्ध मनसे सहायता करने और विभिन्न समुदायोंपर जितना भी प्रभाव आप डाल सकते हों उतना प्रभाव डालनेकी ही आशा करूँगा।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १-१०-१९३१

१. तात्पर्य कांग्रेसके जनवरी, १९३० के लाहौर अधिवेशनमें पास किये गये प्रस्ताव (देखिए खण्ड ४२, पृष्ठ ३७०) और कार्यसमिति द्वारा बम्बईकी बैठकमें जुलाई महीनेमें स्वीकृत प्रस्तावसे (देखिए खण्ड ४७, पृष्ठ ३५७-५८) है।

८१. पत्र : आर्थर जे० डेविसको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०-१
१ अक्टूबर, १९३१

प्रिय मित्र,

पत्रके[1] लिए धन्यवाद। नीचे मैं अपना सन्देश दे रहा हूँ :

"पूर्ण मद्य-निषेध अमेरिकाके लिए सबसे कठिन कार्य है, किन्तु इसे सम्पन्न करनेका बीड़ा उठाकर उसने एक ऐसा बहादुरी-भरा कदम उठाया जो अमेरिकाके योग्य ही था। अगर अमेरिकाको किसी भी कारणसे अपनी इस नीतिका त्याग करके फिरसे मद्यपानकी बुराईमें फँसना पड़ा तो यह दुनिया-भरके सुधारकोंके लिए बहुत लज्जास्पद और गहरा आघात पहुँचानेवाली बात होगी।"

हृदयसे आपका,

श्री आर्थर जे० डेविस
मैसाचुसेट्स एंटी-सैलून लीग
३४५, ट्रेमोंट बिल्डिंग
७३, ट्रेमोंट स्ट्रीट
बोस्टन, मैसा०

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८०८) से।

८२. पत्र : उज्जलसिंहको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
१ अक्टूबर, १९३१

प्रिय सरदार उज्जलसिंह,

आपका पिछले माहकी ३० ता० का पत्र मिला, तदर्थ धन्यवाद।

यह बात बिलकुल सही है कि मैंने व्यक्तिगत तौरपर कहा है कि मुसलमानोंकी माँगोंके सम्बन्धमें मैं उन्हें मनचाही करनेकी छूट देनेको तैयार हूँ, लेकिन इस कथनके साथ यह बात भी सहज ही जुड़ी हुई है कि सिखोंको, और सिखोंको ही क्यों, सभी समुदायोंको मैं इसी प्रकारका आश्वासन देता हूँ।

१. अपने २१ सितम्बरके पत्रमें आर्थर जे० डेविसने १६ अक्टूबरको होनेवाली राज्य-व्यापी मद्य-निषेध कांफ्रेंसके लिए गांधीजी से सन्देश माँगा था।

मैं सारी जिन्दगी यही मानता आया हूँ कि जो राष्ट्रकी सेवा करना चाहता है उसे अपने लिए किसी अधिकारकी माँग नहीं करनी चाहिए और जो लोग अधिकारोंकी माँग करें उनके लिए अधिकारोंकी गुंजाइश कर दें, लेकिन मुसलमानोंको पूरी छूट दे देनेसे मेरा मतलब यह कभी नहीं था कि सिखों अथवा किसी भी अन्य समुदायकी न्यायोचित माँगोंकी पूर्णतः अथवा अंशतः उपेक्षा हो।

हृदयसे आपका,

सरदार उज्जलसिंह
सैंट जेम्स कोर्ट
बकिंघम गेट, एस० डब्ल्यू०-१

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७९२५)से।

८३. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

हमने गोलमेज परिषद्की अल्पसंख्यक-समस्या समितिकी बैठकको एक हफ्ता और स्थगित रखनेका अनुरोध करनेका निर्णय किया है।

अगले हफ्ते यह बातचीत जारी रहेगी। कोई गतिरोध नहीं है। कुछ भी तय नहीं हो पाया है। जो स्थिति है, उसकी मुझे न खुशी है, न गम। प्रधान मन्त्रीसे हुई मेरी बातचीतका साम्प्रदायिक सवालसे कोई सम्बन्ध नहीं था।

[अंग्रेजीसे]

न्यूज क्रॉनिकल, १-१०-१९३१

८४. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको

लन्दन
१ अक्टूबर, १९३१

इतनी दूर रहकर बजटके फलितार्थोंको समझना मुश्किल है, लेकिन यह बात मुझे बहुत भयावह लगती है कि गरीबों द्वारा इस्तेमाल किये जानेवाले नमकपर लगे करमें भी वृद्धि की गई है। मैं जानता हूँ कि कांग्रेस इसके खिलाफ भी लड़ेगी। बजटको संतुलित करनेका उपाय करोंमें वृद्धि करना नहीं, बल्कि सैनिक तथा असैनिक खर्चोंमें भारी कटौती करना है। मैं परमश्रेष्ठ वाइसराय महोदयको इस बातके लिए बधाई देता हूँ कि उन्होंने स्वेच्छासे अपने वेतनमें कटौती करना स्वीकार किया है,

१. गांधीजी ने यह वक्तव्य रिट्ज होटलमें आगाखाँ तथा अन्य मुसलमान नेताओंसे ढाई घंटेतक बातचीत करनेके बाद जारी किया था।

लेकिन मैं अपने मनसे इस भावनाको दूर नहीं कर सकता कि अगर भारतको असली स्वशासनमें हिस्सेदार बनना है तो कटौती भारी परिमाणमें की जानी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १-१०-१९३१ तथा **बॉम्बे क्रॉनिकल**, २-१०-१९३१

८५. कुछ प्रश्नोंके उत्तर[1]

लन्दन

१ अक्टूबर, १९३१

श्री गांधीने कहा कि इस पैसेका उपयोग कांग्रेसके रचनात्मक कार्यक्रमकी मदमें किया जायेगा। करोड़ों भारतीय गरीबीमें इस तरह ग़र्क़ हैं कि उनमें अपनी जीविका आप उपार्जित करनेकी आशा जगा सकना लगभग असम्भव है। इसलिए कांग्रेसके सामने बहुत दुष्कर कार्य पड़ा हुआ है। अगर मैं लोगोंको जीवनकी दूसरी आवश्यकताके सम्बन्धमें, अर्थात् कपड़ेके सम्बन्धमें, स्वावलम्बी बननेको समझा सकूँ तो उन्हें सच्चा स्वराज्य मिल जाये।

(१) कांग्रेसका मौजूदा लक्ष्य पूर्ण स्वराज्य है। यहाँ मैं तत्काल स्वतन्त्रता देनेकी माँग करने आया हूँ, लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि ब्रिटेनके साथ पूर्ण समानताके दर्जेपर ऐसी साझेदारी करनेकी कोई सम्भावना नहीं है जिसमें कोई भी साझेदार इच्छा होने-भरसे साझेदारीसे अलग हो जा सकता है। ऐसी साझेदारीको भी मैं पूर्ण स्वराज्य ही मानूँगा।

(२) कांग्रेसका आशय (लाहौर प्रस्तावके अनुसार) ब्रिटिश साम्राज्यसे सम्बन्ध तोड़ लेनेका था, लेकिन साम्राज्यसे सम्बन्ध तोड़ लेना और ग्रेट ब्रिटेनके साथ सम्मानजनक साझेदारी न करना, दोनों एक ही बात नहीं हैं। अगर भारतके साम्राज्यमें रहनेका मतलब उसका अधीन राष्ट्र होना है तो भारत साम्राज्यमें नहीं रहेगा, लेकिन अगर भारत और ग्रेट ब्रिटेन दोनों चाहें तो भारत ब्रिटेनके साथ एक सम्मानजनक साझेदारीका सम्बन्ध कायम करना चाहेगा।

और भारत ऐसी साझेदारी चाहता है, यह तो इसी बातसे स्पष्ट है कि मैं यहाँ जिस पूर्ण स्वराज्यकी माँग करने आया हूँ उसमें साझेदारीके लिए भी गुंजाइश रखी गई है, बशर्ते कि इंग्लैंडको भी ऐसी साझेदारी कायम करनेकी उतनी ही इच्छा हो।

(३) स्वराज्य चाहनेवाले लोगोंका प्रतिनिधित्व कांग्रेसकी ओरसे मैं कर रहा हूँ।

(४) देशी राज्योंकी प्रजाका प्रतिनिधित्व उनके द्वारा नियुक्त या चुने प्रतिनिधि नहीं कर रहे हैं। देशी राज्योंके इन प्रजाजनोंके प्रति भी मैं अपना एक कर्त्तव्य

१. गांधीजी के जन्म-दिवससे एक दिन पहले लन्दनवासी भारतीयोंने गिल्ड हाउसमें उनके सम्मानमें एक स्वागत-समारोहका आयोजन किया था। समारोहकी अध्यक्षता विट्ठलभाई पटेलने की थी। वहाँ गांधीजी को ५७५ पौंडकी एक थैली भी भेंट की गई थी।

मानता हूँ और अपनी समझ तथा योग्यताके अनुसार मैं उसे पूरा करनेकी आशा रखता हूँ।

(५) मैं जिस महान् लक्ष्यकी प्राप्तिका प्रयत्न कर रहा हूँ उसकी तुलनामें यह सौदा कुछ भी नहीं है। इसलिए मुझे कहना पड़ेगा कि मैं अपनेको इतना भोला तो नहीं मानता हूँ कि मनमें ऐसा कोई भ्रम रखूँ कि इस सौदेबाजीके बलपर मैं भारतको स्वतन्त्रता दिला सकता हूँ।

मैंने जो दूसरे देशोंके कपड़ेकी तुलनामें ब्रिटेनके कपड़ेको प्राथमिकता देनेकी बात की है, उसका अपना कारण है और वह कारण इस प्रकार है: अगर ग्रेट ब्रिटेन हमारा साझीदार बन जाता है तो जिस प्रकार मैं किसी भी अन्य कपड़ेके मुकाबले भारतीय कपड़ेको तरजीह दूँगा उसी प्रकार जो देश हमारे साझेदार नहीं हैं उनकी तुलनामें मैं अपने साझेदार द्वारा तैयार किये कपड़ेको प्राथमिकता दूँगा।

(६) संघ-संरचना समितिमें मताधिकारका प्रश्न उठने पर मेरा इरादा उस बातको साबित करनेमें अपनी सारी शक्ति लगा देनेका है जो अभी मैंने मोटे तौरपर कही है। तात्पर्य यह कि मैं अपनी पूरी शक्तिसे इस बातको सिद्ध करनेकी कोशिश करूँगा कि मैंने जो तरीका सोचा है, उस तरीकेसे वयस्क मताधिकारको तत्काल लागू किया जा सकता है।

मैं निश्चयपूर्वक यह नहीं कह सकता कि पूरी कार्य-समिति मेरे विचारोंसे सहमत है, लेकिन कार्य-समितिने मुझे जो अधिकार दिये हैं, उनमें यह बात भी शामिल है कि वयस्क मताधिकारके तरीकोंके बारेमें मैं अपनी समझके अनुसार काम कर सकता हूँ।

जहाँतक वयस्क मताधिकारका सवाल है, मेरे हाथ बँधे हुए हैं, लेकिन उसके क्या तरीके हो सकते हैं, इस सम्बन्धमें मुझपर ऐसा कोई बन्धन नहीं है। कार्य-समितिमें कुछ ऐसे सदस्य भी हैं जिन्हें वास्तवमें यह मालूम नहीं है कि इस तरीकेसे मेरा तात्पर्य क्या है।

(७) मुझे दिया गया कांग्रेसका वह लिखित प्रदेशपत्र मैं सरकारके सामने पेश कर चुका हूँ जिसमें कांग्रेसकी सारी माँगें बिलकुल स्पष्ट शब्दोंमें रख दी गई हैं।

सरकारने अबतक साफ-साफ यह नहीं बताया है कि उसके मनमें क्या है, लेकिन वह समय बहुत जल्दी आ रहा है जब सरकारको अपनी नीति इस या उस दिशामें बिलकुल स्पष्ट कर देनी होगी, क्योंकि मैं समझता हूँ कि गोलमेज परिषद्के सभी सदस्य बहुत व्यस्त आदमी हैं और कल शायद अपने-आप कुछ हो जाये, ऐसी निरर्थक आशा करते हुए वे यहाँ अपना समय गँवानेवाले नहीं हैं।

मुझे निश्चित आदेश मिले हैं कि मैं यहाँ अपना समय व्यर्थ न गँवाऊँ। इस-लिए ज्यों ही मुझे मालूम होगा कि मेरे यहाँ रहनेसे कुछ बननेवाला नहीं है, मुझे भारतके लिए प्रस्थान कर देना होगा।

(८) गढ़वाली कैदियों (उनका उल्लेख इसी नामसे किया जाता है)ने जान-बूझकर आदेशोंका उल्लंघन किया। मैं यह स्वीकार करता हूँ कि उनकी वह कार्रवाई

अहिंसात्मक थी, लेकिन साथ ही यह उन लोगोंके द्वारा, जिन्होंने अपने अधिकारियोंके आदेशोंका पालन करनेकी शपथ ली थी, अनुशासन-भंगका भी मामला है।

लेकिन जबतक वर्त्तमान सरकार कायम है तबतक मैं उसके पास जाकर उन्हें रिहा कर देनेको नहीं कह सकता। इतना अवश्य कह सकता हूँ कि उन्हें जो सजा दी जा रही है वह उनके जुर्मको देखते हुए बहुत भारी है।

आखिरकार उन्होंने तो यही सोचकर वैसा किया कि ये आदेश दुष्टतापूर्ण हैं। अगर ठीक सजा दी जाती तो शायद उन्हें कोई शिकायत न होती।

इस समय तो मैं इस विषयमें सरकारसे बातचीत करनेवाला नहीं हूँ। मुझे जिस चीजके लिए यहाँ भेजा गया है, उसे अगर मैं पा लेता हूँ तो मैं सरकारसे बातचीत कर सकता हूँ, अन्यथा ऐसा करना तो उस आन्दोलनकी पूरी भावनाके ही खिलाफ है जिसमें हम यह मानकर चल रहे हैं कि कुछ लोगोंको कारावास — आजीवन कारावास भी — भोगना पड़ सकता है।

(९) आप कृपया इस बातको समझनेकी कोशिश कीजिए कि जिस तरीकेको मैं राष्ट्रकी गरिमाके अनुकूल समझता हूँ उस तरीकेसे मेरठके कैदियोंके सम्बन्धमें मैंने अपनी शक्ति-भर सब-कुछ करनेका प्रयत्न किया है।

जब-कभी मैं उनके लिए कुछ कहनेकी स्थितिमें होऊँगा, मैं अपने उस कर्त्तव्यसे कभी जी नहीं चुराऊँगा।[1]

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ३-१०-१९३१ और ३०-१०-१९३१

८६. अल्पसंख्यक-समस्या समितिकी कार्यवाहीका अंश

लन्दन
१ अक्टूबर, १९३१

श्री गांधी : प्रधान मन्त्री महोदय, पिछली रात महाविभव आगाखाँ और अन्य मुसलमान भाइयोंसे बातचीत करनेके बाद हम इस निष्कर्षपर पहुँचे हैं कि यहाँ हम जिस उद्देश्यसे इकट्ठे हुए हैं, उसके हकमें यह ज्यादा अच्छा होगा कि हम समितिकी कार्यवाहीको एक सप्ताहतक स्थगित रखनेका अनुरोध करें। मुझे अन्य सदस्योंसे परामर्श करनेका मौका नहीं मिला, लेकिन इस बातमें मुझे कोई सन्देह नहीं है कि मैं जो प्रस्ताव कर रहा हूँ उसपर वे भी सहमत हो जायेंगे। मुसलमान मित्रोंके साथ मेरी बातचीत बहुत गम्भीरतापूर्वक चलती रही है, और पिछले दिन दोपहर बाद मुझे कुछ अन्य समुदायों या वर्गोंके लोगोंसे भी मिलनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ।

१. रायटरकी एक रिपोर्टके अनुसार इस बातचीतके अन्तमें कुछ भारतीय साम्यवादियोंने उपद्रव मचा दिया, जिससे वहाँसे उन्हें जबरदस्ती निकाल देना पड़ा।

हम ज्यादा प्रगति नहीं कर पाये, लेकिन वे लोग भी ऐसा महसूस करते हैं कि हमारे पास समय इतना कम है कि विचार-विनिमय भी ठीकसे नहीं हो सकता। खुद अपनी हदतक मैं यह कह सकता हूँ कि इस सप्ताहके एथगनके अलावा मैं और स्थगनकी माँग नहीं करूँगा; बल्कि मैं इस समितिको यह सूचित कर दूँगा कि अगले सप्ताह मैं जो प्रयत्न करूँगा उसका परिणाम क्या हुआ।

इस समितिको यह बता देनेमें मैं कोई हर्ज नहीं मानता कि महाविभवने और जिन अन्य सज्जनोंके साथ कल रात मैंने विचार-विमर्श किया, उन सबने मेरे सिर यह जिम्मेदारी डाली है कि मैं विभिन्न समुदायोंके प्रतिनिधियोंको साथ बुलाकर उनसे सलाह-मशविरा करूँ ताकि कोई अन्तिम समाधान निकल सके। प्रधान मन्त्री महोदय, अगर मेरा यह प्रस्ताव आपको और इस समितिके शेष सदस्योंको ठीक लगता है तो मेरे लिए यह खुशीकी बात होगी। मैं जानता हूँ कि महाविभव इस प्रस्तावका अनुमोदन करेंगे और अब हम सबको यही आशा करनी चाहिए कि सप्ताहके अन्तमें मैं किसी-न-किसी प्रकारके समाधानकी सूचना दे सकूँगा।

लेकिन यह आशा व्यक्त करते हुए मैं एक बात साफ कह देना चाहता हूँ, अर्थात् कोई यह न समझे कि चूँकि मैं ऐसी आशा व्यक्त कर रहा हूँ इसलिए कोई-न-कोई ऐसी अनुकूल बात जरूर होगी जिसे मैं जानता हूँ और जिसके आधारपर मैं ऐसी आशा कर रहा हूँ। सचाई यह है कि मैं हर परिस्थितिमें आशावान रहनेवाला आदमी हूँ और मैंने अपने जीवनमें अकसर ऐसा पाया है कि जब सारी सम्भावनाएँ सर्वथा प्रतिकूल दीख रही हों, तभी कोई ऐसी बात हो गई है जिससे आशा करनेका कोई अच्छा-सा आधार मिल गया है। खैर, चाहे जो भी हो, मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि इस समितिके बहुत-से सदस्य कोई समाधान ढूँढ़नेके लिए, जितना आदमीके बसमें है, उतना प्रयत्न अवश्य करेंगे।

इन शब्दोंके साथ मैं आपके विचारार्थ अपना यह प्रस्ताव पेश करता हूँ कि आजसे एक सप्ताहके लिए समितिकी कार्यवाही स्थगित रखी जाये।

महाविभव आगाखाँ: मैं इस प्रस्तावका सहर्ष अनुमोदन करता हूँ।

सरदार उज्जलसिंह: मैं इस प्रस्तावका हृदयसे समर्थन करता हूँ और श्री गांधीके साथ स्वर मिलाकर यह आशा व्यक्त करता हूँ कि अगर दोनों ओरसे सद्भावनासे काम लिया गया तो हम कोई समाधान ढूँढ़ सकेंगे।

डॉ० अम्बेडकर: इस समितिको जिस समस्यासे निबटना है उसके समाधानके लिए किये जानेवाले किसी भी सम्भव प्रयत्नके मार्गमें मैं बाधक नहीं बनना चाहता, और अगर महात्मा गांधीके सुझाये तरीकेसे समाधान ढूँढ़ा जा सकता हो तो जहाँ तक खुद मेरा सवाल है, मुझे उस प्रस्तावपर कोई आपत्ति नहीं होगी।

लेकिन दलित वर्गोंके प्रतिनिधिकी हैसियतसे एक कठिनाई मेरे सामने आती है। मैं नहीं जानता कि जबतक इस समितिकी कार्यवाही स्थगित रहेगी तबतक इस

सवालपर विचार करनेके लिए महात्मा गांधी किस प्रकारकी समिति नियुक्त करेंगे, लेकिन मैं समझता हूँ कि उसमें दलित वर्गोंको भी प्रतिनिधित्व प्राप्त होगा।

श्री गांधी : बेशक। .

प्रधान मन्त्री महोदय और मित्रो, मैं देखता हूँ कि हममें से कुछ लोगोंने जो काम करनेका निश्चय किया है उसकी व्याप्तिके सम्बन्धमें सदस्योंके मनमें कुछ गलतफहमी है। मैं तो समझता हूँ कि जो-कुछ होने जा रहा है उसको लेकर डॉ० अम्बेडकर, कर्नल गिडनी और कुछ अन्य मित्र बेकार ही परेशान हैं। भारतके किसी भी हित या वर्ग, बल्कि व्यक्तिको भी वाजिब राजनीतिक दर्जा देनेसे इनकार करनेवाला मैं कौन होता हूँ? यदि मैं राष्ट्रके किसी भी हितकी बलि चढ़ा देनेका दोषी बनता हूँ तो कांग्रेसके प्रतिनिधिकी हैसियतसे मैं उस दायित्वके अयोग्य साबित होऊँगा जो मुझे सौंपा गया है। यह सही है कि इन बातोंके सम्बन्धमें मैंने अपने विचार व्यक्त किये हैं और मैं यह स्वीकार करता हूँ कि मैं उन विचारोंपर कायम भी हूँ, लेकिन प्रत्येक हितको सुरक्षा प्रदान करनेके अनेक अलग-अलग तरीके हैं। हममें से जो लोग मिल-बैठकर परामर्श करेंगे उनका यह कर्त्तव्य होगा कि इसके लिए कोई योजना तैयार करें। इस अत्यन्त अनौपचारिक कांफरेंस या बैठकके सदस्योंको अपना दृष्टिकोण समझानेसे किसीको रोका नहीं जायेगा। सच तो यह है कि इसे समिति कहनेकी भी जरूरत नहीं है। मुझे किसी समितिका संयोजन करने या गठन करनेका कोई अधिकार नहीं है। मैं तो केवल शान्तिके एक अदना सन्देशवाहककी ही तरह काम कर सकता हूँ, विभिन्न हितों और समुदायोंके प्रतिनिधियोंको विचारार्थ एकत्र करके इस बातका पता लगानेकी ही कोशिश कर सकता हूँ कि एक कमरेमें बैठकर आपसमें दिल खोल कर बातें करके क्या हम गलतफहमियोंके कुहासेको दूर नहीं हटा सकते और हम अपने लक्ष्यतक ले जानेवाले उस रास्तेको साफ-साफ नहीं देख सकते जो आज बहुत धूमिल बना हुआ है।

इसलिए मैं नहीं समझता कि इसमें किसीके भी अपना विचार व्यक्त करने या दूसरोंसे स्वीकार करवानेके बारेमें आशंका रखनेका कोई कारण है। वहाँ मैं अपना विचार भी व्यक्त करूँगा, लेकिन उसकी वकत उतनी ही होगी जितनी कि किसी और के विचार की होगी। किसी भी अन्य व्यक्तिके विचारके मुकाबले उसका ज्यादा वजन नहीं होगा। मुझे ऐसी कोई सत्ता प्राप्त नहीं है, जिसके बलपर मैं किसीके भी खिलाफ अपने विचारको स्वीकार करवा सकूँ। मैंने तो राष्ट्रहितका ध्यान रख कर केवल अपने विचार व्यक्त किये हैं और आगे भी जब-कभी उपयुक्त अवसर आयेगा मैं इन्हें व्यक्त करूँगा। उन्हें स्वीकार अथवा अस्वीकार करना आपका काम

१. इसके बाद बोलनेवाले सभी लोगोंने आम तौरपर स्थगन-प्रस्तावका समर्थन किया, लेकिन डॉ० अम्बेडकर, सर हेनरी गिडनी और रावबहादुर पन्निरसेलवमने यद्यपि प्रस्तावका विरोध नहीं किया तथापि यह सवाल उठाया कि चूँकि गांधीजी मुसलमान और सिख, इन्हीं दो अल्पसंख्यक समुदायोंको मान्यता देते हैं, इसलिए हमारी समझमें यह बात नहीं आती कि हम लोग उस समितिके कार्योंमें कैसे शामिल हो सकेंगे जिसका गठन वे अनौपचारिक विचार-विमर्शके लिए करना चाहते हैं।

होगा, आपका ही काम है। इसलिए आप सबसे प्रार्थना है कि अपने मनमें ऐसा कोई विचार न रखें कि इस कांफरेंसमें और मैंने जिन अनौपचारिक बैठकोंकी चर्चा की है उनमें सबको दबा देनेवाली स्टीम-रॉलर-जैसी कोई चीज होगी। लेकिन अगर आपको लगता हो कि इस तरह मेजके चारों ओर सख्त रुख अपनाये बैठे रहनेके बजाय परस्पर एक-दूसरेके निकट आनेका यह एक रास्ता है तो आपसे अनुरोध करूँगा कि आप न केवल इस स्थगन प्रस्तावको पास कर देंगे, बल्कि मैंने इन अनौपचारिक बैठकोंके सम्बन्धमें जो प्रस्ताव रखा है उसके कार्यान्वयनमें भी आप हार्दिक सहयोग करेंगे।[1]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबल कांफरेंस (सेकेंड सेशन) : **प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐंड माइनॉरिटीज़ कमिटी,** पृष्ठ ५२८-९

८७. एवलिन क्लेयरको लिखा पुर्जा

[१ अक्टूबर, १९३१के पश्चात्][2]

१-१५। ३० अक्टूबर। डेढ़ घंटेसे ज्यादा समय न लीजिएगा।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७९२७)से।

८८. भेंट : 'ज्यूइश क्रॉनिकल' के प्रतिनिधिको

लन्दन

[२ अक्टूबर, १९३१के पूर्व]

यहूदियोंके बीच मेरे मित्रोंकी संख्या बहुत अधिक है। दक्षिण आफ्रिकामें तो मैं यहूदियोंसे घिरा ही रहता था, और मेरी आशुलिपिक और टाइपिस्ट एक यहूदी लड़की थी, जो परिवारकी एक सदस्य ही मानी जाती थी।

फिर भी, मैं यह नहीं कह सकता कि मैंने यहूदी धर्मका ठीक अध्ययन किया है। हाँ, उसका उतना अध्ययन जरूर किया है, जितना एक सामान्य व्यक्ति कर सकता है। मैं मानता हूँ कि यहूदी धर्म एक उत्कृष्ट धर्म है और कई दृष्टियोंसे

१. अध्यक्षने प्रस्तावको सदस्योंकी राय जाननेके लिए रखा और वह पास हो गया।

२. एवलिन क्लेयरके सूचनार्थ ये वाक्य गांधीजी ने उन्हींके लिखे १ अक्टूबर, १९३१ के एक पत्रपर लिखे थे। पत्रमें एवलिन क्लेयरने फ्रूटेरियन सोसाइटी, डॉर्डिंगटन, कैंटकी एक बैठकमें आयोजित भोजमें गांधीजी को निमन्त्रित किया था। एवलिन क्लेयरके ही लिखे एक अन्य पत्रके अनुसार यह आयोजन लन्दनके ग्रॉसवेनर हाउस होटलमें हुआ था।

ईसाई धर्मसे इसका बहुत निकटका सम्बन्ध है। उदाहरणके लिए 'ओल्ड टेस्टामेंट' के सभी मसीहा यहूदी हैं और खुद ईसा मसीह भी यहूदी थे।

यहूदियोंके 'पासओवर' पर्वके अवसरपर मैं जोहानिसबर्गके यहूदी उपासना-गृह (सिनेगॉग) में जाया करता था, और लगभग ऐसा कहा जा सकता है कि अपने यहूदी मित्रोंके साथ मैं भी 'पासओवर' के व्रतका पालन किया करता था, क्योंकि मैं हर रोज रातमें उन यहूदी मित्रोंके घर जाता था और वहाँ आप लोग उन्हें क्या कहते हैं? . . .

यहाँ हमारे प्रतिनिधिने बताया, 'मतजो।'

हाँ, हाँ, 'मतजो' खानेका पूरा आनन्द उठाया करता था। मेरा खयाल है, वे बड़े स्वादिष्ट और खस्ता होते हैं।

जो हो, मैं यहूदियोंके दो-तीन सार्वजनिक उपासना-समारोहोंमें शामिल हुआ हूँ, और मैं समझता हूँ ये बहुत भव्य होते हैं, लेकिन खुद मुझे ऐसा लगता है कि उनमें "हृदय-तत्त्वका अभाव था।" मतलब यह कि पूजाकी सच्ची भावनाका अभाव था। उनमें विधि-विधानोंकी बड़ी बहुलता थी, हालाँकि मुझे कहना चाहिए कि ये विधि-विधान बहुत अच्छे थे। यहूदी 'रैबान्' (धर्मशास्त्री) एक जाना-माना विद्वान् था, और उसने बहुत ही विद्वत्तापूर्ण प्रवचन दिया, किन्तु वह मेरे हृदयको स्पर्श नहीं कर पाया।

यहूदियोंके प्रति मेरा रुख बहुत सहानुभूतिपूर्ण है, उनके प्रति मेरा बहुत आकर्षण है। इसका पहला कारण तो स्वार्थ-प्रेरित है; मतलब यह कि बहुत-से यहूदी मेरे मित्र हैं। दूसरा और इससे बहुत गहरा कारण यह है कि उनमें एकताकी अद्भुत भावना है। तात्पर्य यह कि आप जहाँ-कहीं यहूदियोंको देखेंगे, उनमें सहचर-भावना होगी ही। इसके अलावा वह ऐसी जाति है जो अपने मनमें एक भव्य भविष्यकी कल्पना सँजोये हुए है। वैसे अगर इसे धृष्टता न माना जाये तो मैं कहूँगा कि अपनी इस कल्पनाके फलितार्थ और पूरे अर्थको वे खुद भी नहीं समझते।

मुझसे कभी-कभी यह पूछा जाता है कि क्या मैं यहूदियोंको दुनियामें कुछ विशिष्ट कार्य करनेके लिए ईश्वर द्वारा चुनी गई विशेष जाति मानता हूँ। मेरा उत्तर यह होता है कि एक अर्थमें तो मैं ऐसा मानता हूँ। लेकिन वैसे तो सभी जातियाँ अपनेको ऐसा ही मानती हैं।

अपने आध्यात्मिक अर्थमें तो यहूदीवाद एक बहुत ही ऊँचा आदर्श है। आध्यात्मिक अर्थसे मेरा मतलब यहूदियोंसे की जानेवाली इस अपेक्षासे है कि वे अपने जीवनमें अन्दरके जेरूसलेम [तीर्थस्थल] को साकार करें। जहाँतक यहूदीवादका मतलब यहूदियों द्वारा फिरसे फिलस्तीनपर अधिकार कर लेना है, वहाँतक तो इस चीजके प्रति मुझे कोई आकर्षण नहीं है। किसी यहूदीकी फिलस्तीन लौट चलनेकी वांछाको मैं समझ सकता हूँ और अगर वह अपनी अथवा ब्रिटेनकी संगीनोंके जोरके बिना वैसा कर सके तो यह अच्छी बात होगी। उस हालतमें वह शान्तिपूर्वक और अरबोंके प्रति पूरा मैत्री-भाव लेकर फिलस्तीनमें प्रवेश करेगा। सच्चा यहूदीवाद, जिसका अर्थ मैंने अभी आपको बताया है, एक ऐसी वस्तु है जिसके लिए प्रयत्न करना, जिसकी

वांछा करना और जिसके लिए मर मिटना श्रेयकी बात होगी। जिओन (दिव्य जेरूसलेम) तो मनुष्यके हृदयमें निवास करता है। वह ईश्वरका निवास-स्थल है। सच्चा जेरूसलेम आध्यात्मिक जेरूसलेम ही है। इस प्रकार वह यहूदीवादको दुनियाके किसी भी हिस्सेमें रहकर अपने जीवनमें साकार कर सकता है।

श्री गांधीने आगे कहा कि दुर्भाग्यवश वे अबतक फिलस्तीन नहीं गये हैं, लेकिन किसी दिन वहाँ जानेकी आशा अवश्य रखते हैं।

वहाँ जाकर मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी, क्योंकि उस पवित्र स्थलके बारेमें मैंने बहुत-कुछ पढ़ा है। सामी-विरोधी प्रवृत्ति वास्तवमें बर्बरताका एक अवशेष है। यहूदियोंके प्रति इस विरोधकी भावनाको मैं कभी समझ ही नहीं पाया हूँ। मैंने जैंगविलकृत 'चिल्डरन ऑफ द घेटो' पढ़ा है और उसे पढ़कर मैंने जाना कि बिना किसी अपराधके यहूदी लोग पहले ही कितनी यातना सह चुके हैं। मुझे तब भी लगा था और अब भी लगता है कि यह सारा प्रपीड़न, यदि ऐसा कहना धृष्टता न हो तो कहूँगा, उन लोगोंके लिए बड़े अपयशकी बात है जिन्होंने चिरकालसे कष्ट सहनेवाली इस जातिको ईसाई-धर्मके नामपर यातनाएँ दी हैं।

सवाल यह है कि इसका उपाय क्या है? मैं तो दुहरा उपाय सुझाऊँगा। एक ओर तो जो लोग अपनेको ईसाई कहते हैं उन्हें सहिष्णुता और उदारताका गुण सीखना चाहिए और दूसरी ओर यहूदियोंको, उन पर जो दोषारोपण न्यायपूर्वक किया जा सकता हो, उसके कारणोंको दूर करना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

ज्यूइश क्रॉनिकल, २-१०-१९३१

८९. भेंट: हेनरी कार्टरको

लन्दन

[२ अक्टूबर, १९३१][१]

भारतमें मद्यपानका प्रश्न ऐसा प्रश्न है जिसका समाधान तत्काल ढूँढ़ना आवश्यक है। हिन्दुओं और मुसलमानों, दोनोंके धर्मोंकी यह सीख है कि मद्यपान न करो। भावी अखिल भारतीय विधानमण्डल निश्चय ही सभी तरहके नशीले पेयोंका आयात, उत्पादन या बिक्रीका निषेध कर देना आवश्यक समझेगा और इस मामलेमें उतनी ही छूट देगा जितनी कि औषधीय, वैज्ञानिक तथा औद्योगिक प्रयोजनोंके लिए आवश्यक एलकोहल मुहैया करनेके लिए जरूरी होगी। औषधीय प्रयोजनोंके लिए वह उतना ही दिया जायेगा जितना कि डाक्टरके नुस्खेपर लिखा रहेगा। निषेध तो भारतमें शराब तैयार करने और विदेशोंसे आयात करने, दोनोंपर समान रूपसे लागू होना चाहिए।

१. कार्टरके अनुसार यह भेंट-वार्त्ता गांधीजी के जन्म-दिवसपर हुई थी।

मैंने श्री गांधीसे पूछा कि फिर आप, भारत सरकारको आबकारीसे जो भारी राजस्व प्राप्त होता है, उसकी कमीको कैसे पूरा करेंगे? उन्होंने जवाब दिया कि इसका उपाय है — भारतके सैनिक खर्चमें उतनी ही कटौती करना।

हमने भारतकी मद्य-समस्याओंके समाधानके विभिन्न तरीकोंकी चर्चा की। मैंने उन्हें बताया कि यहाँ इंग्लैंडमें तो हम लोग स्कूलोंमें विद्यार्थियोंको वैज्ञानिक ढंगसे यह समझानेपर जोर देते हैं कि नशीले पेय क्या होते हैं और उन्हें पीनेके क्या-क्या परिणाम हो सकते हैं। श्री गांधीने कहा कि एक हदतक तो इस विषयकी शिक्षा भारतीय स्कूलोंमें भी दी जाती है, लेकिन मैं तो मानता हूँ कि शराबखोरीके खिलाफ राष्ट्रके विरोधको कायम रखनेके लिए लोगोंकी धार्मिक भावनापर भरोसा रखना काफी है। मेरी समझसे भारतमें मद्यपानकी वृद्धिका औद्योगीकरणसे निकट-सम्बन्ध है। उन्होंने इस बातपर जोर दिया कि कारखानोंका नीरस वातावरण मद्यपानको बढ़ावा देता है।

लोगोंकी इच्छापर स्थानीय रूपसे मद्य-निषेध लागू करने और राष्ट्रीय पैमानेपर मद्य-निषेध लागू करनेमें उनके विचारसे निम्नलिखित अन्तर है:

ब्रिटेन-जैसे देशमें, जहाँ मद्यपानकी जड़ें परम्परासे जमी हुई हैं और जहाँ शायद अधिकांश लोग मद्यपान करते हैं, लोगोंकी इच्छापर स्थानीय रूपसे मद्य-निषेध-नियम लागू किया जा सकता है। लेकिन भारतको कोई बीचकी नीति अपनानेकी जरूरत नहीं है। वह तो राष्ट्रीय पैमानेपर पूर्ण मद्य-निषेध लागू किये जानेके लिए पूरी तरहसे तैयार है। देशमें इस चीजके प्रति लोगोंकी जो भावना है, वह असन्दिग्ध रूपसे ऐसे निषेधके लिए अनुकूल है।

अफीम खानेकी लतके बारेमें उन्होंने बताया कि अब भारतमें यह लत उतने बड़े पैमानेपर मौजूद नहीं है, जितने बड़े पैमानेपर मद्यपानकी आदत देखनेको मिलती है। पिछले कुछ वर्षोंमें यहाँ पोस्तका उत्पादन कम हो गया है। सरकारने अफीमके निर्यातकी मात्रा निर्धारित कर दी है, जिससे अफीमके निर्यातमें प्रतिवर्ष १० प्रतिशतकी कमी होती जा रही है। यह बहुत ही समझदारी-भरा और लाभदायक कदम साबित हुआ है। श्री गांधीने कहा:

वैसे तो अफीमखोरीकी आदत भारतमें किसी और देशसे नहीं आई लेकिन भारतीयोंकी नैतिक भावनाका तकाजा यही होगा कि अफीमके सम्बन्धमें भी जल्दी ही पूर्ण निषेध लागू कर दिया जाये। भारतमें अफीम खानेके खिलाफ राष्ट्रीय पैमाने पर निषेध लागू कर देना आवश्यक है। हाँ, जहाँतक औषधीय तथा वैज्ञानिक प्रयोजनोंके लिए वह आवश्यक है, वहाँतक उसके उपयोगकी छूट देनी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

मैंचेस्टर गार्डियन, १४-१०-१९३१

९०. भाषण : भोजके अवसरपर[1]

लन्दन
२ अक्टूबर, १९३१

मैं जबसे लन्दन आया हूँ, मुझे लोगोंका मैत्रीभाव और सच्चा स्नेह ही प्राप्त होता रहा है। हर दिन नये-नये लोगोंसे मेरी मैत्री होती रही है। लेकिन, महोदय, आप सबने मुझे फिर यह दिखा दिया है कि आप मेरे मुसीबतके साथी हैं और मुसीबतके साथी ही तो सच्चे साथी, सच्चे दोस्त होते हैं। जब यह लग रहा था कि भारत, बल्कि कहिए, कांग्रेसियोंका साथ शायद दुनियाके सभी लोग छोड़ देंगे, तब आपने दृढ़तासे कांग्रेसका साथ दिया और कांग्रेसकी स्थितिको अपनी स्थिति बना लिया। आज आपने कांग्रेसके कार्यक्रममें फिरसे अपनी आस्था व्यक्त की है और इस तरह मेरा काम आसान कर दिया है।

कांग्रेसके प्रतिनिधिकी हैसियतसे मुझे यहाँ जो सन्देश देनेको भेजा गया है वह सन्देश आपको देना तो वैसा ही होगा जैसा कोयलेके भण्डार न्यूकैसलमें किसी और जगहसे कोयला पहुँचाना। कांग्रेसके पक्षके औचित्यसे आप भली-भाँति अवगत हैं और मेरा यह निश्चित विश्वास है कि आपके हाथोंमें कांग्रेसका पक्ष बिलकुल सुरक्षित है तथा अपने आजके कार्यके द्वारा, कांग्रेसके माध्यमसे, भारतके गाँवोंके करोड़ों मूक और अर्ध-बुभुक्षित मानवोंके साथ अपनी मैत्रीपर आपने अन्तिम मुहर लगा दी है।

यह मान लिया गया है कि आप लोग भोजमें शामिल हो रहे हैं। आपके साथ मेरी पूरी सहानुभूति है। अंग्रेजी ढंगकी भोज्य सामग्रीको मैंने देखा-ही-देखा है, उसका स्वाद नहीं लिया है। और जब मैंने फलोंसे भरी यह मेज देखी तो महसूस किया कि भोजके नामपर सिर्फ ये फल खाना आपके लिए कितने बड़े त्यागका विषय है। आशा है, चायका समय आनेपर जब आप अंग्रेजी होटलों और उपाहारगृहोंमें सुलभ कुछ थोड़ी-सी सुस्वादु खाद्य सामग्रीका आस्वादन करेंगे उससे पहले तक तो आपकी त्यागकी यह भावना कायम ही रहेगी। मगर ऊपरसे परिहास दीख पड़नेवाली इस बातके अन्दर एक गम्भीरता भी छिपी हुई है। मैं जानता हूँ कि आपने कुछ त्याग किया है। आपमें से कुछ लोगोंको भारतकी 'स्वतन्त्रता' का — अंग्रेजीमें इस शब्दका जो पूरा अर्थ होता है, उस अर्थमें उसका — पक्ष-पोषण करनेके कारण बहुत-कुछ बलिदान करना पड़ा है। लेकिन हो सकता है कि अगर आप आगे भी भारतके पक्षका समर्थन करते रहेंगे तो आपको इससे बहुत अधिक बलिदान करना पड़े। यहाँ आनेका निश्चय करते समय मेरे मनमें किसी प्रकारका भ्रम नहीं था। मेरे लन्दनमें प्रवेश करने पर

१. गांधीजी के ६३ वें जन्म-दिवसके उपलक्ष्यमें इस भोजका आयोजन इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी, इंडियन नेशनल कांग्रेस लीग और गांधी सोसाइटीने वेस्ट मिंस्टर पैलेस-कक्षमें किया था। अध्यक्षता फेनर ब्रॉकवेने की थी। कुल ३८८ आदमी मौजूद थे। इस अवसरपर गांधीजी को एक चरखा भी भेंट किया गया था।

पहले ही दिन आपने मुझे यह कहते सुना कि मेरे लन्दन आनेका एक सबसे महत्त्वपूर्ण कारण यह था कि मैं एक सम्माननीय अंग्रेजको[1] दिये गये अपने वचनका पालन करना चाहता था और उस वचनको पूरा करनेके लिए ही मैं अपनेसे मिलनेवाले प्रत्येक अंग्रेज पुरुष और स्त्रीको अपनी शक्ति-भर समझानेकी कोशिश कर रहा हूँ कि कांग्रेस जो चीज चाहती है वह वही है जिसका भारत योग्य पात्र है, और साथ ही यह बतानेकी कोशिश कर रहा हूँ कि कांग्रेस अपनी माँगें बहुत गम्भीरतापूर्वक कर रही है और मैं कांग्रेसके प्रादेशपत्रमें शामिल प्रत्येक वस्तुकी माँग करके उसको और भारतको उसका प्राप्य दिलानेके लिए यहाँ आया हूँ। कांग्रेसकी जो माँग है उसमें मुझे, जिस हदतक कांग्रेसका प्रादेशपत्र मुझको इजाजत देता है, उससे आगे कोई कमी करनेका अधिकार नहीं है। स्थिति चूँकि ऐसी है, इसलिए यहाँ रहते हुए मुझे प्रतिदिन इस बातकी अधिकाधिक प्रतीति होती जा रही है कि मेरा काम बहुत कठिन है — मनुष्यकी शक्तिसे लगभग बाहर। यहाँ तो भारतकी स्थितिके बारेमें इतना अज्ञान है कि कुछ समझमें नहीं आता; सच्चे इतिहाससे लोग इतने अनभिज्ञ हैं कि आश्चर्य होता है। जब मैं यहाँ आनेवाला था, एक नौजवान क्वेकरने मुझे आगाह करते हुए कहा था कि जबतक हम लोगोंको [अंग्रेजोंको] बचपनसे ही सच्चे और यथार्थ इतिहासकी नहीं, बल्कि गलत इतिहासकी शिक्षा दी जा रही है, तबतक आपके [गांधीजी के] यहाँ आनेसे कोई लाभ होनेवाला नहीं है; और यहाँ मैं जैसे-जैसे अंग्रेज पुरुषों और स्त्रियोंके संपर्कमें आता हूँ, उस क्वेकर मित्र द्वारा कहा सत्य उदाहृत होता देखता हूँ।

उनके लिए यह समझ सकना अत्यन्त कठिन, लगभग असम्भव, है कि कमसे-कम भारतीय लोग तो ऐसा ही मानते हैं कि भारतमें ब्रिटिश प्रशासनके कार्य-कलापका कुल परिणाम राष्ट्रके लिए लाभदायक होनेके बजाय हानिकारक ही सिद्ध हुआ है। भारतको ब्रिटेनसे सम्बन्ध रखनेसे जो-कुछ लाभ मिल सकता था, उसकी बात करना व्यर्थ है। पक्ष-विपक्षकी तमाम बातोंपर विचार करके यह निश्चित करना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बात है कि वास्तवमें ब्रिटिश शासनके अन्तर्गत भारतपर कैसी बीती है।

मैंने इसके लिए दो अचूक कसौटियाँ रखी हैं : यह तथ्य है अथवा नहीं कि भारत आज दुनियाका सबसे गरीब देश है और यहाँके करोड़ों लोग वर्षके छः महीने बेकार रहते हैं?

यह तथ्य है या नहीं कि भारतको न केवल अनिवार्य रूपसे निःशस्त्र रखकर, बल्कि किसी भी स्वतन्त्र राष्ट्रके सदस्योंको जिन अनेक सुअवसरोंका लाभ उठानेका बराबर अधिकार होता है, उनसे भारतीयोंको वंचित रखकर इस देशको पौरुषहीन बना दिया गया है?

अगर जाँच-पड़ताल करने पर आपको पता चले कि इन दो मामलोंमें इंग्लैंड असफल रहा है — मेरा मतलब सर्वथा असफल होनेसे नहीं, बल्कि बहुत हदतक

१. लॉर्ड इर्विन।

असफल होनेसे है — तो क्या अब वह समय नहीं आ गया है जब उसे अपनी नीतिमें परिवर्तन करना चाहिए।

जैसा कि एक मित्रने कहा और जैसा स्वर्गीय लोकमान्य तिलकने सार्वजनिक मंचसे हजारों बार कहा था, "स्वतन्त्रता और स्वाधीनता भारतके जन्मसिद्ध अधिकार हैं।" मेरे लिए यह समझाना कोई जरूरी नहीं है कि ब्रिटिश शासन अन्ततः ब्रिटिश कुशासन ही साबित हुआ है। मेरे लिए तो इतना ही बता देना काफी है कि चाहे यह शासन सुशासन रहा हो या कुशासन, जिस क्षण भारतके करोड़ों मूक जनोंकी ओरसे स्वतन्त्रताकी माँग की जाती है, उसी क्षण उसे उसको पा लेनेका अधिकार है।

उत्तरमें ऐसा कहनेका कोई मतलब नहीं होगा कि भारतमें कुछ लोग ऐसे हैं जो 'स्वतन्त्रता' और 'स्वाधीनता' शब्द सुनकर डरते हैं। मैं स्वीकार करता हूँ कि हममें से कुछ लोगोंको, जिसमें स्वतन्त्रता देनेके साथ-साथ भारतसे ब्रिटिश संरक्षण — तथाकथित ब्रिटिश संरक्षण — हटा लिया जाये भारतकी वैसी स्वतन्त्रताकी बात करते भी डर लगता है। लेकिन मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि करोड़ों क्षुधार्त्त मानवों और जिन लोगोंमें राजनीतिक जागृति आ गई है उन लोगोंको ऐसा कोई डर नहीं है और वे स्वतन्त्रताके लिए जो जरूरी हो वह कीमत चुकानेके लिए तैयार हैं। लेकिन जबतक कांग्रेसके मौजूदा कार्यकर्त्ता बने हुए हैं और जबतक कांग्रेसकी आस्था अपनी वर्तमान नीतिमें बनी हुई है तबतक इस सम्बन्धमें कुछ निश्चित मर्यादाएँ बनी हुई हैं। अगर भारतकी आजादी दूसरोंकी जान लेकर ही मिलती है — यदि इसे हम शासकोंका खून बहाकर ही पा सकते हैं — तो हम ऐसी आजादी नहीं चाहते। लेकिन अगर उस आजादीको पानेके लिए राष्ट्रके द्वारा, हम सबके द्वारा कोई बलिदान किया जा सकता है तो आप देखेंगे कि जिस आजादीसे हमें इतने दिनोंतक वंचित रखा गया है उसे प्राप्त करनेके लिए हम भारतमें अपने खूनकी नदी बहा देनेमें भी कोई हिचकिचाहट नहीं दिखायेंगे। और, महोदय, जैसा कि आपने याद दिलाया है, मैं यह जानता हूँ कि आपके बीच मैं कोई अजनबी नहीं हूँ, बल्कि मैं आपका साथी-सहयोगी रह चुका हूँ। मैं जानता हूँ कि मुझे इस बातका पूरा आश्वासन प्राप्त है कि जहाँतक आपका और जिनका आप प्रतिनिधित्व करते हैं उनका सम्बन्ध है, आप सब हमेशा हमारे साथ रहेंगे और एक बार फिर यह सिद्ध कर देंगे कि आप भारतके मुसीबतके दोस्त और इसलिए सच्चे दोस्त हैं।

आपने मेरा जो इतना स्वागत-सत्कार किया है, उसके लिए मैं आपको एक बार फिर धन्यवाद देता हूँ। मैं जानता हूँ कि यह सब मेरा सम्मान नहीं है। आपने यह सम्मान उन सिद्धान्तोंको दिया है जो, मुझे आशा है, आपको भी उतने ही प्रिय हैं — बल्कि शायद उससे ज्यादा प्रिय हैं — जितने कि मुझे हैं। मैं यह आशा करता हूँ कि आपकी शुभकामनाएँ और सहायता प्राप्त रही तो मैंने आज जिन सिद्धान्तोंकी घोषणा की है उनसे मैं कभी विचलित नहीं होऊँगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १५-१०-१९३१

९१. भाषण : अल्पसंख्यक-समस्या-सम्बन्धी गोष्ठीमें[1]

लन्दन
२ अक्टूबर, १९३१

श्री गांधीने कांग्रेसकी ओरसे दलित वर्गोंके लिए विशेष प्रतिनिधित्वकी व्यवस्थाका भी विरोध किया। उन्होंने कहा कि मैं तो केवल मुसलमानों और सिखोंके लिए ही एक अनिवार्य बुराईके रूपमें विशेष प्रतिनिधित्वका समर्थन करूँगा। . . .

जान पड़ता है कि श्री गांधीने गोष्ठीको यह चेतावनी दी कि अगर विशेष प्रतिनिधित्व दिया गया तो सभी अल्पसंख्यक समुदायों और वर्गोंको देना पड़ेगा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ३-१०-१९३१

९२. भाषण : महिलाओं द्वारा आयोजित स्वागत-समारोहमें[2]

लन्दन
२ अक्टूबर, १९३१

श्री गांधी पौन घंटा देरसे पहुँचे। इस देरीका कारण बताते हुए उन्होंने कहा कि वे अल्पसंख्यकोंकी समस्यापर विचार करनेके लिए बुलाई गई अनौपचारिक बैठकमें भाग ले रहे थे। उन्होंने कहा :

मैंने अपने सिर बहुत बड़ी जिम्मेदारीका काम ले लिया है, और जिस उद्देश्यको लेकर मैं भारतसे यहाँ आया हूँ, उसीके सम्बन्धमें चल रही बैठकसे बीचमें ही उठकर मैं नहीं आ सकता था।

श्री गांधीने कहा कि भारतमें ७,००,००० गाँव हैं, जो अभावमय परिस्थितियोंमें जीवन व्यतीत करते हैं। कांग्रेसकी एक सबसे अच्छी रचनात्मक प्रवृत्ति यह है कि

१. गोलमेज परिषद्से बाहर परस्पर सलाह-मशविरा करनेके लिए एक अनौपचारिक समझौता समितिकी बैठक बुलाई गई थी। उक्त गोष्ठीसे तात्पर्य इसी समितिसे है। देखिए "अल्पसंख्यक-समस्या समितिकी कार्यवाहीका अंश", १-१०-१९३१।

२. गांधीजी के जन्म-दिवसके अवसरपर उनके स्वागतार्थ वीमेंस इंडियन एसोसिएशन तथा सरोज नलिनी दत्त मेमोरियल एसोसिएशनकी ओरसे दोपहर बाद सेंट्रल य० मे० क्रि० ए० के किंग जॉर्जेज हॉलमें इस समारोहका आयोजन किया गया था। अध्यक्षता श्रीमती ब्रिजलाल नेहरूने की थी। इस अवसरपर गांधीजी को १६५ पौंडकी एक थैली भी भेंट की गई थी।

वह गाँवोंके बेरोजगार स्त्री-पुरुषोंको, जाति, धर्म या वर्णका भेद-भाव किये बिना रोजगार दे रही है। इस समय शायद ५०,००० स्त्रियोंको घर बैठे ही कताईका काम मिल रहा है। स्त्रियों और पुरुषोंको दान-भिक्षा नहीं, बल्कि काम देकर गरीबीको दूर करनेसे बड़ा रचनात्मक कार्य भारतमें और कुछ नहीं है। विशाल ग्रामीण समुदायके पास सालमें छः महीने कोई काम नहीं होता। जब हम इस पुरानी और गहरी बेरोजगारीके विषयमें सोचते हैं तो इंग्लैंडमें मौजूद बेरोजगारी नगण्य जान पड़ती है। मैंने लंकाशायरमें बेरोजगारी देखी है और इस देशमें इस तरहकी बेरोज-गारीसे उत्पन्न होनेवाली कठिनाइयोंको मैं कम नहीं बताना चाहता, लेकिन यह अवश्य कहता हूँ कि भारतकी बेरोजगारी सारी दुनियाकी सहानुभूति और सहायताकी पात्र है। मेरा मतलब आर्थिक सहायताके रूपमें व्यक्त की गई सहानुभूतिसे नहीं है। अगर हम भारतमें लोगोंको काम दे सकें तो फिर पैसेकी कोई कमी ही नहीं रह जायेगी, क्योंकि श्रम तो पैसेका ही एक दूसरा रूप है। इसके बाद श्री गांधीने "भारतके पिछले स्वातन्त्र्य संग्राममें भारतकी महिलाओंके योगदान" की प्रशंसा की।[1]

भारतके पिछले सत्याग्रह आन्दोलनके दौरान महिलाओंने जिस शक्ति, निष्ठा और बलिदानकी भावनाका परिचय दिया, वह चमत्कारसे कुछ भी कम नहीं था। यद्यपि मुझे पूरा विश्वास था कि उनमें अपने कर्त्तव्यका अच्छी तरह पालन करनेकी क्षमता है, किन्तु यह नहीं सोचता था कि उनमें ऐसी जागृत्ति आयेगी जैसी कि आई। इस जागृतिके परिणामस्वरूप देश शायद देखते-ही-देखते एकाएक इतना आगे बढ़ गया जितना आगे बढ़नेमें उसे कई वर्ष लगते। अठारह महीने पूर्व भारत जहाँ था, यदि आज वह उससे बहुत आगे बढ़ गया है तो इसमें महिलाओंका योगदान सबसे अधिक रहा है। मुझे यह देखकर आश्चर्य नहीं होता कि भारतका विशाल महिला-समाज विशेष संरक्षण और विशेष सुविधाओंके लिए छीना-झपटीमें नहीं पड़ना चाहता। महिलाओंने विशेष सुविधाओंकी माँग न करके पुरुषोंके सामने एक सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत किया है।

जो कार्य मुझे सौंपा गया है, उसे सम्पादित करनेमें मुझसे कोई चूक न हो, इसके लिए मैं उनका आशीर्वाद प्राप्त करना चाहूँगा।

[अंग्रेजीसे]

टाइम्स, ३-१०-१९३१ और **अमृतबाजार पत्रिका**, ४-१०-१९३१

१. आगेका अंश **अमृतबाजार पत्रिका** से लिया गया है।

९३. दिगम्बर मुनि

दिगम्बर जैन मुनियोंके सम्बन्धमें मैंने जो अभिप्राय प्रकट किया था उसके सम्बन्धमें कुछ गलतफहमी पैदा हो गई मालूम होती है। मैंने जो लेख[1] लिखा उसका यह मतलब कभी नहीं था कि कोई व्यक्तिगत रूपसे कानूनको अपने हाथमें ले और दिगम्बर मुनियोंको सताये अथवा उनका अपमान करे। मैंने सुना है कि मांडवीमें आजकल तीन दिगम्बर मुनि ठहरे हुए हैं। वे चातुर्मासमें कहीं दूसरी जगह नहीं जा सकते। मांडवीमें जैनोंकी काफी संख्या है। किन्तु मेरे कानोंतक बात पहुँची है कि वहाँ कुछ दूसरे लोग मेरे लेखका आधार लेकर उन मुनियोंको सताते हैं। यदि यह सच है तो कहना चाहिए कि मेरे लेखका अनर्थ हो रहा है। मैंने नीतिके प्रश्नकी चर्चा की थी। उससे किसीको, और उसमें भी दिगम्बर मुनियोंको, कष्ट पहुँचे, यह मैं कैसे चाहूँगा? मैं आशा करता हूँ कि कोई व्यक्ति उन्हें या उन-जैसे मुनियोंको नहीं सतायेगा। यह टिप्पणी मैं शिमलाकी आखिरी मुलाकातसे पहले लिखना चाहता था, किन्तु दूसरे जरूरी काम और दौड़-धूपमें लिखना रह गया, इसका मुझे दुःख है। मैं आशा करता हूँ कि मेरे मूल लेखका आधार लेकर किसीने भी कोई उपद्रव न किया होगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ४-१०-१९३१

९४. वक्तव्य : खातेदारोंके मामलेके सम्बन्धमें[2]

[लन्दन
५ अक्टूबर, १९३१के पूर्व][3]

बारडोली और बोरसदमें लगान-वसूलीके सम्बन्धमें प्रारम्भसे ही साफ-साफ ऐसा समझा जाता रहा है कि सविनय अवज्ञासे प्रभावित खातेदार उतना ही लगान देंगे जितना वे पैसा उधार लिये बिना दे सकते हैं। खेड़ाके कलक्टर श्री पेरी और उनके उत्तराधिकारी श्री भद्रपुर और सूरतके कलक्टर श्री कोठावालाके बीच हुई बातचीतमें यह

१. देखिए खण्ड ४७, पृष्ठ १२०-२२।

२. बारडोली-जाँचमें जिन अनेक मुद्दोंके सम्बन्धमें फैसला होना था, उनमें से एक यह था कि खातेदारोंसे वसूल किया गया लगान क्या उससे अधिक था जितना कि उनसे उस हालतमें वसूल किया जाता जब, इन गाँवोंके सम्बन्धमें भी वही मापदण्ड लागू किया जाता जो दूसरे गाँवोंके सम्बन्धमें लागू किया गया था। देखिए खण्ड ४६ भी।

३. यह ५ अक्टूबर, १९३१की तिथि-पंक्तिके अन्तर्गत छपा था।

बात बार-बार स्पष्ट की गई थी। उनके साथ हुए पत्र-व्यवहारसे इस कथनकी पुष्टि होती है। जहाँतक जाँच-अधिकारीको विचारार्थ सौंपे विषयोंका सम्बन्ध है, मैंने साफ-साफ यही समझा है कि उसमें जिस मापदण्डका उल्लेख है उसका मतलब पैसा उधार लिये बिना अदायगीकी क्षमतासे ही है।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ८-१०-१९३१

९५. भाषण : अल्पसंख्यक-समस्या-सम्बन्धी गोष्ठीमें

लन्दन
५ अक्टूबर, १९३१

अल्पसंख्यकोंसे सम्बन्धित समस्यापर विचार करनेके लिए बुलाई गई गोष्ठीकी कार्यवाही दोपहर बाद ३ बजे शुरू हुई और ५.४५ तक भी चल ही रही थी। ऐसा समझा जाता है कि अल्पसंख्यक-समुदायोंकी पूरी मांगें ठीक-ठीक सामने आ जायें, इस खयालसे सभी समुदायोंके प्रतिनिधियोंने अपनी-अपनी स्थितिकी एक मोटी रूपरेखा प्रस्तुत की और जिन प्रश्नोंपर विचार किया गया उनका सम्बन्ध मुख्यतः प्रतिनिधित्वके अनुपात और वर्ग-विशेषको अनुपातसे अधिक सीटें देने और सीटोंके आरक्षणसे था।

चर्चाके दौरान अल्पसंख्यक-समस्याके केन्द्र-बिन्दुके रूपमें हिन्दू-मुस्लिम प्रश्नके हल किये जानेको बड़ा महत्त्व दिया गया। बहससे एक ऐसी धारणा बनी कि अगर हिन्दू-मुस्लिम समस्याका निबटारा हो जाये तो अन्य अल्पसंख्यक समुदायोंकी माँगोंका निबटारा अपने-आप हो जायेगा।

खबर है कि इस अनौपचारिक समितिकी बैठकके अन्तमें, जब विभिन्न अल्प-संख्यक-समुदायोंके प्रतिनिधि पृथक् प्रतिनिधित्व और प्रतिनिधित्वके अनुपातके सम्बन्धमें अपने-अपने दावे प्रस्तुत कर चुके, श्री गांधीने साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व और पृथक् प्रतिनिधित्वके खिलाफ अपना दृष्टिकोण पेश किया।

समाचार है, श्री गांधीने कहा कि अगर सभी दावोंको ज्योंका-त्यों सही मान लिया जाये तो यह तो अवास्तविकतापूर्ण स्थिति होगी। दावोंके इस ढेरके बीच तो मैं अपने-आपको जकड़ा हुआ महसूस करता हूँ। यद्यपि मैं कोई बेकार नहीं बैठा रहा हूँ, फिर भी अबतक मुझे प्रकाश नहीं दिखाई दिया है, लेकिन अगर दिखाई दिया तो उसके अनुसार मैं काम करूँगा।

खबर है कि श्री गांधीने ऐसा विश्वास प्रकट किया कि वे इस काममें सहायता देनेमें सक्षम हैं, **लेकिन साथ ही ऐसा भी सुना गया है कि उन्होंने गोष्ठीमें भाग लेनेवाले लोगोंको इस बातके लिए आमन्त्रित किया कि** वे जरूरी समझें तो दूसरा

अध्यक्ष चुन लें, क्योंकि उन्हें यह कहनेमें किसी प्रकारका संकोच नहीं होगा कि उन्होंने कोशिश करके देख लिया और वे असफल रहे हैं।

खबर है कि श्री गांधीने समझौतेकी भावनाकी आवश्यकतापर जोर देते हुए गोष्ठीमें भाग लेनेवाले सदस्योंसे कहा कि जरूरत हो तो आप लोग ज्यादा समय भी ले सकते हैं, लेकिन साथ ही उन्होंने साफ-साफ कहा कि इस विषयमें अपनी बुनियादी मान्यताओंमें कोई परिवर्त्तन करनेको में तैयार नहीं हूँ और यद्यपि कांग्रेस भारतको एक महान् राष्ट्रके रूपमें देखनेकी इच्छुक है, फिर भी वह कभी भी साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्वको स्वीकार नहीं करेगी और अगर वह पृथक् प्रतिनिधित्वको मंजूर कर लेती है तो कांग्रेस कांग्रेस नहीं रह जायेगी।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ६-१०-१९३१

९६. पत्र : ई० डॉल्बी शेल्टनको

६ अक्टूबर, १९३१

प्रिय मित्र,

पत्र पाकर बड़ी प्रसन्नता हुई। उसे पढ़कर मुझे वेंटनरमें आपके घर बिताये आनन्दपूर्ण दिनोंका स्मरण हो आया।[1]

मैंने 'वेजिटेरियन न्यूज' नहीं देखा है।[2] मैं तो जन्मसे ही निरामिषाहारी था, लेकिन जवानीके दिनोंमें मूर्खतावश कुसंगतिमें पड़कर कुछ दिनोंके लिए उसका त्याग कर दिया था। लन्दन आने पर जब मैंने श्री सॉल्टका लेख पढ़ा तो पक्का निरामिषाहारी बन गया।

बात स्पष्ट हो गई न?

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८८९)से।

१. **आत्मकथा**में ऐसा उल्लेख मिलता है कि एक बार गांधीजी वेंटनरमें किसी अन्नाहारी परिवारमें ठहरे थे। यहाँ तात्पर्य शायद उसीसे है। देखिए खण्ड ३९, पृष्ठ ५२।

२. गांधीजी यहाँ उक्त पत्रिकाके हालके अंकके सम्बन्धमें कह रहे हैं। वैसे तो वे उससे परिचित थे और उन्होंने १८९०-९१ में उसमें कुछ लेख भी लिखे थे; देखिए खण्ड १।

९७. भाषण : फ्रेंड्स ऑफ इंडियाकी सभामें[1]

लन्दन

[७ अक्टूबर, १९३१][2]

जहाँतक मानवीय प्रयत्नोंका सम्बन्ध है, लगता है, मैं विफल हो रहा हूँ। मुझपर ऐसी जिम्मेदारियाँ डाली जा रही हैं जिन्हें सँभालनेमें मैं असमर्थ हूँ। यह काम बहुत कठिन है और हो सकता है, इसके अन्तमें आगे कुछ भी करने को न रह जाये और इन प्रयत्नोंका कोई परिणाम न निकले। लेकिन इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। ईमानदारीसे किया कोई भी सच्चा प्रयत्न कभी विफल नहीं हुआ है। अपने कार्यके सम्बन्धमें यदि मुझे पस्त करनेवाली जबरदस्त कठिनाइयोंका सामना करना पड़ रहा है तो कांफरेंस और कमेटियोंके बाहर मुझे आनन्द और उल्लास भी प्राप्त हो रहा है। ऐसा जान पड़ रहा है कि सामान्य लोग स्थितिको सहज ही समझ लेते हैं। यद्यपि मैं उनके लिए बिलकुल अजनबी हूँ, फिर भी वे मेरी और मेरे उद्देश्यकी सफलताकी कामना करते हैं। वे जानते हैं कि मैं और मेरा उद्देश्य एक ही हैं और इसलिए वे मुस्कराते हुए और मेरी सफलताके लिए शुभकामनाएँ करते हुए मुझसे मिलते हैं। छोटे-बड़े सभी ऐसा ही करते हैं और इसलिए मुझे यह सोचकर राहत मिलती है कि जबतक मेरा उद्देश्य सत्यपरक और उसे प्राप्त करनेके साधन पवित्र और अहिंसामय हैं तबतक निराशाकी कोई बात नहीं है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २२-१०-१९३१

९८. भाषण : अल्पसंख्यक-समस्या समितिकी बैठकमें

लन्दन

२ अक्टूबर, १९३१

प्रधान मन्त्रीजी और मित्रो,

मुझे यह घोषणा करते हुए गहरा खेद और उससे भी गहरी लज्जा अनुभव हो रही है कि विभिन्न दलोंके प्रतिनिधियोंके साथ अनौपचारिक बातचीतमें मैं साम्प्रदायिक प्रश्नका कोई सर्वसम्मत समाधान निकालनेमें पूर्णतया असफल रहा हूँ। एक मूल्यवान सप्ताह यों ही बेकार गया, इसके लिए, प्रधान मन्त्रीजी, मैं आपसे और अन्य

१. महादेव देसाईके "लंदन लेटर" (लन्दनका पत्र) से उद्धृत।

२. महादेव देसाई कहते हैं कि यह सभा अल्पसंख्यक-समस्या-समितिकी उस बैठकसे एक दिन पूर्व हुई थी जिसमें गांधीजी ने साम्प्रदायिक समस्याके सम्बन्धमें कोई समझौता करा सकनेमें अपनी विफलताकी घोषणा की थी।

सहयोगियोंसे क्षमा चाहता हूँ। मुझे तसल्ली सिर्फ इस बातसे है कि इस बातचीतको चलानेका भार जब मैंने लेना स्वीकार किया था तब भी मैं यह जानता था कि सफलताकी बहुत आशा नहीं है। इससे भी अधिक तसल्ली इस बातसे है कि किसी समाधानपर पहुँचनेके लिए मैंने अपने जानते कोई भी कोशिश उठा नहीं रखी

लेकिन यह कहना कि बातचीतका असफल रहना हमारे लिए बहुत ही लज्जाकी बात है, पूरी सचाई नहीं है। असफलताके कारण भारतीय प्रतिनिधि-मण्डलके गठनमें ही निहित थे। हममें से प्रायः सभी, हम जिन दलों या समुदायोंके प्रतिनिधि समझे जाते हैं, उनके निर्वाचित प्रतिनिधि नहीं हैं। हम यहाँ सरकार द्वारा मनोनीत होकर आये हैं, और जिनकी उपस्थिति एक सर्वसम्मत समाधानके लिए अत्यन्त आवश्यक थी, वे भी यहाँ आपको नहीं मिलेंगे। इसके अलावा, आपकी यदि अनुमति हो तो मैं यह भी कहूँ कि अल्पसंख्यक-समितिकी बैठकके लिए यह समय उपयुक्त नहीं था। इसमें वास्तविकताकी भावनाका अभाव है, क्योंकि हमें यह नहीं मालूम कि हमें क्या मिलनेवाला है। यदि हमें निश्चित रूपसे यह मालूम होता कि जो-कुछ हम चाहते हैं वह हमें मिलनेवाला है तो हम उसे इस अपराधपूर्ण वाक्-कलहमें उलझकर गँवा देनेसे पहले पचास बार सोचते। लेकिन यदि हमसे यह कहा जाये कि उसका मिलना साम्प्रदायिक गुत्थीका एक सर्वसम्मत समाधान निकालनेकी इस प्रतिनिधि-मण्डलकी योग्यतापर निर्भर करेगा तो परिणाम जो-कुछ हुआ वही होगा। वह समाधान स्वराज्यके संविधानका शिखर हो सकता है, उसका आधार नहीं हो सकता, यदि और किसी कारण नहीं तो केवल इस कारण कि विदेशी आधिपत्यने हमारे मतभेदोंको अगर पैदा नहीं किया तो दृढ़ तो किया ही है। मुझे इसमें रत्ती-भर भी सन्देह नहीं है कि साम्प्रदायिक मतभेदोंका हिम-शैल स्वतन्त्रताके सूर्यकी गर्मीसे गल जायेगा।

इसलिए, मैं यह सुझानेकी धृष्टता करता हूँ कि अल्पसंख्यक-समिति अनिश्चित कालके लिए स्थगित कर दी जाये और संविधानके मूल सिद्धान्त शीघ्रातिशीघ्र तैयार किये जायें। इस बीच साम्प्रदायिक समस्याका वास्तविक समाधान खोजनेका अनौपचारिक कार्य जारी रहना चाहिए और जारी रहे। अलबत्ता वह संविधानकी रचनाकी प्रगतिमें बाधक नहीं बनना चाहिए और उसे बाधक नहीं बनने देना चाहिए। हमें अपना ध्यान उधरसे हटाकर, जो ढाँचा हमें खड़ा करना है, उसके मुख्य भागपर केन्द्रित करना चाहिए।

मुझे समितिको यह बतानेकी आवश्यकता नहीं है कि मेरी असफलताका अर्थ एक सर्वसम्मत समाधानकी समस्त आशाका अन्त नहीं है। मेरी असफलताका अर्थ मेरी पूर्ण पराजय भी नहीं है। इस तरहका कोई शब्द मेरे भाषा-कोशमें है ही नहीं। मेरी इस स्वीकृतिका अर्थ केवल उस विशेष प्रयासकी असफलता है जिसके लिए मैंने एक सप्ताहका समय माँगा था और आपने उदारतापूर्वक दे दिया था।

मेरा विचार इस असफलताको सफलताकी सीढ़ीकी तरह इस्तेमाल करनेका है, और मैं आप सबसे भी ऐसा ही करनेकी प्रार्थना करता हूँ। लेकिन अगर गोलमेज परिषद्का कार्य समाप्त होनेतक भी समझौतेकी हमारी सारी कोशिश बेकार ही

रहे, तो म यह सुझाव रखूँगा कि प्रत्याशित संविधानमें एक धारा इस आशयकी जोड़ दी जाये कि एक न्यायाधिकरण नियुक्त किया जायेगा, जो सभी दावोंकी जाँच करेगा और उन सभी मुद्दोंपर, जो सुलझ नहीं पाये हैं, अपना अन्तिम निर्णय देगा।

न ही इस समितिको यह सोचना चाहिए कि अनौपचारिक बातचीत चलानेके लिए जो समय दिया गया था वह बिलकुल बेकार गया है। आपको यह जानकर खुशी होगी कि बहुत-से मित्र, जो इस प्रतिनिधि-मण्डलके सदस्य नहीं हैं, इस प्रश्नपर ध्यान दे रहे हैं। इनमें मैं सर जॉफरे कॉर्बेटका उल्लेख करना चाहूँगा। उन्होंने पंजाबके पुर्नविभाजनकी एक योजना प्रस्तुत की है। यद्यपि वह स्वीकृत नहीं हुई है, पर, मेरे खयालमें, वह इस लायक है कि उसका अच्छी तरह अध्ययन किया जाये। मैं सर जॉफरेसे प्रार्थना कर रहा हूँ कि वे कृपया उसे विस्तृतरूपमें प्रस्तुत कर सदस्योंमें वितरित कर दें। हमारे सिख सहयोगियोंने एक और योजना प्रस्तुत की है। वह भी कमसे-कम इस लायक तो है ही कि उसका अध्ययन किया जाये। सर ह्यूबर्ट कार ने कल रात एक मौलिक और अनोखा सुझाव रखा कि पंजाबमें विधान-मण्डलके दो सदन स्थापित किये जायें — निम्न सदन मुसलमानोंके दावेको पूरा करनेके लिए और ऊपरी सदन सिखोंके दावेको पूरा या लगभग पूरा करनेके लिए। यद्यपि मेरा दो सदनोंवाले विधान-मण्डलमें विश्वास नहीं है, फिर भी सर ह्यूबर्टके सुझावने मुझे बहुत आकर्षित किया है, और मैं उनसे प्रार्थना करूँगा कि जिस उत्साहके साथ उन्होंने अनौपचारिक विचार-विमर्शको सुना है और उसमें योग दिया है — जिसके लिए मैं उनका आभारी हूँ — उसी उत्साहके साथ वे सुझावको और आगे बढ़ायें।

अन्तमें, क्योंकि इस विचार-विमर्शमें मेरी उपस्थितिका एकमात्र कारण यह है कि मैं भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसका प्रतिनिधित्व करता हूँ, इसलिए उसकी स्थिति मुझे स्पष्ट कर देनी चाहिए। ऊपरसे देखनेमें स्थिति यद्यपि कुछ और ही लगती है, विशेषकर इंग्लैंडमें, पर कांग्रेसका यह दावा है कि वह पूरे राष्ट्रका प्रतिनिधित्व करती है, और उन लाखों मूक लोगोंका तो बिलकुल निश्चितरूपसे प्रतिनिधित्व करती है जिनमें असंख्य अस्पृश्य शामिल हैं, जो अपेक्षाकृत अधिक दलित और उत्पीड़ित हैं और जिनमें एक तरहसे पिछड़ी जातियोंके नामसे जाने जानेवाले वर्ग भी शामिल हैं, जो और भी अधिक अभागे और उपेक्षित हैं।

कांग्रेसकी स्थिति संक्षेपमें यह है। इस विषयपर कांग्रेसका प्रस्ताव मैं आपके आगे पढ़ता हूँ।

> **कांग्रेसने, आरम्भसे ही, विशुद्ध राष्ट्रीयताको अपना आदर्श रखा है, उसकी प्राप्तिमें वह चाहे कितनी ही असफल क्यों न रही हो। साम्प्रदायिक बाधाओंको तोड़नेके लिए वह प्रयत्न करती रही है। निम्नलिखित लाहौर प्रस्ताव राष्ट्रीयताकी ओर उसकी प्रगतिका चरम बिन्दु था:**
>
> **"नेहरू रिपोर्टकी अवधि बीत जानेके कारण वह समाप्त हो गई है, इसलिए साम्प्रदायिक प्रश्नोंके सम्बन्धमें कांग्रेसकी नीति घोषित करना आवश्यक है:**
>
> **कांग्रेसका यह विश्वास है कि स्वतन्त्र भारतमें साम्प्रदायिक प्रश्न केवल**

राष्ट्रीय नीतियोंसे ही सुलझाये जा सकते हैं। परन्तु क्योंकि नेहरू रिपोर्टमें सुझाये गये साम्प्रदायिक प्रश्नोंके समाधानपर सिखोंने खासतौरपर और मुसलमानों व अन्य अल्पसंख्यकोंने आमतौरपर, असन्तोष प्रकट किया है, इसलिए यह सम्मेलन सिखों, मुसलमानों और अन्य अल्पसंख्यकोंको यह विश्वास दिलाता है कि भावी संविधानमें उन प्रश्नोंका कोई भी ऐसा समाधान, जो सम्बन्धित पक्षोंको पूर्ण सन्तोष प्रदान न करता हो, कांग्रेसको स्वीकार नहीं होगा।"

अतः कांग्रेसके लिए साम्प्रदायिक समस्याका कोई साम्प्रदायिक समाधान पेश करना सम्भव नहीं है। लेकिन राष्ट्रके इतिहासकी इस नाजुक घड़ीमें ऐसा महसूस किया गया कि कार्य-समितिको देशके आगे स्वीकृतिके लिए कोई ऐसा समाधान रखना चाहिए, जो चाहे देखनेमें साम्प्रदायिक लगता हो, पर यथा-सम्भव बहुत-कुछ राष्ट्रीय हो और सम्बन्धित समुदायोंको आमतौरपर स्वीकार हो। इसलिए कार्य-समितिने, पूर्ण और मुक्त विचार-विमर्शके बाद, सर्वसम्मतिसे निम्नलिखित योजना पास की है:

१. (क) संविधानके मूल अधिकारोंसे सम्बन्धित अनुच्छेदमें सम्बद्ध समुदायोंके लिए उनकी संस्कृतियों, भाषाओं, लिपियों, शिक्षा, अपनी इच्छानुसार किसी भी धर्मको मानने और उसका आचरण करने तथा धर्मादायोंकी रक्षाकी गारन्टी रहेगी;

(ख) वैयक्तिक कानूनोंकी रक्षाके लिए संविधानमें विशिष्ट व्यवस्थाएँ रहेंगी;

(ग) विभिन्न प्रान्तोंमें अल्पसंख्यक समुदायोंके राजनीतिक और अन्य अधिकारोंकी रक्षा संघीय सरकारके अधिकार-क्षेत्रका विषय होगी।

२. सभी बालिग पुरुषों और स्त्रियोंको मताधिकार प्राप्त होगा।

और फिर इसपर एक टिप्पणी है:

कार्य-समिति कांग्रेसके कराची प्रस्ताव द्वारा बालिग मताधिकारके लिए प्रतिबद्ध है और किसी और तरहके मताधिकारका स्वागत नहीं कर सकती। फिर भी, कुछ क्षेत्रोंमें मौजूद आशंकाओंको ध्यानमें रखते हुए, समिति यह स्पष्ट कर देना चाहती है कि मताधिकार, हर हालतमें, एक-समान होगा और इतना व्यापक होगा कि प्रत्येक समुदायका आबादीमें जो अनुपात है वह निर्वाचक-सूचीमें प्रतिबिम्बित होगा।

३. (क) भारतके भावी संविधानमें संयुक्त चुनाव पद्धति प्रतिनिधित्वका आधार होगी; (ख) हिन्दुओंके लिए सिन्धमें, मुसलमानोंके लिए असममें, सिखोंके लिए पंजाब और पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तमें और हिन्दुओं व मुसलमानोंके लिए हर उस प्रान्तमें, जहाँ उनकी संख्या आबादीके २५ प्रतिशत भागसे कम है, संघीय और प्रान्तीय विधानमण्डलोंमें, आबादीके आधारपर, सीटें सुरक्षित रहेंगी और उन्हें अतिरिक्त सीटोंके लिए चुनाव लड़नेका अधिकार होगा।

४. नियुक्तियाँ निर्दलीय लोकसेवा आयोगों द्वारा होंगी, जो न्यूनतम योग्यताएँ निर्धारित करेंगे और जो लोकसेवाकी कार्य-कुशलताका और सभी समुदायोंको देशकी लोकसेवाओंमें उचित हिस्सा देनेके लिए बराबरीका अवसर देनेके सिद्धान्तका समुचित खयाल रखेंगे।

५. संघीय और प्रान्तीय मन्त्रिमण्डलोंके निर्माणमें अल्पसंख्यक समुदायोंके हित रूढ़ि द्वारा मान्य होंगे। पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त और बलूचिस्तानमें सरकार और प्रशासनका रूप अन्य प्रान्तों-जैसा ही होगा।

६. सिन्धके लोग यदि एक पृथक् प्रान्तके वित्तीय भारको वहन करनेको तैयार होंगे तो सिन्धको एक पृथक् प्रान्त बना दिया जायेगा।

७. देशका भावी संविधान संघीय होगा। आगे और जाँचसे यदि यह चीज भारतके सर्वोच्च हितोंके विरुद्ध सिद्ध नहीं हुई, तो अवशिष्ट अधिकार संघकी इकाइयोंके पास रहेंगे।

कार्य-समितिने पूर्वोक्त योजना खालिस साम्प्रदायिकता और खालिस राष्ट्रीयतापर आधारित सुझावोंके बीच एक समझौतेके तौरपर स्वीकार की है। कार्य-समितिको जहाँ एक ओर यह आशा है कि पूरा राष्ट्र इस योजनाका समर्थन करेगा, वहाँ दूसरी ओर वह उन लोगोंको, जो चरम-पंथी विचारोंके हैं और इसे स्वीकार नहीं कर सकते, यह विश्वास दिलाती है कि यदि कोई अन्य योजना सभी सम्बन्धित पक्षोंको मान्य होगी तो समिति उसे खुशीसे, बिना-किसी शर्तके स्वीकार कर लेगी, क्योंकि वह लाहौर प्रस्ताव द्वारा इस बातके लिए वचनबद्ध है।[1]

यह है कांग्रेसका प्रस्ताव। परन्तु यदि कोई राष्ट्रीय समाधान सम्भव न हो और कांग्रेसकी योजना किसीको स्वीकार न हो तो किसी ऐसी अन्य युक्तियुक्त योजनाका समर्थन करना, जो सम्बन्धित पक्षोंको स्वीकार हो, मेरे लिए निषिद्ध नहीं है। इसलिए कांग्रेसकी स्थिति इस प्रश्नपर सम्बन्धित पक्षोंके विचारोंको यथासम्भव ज्यादासे-ज्यादा मान लेनेकी रही है। जहाँ वह सहायता नहीं दे सकती वहाँ वह रोड़े नहीं अटकायेगी। यह बतानेकी कोई जरूरत नहीं है कि कांग्रेस गैरसरकारी पंच-फैसलेकी किसी भी योजनाका पूरे दिलसे समर्थन करेगी। यह कहा गया लगता है कि मैं विधानमंडलमें अस्पृश्योंके प्रतिनिधित्वके विरुद्ध हूँ। यह सचाईका मजाक है। जो-कुछ मैंने कहा है, और जिसे फिर दोहराना जरूरी है, वह यह है कि मैं उनके विशेष प्रतिनिधित्वके विरुद्ध हूँ। मुझे यकीन है कि इससे उनकी कोई भलाई नहीं हो सकती, और बहुत हानि हो सकती है। परन्तु कांग्रेस बालिग मताधिकारके लिए वचनबद्ध है। इसलिए, उनमें से लाखोंके नाम मतदाता-सूचीमें आ सकते हैं। अस्पृश्यता क्योंकि तेजीसे समाप्त हो रही है, इसलिए यह सोचा नहीं जा सकता कि इन मतदाताओं द्वारा मनोनीत व्यक्तियोंका और लोग बहिष्कार कर सकते हैं। लेकिन इन लोगोंको,

१. देखिए खण्ड ४७, पृष्ठ १५७-८।

विधानमंडलोंमें उनके प्रतिनिधियोंका चुनाव हो, उससे कहीं ज्यादा आवश्यकता सामाजिक और धार्मिक अत्याचारसे सुरक्षाकी है। रूढ़ियोंने, जो अकसर कानूनसे भी अधिक शक्तिशाली होती हैं, इन्हें इतना नीचे गिरा दिया है कि हर विचारशील हिन्दूको उसपर लज्जा और पश्चात्ताप अनुभव होना चाहिए। इसलिए मैं एक ऐसा बहुत ही कठोर कानून बनाना चाहूँगा जो तथाकथित उच्च जातियों द्वारा मेरे इन देशवासियोंपर होनेवाले सभी तरहके विशेष अत्याचारको अपराध करार देगा। हमें ईश्वरको धन्यवाद देना चाहिए कि हिन्दुओंका विवेक जाग रहा है, और अस्पृश्यता शीघ्र ही हमारे पापपूर्ण अतीतका एक अवशेष-मात्र रह जायेगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबल कांफरेंस (सेकेंड सेशन) : प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐंड माइनॉरिटीज़ कमिटी, पृष्ठ ५३०-१

९९. लॉर्ड इर्विनको लिखे पत्रका अंश

८ अक्टूबर, १९३१

आपने मेरे प्रथम प्रयत्नोंकी विफलताका समाचार दुःखी मनसे देखा होगा। लेकिन मैं हताश नहीं हूँ। प्रयत्न जारी रखूँगा। आपको दिया अपना यह वचन फिर दोहराता हूँ कि हमारे बीच जिन महत्त्वपूर्ण प्रश्नोंपर बातचीत हुई थी उनके सम्बन्धमें निर्णय लेनेसे पहले आपसे मुलाकातका समय लेकर अपनी कठिनाइयाँ आपके सामने अवश्य रखूँगा।

[अंग्रेजीसे]
हैलिफैक्स, पृष्ठ ३१७

१००. भाषण : ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैंडकी मिशनरी संस्थाओंके सम्मेलनमें[1]

लन्दन
८ अक्टूबर, १९३१

सभा कुछ क्षणके मौनसे आरम्भ हुई। रेवरेंड डब्ल्यू० पैटन ने, जो अध्यक्ष थे, गांधीजी का स्वागत किया और मिशनरी संस्थाओंकी ओरसे इस बातकी सराहना की कि गांधीजी कामके जबरदस्त दबावके बीच भी उनसे मिलनेके लिए समय निकाल पाये हैं।

गांधीजी ने कहा कि उन्हें वहाँ आकर और ऐसे लोगोंसे मिलकर, जो उपस्थित श्रोताओंसे कहीं अधिकका प्रतिनिधित्व करते हैं, प्रसन्नता हुई है और फिर वे बोले :

१. सम्मेलन चर्च मिशनरी हाउस, ६ सैलिसबरी स्क्वेयरमें हुआ था और रेवरेंड डब्ल्यू० पैटन उसके अध्यक्ष थे। सभा अन्तरंग थी और उसकी जो रिपोर्ट समाचारपत्रोंके लिए जारी की गई उसमें केवल इतना ही कहा गया था कि हममें मैत्रीपूर्ण विचार-विमर्श हुआ है।

मैं आपके आगे आज इस तरह उपस्थित हो रहा हूँ जैसे कोई कैदी अदालतके आगे उपस्थित होता है। पर मेरे जो जेलर हैं वे दोस्त हैं। हमारे बीच कोई दीवार नहीं होनी चाहिए और किसी भी पक्षको अपने मनमें कोई शिकायत नहीं रखनी चाहिए। युवावस्थासे ही दुनिया-भरके मिशनरियोंके साथ मेरे बहुत ही मैत्री-पूर्ण सम्बन्ध रहे हैं और दक्षिण आफ्रिकामें तो मेरा कुछ उच्च कोटिके ईसाई मिश-नरियोंके साथ घनिष्ठ सम्पर्क था। मैं बहुत ही नियमित रूपसे आपके गिरजाघरोंमें जाता रहा हूँ और अन्तरंग प्रार्थना-सभाओंमें भी भाग लेता आया हूँ, और जो विचार मैं अब व्यक्त करनेवाला हूँ वे मैंने तब भी व्यक्त किये थे।

आपके और मेरे बीच कुछ अस्थायी गलतफहमी पैदा हो गई थी। अखबारवाले जब सार्वजनिक नेताओंके मामलोंकी टोह लेते हैं तो, कभी-कभी दुर्भावनावश और कभी अनजाने ही, वे उन्हें गलत रूपमें पेश करते हैं।

जिम्मेदार लोगोंको मेरे बहुत ही कटु अनुभवसे यह सीख लेना चाहिए कि रिपोर्टर जो कहें उसपर आमतौरपर विश्वास नहीं करना चाहिए। मिशनोंके प्रति मेरे रुखके बारेमें हालमें ही जो रिपोर्ट निकली थी वह अनजानमें हुई गलतबयानी थी, क्योंकि उसके स्रोत और उस रिपोर्टरका मुझे पता चल गया। मैं उस समय थका हुआ था और बहुत तड़के सैरको निकला था। रिपोर्टर मेरे साथ चल रहा था और मुझपर सवालोंकी बौछार कर रहा था। वह कोई नोट्स नहीं ले रहा था और हम बहुत तरहके विषयोंपर बातचीत कर रहे थे। जब मैंने आलोचना और व्यंग्योक्तियाँ देखीं तो मैं तुरन्त समझ गया कि उस रिपोर्टरने, यद्यपि वह मित्र था, जो-कुछ लिखा है, मुझे उसका फल भोगना होगा।

एक सार्वजनिक कार्यकर्ता और तीस सालका अनुभव रखनेवाले एक गैर-पेशेवर पत्रकारकी हैसियतसे मैं यह बात कह रहा हूँ। सच, पूरा सच और केवल सच कहनेमें जो कठिनाई है, और अपने विरोधियोंके साथ न्याय करनेमें जो भारी कठिनाई है, और उससे भी अधिक तथ्योंको ढंगसे रखनेमें जो कठिनाई है, उसे मैं जानता हूँ। रिपोर्टर मेरे बारेमें जो-कुछ कहते हैं, उसपर आप आमतौरपर यकीन मत कीजिए। उनके बयानोंके बारेमें यदि आपको कोई सन्देह हो तो आप बयान मेरे पास भेजिए और उनके बारेमें मुझसे पूछिए। मेरे पास भारतके सभी भागोंसे और इग्लैंड और अमेरिकासे पत्र आये हैं, जिनमें मुझसे पूछा गया है कि क्या यह सच है कि मैं समस्त मिशनरी गति-विधिपर और खास कर धर्म-परिवर्तनपर प्रतिबन्ध लगाना चाहूँगा। मेरा जो आशय था वह इससे बिलकुल उलटा था।

मैं किसी भी तरहकी जबरदस्तीका समर्थन नहीं कर सकता। मिशनरी गति-विधिपर प्रतिबन्ध लगाने या दूसरोंके धार्मिक विश्वासोंमें हस्तक्षेप करनेके लिए मैं कोई कानून चाहता हूँ, इस तरहकी बातकी कल्पना तक नहीं की जा सकती।

लोगोंको भाषण और लेखों द्वारा, उनकी बुद्धि और भावनाको उकसाकर, और उन्हें यह समझाकर कि उनके पूर्वजोंका धर्म बुरा है, अपने धर्ममें दीक्षित करनेसे, मेरे खयालमें, मानव-सेवाकी सम्भावनाएँ सीमित हो जाती हैं। मेरा यह

विश्वास है कि संसारके सभी बड़े धर्म, कमोबेश, सच्चे हैं और वे हमारे पास भगवान्से आये हैं। परन्तु क्योंकि वे हमारे पास मनुष्यके माध्यमसे आये हैं, इसलिए उनमें दोष मिल गये हैं। यह विश्वास रखनेके कारण, मेरी यह भी धारणा है कि कोई भी धर्म सर्वथा पूर्ण नहीं है। भगवान्के यहाँ तो कुछ भी अपूर्ण नहीं है, परन्तु जैसे ही वह मनुष्यके माध्यमसे आता है, उसमें बराबर परिवर्तन और विकार आने लगता है। सत्यका अन्वेषक इस सम्भावनाको अत्यन्त विनम्रतापूर्वक स्वीकार कर लेता है। मैंने देखा है कि बोला गया शब्द सत्यकी प्रगतिको रोकता है, क्योंकि उसमें विचार सीमित हो जाता है। कोई भी व्यक्ति विचारको शब्दोंमें पूर्णतम अभिव्यक्ति नहीं दे सका है। विचार अपनी प्रकृतिसे ही असीम और अनन्त है।

प्रार्थना करनेवालेका यह विश्वास होता है कि ईश्वर रहस्यात्मक ढंगसे काम करता है, और वह यह चाहता है कि जिस सत्यको उसने स्वयं देखा है वह समस्त संसारको प्राप्त हो। वह औरोंमें बँट जाये, इसके लिए वह प्रार्थना करता है। और वह सत्य आगे बढ़ता है; उसके पंख लग जाते हैं।

मैं एक उपमा दूँ, जिसे देते मैं कभी थकता नहीं हूँ, और आशा है, आप मुझे इसके लिए क्षमा कर देंगे। धर्म गुलाबकी तरह है। वह अपनी सुगंध छोड़ता है, जो हमें चुम्बककी तरह आकर्षित करती है और हम बरबस उसकी ओर खिंच जाते हैं। धार्मिक संसर्गकी सुगंध गुलाबकी सुगंधसे अधिक तीव्र होती है। धर्म-परिवर्तनके सम्बन्धमें इसीलिए मेरा ऐसा विचार है। जब हमें यह सन्तोष हो जाये कि हमने ईश्वरको पा लिया है और उसकी वाणी हमने सुनी है, तो हममें उस रहस्यको बाँटनेकी इच्छा होना अच्छा और उपयुक्त ही है। परन्तु जिस तरह ईश्वरकी वाणी हमारे पास रहस्यात्मक ढंगसे आई है, हमारी यह रहस्यात्मक प्राप्ति भी हमारे पाससे दूसरोंकी ओर उसी तरह जानी चाहिए।

मिशनरी कार्यके इस अंशकी जहाँ मैं आलोचना करता हूँ, वहाँ मैं स्वेच्छासे यह भी स्वीकार करता हूँ कि मिशनोंने परोक्ष रूपसे भारतकी भलाई की है। इसमें जरा भी सन्देह नहीं है। यदि मुझपर ईसाई धर्मका प्रभाव न पड़ा होता तो अपने सामाजिक कार्योंमें से कुछको तो मैंने कभी हाथ लगाया ही न होता। मैं खुशीके साथ यह कहता हूँ कि बाल-विवाहके प्रति मेरी तीव्र घृणा ईसाई प्रभावके कारण ही है। मैं ऐसे बहुत-से लोगोंके सम्पर्कमें आया हूँ जो ईसाई मिशनरियोंके शानदार नमूने थे। मतभेदोंके बावजूद, मैं उनकी योग्यतासे प्रभावित हुए बिना नहीं रहता था। इसीलिए आपको मेरे आश्रममें बड़ी उम्रकी अविवाहित लड़कियाँ मिलेंगी, यद्यपि उन्हें इच्छा होने पर विवाह करनेकी स्वतन्त्रता है। मैं विश्वविद्यालयोंकी शिक्षा प्राप्त करनेवाली महिलाओंकी नहीं, बल्कि उन लड़कियोंकी बात कर रहा हूँ जो अशिक्षित परिवारोंकी हैं।

ईसाई धर्मके बारेमें कुछ भी जाननेसे पहले ही मैं छुआछूतका दुश्मन था। मेरी माँ, जिसकी मैं पूजा करता था, जब अपने वस्त्रोंको अछूतोंके स्पर्शसे बचाती थी तो मुझे उसका वह कार्य समझमें नहीं आता था। इस बुराईपर ईसाई क्षेत्रोंके जबरदस्त आक्षेपसे मेरी भावनाओंमें और तीव्रता आ गई।

आदर्श मिशनरीका यदि मैं कोई नमूना बताना चाहूँ तो मैं सी० एफ० एन्ड्रयूजका उदाहरण रखूँगा। यदि वे यहाँ होते तो जो-कुछ मैं कहना चाहता हूँ उसे सुनकर वे शरमा जाते। मेरा यह विश्वास है कि संसारके अन्य मुख्य धर्मोंके प्रति सहिष्णुताका रुख अपनानेके कारण वे आज पहलेसे कहीं अधिक सच्चे, उदार और अच्छे हैं। यद्यपि हम बहुत ही गहरे मित्र हैं, पर वे मुझसे कभी धर्म-परिवर्तन और लोगोंको ईसाई बनानेकी बात नहीं करते हैं। मेरे बहुत-से मित्र हैं, परन्तु चार्ली एन्ड्रयूजकी और मेरी मित्रता खास तौरपर गहरी है।

पहली बार जब मैंने उन्हें डर्बनमें देखा तो पहली भेंटमें ही हममें प्रेम हो गया। यदि आप मुझसे यह पूछें कि क्या मुझे उनमें अपनी मूलस्थितिके बारेमें कोई ढील या उदासीनता नजर आई है, तो मैं कहूँगा कि वे अपनी निष्ठामें और दूसरोंके प्रति अपने प्रेममें पहलेसे अधिक दृढ़ हो गये हैं। मेरा ऐसा खयाल है कि जहाँ वे पहले हिन्दू धर्ममें दोष देखा करते थे, वहाँ आज शायद वह उन्हीं दोषोंको एक और परिवेशमें देखते हैं, और इसीलिए हिन्दुओंके अधिक निकट आ गये हैं। वे आज सैकड़ों-हजारों हिदुओंके जीवन-सुधारका एक शक्तिशाली हेतु बने हुए हैं।

दक्षिण आफ्रिकाके उनके भारतीय मित्रोंने मुझे लिखा कि वे तो 'दीनबन्धु' हैं। वे भंगियों, अछूतोंतकके प्रिय हो गये हैं। वे उनके पास स्वाभाविक रूपमें गये और उनके आचरणको उन्होंने बिलकुल सीधे ढंगसे प्रभावित किया, और आज वे लोग उनसे बहुत ही प्रेम करते हैं। यदि मैं उनके साथ इस बातकी होड़ करूँ कि दक्षिण आफ्रिकामें इन लोगोंपर हममें से किसका प्रभाव अधिक है, तो वे मुझे परास्त नहीं करेंगे — यह मैं निश्चयके साथ नहीं कह सकता।

मैं आपके सामने अपने विचार साफ-साफ रख देना चाहता हूँ और आपसे भी ऐसा ही करनेकी अपेक्षा रखता हूँ। मुझे आशा है कि आप अन्तमें यह कह सकेंगे, 'उस दिन शामको हमने उस बूढ़ेकी बातें सुनीं और उनमें कुछ भी ऐसा नहीं था जो सच्चा और हार्दिक न हो।'

गांधीजी के भाषणके बाद, और प्रश्न पूछे जानेसे पहले, श्री पैटनने वह प्रस्ताव पढ़कर सुनाया जो १९२४ में दिल्लीके एकता सम्मेलनमें धार्मिक स्वतन्त्रतापर पास किया गया था।[1]

> **इस सम्मेलनका यह दृढ़ मत है कि अन्तःकरण और धर्मकी अधिकसे-अधिक स्वतन्त्रता अत्यावश्यक है, और सम्मेलन किसी भी उपासना-स्थानके, चाहे वह किसी भी धर्मका क्यों न हो, अपवित्रीकरणकी निन्दा करता है, किसी भी व्यक्तिको कोई धर्म अपनाने या उसमें लौटनेपर किसी भी तरह सताने या दण्डित करनेकी निन्दा करता है, और लोगोंको जबरदस्ती अपने धर्ममें दीक्षित करने या दूसरोंके अधिकारोंको कुचलते हुए अपने धार्मिक आचारको**

१. यह उस समयकी बात है जब गांधीजी दिल्लीमें, सितम्बर १९२४ में, साम्प्रदायिक एकताके लिए अनशन कर रहे थे। देखिए खण्ड २५।

जबरदस्ती लागू करनेके हर प्रयासकी निन्दा करता है। यह सम्मेलन भारतके विभिन्न सम्प्रदायोंमें और भी अच्छे सम्बन्ध विकसित करनेके आम सिद्धान्तोंको, जो पूर्वोक्त प्रस्तावमें रखे गये हैं, प्रयोगमें लानेकी दृष्टिसे और सभी धर्मों, विश्वासों और धार्मिक आचारोंके प्रति पूर्ण सहिष्णुता पैदा करनेकी दृष्टिसे, अपना यह मत व्यक्त करता है :

कि प्रत्येक व्यक्ति या समुदायको, दूसरोंकी भावनाओंका समुचित आदर करते हुए और उनके अधिकारोंमें हस्तक्षेप किये बिना, अपने विश्वासोंको रखने और व्यक्त करने और किसी भी धार्मिक आचारका पालन करनेकी पूर्ण स्वतन्त्रता होगी। इस तरहके व्यक्ति या समुदायको, किसी भी हालतमें, किसी अन्य धर्मके संस्थापकों, पूज्य व्यक्तियों या सिद्धान्तोंका अपमान नहीं करना चाहिए।

कि प्रत्येक व्यक्तिको किसी भी धर्मका अनुगमन करने और जब इच्छा हो तब उसे छोड़ देनेकी स्वतन्त्रता है और इस तरहके धर्म-परिवर्तनके कारण जिस धर्मको उसने छोड़ा है उसके अनुयायी उसे कोई दण्ड नहीं दे सकेंगे और उसपर कोई अत्याचार नहीं कर सकेंगे।

कि प्रत्येक व्यक्ति या समुदायको यह स्वतन्त्रता है कि वह तर्कसे या समझा-बुझाकर किसीका धर्म-परिवर्तन कर सकता है, या उसे उसके पुराने धर्ममें फिरसे ला सकता है। पर उसे बल-प्रयोग, धोखाधड़ी या अन्य अनुचित साधनोंसे, जैसे कि भौतिक प्रलोभन देकर, ऐसा करने या इसे रोकनेकी कोशिश नहीं करनी चाहिए। १६ वर्षसे कम आयुवालोंका, यदि उनके माता-पिता या संरक्षक धर्म-परिवर्तन न कर रहे हों तो, धर्म-परिवर्तन नहीं करना चाहिए। यदि अपने माता-पिताके या संरक्षकके बिना, और अपने लोगोंसे बिछुड़ा हुआ १६ वर्षसे कम आयुका कोई व्यक्ति किसी अन्य धर्मवालेको मुसीबतमें पड़ा मिल जाये तो उसे तुरन्त उसके अपने धर्मके किसी व्यक्तिको सौंप देना चाहिए। धर्म-परिवर्तन या पुराने धर्ममें फिरसे लौटनेकी कोई भी घटना गुप्त नहीं रहनी चाहिए।

मिस्टर पैटनने बताया कि गांधीजी यद्यपि उस समय अनशन कर रहे थे, फिर भी उन्होंने इन प्रस्तावोंका मसविदा तैयार करनेमें मुख्य भाग लिया था। उन्होंने कहा, मुझे आशा है कि ये प्रस्ताव गांधीजी के विचारोंका अब भी प्रतिनिधित्व करते हैं।

इस बातको गांधीजी ने स्पष्टरूपसे स्वीकार किया।

लन्दन मिशनरी सोसाइटीके रेवरेंड गॉडफ्रे फिलिप्सने कहा :

मैं चाहता हूँ कि ईसाई मिशनोंको लेकर अछूतोंमें इस समय जो-कुछ चल रहा है, उसके बारेमें हम एक-दूसरेको अच्छी तरह समझ लें। दुनियामें ऐसे स्थान

हैं जहाँ 'गुलाबकी सुगंध' नहीं है। अपने अनुभवसे हमने यह देखा है कि असली अछूत, यानी ऐसे अछूत वर्गके वे लोग, जो समाजसे सर्वथा बहिष्कृत होते हैं, जब बिलकुल ही दीन-हीन और असहाय अवस्थामें होते हैं तब हम, उनके अन्तःकरणमें कोई ऐसी चीज रोपे बिना जो जीवनदायी शक्ति रखती हो, कोई स्थायी कार्य नहीं कर सकते। और हमारा अनुभव हमें बताता है कि वह चीज है —— ईसाके माध्यमसे ईश्वरके साथ नाता जोड़ना। हम उनतक उनकी पूरी बिरादरीके जरिये ही पहुँच सकते हैं। भूखे जन-साधारणके लिए महात्माजी की जो भावनाएँ हैं उन्हें हम स्वीकार करते हैं। छुआछूतको मिटानेकी उनकी जो आकांक्षा है उसमें भी हम उनके साथ हैं। पर, हम यह भी महसूस करते हैं कि अछूतके भीतर हमें कोई चीज ऐसी भी रखनी चाहिए जो उसके भीतर सदा काम करे। क्या हम एक-दूसरेको और अच्छी तरह समझ नहीं सकते? कभी-कभी जब हम अपने कार्यके लिए जमीन लेनेकी कोशिश करते हैं, तो महात्माजी के अनुयायी ही हमें रोकते हैं। महात्माजी चाहे यह न चाहते हों कि हम लोगोंका धर्म-परिवर्तन करें, पर धर्म-परिवर्तनमें हमारा जो विश्वास है उसका कारण यह तथ्य है कि हमें सचमुच कोई और मार्ग दिखाई नहीं देता।

गांधीजी: श्री फिलिप्सने जो प्रश्न रखा उसके लिए मैं उनका आदर करता हूँ। कानून या बल-प्रयोगसे मैं धर्म-परिवर्तनके कार्यको रोकना नहीं चाहता हूँ। पर, मैं श्री फिलिप्स और अन्य मिशनरियोंको यह जरूर समझाना चाहता हूँ कि मेरी अपनी विनम्र रायमें यह एक गलत तरीका है। उन्होंने गुलाबकी मेरी उपमाका प्रयोग किया है। उनका कहना है कि मिशनरीको मानों अछूतोंके पास गुलाब ले जाना होता है। मैं तो उसे एक चलता-फिरता गुलाब कहना चाहूँगा, और उसे कुछ और बननेकी जरूरत ही नहीं है। उसे ईश्वरकी चर्चा करनेकी जरूरत नहीं है, क्योंकि ये लोग ईश्वरको उसमें और उसके आचरणमें अंकित देख ही सकेंगे, जैसे कि यदि किसी अछूतके घरके बाहर गुलाब रोप दिया जाये तो वह चुपचाप अपनी सुगंध फैलायेगा। गुलाबको बोलनेकी जरूरत नहीं होगी। यदि श्री फिलिप्स यह सोचते हैं कि अछूतोंकी सहायताको जानेसे पहले उन्हें अछूतोंके पास ईश्वरका सन्देश, या बाइबिलका सन्देश ले जाना चाहिए, तो मुझ-जैसे आदमीके पास तो उन्हें वह सन्देश और अधिक ले जाना चाहिए। हजारों अछूतोंसे मिलने-जुलने और इस तरहका बहुत काम करनेके बाद ही मैं इस चीजपर जोर दे रहा हूँ। उनकी [मिशनरियोंकी] भाषा वे लोग नहीं समझते। मैं क्योंकि उनकी भाषा बोलता हूँ, इसलिए मुझे वे ज्यादा अच्छी तरह समझते हैं। मैं उनसे उनकी अधोदशाके बारेमें बात करता हूँ, ईश्वरके बारेमें मैं बात नहीं करता। मैं ऐसा महसूस करता हूँ कि इसी ढंगसे मैं उनके पास ईश्वरका सन्देश ले जाता हूँ, जैसे कि किसी भूखे आदमीको जो रोटी मैं देता हूँ उसीके द्वारा मैं उसके पास ईश्वरका सन्देश ले जाता हूँ। मुझे कोई स्वार्थ सिद्ध नहीं करना है। मुझे उसका शोषण नहीं करना है। मैं उसे बस रोटी दे देता हूँ। यदि मैं ईश्वरको अछूतके पास ले जाना चाहता हूँ, तो मुझे उसे उसी रूपमें ले

जाना चाहिए जिस रूपमें उसे उसकी जरूरत है। मैं अछूतोंके पास जाता हूँ और कहता हूँ, 'जिस ईश्वरकी आपको जरूरत है उसके सिवा और कौन-सा ईश्वर मैं आपको दे सकता हूँ।'

गांधीजी ने फिर 'अछूत' जातिके एक बूढ़ेकी दयनीय दशाका उदाहरण दिया, जिसे किसीके सामने आनेतककी इजाजत नहीं थी। गांधीजी ने कहा :

उसे एक मान-पत्र भेंट करनेके लिए मेरे पास लाया गया था। वह हर चीजसे डरता था, जैसे कि किसी देहातीको लन्दनकी रेलपेलके बीच खड़ा कर दिया गया हो। जो मान-पत्र उसे देना था वह उसके हाथसे गिर पड़ा। पर मैंने उसे उठा लिया और उसे उसको पकड़नेका सही ढंग बताया। अपने रवैयेसे मैं उसका विश्वास प्राप्त करनेमें सफल हो गया, और मुझे लगा कि ऐसा करके मैंने उसे ईश्वरका एक सन्देश दिया है। यदि मैं एक ईसाई मिशनरी होता (और ईसाई मिशनरियोंके हृदयमें मैं प्रवेश कर सकता हूँ) तो उन लोगोंके बीच मैं उसी तरह जाता जिस तरह कि एल्विन[1] गये हैं। वे आजकल अछूतोंमें काम करनेकी योजना बना रहे हैं। वे अछूतोंके बीच एक ईसाई आश्रम स्थापित करेंगे, जिसमें मिट्टीकी एक झोंपड़ीके अन्दर उनके अपने लिए और उनके साथियोंके लिए एक गिरजा होगा। वे अपने जीवनको ईश्वरके निर्देशानुसार चलाते हुए, केवल उनके बीच रहना चाहते हैं।

बैप्टिस्ट मिशनरी सोसाइटीके रेवरेंड सी० ई० विल्सनने कहा :

मेरे विचारसे धार्मिक जीवनकी व्याख्या एक शिष्यके जीवनसे की जा सकती है। हम सब शिक्षार्थी हैं। सच्चा धर्म-प्रचारक अपनेको एक शिष्य मानता है, जिसपर अपने प्रभुके आदेशको पूरा करने और दूसरोंको शिष्य बननेके लिए राजी करनेका दायित्व होता है। मुझे लगता है कि श्री गांधी धार्मिक शिक्षाको नापसन्द करते हैं, उसकी लगभग निन्दा करते हैं। वे ऐसा कहते मालूम होते हैं कि हमें लोगोंके बीच जाना चाहिए और रहना चाहिए, पर उन्हें शिष्य बनाने या उनमें नई आस्था जगानेकी कोशिश नहीं करनी चाहिए। यह चीज मुझे श्री गांधीके पूरे जीवनका खण्डन करती लगती है। क्या श्री गांधीका आशय यह है कि यद्यपि हम ईसा मसीहको ज्ञात विभूतियोंमें सर्वोच्च मानते हैं, तो भी हमारा भारत या किसी जगह जाना और लोगोंको शिष्य बनानेकी कोशिश करना, ईसाके परम सत्यकी शिक्षा देना ठीक नहीं है? गांधीजी आज हमें उपदेश ही तो देते रहे हैं। क्या उनका आशय सचमुच समस्त उपदेशके बहिष्कारसे है?

गांधीजी : भाषा अर्थके संप्रेषणमें असफल रहती है; बोला गया शब्द विचारको सीमित कर देता है। लिखने और बोलने दोनोंके लिए गुंजाइश है, यद्यपि मुझे लगता है कि यदि मैं कम लिखूँ और बोलूँ तो वह प्रायः ज्यादा अच्छा रहेगा। पर मैं किसीको अपने धर्ममें दीक्षित करनेकी कोशिश नहीं करता हूँ। अपनी मान्यताओंमें मेरी निष्ठा इतनी दृढ़ तो अवश्य है कि मैं उनके लिए अपने

१. वेरियर एल्विन।

प्राण भी दे दूँ, लेकिन इतनी नहीं कि मैं अन्य लोगोंसे भी उन्हीं बातोंमें विश्वास करनेको कह सकूँ। मैं यह जानता हूँ कि ईश्वर मेरे लिए क्या चाहता है। पर मैं इतना अहंकारी नहीं हूँ जो यह मानूँ कि मैं यह भी जानता हूँ कि ईश्वर औरोंके लिए क्या चाहता है। धार्मिक सत्य हमारे पास रहस्यात्मक ढंगसे पहुँचता है। पॉल और दूसरोंके जीवनमें जो क्रान्ति आई वह किस तरह अचानक ही आ गई थी! धर्म एक ऐसा मामला है जिसे ईश्वरपर छोड़ देना चाहिए। मैं यह नहीं कहता कि 'उपदेश मत दो'; [मैं इतना ही कहता हूँ कि] मनुष्यको उस चरम प्रकाश तक ले जाओ जो उसका अपना धर्म उसे देता है। मैं यह जानता हूँ कि बाइबिलका सन्देश जिनके लिए स्वयं अपने जीवन-जितना ही पवित्र है, उनसे एक बिलकुल अनजान व्यक्तिका यह सब कहना कितनी धृष्टता है। पर मैं आपसे एक ऐसे व्यक्तिकी हैसियतसे बात कर रहा हूँ जिसे ईश्वरकी तलाश है — ठीक उसी तरह जिस तरह कि आपको भी है।

एक बार मेरे कुछ मित्रोंने सोचा कि यदि मेरी श्री एफ० बी० मेयरके साथ बातचीत हो तो मैं धर्म-परिवर्तन कर लूँगा। उनका यह खयाल था कि ईसाके सन्देशको स्वीकार किये बिना मैं अपूर्ण हूँ, और इसलिए वे मुझे श्री मेयरके सम्पर्कमें लाये। उन्होंने मुझसे पूछा: "क्या आपको शान्ति प्राप्त हो गई है?" मैंने जब कहा "हाँ," तो वे बोले, "मुझे आपसे अब कुछ नहीं कहना है।" धर्म एक व्यक्तिगत मामला है, और मैं किसी दूसरे आदमीसे हिन्दू या पारसी बननेके लिए नहीं कहूँगा। ऐसा करके मैं अपने विश्वासके प्रतिकूल आचरण करूँगा। मैं आपके आगे अपना अनुभव रख रहा हूँ और आपको, साथी कार्यकर्त्ता होनेके नाते, यह दिखानेकी कोशिश कर रहा हूँ कि यदि आप मेरे दृष्टिकोणसे चीजोंको देख सकें तो आपका कार्य अधिकाधिक फूले-फलेगा। आपमें आत्मत्यागकी आश्चर्यजनक भावना है; आप महान् संगठनकर्त्ता हैं; आप भले आदमी हैं। आपके लिए सेवाके अवसरोंको मैं बढ़ाना चाहता हूँ। मैं आपके और भी निकट आकर काम करना चाहता हूँ। पर मैं यह नहीं चाहता कि आप भारतसे उसका धर्म बदलवायें।[1]

कलकत्ताके ऑक्सफोर्ड मिशनके रेवरेंड डब्ल्यू० एच० जी० होम्सने कहा:

दक्षिण भारतमें मैं कुछ भारतीय छात्रोंके साथ एक पगडंडीसे जा रहा था जो एक खेतमें से गुजरती थी। जब हम भारतीयोंकी एक टोलीके पास पहुँचे तो वे लोग एकदम कोई ४० गज दूर, खेतके बीचमें चले गये। मैंने उन भारतीयोंके पास जाकर पूछा कि आपने ऐसा क्यों किया। उन्होंने ऐसा इसलिए किया था कि उन्हें डर था कि हम ब्राह्मण हैं और इसलिए उन्हें वहाँसे हट जाना चाहिए। मैंने तब उनसे कहा, आपको ऐसा करनेकी जरूरत नहीं थी, क्योंकि हम ईसाई हैं और आपको अपना भाई मानते हैं, स्वर्गमें एक पिता है, जिसे आप हमारे-जितने ही प्रिय हैं। उन्होंने जवाब दिया, "ये शब्द मधुर हैं, क्या आप हमारे गाँव आने और वहाँ एक

१. देखिए खण्ड ४६, पृष्ठ २७-९।

स्कूल खोलनेकी कृपा करेंगे।" क्या हमारे लिए यह ठीक नहीं होगा कि हम उन्हें उस परम पिताके बारेमें उपदेश दें जिसके विषयमें मैंने उनसे कहा था कि वह उनसे उतना ही प्रेम करता है जितना कि हमसे? और क्या श्री गांधी उन्हें इस बातके लिए प्रोत्साहित करेंगे कि वे हमें इन लोगोंकी शिक्षाके लिए जमीन लेने दें और उसपर इमारत आदि बनाने दें?

गांधीजी: हाँ, मैं ऐसा करूँगा, पर एक शर्तपर कि आप उन्हें उस धर्मके द्वारा, जो उनका है, उनके पूर्वजोंके धर्मकी शिक्षा दें। उनसे यह मत कहिए: 'उस पिताको जाननेका एकमात्र मार्ग केवल हमारा मार्ग है।' ईश्वर अछूतोंका पिता है, हम सबका पिता है। पर वह पिता आपके आगे एक और वेशमें प्रकट होता है। अछूतको वह पिता उस रूपमें दिखाइए जिस रूपमें वह उसकी परिस्थितियोंमें प्रकट होता है। वैसे यदि आपको यह विश्वास हो कि असली पिताको हम बिलकुल जानते ही नहीं हैं, तो और बात है। तब, निःसन्देह, यह कहना आपका कर्त्तव्य हो जाता है कि 'जिसे तुम पिता समझते हो वह पिता है ही नहीं। तुम जिस बातपर विश्वास करते हो वह शैतानकी बात है।' मुझे कभी-कभी ऐसे पत्र मिलते हैं जिनमें यह कहा गया होता है कि मैं अच्छा आदमी हूँ, पर शैतानका काम कर रहा हूँ। मुझे ऐसा महसूस होता है कि मैं भी उसी पिताकी पूजा करता हूँ, यद्यपि एक भिन्न रूपमें करता हूँ। 'गॉड' के रूपमें उसकी पूजा करना मेरे लिए उचित नहीं होगा। वह नाम मुझपर कोई प्रभाव नहीं डालता, पर जब मैं उसे रामके रूपमें सोचता हूँ तो वह मुझे पुलकित कर देता है। ईश्वरको गॉडके रूपमें सोचनेसे मुझमें वह भावावेश नहीं आता जो रामके नामसे आता है। उसमें कितनी कविता है। मैं जानता हूँ कि मेरे पूर्वजोंने उसे रामके रूपमें ही जाना है। वे रामके द्वारा ही ऊपर उठे हैं, और मैं जब रामका नाम लेता हूँ, तो उसी शक्तिसे ऊपर उठता हूँ। मेरे लिए 'गॉड' नामका प्रयोग, जैसा कि वह बाइबिलमें प्रयुक्त हुआ है, सम्भव नहीं होगा। वह अनुभवके इतना प्रतिकूल है कि मैं उसकी ओर आकर्षित नहीं हूँगा। उसके द्वारा मेरा सत्यकी ओर उठना मुझे सम्भव नहीं लगता। इसलिए मेरी समूची आत्मा इस शिक्षाको अस्वीकार करती है कि राम मेरा ईश्वर नहीं है। अछूतोंके पास जाइए; उनके लिए स्कूल खोलिए; उन्हें सब-कुछ दीजिए, पर अपने इस विचारको मनमें रखकर नहीं। यदि कोई मुझे यह समझा सके कि परमेश्वरतक एक विशेष मार्गसे ही पहुँचा जा सकता है, तो मैं एक क्षणके लिए भी झिझकूँगा नहीं, बल्कि उसको पानेके लिए मैं दुनियामें कहीं भी जा सकूँगा। लेकिन तब मुझे अपने जीवनको नये सिरेसे ढालना होगा। मेरा अपने सिवा कोई शिष्य नहीं है, और वह शिष्य जबरदस्त है। मेरे अनुगामी हैं, पर वे शिष्य हैं, ऐसा मैं नहीं मानता। मुझे शान्तिकी तलाश है, और जो जीवन मैं जीता हूँ उसीमें से मुझे ईश्वरको दिखाना है। मैं अपनेको अपने बंधु-मानवोंके लिए समर्पित करता हूँ। शान्तिका और सुखका भी यही रहस्य है।

१. देखिए खण्ड ४०, पृष्ठ ६१-५।

सम्मेलनके एक सदस्यने दो प्रश्न पूछे। पहला यह कि क्या गांधीजी ने डाक्टर मॉटसे अपनी भेंटमें यह कहा था कि ईसाई मिशनोंका प्रभाव सर्वथा बुरा रहा है।[1] गांधीजी ने कहा कि उनका इस कथनसे कोई सम्बन्ध नहीं है, और यह बात फिर दोहराई कि उन्हें गलत पेश किया गया है। प्रश्नकर्त्ताने इसके बाद ईसाइयोंको दिये गये इस आदेशका उल्लेख किया कि सारी दुनियामें जाओ और प्रत्येक प्राणीको बाइबिलका उपदेश दो। इसका उत्तर गांधीजी ने यह दिया कि यदि प्रश्नकर्त्ताको यह विश्वास है कि ये बाइबिलके ईश्वर-प्रेरित शब्द हैं, तो उसे निश्चयके साथ उनका पालन करना चाहिए — एक गैर-ईसाईसे वे इसकी व्याख्या क्यों चाहते हैं?

श्री पैटनने सभी उपस्थित लोगोंकी ओरसे गांधीजी को हृदयसे इस बातके लिए धन्यवाद दिया कि वे उनके आगे निश्छलता और सौहार्दपूर्ण ढंगसे बोले। . . .

चर्च मिशनरी सोसाइटीके रेवरेंड डब्ल्यू० विल्सन कैशने श्री गांधीकी सभाकी ओरसे धन्यवाद दिया।

[अंग्रेजीसे]

ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैंडकी मिशनरी संस्थाओंके सम्मेलनके रेकार्ड से। सौजन्य : रेवरेंड सी० बी० फर्थ

१०१. भेंट : मदाम मॉन्टेसरीसे

[९ अक्टूबर, १९३१ या उसके पूर्व][1]

गांधीजी ने उनका अभिवादन करते हुए कहा :

हम एक ही परिवारके सदस्य हैं।

मदाम मॉन्टेसरी बोलीं : "मैं आपके लिए बच्चोंका अभिवादन लाई हूँ।"

गांधीजी : यदि आपके बच्चे हैं तो मेरे भी बच्चे हैं। भारतमें मित्रगण मुझसे आपका अनुकरण करनेके लिए कहते हैं। मैं उनसे कहता हूँ, नहीं, मुझे आपका अनुकरण नहीं करना चाहिए, बल्कि आपको और आपकी प्रणालीमें जो मूल सत्य है उसे आत्मसात् करना चाहिए।

मदाम मॉन्टेसरी : मैं अपने बच्चोंसे गांधीजी के हृदयको आत्मसात् करनेके लिए कहती हूँ। मैं जानती हूँ कि वहाँ, विश्वके आपवाले भागमें मेरे लिए यहाँसे अधिक गहरी भावनाएँ हैं।

गांधीजी : हाँ, यूरोपसे बाहर, भारतमें आपके सबसे अधिक अनुगामी हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २२-१०-१९३१

१. यह भेंट-वार्त्ता महादेव देसाईके ९ अक्टूबरके "लन्दन लेटर" (लन्दनका पत्र) से ली गई है। यह भेंट अनुमानतः ७ अक्टूबरको हुई होगी; देखिए "पत्र : जे० थिओडोर हैरिसको", पृष्ठ २९-९-१९३१। बुधवार ७ अक्टूबरको था

१०२. भेंट : शॉ डेसमंडको[1]

लन्दन

[९ अक्टूबर, १९३१ या उसके पूर्व]

उन्होंने बच्चेकी शिक्षाके प्रश्नपर बातचीत की। गांधीजी ने आत्मसंयमका महत्त्व और वयस्क आदमीकी तरह बच्चेके जीवनमें भी वह कितनी महान् भूमिका अदा करता है — इसका अपना जीवन-भरका अमूल्य अनुभव उन्हें बताया, और उन्होंने बहुत ही एकाग्रतासे वह-सब सुना। उन्होंने पूछा, "आजकी इस विश्रृंखलताका कारण क्या है?" गांधीजीने कहा :

शोषण, शक्तिशाली राष्ट्रों द्वारा दुर्बल राष्ट्रोंका तो मैं नहीं कहूँगा, पर बंधु राष्ट्रों द्वारा बन्धु-राष्ट्रोंका शोषण। और मशीनपर मेरी आपत्तिका मूल आधार यह तथ्य है कि इन राष्ट्रोंको दूसरोंका शोषण करनेकी सामर्थ्य मशीन ही देती है। अपने-आपमें वह एक जड़ वस्तु है और उसे अच्छे या बुरे किसी भी उद्देश्यमें लगाया जा सकता है। पर, जैसा कि हम जानते हैं, उसे आसानीसे बुरे उद्देश्यमें लगाया जा सकता है।

श्री डेसमंडने पूछा : "आपके खयालमें क्या यहाँ इन सब लोगोंको आवश्यकतासे अधिक खाना नहीं मिलता है? हम इन्हें कम खानेकी शिक्षा कैसे दे सकते हैं?" गांधीजी ने कहा :

परिस्थितियाँ शिक्षा देंगी। इन्हें जल्दी ही एक दिन यह समझना होगा कि इंग्लैंड अपनी पुरानी खुशहालीपर अब लौटनेवाला नहीं है। इन्हें यह समझ लेना चाहिए कि बहुत-से राष्ट्र इस लूटमें इसके साथ हिस्सा बाँटनेकी घातमें हैं। जैसे ही उन्होंने ऐसा किया, ये फिर जितनी चादर होगी उतने ही पाँव फैलायेंगे।

"इसलिए यह संकट", श्री डेसमंड अपनी बातपर पूरा जोर देते हुए बोले, "निःसन्देह, एक बड़ी चीज है।"

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २२-१०-१९३१

१. महादेव देसाईके ९ अक्टूबरके "लंडन लेटर" (लन्दनका पत्र) से उद्धृत हैं।

१०३. पत्र : अर्नेस्ट एस्डेलको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
९ अक्टूबर, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके[1] लिए धन्यवाद। यदि सोमवार, इसी १९ तारीखको ८ बजेका समय आपके लिए सुविधाजनक रहे, तो क्लबके सदस्योंके आगे भाषण देना मुझे सहर्ष स्वीकार है।

हृदयसे आपका,

श्री अर्नेस्ट एस्डेल,
कांस्टीट्यूशनल क्लब
नॉर्दम्बरलैंड एवेन्यू, डब्ल्यू० सी०-२

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८०४५)से।

१०४. पत्र : महमूदुल्लाको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
९ अक्टूबर, १९३१

आपका पत्र मिला। आप अकारण क्षुब्ध हैं। मैं आपको अपना विश्वासपात्र नहीं मानना चाहता, ऐसी कोई बात नहीं है।[2] बात केवल यह है कि जिसे विश्वास-पात्रको ही दिया जा सके, ऐसा कुछ गुह्य मेरे पास था ही नहीं। मेरे पास अपना कोई रहस्य नहीं है; हाँ, कभी-कभी मुझे दूसरोंके रहस्य अपनेतक रखने होते हैं। पर मुझसे आपके सम्बन्धोंपर उसका कोई असर नहीं पड़ सकता।

१. श्री अर्नेस्ट एस्डेलने ७ अक्टूबरके अपने पत्रमें गांधीजी से 'लन्दनके सबसे महत्त्वपूर्ण राजनीतिक क्लब', कांस्टीटयूशनल क्लबमें भाषण देनेकी प्रार्थना की थी। अर्नेस्ट एस्डेलके इस पत्रसे ज्ञात होता है कि इससे पहले भी गांधीजी ने उन्हें एक पत्र लिखा था, लेकिन उक्त पत्र उपलब्ध नहीं है।

२. श्री महमूदुल्लाने ७ अक्टूबरके अपने पत्रमें कहा था कि वे 'हिन्दू-मुस्लिम विवादको निपटानेमें' हाथ बँटाना चाहते हैं, पर 'आपका विश्वासपात्र होनेका दावा न कर सकने' के कारण इसमें अड़चन आती है।

यदि कोई बातचीत चलानी थी तो वह श्रीमती नायडू चला रही थीं। इसलिए ऐसा कुछ नहीं था जो मैं वस्तुतः कर सकता। आप मुझे कुछ सूचना देनेके लिए आये, और मैं इसके लिए आपका आभारी हूँ।

जहाँतक हिन्दू प्रतिनिधियोंका सवाल है, मैं शिकायत को सचमुच समझ नहीं सका। मैं हर उस आदमीसे मिला हूँ जो मुझसे मिलना चाहता था। जहाँ परामर्शकी इच्छा प्रकट की गई, वहाँ मैंने इस तरहके परामर्शमें भाग लिया। जहाँतक नेतृत्वका सवाल है, मैं अपनेको किसी एक वर्गका नेतृत्व करनेके योग्य नहीं समझता, और आम नेतृत्वके लिए मेरे पास कोई आधार नहीं है।

हृदयसे आपका,

श्री महमूदुल्ला

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८०४६)से।

१०५. पत्र : एस० सत्यमूर्तिको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
९ अक्टूबर, १९३१

प्रिय सत्यमूर्ति,

आपका पत्र मिला, जिसमें आपने हमारी माँगोंकी व्याप्तिके बारेमें — भारतीय रियासतोंकी प्रजा, प्रतिरक्षा, विदेशी मामलों और वित्तके बारेमें — मुझे अपने विचार लिखे हैं। पता नहीं, इन विषयोंपर हम कब पहुँचेंगे, पर इन चार मुद्दोंपर जो-कुछ आपने कहा है, बेशक मैं उसका ध्यान रखूँगा।

हृदयसे आपका,

श्री एस० सत्यमूर्ति
२/१८, कार स्ट्रीट
ट्रिप्लीकेन,
मद्रास

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८०४७)से।

१०६. टिप्पणी : सी० लेवेलीन हॉवेलके पत्रपर

९ अक्टूबर, १९३१

असम्भव।[1]

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७७१९) से।

१०७. भाषण : संघ-संरचना समितिके समक्ष

लन्दन
९ अक्टूबर, १९३१

श्रीमान् लॉर्ड चांसलर, मैं जानता हूँ कि इस समितिकी कार्यवाहीके स्थगित होनेमें कुछ हदतक मैं हेतु रहा हूँ; और उस दुर्भाग्यपूर्ण स्थितिमें होनेके कारण मुझे अब यह कहते हुए कि हम एक मिनट भी बरबाद नहीं कर सकते,[2] संकोच महसूस हो रहा है। जैसा कि आपने बहुत ही ठीक फरमाया है, हम यहाँ, कई हजार मील दूर, काम करनेके लिए आये हैं, मनोरंजनके लिए या छुट्टियाँ बिताने नहीं आये हैं। इसलिए निश्चय ही मैं यह कहूँगा कि यदि यह किसी तरह सम्भव हो तो हमें एक मिनटकी भी प्रतीक्षा किये बिना संघ-संरचना समितिका काम जारी रखना चाहिए। यदि हमारे मनमें, व्यक्तिगत या सामूहिक रूपसे, कहीं यह विचार छिपा है कि चाहे हम संघ संरचना समितिकी कार्यवाहीमें भाग लेते रहें, पर जबतक अल्पसंख्यकोंका प्रश्न सुलझता नहीं है, हम वस्तुतः अपने कार्यमें आगे बढ़े बिना प्रतीक्षा ही करते रहेंगे — यदि सचमुच हमारे मनमें यह भावना है जिसे व्यक्त करनेकी हममें इच्छा या हिम्मत नहीं है — तो मैं यह सुझाव दूँगा कि हम इस भावनाको व्यक्त करें और एक निश्चयपर पहुँचें।

मैंने खुद कल अपना यह सुचिंतित मत व्यक्त करनेकी कोशिश की थी कि इस समितिके कार्यसे उसका कोई वैसा अनिवार्य सम्बन्ध नहीं है। अल्पसंख्यकोंका प्रश्न यदि सबसे महत्त्वपूर्ण नहीं तो एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण प्रश्न तो है ही। मेरे अपने मनमें उसका सदा एक स्वाभाविक स्थान रहा है। पर, वह दूसरे उतने ही महत्त्वपूर्ण प्रश्नोंपर कभी भी हावी नहीं हुआ है। और अब, सात दिनतक इस प्रश्नपर इतनी मेहनत करनेके बाद, मेरे आगे यह चीज पहलेसे भी अधिक साफ

१. यह टिप्पणी हॉवेलके १४ सितम्बरके पत्रके ऊपर लिखी थी। पत्रमें गांधीजी से "मेरी पुस्तकमें से लिये गये कुछ पृष्ठोंपर हस्ताक्षर" करने का अनुरोध किया गया था।

२. अध्यक्षने यह सुझाव रखा था कि सभा मंगलवार १३, अक्टूबरतकके लिए स्थगित कर दी जाये।

हो गई है कि जबतक बड़े बुनियादी प्रश्न सुलझ नहीं जाते, अल्पसंख्यकोंका प्रश्न शायद सुलझेगा ही नहीं। अपनी इस धारणाके कारण मैं यह चाहूँगा कि इस समितिकी कार्यवाहीमें वास्तविकता लाई जाये और कई मुद्दोंपर, जिनका आप अपनी आश्चर्य-जनक कर्मशीलताके साथ कई दिनों और सप्ताहोंसे हमारे सामने बराबर ढेर लगाते जा रहे हैं, हमें अब भाषण देनेके बजाय शीघ्र ही निर्णयपर पहुँचना चाहिए। इसलिए अगर मुझे अपनी राय साफ-साफ बतानेकी इजाजत हो तो मैं कहूँगा कि यदि हम महसूस करते हैं — जैसा कि मैं करता हूँ — कि इस समितिके सामने मौजूद सवालोंपर हमें उनके गुण-दोषके आधारपर ही विचार करना है, और अल्प-संख्यकोंकी समस्याके सन्दर्भमें उनका क्या होगा, इसकी कोई फिक्र अभी नहीं करनी है, तो फिर हमें सारी छुट्टियाँ छोड़ देनी चाहिए; और अगर हम सचमुच इस कामको निबटाना चाहते हैं तो मैं जानता हूँ कि हमें इसे सकुशल निबटा देनेकी शक्ति भी प्राप्त होगी।

परन्तु अन्तमें, मैं यह बात फिर दोहराता हूँ कि यदि हमारे मनमें कहीं यह भाव है कि हमें कामको जारी रखते हुए भी करना नहीं चाहिए, तो मैं समझता हूँ कि यह भारतके साथ न्याय नहीं होगा, यह हमारे साथ न्याय नहीं होगा और यह ब्रिटिश मन्त्रियोंके साथ भी न्याय नहीं होगा। इसलिए मैं बहुत ही तीव्रताके साथ यह महसूस करता हूँ कि हमें किसी छुट्टीकी जरूरत नहीं है। हमारा प्रत्येक मिनट वस्तुतः किसी और बातके लिए नहीं, इसी कार्यके लिए निर्धारित है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबिल कांफरेंस (सेकेंड सेशन) : प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐंड माइनॉरिटीज कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ १६०

१०८. भेंट : एच० एन० ब्रेल्सफोर्डको[1]

लन्दन

[११ अक्टूबर, १९३१ या उसके पूर्व][2]

गांधीजी : यदि ये ठेठ किसानोंके[3] चित्र बनाना चाहती हैं तो इन्हें गुजरात नहीं जाना चाहिए। गुजरात अपेक्षाकृत खुशहाल है। इन्हें उड़ीसा जाना चाहिए। वहाँके किसानोंके बस खाल और हड्डियाँ हैं, और कुछ नहीं है। बैलतक कंकाल-मात्र हैं। आप उनकी पसलियाँ गिन सकते हैं। इन्हें निश्चय ही उड़ीसा जाना

१. स्वयं ब्रेल्सफोर्ड द्वारा दिये गये भेंटके विवरणसे उद्धृत। यहाँ जिस कलाकारका जिक्र है वह ब्रेल्सफोर्डकी मित्र थी।

२. इसके प्रकाशित होनेके ठीक एक दिन पहले, १२ अक्टूबरको, मौन-दिवस था। इसलिए अनुमान है कि यह भेंट ११ अक्टूबरको, या उससे कुछ पूर्व हुई होगी।

३. ब्रेल्सफोर्डने कहा था कि उक्त कलाकार भारतीय किसानोंके जीवनके चित्र बनानेको उत्सुक थीं।

चाहिए। एक कलाकार दुनियाको यह दिखाकर कि ये किसान किस तरह रहते हैं, सहायता कर सकता है।

कलाकार: आपको उन्हें मानव-जातिका वाकई एक बढ़िया नमूना बनानेमें कितना समय लगेगा? क्या मलेरिया इसमें एक बड़ी बाधा नहीं है?

गांधीजी: मेलरियाको खत्म करना बिलकुल आसान है। सिर्फ अच्छी खुराककी जरूरत है। प्रचुर दूध और फलसे उसका इलाज हो सकता है।

कलाकार: मेरा खयाल है, आपको उन्हें इस खुराकके बारेमें शिक्षा देनी होगी।

गांधीजी: उन्हें शिक्षाकी जरूरत नहीं है। उन्हें क्या चाहिए, यह वे खूब अच्छी तरह जानते हैं। गरीबी ही सारी मुसीबत है। हम भारतमें फल उगा सकते हैं, फिर भी किसान उन्हें कभी नहीं खाते। आप उन्हें इंग्लैंडमें नहीं उगा सकते, फिर भी आपके गरीब लोगोंको फल खानेको मिलते हैं। यहाँ आसपासकी गंदी बस्तियोंमें लोग उस तरहका जीवन बिताते हैं जैसा कि भारतमें मध्यमवर्गके लोगोंका है। जब मैं सोचता हूँ कि हमारे किसान कैसी गरीबीमें रह रहे हैं तो मुझे इस बातसे शर्म महसूस होती है कि मेरे पास खानेको फल हैं और पीनेको फलोंका रस है। जबतक यह अष्टभुज दानव हमारा खून चूस रहा है, सत्त्व खींच रहा है और हमपर बराबर दबाव डाले हुए है, हम कुछ कर नहीं सकते। अरे, वे तो हमारे नमक तकपर जो जीवनके लिए हवा और पानीसे कुछ ही कम आवश्यक है, कर लगाते हैं। वह हवा और पानीकी तरह मुफ्त होना चाहिए। मैं जानता हूँ कि इंग्लैंडमें आप लोग जल-कर देते हैं। पर यह नमक-कर किसी भी महसूलसे बुरा है। यह एक एकाधिकार है। इस तरहकी प्राकृतिक और जरूरी चीजपर — जो हवा और पानीके बाद सबसे जरूरी है — कर लगानेकी बात कितनी अजीब है। प्रकृति हमें वह देती है, पर हम उसका उपयोग नहीं कर सकते। समुद्रके पास नमक फैला है, पर उसे वे हमें इकट्ठा नहीं करने देते।

एच० एन० ब्रे०: नमक-कर खत्म करनेके बाद आप राजस्वकी कमीको पूरा करनेके लिए क्या विकल्प रखेंगे?

गांधीजी: नमककी बात तो एक छोटी बात है। वाकई जिससे फर्क पड़ता है, वह है ताड़ी और अफीमका उत्पादन-शुल्क। राजस्वका वस्तुत: वह एक बड़ा भाग है। जबतक हम सेनाका खर्च कम न कर सकें, उस कमीको पूरा करनेका कोई उपाय नहीं है।

यही वह अष्टभुज दानव है जो हमें जकड़े हुए है। यह जबरदस्त खर्च जरूर खत्म होना चाहिए।

एच० एन० ब्रे०: मेरे खयालसे यह गोलमेज परिषद्में मुख्य प्रश्न होगा।

गांधीजी: बेशक होगा; हम इससे मुँह नहीं चुरा सकते।

कलाकार: तो क्या आप गोरी सेनाको हटा देना चाहते हैं?

गांधीजी: निश्चय ही मैं उसे हटा देना चाहता हूँ।

कलाकार: क्या आप प्रशासन-अधिकारियोंको भी सैनिकोंमें शामिल करते हैं?

गांधीजी: वे उस बोझका एक हिस्सा हैं जो हमें ढोना पड़ता है; उनसे शासन बहुत महँगा हो जाता है। वे जो मोटी-मोटी तनख्वाहें लेते हैं, उनका कोई औचित्य नहीं है। जिस वर्गके वे हैं उस वर्गके लोग अपने देश [इंग्लैण्ड]में जैसा जीवन जीते हैं, वे उससे बहुत अच्छा जीवन बिताते हैं।

एच० एन० ब्रे०: इन ऊँची तनख्वाहोंकी आम सफाईमें क्या कुछ भी नहीं कहा जा सकता? ये प्रशासन-अधिकारी परदेशमें और बहुत ही कष्टकर जलवायुमें रह रहे हैं।

गांधीजी: अब वह हालत नहीं है। संचारकी बेहतर सुविधाओंसे सारी स्थिति बदल गई है। सप्ताहमें दो बार डाक आती है, देशमें अपने परिवारके साथ वे सम्पर्क रख सकते हैं, और गर्मियोंमें वे पहाड़ोंपर चले जाते हैं। यदि वे हमारे बीच भारतीयोंकी तरह रहें तो हम उनका स्वागत करेंगे। पर वे अपनेको अलग-अलग रखते हैं। वे अपनेको अपनी छावनियोंमें बन्द रखते हैं। इस नाममें ही एक सैनिक गंध है और ये छावनियाँ वस्तुतः अब भी फौजी कानूनके अधीन हैं। उन इलाकोंके किसी भी मकानपर, सेनाके सिर्फ यह कहनेपर कि उसे उसकी जरूरत है, कब्जा किया जा सकता है। हमारे एक मित्रके साथ यही हुआ, यद्यपि उसने वह मकान अपने रहनेके लिए बनवाया था।

एच० एन० ब्रे०: सेनाके बारेमें दो अलग-अलग प्रश्न हैं, या कहिए कि एक ही प्रश्न है, जिसकी दो शाखाएँ हैं। एक सिद्धान्तका, सेनापर भारतके नियन्त्रणका, प्रश्न है; और एक आर्थिक प्रश्न है, जो सेनाको घटानेसे सुलझ जायेगा। क्या आप दोनोंपर जोर देते हैं?

गांधीजी: मुझे इसका खयाल रखना होगा कि अपनी सेनापर मेरा नियन्त्रण रहे।

एच० एन० ब्रे०: जबतक ऐसा न हो, कोई राष्ट्र पूरी तरह राष्ट्र नहीं है।

गांधीजी: वे मुझसे कहते हैं कि मुझे पठानोंसे अपनी रक्षाके लिए यह सेना जरूर अपने पास रखनी चाहिए। मुझे उसका संरक्षण नहीं चाहिए। मैं अपना रास्ता चुननेकी स्वतन्त्रता चाहता हूँ। मैं उनसे लड़नेका निश्चय कर सकता हूँ, और उनसे समझौता करनेका निश्चय भी कर सकता हूँ। पर मैं यह सब अपने-आप करनेकी स्वतन्त्रता चाहता हूँ। हम कुछ समयके लिए भारतमें गोरी सेना रखनेको राजी हो जायेंगे, पर वे हमसे कहते हैं कि गोरे सैनिकोंको भारतीय सरकारके नियन्त्रणमें नहीं सौंपा जा सकता।

एच० एन० ब्रे०: उनकी मर्जीके बिना उनका तबादला नहीं किया जा सकता। मेरा खयाल है कि उनमें से बहुत-से लोग तो सन्तोषजनक परिस्थितियोंमें भारतीय सेनामें फिरसे भरती होनेको राजी हो जायेंगे।

गांधीजी: हाँ, यह समाधान हो सकता है, पर जब सेना घटा दी जायेगी तो मुझे डर है कि उससे आपके बेरोजगार लोगोंकी संख्या बढ़ जायेगी।

एच० एन० ब्रे० : तो, यदि भारतके नियन्त्रणका सिद्धान्त स्वीकार कर लिया जाये, तो क्या आप घटाई जानेवाली गोरी सेनाके — जिसे आप कुछ सालोंके लिए रखनेको राजी होंगे — सैनिकोंकी संख्या और खर्चके बारेमें बातचीतके लिए सहमत हो जायेंगे?

गांधीजी : हाँ, यदि वह भारतके हितमें हुआ तो हम उस तरहकी किसी भी चीजके लिए सहमत हो जायेंगे।

एच० एन० ब्रे० : देखिए, मेरे खयालसे वह आपके हितमें उतना नहीं होगा जितना हमारे हितमें होगा।

गांधीजी : कोई बात नहीं, हम उसके लिए सहमत हो जायेंगे।

एच० एन० ब्रे० : सारी कठिनाई नियन्त्रणके सिद्धान्तकी है। मेरे खयालसे वह आपको प्राप्त नहीं होगा। सेनाको घटानेकी बात दूसरी है, कुछ हद्दतक वह चीज आपको मिल जायेगी। शीघ्र ही हम निरस्त्रीकरण-सम्मेलनमें भाग लेनेवाले हैं। यह चीज विश्व-निरस्त्रीकरणमें हमारे योगदानका एक हिस्सा हो सकती है।

गांधीजी : मैं क्या चाहता हूँ, यह मैंने बता दिया है। मेरी शर्तें सबको मालूम हैं। पर वे अपनी छिपा रहे हैं, मानों उन्हें यह कहते डर लगता हो कि वे क्या मंजूर करेंगे। लेकिन मैं इंतजार करनेको बिलकुल तैयार हूँ।

एच० एन० ब्रे० : जबतक हम अपने आर्थिक संकटमें फँसे हैं, प्रगति धीमी ही रहनी है। पर यह चीज सुविधाजनक भी हो सकती है। यह ऐसी परिस्थिति है जब सूझ-बूझवाला राजनीतिज्ञ इस भयसे मुक्त रहकर समुचित समझौता कर सकता है कि उस समझौतेके खिलाफ कोई जन-आन्दोलन भी उठ सकता है।

गांधीजी : मुझे जिस चीजसे आश्चर्य हुआ वह यहाँ, बो, के मजदूरोंका — जिनसे मैं मिलता रहा हूँ — मैत्रीभाव है।

कलाकार : विरोध तो मध्य वर्गकी ही ओरसे है।

गांधीजी : मैं मजदूरोंके द्वारा उनतक पहुँचूँगा। असल कठिनाई यह है कि उन्हें इस बातकी कोई कल्पना ही नहीं है कि भारत कैसी यातना सह रहा है। वे हृदयसे यह विश्वास करते हैं कि भारत ब्रिटिश ताजका सबसे उज्ज्वल रत्न है। ब्रिटिश शासनके कृतित्वोंपर वे ईमानदारीसे गर्व करते हैं। उसमें कोई दोष हो सकता है, यह चीज उनके दिमागमें कभी आती ही नहीं है।

कलाकार : मैं महज एक बाहरी व्यक्ति हूँ; पर क्या एक और कठिनाई नहीं है? क्या भारतीय नरेश आपके रास्तेमें सबसे बड़ी बाधा नहीं हैं?

गांधीजी : नरेशकी तो वही स्थिति है जो ब्रिटिश अधिकारीकी है; उसे आज्ञा-पालन करना होता है।

एच० एन० ब्रे० : तो, क्या आप नरेशोंको वाइसरायके नियन्त्रणमें छोड़ सकते हैं?

गांधीजी : हमें भारतीय सरकारका नियन्त्रण स्थापित करना होगा।

एच० एन० ब्रे० : पर क्या वे वाइसरायके नियन्त्रणमें रहना पसन्द नहीं करते हैं ?

गांधीजी : उनमें से किसीसे भी पूछिए; वह ऐसा ही कहेगा। पर क्या यह सम्भव है कि वे इस स्थितिसे हृदयसे, सन्तुष्ट रह सकें? आखिर वे भी उसी रंगके हैं जिस रंगके कि हम हैं। वे भी भारतीय हैं।

एच० एन० ब्रे० : लेकिन मौजूदा व्यवस्थामें उन्हें कुछ लाभ हैं, जो आप कभी नहीं दे सकते। नौकरशाही उन्हें विनम्रता और सही राजनीतिक शिष्टाचारका पालन करनेके लिए बाध्य करती है। पर वह उन्हें अपनी प्रजाके साथ जैसा वे चाहते हैं वैसा बरताव करने देती है।

गांधीजी : "विनम्रता" इसके लिए ठीक शब्द नहीं है। उसकी बजाय 'निकृष्ट दासता' कहिए। उनमें से कोई भी अपनी आत्माको अपनी नहीं कह सकता। मान लीजिए, निजाम कोई योजना या कोई और चीज शुरू करते हैं। वाइसरायका एक क्रोध-भरा पत्र ही उन्हें उससे रोकनेके लिए काफी है। लॉर्ड रीडिंगके समयमें क्या हुआ था, आपको मालूम ही है।

एच० एन० ब्रे० : नियन्त्रणके इस प्रश्नके अलावा, यदि नरेश संघीय विधान-मण्डलके ४० प्रतिशत सदस्योंको नामजद करते हैं, तो क्या आपके "करोड़ों अध-पेट खानेवालोंकी" ओरसे कानून बनाये जाने कोई आशा है?

गांधीजी : जैसे हम आपसे निबटे हैं वैसे ही उनसे भी निबट सकते हैं। वह कहीं ज्यादा आसान होगा।

एच० एन० ब्रे० : मेरा खयाल है, उनका उत्तर हमारेसे अधिक क्रूर होगा। हमने लाठी इस्तेमाल की थी। वे रायफल इस्तेमाल करेंगे।

गांधीजी : यह आपका जाति-गर्व है। और यह ठीक ही है। इसके कारण आप मुझे अच्छे लगते हैं। हम सबमें यह होना चाहिए। पर आप यह नहीं समझ रहे हैं कि भारतमें ब्रिटिश सत्ता किस हदतक अपने रुतबेपर टिकी हुई है। भारतीय उससे सम्मोहित हैं। 'आप एक बहादुर जाति हैं, और अपने रुतबेके कारण आप हमें आतंकित कर पाते हैं। मैं यही चीज दक्षिण आफ्रिकामें देख चुका हूँ। जुलू एक योद्धा जाति है, फिर भी एक जुलू रिवालवरको देखते ही, चाहे वह खाली ही क्यों न हो, काँपने लगेगा। यदि हमारा नरेशोंके साथ संघर्ष हुआ, तो उन्हें रुतबेका लाभ प्राप्त नहीं रहेगा। यदि हमारे लोगोंको मराठे सैनिकोंका सामना करना पड़े तो वे अपने मनमें सोचेंगे : 'हम भी मराठे हैं।' दक्षिण आफ्रिकाकी बातसे मुझे उस परिवर्तनका एक दृष्टांत मिलता है जो हम नरेशोंसे अपने सम्बन्धोंमें लाना चाहते हैं। स्वाजीलैंड पहले डाउनिंग स्ट्रीटके नियन्त्रणमें हुआ करता था, लेकिन जब संघ बनाया गया तो नियन्त्रण उसे सौंप दिया गया। हमारा तर्क यह है कि इसी तरह नरेशोंको भारत सरकारके नियन्त्रणमें सौंप दिया जाना चाहिए।

कलाकार : भारतके स्वतन्त्र हो जानेपर क्या आपके लिए ब्रिटिश मालका कोई उपयोग होगा ?

गांधीजी : हाँ, हम तब भी उन चीजोंको चाहेंगे जो आप निर्यात करते हैं, पर एक चीज इसका अपवाद होगी। सूती कपड़ेके सिवा हम हर चीज चाहेंगे। वह हमें खुद ही बनाना होगा।

एच० एन० ब्रे० : हमारे निर्यातमें काफी भाग मशीनोंका होता है। क्या आपके लिए उनका कोई उपयोग होगा ?

गांधीजी : जरूर होगा। मैं खुद साबुन बनानेके लिए मशीन इस्तेमाल करता हूँ और वह मैंने इंग्लैंडसे मँगाई थी। केवल थोड़े-से निष्ठावान आदमी ही ऐसे हैं जो बिना मशीनके सादा जीवन बिता सकते हैं। जन-साधारणका उसके बिना कभी काम नहीं चलेगा। फिर भी, उसके बिना काम चल सकता है। बहुत-सी चीजें, जिन्हें आवश्यक समझनेकी हमें शिक्षा मिली है, कतई आवश्यक नहीं हैं। साबुनकी ही मिसाल लीजिए। तीन महीनेसे मैं साबुनकी एक टिकिया इस्तेमाल कर रहा हूँ, और वह अब भी खत्म नहीं हुई है। शरीरको अच्छा रखनेके लिए वह सचमुच आवश्यक नहीं है, यद्यपि पहले मैं खुद ऐसा सोचता था, और जवानीमें उसका बहुत अधिक उपयोग करता था। मशीनों द्वारा पैदा की गई कृत्रिम आवश्यकताओंके बिना भी सभ्यता —— ऐसा सुसंस्कृत जीवन, जिसमें साहित्य और कलाओंका स्थान होगा —— सम्भव है। पर मैं अपने-आपको धोखा नहीं देता। मैं यह जानता हूँ कि जन-साधारण इस तरहका जीवन कभी नहीं बितायेगा। वह तो थोड़े-से व्यक्तियोंके लिए है।

ये वाहियात कृत्रिम आवश्यकताएँ व्यापारको कितना बढ़ाती हैं, यह देखकर आश्चर्य होता है। बहिष्कारसे मैंने यह जाना है। खिलौनों और चीनी आतिशबाजीका भी कुछ महत्त्व है, यह भला कौन सोच सकता था ? पर आप इस तरहकी चीजें भारतमें भारी मात्रामें निर्यात करते हैं। इन महीनोंमें हमने बहिष्कारकी जबरदस्त शक्ति जानी है; वस्तुतः हम उसे पूरी तरह सिर्फ अभी समझने लगे हैं। मैंने जब उसे शुरू किया था तो मैं सिर्फ कपड़ेकी बात सोचता था, पर उसमें सभी तरहके छोटे व्यवसाय, इत्र-फुलेलतक आते हैं। छोटे लोगोंको इससे जो क्षति पहुँची, उसके लिए मुझे खेद है, यद्यपि लंकाशायरकी बड़ी-बड़ी कम्पनियोंके लिए मुझे उतनी चिन्ता नहीं है।

एच० एन० ब्रे० : हाँ, बहिष्कारका बड़ा असर पड़ा है। यदि आप पीछेकी ओर देखें तो भारतीय स्वशासनके प्रति आजका ब्रिटिश रुख लगभग अविश्वसनीय लगता है।

गांधीजी : हाँ, आप आगे बढ़े हैं। पर आप अब भी हमें आजादी देनेको तैयार नहीं हैं। अभी ऐसा नहीं होगा। भारतको कुछ महीने और प्रतीक्षा करनी होगी। इस परिषद्से मुझे कोई आशा नहीं है। मैं यहाँ सिर्फ इसलिए आया कि लॉर्ड इर्विनसे मैंने वादा कर लिया था कि मैं इसमें भाग लूँगा और हर चीजपर विचार-विमर्श करूँगा।

कलाकार : आप यह मत सोचिए कि आपके विदा किये बिना हम चले जायेंगे। [1]

गांधीजी : (हँसते हुए) इस विषयमें मैं आपके जनरल डायरसे सहमत हूँ। आपको उनका यह महान् कथन याद होगा कि एक अंग्रेजका जीवन हजार भारतीयोंके बराबर है। उनकी स्पष्टवादिताकी मैंने सदा सराहना की है। तो, इस समय मेरे लिए एक अंग्रेज हजार भारतीयोंके बराबर है।

[अंग्रेजीसे]

मैंचेस्टर गार्डियन, १३-१०-१९३१

१०९. पत्र : हे० सॉ० लि० पोलकको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
१२ अक्टूबर, १९३१

प्रिय हेनरी,

हाँ, मैंने 'टाइम्स'की रिपोर्ट पढ़ी है। मैं दोषी नहीं हूँ। बातचीतमें जब निश्चित कुछ था ही नहीं, तो मैं क्या रिपोर्ट देता। सम्बद्ध अंशकी मैंने अनौपचारिक समितिको रिपोर्ट दे दी थी। 'टाइम्स'की सभी रिपोर्टोंकी तरह यह भी एकपक्षीय, अभिप्रेरित और दुष्टतापूर्ण है। उस पत्रमें इससे कहीं अधिक दुष्टतापूर्ण बातें छपी हैं और उसने प्रतिवादोंकी उपेक्षा की है। परन्तु मित्रोंको उससे धक्का लगना चिन्ता-जनक है। इस दुष्टताका क्या इलाज किया जाये, मैं नहीं जानता। आप बीचमें आइए और राह दिखाइए। मैं इतना संकोची हूँ कि अपने-आपको आगे नहीं कर सकता। मेरे अपने कोई रहस्य नहीं हैं। मैं सभी मित्रोंसे मिलने, उनकी सहायता लेने और जितनी सेवा मैं उनकी कर सकता हूँ उतनी सेवा करनेको उत्सुक हूँ।

बीमारी क्या है, यह आप जानते हैं, और आप मुझे व शिकायत करनेवालोंको भी जानते हैं। आपको इसका इलाज ढूँढ़ना चाहिए और उसे अमलमें लाना चाहिए।

सप्रेम,

भाई

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८०६३)से।

१. यह बात इसलिए कही गई कि म्यूरियल लेस्टरने गांधीजी को तभी यह याद दिलाया था कि कई भारतीय मुलाकाती उनसे मिलनेके लिए इंतजार कर रहे हैं।

११०. पत्र : नारणदास गांधीको

१२ अक्टूबर, १९३१

चि० नारणदास,

तुम सबके पत्र मिले किन्तु यहाँ तो मुझे लिखनेका समय नहीं मिलता। अत: अन्य चार साथी जो-कुछ लिखें उतनेसे ही सन्तोष करना।

आज सोमवार है और कमेटीकी बैठक नहीं हो रही, इसलिए इतना लिखनेका समय मिल गया। लोग तो मेरे पास बैठ ही हुए हैं। किन्तु वे आपसमें बातचीत कर रहे हैं और इस बीच मैं यह लिख रहा हूँ।

ऐसा लगता है कि तुम्हारी और छगनलालकी आपसमें बनती नहीं। अब तुम उससे बातचीत करना। वह दु:खी रहता है। यदि बातचीतसे कुछ न बने तो मेरे लौटनेतक इस मामलेको स्थगित रखना।

जमना फिर क्योंकर बीमार हो गई?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

सूरजभानकी कहानी करुणाजनक है। आशा है, अब वह शान्त हो गया होगा। रुक्मिणीके बारेमें जो-कुछ तुम कहना चाहते हो सो मैं समझ गया।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से।

१११. भाषण : नेशनल लेबर क्लबके स्वागत-समारोहमें[1]

लन्दन
१२ अक्टूबर, १९३१

उन्होंने श्री हेंडरसनको धन्यवाद दिया कि . . . "उन्होंने यह दिखानेके लिए कि मैं उनसे कितनी सहायता और सहानुभूतिकी अपेक्षा कर सकता हूँ, इस सभामें आनेका कष्ट उठाया है।" गांधीजी ने श्रोताओंको प्रश्न पूछनेके लिए आमन्त्रित किया और कहा कि स्पष्टवादितासे बहुत ही सहायता मिलती है। उन्होंने बताया कि वे प्रश्नोंके नि:संकोच उत्तर देंगे। अपनी बात जारी रखते हुए गांधीजी ने कहा :

यद्यपि मैं यहाँ परिषद्के लिए आया हूँ, पर मेरा यह विश्वास है कि मेरा कार्य परिषद्के बाहर इस तरहके सम्पर्क स्थापित करनेमें है। परिषद्में मैं अपना

१. स्वागत-समारोह कैक्सटन हॉलमें आयोजित किया गया था और आर्थर हेंडरसनने उसकी अध्यक्षता की थी।

हृदय खोलकर रखने और अपनी सारी योजनाएँ उजागर करनेको कितना ही उत्सुक क्यों न होऊँ, पर प्रत्येक अन्य प्रतिनिधिकी तरह, मैं भी कुछ प्रतिबन्धोंके अधीन हूँ, जिनका मुझे अवश्य पालन करना होता है। इसलिए मैं अपना पक्ष पूरी तरह रखनेमें सफल नहीं होता। यद्यपि मुझे यकीन है कि एक मैत्रीपूर्ण समझौतेकी अपनी सारी कोशिशोंके बावजूद, मुझे खाली हाथ जाना है, फिर भी मैं यदि उन लोगोंके आगे जो भारतके बारेमें जानने-समझनेकी सच्ची इच्छा रखते हैं पर दुर्भाग्यसे, जो कांग्रेसके विषयमें पूर्णतया अवगत नहीं हैं, अपना पक्ष रख सका, तो मुझे पूर्ण सन्तोष होगा। मेरा यह दावा है कि कांग्रेस भारतके जन-साधारणका प्रभावशाली ढंगसे प्रतिनिधित्व करती है और मैं आपसे यह चीज मान लेनेको कहता हूँ कि मैं यहाँ उस स्वाधीनताकी वकालत करने आया हूँ जिसके लिए हजारों-लाखों नर-नारियोंने जेल-यात्रा की है, लाठियाँ खाई हैं और जिसके लिए कुछने अपने अमूल्य प्राणतक न्यौछावर कर दिये हैं। पूर्ण स्वाधीनता ग्रेट ब्रिटेनके साथ ऐसी साझेदारीका, जो पूर्ण समानतापर आधारित हो, और जो किसी भी पक्ष द्वारा समाप्त की जा सकती हो, बहिष्कार नहीं करती है।

इसके बाद गांधीजी ने कांग्रेसका पक्ष रखा और यह बताया कि आरक्षण तथा संरक्षणोंके बारेमें उन्हें अपने विवेकसे कितना-कुछ करनेकी अनुमति है।

उन्होंने यह भी कहा कि अंग्रेजोंमें एक लॉर्ड इर्विन ही ऐसे हैं जो उन्हें खींचकर इंग्लैंड ला सके हैं। भारतके हितके लिए आवश्यक संरक्षणोंकी चर्चा करते हुए, गांधीजी ने कहा कि संरक्षण पारस्परिक हितके लिए होंगे, क्योंकि वे ऐसी व्यवस्थाएँ नहीं चाहेंगे जो ब्रिटेनको नैतिक क्षति पहुँचाती हों, यद्यपि उनमें से कुछका अर्थ भौतिक हानि भी हो सकता है।

भारतमें हम इस निष्कर्षपर पहुँचे हैं कि ब्रिटिश सरकारके कुछ आर्थिक सौदे ऐसे हैं जिनके औचित्यके बारेमें शंका की जा सकती है। उनसे भारतीय जनताको जबरदस्त आर्थिक हानि हो रही है। यह आवश्यक है कि भारतके साथ — देरसे सही — न्याय करते हुए ब्रिटेन कुछ आर्थिक हानि उठाये।

अन्तमें, महात्मा गांधीने अपनी यह हार्दिक आशा व्यक्त की कि भावी इतिहासकार यह कहेंगे कि भारत स्वतन्त्रताके लिए बिना किसीका खून बहाये लड़ा था और विजयी हुआ था।[1]

प्रश्न : यदि हम भारतसे ब्रिटिश सेनाके नियन्त्रणको पूरी तरह हटा लें, तो क्या हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच पारस्परिक झगड़ा खड़ा नहीं हो जायेगा और क्या उससे एक गम्भीर और भयानक परिस्थिति पैदा नहीं हो जायेगी? भारतसे आनेवाले लोग मुझे यह यकीन दिलाते हैं कि परिणाम यही होगा।

उत्तर : यह एक अच्छा प्रश्न है और एक ऐसा प्रश्न है जो जबसे मैं यहाँ आया हूँ मुझसे बहुत बार पूछा गया है और भारतमें भी पूछा जाता रहा है।

१. यहाँतक **इंडियन न्यूज़**से लिया गया है। इससे आगेका अंश **अमृतबाजार पत्रिका**से है।

मेरा उत्तर यह है कि ऐसा हो सकता है। यह सम्भव है कि अगर ब्रिटिश सेना हटा ली जाये तो हम, हिन्दू और मुसलमान, एक-दूसरेसे लड़ने लगें। यदि हमारी दशा इसी तरहकी होनी है, तो मुझे इसकी कोई चिन्ता नहीं है। यह बहुत सम्भव है। लेकिन अगर हम इस अग्नि-परीक्षामें से इसी समय नहीं गुजरते हैं, तो इससे पीड़ा केवल कुछ समयके लिए टल-भर जायेगी। इसीलिए व्यक्तिगत रूपसे मुझे इसकी कोई चिन्ता नहीं है और पूरी कांग्रेसने, जो आज करोड़ों लोगोंके मतों और मनोंपर अधिकार रखती है, यह खतरा मोल लेनेका निश्चय किया है। साथ ही, मुझे स्वयं यह आशा है कि यदि हम सचमुच अहिंसात्मक रूपसे और सचाईके साथ संघर्ष करते रहे, तो हम उस भयानक संकटको टाल सकेंगे। पर मुझे जो चीज हैरान करती है वह यह है कि ब्रिटिश प्रशासक या ब्रिटिश जनसाधारण इस चिन्तासे परेशान क्यों है कि ब्रिटिश सेनाको हटा लेनेपर क्या होगा। वे अपने खुदके इतिहासको याद क्यों नहीं करते? क्या ब्रिटिश लोगोंने अपनी स्वतन्त्रता कायम रखनेके लिए खुद उन्मत्त होकर बहुत ही विकट खतरे मोल नहीं लिये थे? क्या उनके यहाँ 'वार्स ऑफ रोजेज' के नामसे भयानक युद्ध नहीं हुए थे? क्या अंग्रेज लोग स्कॉट लोगोंसे नहीं लड़े थे? क्या अंग्रेजों और आयरिशोंतकके बीच लड़ाई नहीं हुई थी? अगर आप विदेशी शासनको थोपे रखते हैं, तो पुंसत्वहीनता रोज गहरी होती जायेगी और आप इस दुर्लंध्य स्थितिपर पहुँच जाते हैं कि ये लोग एक-दूसरेसे अपनी रक्षा नहीं कर सकते, इसलिए हमारा वहाँ सदैव शासक बने रहना जरूरी है। इसलिए मैं जो भी खतरा हमारे भाग्यमें है, उसे उठाकर आज ही स्वतन्त्रता प्राप्त करना चाहूँगा।

प्र० : हिन्दुओं और मुसलमानोंके दो पक्षोंको जिसका भय है, वह चीज आखिर क्या है?

उ० : मैं नहीं समझता कि हिन्दुओं और मुसलमानोंने यह प्रश्न उठाया है। उन्हें भय न हो, यह बात नहीं है। जहाँतक मुझे मालूम है, यह प्रश्न प्रशासकोंकी ओरसे उठाया गया है, भारतीयों या भारतकी ओरसे नहीं उठाया गया है।

लेकिन, आज जो चीज हिन्दुओं और मुसलमानोंके दिमागमें काम कर रही है वह मैं आपको बताता हूँ। हिन्दुओंको, जिन्हें 'शान्त और सौम्य' कहा गया है — यह प्रयोग प्रायः लाक्षणिक ढंगसे उनकी कायरताको ही सूचित करनेवाला माना जाता है — दुर्भाग्यसे यह भय है कि हो सकता है, ब्रिटिश सेनाओंके हटनेपर उत्तर-पश्चिमसे लुटेरोंके झुंड भारतपर टूट पड़ें और उसे सभी तरहकी क्षति पहुँचायें। यह भय निश्चित रूपसे है, पर हमें खतरा मोल लेना चाहिए।

मुसलमान कहते हैं कि वे हिन्दुओंसे कम पढ़े-लिखे हैं, संख्यामें कम हैं और आर्थिक रूपसे भी उतने खुशहाल नहीं हैं। इसलिए उन्हें पता नहीं कि उनका क्या होगा। हिन्दू, अंग्रेजोंके आनेसे पहले, आखिर मुसलमानोंके साथ आजादी और बराबरीसे रहते ही थे। भारतमें आज हजारों गाँव हैं और उनमें से अधिकांशमें मुसलमानोंकी बहुत ही छितरी आबादी है।

परन्तु वे लोग पूरी शान्तिसे एकसाथ रह रहे हैं। आप पंजाब और बंगाल जाइए, सिंध जाइए, वहाँ आपको हजारों गाँव ऐसे मिलेंगे जहाँ आबादी मुख्यतया मुसलमानोंकी है, हिन्दू सिर्फ थोड़े-से हैं। आप मुझसे पूछते हैं, क्या उन हिन्दुओंको अपनी जानका डर है। अगर उन्हें डर होता, तो वे उन गाँवोंमें न रह रहे होते।

यदि आप बलूचिस्तान जायें, जहाँ प्रायः मुसलमान-ही-मुसलमान हैं, तो आपको वहाँ हिन्दू अकेले व्यापार करते मिलेंगे, और आप मेरी इस बातपर आम तौरपर विश्वास कर सकते हैं कि वे वहाँ त्रस्त और आतंकित अवस्थामें नहीं रह रहे हैं। इसी तरह काबुलमें आपको अनेक हिन्दू और उनसे भी अधिक सिख मिलेंगे।

इससे निष्कर्ष यह निकलता है कि यह तथाकथित भय असलमें बहुत-कुछ गढ़ा हुआ है और यह उतना भय नहीं है जितनी कि सत्ताके उपभोगकी इच्छा है। मैं मानता हूँ कि यह बहुत ऊँची महत्त्वाकांक्षा नहीं है। पर दुनियामें कोई भी — लेबर पार्टीतक — इस महत्वाकांक्षासे मुक्त नहीं है।

प्र० : युद्धके बाद यूरोपके जिन छोटे राज्योंको स्वतन्त्रता दे दी गई थी उनमें घटनेवाली घटनाओंको ध्यानमें रखते हुए, क्या श्री गांधीके खयालमें यदि भारत अपनी मौजूदा नीति जारी रखता है तो वहाँ एक युद्धप्रिय राष्ट्रवादके विकसित होनेकी आशंका नहीं है, जो विश्वके लिए एक खतरा होगा? और क्या श्री गांधीके खयालमें, उनका यह कहना कि स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए वे लाखों लोगोंके जीवनके बलिदानके लिए भी तैयार रहेंगे, एक खतरनाक विचार नहीं है?

उ० : अपने खुदके जीवनको बलिदान करना मेरे खयालमें कोई खतरनाक आदर्श नहीं है, और ये अमूल्य जीवन एक ऐसे राष्ट्र द्वारा बलिदान किये जायेंगे जो जबर-दस्तीके निरस्त्रीकरणमें रह रहा है। मुझे डर है कि हमारे मित्रने शायद मुझे उतने ध्यानसे नहीं सुना है जितनी कि मैं आशा करता था या यदि वीरोचित ढंगसे मैं दोष अपने सिर ले लूँ तो कहूँगा कि मैं अपने आशयको बिलकुल स्पष्ट नहीं कर पाया हूँ।

भारत आज अहिंसाके लिए वचनबद्ध है, इसलिए किसी औरकी जान लेनेका कोई सवाल पैदा नहीं होता। हम अपने जीवनको इतना सस्ता नहीं समझते हैं कि वह व्यर्थ त्याग दिया जाये। पर हम अपने जीवनको स्वतन्त्रतासे अधिक महँगा भी नहीं समझते हैं। इसलिए यदि हमें लाखों जीवन भी बलिदान करने पड़ें तो हम कल ही ऐसा करनेको तैयार हैं, और इसके लिए ईश्वर इसके सिवा और कुछ नहीं कहेगा कि 'बच्चों, शाबाश!'

हम अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त करनेकी कोशिश कर रहे हैं। दूसरी ओर, आप एक साम्राज्यवादी विचारोंवाली जाति रहे हैं। आतंक पैदा करनेकी आपकी आदत रही है। स्वर्गीय जनरल डायरने अदालतमें एक प्रश्नका उत्तर देते हुए कहा था: "हाँ, मैंने यह आतंक जान-बूझकर पैदा किया था।" मैं यहाँ यह कहना चाहता हूँ कि आतंकका सहारा लेनेकी योग्यता रखनेवाले अकेले एक जनरल डायर ही नहीं थे।

आप नहीं चाहेंगे कि मैं आपके अपने ही इतिहासके अनेक और उदाहरण दूं। इसलिए, यदि हम अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके इस प्रयासमें अपने-आपको बलिदान करते हैं, तो मेरे खयालसे इस हॉलमें किसीको हमारी आलोचना नहीं करनी चाहिए। यह आप लोगोंका, जिनपर ब्रिटिश राष्ट्रके सम्मानकी रक्षाका दायित्व है, काम है कि यदि आप इस विनाशको रोक सकते हैं तो रोकें।

आप लोगोंसे यह सम्पर्क स्थापित करनेमें मेरा उद्देश्य आपके आगे मूल स्थिति रखना और यह कहना है कि 'यह भारतका अधिकार है।'

प्र० : आपको स्वाधीनता देकर क्या हम गलती नहीं करेंगे? [1]

उ० : मेरा खयाल है कि यदि आप किसीको भी स्वाधीनता दें तो गलती करेंगे। इसलिए कृपया यह याद रखें कि मैं स्वाधीनताकी भीख माँगने नहीं आया हूँ, बल्कि पिछले साल हमने जो कष्ट भोगे उनके फलस्वरूप और उनके अन्तमें आया हूँ। हमें लगा कि वह घड़ी आ गई है जब हम भारतसे यह देखनेके लिए यहाँ आ सकते हैं कि क्या हम अपने कष्टोंसे ब्रिटिश मनको इतना प्रभावित कर चुके हैं कि मैं एक सम्मानपूर्ण समझौतेके साथ यहाँसे जा सकूँ।

लेकिन यदि मैं एक सम्मानपूर्ण समझौतेके साथ यहाँसे जाता हूँ तो मैं अपने मनमें यह विश्वास लेकर नहीं जाऊँगा कि इस राष्ट्रसे मुझे कोई दान मिला है।

एक राष्ट्र द्वारा दूसरे राष्ट्रको स्वाधीनताका दानदेने-जैसी कोई चीज इस दुनियामें नहीं है। वह अपने खूनसे प्राप्त करनी और खरीदनी होती है, और मैं ऐसा महसूस करता हूँ कि हम इस प्रक्रियामें, जो १९१९ से सोच-विचारकर चलाई जा रही है, अपना काफी खून बहा चुके हैं। पर यह हो सकता है कि ईश्वर यह समझता हो कि हमने अभी काफी यातना नहीं सही है, कि हम अभी आत्मशुद्धिकी प्रक्रियामें से पूरी तरह नहीं गुजरे हैं।

उस स्थितिमें मैं यहाँ यह घोषित करूँगा कि हम आत्मबलिदानकी इस प्रक्रियाको उस समयतक जारी रखेंगे जब कि कोई भी ब्रिटेनवासी शासककी हैसियतसे भारतमें रहना नहीं चाहेगा।

प्र० : इस समय प्रचलित इस विचारके बारेमें श्री गांधीकी क्या राय है कि यदि ब्रिटिश शासक भारतसे हट गये तो रूसी बल-प्रयोग द्वारा अपना प्रभाव-क्षेत्र उस देशपर फैलाना चाहेंगे।

उ० : मैं आपसे स्पष्ट कहूँ कि मैं इसपर एक क्षणके लिए भी विश्वास नहीं करता हूँ। लेकिन मान लीजिए, रूसके भारतके बारेमें इस तरहके गंदे इरादे हैं और वह यह सोचता है कि ब्रिटेनके बाद उसे वहाँ एक साम्राज्य स्थापित करना है, तो मैं सिर्फ यही कह सकता हूँ कि जिन साधनोंसे ब्रिटिश यह समझ पायेंगे कि भारत-पर शासन असम्भव है और बुद्धिमत्ता इसीमें है कि वहाँसे अपना शासन हटा लिया जाये, वही साधन हम रूसके खिलाफ भी सफलतापूर्वक काममें लायेंगे।

१. यह प्रश्न **यंग इंडिया,** २९-१०-१९३१ में प्रकाशित महादेव देसाईके **"लंडन लेटर"** (लंदनका पत्र) से लिया गया है।

एक मिनटके लिए कल्पना कीजिए कि रूस एक विरोधी जनताके खिलाफ क्या कर सकता है। कोई भी जनता, अपनी मर्जीके बिना, किसी दूसरे राष्ट्र द्वारा अभी तक शासित नहीं हुई है। मुझे आशा और विश्वास है कि मेरे लोगोंने यह चीज सीख ली है कि अब अनिच्छासे भी सहयोग देनेकी जरूरत नहीं है। इसके साथ बलिदानका कुछ अंश — असहयोगके साथ जुड़ा बलिदान — रहता ही है।

यदि हम रूसियोंके साथ व्यापार करने, उनकी चीजें और उपाधियाँ लेने, उनका धन लेनेसे इनकार कर दें, तो रूसी या पृथ्वीका कोई भी और राष्ट्र क्या करेगा? मैं यह मानता हूँ कि भारत अभी किसी भी राष्ट्रसे युद्ध करनेको तैयार नहीं है, पर मुझे आशा है कि इस अवसरका उपयोग मैं अपने लोगोंको एक कदम और आगे ले जानेके लिए कर सकूँगा।

यदि आप यह समझ गये हैं कि हम सचमुच काफी यातना सह चुके हैं और हमारे पास इस असहयोग और सत्याग्रहके रूपमें, विदेशी आक्रमण और शोषणसे अपनी रक्षा करनेके अनोखे साधन हैं; यदि आप यह समझ गये हैं, तो आप मुझे अपने लोगोंके लिए स्वतन्त्रता प्राप्त करनेमें सहायता देंगे। फिर आप यह भी देखेंगे कि जो लोग इन साधनोंसे स्वतन्त्रता प्राप्त कर सकते हैं वे इन साधनोंसे उसे कायम भी रख सकते हैं। तब आपको लगेगा कि भारतने युद्धके खिलाफ छेड़े युद्धमें बड़ेसे-बड़ा योगदान किया है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन न्यूज़, १५-१०-१९३१ और **अमृतबाजार पत्रिका**, ३०-१०-१९३१

११२. भेंट : समाचारपत्रोंके प्रतिनिधियोंको

लन्दन
१३ अक्टूबर, १९३१

मैं आक्रामक रुख अपनाना नहीं चाहता हूँ। मैं यह कहता हूँ कि साम्प्रदायिक प्रश्नका हल खोजनेमें यह असफलता बहुत हदतक नये संविधानके बारेमें जानकारीके अभावके कारण है, और इस कारण भी है कि परिषद्‌में आये लोग प्रातिनिधिक हैसियत नहीं रखते हैं। सरकार यह बात खूब अच्छी तरह जानती है कि अकेली कांग्रेस ही ऐसी संस्था है जो कुछ करके दिखा सकती है। फिर उसकी इस दिखावटी बातसे क्या फायदा है कि कांग्रेस विभिन्न दलोंमें से — जैसे हिन्दू, दलित वर्ग, ईसाई, जागीरदार, जमींदार — एक दल है। जब संघर्ष चल रहा था तो हिन्दू सभा कांग्रेससे भिन्न नहीं थी। मुझे यकीन है कि यदि आज जनमत-संग्रह हो, तो हिन्दू और दलित वर्ग भारी बहुसंख्यामें कांग्रेससे सहानुभूति रखनेवाले निकलेंगे। मुझे यकीन है कि राष्ट्रवादी मुसलमान अपना महत्त्व सिद्ध कर पायेंगे। यदि मेरा बस चले तो मैं निश्चय ही मुसलमानोंके आगे आत्मसमर्पण कर दूंगा। पर सरकारको उन मतभेदोंको

बढ़ा-चढ़ाकर रखनेसे, जो ज्यादातर प्रतिनिधि-मण्डलके गठनके कारण हैं — और यह गठन उसका ही किया हुआ है, कोई लाभ नहीं होगा। यदि सरकार साम्प्रदायिक समझौता होनेसे पहले संविधान तैयार करनेके सचमुच पक्षमें नहीं है, तो मैं उसे इस काममें जुटनेके लिए आमन्त्रित करता हूँ। मैं कांग्रेसको मान्य न्यूनतम शर्तोंपर सरकारके साथ सहयोग करनेको तैयार हूँ। कांग्रेस इस बातपर जोर देती है कि सेना, विदेशी नीति और वित्तपर हमारा पूर्णतम नियन्त्रण रहना चाहिए। अब सरकार कांग्रेसकी इन माँगोंको चाहे स्वीकार करे, चाहे रद कर दे।

मुझे सरकारसे यह अपेक्षा नहीं है कि वह भारतके प्रश्नको इस सम्मेलनमें सुलझायेगी। पर मैं इसमें इसलिए भाग ले रहा हूँ कि मैंने लॉर्ड इर्विनसे हर मुद्देपर विचार-विमर्श करनेका वादा किया था, जो मुझे पूरा करना है। और फिर सम्मेलनके बाहरके सम्पर्क मेरे लिए और भी अधिक मूल्य रखते हैं।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १५-१०-१९३१

११३. भाषण : भारतीय छात्रोंकी सभामें[1]

लन्दन

१३ अक्टूबर, १९३१

गांधीजी ने, भारतके बुनियादी दावोंको दोहरानेके बाद, कहा कि मैं भारतसे रवाना होनेसे पहले ही यह जानता था कि इनके मंजूर होनेकी सम्भावना नहीं है, क्योंकि किसी भी राष्ट्रको अपनी खोई हुई आजादी अभीतक अपनी बात [प्रतिपक्षी-की] बुद्धिको समझाने-बुझानेसे नहीं मिली है। उसके लिए सदा इससे कहीं अधिक गम्भीर चीजकी जरूरत रही है। भारत इसका अपवाद होगा, ऐसा मैं नहीं सोचता हूँ। अब यह चीज और भी साफ हो गई है कि विजय केवल कष्ट सहकर ही प्राप्त की जा सकती है। पर मैं यह आशा कर रहा था कि जो कष्ट अबतक हमने सहे हैं उनका शायद ब्रिटिश मनपर इतना असर तो पड़ा ही होगा कि वह तर्क और वार्त्ताके लिए अनुकूल हो।

मुझे यह बात अवश्य स्वीकार कर लेनी चाहिए कि जैसे-जैसे मैं आगे बढ़ता हूँ, यह मुझे भगीरथ प्रयत्न लगता है। शायद इसमें से कुछ भी नहीं निकलेगा। पर, आशावादी होनेके कारण, मैं तबतक बिलकुल आशा नहीं छोड़ूंगा जबतक कि मुझे यह न लगने लगेगा कि अब कुछ और किया ही नहीं जा सकता। फिर भी ईश्वरसे मेरी प्रार्थना है कि जो बीज इस समय बोया जा रहा है वह इस देशकी चेतनामें

१. सभा गोवर स्ट्रीट होस्टल, ब्लूम्सबरीमें हुई थी और भारतीय यं० मैं० क्रि० ए० के सर एवर्ट ग्रीव्ज उसके सभापति थे।

फलीभूत हो और मन्त्री लोग उस राष्ट्रके साथ समझौता करनेको अपनेको बाध्य अनुभव करें जिसके लोग अपने अधिकारोंके लिए इतना अधिक कष्ट सह रहे हैं।[1]

यह हो सकता है कि जो बीज इस समय बोया जा रहा है उसके फलस्वरूप अंग्रेजोंका रुख नरम हो जाये और इस तरह मनुष्यके पाशवीकरणकी यह प्रक्रिया रुक जाये। पंजाबमें मैंने ब्रिटिश स्वभावके घिनौने रूपको जाना है। मैंने उसे अन्यत्र भी जाना है। इन पन्द्रह वर्षोंके अनुभव और इतिहाससे मैंने जाना है कि यही चीज हो रही है। मेरा उद्देश्य अपने पास उपलब्ध सभी साधनोंसे इस तरहके विनाशकी पुनरावृत्तिको रोकना है। अपने लोगोंके कष्टोंको रोकनेसे भी अधिक मुझे मानव-स्वभावके पाशवीकरणको रोकनेकी चिन्ता है।

मैंने प्राय: अपने लोगोंके कष्टोंपर हर्ष प्रकट किया है। मैं जानता हूँ कि जो लोग स्वेच्छासे कष्ट सहते हैं, वे अपने-आपको और समस्त मानव-जातिको ऊपर उठाते हैं। परन्तु मैं यह भी जानता हूँ कि जो लोग अपने विरोधियोंपर विजय प्राप्त करने, या दुर्बल राष्ट्रों या लोगोंका शोषण करनेके अपने दु:साहसिक प्रयत्नोंमें अपना पाशवी-करण कर लेते हैं, वे न केवल अपने-आपको बल्कि मानव-जातिको भी नीचे ले जाते हैं। और मानव-स्वभावको रसातलमें जाते देखना मेरे या किसी औरके लिए आनन्द-दायी नहीं हो सकता। यदि हम सब एक ही ईश्वरकी सन्तान हैं और एक ही दिव्य सत्त्वके भागीदार हैं, तो हमें प्रत्येक व्यक्तिके, चाहे वह हमारी जातिका हो या किसी औरका, पापका भी भागीदार बनना चाहिए। आप यह समझ सकते हैं कि किसी मानव-प्राणीमें पाशविकताको चेताना कितना घृणित होगा, और अंग्रेजोंमें, जिनमें मेरे अनेक मित्र हैं, ऐसा करना तो बहुत ही अधिक घृणित होगा। इसलिए जो प्रयत्न मैं कर रहा हूँ उसमें मैं आपसे यथाशक्य अधिकतम सहायता देनेका अनुरोध करता हूँ।

भारतीय छात्रोंसे मेरी यह अपील है कि वे इस प्रश्नका पूरी तरह अध्ययन करें। और यदि आपका अहिंसा और सत्यकी शक्तिमें सचमुच विश्वास है, तो ईश्वरके लिए इन दोनोंको केवल राजनीतिक क्षेत्रमें ही नहीं, बल्कि अपने दैनिक जीवनमें व्यक्त कीजिए। आप देखेंगे कि इस दिशामें आप जो कुछ भी करेंगे उससे मुझे इस संघर्षमें सहायता मिलेगी। यह सम्भव है कि जो अंग्रेज स्त्री-पुरुष आपके निकट-सम्पर्कमें आयें वे संसारको यह विश्वास दिलायें कि भारतीय छात्रों-जैसे अच्छे और सच्चे छात्र उन्होंने पहले कभी नहीं देखे थे। आपके खयालमें क्या उससे हमारे राष्ट्रकी माँगके न्यायसंगत सिद्ध होनेमें बहुत सहायता नहीं मिलेगी? १९२० के कांग्रेसके एक प्रस्तावमें[2] आत्मशुद्धि शब्दका प्रयोग हुआ है। तबसे कांग्रेसने यह महसूस किया कि हमें अपने-आपको शुद्ध करना है। हमें आत्मबलिदान द्वारा अपनेको शुद्ध करना है, जिससे कि हम स्वाधीनताके अधिकारी हो सकें और ईश्वर भी हमारे साथ हो सके। यदि ऐसा होता है तो ऐसा प्रत्येक भारतीय, जिसका जीवन आत्मबलिदानकी भावनाका

१. इसके बादका अंश **यंग इंडिया**में प्रकाशित महादेव देसाईके "लन्दन लेटर" (लन्दनका पत्र)से लिया गया है।

२. कलकत्तामें ४ से ९ सितम्बर, १९२० तक हुए कांग्रेसके विशेष अधिवेशनमें पास किया गया प्रस्ताव।

प्रमाण होगा, कुछ किये बिना ही, अपने देशकी सहायता कर सकेगा। कांग्रेसने जो साधन अपनाये हैं, मेरे खयालसे, उनमें इसी तरहकी शक्ति है। इसलिए स्वतन्त्रता-संग्राममें यहाँके हर छात्रको अपने-आपको शुद्ध करने और ऐसा चरित्र पेश करनेके सिवा, जो अपवाद और सन्देहसे परे हो, और कुछ करनेकी आवश्यकता नहीं है।

प्र० : सुना यह गया है कि लॉर्ड इर्विनने सेंट्रल हॉलमें एक भाषणमें कहा है कि वे यह जानते थे कि आप पूर्ण स्वाधीनतापर जोर नहीं देंगे। क्या यह सच है?

उ० : देखिए, पहली बात तो यह है कि जो भाषण लॉर्ड इर्विनका दिया बताया गया है वह उन्होंने दिया है, यह मुझे नहीं मालूम। दूसरे, लॉर्ड इर्विनकी ओरसे मुझे कुछ कहना नहीं चाहिए। वह प्रश्न उन्हींसे किया जाये तो अच्छा हो। पर मैंने लॉर्ड इर्विनसे यह कभी नहीं कहा कि मैं पूर्ण स्वाधीनतापर जोर नहीं दूँगा। इसके विपरीत, यदि मेरी स्मृति मुझे धोखा नहीं दे रही है तो मैंने उन्हें बता दिया था कि मैं पूर्ण स्वाधीनतापर जोर दूँगा, और मेरे लिए उसका अर्थ भारतपर एजेंटोंके जरिये — अंग्रेज एजेंटोंकी बजाय भारतीय एजेंटोंके जरिये — शासन नहीं है। पूर्ण स्वाधीनताका अर्थ मेरे लिए राष्ट्रीय सरकार है।

प्र० : आप ब्रिटिश सैनिकोंको रखनेसे पूर्ण स्वाधीनताका मेल कैसे बैठाते हैं?

उ० : ब्रिटिश सैनिक भारतमें रह सकते हैं और यह चीज उस व्यवस्थापर निर्भर करेगी जो दोनों पक्ष तय करेंगे। यह चीज एक सीमित अवधिके लिए भारतके हितमें होगी, क्योंकि भारत हतवीर्य हो चुका है और राष्ट्रीय सरकारके अधीन और उसकी सेवामें ब्रिटिश सैनिकों या ब्रिटिश अधिकारियोंके कुछ अंशको रखना आवश्यक है। मैं साझेदारीका समर्थन करूँगा और उन सैनिकोंको रखनेका भी समर्थन करूँगा।

प्र० : स्वाधीन भारतकी बात करते हुए क्या आप वहाँ वाइसरायके रहनेकी कल्पना करते हैं?

उ० : वाइसराय रहता है या नहीं, यह एक ऐसा प्रश्न है जिसका दोनों पक्ष निर्णय करेंगे। अपनी ओरसे यदि मैं कहूँ तो मैं वाइसरायके रहनेकी कल्पना नहीं कर सकता। किन्तु मैं एक ब्रिटिश एजेंटके वहाँ रहनेकी कल्पना कर सकता हूँ, क्योंकि बहुत-से ब्रिटिश हित वहाँ होंगे जो ब्रिटेनवासियोंने पैदा किये हैं और जिन्हें मैं व्यक्तिगत रूपसे नष्ट करना नहीं चाहता हूँ। वह एजेंट उन हितोंका प्रतिनिधित्व करेगा। गरज यह कि उन हितोंको ध्यानमें रखते हुए और यदि वहाँ कुछ ब्रिटिश सैनिक और अधिकारी रहें तो उनका भी खयाल करते हुए मेरे लिए यह कहना नामुमकिन है कि 'नहीं, वहाँ कोई ब्रिटिश एजेंट नहीं रहेगा।' और क्योंकि इससे नरेश भी सम्बद्ध हैं, इसलिए नरेश क्या करेंगे, यह मैं नहीं कह सकता। इसीलिए मेरे मनमें जो योजना है उसमें वहाँ कोई ब्रिटिश एजेंट — चाहे उसे वाइसराय कहिए या गवर्नर-जनरल — नहीं होगा, ऐसी मुझे आशा नहीं है। किन्तु मैं उसका एक ऐसी साझेदारीके रूपमें समर्थन करूँगा जिसमें यह शर्त रहेगी कि वह पूर्ण समानताके आधारपर होगी और किसी भी पक्षकी इच्छापर समाप्त हो सकेगी। मैं एक ऐसी स्लेटपर लिख रहा हूँ जिसपरसे मुझे बहुत-सी चीजें मिटानी हैं।

प्र० : इस तरहकी साझेदारी किन समान उद्देश्योंको आगे बढ़ायेगी ?

उ० : वह साझेदारी जिस समान उद्देश्यको आगे बढ़ानेवाली है वह है, पृथ्वीपर जातियोंके शोषणको समाप्त करना। भारत यदि शोषणके इस अभिशापसे, जिसमें वह इतने सालोंसे तड़प रहा है, मुक्त हो जाता है तो भारतको यह देखना होगा कि अब और शोषण न हो। सच्ची साझेदारी एक-दूसरेके लाभके लिए होगी। वह साझेदारी ऐसी दो जातियोंके बीच होगी जिनमें से एक अपने पौरुष, शूरवीरता, साहस और संगठनकी अपनी अतुलनीय शक्तियोंके लिए प्रसिद्ध है, और दूसरी एक प्राचीन जाति है, जिसकी संस्कृति शायद किसी भी अन्य संस्कृतिसे नीची नहीं है, जो अपने आपमें एक महाद्वीप है। इन दो राष्ट्रोंकी साझेदारीका फल दोनोंकी भलाई और मानव-जातिकी भलाई ही हो सकता है।[1]

साम्प्रदायिक समस्याकी विस्तारसे चर्चा करते हुए उन्होंने कहा कि वे अल्पसंख्यकोंके अधिकारोंको बेच नहीं सकते और इस बातपर फिर जोर दिया कि कांग्रेस मुख्य रूपसे करोड़ों मूक लोगोंकी प्रतिनिधि है।

स्वर्णिम नियम यह है कि इस तरहके मामलोंपर समाचार-पत्र जो-कुछ कहते हैं उससे बिलकुल उलटा मानो। मैं हिन्दुओं और सिखोंको इस चीजके लिए राजी करनेकी कोशिश कर रहा हूँ कि मुसलमान जो चाहते हैं वह उन्हें दे दिया जाये, और मुसलमानोंको इस बातके लिए राजी करनेकी कोशिश कर रहा हूँ कि वे अपनी माँगें ऐसी रखें कि वे अन्य सम्प्रदायोंको स्वीकार हो सकें।

छोटे अल्पसंख्यक समुदायोंकी चर्चा करते हुए, उन्होंने बम्बईके पारसियोंकी भूमिकाको इस बातके उदाहरणके तौरपर रखा कि संख्याकी दृष्टिसे नगण्य समुदाय, विशेष सुविधाओंके बिना, क्या-कुछ कर सकते हैं और यह बताया कि बालिग मताधिकार सबको समान रूपसे कितने महान् अवसर प्रदान करेगा।

मुसलमानों व सिखोंके सिवा अन्य अल्पसंख्यकों और अछूतोंके दावोंका गांधीजी ने बहुत ही डटकर विरोध किया। उन्होंने कहा :

मैं अपनी जानकी बाजी लगाकर भी उन दावोंका विरोध करूँगा और आपसे यह अनुरोध करता हूँ कि आप मेरे साथ उन प्रतिनिधियोंको इतनी शर्म दिलायें कि वे उन्हें वापस ले लें।

उन्होंने इस बातका खण्डन किया कि उन्होंने मुसलमानोंके आगे यह प्रस्ताव रखा है कि यदि वे अछूतोंकी माँगोंके विरोधमें उनका साथ देंगे तो वे उनकी माँगें स्वीकार कर लेंगे। उन्होंने कहा कि वे मुस्लिम और सिख-माँगोंको स्वीकार करनेके लिए ऐतिहासिक कारणोंसे बाध्य हुए हैं, पर वे किसी अन्य समुदायके विशेष प्रतिनिधित्वको मंजूर करनेके लिए किसी भी हालतमें राजी नहीं होंगे।

१. इससे आगेका अंश हिन्दूसे लिया गया है।

इंग्लैंडके लोगोंके सद्भावनाके प्रदर्शनोंसे उन्हें यह विश्वास हो गया है कि अंग्रेज जनता भारतमें दमनको फिर कभी सहन नहीं करेगी। उन्होंने छात्रोंसे यह अपील की कि यदि भारतीयोंके लिए अहिंसात्मक प्रतिरोध और असहयोग फिर शुरू करना आवश्यक हो जाये तो उनको आदर्श व्यवहार करना चाहिए और उन्हें अंग्रेज जनताका सम्मान अर्जित करना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १४-१०-१९३१, और **यंग इंडिया**, २९-१०-१९३१

११४. तार : डॉ० मु० अ० अन्सारीको

८८, नाइट्सब्रिज
[१४ अक्टूबर, १९३१ के पूर्व][1]

डॉ० अन्सारी
दरियागंज
दिल्ली

आपके बारेमें तीन कष्टदायी वार्त्ताएँ हो चुकी हैं जिनका कोई फल नहीं निकला। उन्हें बता दिया है कि उनकी माँगका मैं आपकी स्वीकृति बिना समर्थन नहीं कर सकता और यह कि आपकी सहायता प्रतिक्षण आवश्यक है। फिर भी इसपर सहमत हो गया हूँ कि आपके बिना भी समझौतेके हर प्रयत्नमें सहायता करूँगा, यद्यपि सफलताकी कोई सम्भावना नहीं है।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८२१७) से।

१. साधन-सूत्रमें तारीख नहीं दी गई है। किन्तु गांधीजीने "वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको", १४-१०-१९३१ में डॉ० अन्सारीके उपस्थित न रहनेके कारण 'बाधा' का उल्लेख किया है।

११५. वक्तव्य : 'आइलैंड' को[1]

लन्दन

[१४ अक्टूबर, १९३१ या उसके पूर्व][2]

कलाकारों और कवियोंका अपने-आपको इस युगके व्यापारिक और औद्योगिक प्रभावोंकी बेड़ियोंसे मुक्त करनेका आन्दोलन एक बहुत ही प्रशंसनीय साहसिक कार्य है, बस उनमें उसे करने-लायक शक्ति होनी चाहिए। धर्म कलाका सही और चिर-कालीन साथी है। धर्म लोगोंको जिसकी शिक्षा देता है, कलाकार उसीको शिल्पके धरातलपर रूपमें उनके निकट लाता है। 'कला कलाके लिए' की बातसे, जो मेरे विचारमें मानव-मनकी एक शोचनीय भूल है, मुझे नफरत है। कलाकी धर्मसे इस बातमें गहरी समानता है कि उन दोनोंमें मूल अनुभूतिका क्षेत्र मनुष्यका ईश्वरसे सम्बन्ध होता है। भारतीय कला इस सम्बन्धको प्रतीकोंमें व्यक्त करती है और साथ ही धार्मिक उपासनाकी क्रिया-विधिको भी व्यक्त करती है। यदि कोई कलाकार, यह मानकर कि उसके इर्द-गिर्द जो लोग हैं उनमें कोई धार्मिक भावना नहीं है, धर्मका मजाक उड़ाता है, तो वह अनिवार्य रूपसे अपने पेशेको निरर्थक बनाता है। दूसरी ओर यदि वह ऐसा महसूस करता है कि उसका एक ध्येय है, तो कवि या कलाकारको यह अधिकार है कि वह प्रचलित विश्वास या विश्वासहीनताका विरोध करे, और उसके अपने अन्तर्ज्ञानके बृहत्तर मूल्यके कारण उसका वह कार्य न्यायोचित होगा। कलाके बारेमें कुछ जाननेका मैं दावा नहीं करता, पर मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि धर्म और कला दोनोंको नैतिक और आध्यात्मिक उत्थानके एक-जैसे उद्देश्योंकी पूर्ति करनी है। ईश्वरके साथ मनुष्यका सम्बन्ध ही सदा जीवनका केन्द्रीय अनुभव रहेगा, और कोई अन्य चीज कभी भी उसपर हावी नहीं होगी या उसका स्थान नहीं लेगी, जैसे कि मानव-शरीर कभी भी गुरुत्वाकर्षणके नियमसे मुक्त नहीं होंगे। ईश्वरके साथ मनुष्यके इस सम्बन्धमें रहस्यात्मक शक्तियोंका ही महत्त्व है, शब्दोंमें अभिव्यक्त अपर्याप्त वचनोंका महत्त्व नहीं है। जैसा कि मानव-जातिके विभिन्न और पूर्वापर धर्म दिखाते हैं, ईश्वरके साथ मनुष्यके इस सम्बन्धमें परिवर्तन हो सकते हैं। पर कार्डिनल न्यूमनके शब्दोंमें : "मेरे लिए एक डग काफी है।"

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०५५-ए) से।

१. गांधीजी ने यह वक्तव्य पत्रके सम्पादक जोज़ेफ बार्डके साथ अपनी बातचीतमें दिया था। सम्पादकने उसे लिपिबद्धकर उसकी प्रति स्वीकृतिके लिए गांधीजी को भेजी। गांधीजी ने अन्तिम पैरेको छोड़ बाकीकी स्वीकृति दे दी। अन्तिम पैरा इस प्रकार था : "उपासक और कलाकार, दोनों तरहके मनुष्य जो पवित्र है, उसतक पहुँचनेकी आकांक्षा रखते हैं और असंस्कृत मनवाले जब उनके बलिदानोंके कारण उनपर तरस खाते हैं, तो वे यह भूल जाते हैं कि वे बलिदानमें आनन्दका अनुभव करते हैं, उनके लिए बलिदान —'सैक्रीफाइस'—अपने मूल अर्थ, 'पवित्रतक पहुँचनेके मार्ग' का ही द्योतक होता है।"

२. आइलैंडमें इसपर १४ अक्टूबरकी तारीख दी गई थी।

११६. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको

लन्दन
१४ अक्टूबर, १९३१

यद्यपि यह बहुत ही दुःखकी बात है कि साम्प्रदायिक समझौतेकी वार्त्ता विफल रही, पर मैंने सफलताकी आशा छोड़ी नहीं है।

प्रधान मन्त्रीके जबरदस्त प्रतिवादके बावजूद, मेरी अब भी यही धारणा है कि विफलताके कारण सम्मेलनके गठनमें ही निहित थे। मुझे अब इस बातपर और भी अधिक विश्वास हो गया है कि संविधानकी रचना साम्प्रदायिक प्रश्नके पहले सुलझाये जानेपर निर्भर नहीं होनी चाहिए। इसलिए प्रधान मन्त्रीका यह सुझाव गलत था कि संविधानकी रचनामें आगे और प्रगति, बहुत हदतक, साम्प्रदायिक समझौतेपर निर्भर करती है। यहाँकी घटनाओंका विवेचन करते हुए, भारतीय जनताके लिए सरकारी प्रक्रियाके इन दो दोषोंको ध्यानमें रखना अच्छा रहेगा। तब वह हर विफलतापर विक्षुब्ध नहीं होगी।

मुस्लिम प्रतिनिधि-मण्डलके साथ मेरी कई लम्बी वार्त्ताएँ हुई हैं, पर हम किसी अन्तिम निष्कर्षपर नहीं पहुँच सके। डॉ० अन्सारीकी अनुपस्थिति मुझे एक भारी बाधा लगी, पर जबतक मुस्लिम प्रतिनिधि-मण्डल एक प्रतिनिधिकी हैसियतसे उनके चुनावको चाहता या स्वीकार नहीं करता है, उनका कोई वास्तविक उपयोग नहीं हो सकेगा।

मैंने जो रुख अपनाया है वह दो तरहका है। व्यक्तिगत रूपसे मैंने अपना पहलेका रुख कायम रखा है, अर्थात् सभी पक्षोंकी सभी बातें मान लेना। परन्तु कांग्रेसके एक प्रतिनिधिकी हैसियतसे मैंने एक मध्यस्थकी तरह काम करनेका प्रयत्न किया है, जिसमें अबतक सफलता नहीं मिली है। मैंने यह चीज स्पष्ट कर दी है कि किसी भी योजनाको स्वीकार करनेसे पहले मुझे कार्य-समितिकी स्वीकृति लेनी होगी। मेरे आगे क्योंकि निश्चित कुछ भी नहीं है, इसलिए मैंने कार्य-समितिसे कुछ नहीं पूछा है।

साथ ही मैं सभी पक्षोंसे सम्पर्क रख रहा हूँ। जैसे ही मेरे सामने कोई चीज ऐसी आयेगी जिसपर मुझे कार्रवाही करनी होगी, मैं निर्देश माँग लूँगा। इस बीच मैं जन-साधारणको इस चीजसे सावधान करना चाहूँगा कि वह समाचारपत्रोंकी रिपोर्टोंसे प्रभावित या उत्तेजित न हो।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १५-१०-१९३१

११७. भाषण : संघ-संरचना समितिके समक्ष

लन्दन
१४ अक्टूबर, १९३१

लॉर्ड चांसलर महोदय और मित्रो,

बहसमें हस्तक्षेपके लिए मैं क्षमा चाहता हूँ। मेरा इरादा आपसे यह प्रार्थना करनेका था कि इस विचार-विमर्शके अन्तमें मुझे संक्षेपमें कुछ बातें रखनेके लिए कुछ मिनट दिये जायें। लेकिन कल विचार-विमर्शको सुनते हुए मैंने सोचा कि शायद मैं एक ऐसा सुझाव रख सकूँ जिससे, जिस कठिनाईसे इस समितिको जूझना पड़ा, वह दूर हो सकती है। श्री जिन्नाने जब अपनी कठिनाई रखी तो मुझे इस बातका और भी ज्यादा यकीन हो गया। इसीलिए, लॉर्ड चांसलर महोदय, डॉ० शफात अहमदसे क्षमा चाहते हुए मैंने आपसे यह प्रार्थना की कि मुझे बीचमें बोलने और कुछ बातें रखने दी जायें। मैं ऐसा, यदि सम्भव हो तो, समय बचानेके लिए कर रहा हूँ।

अपना सुझाव रखनेसे पहले, मैं लॉर्ड पीलकी उप-समितिको, जो श्रम उसने किया है और जिस तरहकी विस्तृत रिपोर्ट हमें दी है, उसके लिए अपनी बधाई देना चाहता हूँ। पर मैं ऐसा महसूस करता हूँ कि उप-समितिने अपना लक्ष्य अत्यधिक ऊँचा रखा और इसलिए, अनजाने ही, हमारे बीच झगड़ेका बीज बो दिया। यह संकेत, साफ-साफ, उन आम सिद्धान्तोंके विवेचन और उनकी रिपोर्टकी ओर है जिनके आधारपर भारतके वित्तीय साधनों और दायित्वोंका संघ आदिके बीच बँटवारा होना चाहिए। मेरी विनम्र रायमें, यदि उप-समितिने अपना लक्ष्य अत्यधिक ऊँचा न रखा होता, तो वह हमें एक सुनिश्चित योजना दे सकती थी। श्री जिन्नाकी आपत्तिसे मुझे सहानुभूति है; पर मेरे खयालमें उनकी आपत्तिका मूल कारण सर तेजबहादुर सप्रूने अपना जो पक्ष रखा है, उसे ठीकसे न समझना है। यदि मैं उनकी बात ठीकसे समझ पाया हूँ तो मुझे तो यही लगता है। जिन्नाकी आपत्ति यह है कि जबतक किसी तरहकी एक योजना न हो, किसी भी तरहका कोई संघ हो ही नहीं सकता। मेरे विचारसे यह आपत्ति यदि सच्ची हो तो एक घातक आपत्ति होगी। सर तेजबहादुर सप्रूकी बातको यदि मैंने ठीक-ठीक समझा है तो वह यह है कि योजना तो होनी चाहिए, पर — अगर संघीय सरकार बनती है तो — संघीय सरकार द्वारा बनाई गई एक विशेषज्ञ समिति हो सकती है और होनी चाहिए, और यह समिति सारे प्रश्नपर नये सिरेसे विचार करे और उस सरकारको एक विस्तृत रिपोर्ट पेश करे। वह रिपोर्ट, जैसा कि स्वाभाविक है, विचार किये बिना ही उठाकर रखी जा सकती है, फाड़ी भी जा सकती है और सभी पक्ष उसपर विचार भी कर सकते हैं, और यदि वह उन्हें अच्छी लगे तो संघीय सरकार उसे स्वीकार कर सकती है। उस रिपोर्टको किसी संविधानका अंग बनानेका कोई सवाल नहीं था। संविधान तो संघीय सरकारके अस्तित्वमें आनेसे पहले बन चुका होगा। निजी तौरपर, मैं यह स्वीकार करता हूँ

कि मैं किसी ऐसे संविधानकी कल्पना नहीं कर सकता — चाहे वह संसारकी बड़ीसे-बड़ी संसद द्वारा ही निर्मित क्यों न हो — जो हमें सारे खतरों और सारी कठिनाइयों-से बचा सके। मैं यह मानता हूँ कि संघीय सरकार यदि अस्तित्वमें आई तो उसके सामने आरम्भमें ही बहुत-सी ऐसी कठिनाइयाँ आयेंगी जिनसे उसे साहसके साथ जूझना होगा। लेकिन मैं यह महसूस करता हूँ कि हमें एक ऐसी प्राथमिक योजना देना, जिसके बारेमें सभी पक्ष सहमत हों, इस उप-समितिकी सामर्थ्यसे बाहरकी बात नहीं होगी। यह योजना कितनी ही साधारण हो, मुझे उसकी चिन्ता नहीं है, पर वह ऐसी योजना होनी चाहिए जो रियासतोंको अच्छी लगे। रियासतोंको इस सम्मेलनके अन्य सदस्योंके साथ परामर्श करके स्वयं यह निर्णय करना चाहिए कि वे कहाँतक जानेको तैयार हैं।

जो-कुछ मैं कह रहा हूँ उसे एक उदाहरणसे स्पष्ट करता हूँ। यहाँ, क्योंकि उन्होंने बात उन कठिनाइयोंसे शुरू की है जिनसे उन्हें जूझना होगा, यह पूरी रिपोर्ट एक प्रयोगात्मक रिपोर्ट है और इसका अन्तिम रूप उन दो विशेषज्ञ समितियोंपर निर्भर करता है जो इस उप-समिति द्वारा सुझाई गई हैं। मैं यह महसूस करता हूँ कि जैसे उसने अनुच्छेद १० में यह कहा है कि इतनी मदें 'संघीय' बताई गई हैं, उसी तरह यदि वह अपनी बैठक फिर करे और यह रिपोर्ट उसीको फिर वापस भेज दी जाये, तो वह फिर हमारे सामने कोई प्रयोगात्मक सुझाव लेकर नहीं, बल्कि इस बातका एक सम्मत सुझाव लेकर आयेगी कि राजस्वकी इतनी मदें संघीय होंगी। यदि एक विशेषज्ञ समिति नियुक्त कर भी दी जाती है, तो भी हमें निश्चय ही बिलकुल सही आँकड़े नहीं मिलेंगे। बिलकुल सही आँकड़े तो सिर्फ घटनाके घट चुकने — राजस्वके एकत्रित हो जाने — के बाद ही मिल सकते हैं। पर हमें शुरू करनेके लिए कुछ चीज चाहिए। मैं यह सुझाव देना चाहता हूँ कि कौन-सी मदें संघीय समझी जायेंगी और कौन-सी नहीं समझी जायेंगी — इसपर हमारा कोई समझौता होनेसे पहले, इस तरहकी चीज हमारे प्रयोजनके लिए आवश्यक नहीं है। इसलिए मैं केवल इन मदोंको लेता हूँ और कहता हूँ कि उसे हर दूसरी चीजसे हटकर अपना सारा ध्यान इन मदोंपर ही केन्द्रित करना चाहिए और निश्चित रूपसे कहना चाहिए, 'हाँ वैदेशिक सीमा-कर, निर्यात शुल्क-समेत, संघीय होगा' या 'संघीय नहीं होगा।' तब वह तुरन्त यह जान जायेगी कि राजस्वके स्रोत क्या हैं। इसी तरह उसे अपनी बैठकमें विचार करके कहना चाहिए, 'ये वे दायित्व हैं जो संघीय होंगे", और रियासतोंको अपने लिए खुद फैसला करना चाहिए। आखिर उन्हें यहाँ आनेके लिए निमन्त्रित किया गया है, या वे अपनी इच्छासे यहाँ आये हैं। महाविभव नवाब भोपालने, और महाविभव बीकानेर नरेशने भी, जो आश्वासन दिया है, मैं उसका कृतज्ञताके साथ स्वागत करता हूँ। सर अकबर हैदरीकी इस बातसे मुझे पूर्ण सहानु-भूति है कि वे, हैदराबादके प्रतिनिधिकी हैसियतसे या रियासती प्रतिनिधि-मण्डलके प्रतिनिधिकी हैसियतसे भी, अँधेरेमें छलाँग नहीं लगा सकते। इसलिए मैं कहता हूँ कि कोई भी अँधेरेमें छलाँग न लगाये, और, इस तरहकी विपत्तिसे बचनेके लिए, इसी

समय साझेदारीकी एक बहुत ही साधारण योजना होनी चाहिए और हमें वह साधारण योजना शुरू कर देनी चाहिए। तब संघीय सरकारको यह गुंजाइश रहेगी कि वह जो भार वहन करना पसन्द करे वह वहन करे; और जैसा कि महाविभव नवाब भोपालने कहा है, स्वयं संविधानमें काफी लचक रहनी चाहिए, जिससे कि संघीय सरकार और संघीय संसद ऐसा कर सकें। हम कोई फौलादी संविधान नहीं चाहते जिसमें से हम कभी निकल ही न सकें या जिसमें हम कभी कोई संशोधन या परिवर्धन ही न कर सकें। यदि हमारे पास एक लचकदार संविधान हो तो संघीय सरकार, जैसे-जैसे उसका अनुभव बढ़ेगा, एक विशेषज्ञ समिति नहीं, बल्कि दस विशेषज्ञ समितियाँ नियुक्त कर सकेगी, जो बहुत-सी चीजोंकी जाँच करेंगी। और तब संघीय सरकार जब अपना अभियान शुरू करेगी तो और जिम्मेदारियाँ लेगी और जैसे-जैसे वह जिम्मेदारियाँ लेती जायेगी उसे विभिन्न स्रोतोंसे राजस्व प्राप्त करनेके मार्ग भी मिलते जायेंगे। यदि एक बार शुरुआत हो जाये तो, मैं समझता हूँ, आगे किसी तरहकी भी कोई कठिनाई या मुसीबत नहीं होगी।

इसलिए मेरा ठोस सुझाव, यदि यह आपको अच्छा लगे, तो यह है कि हम इस रिपोर्टको धन्यवाद-सहित उप-समितिको वापस भेज दें और उप-समितिसे कहें कि जो सामग्री उसे उपलब्ध है उससे वह हमें एक ऐसी न्यूनतम योजना दे जो रियासतोंको स्वीकार हो, और हम उस योजनाको, किसी विशेषज्ञ समितिकी शक्लमें कोई अड़ंगा खड़ा किये बिना, एक प्रारम्भिक योजनाके रूपमें स्वीकार कर लें। यदि हम ऐसा करते हैं तो मेरे खयालमें, हम श्री जिन्नाकी आपत्तिका पूरी तरह समाधान कर देते हैं। सर अकबर हैदरीकी न्यायोचित आशंकाओंको भी हम इस तरह दूर कर देते हैं। और जो चीज मुझ-जैसे आदमीको अधिक युक्तियुक्त लगती है वह यह कि इस तरहके महत्त्वपूर्ण विषयपर भी हमारा और समय बरबाद नहीं होता। मुझे आपके आगे यह बात मान लेनी चाहिए कि मुझे एक ऐसी समितिसे, जो अपनी रिपोर्ट शायद बारह महीनोंमें या तीन महीनेमें या एक महीनेमें या तीन सप्ताहमें ही देगी, डर लगता है। मैं समझता हूँ कि यह परिषद् एक विशेष भारको वहन करनेके लिए बुलाई गई है। इसे साहसके साथ उस भारको अपने कंधोंपर लेना चाहिए और जिम्मेदारियोंको किन्हीं और समितियोंपर नहीं फेंकना चाहिए। जो भी ढाँचा हम गढ़ सकते हैं, उसे हमें सम्राट्की सरकारके आगे, पार्लियामेंटके आगे और भारतकी जनताके आगे भी रखना चाहिए। पर मेरा यह खयाल है कि जबतक हमारा इस कार्यके प्रति इस तरहका रुख नहीं होगा, जहाँतक मैं सोच सकता हूँ, हम आजके इस अभेद्य अंधकारमें कदापि प्रकाश नहीं देख सकेंगे।

बीचमें मेरे हस्तक्षेपका वस्तुतः यही कारण है। मेरा खयाल है कि मैंने जिस सुझावको इस समितिके आगे रखनेकी हिम्मत की है उसे मैंने काफी स्पष्ट कर दिया है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउण्ड टेबल कांफरेंस (सेकेण्ड सेशन) : प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐंड माइनॉरिटीज कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ १९२-३

११८. पत्र : कैंटरबरीके आर्कबिशपको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
१५ अक्टूबर, १९३१

प्रिय आर्कबिशपजी,

आपका पत्र पाकर बड़ी प्रसन्नता हुई। श्री एन्ड्रयूजने मुझे आज प्रातः उसके लिए तैयार कर दिया था। मंगलवार २० तारीखको सायंकाल ५-३० पर मैं पैलेस पहुँच जाऊँगा। आपसे परिचित होने और जिस कार्यके लिए यहाँ आया हूँ उसपर आपके साथ विचार-विमर्श करनेके लिए मैं बहुत उत्सुक था।

इस विषयमें मैं आपसे बिलकुल सहमत हूँ कि हमारी बातचीत केवल हम दोनोंतक ही सीमित रहनी चाहिए।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८१०८)से।

११९. संघ-संरचना समितिकी बैठककी कार्यवाहीके कुछ अंश[1]

लन्दन
१५ अक्टूबर, १९३१

सर मानेकजी दादाभाई : श्रीमान्, महात्माजीने आगे बढ़कर यह कहा है कि उनका ठोस सुझाव, यदि यह इस सभाको अच्छा लगे तो, यह है कि यह रिपोर्ट धन्यवाद-सहित उप-समितिको वापस भेज दी जाये और उप-समितिसे कहा जाये कि जो सामग्री उसे उपलब्ध है उससे वह इस परिषद्को एक ऐसी न्यूनतम योजना दे जो रियासतोंको स्वीकार हो, और कि हम उस योजनाको, किसी विशेषज्ञ समितिकी शक्लमें कोई अड़ंगा खड़ा किये बिना, एक प्रारम्भिक योजनाके रूपमें स्वीकार कर लें। परन्तु महात्माजी ने यह स्पष्ट नहीं किया कि न्यूनतम योजनासे उनका अभिप्राय क्या है। न्यूनतम योजनाका अर्थ क्या है, यह मैं अभी भी समझ नहीं पा रहा हूँ। पर, मुझे एक गम्भीर वैधानिक आपत्ति है। यदि आप संघको चालू करने जा रहे हैं, तो यह काम आप थेगलियाँ लगाकर और थोड़ा-थोड़ा करके नहीं कर सकेंगे। यदि संघको कार्य करना है तो वह पूरा, सम्पूर्ण, सर्वग्राही संघ होना चाहिए, जिसमें

१. जिस विषयपर बहस हो रही थी वह था, संघ और उसकी इकाइयोंके बीच वित्तीय साधनोंका बँटवारा।

सन्देह या कठिनाईकी कोई गुंजाइश न रहे। आप एक प्रकारके आंशिक संघकी व्यवस्था नहीं कर सकते। इसके अतिरिक्त, यदि संघकी स्थापना करनी है तो वह उन आम सिद्धान्तोंके अनुरूप होना चाहिए जो इस तरहके सभी संघोंका आधार होते हैं। इसके अतिरिक्त, क्या महात्मा गांधीको यह विश्वास है कि यदि हमारे पास एक न्यूनतम योजना हो भी तो रियासतें उससे सहमत हो जायेंगी?

गांधीजी : मेरी योजनामें इसी मूल कठिनाईको हल करनेकी बात है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबिल कांफरेंस (सेकेंड सेशन) : प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐंड माइनॉरिटीज कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ २०५

१२०. भाषण : छात्रोंकी सभामें[1]

लन्दन

[१५ अक्टूबर, १९३१][2]

सहाध्यायिओ,

मैं लोगोंके आगे सभी तरहके विषयोंपर, लेकिन खास तौरसे उस ध्येयके बारेमें बोलता रहा हूँ जो मुझे यहाँ लाया है, और अपने ध्येयके सिलसिलेमें मुझे जो कहना है वह तो अबतक आपको जबानी याद हो गया होगा। मेरा इरादा आपके आगे किसी खास विषयपर बोलनेका नहीं था। इसलिए मैंने सोचा कि एक नपे-तुले भाषणमें समय नष्ट न करके यदि मैं प्रश्नोंके उत्तर दूँ तो वह शायद हमारे समयका सबसे सुन्दर उपयोग होगा।

आप अपनी इच्छानुसार कोई भी प्रश्न मुझसे पूछ सकते हैं। जिस विषयके बारेमें आप पूछते हैं यदि उसकी जानकारी मुझे नहीं हुई तो मैं अपना अज्ञान साफ-साफ स्वीकार कर लूँगा। इसके सिवा, और कोई असमंजस आप मेरे लिए पैदा नहीं करेंगे। आप भी यदि मेरे प्रति स्पष्टवादिताका रुख अपनायें तो यह आपका सौजन्य होगा। मैंने आपको 'सहाध्यायी' कहा है। यह कोई औपचारिकता नहीं है। मैं अपनेको मूल रूपसे अध्येता ही समझता हूँ और यदि आप समझदार हैं, जैसा कि मैं हूँ (हँसी), तो जीवनमें आगे चलकर आप भी अपनेको अध्येता ही समझेंगे, विद्यार्थी ही मानेंगे।

जीवनके अपने अबतक के विविध अनुभवोंसे मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि हमारा विद्यार्थी-जीवन अपने कॉलेजों, विश्वविद्यालयों और लॉ चेम्बरोंसे निकलनेके बाद आरम्भ होता है। वहाँ हमसे यह अपेक्षा की जाती है कि हम अपने पढ़ाईके विषयोंको

१. सभा इंटरनेशनल स्टूडेंट्स मूवमेंट हाउस, रसेल स्क्वेयरमें हुई थी। विश्वके सभी भागोंके लगभग २०० छात्र उसमें उपस्थित थे।

२. तारीख महादेव देसाईकी डायरीके अनुसार दी गई है।

ज्ञानकी कुंजी मानकर और उनसे अंतरंग भावसे जुड़कर अध्ययन करें। और उन स्थानोंको जब हम छोड़ते हैं तो जो-कुछ हमने सीखा होता है उस सबको लगभग भूल जाते हैं। वस्तुतः, बादके जीवनमें ही हमें बहुत-सी चीजें सीखनी होती हैं। तथाकथित विद्यार्थी-जीवन असली विद्यार्थी-जीवनके लिए महज एक तैयारी होती है। आप जब कालेजमें या कहीं अन्यत्र होते हैं, तो आपके पास निश्चित विषय होते हैं। वैकल्पिक विषयोंमें भी आपको उन्हें एक विशेष ढंगसे सीखना होता है, क्योंकि आप एक साँचेमें कसे हुए होते हैं। परन्तु जब वह अवस्था समाप्त हो जाती है, तो आप एक आजाद पंछीकी तरह हो जाते हैं, जो अपने पंखोंसे खूब ऊँचा उड़ सकता है। और आप जितना ऊँचा उड़ते हैं उतने ही शक्तिशाली होते जाते हैं। इसलिए मैं अभी भी एक ऐसा विद्यार्थी हूँ जो संसारके इस विद्यालयमें अभी अपनी शिक्षा समाप्त नहीं कर पाया है।

जब आप इधर-उधरसे लहरोंके थपेड़े खाते हैं और आपको अपनी सूझ-बूझका ही सहारा रह जाता है, तो एक कठिन समस्या सामने आती है। यदि आप अपने-को अध्ययनमें लगायें, यदि आप अपनेको अध्ययनके लिए, अनन्त शोधके लिए समर्पित कर दें, तो उस अध्ययनसे मिलनेवाले उल्लास और आनन्दकी कोई सीमा नहीं होगी। सत्यकी खोज बराबर मेरे अध्ययनका विषय रहा है। अध्ययन और खोजके अपने प्रारम्भिक दिनोंमें मैंने देखा कि मैं सत्यको तबतक नहीं खोज सकता जबतक कि दूसरोंपर नहीं बल्कि खुद अपनेपर चोटको न्योता न दूँ। मैं सत्यको केवल तभी खोज सकता था जब दूसरोंको चोट पहुँचानेकी सारी भावनाको त्याग देता बल्कि आवश्यक होनेपर, खुद अपनेको चोट पहुँचाता। क्योंकि जैसा कि आप जरूर जानते होंगे, सत्य और हिंसा एक-दूसरेके विरोधी हैं। हिंसा सत्यको छिपाती है, और यदि आप सत्यको हिंसासे पानेकी कोशिश करते हैं तो आप सत्यकी खोजमें अपने भयानक अज्ञानका परिचय देते हैं। इसलिए सत्यकी खोजके लिए बिना किसी भी तरहके अपवादके अहिंसा ही एकमात्र साधन है। जीवनका सार मैंने जो पाया है वह अहिंसा है।

इस संक्षिप्त भूमिकाके साथ मैं अपनेको आपकी सेवामें प्रस्तुत करता हूँ। आपको मुझसे सभी तरहके प्रश्न पूछनेकी स्वतन्त्रता है।

गोल्ड कोस्टका एक नीग्रो छात्र: अपनी दांडी यात्रामें आपने पुलिसको और नम्बरदारोंको — सरकारके साथ वफादारीसे बँधे पुलिसके सिपाहियोंको — इस्तीफे देनेकी सलाह दी थी। आपने गोरखाओंसे भी कहा था कि वे आदेशोंको न मानें। क्या यह अहिंसाके विपरीत नहीं है?

गांधीजी: प्रश्न रोचक है, पर यह ऊपरी ज्ञानका सूचक है। लेकिन लाचारी है, क्योंकि यह दर्शन पुस्तकोंसे पढ़ा नहीं जा सकता। अन्तर्विरोध कोई नहीं है। पहली बात तो यह है कि मैंने नम्बरदारोंसे यह कहा था कि अगर वे यह जान गये हों कि वे ऐसी सरकारकी सेवा कर रहे हैं जो गलत काम कर रही है, तो वे इस्तीफा दे दें। गलत काम करनेके लिए कोई व्रत, वचन या संकल्प नहीं हो सकता — जैसे कि किसी पुरुष या स्त्रीका प्रतिदिन ५० सिगार पीने या प्रतिदिन

व्हिस्कीकी दो बोतलें पीने या भोजनसे पहले एक आदमीकी जान लेनेका व्रत या संकल्प कोई व्रत नहीं हो सकता। यदि पुलिसका सिपाही ऐसी सरकारकी सेवामें नियुक्त है जो गलत काम करती है, तो उस सेवाको छोड़ना उसका आवश्यक कर्त्तव्य हो जाता है। इसलिए मैंने लोगोंको यह समझाया कि वे अपने साथ और अपने देशके साथ हिंसा कर रहे हैं और खुद सरकारको भी हानि पहुँचा रहे हैं। उसका परिणाम यह हुआ कि वे जेल गये और उन्होंने उसे बिना किसी शिकायतके सहन किया। सत्य और अहिंसाका उसमें कोई उल्लंघन नहीं था। वह उनके लिए और मेरे लिए अच्छी चीज थी।

नम्बरदारों और दांडीके पुलिसके सिपाहियोंको छोड़कर अब मैं पंजाबपर आता हूँ। गढ़वाली सैनिकोंको अपने अधिकारियोंसे आदेश मिला था। मैंने उसकी कभी हिंसाका कार्य कहकर निन्दा नहीं की है। वह भी देशभक्तिका कार्य था। उन्हें जेल हुई, जो और भी खराब थी। वह अनुशासनको तोड़ना था और उनमें से कुछको मार्शल लॉ के अधीन सजा दी गई। जहाँ मैं उनकी इस बातके लिए सराहना करता हूँ कि उन्होंने अपने देशवासियोंपर गोली चलानेसे इनकार कर दिया और उसके लिए अभी भी कष्ट सह रहे हैं, वहाँ मैं उनके लिए एक अहिंसात्मक प्रतिरोधीकी हैसियतसे दयाकी प्रार्थना नहीं कर सकता।

यदि सरकारकी बागडोर कांग्रेसको दे दी जाये, तो कांग्रेस उन्हें कल ही रिहा कर देगी। इस तर्कमें क्योंकि कोई दोष नहीं है, इसलिए उसमें कोई अन्तर्विरोध नहीं है। जिसे पूरे इतिहासका पता है वह पूरे समझौतेको उठाकर मेरे मुँहपर फेंक सकता है। उन्होंने यही किया। कुछ देशवासियोंने बिना विचारे ही मुझसे यह कहा कि मैं इन लोगोंको रिहा करवाऊँ। परन्तु मैंने कहा, 'नहीं।' यह चीज कांग्रेसके आन्दोलनका अंग नहीं थी कि इस तरहके सैनिकोंको अनुशासन भंग करना चाहिए। कांग्रेसने इस तरहके आदेश नहीं दिये थे। वे अहिंसात्मक प्रतिरोधी नहीं थे, और यह बात याद रखिए कि हर देशभक्त अहिंसात्मक प्रतिरोधी नहीं है और न हर प्रतिरोधी देशभक्त ही है।

एक रूसी छात्र: यदि आप कम धार्मिक होते तो क्या आप जल्दी किसी समझौतेपर नहीं पहुँच जाते?

गांधीजी: ओह, मैं आपका प्रश्न समझा। आप यह सुझाना चाहते हैं कि मुझे वादा कर लेना चाहिए और तोड़ देना चाहिए (हँसी)। मैं आपको अब यह बताता हूँ कि मैं राजनीतिमें क्यों आया। मैं राजनीतिमें राजनीतिको इस बदनामीसे मुक्त करनेके लिए आया हूँ। आमतौरपर राजनीतिज्ञ कानूनके हर दावेसे मुक्त होता है। परन्तु मैंने सोचा कि इससे काम नहीं चलेगा। राजनीति साँपकी कुंडलीकी तरह आपको चारों ओरसे कस लेती है और पीस डालती है। यह देखकर कि मैं इसके बीचमें हूँ, मैं लाचारीकी अपनी स्थितिको समझता हूँ और राजनीतिको काबूमें लानेकी कोशिश करता हूँ। यह माना जाता है कि मैं, किसी-न-किसी तरह, विश्वके सबसे बड़े संगठन — भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसका संचालन कर रहा हूँ। वह आज करोड़ों

लोगोंका प्रतिनिधित्व करती है, जो उसकी पुकारका जवाब देते हैं। यदि कांग्रेस वास्तवमें सचाईके साथ अहिंसा और सत्यके आधारपर राजनीतिक कार्य करे, तो राजनीतिज्ञ इस निष्कर्षपर पहुँचेंगे कि झूठे वादे करना आवश्यक नहीं है, और कि जब आप इस तरहके किसी साधनको अपनाते हैं तो राजनीति भ्रष्ट हो जाती है। क्योंकि कुछ धार्मिक व्यक्ति खराब हैं, इसलिए यह कहना कि धर्म ही खराब है, एक गलत अनुमान है। इस तरहका दृष्टिकोण बनाना बिलकुल गलत होगा। इसी तरह, क्योंकि राजनीतिज्ञ कुटिल तरीके अपनाते हैं, इसलिए यह कहना कि राजनीतिको सुधारा नहीं जा सकता, गलत है।

श्री कीर हार्डीको उकताहटके कारण ऐसा महसूस हुआ कि कॉमंस सभा एक सच्चे ईसाईके लिए अच्छी जगह नहीं है, क्योंकि उसमें बहुसंख्या बुरे लोगोंकी है। पर यह चीज गलत है। हमें असहाय पक्षोंके समर्थनमें अवश्य खड़े होना चाहिए और उनके लिए लड़नेको हमारा कॉमंस सभामें होना सर्वथा न्यायोचित होगा। सफलतापर अधिकार मानव-प्राणियोंको नहीं दिया गया है, पर प्रयत्नपर अधिकार हममें से प्रत्येकको दिया गया है। साथ ही, यह भी मत भूलिए कि यह दम भरना कि आप हर चीज अपनी निजी कोशिशसे ही करते हैं, अहंकार है, क्योंकि आप घासका तिनकातक हिला नहीं सकते। ऐसा करनेसे पहले, आपका हाथ पक्षाघातका शिकार हो सकता है, क्योंकि जीवन इतना अनिश्चित है। हम ईश्वरकी दयापर निर्भर हैं। हमें सारी महत्त्वाकांक्षा छोड़ देनी चाहिए। हर कीमतपर सच्चे रहो और प्रयत्न करो, और फल ईश्वरपर छोड़ दो।

एक कोरियाई छात्र: अहिंसाके आधारपर आप पुलिस या राज्य या सेनाका विरोध क्यों [नहीं] करते?

गांधीजी: मैं मानता हूँ, यह असंगति है। यदि मैं यह कहूँ कि सेना राज्यके लिए आवश्यक है, तो यह असंगत होगा। मैं सभी राज्योंको पुलिस या सेनाके बिना काम चलानेके लिए आमन्त्रित तो कर सकता हूँ, पर मैं अभी इस विश्वासपर नहीं पहुँच पाया हूँ कि आप पुलिसके बिना समाजको कायम रख सकते हैं। यदि हम चोरों और लुटेरोंको समाजमें स्वच्छन्द विचरने दें तो मैं पुलिस-विहीन समाजकी कल्पना कर सकता हूँ। टॉल्स्टॉयने 'दुखोबोर्स' की कल्पना की है। संसारमें सब-कहीं ऐसे लोग हैं जिन्हें पुलिसकी रक्षाकी जरूरत नहीं है। परन्तु उन्हें यह बात स्वीकार कर लेनी चाहिए कि यदि उनके आस-पासका परिवेश व्यवस्थित न हो, तो वे वैसा जीवन भी जी नहीं सकेंगे। यह चीज मेरी योजनाके बाहर नहीं है, पर मैं इस समय अपने सीमित कार्यमें फँसा हूँ। इसलिए आप यह कह सकते हैं कि मेरा पुलिसको बरदाश्त करना अहिंसाको मर्यादित करना है। सेना अहिंसाके विपरीत है। पहले मामलेमें कारण मुझमें साहसका अभाव है, और दूसरेमें अपने लोगोंको यह विश्वास दिलानेकी असमर्थता है कि वे सेनाके बिना काम चला सकते हैं। मैंने अभी इतनी शक्ति अर्जित नहीं की है कि चोरों, बदमाशों और हत्यारोंके विरुद्ध अहिंसाको रख सकूँ, परन्तु मैं लोगोंसे यह कह सकता हूँ कि वे सेनाके झुंडोंके विरुद्ध अहिंसाको रखें।

यदि भारत दैवयोगसे अहिंसा द्वारा अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त कर लेता है, तो शायद हम दुनियाको यह दिखा सकेंगे कि सैनिक राज्य आवश्यक नहीं है। सेना-विहीन राज्यके विचारको मैं कोरा काल्पनिक नहीं मानता हूँ, पर उसके लिए और भी उच्च कोटिका साहस और पवित्रता आवश्यक है।

एक अंग्रेज छात्र: आपके लोग भूमिपर जीवन-निर्वाह करते हैं, हमारे लोग कामपर जीवन-निर्वाह करते हैं। वे हड़तालको अनिश्चित कालतक चला नहीं सकते। आप इसका क्या इलाज सुझाते हैं?

गांधीजी: यह सचमुच असमंजसमें डालनेवाला प्रश्न है। मेरे लिए कोई इलाज बताना धृष्टता होगी। इस देशमें मैं बिलकुल अजनबी हूँ और यहाँकी परिस्थितियोंकी मुझे जानकारी नहीं है। पर क्योंकि हम सहाध्यायी हैं, इसलिए परस्पर विचार-विनिमय कर सकते हैं। मैं अपने निजी विचार रखूँगा। मैं आपको यह विश्वास दिलाता हूँ कि आपकी विपत्ति मुझे भी व्यथित करती है। यदि ईश्वरने मुझे इसे समाप्त करनेकी हिम्मत दी तो मैं खुशीसे ऐसा करूँगा। तो देखिए, मैंने हड़तालें चलाई हैं। अपने बारेमें मेरा यह दावा है कि मैं हड़तालोंको काफी सफलताके साथ चलानेमें विशेषज्ञ हूँ।

पर एक अनिवार्य शर्त यह है कि हड़तालियोंको दानसे गुजारा नहीं चलाना चाहिए, उन्हें अपनी मेहनतसे गुजारा चलाना चाहिए। जिन लोगोंने उन्हें हड़ताल करनेकी सलाह दी थी और जो उसमें उनका नेतृत्व कर रहे थे, उनमें एक मिल-मालिककी बेटी थी।[1] हड़तालियोंने जब नगरपालिकाके लिए इमारत बनाई तो वह उनके साथ काम करती रही और रेत इधरसे-उधर पहुँचाती रही। एक और अवसर-पर जब मैं जेलमें था, मेरे लोगोंने हड़तालियोंको कताई और बुनाईका काफी काम दिया और उस कामके लिए उन्हें बाजारमें मिलनेवाली मजदूरीसे अधिक मजदूरी दी। वे आठ घंटे काम करते थे और अपने गुजारे-लायक पैदा कर लेते थे। परन्तु लन्दनमें, जहाँ एक सुसंगठित समाज है, परिस्थिति कठिन है। लेकिन हम कठिनाई-पर अवश्य काबू पा सकेंगे, क्योंकि जहाँ चाह है वहाँ राह है। कमर कस लीजिए और दानसे जीवन-निर्वाह करनेको तैयार मत होइए। कोई उपाय खोजिए।

इस समस्यापर जो अंग्रेज मुझसे सलाह-मशविरा कर रहे हैं, उनसे मैं कहता हूँ: इस अत्यन्त संगठित औद्योगीकरणको तोड़ दो। गाँवोंको लौटो। आपको जीवन-की अपनी धारणाको बदलना है। आपका रहन-सहनका स्तर बनावटी है, यह ज्यादा दिन टिकनेवाला नहीं है। आधुनिक सभ्यता एक खिलौना है। आप अपने रहन-सहनके स्तरको बढ़ाते जा रहे हैं। आदमीकी जरूरतें जितनी बढ़ती जाती हैं, उतना ही वह दूषित होता जाता है और उनके बोझसे टूटता जाता है। लंकाशायरके एक अंग्रेजने कहा था: "भूखों मरनेकी मुझे चिन्ता नहीं है, पर मैं खुद अपनी नजरोंमें गिर गया हूँ।" मैं एक ऐसे आदमीको जानता हूँ जो सच्चरित्र और देशभक्त था, पर अपने लोभके कारण जब उसने दस लाख रुपया कमा लिया, तो मैंने उसे बधाई नहीं, बल्कि अपनी संवेदना भेजी। परन्तु बादमें उसने सब-कुछ खो दिया। तब वह

१. अनसूया साराभाई, देखिए खण्ड १४, पृष्ठ २०२।

किसीके सामने ही नहीं आ पाता था और आखिर एक दिन उसने जहर खा लिया। अफसोस, इस तरहका एक सच्चरित्र और अच्छा मित्र अपनी उत्तरोत्तर बढ़ती जरूरतोंके कारण ही आज नहीं रहा। मेरे तरीकेको अपनानेके लिए आपको, खासकर अंग्रेज जातिके लोगोंको अपने जीवनका ढंग बदलना होगा।

आपकी जाति शोषकोंकी जाति है। (हँसी)

आपका राजा इंग्लैंड और 'डोमीनियनों' का महाराजा है, परन्तु वह भारतका सम्राट् है। यह चीज उसके पीछे छिपे गर्वकी सूचक है। इसलिए आपकी स्वतन्त्रता झूठी है। आपने भारतीयोंको अपनी इच्छानुसार झुकाने और आपकी वस्तुएँ लेनेको बाध्य करनेके लिए अनेक अपराध किये हैं। आपका सबसे धनी देशोंमें होना कोई आश्चर्यकी बात नहीं है। पर आपने अपनी यह दौलत कहाँसे प्राप्त की है? इस धरतीसे तो नहीं की है। यह साम्राज्यके सभी भागोंसे आई है। आपके लोग कहते हैं, उनकी भारतमें रुचि है। किसलिए? क्योंकि वहाँ इतने-सारे लोगोंको जीविका मिलती है? मेरी योजनापर यदि आप चलें, तो जिस क्रान्तिका मैं आपके आगे सुझाव रखना चाहूँगा वह यह है कि अपने जीवनका ढंग बदलो। उस वक्तका इंतजार मत करो जब आपको ऐसा करनेके लिए मजबूर हो जाना है। जो चीज मेरे मनको उद्वेलित कर रही है वह मैंने आपके आगे रख दी है। यद्यपि मैं यह चाहता था कि मैं अपने रास्तेपर चलूँ और आप अपनेपर, पर सहाध्यायियोंकी हैसियतसे आपने मुझे चुनौती दी। इसलिए मैंने अपना हृदय खोलकर रख दिया।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १७-१०-१९३१। महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी १९३१, से भी; सौजन्य: नारायण देसाई

१२१. प्रश्नोत्तर[1]

लन्दन
[१६ अक्टूबर, १९३१के पूर्व][2]

प्र० : यदि सब बातोंसे साम्प्रदायिक प्रश्नका अधिक महत्त्व नहीं है तो खुद आपने एक समय यह क्यों कहा था कि जबतक यह प्रश्न हल न हो जायेगा, आप गोलमेज परिषद्में जानेका विचार भी न करेंगे?

उ० : आप ठीक कहते हैं। परन्तु आप यह भूल जाते हैं कि भारतमें मेरे अंग्रेज मित्र और दूसरे मित्रोंने इस बातके लिए कि मुझे इंग्लैंड जाना ही चाहिए,

१. महादेव देसाईके "लंडन लेटर" (लन्दनका पत्र) से उद्धृत। महादेव देसाई बताते हैं कि ये प्रश्नोत्तर एकही व्यक्तिके साथ नहीं हुए, बल्कि यहाँ अलग-अलग लोगोंके साथ हुई गांधीजी की बातचीतके दौरान उनसे पूछे प्रश्न और गांधीजी के उत्तर दिये जा रहे हैं।

२. "लन्दनका पत्र" में महादेव देसाई अन्यत्र कहते हैं कि जब मैं यह लेख लिख रहा हूँ, मद्य-निषेधवादी कार्यकर्ताओंके साथ गांधीजी की बातचीतका समय निकट आता जा रहा है। इन लोगोंके साथ गांधीजी की बातचीत १६ अक्टूबर को हुई थी।

मुझपर इतना दबाव डाला कि मैं विवश हो गया। और मुझे भी ऐसा लगा कि और किसी कारण नहीं तो लॉर्ड ईविनको दिये गये वचनकी रक्षा करनेके लिए ही मुझे यहाँ आना चाहिए। अब यहाँ मैं अपनेको उन लोगोंके सामने पाता हूँ जो राष्ट्रवादी नहीं हैं और केवल साम्प्रदायिक नेता होनेके कारण ही चुने गये हैं। इसलिए यद्यपि मैंने कहा कि किसी निर्णयपर न पहुँच सकना हमारे लिए शर्मकी बात है, फिर भी इसका कारण तो इस समितिके सदस्य जिस तरह चुने गये हैं, उसीमें समाया हुआ है। स्थिति ऐसी अवास्तविक है कि शब्दोंमें उसका वर्णन नहीं किया जा सकता है। कुछ सदस्य तो ऐसे हैं कि यदि वे भारतमें हों तो जिन साम्प्रदायिक समुदायोंका प्रतिनिधित्व करनेका वे दावा करते हैं, उन्हीं समुदायोंका मत लिया जाये तो वे उन्हें अस्वीकार कर देंगे।

प्र० : अस्पृश्योंके विषयमें क्या स्थिति है? डॉ० अम्बेडकर आपपर बहुत बिगड़े थे और उन्होंने कहा कि कांग्रेसको अस्पृश्योंका प्रतिनिधि होनेका दावा करनेका कोई अधिकार नहीं है?

उ० : आपने यह प्रश्न पूछा, इससे मुझे प्रसन्नता हुई है। डॉ० अम्बेडकरकी बातका मैं बुरा नहीं मानता। हरएक अस्पृश्यकी तरह डॉ० अम्बेडकरको मुझपर थूकने तकका अधिकार है। और वे मुझपर थूकें तो भी मैं हँसता ही रहूँगा। परन्तु मैं आपको यह बताना चाहता हूँ कि डॉ० अम्बेडकर देशके उसी एक भागकी तरफसे बोलते हैं जिस भागमें वे रहते हैं। हिन्दुस्तानके दूसरे भागोंकी तरफसे वे नहीं बोल सकते। मुझे देशके कई भागोंसे तथाकथित 'अस्पृश्यों' की ओरसे असंख्य तार मिले हैं, जिनमें उन्होंने डॉ० अम्बेडकरको अपना प्रतिनिधि माननेसे इनकार किया है और कांग्रेसमें अपना पूरा विश्वास प्रगट किया है। इस विश्वासका कारण भी है। कांग्रेस उनके लिए जो काम कर रही है उसे वे जानते हैं और वे यह भी जानते हैं कि यदि अपनी आवाजकी ओर लोगोंका ध्यान आकर्षित करनेमें वे सफल न होंगे तो उनकी तरफसे मैं उनके सत्याग्रह-संग्रामका नेतृत्व करूँगा और यदि कट्टरपंथी हिन्दुओंकी ओरसे कोई विरोध हुआ तो उसे ठण्डा कर दूंगा। दूसरी ओर अगर उन्हें पृथक् प्रतिनिधित्व, जिसकी माँग डॉ० अम्बेडकर इतना आग्रहपूर्वक कर रहे हैं, दे दिया जाता है तो इससे खुद उन्हींका बहुत बड़ा नुकसान होगा। इससे हिन्दू समाज दो सशस्त्र छावनियोंमें बँट जायेगा और उससे अनावश्यक विरोध-भाव पैदा होगा।

प्र० : मैं आपकी बातको समझता हूँ, और आप न्यायतः अस्पृश्योंकी तरफसे बोल सकते हैं, इसमें भी मुझे कोई सन्देह नहीं है। परन्तु मालूम होता है, आप इस बातपर ध्यान नहीं दे रहे हैं कि दुनियामें सब जगह सब कौमें अपने लोगोंको ही अपना प्रतिनिधि बनानेका आग्रह रखती हैं। उत्तरके निष्ठावान उदारदलीय नेता मजदूरोंके सच्चे प्रतिनिधि बन सकते हैं, परन्तु वे अपने लोगोंमें से ही अपने प्रतिनिधि भेजना पसन्द करते हैं और आपके विरुद्ध जो सबसे बड़ी बात है, वह यह है कि आप अस्पृश्य नहीं हैं।

उ० : मैं यह अच्छी तरह जानता हूँ। परन्तु मैं उनका प्रतिनिधि होनेका दावा करता हूँ, इसका यह मतलब नहीं है कि मैं व्यवस्थापिका सभाओंमें भी उनका प्रतिनिधि बनकर जाऊँगा। ऐसा तो किसी भी तरह नहीं हो सकता। मैं तो चाहूँगा कि व्यवस्थापिका सभाओंमें उन्हींमें से चुने हुए लोग उनका प्रतिनिधित्व करें, और यदि वे न चुने जा सकें तो मैं ऐसा कानून चाहूँगा जिससे चुने गये सदस्य उन्हें अतिरिक्त सदस्योंके रूपमें चुन लें। जब मैं उनका प्रतिनिधित्व करनेकी बात कहता हूँ तब गोलमेज परिषद्में प्रतिनिधित्व करनेकी बात कहता हूँ। और मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि यदि कोई हमारे इस दावेको चुनौती देता है तो मैं खुशीसे जनमत-संग्रहका सामना करूँगा और उसमें सफल होऊँगा।

प्र० : मुसलमानोंके बारेमें भी आप जो-कुछ कहेंगे, उपर्युक्त दृष्टिसे उसे सुनना रोचक होगा। आप यह तो नहीं कहते कि जो मुसलमान यहाँ हैं वे अपनी कौमके प्रतिनिधि नहीं हैं?

उ० : वे चुने नहीं गये हैं, और मैं आपको यह बताता हूँ कि मैंने कई सच्चे राष्ट्रवादी मुसलमानोंको इससे अलग रहनेको कहा है। ऐसे युवा मुसलमान नेताओंकी एक बहुत बड़ी तादाद है जो इस समस्याके साम्प्रदायिक हलके खिलाफ हैं। यहाँ मैं दो के ही नाम बताता हूँ, जिन्हें मैं उन्हीं मित्रोंके जरिये जान पाया हूँ जो आज कांग्रेसके खिलाफ खड़े हैं। ये दो नेता हैं: श्री ख्वाजा और श्री शेरवानी। मैं खुद तो मुसलमानोंको जो-कुछ भी वे माँगते हैं देनेके लिए तैयार हूँ, और हिन्दुओं तथा सिखोंको इस विषयमें मेरा साथ देनेपर राजी करनेको मैं आधी-आधी रातके बाद तक जागता रहा हूँ, लेकिन अपने प्रयत्नमें सफल नहीं हो पाया हूँ। यदि सिख प्रतिनिधि सिखों द्वारा चुने गये होते और सरकार द्वारा नामजद न होते तो क्या आप समझते हैं कि मैं असफल हुआ होता? तब शायद मास्टर तारासिंह[1] यहाँ होते। मैं उनके विचारोंको जानता हूँ और श्री जिन्नाकी १४ माँगोंके सामने उनकी १७ माँगें हैं। परन्तु मुझे विश्वास है कि मैं उन्हें समझा लेता, क्योंकि आखिरकार वे कन्धेसे-कन्धा मिलाकर लड़नेवाले हमारे साथी ही तो हैं। फिर यदि वर्तमान परिस्थितिमें समझौता करनेमें हम असफल हो जाते हैं तो क्या यह कोई आश्चर्यकी बात होगी? इसीलिए तो मैंने यह कहा कि पहले ही हमारे मार्गमें अड़चनें डाली गई हैं और अब यह कहकर, कि शासन-विधानकी रचनाके प्रश्नका निर्णय होनेके पहले साम्प्रदायिक समस्याका निर्णय हो जाना चाहिए, हमारे मार्गमें और अधिक बाधा न डालें। मैं उनसे यह कहता हूँ कि हमें क्या मिलेगा, यह जान लेने दीजिए, ताकि उसके आधार-पर मैं इस बेमेल चुने हुए मण्डलमें भी एकता लानेका प्रयत्न करूँ।

ईश्वरके लिए हमारे सामने कोई ठोस चीज तो रखिए। हमारे धनुषकी यह दूसरी डोरी होगी और वह मसलेको हल करनेमें मदद करेगी, क्योंकि फिर मैं उनसे यह कह सकूँगा कि वे एक बेशकीमती चीजको नष्ट कर रहे हैं। परन्तु आज मैं

१. सिख नेता।

उनके सामने कुछ भी नहीं रख सकता हूँ। मसला हल न भी हो तो मैंने खानगी पंच-फैसला, न्यायाधिकरण आदि कई मार्ग सुझाये हैं। यही स्थिति है। मैं अपने मित्रोंका सेवक हूँ, और लॉर्ड इर्विनकी मैं अपने मित्रकी तरह इज्जत करता हूँ, इसीलिए मैं यहाँ आया हूँ। परन्तु अब मैं यह देखता हूँ कि यह एक ऐसी विकट स्थिति है, जिससे निबटना असम्भव है।

प्र० : क्या यह बिलकुल असम्भव है? क्या आप यह मानते हैं कि आपको आना ही नहीं चाहिए था?

उ० : बिलकुल ऐसा तो नहीं है, और प्रयत्न करना मैं आखिर तक नहीं छोड़ूँगा। जहाँतक केवल मेरे यहाँ आनेका सम्बन्ध है, मैं यहाँ आया, इसके लिए मुझे जरा भी दुःख नहीं है। कारण यह है कि मैं जानता हूँ, परिषद्के बाहर, अप्रत्यक्ष रूपसे जो काम मैं कर रहा हूँ वह सम्पूर्णतया सन्तोषजनक है और यहाँ मैं ऐसे सम्पर्क स्थापित कर रहा हूँ जिन्हें मैं अपने मनमें एक धरोहरकी तरह सँजोकर रखूँगा।

प्र० : तो इससे क्या मैं यह समझ लूँ कि आप साम्प्रदायिक प्रश्नको अधिक महत्त्व नहीं देते हैं?

उ० : मैंने यह कभी नहीं कहा। मैं यह कहता हूँ कि जिस मुख्य बातपर खास जोर देना चाहिए था, उसे इस प्रश्नके द्वारा दब जाने दिया गया है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २९-१०-१९३१

१२२. भेंट : कैलेण्डरको[1]

लन्दन

[१६ अक्टूबर, १९३१]

प्र० : गांधीजी, क्या आप ऐसा मानते हैं कि थोक उत्पादनसे जनताका जीवन-स्तर ऊँचा हो जायेगा?

उ० : मैं तो ऐसा कतई नहीं मानता। श्री फोर्डकी दलीलमें एक बहुत बड़ी भ्रान्ति है।[2] यदि थोक उत्पादनके साथ वितरण भी उतने ही बड़े पैमानेपर नहीं हुआ तो इसके परिणामस्वरूप दुनिया बहुत बड़ी विपत्तिमें फँस सकती है। फोर्डकी

१. एक अमेरिकी पत्र-प्रतिनिधि। यह प्यारेलाल नैयरके लेख "थोक उत्पादन बनाम जनसाधारण द्वारा उत्पादन" से उद्धृत किया गया है। इसमें उन्होंने भेंटकर्त्ताका नाम नहीं बताया है। उसका नाम और भेंटकी तिथि दोनों महादेव देसाईकी १९३१ की डायरीकी पाण्डुलिपिसे लिये गये हैं।

२. भेंटकर्त्ता इससे कुछ दिन पूर्व अमेरिकामें फोर्डसे मिले थे। उन्होंने यह विचार व्यक्त किया था कि सस्ती वस्तुओंकी माँगसे बड़े पैमानेपर उत्पादनको प्रोत्साहन मिलेगा।

मोटर गाड़ियोंको ही लीजिए। देर-सवेर ऐसी स्थिति आयेगी ही जब और ज्यादा उत्पादनकी गुंजाइश नहीं रह जायेगी। मोटर गाड़ियोंका उत्पादन उस बिन्दुसे आगे नहीं बढ़ाया जा सकता। फिर क्या होगा?

थोक उत्पादनमें उपभोक्ताकी सच्ची आवश्यकताका कोई खयाल नहीं रखा जाता। अगर थोक उत्पादन अपने-आपमें कोई अच्छाई होती तब तो इसमें अनन्त वृद्धिकी गुंजाइश होती। लेकिन, यह बात साफ-साफ दिखाई जा सकती है कि थोक उत्पादनकी अपनी सीमाएँ भी हैं। अगर सभी देश उत्पादनके इसी तरीकेको अपना लें तो इतना अधिक उत्पादन होगा कि उसके लिए बाजार ही नहीं मिलेगा। फिर थोक उत्पादन बन्द करना पड़ेगा।

प्र० : आप ऐसा तो नहीं मानते कि पाश्चात्य संसारमें उत्पादन उस चरम बिन्दुपर पहुँच चुका है? श्री फोर्ड कहते हैं कि ऊँचे स्तरकी जरूरतसे ज्यादा वस्तुओंका उत्पादन कभी हो ही नहीं सकता; दुनियाकी जरूरतें लगातार बढ़ती जा रही हैं और इसलिए यद्यपि किसी खास वस्तुका उत्पादन उस सीमातक पहुँच सकता है जिससे आगे बाजारमें उसकी खपत न हो सके, लेकिन सभी वस्तुओंके उत्पादनके सम्बन्धमें वह चरम-स्थिति कभी नहीं आयेगी।

उ० : बहुत विस्तारसे अपनी दलील पेश किये बिना मैं अपना यह विश्वास साफ-साफ जाहिर कर देना चाहूँगा कि थोक उत्पादनका जो भूत आजकल हमपर सवार है, वही दुनियाकी मुसीबतोंका कारण है। एक क्षणको यह मान भी लें कि मशीनोंसे मानव-समाजकी सभी आवश्यकताएँ पूरी की जा सकती हैं तो भी यह तो है ही कि उत्पादन कुछ विशेष क्षेत्रोंमें सिमट आयेगा, जिससे वितरणका नियमन करनेके लिए बहुत घुमावदार रास्ता अपनाना पड़ेगा। इसके विपरीत यदि किसी वस्तुका उत्पादन और वितरण उसी क्षेत्रमें होता है जिसमें उसकी आवश्यकता है तो वितरणका नियमन अपने-आप हो जायेगा और धोखा-धड़ीकी कम गुंजाइश रहेगी और सट्टेबाजीकी तो कोई गुंजाइश रहेगी ही नहीं।

इसके बाद उस अमेरिकी मित्रने श्री फोर्डकी एक प्रिय योजनाका उल्लेख किया। उसने बताया कि कोयले और वाष्पकी बुराईके सम्भावित उपचारके रूपमें बिजलीको अपनाकर और तारों द्वारा दूर-दूरके क्षेत्रोंमें विद्युत्-शक्ति पहुँचाकर वे उद्योगोंका विकेन्द्रीकरण करना चाहते हैं। इस योजनाके लागू कर दिये जानेपर छोटे-छोटे साफ-सुथरे और धुएँसे मुक्त ऐसे हजारों गाँव होंगे जिनमें अनेकानेक कारखाने होंगे और उन कारखानोंका संचालन स्वयं ग्रामीण समुदाय करेंगे। अन्तमें उसने गांधीजी से पूछा, "अगर यह मान लें कि यह सब सम्भव है तो इससे आपकी आपत्तिका निराकरण किस हदतक हो जाता है?"

उ० : इससे मेरी आपत्तिका निराकरण नहीं होता, क्योंकि जहाँ यह सच है कि उस योजनाके अन्तर्गत उत्पादन अनगिनत क्षेत्रोंमें होगा, वहीं यह भी सही है कि शक्तिकी आपूर्त्ति किसी एक विशेष केन्द्रसे ही की जायेगी। मेरा खयाल है, अन्तमें

यह चीज घातक साबित होगी। इससे एक ही मानव-संस्थाके हाथोंमें इतनी अधिक शक्ति आ जायेगी कि उसके बारेमें सोचते हुए भी मुझे भय लगता है। उदाहरणके लिए, शक्तिके स्रोतके ऐसे नियन्त्रणका परिणाम यह होगा कि मुझे रोशनी, पानी, यहाँतक कि हवा आदिके लिए भी उसीपर निर्भर रहना होगा। मैं तो मानता हूँ कि यह स्थिति बहुत भयंकर होगी।

प्र० : . . . बहुत अधिक यन्त्रोंके उपयोगके कारण यूरोप और अमेरिकामें जो समस्या खड़ी हो गई है उसके समाधानके सम्बन्धमें क्या आपका कोई सुझाव है?

उ० : ये राष्ट्र दुनियाकी तथाकथित कमजोर या असंगठित जातियोंका शोषण कर रहे हैं। ज्यों ही इन जातियोंको इस चीजका भान होगा और वे यह निश्चय कर लेंगी कि अब वे अपना शोषण नहीं होने देंगी, तुरन्त ऐसी स्थिति आ जायेगी कि वे केवल उन्हीं चीजोंसे सन्तुष्ट हो जायेंगी जिनका उत्पादन वे खुद कर सकती हैं। उस हालतमें, कमसे-कम जहाँतक जीवनके लिए अत्यन्त आवश्यक वस्तुओंका सम्बन्ध है, थोक उत्पादनका सिलसिला बन्द हो जायेगा।

प्र० : आपका मतलब क्या यह है कि यह एक जागतिक प्रणालीके रूपमें लुप्त हो जायेगा?

उ० : हाँ, यही है।

प्र० : लेकिन, इन जातियोंको भी तो, जैसे-जैसे इनकी आवश्यकताएँ बढ़ेंगी, अधिकाधिक वस्तुओंकी जरूरत पड़ेगी।

उ० : तब वे अपनी जरूरतकी चीजोंका उत्पादन खुद करेंगी। और जब ऐसा होगा तो थोक उत्पादनका जो तकनीकी अर्थ है, उस अर्थमें वह बन्द हो जायेगा।

प्र० : मतलब यह कि वैसा उत्पादन स्थानीय तौरपर होने लगेगा?

उ० : जब उत्पादन और उपभोग दोनों सम्बन्धित क्षेत्रोंतक ही सीमित हो जाते हैं तो किसी भी कीमतपर जितना बन पड़े उतना अधिक उत्पादन करनेका प्रलोभन समाप्त हो जाता है। उस हालतमें हमारी आजकी अर्थ-व्यवस्थासे उत्पन्न तमाम कठिनाइयाँ और समस्याएँ भी समाप्त हो जायेंगी। अब एक ठोस उदाहरण लीजिए। आज इंग्लैंड सारी दुनियाके लिए कपड़ेकी मण्डी बना हुआ है। इसलिए इसे दुनियाको अपनी दासतामें रखने और अपने कपड़ेके लिए बाजार कायम रखनेकी आवश्यकता है। लेकिन, मैंने जिस परिवर्तनकी तजवीज की है, उस परिवर्तनके सम्पन्न हो जानेपर वह अपने उत्पादनको अपनी साढ़े चार करोड़की आबादीकी वास्तविक आवश्यकताओंतक ही सीमित रखेगा। जब उस आवश्यकताकी पूर्त्ति हो जायेगी तब उत्पादन अनिवार्यतः रुक जायेगा। तब केवल विदेशोंसे सोना लानेके लिए एक राष्ट्रके लोगोंकी जरूरतोंका खयाल रखे बिना और उन्हें दरिद्रताकी स्थितिमें पहुँचा देनेका खतरा उठाकर उत्पादनको जारी नहीं रखा जायेगा। फिर, चन्द लोगोंकी थैलियोंमें अस्वाभाविक रूपसे धन इकट्ठा नहीं होगा और न उस अतिसम्पन्नताके बीच शेष लोग अभावकी जिन्दगी जियेंगे; लेकिन आज हो तो यही रहा है। उदाहरणके लिए

हम अमेरिकाको ले सकते हैं। वह तरह-तरहकी चमक-दमकवाली वस्तुओं या अपने अद्वितीय कौशलको बेचकर — इन्हें बेचनेका उसे अधिकार है — दुनियापर अपना आर्थिक साम्राज्य कायम किये हुए है। वह थोक उत्पादनके चरम-बिन्दुपर पहुँच गया है, फिर भी अपने यहाँसे न तो बेरोजगारीको दूर कर पाया है और न अभावको। आज भी अमेरिकामें ऐसे हजारों, बल्कि शायद लाखों लोग हैं जो कष्टपूर्ण जीवन व्यतीत कर रहे हैं, हालाँकि चन्द लोगोंके पास अपार धन-वैभव है। थोक उत्पादनसे पूरे अमेरिकी राष्ट्रको लाभ नहीं हुआ है।

प्र० : वहाँ दोष तो वितरणके सम्बन्धमें है। इसका मतलब यही है कि जहाँ हमारे उत्पादनके साधनोंमें बहुत अधिक प्रगति हुई है, वितरण-व्यवस्था अब भी दोषपूर्ण है। यदि वितरणमें समानता लाई जा सके तो क्या थोक-उत्पादनकी बुराइयाँ दूर नहीं हो जायेंगी ?

उ० : नहीं, नहीं होंगी, क्योंकि यह बुराई तो अनिवार्यतः इस प्रणालीसे ही जुड़ी हुई है। वितरणमें समानता तभी आ सकती है जब उत्पादन स्थानीय आवश्यकताओंके लिए किया जाये। दूसरे शब्दोंमें कह सकते हैं कि समान वितरण तभी सम्भव है, जब उत्पादन और वितरण दोनों साथ-साथ चलें। जबतक आप अपने मालकी खपतके लिए दुनियाकी और मण्डियोंकी टोहमें हैं तबतक वितरण कभी समान नहीं हो सकता। इसका मतलब यह नहीं कि पाश्चात्य राष्ट्रोंने विज्ञान तथा संगठन-कौशलके क्षेत्रमें जो अद्भुत प्रगति की है, उसका दुनियाके लिए कोई उपयोग ही नहीं है। इसका मतलब इतना ही है कि पश्चिमी राष्ट्रोंको अपने कौशलका उपयोग अपने घरमें ही करना चाहिए। अगर वे उसका उपयोग परोपकारकी भावनासे विदेशोंमें करना चाहते हों तो अमेरिकाको कहना चाहिए, हम पुल बनाना जानते हैं, इस कौशलको हम दुनियासे छिपाकर नहीं रखना चाहते, बल्कि दुनियासे हमारा यह कहना है कि हम तुम्हें पुल बनाना सिखायेंगे और उसके लिए कोई कीमत नहीं लेंगे। अमेरिका कहता है, 'जहाँ दूसरे राष्ट्र गेहूँका एक पौधा उगा सकते हैं वहाँ हम दो हजार पौधे उगा सकते हैं।' उस हालतमें अमेरिकाको, जो सीखना चाहे, उन्हें वह कौशल निःशुल्क सिखाना चाहिए, लेकिन अपने मनमें सारी दुनियाके लिए गेहूँका उत्पादन करनेकी हवस नहीं रखनी चाहिए, क्योंकि उससे तो दुनिया सचमुच दुर्दिनमें पड़ जायेगी।

इसके बाद उस अमेरिकी मित्रने रूसका उल्लेख करते हुए गांधीजी से पूछा कि क्या वह ऐसा देश नहीं है जिसने, आप शोषणका जो अर्थ लगाते हैं, उस अर्थमें कम उद्योगीकृत राष्ट्रोंका शोषण किये बिना या असमान वितरणकी खाईमें गिरे बिना थोक उत्पादन-पद्धतिका विकास कर दिखाया है।

उ० : मतलब यह कि आप मुझसे राज्य-नियंत्रित उद्योगपर, अर्थात् जिस अर्थ-व्यवस्थामें रूसकी तरह उत्पादन और वितरण दोनोंका नियन्त्रण और नियमन राज्य करता है, उस व्यवस्थापर अपने विचार व्यक्त करनेको कहते हैं। तो सुन

लीजिए मेरा विचार। यह एक नया प्रयोग है। अन्ततः यह कहाँतक सफल होगा, मैं नहीं कह सकता। अगर यह बल-प्रयोगपर आधारित न होता तो मैं इस व्यवस्था-पर मुग्ध हो जाता। लेकिन, आज चूँकि यह बल-प्रयोगपर आधारित है, इसलिए मैं कह नहीं सकता कि यह व्यवस्था हमें कहाँतक और किधर ले जायेगी।

प्र० : तो भारतके आदर्श भविष्यकी आपकी जो कल्पना है, उसमें थोक-उत्पादनके लिए स्थान नहीं है?

उ० : क्यों नहीं, उसके लिए तो स्थान है, लेकिन बल-प्रयोगपर आधारित थोक उत्पादनके लिए कोई स्थान नहीं है। आखिरकार चरखेका सन्देश भी तो वही चीज है। यह भी बड़े पैमानेपर किया जानेवाला उत्पादन ही है, लेकिन आम लोगोंके अपने ही घरोंमें किया जानेवाला। यदि आप एक व्यक्ति द्वारा किये गये उत्पादनको लाखोंकी संख्यासे गुणा कर दें तो परिणाम क्या एक बहुत बड़े पैमानेपर थोक उत्पादन-के रूपमें ही सामने नहीं आयेगा? लेकिन मैं यह समझता हूँ कि आप जिस "थोक उत्पादन" शब्दका प्रयोग कर रहे हैं, वह एक पारिभाषिक शब्द है, जिसका मतलब होता है कमसे-कम लोगों द्वारा अत्यन्त जटिल यन्त्रोंकी सहायतासे अधिकसे-अधिक उत्पादन। मैं इसी निर्णयपर पहुँचा हूँ कि यह गलत चीज है। मेरा यन्त्र बहुत ही साधारण ढंगका होना चाहिए जिसे मैं करोड़ों लोगोंके घरोंमें रख सकूँ। फिर, मेरी प्रणालीके अन्तर्गत आर्थिक विनिमयका साधन मुद्रा नहीं, श्रम ही होगा। जो भी अपने श्रमका उपयोग कर सकता है उसके पास वह साधन अर्थात् धन होगा। वह अपने श्रमको कपड़ेकी शक्ल देता है, अन्नका रूप प्रदान करता है। अगर उसे पैरॉफिन तेलकी जरूरत होती है, जिसे वह खुद नहीं बना सकता, तो वह अपना अतिरिक्त अन्न देकर उसे प्राप्त करता है। यह स्वतन्त्र, उचित और समान शर्तोंपर श्रमका विनिमय है और इसलिए यह लूट और डाकाजनी नहीं है। आप कह सकते हैं कि यह तो वस्तुओंकी अदला-बदलीकी आदिम विनिमय-व्यवस्थाको फिरसे स्वीकार कर लेना है। लेकिन क्या सारा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार उसी विनिमय-व्यवस्थापर आधारित नहीं है?

इस प्रणालीके एक अन्य लाभकी ओर भी ध्यान दीजिए। इस लाभको आप चाहे जितना गुना बढ़ा सकते हैं। लेकिन उत्पादनके निस्सीम केन्द्रीकरणका परिणाम बेरोजगारी ही हो सकता है। आप कह सकते हैं कि सुधरे हुए आधुनिक यन्त्रोंके प्रयोगके कारण बेरोजगार होनेवाले मजदूर कोई और धन्धे ढूँढ़ लेंगे। लेकिन आप तो अपने अनुभवसे जानते ही होंगे कि किसी संगठित देशमें, जहाँ रोजगारके निश्चित और सीमित मार्ग ही हैं और जहाँ मजदूर लोग एक ही ढंगके यन्त्रके प्रयोगमें बहुत दक्ष हो गये हैं, यह चीज सम्भव नहीं है। क्या आज इंग्लैंडमें तीस लाखसे ज्यादा लोग बेरोजगार नहीं पड़े हुए हैं? अभी पिछले ही दिनों मुझसे एक सवाल पूछा गया था: "इन तीस लाख बेरोजगारोंके लिए आज हम क्या कर रहे ह?" उन्हें एकाएक कारखानोंसे हटाकर खेतीके काममें तो लगाया नहीं जा सकता। यह बहुत भारी समस्या है।

प्र० : क्या यान्त्रिक कृषिसे अमेरिका और कैनेडाकी तरह भारतको भी बहुत लाभ नहीं होगा?

उ० : शायद होगा। लेकिन यह ऐसा सवाल है जिसका जवाब देने लायक मैं अपनेको नहीं मानता। भारतमें तो हम अभीतक कृषिके लिए बहुत जटिल यन्त्रोंका प्रयोग करके कोई लाभ नहीं उठा पाये हैं। हम यन्त्रोंका प्रयोग बिलकुल न करते हों, ऐसी बात नहीं। हम सँभल-सँभलकर उनका प्रयोग कर रहे हैं। लेकिन शक्ति-चालित कृषि-यन्त्रोंका प्रयोग हमें आवश्यक नहीं जान पड़ा।

प्र० : कुछ लोगोंकी ऐसी धारणा है कि आप तो यन्त्र-मात्रके विरोधी हैं। मेरा खयाल है, यह सही नहीं है?

उ० : हाँ, यह बिलकुल गलत धारणा है। चरखा भी तो यन्त्र ही है। यह एक सुन्दर कला-कृति है और यह यन्त्रके सार्वत्रिक प्रयोगका प्रतीक है। यह ऐसा यन्त्र है, जिसे सर्वसाधारणके उपयोगके लायक बनाया गया है।

प्र० : तो आप यन्त्रोंके विरोधी इसीलिए हैं और वहीं हैं जहाँ वह उत्पादन और वितरणको चन्द हाथोंमें सीमित कर देनेका साधन बन जाता है?

उ० : बिलकुल। मुझे विशेषाधिकार और एकाधिपत्यसे चिढ़ है। जो चीज सर्वसाधारणको सुलभ न हो सके उसे मैं अपने लिए त्याज्य मानता हूँ। बस, इतनी ही बात है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २-११-१९३१

१२३. प्रश्नोत्तर[1]

लन्दन

१६ अक्टूबर, १९३१

प्र० : आप सफलताकी आशा रखते हैं?

उ० : मैं आशावादी हूँ, इसलिए कभी आशा नहीं छोड़ता। परन्तु मुझे यह कहना चाहिए कि मसलेके हल होनेके बारेमें बम्बईमें जो स्थिति थी, उससे मैं कुछ भी आगे नहीं बढ़ सका हूँ। उसमें बड़ी कठिनाइयाँ हैं। मैं जानता हूँ कि जो वाता-

१. महादेव देसाईके "लंडन लेटर" (लन्दनका पत्र) से उद्धृत। सेवॉय होटलमें मेरिकी पत्रकारों द्वारा दिये गये प्रीतिभोजमें ये प्रश्न पूछे गये थे। महादेव देसाई कहते हैं कि गांधीजी ने इसके लिए उन्हें धन्यवाद देते हुए इसे उनका बहुत बड़ा सौजन्य बताया। कुछ मिनटतक उन्होंने उनको यह सब बताकर कि पत्रकार किस प्रकार उनकी बातोंको गलत रूपमें उद्धृत करते रहे हैं और किस प्रकार इसी तरह एक बार उनकी बातोंको गलत ढंगसे पेश करनेके कारण उनकी जानपर बन आई थी, उनका मनबहलाव किया। उन्होंने कहा कि भारतके एक पत्रकारके ही शब्दोंमें, जब पत्रकार जान-बूझकर सत्यपर रंग-मुलम्मा चढ़ाकर और 'उसमें अपनी ओरसे कुछ जोड़कर' उसे पेश करते हैं तो कटुताका प्याला भर जाता है। उन्होंने उन पत्रकारोंसे 'सत्य, सम्पूर्ण सत्य और सत्यके अतिरिक्त और कुछ नहीं' के सिद्धान्तका पालन करनेको कहा।

वरण आज यहाँ है, उसमें लोगोंको कांग्रेसकी माँगें बहुत अधिक जान पड़ती हैं, यद्यपि मैं ऐसा नहीं मानता।

प्र० : इस कठिनाईमें से निकलनेका कोई उपाय नहीं है?

उ० : कई उपाय हैं। परन्तु जिन लोगोंका इससे सम्बन्ध है, वे उन्हें ग्रहण करेंगे या नहीं, मैं नहीं जानता। हम लोगोंसे यह कहा गया है कि शासन-विधानका प्रश्न साम्प्रदायिक प्रश्नके हल होनेपर निर्भर है। यह सच नहीं है और मेरा खयाल है कि इस तरह बातको उलटकर कहनेसे ही प्रश्नको अधिक कठिन बना दिया गया है और उसे सर्वथा कृत्रिम महत्त्व दिया गया है और क्योंकि इसीको मूलाधार बनाया गया है, इसलिए सम्बन्धित पक्षोंका खयाल है कि वे अपनी माँगें जितनी वे बढ़ा सकें, उतनी बढ़ाकर रख सकते हैं। और इस तरह हम एक भारी दुश्चक्रमें उलझ गये हैं और सुलह-समझौतेका काम अधिकाधिक मुश्किल होता जाता है। लेकिन मैं तो किसी भी तरह इन दोनों प्रश्नोंमें कोई खास सम्बन्ध नहीं देख पा रहा हूँ। साम्प्रदायिक प्रश्न हल हो या न हो, भारत स्वतन्त्र होगा ही। स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके बाद बेशक हमारे सामने बहुत बड़ी-बड़ी कठिनाइयाँ आयेंगी। परन्तु इस प्रश्नके लिए स्वतन्त्रता रोकी नहीं जा सकती। क्योंकि जैसे ही हम उसके लायक होंगे स्वतन्त्रता हमें मिल जायेगी और उसके लायक होनेके मानी हैं उसके लिए काफी कष्ट उठाना, स्वतन्त्रताके बेशकीमती इनामके लिए बड़ी कीमत चुकाना। परन्तु यदि हमने उसके लिए कष्ट नहीं उठाया, उसकी कीमत नहीं चुकाई तो यह प्रश्न हल होगा तो भी इससे हमें मदद नहीं मिलेगी। यदि हमने काफी कष्ट उठाया है, काफी बलिदान किया है तो कोई दलील या समझौता-वार्त्ता आवश्यक नहीं होगी। हमने काफी कष्ट उठाया है, इसका निर्णय करनेवाला मैं कौन हूँ? हमने काफी कष्ट उठाया है, इसी आशासे मैं यहाँ आया और यहाँ आनेके लिए मुझे जरा भी दुःख नहीं है, क्योंकि मैं देखता हूँ कि मेरा काम तो परिषद्के बाहर है और इसीलिए अनेक प्रकारसे बहुत व्यस्त रहनेके बावजूद मैं यहाँ आनेको राजी हुआ, क्योंकि इसे भी मैं अपने कामका ही एक अंग मानता हूँ।

प्र० : इंग्लैंडके आम चुनावके कारण क्या आपका कार्य मुश्किल नहीं होगा?

उ० : होना तो नहीं चाहिए। यदि ब्रिटिश राजनयिक यह समझ जायें कि हिन्दुस्तान और इंग्लैंडके बीच संघर्ष होनेपर — वह संघर्ष चाहे जितना अहिंसक हो — आर्थिक स्थिति अधिक कठिन हो जायेगी, तो वे आम चुनावको हमारे प्रश्नको हल करनेमें बाधा-रूप न होने देंगे। उन्हें यह समझ लेना चाहिए कि यदि हिन्दुस्तान-की माँग स्वीकार नहीं कि गई तो जोरदार बहिष्कार आन्दोलन चलाया जायेगा और ग्रेट ब्रिटेनको अपना सारा ध्यान भारतमें तेजीसे नष्ट हो रहे अपने व्यापारिक हितोंकी ओर लगाना होगा। इसके बदले यदि दोनोंमें बाइज्जत साझेदारी कायम हो गई तो अपने घरेलू मामलोंको सुलझानेका ब्रिटेनको अधिक समय मिलेगा। जबतक ब्रिटेन संगीनोंके जोरपर भारतपर अपना प्रभुत्व जमाये हुए है, तबतक ब्रिटिश मन्त्रियोंकी गिद्ध-दृष्टि भारतकी क्षुधार्त्त जनतापर लगी ही रहेगी और वे भारतसे रत्ती-रत्ती

चाँदी और सोना खींच ले जानेके नये-नये उपाय निकालते रहेंगे। जरूरी नहीं कि उनके इस व्यवहारका कारण भारतके प्रति उनकी दुर्भावना ही होगी। इसके बजाय यह भी सम्भव है कि वे परिस्थितियोंसे मजबूर होंगे, क्योंकि जब देश में बेरोजगारी और अभाव बहुत बढ़ जाता है और किसी भी ओरसे कुछ राहत मिलनेकी सम्भावना दिखाई देती है — भले ही किसी अन्य देशका शोषण करनेसे ही वह राहत क्यों न मिलनेवाली हो — तब आप राजनयिकोंसे औचित्य-अनौचित्यका पूरा विचार करने और अपना आचरण सोलहों आने नैतिक नियमोंके अनुसार निर्धारित करनेकी अपेक्षा नहीं रख सकते। मजबूर होकर वे भारतकी मुद्राका मूल्य अपनी सुविधानुसार घटाने-बढ़ाने-जैसे उपायोंका सहारा लेंगे ही। उससे कुछ समयके लिए दुःख भले दूर हो जाये, लेकिन आखिरकार तबाही और बरबादीको आनेसे ज्यादा दिन नहीं रोका जा सकता।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २९-१०-१९३१

१२४. संघ-संरचना समितिकी बैठककी कार्यवाहीके कुछ अंश[1]

लन्दन
१६ अक्टूबर, १९३१

श्री गांधी : लॉर्ड चांसलर महोदय, देशी राजाओं या उनके प्रतिनिधियों तथा मेजके इस ओर बैठे प्रतिनिधियोंके बीच शीघ्र ही जो वार्त्ता होनेवाली है, उसको ध्यानमें रखते हुए मेरे लिए शायद यह जरूरी नहीं है कि इस समितिके सामने रखे अपने सुझावके पक्षमें कुछ कहूँ; लेकिन अगर मैं साफ-साफ यह न बता दूँ कि अब भी (लॉर्ड पील या सर अकबर हैदरीका जो-कुछ भी कहना हो सकता था, उसे पूरे आदर और ध्यानसे सुननेके बाद भी) मैं कायल नहीं हो पाया हूँ और अब भी अपने विचारोंपर कायम हूँ तो इसका मतलब होगा कि मैं लॉर्ड पील और सर अकबर हैदरीके साथ ईमानदारीका व्यवहार नहीं कर रहा हूँ। हो सकता है, मैं इतनी मोटी बुद्धिवाला होऊँ कि उन कठिनाइयोंको समझ पाना मेरे लिए सम्भव ही न हो; हो सकता है, मैं ठोस चीज सामने देखनेके लिए इतना अधिक व्यग्र होऊँ कि उन कठिनाइयोंको देख पाना मेरे लिए सम्भव ही न हो; लेकिन साथ ही मैं यह भी जानता हूँ कि स्वयं अपनेमें और अपने देशभाइयोंमें मेरा इतना विश्वास तो है ही कि मैं इस बातके लिए आश्वस्त रहूँ कि हम इस भारको और स्वशासनके परिणामस्वरूप हमपर जो जिम्मेदारियाँ आयेंगी उन्हें भली-भाँति ढो सकते हैं, और इसलिए कठिनाइयोंसे, चाहे वे सच्ची हों या काल्पनिक, मुझे कोई घबराहट नहीं होती।

१. समितिने शीर्षक ४, अर्थात् संघ तथा उसके घटकोंके बीच वित्तीय साधनोंके बँटवारेके प्रश्नपर विचार करना जारी रखा।

लेकिन भारत सरकारके राजस्व और व्ययके बँटवारेके इस प्रश्नपर मैं अपनी अत्यन्त साधारण बुद्धिके अनुसार कुछ कहना चाहता हूँ। हम सिद्धान्तोंकी बात करते रहे हैं। मगर हमारे सामने जो काम है, उसे जिन सिद्धान्तोंके आधारपर किया जा रहा है उनमें से कई मैं नहीं समझ पाया हूँ। निश्चय ही एक मामलेमें तो सिद्धान्त होना ही चाहिए अर्थात् हमें यह तो तय करना ही होगा कि हम आय-व्ययका बँटवारा किस मापदण्डके अनुसार करें। इस सम्बन्धमें हमें कोई मोटा और सहज-सुलभ सिद्धान्त अपनाना ही होगा और हमें इस सिद्धान्तके बारेमें निर्णय लेना है। मेरी कल्पनाके अनुसार तो वह सिद्धान्त यह है कि भारतके ब्रिटेन-शासित हिस्सेके सिरपर आज जितना बोझ है, क्या संघ बन जानेपर उसे उसके अलावा और भी बोझ उठाना पड़ेगा, और इसी तरह क्या देशी राज्योंको भी कोई अतिरिक्त भार उठाना है, अथवा क्या संघमें शामिल होते हुए दोनों पक्षोंमें से कोई भी पक्ष, समझ लीजिए अभी कुछ समयके लिए, कोई भी अतिरिक्त भार अपने सिरपर नहीं लेनेवाला है। मेरे विचारसे, आय-व्ययके उचित बँटवारेके सम्बन्धमें हमें इसी सिद्धान्तके अनुसार निर्णय लेना होगा।

इसलिए, इन सारे भाषणोंको सुननेके बाद मुझे वास्तवमें जो कठिनाई प्रतीत हुई है वह सिद्धान्तकी कठिनाई नहीं है, बल्कि सदस्योंकी अनिच्छासे उत्पन्न कठिनाई है। अगर हममें यह निश्चय हो कि हम संघ चाहते हैं, हम प्रत्येक पक्ष या प्रत्येक साझेदारके आत्मसम्मानकी रक्षा करते हुए कोई भी कीमत चुकाकर संघ चाहते हैं तो जैसा कि मैंने पहले भी कहा है, एक विशेषज्ञकी हैसियतसे नहीं बल्कि केवल सामान्य ज्ञान रखनेवाले व्यक्तिके रूपमें मैं फिर कहता हूँ कि मुझे तो संघकी स्थापनामें कोई कठिनाई दिखाई नहीं देती। हमें सिर्फ इतना ही करना है कि राजस्वकी जिन मदोंको हम आसानीसे समझ सकते हैं, उनका निश्चय करके कहें, 'ये राजस्वकी ऐसी मदें हैं, जिनपर हमारा संयुक्त अधिकार रहेगा। शेष या तो संघ सरकारके अधिकारमें रहेंगी या प्रान्तोंके अधीन।' मेरे विचारसे यह विभाजन आसानीसे किया जा सकता है। आज हमारे सामने सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि हम देशी राज्योंके प्रतिनिधियों तथा अन्य प्रतिनिधियोंको एक-दूसरेके निकट लाकर किसी निष्कर्षपर कैसे पहुँचें। अगर हम यह सिद्धान्त अपनाते हैं कि अभी किसी भी पक्षको अपने सिर कोई अतिरिक्त भार नहीं उठाना है, तो हम राजस्वकी मदोंका विभाजन तदनुसार करेंगे; या अगर थोड़ा-बहुत आदान-प्रदान होना है और प्रत्येक पक्षको थोड़ी अधिक जिम्मेदारी अपने सिर लेनी है तो हम उसी सिद्धान्तके अनुसार किसी निष्कर्षपर पहुँचेंगे। इसी तरह मुझे यह तय करनेमें भी कोई कठिनाई नहीं दिखाई देती कि राजस्वकी किन मदोंपर हमारा संयुक्त अधिकार रहेगा। अगर हम इस निष्कर्षपर पहुँच जाते हैं कि इस समय हमारे पास राजस्वके 'क', 'ख', और 'ग', ये तीन साधन होंगे, तो जहाँतक हमारी जानकारी है, हम यह जानते हैं कि इन तीनों साधनोंसे हमें इतना राजस्व प्राप्त होगा। इसके बाद हम व्ययकी ऐसी मदोंको लेंगे जिनपर वह सारा राजस्व खर्च हो जायेगा। मैं जानता हूँ कि सम्भव है, हमारा अनुमान गलत

निकले। लेकिन उस घाटे या बचतको सन्तुलित करनेका काम संघ सरकार अपनी सुविधासे करती रहेगी। अगर बचत हुई तब तो कोई कठिनाई ही नहीं होनी चाहिए; लेकिन अगर घाटा हुआ तो स्वभावतः कुछ कठिनाई होगी, लेकिन हममें से कोई भी ऐसा मानकर तो नहीं चल रहा है कि जब संघ सरकार जिम्मेदारियोंके तूफानी समुद्रमें अपनी पतवार सँभालेगी, उस समय उसे कोई कठिनाई होगी ही नहीं।

देखता हूँ, कुछ प्रतिनिधियोंके मनमें संघ सरकार द्वारा निर्णय लिये जानेके सम्बन्धमें भय है। इस भयका कारण यह है कि अबतक हम संघ सरकारमें ब्रिटिश भारतीय पक्षके बहुमतकी ही कल्पना करके चले हैं, जिससे यह धारणा बनी है कि संघमें देशी राज्योंका भाग्य पूर्णरूपसे उस बहुमतके हाथोंमें चला जा सकता है। अगर मनमें ऐसा कोई भय हो तो उसे छिपाकर रखनेकी जरूरत नहीं है। या हो सकता है, हमारे मनमें कोई ऐसी बात हो कि जबतक किसी प्रश्नपर एक ओर राजाओंके दो-तिहाई बहुमतके बीच मतैक्य न हो और दूसरी ओर दूसरे पक्षके बीच भी उस प्रश्नके सम्बन्धमें वैसा ही बहुमत न बने तबतक कोई भी निर्णय दोनों पक्षोंके लिए बन्धनकारी नहीं होगा। यह सब मैं पहले से सोचकर नहीं बोल रहा हूँ, बल्कि बोलते हुए मुझे जैसे-जैसे सूझता जाता है, वैसे-वैसे उदाहरणके रूपमें आपके सामने रख रहा हूँ। मेरा तो इतना ही कहना है कि ऐसी कठिनाइयोंसे हमें चकरा नहीं जाना चाहिए, और मुझे लगता है कि हमें हर मुद्देपर विशेषज्ञोंकी सलाह लेनेके इस भूतसे छुटकारा पा लेना चाहिए। आखिरकार, हम एक गरीब देशके निवासी हैं और हमें हर मोड़पर विशेषज्ञोंकी सहायता मिलनेवाली नहीं है। मैं मानता हूँ कि भारतमें हम लोगोंमें, विशेषज्ञोंके मार्गदर्शनके बिना ही, इतना समझ सकने लायक बुद्धि तो है ही कि हम क्या चाहते हैं; और दुनियाका मुझे जो भी थोड़ा-बहुत अनुभव प्राप्त है, उसमें तो मैंने यही देखा है कि विशेषज्ञोंके पास जाकर तो कभी-कभी हम बड़े चक्करमें पड़ जाते हैं, क्योंकि एक विशेषज्ञ एक बात कहता है और दूसरा दूसरी और जब हम वित्तीय मामलोंपर आते हैं तो साधारण लोगोंके लिए, जिनकी बुद्धिके लिए यह एक अत्यन्त जटिल विषय है, यही तय कर पाना कठिन होता है कि वे किस विशेषज्ञके पास जायें। फलतः यह कहते हुए कि हम इन विशेषज्ञोंकी बातोंमें पड़कर निर्णय लेना छोड़ नहीं सकते, वे भविष्यपर भरोसा करते हुए पर्ची डालकर निर्णय ले लेते हैं, और मैं लॉर्ड चांसलर महोदयके प्रति सम्पूर्ण आदर रखते हुए कहूँगा कि कानूनके मामलेमें भी हम ऐसा ही करते हैं।

महाविभव महाराजा बीकानेर: आप तो खुद ही एक जाने-माने वकील हैं।

श्री गांधी: तभी तो मैं अपने कटु अनुभवोंके आधारपर यह सब कह रहा हूँ। डाक्टरोंसे हमें भगवान् बचाये! हमारे मार्गमें विशेषज्ञ लोग जो बाधाएँ खड़ी करते हैं, उनसे हमें छुटकारा पाना चाहिए। अगर हम कोई गलती करेंगे तो उसका परिणाम भी तो आखिरकार हम ही भोगेंगे। लेकिन अगर हम इस राहपर अपने मनमें भय और आशंका लेकर चलते हैं तो हम ऐसी कोई योजना तैयार नहीं कर पायेंगे जो हमारे महान् और प्राचीन देशकी गरिमाके अनुरूप हो। इसलिए मैंने इस

समितिके समक्ष एक अत्यन्त साधारण व्यक्तिकी हैसियतसे अपनी स्थिति स्पष्ट कर दी है, ताकि जब हमारे बीच अनौपचारिक वार्त्ताएँ हों तो हम इस प्रश्नपर भयाकुल मनसे नहीं, बल्कि ताजा मनसे विचार कर सकें।

अन्तमें, क्या मैं राजाओंसे यह कह सकता हूँ कि वे अपने विशेषज्ञोंको भी साथ लेकर यहाँ आये हैं। वे अपने सबसे अच्छे आदमियोंको लाये हैं। मैं उन विशेषज्ञोंपर भरोसा करूँगा और अगर उन्होंने मुझे गुमराह करनेकी हिम्मत की तो अपनी सामान्य बुद्धिका भी उपयोग करूँगा। लेकिन मैं पूर्णतः सन्तुष्ट हो जाऊँगा और कुछ ही घंटोंमें निश्चित कर लूँगा कि मैं क्या चाहता हूँ और क्या नहीं। इसलिए मैं अब भी पूर्णतः यही मानता हूँ कि हमें यह चीज या तो लॉर्ड पीलकी उप-समितिके पास भेजकर निश्चित निष्कर्षपर पहुँचनेकी जिम्मेदारी उसीपर डाल देनी चाहिए, या उस उप-समितिको तकलीफ देनेके बजाय हममें से कुछ लोगोंको मिल-बैठकर कोई बहुत ही साधारण और सबको स्वीकार्य योजना तैयार कर लेनी चाहिए, जिसके आधारपर हम संघके वित्तीय मामलोंके बारेमें विचार-विमर्श शुरू कर सकें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबल कांफरेंस (सेकेंड सेशन): प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐंड माइनॉरिटीज़ कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ २२०-१

१२५. भाषण: मद्य-निषेधवादी कार्यकर्त्ताओंकी सभामें[1]

लन्दन
१६ अक्टूबर, १९३१

वक्ताने . . . इधर-उधरकी बातोंमें अपना समय गँवाये बिना सीधे कामकी बात शुरू कर दी। उनके पास घंटे-भरका समय था। इसमें से आधे घंटेमें उन्होंने भारतमें शराब और मादक पदार्थोंके व्यापारके सम्बन्धमें बहुत ही स्पष्ट, नपी-तुली और कायल करनेवाली शैलीमें तथ्योंका विवरण प्रस्तुत किया। शेष समय, स्वयं उन्हींके अनुरोधपर पूछे गये प्रश्नोंके उत्तर देनेमें बीता। उनके विचारसे प्रश्नोत्तरका तरीका 'श्रोताओंके साथ सम्पर्क स्थापित करनेका सबसे अच्छा तरीका' था। और प्रश्न भी कुछ कम नहीं पूछे गये, बल्कि सचमुच तीखे-पैने प्रश्नोंकी झड़ी लगा दी गई। लेकिन इन सबका जवाब उन्होंने बहुत स्पष्ट ढंगसे और शिष्टतापूर्वक दिया।

उन्होंने बताया कि संयुक्त राज्य अमेरिका अथवा यूरोपीय महाद्वीपकी तरह भारतमें मद्यपानका आम चलन नहीं है। सच तो यह है कि वहाँके सभ्य समाजमें यह एक 'वर्जित' चीज है। भारत शराबके व्यापारसे छुटकारा पाना चाहता है, लेकिन अफसोस यह है कि इससे प्राप्त होनेवाला राजस्व प्रान्तीय सरकारोंके पास जाता

१. वेस्टमिंस्टरके केन्द्रीय कक्षमें ईसाई धर्म-संगठनोंकी मद्य-निषेधवादी समिति द्वारा आयोजित सभामें।

है और शिक्षाका खर्च चलानेका यह मुख्य साधन है। भारतीयोंको जब सरकारसे किसी प्रकारकी सहायताकी आशा नहीं रह गई तब हालके वर्षोंमें उन्होंने शराबकी दुकानोंपर शान्तिपूर्ण धरना देकर शराब आदिके व्यापारसे होनेवाली बुराइयोंको कम करनेकी कोशिश की। इस कामको (जिसमें बहुत ही त्याग-बलिदान अपेक्षित था) भारतकी स्त्रियोंने, जिनमें से कुछ तो बहुत ही ऊँची स्थितिवाली थीं, बहादुरीके साथ अपने हाथोंमें लिया और जब श्री गांधीने लॉर्ड इर्विनसे इस विषयपर विस्तारसे बातचीत की तो उन्होंने स्वीकार किया कि 'इन दो पापपूर्ण व्यापारों' के खिलाफ अपनी मुहिम चलानेके लिए भारतीयोंको यह रास्ता अख्तियार करनेका अधिकार है।

इस विलक्षण और सन्त-जैसे दिखनेवाले नेताके मुँहसे हमें ऐसी ही कुछ बातें मालूम हुईं। तथ्योंका ब्योरा प्रस्तुत करते हुए उन्होंने केवल दो बार कुछ भावावेश या जोश दिखाया। इसका प्रसंग एक बार तो तब आया जब एक प्रश्नकर्त्ताने कहा कि अगर भारतीय सचमुच इस व्यापारको समाप्त करनेको उत्सुक हैं तो निश्चय ही विधान परिषदोंमें उनके प्रतिनिधियोंके लिए राजस्वके वैकल्पिक साधन (जैसे नमक और आम लोगों द्वारा प्रयुक्त किसी अन्य वस्तुपर थोड़ा-बहुत कर लगाना) सुझाना मुश्किल नहीं होना चाहिए। गांधीजी ने इस सुझावको तुरन्त और बहुत ही तिरस्कार-पूर्ण भावसे अस्वीकार कर दिया। उन्होंने कहा कि लोगोंके सिर जितना बोझ आज पड़ा हुआ है उससे अधिक बोझ डालनेकी किसी योजनामें मेरी सहमति नहीं हो सकती। भारतकी स्थायी सेनापर होनेवाले अनावश्यक खर्चमें और भारतीय असैनिक सेवापर जो अत्यधिक व्यय किया जा रहा है, उसमें कटौती करना ही वैकल्पिक उपाय हैं। जब किसीने उनसे शराबके व्यापारके परवानोंसे वंचित व्यापारियोंको मुआवजा दिये जानेके बारेमें पूछा तो उन्होंने इस बातपर बड़ा आश्चर्य प्रकट किया कि किसीके दिमागमें उनको मुआवजा देनेकी बात कैसे आ सकती है। उनके विचारसे, मुआवजेके हकदार उस व्यापारको चलानेवाले नहीं, बल्कि उसके कारण जिनकी तबाही हो रही है, वे लोग हैं।

[अंग्रेजीसे]

ब्रिटिश वीकली, २२-१०-१९३१

१२६. तार : जवाहरलाल नेहरूको[1]

[१६ अक्टूबर, १९३१के पश्चात्]

जवाहरलाल नेहरू
इलाहाबाद

तुम्हारा तार मिला। तुम्हें हर स्थितिका मुकाबला करनेके लिए जैसा जरूरी लगे वैसा कदम बेहिचक उठाना चाहिए। यहाँसे किसी प्रकारकी अपेक्षा मत करो।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८२२४) से।

१२७. पत्र : लॉर्ड इर्विनको

किंग्सले हॉल
बो
१७ अक्टूबर, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र[2] तो मानों मेरी प्रार्थनाके उत्तरमें ही आया। आपसे मुलाकातका समय माँगनेके लिए मैं आपको पत्र लिखने ही जा रहा था कि यह पत्र आ गया, जिसे पाकर बड़ी प्रसन्नता हुई। मैं बुधवारको १० बजे सुबह आपसे मिलना चाहूँगा, बशर्ते कि १० बजेका समय आपके लिए बहुत जल्दी न हो। जहाँतक मैं देख सकता हूँ, गोलमेज परिषद्में मेरा काम लगभग समाप्त हो चुका है। लेकिन आपसे बातचीत किये बिना मैं कोई बड़ा कदम नहीं उठा सकता। इस सबके बारेमें आपसे मिलकर ही बातचीत करूँगा।

१. यह जवाहरलाल नेहरूके १६ अक्टूबरके तारके उत्तरमें था। अपने तारमें जवाहरलाल नेहरूने लगानकी वसूली वगैरहके विषयमें स्थितिके बहुत बिगड़ जानेकी सूचना दी थी। उन्होंने लिखा था कि इस सिलसिलेमें जोर-जबरदस्ती की जा रही है, जमीन नीलाम की जा रही है; बहुत-से किसानोंने जमीनपर अपना स्वामित्व सदाके लिए गँवा बैठनेके भयसे अपने पशु बेचकर और कर्ज लेकर लगान चुकाया है, अब चालू मौसमका लगान भी माँगा जा रहा है; किसानोंकी स्थिति बहुत बुरी है; गत छः महीनोंसे उन्हें इतना परेशान किया गया है कि वे थक गये हैं। इन परिस्थितियोंमें इलाहाबाद जिला कांग्रेस कमेटीने सत्याग्रह करनेकी इजाजत लेनेका फैसला किया है। (एस० एन० १८२२३)

२. लॉर्ड इर्विनने अपने पत्रमें सोमवार, १९ तारीखको अपने लन्दन आनेकी सूचना देते हुए लिखा था कि बुधवार, २१ तारीखको आपके पास समय हो तो एक-आध घंटेके लिए मिलना चाहूँगा। (एस० एन० १८१००)

बायें हाथसे पत्र लिखा है, इसके लिए क्षमा चाहता हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९४३९) से।

१२८. भाषण: नॉटिंघम युनिवर्सिटी कॉलेजमें

नॉटिंघम
१७ अक्टूबर, १९३१

गांधीने कहा कि भारतीय कांग्रेस, स्वतन्त्रता शब्दका जो पूरा अर्थ है, उस अर्थमें पूर्ण स्वतन्त्रताकी माँग कर रही है। भारत अपनी प्रतिरक्षा, सेना, विदेशी मामलों तथा वित्त-व्यवस्थाके पूरे नियन्त्रणकी सत्ता चाहता है।

मैंने माँग शब्दका प्रयोग किया है। सचाई यह है कि माँग करनेसे आजतक किसी भी राष्ट्रको स्वतन्त्रता नहीं मिली है। स्वतन्त्रता तो बलिदान और कष्ट-सहनके द्वारा प्राप्त करनी होती है। इतिहास यह बताता है कि राष्ट्र खूनकी नदियाँ बहाकर स्वतन्त्र हुए हैं। उन्होंने आक्रान्ताओं, उत्पीड़कों या शोषकोंको मार भगाया है। लेकिन इस प्रक्रियामें खुद उन्हें भी बहुत मार सहनी पड़ी है।

हम सत्य और अहिंसामय उपायोंसे अपनी स्वतन्त्रताके लिए, जो हर राष्ट्रका जन्मसिद्ध अधिकार है, लड़ रहे हैं। मैं दूसरोंके प्रति हिंसा करनेवाले लोगोंसे ऊब चुका हूँ। इस तरह न्याय नहीं मिलता। सविनय अवज्ञाकी अपनी मर्यादाएँ हैं, क्योंकि करोड़ों लोग सविनय अवज्ञा नहीं कर सकते। हमारी रचनात्मक प्रवृत्तियोंमें मद्य-अफीम आदिका निषेध तथा अस्पृश्यता-निवारण शामिल हैं। हममें अबतक कोई समझौता नहीं हो पाया है, इससे आप यह न समझें कि हममें कहीं कोई मेल है ही नहीं।

[अंग्रेजीसे]

बर्मिंघम पोस्ट, १९-१०-१९३१

१२९. भेंट : एवलिन रेंचको[1]

लन्दन

[१७ अक्टूबर, १९३१ के पूर्व][2]

रेंच : 'स्पेक्टेटर' के पाठकोंके लाभके लिए आपसे बातचीत करनेका यह सुयोग प्राप्त करके मुझे बहुत खुशी हुई है।

गांधीजी : इंग्लैंडमें रहते हुए मैं जो-कुछ करना चाहता था उनमें से एक 'स्पेक्टेटर' के सम्पादकसे बातचीत करना भी था, क्योंकि ग्रेट ब्रिटेनकी जनताको भारतीय समस्याओंकी जानकारी कराते रहनेके लिए 'स्पेक्टेटर' जो-कुछ करता रहा है, उसकी भारतमें हम लोग बड़ी कद्र करते हैं। मैं जानता हूँ कि आप शायद मेरे सभी विचारोंसे सहमत न हों, लेकिन साथ ही इस बातसे भी मैं बाखबर हूँ कि आपने 'स्पेक्टेटर' के स्तम्भोंमें बार-बार ऐसा कहा है कि ग्रेट ब्रिटेन और भारतके भावी सम्बन्धोंका एकमात्र सन्तोषजनक आधार मैत्रीपूर्ण समानता और इस तथ्यकी स्वीकृति ही हो सकती है कि अपने भाग्यके अन्तिम निर्णायक भारतके लोग हैं।

प्र० : देखें, क्या होता है। अच्छा श्री गांधी, यह बताइएगा कि आप पिछली बार कब इंग्लैंड आये थे? मेरा तो खयाल है कि लड़ाई छिड़नेसे कुछ समय पहले आये थे?

उ० : हाँ, मैं १९०९ में इंग्लैंड आया था और फिर लड़ाई छिड़नेके ठीक दो दिन बाद।[3] उस अवसरपर मैंने रेड क्रॉस दलके संगठनमें सहायता की थी, लेकिन दुर्भाग्यवश मैं बीमार हो गया और प्लूरिसीके आघातके कारण मैं वह सब नहीं कर पाया जो उस वर्ष नवम्बर महीनेमें[4] भारत लौटनेसे पहले करना चाहता था।

प्र० : भारतीय समस्याके बारेमें ब्रिटेनवालोंके मौजूदा रुखके सम्बन्धमें आपकी प्रमुख प्रतिक्रिया क्या है? क्या आप ऐसा समझते हैं कि लोकमतमें बहुत परिवर्त्तन आया है?

उ० : हाँ, साधारण जनोंके रुखमें मुझे बहुत परिवर्तन नजर आता है और मैंने ब्रिटेनके सभी वर्गोंके लोगोंसे बातचीत करनेका खास खयाल रखा है। लन्दन

१. स्पेक्टेटरके सम्पादक। यह विवरण रेंचकी रिपोर्ट "एन ईवनिंग विद मि० गांधी" (श्री गांधीके साथ एक शाम) से लिया गया है। यह भेंटवार्त्ता रेंचके आवासपर रातके ८ और ११ बजेके बीच हुई थी।

२. साधन-सूत्रमें भेंटकी तिथि नहीं बताई गई है। सिर्फ इतना कहा गया है कि भेंटवार्त्ता 'पिछले हफ्ते' हुई थी।

३. अगस्त, १९१४ में प्रारम्भ होनेवाला प्रथम विश्व-युद्ध। इस अवसरपर गांधीजी के इंग्लैंड-प्रवासके लिए देखिए खण्ड १२।

४. गांधीजी ने भारतके लिए १९ दिसम्बर, १९१४ को प्रस्थान किया और ९ जनवरी, १९१५ को वे बम्बई पहुँचे।

आकर मैं खुश हूँ और आपके यहाँके सामान्य जनोंसे मुझे अद्भुत स्नेह प्राप्त हुआ है। ईस्ट एंडमें लोगोंने मेरे प्रति जैसा मैत्री-भाव दिखाया है उससे मैं बड़ा प्रभावित हुआ हूँ। लोग अपने-अपने घरोंसे निकलकर मुझसे हाथ मिलाते हैं और मुझे अपनी शुभेच्छाएँ देते हैं। लंकाशायरमें मेरा जैसा स्वागत हुआ, उससे मैं बड़ा प्रसन्न हुआ और भारतमें मेरी नीतिके कारण लंकाशायरको बहुत नुकसान पहुँचनेकी खबरोंके बावजूद वहाँ मुझसे किसीको कोई शिकायत नहीं थी और कर्मचारियों तथा मालिकों, दोनोंने समानरूपसे मेरे प्रति मैत्री-भाव ही दरसाया।

प्र० : लेकिन तथाकथित उच्चतर और अधिकारी-वर्गके विषयमें आपका क्या खयाल है? क्या आप ऐसा मानते हैं कि उनके मतमें कोई परिवर्तन हुआ है और भारत जो-कुछ चाहता है, वह उसे देनेको तैयार हैं?

उ० : मुझे लगता है कि वे तो अब भी स्थितिको नहीं समझते और हमें स्वतन्त्रता, जिसका दावा हम अपने अधिकारके रूपमें कर रहे हैं, देनेके लिए तैयार नहीं हैं। वे मानते हैं कि भारत अभी अपना कारोबार खुद चलानेमें समर्थ नहीं है, और मुझे ऐसी आशंका है कि उनमें से बहुत कम लोग यह माननेके लिए तैयार होंगे कि हम भी वैसी ही स्वतन्त्रताके अधिकारी हैं जैसी कि ग्रेट ब्रिटेनको प्राप्त है। स्वतन्त्रताके उस अधिकारसे मेरा मतलब सेना, वित्तीय और परराष्ट्रीय मामलोंको अपने नियन्त्रणमें रखनेका अधिकार है।

प्र० : श्री गांधी, आप यह तो जानते ही हैं कि 'स्पेक्टेटर' सदासे उस चीजमें विश्वास करता रहा है जिसे औपनिवेशिक स्वराज्य कहा जाता है। हम मानते हैं कि इस व्यवस्थाके अन्तर्गत परस्पर विरोधी-से लगनेवाले दो तत्त्वों, अर्थात् सहयोग और स्वतन्त्रताके बीच तालमेल बैठानेका वह काम कर दिखाया गया है, जो असम्भव प्रतीत होता था। आपके विचारसे क्या भारत उस दर्जेको प्राप्त करके सन्तुष्ट हो जायेगा जो ब्रिटिश राष्ट्रमण्डलके अन्तर्गत एक उपनिवेशके रूपमें दक्षिण आफ्रिकाको प्राप्त है?

उ० : भारतकी स्थितिको मैं सबसे अलग मानता हूँ। आखिरकार हमारे देशमें मानव-जातिका पाँचवाँ हिस्सा निवास करता है। इसलिए मैं ऐसा नहीं समझता कि जो राजनीतिक दर्जा ब्रिटिश राष्ट्रमण्डलके दूसरे उपनिवेशोंके लिए ठीक हो सकता है वह भारतके लिए भी ठीक हो ही। आपको याद रखना चाहिए कि भारत दीर्घ कालसे एक पराधीन राष्ट्र रहा है। अगर ग्रेट ब्रिटेन दोनों देशोंके लोगोंके भावी सम्बन्धोंकी समस्याके समाधानके लिए मनमें कोई दुराव रखे बिना मैत्री-भावसे आगे आता है, तो वह देखेगा कि उसकी इस सद्भावनाका उत्तर सद्भावनासे देनेमें भारत कभी पीछे नहीं रहेगा। एक बार जब हमारे स्वतन्त्रताके अधिकारको मान्यता दे दी जायेगी तो हम समानताके स्तरपर उससे कोई ऐसी सन्धि करने अथवा उसके साथ कोई ऐसी साझेदारी कायम करनेके लिए तत्पर रहेंगे जिससे ग्रेट ब्रिटेन और भारतके सम्बन्ध एक सन्तोषजनक आधारपर स्थापित हो जायें।

प्र० : ग्रेट ब्रिटेन जब अन्तिमरूपसे और सदाके लिए ऐसी घोषणा कर देगा कि भारतकी जनताको अपने भाग्यका निर्णायक आप बननेका वैसा ही अधिकार प्राप्त है जैसा कि हमें है, तो आपके विचारसे क्या तब भी भारत ऐसी शर्तोंपर जिन्हें पूरा करना उसके बसमें हो, अंग्रेज अफसर, सिपाही और तकनीशियन रखेगा और भावी भारत राज्यके निर्माणमें हमारे अनुभवोंका लाभ उठायेगा ?

उ० : बेशक, वह ऐसा करेगा। एक बार जब ग्रेट ब्रिटेन उस चीजको स्वीकार कर लेगा जिसे हम अपना न्यायसम्मत अधिकार मानते हैं तो निश्चय ही मैं सभी अंग्रेज अफसरोंको भारतसे निकाल देना नहीं चाहूँगा।

मैं तो आपके सारे अनुभवोंका लाभ उठाना चाहता हूँ। जब आपकी ओरसे आदेश देना बन्द हो जायेगा तो मेरा खयाल है कि हम आपसमें ऐसी व्यवस्था कर सकते हैं जो हम दोनोंके लिए सन्तोषजनक हो।

प्र० : क्या यह सच है, जैसा कि मेरे कुछ अधिक उग्र राष्ट्रवादी मित्रोंने कहा है, कि भारतको जब यूरोपीय सलाहकारोंकी जरूरत होगी तब वह अंग्रेजोंके बजाय यूरोपीय महाद्वीपके देशोंके विशेषज्ञों, जैसे जर्मनों, फ्रांसीसियों, स्वीडनवासियों, डचों आदिकी सहायता लेना ज्यादा पसन्द करेगा ?

उ० : नहीं, मैं नहीं समझता कि सामान्यरूपसे यह बात सच है। बेशक, हमें कई बातोंमें यूरोपकी सलाह और मार्ग-दर्शनकी आवश्यकता होगी। अगर हमें यह सलाह और मार्ग-दर्शन ग्रेट ब्रिटेनसे ऐसी शर्तोंपर मिल सके जिन्हें हम पूरा कर सकते हों तो हम उसका स्वागत करेंगे। एक ही स्थिति है जिसमें हमें ग्रेट ब्रिटेनसे विमुख होना पड़ेगा। वह स्थिति तब आयेगी जब ग्रेट ब्रिटेन हमें वह चीज न दे जिसे हम अपनी वाजिब माँग समझते हैं।

अगर आप हमारे साथ न्यायका व्यवहार करेंगे और अपनी सुरक्षा-व्यवस्थाको अपने नियन्त्रणमें रखनेके हमारे अधिकारको स्वीकार कर लेंगे, तो हम आपके विशेषज्ञों-से बातचीत करके यह जानकारी प्राप्त करेंगे कि हमारी आवश्यकताओंके लिए कमसे-कम कितने ब्रिटिश सैनिक रखना जरूरी समझा जाता है। मैं भारतस्थित ब्रिटिश सेनापतिको अपना सैनिक सलाहकार मानूँगा, लेकिन भारतस्थित ब्रिटिश सेनाको तो निस्सन्देह भारतकी राष्ट्रीय सरकारके अधीन रहना होगा।

प्र० : और इस कथनके बारेमें आपका क्या कहना है कि अपने-आपको भारत सरकारके भाड़ेके सैनिकोंकी स्थितिमें रखना ब्रिटिश प्रजाजनोंके लिए अप्रतिष्ठाका विषय होगा ?

उ० : मैंने यह दलील सुनी है; लेकिन यह मुझे किसी तरह जँचती नहीं। इस आपत्तिके पीछे यह विश्वास छिपा हुआ है कि साझेदारी नामकी ही साझेदारी होगी और वास्तवमें हम सब एक गुलाम राष्ट्रकी तरह रहेंगे। अगर ऐसा खयाल न हो तो फिर किसी साझेदार राष्ट्रको अपनी सेवा प्रदान करनेवाले ब्रिटिश सैनिकको भाड़ेका सैनिक कैसे कहा जा सकता है? लेकिन अगर ब्रिटिश सैनिक राष्ट्रीय

सरकारके अन्तर्गत काम करनेको तैयार न होंगे तो हमें उनके बिना ही काम चलाना होगा।

प्र० : गरज यह कि ब्रिटेनके स्वार्थकी दृष्टिसे भी आप ऐसा मानते हैं कि ग्रेट ब्रिटेनके साथ सन्धि-सम्बन्धों और साझेदारीके बन्धनमें बँधा, हमारे प्रति मैत्रीपूर्ण रुख रखनेवाला भारत हमारे लिए शक्तिका स्रोत-रूप होगा ?

उ० : यह तो आप लोगोंके ही तय करनेकी बात है। मैं तो ऐसा मानता हूँ कि भारतीय समस्याके ऐसे समाधानसे जो भारतकी आकांक्षाओंकी पूर्त्तिकी दृष्टिसे सन्तोषजनक हो, ग्रेट ब्रिटेनको अपनी आर्थिक समस्याको हल करनेमें बहुत अधिक सहायता मिलेगी। इससे ग्रेट ब्रिटेन को लाभ होगा, भारतको और सारी दुनियाको भी लाभ होगा। यदि ग्रेट ब्रिटेन भारतके साथ स्वेच्छापर आधारित, अर्थात् दो समान पक्षवालोंके बीच होनेवाली साझेदारी कायम करता है तो उसे व्यापार करनेके लिए एक मित्र राष्ट्र मिलेगा और इसके अलावा अन्य सारे ब्रिटिश मालका बहिष्कार बन्द हो जायेगा। मुझे ऐसी आशंका है कि लंकाशायरको कुछ अधिक सहायता नहीं मिल पायेगी, क्योंकि हम लोग अपनी जरूरतका कपड़ा खुद ही तैयार करनेको कृत-संकल्प हैं; किन्तु हमें दूसरी बहुत-सी वस्तुओंकी भी जरूरत है, जिन्हें विदेशोंसे मँगाना होगा। उदाहरणके लिए, मैं समझता हूँ, भारत अठारह करोड़ रुपयेकी चीनी और सात करोड़ रुपयेके लोहेका सामान वगैरह आयात करता है।

निश्चय ही, अभी बहुत दिनोंतक हम अपनी जरूरतकी सारी चीजें खुद ही तैयार नहीं कर पायेंगे।

प्र० : तो श्री गांधी, मैं समझता हूँ, आप यह चाहते हैं कि अपने भाग्यका निर्णायक स्वयं होनेके भारतके अधिकारको तत्काल सदाके लिए स्वीकार कर लिया जाये ? और आप यह मानते हैं कि अगर ऐसा कर दिया जाये तो सारा वातावरण बदल जायेगा और तब ग्रेट ब्रिटेन उस भारतको, जिसका आप प्रतिनिधित्व करते हैं, पारस्परिक सहयोगसे सम्बन्धित तफसीलकी बातोंका निबटारा करनेके लिए सर्वथा तत्पर पायेगा ? और गोलमेज परिषद् विफल हो जाये, इससे बेहतर आप यह मानते हैं कि भारतको अपने भाग्यका सम्पूर्ण नियामक बननेका अधिकार है, इस सिद्धान्तको स्वीकार कर लिया जाये और साम्प्रदायिक समस्या-जैसे प्रश्नोंका हल पंच-फैसलेके लिए छोड़ दिया जाये ?

उ० : हाँ, बात ऐसी ही है, मैं समझता हूँ कि जैसे ही ब्रिटिश सरकार दुनिया-के सामने यह घोषणा कर देगी कि भारतको उतनी ही स्वाधीनताका अधिकार है जितनी स्वाधीनताका अधिकार ग्रेट ब्रिटेनको है, हम कठिन साम्प्रदायिक समस्याके सम्बन्धमें पंच-फैसलेके सिद्धान्तको स्वीकार करनेके लिए पूरी तरह तैयार हो जायेंगे। लेकिन, मैं नहीं समझता कि गोलमेज परिषद्में जितना समय लगा है, सब व्यर्थ गया ही सिद्ध होगा। आप सच मानिए, कांग्रेस समझौतेकी राहमें कोई बाधा नहीं डाल रही है।

परिषद्में से सर जॉफ्रे कॉर्बेटकी योजना सामने आई है। सर ह्यूबर्ट कारकी योजना भी ऐसी है जिसपर ध्यानसे विचार किया जाना चाहिए — उस योजनाके अन्तर्गत लोक-निर्वाचित सदनमें मुसलमानोंको लगभग वह सब-कुछ मिल जाता है जो वे चाहते हैं और इसी प्रकार द्वितीय सदनमें सिख लोग जो-कुछ चाहते हैं वह सब उन्हें भी मिल जाता है। लेकिन जैसा कि मैंने कहा है, सबसे अच्छा तरीका तो शायद यही होगा कि सीटोंकी व्यवस्था और पृथक् अथवा संयुक्त निर्वाचक-मण्डलोंके सवालका निबटारा एक निष्पक्ष न्यायाधिकरणके ऊपर छोड़ दिया जाये। कहनेकी जरूरत नहीं कि जब अन्यथा कोई समझौता न हो पाये तभी ऐसा न्यायाधिकरण नियुक्त किया जायेगा।

प्र० : लेकिन अस्पृश्योंके बारेमें आपका क्या कहना है? मैं जानता हूँ कि कुछ हलकोंमें ऐसा माना जाता है कि उनके लिए पृथक् निर्वाचन-मण्डलोंकी व्यवस्था की जानी चाहिए और आपको उनकी ओरसे बोलनेका हक नहीं है।

उ० : मुझे इस बातकी खुशी है कि आपने इस प्रश्नकी भी चर्चा की। मैं बेहिचक कह रहा हूँ कि अगर भारतके सभी भागोंके अस्पृश्योंके मत लिये जायें तो उनका प्रतिनिधि मैं ही चुना जाऊँगा। डा० अम्बेडकर निस्सन्देह बड़े चतुर और उत्साही आदमी हैं। उनके मनमें कटुता होना सभी तरहसे उचित है। मैंने अपना अधिकांश जीवन अस्पृश्योंका पक्ष-समर्थन करनेमें लगाया है। मैं भारतके सभी भागोंमें जाकर उन लोगोंसे मिला हूँ। उनमें से कई मेरे आश्रममें हैं। एक अस्पृश्य लड़कीको तो मैंने गोद भी लिया है। मेरी ही तरह बहुत-से कांग्रेसजन यह सोचते और महसूस करते हैं कि अस्पृश्योंकी समस्या कितनी गम्भीर है।

अस्पृश्योंके ही हितोंका खयाल करके मैं ऐसा मानता हूँ कि विशेष निर्वाचक-मण्डल या सीटोंका आरक्षण उनके लिए घातक होगा। अगर इसे प्राप्त करनेकी कोशिश की गई तो फिर उनके खिलाफ विरोध भड़केगा। मेरा खयाल है उनके "खुले दरवाजेसे आनेसे", उन्हें सामान्य हिन्दुओं-जैसे मताधिकार दिये जानेसे ही उनके हितोंकी सबसे अच्छी तरह रक्षा होगी। वे देखेंगे कि भारतीय जनमतका दिशा-दर्शन करनेवाले नेता उनके सामाजिक दर्जेको उठाने और उनको मन्दिरोंमें प्रवेश करनेका अधिकार दिलानेको कटिबद्ध हैं और साथ ही उन तमाम बाधाओं और असुविधाओंको दूर करनेको तैयार हैं, जिन्हें वे लोग अतीतमें झेलते आये हैं।

प्र० : कुमारी मेयोकी पुस्तक[1] पढ़नेवालोंकी समझमें पशुओंके प्रति भारतीयोंका व्यवहार किसी तरह समझमें नहीं आता। वे जानते हैं कि हिन्दू किसीकी जान लेना पाप समझते हैं, लेकिन यह बात उनकी समझमें नहीं आती कि उन्हें रुग्णावस्थामें सड़कोंके किनारे मरनेको छोड़ दिया जाये, लेकिन उन्हें उनके कष्टोंसे मुक्ति न दी जाये। इस विषयमें आपका क्या कहना है?

१. **मदर इंडिया**; उक्त पुस्तककी गांधीजी द्वारा लिखी आलोचनाके लिए देखिए खण्ड ३४, पृष्ठ ५८४-९४।

उ० : यहाँ आपने, भारतके सुधारक वहाँ जिन समस्याओंको यथासमय हल करनेकी आशा कर रहे हैं, उन्हींमें से एककी चर्चा छेड़ी है। मेरे आश्रममें एक बछड़ा मर रहा था।[1] वह लँगड़ा था और उसके कई जख्म हो गये थे जिनसे दुर्गन्ध आ रही थी। मैंने ऐसी सुइयाँ लगवाकर, जिन्हें लगाते हुए उसे कोई कष्ट नहीं हो सकता था, उसका प्राणान्त करवा दिया। इसपर मेरे कई देशभाइयोंने मेरी तीव्र आलोचना की। मेरे विचारसे अभी वे यह नहीं सीख पाये हैं कि अहिंसाका मतलब यह नहीं कि जिस कष्टका अंत किया जा सकता है उसे किसीको सहते रहने दिया जाये। मेरा खयाल है कि भारतमें आज पशुओंको जो कष्ट सहने पड़ते हैं उनमें से अधिकांशका कारण अहिंसाके असली अर्थका अनर्थ करना ही है।

प्र० : अब हम एक दूसरे विषयको लें। मैं आपके धार्मिक विश्वासोंके बारेमें कुछ जानना चाहूँगा। आपके मनमें क्या कभी धर्मको लेकर शंकाएँ भी उठी हैं और पहले-पहल ईश्वरमें आपकी गहरी आस्था कब हुई और इस आस्थाके उदयके बादसे क्या कभी आपकी आत्माको शंकाओंके अन्धकारसे भी गुजरना पड़ा है?

उ० : हाँ, अपने छुटपनमें मैं ईश्वरके प्रति अविश्वासके दौरसे गुजरा था। मैं वास्तवमें नास्तिक था। यह बात तब की है जब मैं चौदह सालका था। लेकिन तबसे ईश्वरमें मेरी आस्था बराबर बनी रही है।

प्र० : तब क्या आप आत्माकी अमरतामें विश्वास करते हैं?

उ० : हाँ, उसमें मेरा विश्वास अवश्य है। यहाँ मैं आपको सागरका उदाहरण देना चाहूँगा। जलकी बूँदोंसे सागर बनता है। प्रत्येक बूँदका अपना एक अलग अस्तित्व है, लेकिन फिर भी वह सम्पूर्णका अंश है, 'अनेकमें-से-एक है।' इस जीवन-समुद्रमें हम सब छोटी-छोटी बूँदोंके समान हैं।

मेरे धार्मिक सिद्धान्तका मतलब यह है कि मुझे [सृष्टिमें जो जीवन-तत्त्व नाना रूपोंमें प्रगट हो रहा है] उस सम्पूर्ण जीवनसे, जो-कुछ भी है उस सबसे अपनी एकता साधनी है और ईश्वरकी उपस्थितिमें विराट जीवनके उस वैभवका हिस्सेदार बनना है। अपनी समग्रतामें यह जीवन ही ईश्वर है।

प्र० : क्या किसी पुस्तकने आपको बहुत अधिक प्रभावित किया और क्या उससे आपके जीवनमें एक नया मोड़ आया?

उ० : हाँ, जिस पुस्तकका मुझपर सबसे अधिक प्रभाव पड़ा वह है रस्किनकृत 'अनटु दिस लास्ट'। उन दिनों मैं दक्षिण आफ्रिकामें रहता था। १९०४ में ३५ वर्षकी अवस्थामें रेलगाड़ीसे डर्बन जाते हुए मैंने वह पुस्तक पढ़ी और उसीको पढ़कर मैंने अपना बाह्य जीवन पूर्णतः बदल देनेका निश्चय किया।[2] उसको पढ़नेका मुझपर जो प्रभाव हुआ उसका वर्णन मैं यही कहकर कर सकता हूँ कि रस्किनने मुझे अभिभूत कर लिया। मैं पुस्तकको एक ही बारमें पढ़ गया और उसे पढ़नेके

१. देखिए खण्ड ३७, पृष्ठ ३२३-७

२. देखिए खण्ड ३९, पृष्ठ २२८-९

बाद मैं पूरी रात जागता रहा और तभी मैंने अपने जीवनकी सम्पूर्ण योजनाको बदल देनेका निश्चय किया। टॉल्स्टॉयको मैं उससे बहुत पहले पढ़ गया था। उन्होंने मेरे आन्तरिक जीवनको प्रभावित किया।

प्र० : उन दिनों तो आप काफी सफल वकील थे न? आपमें जो यह परिवर्तन आया उसका मतलब क्या यह था कि आप ऐसा मानने लगे कि इस जीवनकी अच्छी चीजोंका उपभोग करना गलत है? तब आपकी आय क्या थी?

उ० : जहाँतक मुझे याद आता है, मैं वकालतसे प्रतिवर्ष लगभग ३,००० कमा लेता था। जिसे आप मुझमें "परिवर्तन आना" कहते हैं, उस घटनाके बाद मैंने तय कर लिया कि भविष्यमें मैं अपनी सारी कमाई ऐसे उद्देश्योंपर खर्च करूँगा जो मुझे अपने मानव-बन्धुओंके लिए कल्याणकर लगें और आगेसे अपना गुजारा केवल शारीरिक श्रमके बलपर करूँगा। वैसे तो इस लक्ष्यको पूरा करनेकी कोशिशमें मैं सर्वथा सफल नहीं रहा हूँ, लेकिन मैं जानता हूँ कि इसी तरह रहकर मनकी शान्ति प्राप्त की जा सकती है।

प्र० : आपमें मुझे आश्चर्यजनक शक्ति और स्फूर्ति दिखाई दी है और उससे मैं बहुत प्रभावित हूँ। बासठ सालकी उम्रके बहुत कम लोगोंमें इतनी अधिक स्फूर्ति होती है। अखबारोंमें मैंने आपके आहारके सम्बन्धमें कुछ पढ़ा है। क्या आप मुझे यह बतायेंगे कि आपके दैनिक आहारमें क्या-क्या होता है?

उ० : बेशक। मेरा निश्चित मत है कि अधिकांश लोग बहुत ज्यादा खाते हैं। अपने मौजूदा आहारपर रहकर मैं जितना अच्छा महसूस करता हूँ, उतना अच्छा और कभी नहीं महसूस किया है। दवाओंसे तो मुझे भय लगता है। मेरा दैनिक आहार इस प्रकार है: सुबहके आठ बजे नाश्तेमें मैं सोलह औंस बकरीका दूध और चार सन्तरे लेता हूँ, दोपहरका भोजन एक बजे करता हूँ और उसमें फिर सोलह औंस दूध, दाख, नाशपाती या कोई और फल लेता हूँ। शामका भोजन पाँच और छः बजेके बीच करता हूँ। उसमें एक छोटा चम्मच पिसे हुए बादाम, बीस-तीस खजूर, कई टमाटर और लेटिस या अन्य कोई सलाद होता है। इससे बदहजमी नहीं होती। इस सूचीसे आपको यह तो स्पष्ट हो ही गया होगा कि मैं श्वेतसार या अन्न बिलकुल नहीं खाता।

प्र० : अन्तमें मैं यह पूछना चाहूँगा कि क्या आप ऐसा मानते हैं कि परिषद्के विफल हो जानेपर यदि भारतीयोंको आंशिक स्वशासनाधिकार दे दिया जाये और इस बातकी गुँजाइश रखी जाये कि दस-बीस वर्ष बाद जब ब्रिटिश संसद यह समझ ले कि भारत अपना सारा कारोबार आप ही सँभाल सकता है तब एक और परिषद् बुलाई जा सकती है तो क्या उससे वे सन्तुष्ट हो जायेंगे?

उ० : मुझे विश्वास है कि मेरा क्या उत्तर होगा, यह आप जानते हैं। इंग्लैंडमें रहते हुए मैं इस बातकी कोशिश करता रहा हूँ कि उत्तेजित करनेवाली कोई बात न कहूँ, लेकिन आपके प्रश्नके उत्तरमें इतना जरूर कहूँगा कि भारतमें हममें से जिन

लोगोंने अपने प्राणोंकी बाजी लगा रखी है, वे किसी अधूरी चीजसे सन्तुष्ट होनेवाले नहीं हैं। अगर इस परिषद्के बाद भारतकी जनताको यह विश्वास हो जाता है कि ग्रेट ब्रिटेनकी भारतको तत्काल स्वराज्य देनेकी सच्ची इच्छा नहीं है तो वह उसे प्राप्त करनेके लिए अपनी सारी शक्तिका प्रयोग करेगी।

प्र० : अब 'स्पेक्टेटर' के पाठकोंको आपका अन्तिम सन्देश क्या है?

उ० : आपके पाठकोंको मेरा अन्तिम सन्देश यह है कि वे अपने मित्रोंको हमारा दृष्टिकोण समझानेके लिए अपने पूरे प्रभावका उपयोग करें और हमारे देशोंके बीच समानताके आधारपर स्थित सच्ची साझेदारी कायम करनेके महान् उद्देश्यके लिए कार्य करें। मेरा खयाल है कि इन दोनों अथवा दो से अधिक राष्ट्रोंकी स्वेच्छापर आधारित संगठनका उपयोग विश्वकी अनेक समस्याओंके समाधानके लिए किया जा सकता है — सो केवल अधिकतम लोगोंके अधिकतम लाभके लक्ष्यको ही सामने रखकर नहीं, बल्कि सबके लाभके लक्ष्यको सामने रखकर।

[अंग्रेजीसे]
स्पेक्टेटर, २४-१०-१९३१

१३०. पत्र : अलबर्ट आइन्स्टीनको[1]

लन्दन
१८ अक्टूबर, १९३१

प्रिय मित्र,

सुन्दरम्की मार्फत आपका सुन्दर पत्र पाकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई। इससे मुझे बहुत सन्तोष मिलता है कि मैं जो कार्य कर रहा हूँ, उसका आप समर्थन करते हैं। सचमुच मेरी बड़ी अभिलाषा है कि हम दोनोंकी मुलाकात होती और वह भी भारत-स्थित मेरे आश्रममें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

प्रोफेसर आइन्स्टीन

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९५००)से।

१. आइन्स्टीनके २७ सितम्बरके पत्रके उत्तरमें जिसमें लिखा था : "अपने कारनामोंसे आपने बता दिया है कि हम अपने आदर्शोंको बिना हिंसाका सहारा लिए भी हासिल कर सकते हैं। हम हिंसावादके समर्थकोंको भी अहिंसक उपायोंसे जीत सकते हैं। आपकी मिसालसे मानव-समाजको प्रेरणा मिलेगी और अन्तर्राष्ट्रीय सहकार और सहायतासे हिंसापर आधारित झगड़ोंका अंत करने और विश्वशांतिको बनाये रखनेमें सहायता मिलेगी।

"भक्ति और आदरके इस उल्लेखके साथ मैं आशा करता हूँ कि आपसे साक्षात्कार कर सकूँगा।"
— **स्टेट्समैन**, २२-५-१९६५

१३१. भेंट : बर्मिंघमके बिशपसे[1]

सेली ओक
बर्मिंघम
१८ अक्टूबर, १९३१

वैज्ञानिक बिशपने विज्ञान व मशीनोंकी जबरदस्त वकालत की। उन्होंने कहा कि इनके द्वारा मानवको शारीरिक श्रमसे बचाया जाये ताकि उसका सारा या अधिकांश समय बौद्धिक कार्यके लिए बच सके। गांधीजी ने बिशपको याद दिलाया कि मुझे यह विश्वास नहीं है कि औसत आदमी अपने बचे हुए समयका उपयोग लाभकारी कार्योंमें करेगा; क्योंकि एक पुरानी कहावत है, 'बेकारीमें शैतानी सूझती है।' लेकिन बिशपने इसपर आपत्ति करते हुए कहा, "मैं पूरे दिनमें एक घंटेसे अधिक शारीरिक श्रम नहीं करता। अपना बाकी समय मैं बौद्धिक कार्योंमें लगाता हूँ।" गांधीजी ने हँसते हुए कहा :

मैं जानता हूँ, लेकिन यदि सभी बिशप बन जायें तो वे बिशप पायेंगे कि उनका धन्धा तो खत्म हो गया।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ५-११-१९३१

१३२. सन्देश : इंग्लैंडमें रहनेवाले भारतीयोंको[2]

सेली ओक
बर्मिंघम
१८ अक्टूबर, १९३१

ब्रिटिश द्वीपसमूहमें रहनेवाले मुट्ठी-भर भारतीय भारतके सुनामके थातीदार हैं। इसलिए आप सब सावधान रहें।[3]

अपनी प्रतिभाका उपयोग यहाँ पैसा कमानेके लिए करनेके बजाय देश-सेवामें कीजिए। अगर आप चिकित्सक हैं तो भारतमें इतना अधिक रोग है कि उसमें आपका सारा चिकित्सा-सम्बन्धी कौशल खप सकता है। अगर आप वकील हैं तो

१. महादेव देसाईकी 'बर्मिंघम-यात्रा' से उद्धृत। २४-१०-१९३१ के **अमृतबाजार पत्रिका**की रिपोर्टके अनुसार यह भेंट प्रातःकाल हुई थी।

२. महादेव देसाई द्वारा लिखे "बर्मिंघम-यात्रा" के विवरणसे उद्धृत।

३. इस छोटे-से सन्देशके बाद गांधीजी ने लोगों द्वारा पूछे गये प्रश्नोंके उत्तर दिये।

मतभेदों और झगड़ोंकी कमी नहीं है। तकरार बढ़ानेके बजाय आप उन झगड़ोंको शान्त कीजिए और मुकदमेबाजी बन्द करवाइए। अगर आप इंजीनियर हैं तो ऐसे आदर्श घर बनाइए जो हमारे देशभाइयोंकी औकात और आवश्यकताओंके लायक भी हों और साथ ही बहुत स्वास्थ्यप्रद तथा हवादार हों। आपने जो-कुछ सीखा है, उसमें से ऐसी कोई चीज नहीं है, जिसका सदुपयोग वहाँ न किया जा सकता हो। आप वह कीजिए जो कुमारप्पा[1], जो आपकी ही तरह एक 'चार्टर्ड एकाउंटेंट' हैं, कर रहे हैं। कांग्रेस तथा उससे संयुक्त संगठनोंके हिसाब-किताबकी जाँचके लिए लेखा-परीक्षकोंकी सभी जगह बहुत ज्यादा जरूरत है। आप भारत आइए। वहाँ मैं आपको काफी काम दूँगा और पारिश्रमिकमें ४ आने रोज भी। यह राशि भारतमें करोड़ों लोगोंको जितना मिलता है, उससे तो ज्यादा ही है।

पूर्व इसके, कि अंग्रेज लोग यह कहनेके लिए बाध्य हों कि 'हमें खेद है, जो काम हमें बहुत पहले कर लेना चाहिए था वह हमने नहीं किया', भारतको अग्नि-परीक्षा-में से गुजरना पड़ेगा। एक सबल राष्ट्र उतनी आसानीसे तो हार नहीं मान लेगा जितनी आसानीसे उसके हार मान लेनेकी बात हम शायद सोचते हों, और अहिंसा-धर्मको माननेवाले व्यक्तिकी हैसियतसे मैं यह नहीं चाहूँगा कि इंग्लैंडकी इच्छाके खिलाफ उसे कुछ भी देनेपर विवश किया जाये। इंग्लैंड अपनी सत्ता छोड़े, उसके पहले उसे यह प्रतीति हो जानी चाहिए कि यह चीज इंग्लैंड और भारत, दोनोंके हितमें है कि इंग्लैंड भारतको उसकी स्वतन्त्रता दे दे। और भारत अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त कर ले।

प्र० : क्या आप समझते हैं कि इंग्लैंडको इस बातकी प्रतीति करानेके लिए आपको कुछ दिन और यहाँ रहना चाहिए?

नहीं, मैं निश्चित अवधिसे ज्यादा समयतक यहाँ नहीं रह सकता। अगर मैं जितना उचित है, उससे ज्यादा दिन यहाँ रह गया तो मेरा प्रभाव समाप्त हो जायेगा और लोग मेरे प्रति उत्साह दिखाना बन्द कर देंगे। आज जो मेरा प्रभाव है वह स्थायी नहीं, अस्थायी ही है। मेरा स्थान तो भारतमें अपने उन देशभाइयोंके बीचमें है जिन्हें कष्ट-सहनका एक और आन्दोलन छेड़नेको निमन्त्रित करना पड़ सकता है। सच तो यह है कि आज अंग्रेजोंपर जो अनुकूल प्रतिक्रिया होती दिखाई देती है, उसका कारण यही है कि वे जानते हैं कि मैं एक ऐसे राष्ट्रका प्रतिनिधित्व करता हूँ जो कष्ट-सहन कर रहा है। और जब मैं अपने देशभाइयोंके साथ कष्ट-सहन कर रहा होऊँगा तो मैं भारतमें रहकर भी इंग्लैंडवासियोंको उसी तरह अपनी बात सुनाऊँगा जिस तरह हृदय, हृदयतक अपनी बात पहुँचा देता है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ५-११-१९३१

१. जे० सी० कुमारप्पा, अर्थशास्त्री।

१३३. भाषण: बर्मिंघमकी सभामें[1]

सेली ओक
बर्मिंघम
१८ अक्टूबर, १९३१

अन्य स्थानोंपर तो मैं कार्यवश, लोगोंसे अपनी बात कहनेके लिए जाता रहा हूँ, लेकिन यहाँ तीर्थयात्रीके रूपमें आया हूँ — तीर्थयात्रीके रूपमें यों आया हूँ कि यही वह स्थान है जिसने श्री हॉरेस अलेक्जेंडरको अपने यहाँसे छुट्टी देकर ऐसे समय[2] हमारे यहाँ भेजा जब हमें एक मित्रकी आवश्यकता थी। . . . यह वह समय था जब सत्याग्रहका समाचार भारतसे कहीं बाहर नहीं भेजा जा सकता था। जो भी चीज भेजी जाती थी उसे रोककर जाँचा जाता था, उसमें काट-छाँट की जाती थी और देशके प्रमुख लोग जेलोंमें थे। ऐसे ही समय 'मित्रों'[3]ने यह तय किया कि भारतको एक मिशन भेजा जाये और इस कामके लिए श्री अलेक्जेंडरको भेजा गया। न केवल आप सबने, बल्कि उनकी अपंग पत्नीने भी उन्हें छुट्टी दे दी। अब आप समझ गये होंगे कि मेरा यहाँ आना मेरे लिए तीर्थयात्रा क्यों है।

मेरे सामने जो काम है, उसके विषयमें मैंने यही सोचा कि अभी उससे सम्बन्धित बातें बताकर मुझे आपका समय नहीं लेना चाहिए। अधिकांश लोग अब जान गये हैं कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस राष्ट्रकी ओरसे क्या माँगती है। आप यह भी जानते हैं कि अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए हमने कौन-सा उपाय अपनाया है। इस तरहका उपाय इतिहासमें शायद पहली बार अपनाया गया है। आप यह भी जानते हैं कि देशने अपने लिए जो सिद्धान्त निश्चित किया है, उसके अनुसार वह गत वर्ष कहाँतक आचरण कर पाया है। मैं आपको यह समझाना चाहूँगा कि गोलमेज परिषद्में जो काम किया जा रहा है उसे अगर सफल होना है तो वह तभी होगा जब उसपर प्रबुद्ध लोकमतका दबाव पड़ेगा। मैंने अक्सर कहा है कि इंग्लैंडमें मेरा असली काम परिषद्के अन्दर नहीं, बल्कि बाहर ही है। अपने कुछ सार्वजनिक भाषणोंमें मैंने ऐसा संकेत देनेमें भी संकोच नहीं दिखाया है कि परिषद्में कुछ नहीं किया जा रहा है, वह सिर्फ समय बिता रही है और भारतसे आये सदस्यों तथा ब्रिटिश हितोंका प्रतिनिधित्व करनेवाले सदस्योंका बहुमूल्य समय नष्ट कर रही है।

१. गांधीजी की "बर्मिंघम-यात्रा" के महादेव देसाई द्वारा लिखे विवरणसे उद्धृत। यह सभा दिनके तीसरे पहर वुडब्रुक सेटलमेंटमें हुई थी, जिसकी अध्यक्षता हॉरेस अलेक्जेंडरने की थी। १९-१०-१९३१ के **बर्मिंघम पोस्ट**में प्रकाशित विवरणके अनुसार उक्त सभामें महापौर डब्ल्यू० डब्ल्यू० सॉण्डर्स, तथा बर्मिंघमके बिशप भी उपस्थित थे। यह सभा दो घंटे चली थी।

२. सप्रू-जयकर मन्त्रणाकी विफलताके बाद, १९३० में; देखिए खण्ड ४४।

३. क्वेकर सम्प्रदायके सदस्य।

चूँकि परिषद्‌के विषयमें मेरा विचार ऐसा है, इसलिए मैं इस बातके लिए जितना आग्रह करूँ कम होगा कि ब्रिटिश द्वीपसमूहमें लोकमतका दिशादर्शन करनेवाले जिम्मेदार नेताओंको उस संघर्षका सच्चा स्वरूप जान लेना चाहिए जिसे भारतीय बहुत ही कठिनाइयोंको झेलते हुए चला रहे हैं। कारण, जबतक आप इस संघर्षके सच्चे और आन्तरिक अर्थको नहीं समझते तबतक आप उन लोगोंपर कारगर ढंगसे दबाव नहीं डाल सकते जो यहाँ राज-काज चला रहे हैं।

इस सभामें आये श्रोताओंके विषयमें मुझे इतनी जानकारी तो है ही कि मैं कह सकूँ कि आप सभी लोग सच्चे सत्यान्वेषी हैं और जो उचित है, वह करनेको उत्सुक हैं——सो विशेषरूपसे कुछ इसी मामलेके सम्बन्धमें नहीं, बल्कि ऐसे हर उद्देश्यके सम्बन्धमें जो मानव-सहायताके योग्य है। और अगर आप इस प्रश्नको इस दृष्टिकोणसे देखेंगे तो बहुत सम्भव है कि गोलमेज परिषद्‌में चल रही वार्त्ताएँ सफल हो जायें।

गांधीजी के भाषणके अन्तमें उनसे जो प्रश्न पूछे गये उनमें से एक यह था कि क्या भारतीय प्रतिनिधियोंके बीच साम्प्रदायिक प्रश्नपर आपसमें कोई सहमति न हो पानेके कारण ही समझौता असम्भव नहीं हो गया है। गांधीजी ने इस आक्षेपका तीव्र प्रतिवाद करते हुए कहा :

मैं जानता हूँ कि आपको इसी ढंगसे सोचना सिखाया गया है। यह बात बड़ी आकर्षक लगती है और आप इसके व्यामोहसे छुटकारा नहीं पा सकते। मेरा कहना यह है कि विदेशी शासकोंने भारतपर 'फूट डालो और राज्य करो' के सिद्धान्तके बलपर शासन किया है। अगर शासक लोग कभी इस पक्षको और कभी उस पक्षको न फुसलायें-बहकायें तो भारतमें कभी भी किसी विदेशी साम्राज्यका शासन नहीं चल सकता। जबतक विदेशी शासन-रूपी पच्चर कायम है और वह अधिकाधिक गहरा धँसता जा रहा है तबतक हम आपसमें विभक्त ही रहेंगे। पच्चरका काम ही यही है लेकिन आप ज्यों ही पच्चरको निकाल लेंगे, विभक्त हिस्से आपसमें मिलकर तुरन्त एक हो जायेंगे। फिर इस परिषद्‌का जिस तरह गठन हुआ है, उसके कारण एकता प्राप्त कर सकना अत्यन्त कठिन कार्य हो गया है, क्योंकि यहाँ जितने सदस्य आये हैं, सभी मनोनीत हैं और कोई भी विधिवत् निर्वाचित सदस्य नहीं है। उदाहरणके लिए, अगर राष्ट्रवादी मुसलमानोंसे अपना प्रतिनिधि चुननेको कहा गया होता तो डॉ० अन्सारी चुने गये होते। और अन्तमें, हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि जो प्रतिनिधि आज यहाँ हैं, यदि चुनकर भी वही आते तो भी वे ज्यादा जिम्मेदारीकी भावनासे काम करते। इसके विपरीत, हम लोग यहाँ ब्रिटिश प्रधान मन्त्रीकी इच्छासे आये हैं। हम किसीके प्रति जिम्मेदार नहीं हैं; हमारा कोई निर्वाचन-क्षेत्र नहीं है जिसे हमें किसी बातके लिए मनाना पड़े। इसके अलावा हमें यह याद दिलाया जाता है कि जबतक हम साम्प्रदायिक मसलेके सम्बन्धमें आपसमें किसी निर्णयपर नहीं पहुँचते तबतक किसी तरहकी प्रगति सम्भव नहीं है। इसलिए स्थिति ही कुछ ऐसी है कि हर सदस्य परिषद्‌की गाड़ीको एक अलग ही दिशाकी ओर खींचता है और जितना ज्यादा मिल सके उतना ऐंठ लेनेकी फिक्रमें रहता है। फिर प्रतिनिधियोंसे

तो कोई सर्वसम्मत साम्प्रदायिक हल प्रस्तुत करनेकी अपेक्षा की जाती है, लेकिन उन्हें यह नहीं बताया जाता कि उनके बीच सहमति हो जानेपर उन्हें क्या मिलेगा, और इस तरह उस प्रेरणा-स्रोतको प्रारम्भमें ही समाप्त कर दिया गया है जिसके आधारपर सहमति पहले ही हो चुकी होती। निदान, समझौता हो पाना लगभग असम्भव हो गया है। सरकार जरा यह तो कहकर देखे कि भारतीयोंमें आपसमें सहमति हो या न हो, हम तो भारतको छोड़ने ही जा रहे हैं। फिर आप देखिएगा कि भारतीय प्रतिनिधियोंके बीच किस प्रकार तत्काल सहमति हो जाती है। सचाई यह है कि किसीको ऐसा नहीं लगता कि उसे सच्ची और जीवन्त स्वतन्त्रता मिलने जा रही है। जो-कुछ देनेकी तजवीज है वह केवल भारतका शोषण करनेके लिए नौकरशाहीकी सत्तामें साझेदारी है। यह चीज हमारे बीच फूटके बीज बोती है। फिर चूँकि सरकारने संविधान-रचनाके प्रश्नको साम्प्रदायिक समस्याके समाधानपर आश्रित कर दिया है, इसलिए हर पक्षको सहज ही अपनी माँग अधिकसे-अधिक बढ़ाकर पेश करनेका प्रलोभन होता है। अगर सरकार सचमुच कुछ करना चाहती हो तो वह बेहिचक मेरा सुझाव स्वीकार कर लेगी। मेरा वह सुझाव यह है कि साम्प्रदायिक प्रश्नका निर्णय करनेके लिए एक न्यायाधिकरण नियुक्त कर दिया जाये। अगर ऐसा कर दिया जाये तो इस बातकी पूरी सम्भावना है कि न्यायाधिकरणके हस्तक्षेपके बिना ही कोई सर्वसम्मत समाधान निकल आये।

इसके बाद यह सवाल पूछा गया कि अगर ब्रिटिश सरकार वहाँ अपने दायित्वोंका निर्वाह करना बन्द कर दे तो संक्रान्ति-कालमें भारतमें क्या होगा। उत्तरमें गांधीजी ने कहा :

विदेशी शासन किसी सजीव शरीरमें स्थित बाह्य तत्त्वके समानहै। शरीरसे जहरको दूर करते ही शरीर अपनी खोई हुई शक्ति पुनः प्राप्त करने लग जाता है। यह कहना तो बिलकुल असंगत है कि अगर ब्रिटिश सरकार भारतसे हटेगी तो वह अपने दायित्वोंके निर्वाहका त्याग करेगी। आज वह जिस एकमात्र दायित्वका निर्वाह कर रही है वह है भारतका शोषण। ब्रिटेन भारतका शोषण बन्द कर दे तो भारत तुरन्त ही अपनी आर्थिक समृद्धिको प्राप्त कर लेगा।

प्र० : क्या खुद भारतके लोगोंके बीच आधारभूत बातोंके सम्बन्धमें कोई सहमति हो गई है?

कांग्रेसने साम्प्रदायिक समस्याका एक सर्वसम्मत हल पेश किया है, लेकिन इसे स्वीकार नहीं किया जा रहा। यहाँ परिषद्में तो जिन विभिन्न पक्षोंके प्रतिनिधियोंके शामिल होनेकी बात कही जाती है, कांग्रेस उनमें से एक पक्ष-मात्र है। लेकिन मूलभूत तथ्य यही है कि कांग्रेस ही एकमात्र प्रातिनिधिक संस्था है और वह भारतके एक बहुत बड़े जनसमुदायका प्रतिनिधित्व करती है। यही एक सजीव, जीवन्त और स्वतन्त्र संगठन है, जो लगभग पचास वर्षोंसे काम करता रहा है। सरकारके साथ समझौता कांग्रेसने किया था और आप चाहे जो कहें, यही एकमात्र ऐसी संस्था है जो किसी दिन वर्तमान सरकारका स्थान लेगी। मेरा दावा यह है कि इसने अपने मंत्रि-मण्डल

एक सिख, एक मुसलमान और एक हिन्दू सदस्यकी समितिके माध्यमसे जो योजना तैयार की है वह, जहाँतक औचित्य और न्यायका सम्बन्ध है, किसी भी न्यायाधिकरणकी कसौटीपर खरी उतरेगी।

श्रोताओंमें से एक व्यक्तिने पूछा कि क्या गोलमेज परिषद् विफल हो गई है और अब क्या भारतको स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए एक दूसरी परिषद्के गठनतक प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। गांधीजी ने उत्तरमें कहा :

जबतक मैं गोलमेज परिषद्से अपने सारे सम्बन्ध तोड़ नहीं लेता तबतक यही समझना चाहिए कि मैंने पूरी तरह आशा नहीं छोड़ दी है। इसलिए स्पष्ट है कि अब भी मेरे मनमें कुछ आशा है, हालाँकि मुझे कहना चाहिए कि मेरे पास इस आशाका कोई आधार नहीं है। लेकिन यह मेरे स्वभावके विरुद्ध है कि जिस संगठनके साथ मैं सहयोग करता रहा हूँ उससे एकाएक अलग हो जाऊँ। मैं यह नहीं कह सकता कि आगे जब समाधान होगा तो वह किसी दूसरी गोलमेज परिषद्में ही होगा या नहीं, लेकिन इतना जरूर जानता हूँ कि अगर यह परिषद् विफल हो जाती है तो भारत तबतक अपना लक्ष्य प्राप्त नहीं कर पायेगा जबतक कि वह बहुत ही कठिन अग्नि-परीक्षासे — जैसी परीक्षासे वह पिछले साल गुजरा था उससे भी बहुत अधिक कठिन परीक्षासे — नहीं गुजरता।

प्र० : आप कहते हैं कि भारत अंग्रेजोंके शोषणके कारण दरिद्र हुआ है, लेकिन क्या यह सच नहीं है कि किसानोंके कष्टोंका असली कारण बनियोंकी लूट-खसोट और ब्याह-श्राद्धके अवसरोंपर की जानेवाली फिजूलखर्ची है? अन्तमें, आप ब्रिटिश सरकारपर फिजूलखर्चीका आरोप लगाते हैं। लेकिन देशी राजाओंकी फिजूलखर्चीके बारेमें आप क्या कहेंगे?

उ० : यद्यपि भारतीय बनिये अंग्रेज बनियोंके पासंगके बराबर भी नहीं हैं, किन्तु अगर हमारा तरीका हिंसात्मक होता तो भारतीय बनिये गोलीसे उड़ा दिये जानेके पात्र माने जाते। लेकिन, अंग्रेज बनिये तो इस व्यवहारके सौ गुना अधिक पात्र हैं। भारतीय मुद्राके साथ वे किस तरह खिलवाड़ करते रहते हैं। लगान वसूल करनेमें कैसी हृदय-हीनतासे काम लेते हैं! इस तरह उन्होंने वहाँ जो लूट मचा रखी है उसकी तुलनामें भारतीय बनियों द्वारा लिये जानेवाले सूदकी दर तो कुछ भी नहीं है। मुझे तो इतिहासमें इतनी असंगठित और विनम्र जातिके इतने संगठित शोषणका कोई दूसरा उदाहरण ही दिखाई नहीं देता। और जहाँतक देशी राजाओंकी फिजूलखर्चीका सम्बन्ध है, अगर मेरे हाथमें सत्ता हो तो उन्हें गरीबोंका उपहास करनेवाले उनके राजप्रासादोंसे निकाल बाहर करनेमें जहाँ मुझे कोई संकोच नहीं होगा, वहाँ ब्रिटिश सरकारको नई दिल्लीसे निकाल बाहर करनेमें मुझे और भी कम हिचक होगी। जब जनसाधारण भूखों मर रहा था, उस समय भारतमें इंग्लैंडकी नकल खड़ी करनेकी वाइसरायकी सनकको तुष्ट करनेके लिए नई दिल्लीपर जो हृदयहीन ढंगसे करोड़ों रुपये पानीकी तरह बहाये गये, उसकी तुलनामें देशी राजाओंकी फिजूलखर्ची कुछ भी नहीं है।

इसके बाद एक भाईने एक बहुत ही मजेदार सवाल पूछा। उसने 'मैंचेस्टर गार्डियन' के एक पत्रका उल्लेख किया, जिसमें पत्र-लेखकने गांधीजी के अस्पृश्योंका प्रवक्ता होनेके अधिकारको चुनौती दी थी, क्योंकि उसके अनुसार गांधीजी तो खुद ही उस पुरोहित वर्गके हैं जिसने आजतक अस्पृश्योंको दलित अवस्थामें रखा है। यह बतानेके बाद उसने पूछा कि क्या गांधीजी खुद ही समझौतेके मार्गमें एक बहुत बड़ी बाधा नहीं हैं।

मुझे नहीं मालूम था कि मैं ब्राह्मण हूँ। अलबत्ता मैं बनिया जरूर हूँ, और निस्सन्देह इस शब्दके साथ एक कष्टप्रद तिरस्कारकी भावना जुड़ी हुई है। लेकिन मैं श्रोताओंको बता दूँ कि आजसे ४० वर्ष पूर्व जब मैं इंग्लैंड आया, मेरी जाति-वालोंने मुझे जाति-बहिष्कृत कर दिया और मैं जो काम कर रहा हूँ वह मुझे किसान, जुलाहा और अस्पृश्य कहलानेका पात्र बनाता है। जब मेरा विवाह नहीं हुआ था, उससे भी बहुत पहले मैंने अस्पृश्यता-निवारणका काम अपना लिया था। अपने दाम्पत्य जीवनमें दो बार मैं इस दुविधामें पड़ा कि अस्पृश्योंके लिए काम करूँ या पत्नीके साथ रहूँ। अगर कोई रास्ता न निकलता तो मैं पत्नीके साथ रहनेके बजाय अस्पृश्योंके लिए काम करना जारी रखना ज्यादा पसन्द करता। लेकिन मैं अपनी पत्नीका कृतज्ञ हूँ कि यह संकट दूर हो गया। मेरा परिवार मेरा आश्रम है और उसमें कई अस्पृश्य रहते हैं, जिनमें वह प्यारी लेकिन नटखट लड़की भी शामिल है जो वहाँ मेरी बेटीकी तरह रह रही है। जहाँतक समझौतेके मार्गमें मेरे बाधक होनेका सम्बन्ध है, मुझे स्वीकार करना पड़ेगा कि मैं बाधक हूँ—और इसका सीधा-सादा कारण यह है कि भारतकी सच्ची और पूर्ण स्वतन्त्रतासे कम कोई भी बात मुझे सन्तुष्ट नहीं कर पायेगी।

प्र० : आपने संगठित विरोधके जिस विशिष्ट तरीकेकी खोज की है, उससे बुद्धिके धरातलपर समझाने-बुझानेके तरीकेका मेल बैठा पाना कभी-कभी हमको बहुत मुश्किल लगता है। क्या कारण है कि कभी-कभी आपको ऐसा लगता है कि समझाने-बुझानेके तरीकेसे काम लेनेके बजाय ज्यादा कड़ी कार्यवाही की जानी चाहिए?

उ० : १९०६ तक तो मैं केवल समझाने-बुझानेके तरीकेपर ही निर्भर रहा। मैं बड़ा लगनशील सुधारक था। सत्यका निष्ठावान उपासक होनेके कारण तथ्योंको मैं बहुत ठीक ग्रहण करता था और इसलिए मैं एक अच्छा मजमूननवीस भी था। लेकिन जब दक्षिण आफ्रिकामें संकटकी घड़ी आई तब मैंने पाया कि समझाने-बुझानेके तरीकेका तो कोई असर ही नहीं हो रहा है। मेरे देशभाई बहुत उत्तेजित थे—कभी-कभी तो गायको भी यदि ज्यादा छेड़ा जाये तो वह सींग दिखायेगी और वास्तवमें दिखाती भी है—और प्रतिशोधकी चर्चा गरम थी। तब मेरे सामने दो ही रास्ते थे—या तो हिंसात्मक तत्त्वोंसे गठबन्धन कर लूँ या फिर इस संकटका मुकाबला करने और परिस्थितिको बिगड़नेसे रोकनेका कोई और उपाय निकालूँ। तभी मेरे मनमें यह विचार आया कि हमें ऐसे कानूनको माननेसे इनकार कर देना चाहिए जो

अपमानजनक हो और इसपर अगर सरकार हमें जेल भेजना चाहे तो खुशी-खुशी जेल चले जाना चाहिए। इस प्रकार सशस्त्र युद्धकी बराबरीके एक नैतिक उपायका जन्म हुआ। उन दिनों मैं राजभक्त था, क्योंकि मेरा यह दृढ़ विश्वास था कि ब्रिटिश साम्राज्यकी प्रवृत्तियोंका कुल परिणाम भारत और सम्पूर्ण 'मानवजाति' के लिए लाभदायक है। युद्ध प्रारम्भ होनेके शीघ्र बाद इंग्लैंड पहुँचकर मैं युद्ध-प्रयत्नोंमें कूद पड़ा, और बादमें जब मुझे प्लूरिसी हो जानेके कारण भारत जानेको विवश होना पड़ा तो जानको जोखिममें डालकर मैंने रंगरूटोंकी भरतीके अभियानका नेतृत्व किया, जिसे देखकर मेरे कुछ मित्र काँप उठे। मेरा भ्रम १९१९ में टूटा, जब कि रौलट अधिनियम नामक काला कानून पास हुआ और जब सरकारने प्रमाणित अन्यायोंके[१] मार्जनके लिए हमारी बहुत ही साधारण-सी माँगोंको भी ठुकरा दिया। और इस तरह १९२० में मैं बागी बन गया। तबसे मेरी यह प्रतीति बढ़ती ही गई है। जनता-के लिए जो चीजें आधारभूत महत्त्वकी हैं वे केवल बुद्धिपूर्वक समझाने-बुझानेसे ही नहीं मिल जातीं, बल्कि उसकी कीमत कष्ट-सहनके रूपमें चुकानी पड़ती है। कष्ट-सहन मनुष्यका धर्म है, युद्ध पशु-जगत्का। लेकिन विरोधीका हृदय-परिवर्तन करने और उसके कानोंको, जो अन्यथा बन्द हैं, बुद्धिकी भाषा सुननेको तैयार करनेकी दृष्टिसे कष्ट-सहनका तरीका पशु-जगत्के नियमसे लाख गुना अधिक सक्षम है। मुझसे ज्यादा प्रार्थना-पत्र शायद किसीने नहीं लिखे होंगे, और जिनके बारेमें सभी ओर निराशा-ही-निराशा दिखाई देती थी, ऐसे जितने उद्देश्योंकी पैरवी मैंने की है उतनेकी पैरवी भी शायद ही किसीने की हो। लेकिन आखिरकार मैं इस आधारभूत निष्कर्ष-पर पहुँचा हूँ कि अगर हम सचमुच कोई महत्त्वपूर्ण बात मनवाना चाहते हैं तो हमें लोगोंको समझा-बुझाकर ही सन्तुष्ट नहीं हो जाना चाहिए, बल्कि उनके हृदयको प्रभावित करना चाहिए। बुद्धिके धरातलपर कही गई बातका असर मस्तिष्कपर ज्यादा होता है, लेकिन किसीके हृदयको तो कष्ट-सहनके द्वारा ही प्रभावित किया जा सकता है। कष्ट-सहन मनुष्यके अन्तःचक्षुको खोलता है। मानवजातिका शृंगार तलवार नहीं, कष्ट-सहन है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ५-११-१९३१

१. पंजाब और खिलाफत सम्बन्धी अन्याय; देखिए खण्ड १६।

१३४. प्रश्नोत्तर[1]

[१८ अक्टूबर, १९३१ के पश्चात्][2]

प्र० : क्या आप नहीं समझते कि जब अंग्रेज भारतसे हट जायेंगे, तो वहाँ विभिन्न जातियोंमें आपसमें भयंकर रूपसे लड़ाई होनेकी आशंका है?

उ० : मैंने ब्रिटिश शासनकी उपमा पच्चरसे दी है; यह पच्चर अलग हुआ नहीं कि आज जो हिस्से अलग-अलग हैं, वे आपसमें मिल जायेंगे। किन्तु यदि हम लड़ते ही रहें, तो मैं इसे भी ईश्वरका भेजा वरदान समझूँगा। जो व्यक्ति हमेशा बुराई-ही-बुराईका खयाल करता रहता है, वह यदि अधिक नहीं तो उतना बुरा तो अवश्य है जितना कि बुराई करनेवाला व्यक्ति और इसलिए यदि हम एक-दूसरेका गला काटनेसे केवल ऊपरसे थोपी गई विदेशी सत्ताके कारण ही रुके हुए हैं, तो जितनी जल्दी वह सत्ता समाप्त हो जाये, उतना ही अच्छा है। कुछ समयके लिए हमें भले ही अधिक लड़ना पड़े, किन्तु अन्तमें हम अच्छी तरह मिल जायेंगे।

प्र० : क्या आपको इस बातका पूरा विश्वास है कि यदि परिषद्में चुने हुए प्रतिनिधि होते तो आप सब तुरन्त एक हो जाते?

उ० : हाँ, मुझे तो पूरा विश्वास है। उस हालतमें हम बहुमतके निर्णयका पालन करते। मौजूदा स्थितिमें लोगोंका उतना दोष नहीं है, जितना उत्तरदायित्वके उस अभावका, जिसमें कि हम काम कर रहे हैं। यही लोग यदि चुने हुए होते तो दूसरी ही तरह काम करते।

प्र० : क्या आप बजटको सन्तुलित करनेके लिए नमकपर टैक्स लगाया जाना पसन्द नहीं करेंगे?[3] क्या आप संघको कुछ वस्तुओंपर, जिनमें नमक भी शामिल है, कर लगानेकी असीम सत्ता देनेकी बात स्वीकार न करेंगे?[4]

उ० : नहीं, संघको नमकपर कर लगानेका अधिकार नहीं होना चाहिए। जबतक मैं गरीबोंपर कर लगानेका पाप न करना चाहूँ, मैं नमकपर कर लगाकर बजटको सन्तुलित करनेकी कल्पना नहीं कर सकता। यदि आप बजटको सन्तुलित करना चाहते हैं तो सैनिक व्ययको कम क्यों नहीं करते? पहलेसे ही अत्यधिक करके बोझसे दबे

१. यह महादेव देसाईके "मूलभूत बातें" शीर्षक लेखसे लिया गया है। महादेव देसाईका कहना है कि इस लेखमें उन्होंने लन्दनमें अथवा अन्यत्र इस या उस सभामें गांधीजी ने जो-कुछ कहा, वह सब गांधीजी के ही शब्दोंमें प्रश्नोत्तरके रूपमें प्रस्तुत कर दिया है।

२. महादेव देसाई कहते हैं कि इसे १८ अक्टूबर, १९३१ को बर्मिंघमकी सभामें गांधीजी की कही बातोंके साथ जोड़कर पढ़ना चाहिए।

३. यह प्रश्न बर्मिंघमकी सभामें पूछा गया था।

४. यह प्रश्न लॉर्ड सैंकीने पूछा था।

हुए गरीब भारतीय करदाताओंपर और कर लगाना मानवताके विरुद्ध अपराध करना होगा। नमकपर कर लगाना तो कुछ एसा ही होगा जैसे आप हवा और पानीपर कर लगाकर भारतसे जिन्दा रहनेकी अपेक्षा करें।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ५-११-१९३१

१३५. पत्र : भोपालके नवाबको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, पश्चिमी
१९ अक्टूबर, १९३१

प्रिय नवाब साहब,

आज रात क्लैरिज होटलमें जो बैठक होनेवाली है, उसमें निम्नलिखित प्रस्तावोंपर विचार करनेका मेरा सुझाव है।

राजस्वके केवल कुछ मुद्दोंपर, जैसे:

क. सीमा-शुल्क — इस विषयमें देशी राज्योंके मौजूदा अधिकारोंको अबाधित रखते हुए।

ख. नमक — इसी तरह।

ग. निर्यात की जानेवाली अफीम।

घ. सीमा-शुल्कके अतिरिक्त वस्तुओंपर लगाया जानेवाला (मौजूदा) आबकारी-शुल्क।

ङ. संघके व्यावसायिक विभागों – जैसे रेलवे, डाक और तार – से होनेवाली आय।

च. संघकी मुद्रासे होनेवाला लाभ।

छ. प्रान्तोंसे सीधे प्राप्त होनेवाले मौजूदा राजस्व, जैसे आय-कर और इसी तरह देशी राज्योंके, उन्होंने ब्रिटिश सरकारको अपने जो इलाके दे दिये हैं, माध्यमसे तथा अन्य प्रकारसे प्राप्त राजस्वको [संघकी ओरसे प्रान्तों या देशी राज्योंपर किये जानेवाले] संघकी आयके सामान्य साधनोंके रूपमें लिया जाये और खर्चकी पूर्त्ति इन मदोंके अन्तर्गत इस आयकी सीमातक ही की जाये। इस प्रणालीके अन्तर्गत देशी राज्योंको अपनी असली आयसे अधिक दायित्व लेनेका खतरा नहीं रह जायेगा।

अगर राजस्वके अन्य साधन ढूँढ़ना आवश्यक जान पड़े तो उसको ध्यानमें रखकर संविधानमें यह व्यवस्था की जा सकती है कि जबतक संघीय संसदमें देशी राज्योंके दो-तिहाई या इससे भी अधिक प्रतिनिधि सहमत नहीं होंगे तबतक ऐसा कोई राजस्व संघीय राजस्व नहीं माना जायेगा।

महाविभव नवाब साहब भोपाल
देशी नरेश-मण्डलके चांसलर

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८१४२) से।

१३६. संघ-संरचना समितिकी बैठककी कार्यवाहीके कुछ अंश[1]

लन्दन
२० अक्टूबर, १९३१

श्री गांधी: अगर ऐसा कहा जानेको है कि इनके सम्बन्धमें निर्णय हो चुका है तो मेरा खयाल है कि इसपर मुझे दो शब्द कहने चाहिए।

अध्यक्ष: तो क्या आप समझते हैं कि इसकी कुछ मर्यादा होनी चाहिए?

श्री गांधी: इतना ही नहीं, बल्कि व्यक्तिशः मैं तो नमकपर कोई भी कर लगानेका विरोध करूँगा। इस विषयमें केवल मर्यादा लगानेसे ही काम नहीं चलेगा। इसके अतिरिक्त, मैं नहीं समझता कि पूरी तरह सोचे-विचारे बिना मेरे लिए यह कहना मुनासिब होगा कि सीमा-शुल्कोंके सम्बन्धमें कोई मर्यादा होनी ही नहीं चाहिए। ऐसी बहुत-सी चीजें हैं जिनके बारेमें मैं कहूँगा कि 'नहीं, मैं इससे आगे नहीं जाऊँगा।' यही बात अफीमपर भी लागू होती है।

अध्यक्ष: अफीमके विषयमें आपका क्या कहना है?

श्री गांधी: अफीमपर कर लगानेके सम्बन्धमें तो मैं किसी भी तरहकी मर्यादा नहीं चाहूँगा।

अध्यक्ष: यह बहुत अच्छी बात है। कमसे-कम अफीमके सम्बन्धमें तो हम सबमें सहमति है। लेकिन श्री गांधी, सीमा-शुल्कोंके बारेमें आपका क्या कहना है? क्या इस सम्बन्धमें आप कुछ मर्यादा रखना चाहेंगे?

श्री गांधी: मैं तो समझता हूँ कि रखनी चाहिए।

अध्यक्ष: तो आप किस तरहकी मर्यादा रखना चाहेंगे?

श्री गांधी: मैं सीमा-शुल्क-मात्रके बारेमें ऐसी कोई मर्यादा नहीं लगाना चाहूँगा। अलग-अलग वस्तुओंके बारेमें मैं अलग-अलग निर्णय करना चाहूँगा और मैं किसी भी विशेषज्ञको यह कहनेका अधिकार नहीं दूँगा कि मुझे क्या करना चाहिए और क्या नहीं, क्योंकि यहाँ तो हम किसी नीतिके अनुसार ही चलेंगे।

अध्यक्ष: इसका मतलब तो यही हुआ कि संघकी सत्तापर कोई अंकुश नहीं लगाना चाहिए और इस तरह आप सीमा-शुल्कके सम्बन्धमें तो हमसे सहमत हैं। अफीमके सम्बन्धमें तो हम सब सहमत हैं ही और इस अर्थमें सीमा-शुल्कोंके सम्बन्धमें

१. अध्यक्षने समितिके विचारार्थ यह सवाल सामने रखा कि बजटको सन्तुलित करनेके लिए संघको कुछ कर लगानेका अधिकार होना चाहिए या नहीं। सदस्यगण आम तौरपर संघको यह अधिकार देनेके पक्षमें थे। सर अकबर हैदरीने कहा कि यह तो पहले ही स्वीकार किया जा चुका है कि सीमा-शुल्क, नमक-कर और अफीम-करपर संघका अधिकार हो। इसके बाद एक प्रश्न यह था कि ये कर लगानेके सम्बन्धमें क्या कोई मर्यादा होनी चाहिए। कई वक्ताओंने कहा कि कोई मर्यादा नहीं होनी चाहिए। इसपर अध्यक्षने पूछा कि क्या अब यह मान लिया जाये कि इसपर निर्णय हो चुका।

भी क्योंकि आप कहते हैं, "मैं किसी भी विशेषज्ञको यह अधिकार नहीं दूँगा कि वह कहे मुझे क्या करना चाहिए और क्या नहीं।" संघ-सरकार भी यह नहीं चाहेगी। अब हम नमकके सम्बन्धमें विचार करें। मैं जानता हूँ कि यह सवाल कुछ कठिन है। लेकिन हम इस विषयकी गहराईमें उतरना चाहते हैं। नमक-करके सम्बन्धमें, आपके विचारसे, संघ-सरकारकी क्या स्थिति होनी चाहिए? क्या आप समझते हैं कि इसपर संघको कोई कर लगाना ही नहीं चाहिए?

श्री गांधी: केवल इतना ही नहीं कि इसपर कोई कर न लगाया जाये, बल्कि मैं तो चाहूँगा कि आज नमकपर जो कर लगा हुआ है उसे भी उठा लिया जाये।

लॉर्ड पील: श्री गांधी अपना निजी मत व्यक्त कर रहे हैं; लेकिन क्या उनका यह कहना है कि संविधिमें ही ऐसी व्यवस्था की जानी चाहिए कि संघ-सरकारको नमकपर कोई कर लगानेका अधिकार न हो?

श्री गांधी: हाँ, मेरा यही कहना है।

अध्यक्ष: ठीक है, हम इस बातका खयाल रखेंगे कि श्री गांधीको नमकपर कर लगानेमें आपत्ति है।

लॉर्ड पील: नहीं, बात इतनी ही नहीं है; वे जो-कुछ कह रहे हैं, वह व्यक्तिगत आपत्तिसे कुछ अधिक है। उनका विचार है कि नमकको संघकी आयके साधनोंमें शामिल ही न किया जाये।

अध्यक्ष : अच्छा, तो वे मानते हैं कि नमकको संघीय आयके साधनोंमें शामिल न किया जाये। लेकिन श्री गांधी, इस सम्बन्धमें क्या आप हमारी सहायता कीजिएगा? सबसे पहली बात तो यह है कि क्या कोई मुझे यह बता सकता है कि नमकपर अभी जो कर लगा हुआ है, उससे कितनी आमदनी होती है?

श्री गांधी: छः करोड़।

सर अकबर हैदरी: ६.७ करोड़, जिसमें से १.२३ करोड़ घटा दिया जाये।

श्री गांधी: हाँ, अगर कोई छः और ७ करोड़के बीच बताये तो मैं माननेको तैयार हूँ।

अध्यक्ष: ठीक है। तो हम ७ करोड़ कहेंगे।

सर अकबर हैदरी: भारत सरकारके आँकड़ोंके अनुसार तो वह लगभग ५.५० करोड़ होगा।

अध्यक्ष: श्री गांधी, अब आप इस तरह हमारी सहायता कर सकते हैं: मान लीजिए हम कहें, 'श्री गांधीका कहना ठीक है और यह कर नहीं लगाना चाहिए।' अब मैं आपसे यह पूछना चाहूँगा कि यह पचास लाख — अगर नमक-करसे होनेवाली आयको हम इतना ही मानें तो — कहाँसे आयेगा। क्या आप इस बातमें हमारी सहायता कर सकेंगे? आप इसके बारेमें क्या कहेंगे?

श्री गांधी: मेरा उत्तर यह है कि सैनिक खर्चमें ६ करोड़की कटौती की जाये।

अध्यक्ष : तो आप इस सम्बन्धमें खर्चमें कटौती करनेका तरीका अपनाना चाहते हैं।

श्री गांधी : हाँ, ऐसा ही है।

अध्यक्ष : सर अकबर, अब आप यह बताइए कि आपके विचारसे संघकी आयके साधनोंमें और कौन-से कर शामिल किये जाने चाहिए।

सर अकबर हैदरी : दो-तीन साधन हैं, जिनका संकेत उप-समितिकी रिपोर्टमें किया गया है; फिर एक-दो साधनोंका उल्लेख भोपालके नवाब साहबने अपने भाषणमें भी किया था। लेकिन इनके सम्बन्धमें अपना मत मैं तभी व्यक्त करूँगा जब अन्तिमरूपसे जाँचे गये आँकड़े मेरे सामने आ जायें। यहाँ मैं 'विशेषज्ञ' शब्दका प्रयोग नहीं करूँगा, क्योंकि कुछ लोगोंको यह शब्द एक तरहसे अरुचिकर-सा जान पड़ता है और ऐसा लगता है कि इससे एक उलझन पैदा हो जाती है — यह उलझन कि ये विशेषज्ञ इस मामलेका निबटारा करनेवाले पंच होंगे, अथवा समस्याको कैसे हल किया जाये, इसकी जाँच-पड़ताल करनेवाले लोग होंगे या इन्हें जो-कुछ तय किया जायेगा, उसकी सम्पुष्टि करनेका अधिकार होगा। इसीलिए मैंने कहा कि पहले मुझे आवश्यक आँकड़े प्राप्त हो जाने चाहिए, जिससे मैं यह जान सकूँ कि बजटको सन्तुलित करनेके लिए साधारणतया कितनी राशिकी जरूरत है या होगी और उक्त साधनोंसे कितनी आय होनेकी सम्भावना है। . . .

श्री गांधी : लॉर्ड पील, क्या आप कोई ठोस फार्मूला सोच निकालनेकी कृपा करेंगे? अगर आप कोई फार्मूला नहीं तय करते तो फिर शायद कोई और भी तय नहीं कर सकेगा और तब हम किसी तरह आगे नहीं बढ़ पायेंगे। लेकिन अगर आप हमारे विचारार्थ कोई ठोस फार्मूला प्रस्तुत करके हमारा मार्गदर्शन करें तो मैं आपके सुझावका स्वागत करूँगा।

लॉर्ड पील : मेरा खयाल है, मैं तो यही कह सकता हूँ कि सरकार अध्यक्ष अथवा अपने किसी अन्य सदस्यके माध्यमसे समितिके विचारार्थ कोई सुझाव सामने रखनेमें कोई हर्ज नहीं मानेगी।

श्री जिन्ना : जैसा मैं समझता हूँ, आपका प्रस्ताव केवल विचारार्थ विषयोंके निर्धारणसे ही सम्बद्ध है।

लॉर्ड पील : नहीं, मैं इसे केवल विचारार्थ विषयोंतक ही सीमित नहीं रखना चाहता। अपने प्रस्तावमें मैं यह सुझाना चाहता हूँ कि इस समितिकी वास्तविक कार्यविधि क्या हो और उसका कार्यक्षेत्र क्या हो। इसे मैं अधिक व्यापक भाषामें रख रहा हूँ। इसे मैं बहुत मर्यादित नहीं करना चाहता।

श्री जिन्ना : मतलब यह कि इसे समितिके विचारार्थ सौंपना ही है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबल कांफरेंस (सेकेंड सेशन) : प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐंड माइनॉरिटीज कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ २२४-८।

१३७. भाषण : चैथम हाउसकी सभामें[1]

लन्दन

२० अक्टूबर, १९३१

आपने यह कहनेका सौजन्य दिखाया है कि बहुत व्यस्त रहनेके बावजूद इस संस्थाके तत्त्वावधानमें आयोजित सभामें बोलनेके लिए मैंने कुछ समय निकाल लिया है। मुझे स्वीकार करना होगा कि मुझसे जहाँतक बन पड़ता है, ब्रिटेनकी जनता-के सम्पर्कमें आनेके हर अवसरका मैं लाभ उठाता हूँ और अपने यहाँ आनेका उद्देश्य उसके सामने रखता हूँ। इसलिए मैं आपके पास सर्वथा स्वार्थवश ही आया हूँ, और मैं आशा करता हूँ कि आजकी इस शाममें मैं आपसे जो-कुछ कहूँगा उसे आप अपने हृदयमें स्थान देंगे। मुझे जो-कुछ कहना है उसे कह चुकनेके बाद मैं यह चाहूँगा कि आप मुझसे जिरह करें, जो भी प्रश्न पूछना चाहें, पूछें। मैंने अनुभवसे यह जाना है कि गलतफहमीके कुहासेको दूर करनेका यही एकमात्र उपाय है। मैंने देखा है कि मेरे रास्तेमें सबसे बड़ी बाधा यह है कि आप लोग असली तथ्योंसे बिलकुल अनभिज्ञ हैं। वैसे, इसमें आपका कोई दोष नहीं है। कारण आप दुनियाके एक सबसे व्यस्त राष्ट्रके सदस्य हैं, आपकी अपनी अलग समस्याएँ हैं और इस समय तो आपका यह महान् द्वीप-समूह ऐसे संकटमें से होकर गुजर रहा है, जैसा संकट इसे आपके जीवन-कालमें कभी नहीं झेलना पड़ा। आपकी इन कठिनाइयोंमें आपके साथ मेरी पूरी सहानुभूति है और मैं आशा करता हूँ कि अपनी अद्‌भुत शक्तिके बलपर आप शीघ्र ही इन कठिनाइयोंमें से कोई-न-कोई रास्ता निकाल लेंगे। फिर भी, इसमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं है कि अपनी समस्याओंमें व्यस्त रहनेके कारण आपको भारत-जैसे सुदूरवर्त्ती देशको प्रभावित करनेवाली समस्याओंके अध्ययनके लिए समय नहीं मिल पाता। इसलिए मुझे यह देखकर बड़ा हर्ष हो रहा है कि आपमें से इतने-सारे लोग समय निकालकर, मैं जो-कुछ भी कह सकता हूँ, उसे सुननेके लिए यहाँ आये हैं। और इस बातके लिए सचमुच मुझे दु:ख है कि आपमें से बहुतोंको, जो मेरी आवाज सुन रहे हैं, इस कमरेमें बैठनेका स्थान नहीं मिल पाया है। इन कुछ-एक प्रारम्भिक बातोंके बाद अब मैं असली विषयपर आता हूँ।

भारतके भविष्यकी मेरी जो कल्पना है उसका चित्र प्रस्तुत करनेके लिए मैं यथासम्भव कमसे-कम शब्दोंमें आपको बताऊँगा कि आज भारत क्या है। भारत अपने-आपमें एक उपमहाद्वीप है, जो उन्नीस सौ मील लम्बा और पन्द्रह सौ मील चौड़ा है और वहाँकी आबादी लगभग ३५ करोड़ है। इनमें से कोई २१ करोड़ हिन्दू

१. रॉयल इंस्टिट्यूट ऑफ इंटरनेशनल अफेयर्सके तत्त्वावधानमें आयोजित इस सभामें प्रतिष्ठित, प्रभाव-शाली अंग्रेज स्त्री और पुरुष उपस्थित थे। अध्यक्षता लॉर्ड लोदियनने की थी।

हैं, ७ करोड़ मुसलमान, और ३० लाख सिख हैं। इनके अलावा भारतीय ईसाई भी अच्छी खासी तादादमें हैं और कुछ थोड़े-से यूरोपीय, बल्कि ज्यादा ठीक कहूँ तो अंग्रेज लोग भी हैं। संख्याकी दृष्टिसे ये लोग नगण्य हैं, लेकिन जैसा कि आप जानते हैं, इन्हें वहाँ एक विशेष दर्जा प्राप्त है और इनसे अधिक प्रभावशाली वर्ग तो कोई है ही नहीं। इसका कारण यह है कि ये लोग शासक-जातिके हैं।

इस आबादीके अन्दर हमारी एक समस्या है — हिन्दू-मुस्लिम-सिख समस्या, या इसके लिए जिस शब्दका प्रयोग किया जाता है उसका प्रयोग करूँ तो कहूँगा अल्पसंख्यकोंकी समस्या। यह समस्या दूसरे अल्पसंख्यक समुदायोंको किस तरह प्रभावित करती है, इसके ब्योरेमें मैं नहीं जाऊँगा, और न इन अल्पसंख्यक समुदायोंके सम्बन्धमें अपने विचार स्पष्ट करनेमें ही आपका समय लूँगा। लेकिन एक अल्पसंख्यक समुदाय, अभागे अस्पृश्योंकी चर्चा किये बिना मैं नहीं रह सकता। अस्पृश्य शब्द भारतके बहुसंख्यक हिन्दू समाजके लिए स्थायी कलंकका द्योतक है। अस्पृश्यता हिन्दू धर्मके लिए अभिशाप-रूप है, और मुझे यह कहनेमें तनिक भी हिचक नहीं होती कि अगर हिन्दू धर्मसे अस्पृश्यताका उन्मूलन नहीं किया गया तो यह धर्म एक दिन अवश्य ही नाशको प्राप्त होगा। वह समय आ गया है जब हर प्रणालीको, चाहे वह जितनी प्रतिष्ठित और प्राचीन हो, तर्क और बुद्धिके प्रकाशको सहन कर सकना चाहिए, तीव्रसे-तीव्र आलोचनाकी कसौटीपर खरा उतरना चाहिए। और अगर हिन्दू धर्म अस्पृश्यताको प्रश्रय देता है तो धरित्रीपर इसके लिए कहीं कोई स्थान नहीं है।

आपको यह बताते हुए मुझे हर्षका अनुभव हो रहा है कि अस्पृश्यता-निवारणको कांग्रेसने अपने कार्यक्रमका एक अभिन्न अंग बनाया है और कांग्रेसकी प्रेरणासे सैकड़ों, बल्कि शायद हजारों युवा हिन्दू सुधारकोंने हिन्दू धर्म और हिन्दुस्तानको इस कलंकसे मुक्त करनेके लिए अपने जीवन अर्पित कर दिये हैं। ये युवा स्त्री-पुरुष अस्पृश्योंकी तरह-तरहसे सहायता कर रहे हैं। हम उनके लिए कुएँ खोद रहे हैं, स्कूल खोल रहे हैं, नये मन्दिर बनवा रहे हैं और पुराने मन्दिरोंमें उन्हें प्रवेशका अधिकार दिला रहे हैं। हम अधिक नहीं तो कमसे-कम पच्चीस हजार अस्पृश्य महिलाओंको घर बैठे ही काम दे रहे हैं। हमने उनके बीच चरखा चालू करवाया है। कई हजार अस्पृश्योंको हमने फिरसे उनके पुराने धन्धे, मोटे कपड़ोंकी बुनाईके धन्धेमें प्रतिष्ठित किया है। आधुनिक मिलोंके बने कपड़ोंकी प्रतियोगिताके कारण उनका यह धन्धा बन्द हो गया था। परिणाम यह हुआ था कि उन्होंने या तो भंगीका काम अपना लिया था या कोई और काम, क्योंकि वे बुनाईके अपने नेक पैतृक धन्धेसे अपनी जीविका कमानेमें असमर्थ हो गये थे। ईश्वरकी कृपासे और इन युवा सुधारकोंके प्रयत्नोंसे कई हजार अस्पृश्योंने मोटे कपड़ोंकी बुनाईके अपने पुराने धन्धेको फिरसे प्राप्त कर लिया है। बहुत-से ऐसे परिवार हैं जो पहले कर्जके बोझसे दबे हुए थे, किन्तु जिन्होंने आज न केवल उस बोझसे छुटकारा पा लिया है, बल्कि अपने पास काफी पैसा भी जमा कर लिया है। मुझे स्मरण है कि एक परिवारने तो इतनी राशि जमा कर ली है जो भारतके गरीब परिवारके लिहाजसे काफी अच्छी

राशि है। उसने दो हजार रुपये जोड़े हैं। शिक्षकोंके रूपमें इस परिवारकी माँग सारे देशमें हो रही है, क्योंकि पति-पत्नी दोनों निष्णात बुनकर और ईमानदार तथा कुशल कार्यकर्त्ता हैं। जहाँ पहले उनकी माँग भंगियोंकी तरह होती और उनके साथ लगभग ऐसा व्यवहार किया जाता मानों वे किसी महामारीके वाहक हों, वहाँ आज सर्वत्र शिक्षकोंके रूपमें उनकी माँग की जा रही है। आप सोच सकते हैं कि इससे उनमें आत्मसम्मानकी भावनाकी कितनी वृद्धि हुई होगी।

यह बहुत ही महत्त्वपूर्ण अल्पसंख्यक समुदाय है — महत्त्वपूर्ण इस अर्थमें कि इसे जितनी सहानुभूति और सहायता दी जाये, यह उस सबका पात्र है। मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि अस्पृश्यता तेजीसे मिटती जा रही है, और अगर ईश्वरकी कृपासे गोलमेज परिषद्में चल रही वार्त्ताओंके परिणामस्वरूप अथवा और किसी तरह भारत अपना प्राप्य प्राप्त कर लेता है तो आप देखेंगे कि हमारे देशसे अस्पृश्यता सदाके लिए चली गई है।

लेकिन भारत जैसा है, उसका वर्णन मैं अभी पूरा नहीं कर पाया हूँ। ये ३५ करोड़ लोग कर क्या रहे हैं? इनमें से ८५ प्रतिशतसे भी अधिक लोग कृषि-कार्यमें लगे हुए हैं और मैंने जिस भूखण्डका वर्णन किया है उसमें फैले सात लाख गाँवोंमें रह रहे हैं। कुछ गाँवोंकी आबादी सौ-सौ से ज्यादा नहीं है; मगर कुछ ऐसे भी गाँव हैं जिनकी आबादी पाँच हजारतक है। भारतमें खेती-बाड़ी मुख्यतः अनिश्चित वर्षापर निर्भर करती है, बल्कि इसे निर्भर रहना पड़ता है। उस उपमहाद्वीपके चेरापूँजी-जैसे कुछ हिस्सोंमें तो प्रलयकारी वर्षा होती है — छः-छः सौ इंचतक। लेकिन सिन्ध और मध्यभारत-जैसे कुछ क्षेत्रोंमें ५ इंच भी मुश्किलसे होती है और वह भी उस क्षेत्रमें सर्वत्र समानरूपसे नहीं; यानी, कहीं-कहीं ५ इंचसे भी कम होती है।

खेतोंका रक़बा औसतन एक या पौन एकड़से लेकर ढाई एकड़के बीच होता है। यदि हम इस दृष्टिसे एक-एक प्रान्तको लेकर देखें तो मेरा खयाल है कि किसी भी प्रान्तमें जोतका रक़बा प्रति व्यक्ति ढाई-तीन एकड़से ज्यादा नहीं आयेगा। हो सकता है कि मुझसे भूल हो रही हो, लेकिन मेरा खयाल है, मेरा अनुमान तथ्यसे ज्यादा भिन्न नहीं होगा; और हजारों-हजार किसान ऐसे हैं जिनके पास एक-एक एकड़ जमीन भी नहीं है और दसियों हजार किसानोंके पास बिलकुल भी जमीन नहीं है, जिससे वे भारतमें कृषि-दासों (सर्फ), बल्कि शायद कहा जा सकता है कि दासोंकी तरह ही जी रहे हैं। इसे कानून-सम्मत दासताकी स्थिति तो नहीं कहा जा सकता लेकिन वास्तवमें यह स्थिति दासताके बहुत पासतक पहुँचती है। चूँकि जो वर्षा होती है, दो, तीन, चार या बहुत कहें तो पाँच महीने ही होती है, इसलिए इस आबादीको वर्षमें लगभग छः महीने बिना किसी नियमित धन्धेके रहना पड़ता है। जिन कुछ-एक क्षेत्रोंमें दो फसलें होती हैं, वहाँ चार महीने काम नहीं मिलता, लेकिन मोटे तौरपर कहा जा सकता है कि भारतके ये किसान आधे वर्ष बिना किसी नियमित धन्धेके रहते हैं।

तो स्वभावतः सर्वसाधारणके बीच गरीवी बहुत अधिक है और वह उत्तरोत्तर बढ़ती चली जा रही है। भारतके लोगोंकी औसत आय प्रतिदिन दो पैंस है। अगर इन ३५ करोड़ लोगोंकी औसत दैनिक आय प्रति व्यक्ति दो पैंस है——और यह औसत निकालनेमें चन्द करोड़पतियोंकी सम्पत्ति भी शामिल कर ली गई है——तो आप आसानीसे समझ जायेंगे कि ऐसे लाखों लोग हैं जो रोजाना यह दो पैंस भी नहीं कमा पाते। नतीजा यह है कि लगभग दस प्रतिशत लोग आधा पेट खाकर जी रहे हैं। उन्हें प्रतिदिन एक बार ही खानेको मिलता है——सो भी सूखी चपाती और चुटकी-भर नमकके अलावा और कुछ नहीं। आपकी 'ब्रेड'-जैसी कोई चीज वे नहीं जानते, साल-साल-भर वे यह नहीं जानते कि दूध क्या होता है, यहाँतक कि उन्हें मट्ठा भी देखनेको नहीं मिलता; उन्हें नहीं मालूम कि मक्खन क्या होता है; वे नहीं जानते कि तेल क्या होता है; उन्हें कभी भी हरी सब्जियाँ नहीं मिलतीं। भारतमें विशाल जन-समुदाय आज इसी दलितावस्थामें जी रहा है।

अब मुझे आप लोगोंको यह बताना है कि भारतका भविष्य होना क्या चाहिए और अगर कांग्रेसका बस चला तो वह क्या होगा। इस वर्णनमें मैंने भारतके नगरोंको शामिल नहीं किया है; क्योंकि भारत नगरोंमें नहीं, गाँवोंमें रहता है। इसी तरह मैंने देशी नरेशोंकी भी बात नहीं कही है। इनके अधीन भी इनमें से कुछ गाँव हैं और इन गाँवोंमें भी लोगोंका जीवन बहुत-कुछ वैसा ही है जैसा कि ब्रिटिश भारतके अधीनस्थ गाँवोंका है। अगर दोनोंमें कोई अन्तर है——और अन्तर थोड़ा-सा है——तो वह परिमाणका ही अन्तर है, प्रकारका नहीं। राजे-महाराजे आयेंगे और चले जायेंगे, साम्राज्य बनेंगे और मिटेंगे, लेकिन गाँवोंमें रहनेवाला भारत ज्योंका-त्यों बना रहेगा। सर हेनरी मेनने 'विलेज कम्युनिटीज़ ऑफ इंडिया' नामक एक प्रबन्ध लिखा है। उसमें लेखकने कहा है कि एक समय ये गाँव आत्म-निर्भर "लघु गणतन्त्रों" के समान थे और एक सीमातक आज भी हैं। उनकी अपनी संस्कृति है, अपनी जीवन-पद्धति है, सुरक्षाके अपने तरीके हैं, अपने स्कूलमास्टर हैं, अपने पण्डित-पुरोहित, बढ़ई-हज्जाम, बल्कि वास्तवमें किसी गाँवके लिए आवश्यक सब-कुछ हैं। निश्चय ही आज भी गाँवोंमें किसी प्रकारका शासन या हुकूमत देखनेको नहीं मिलती, और उनका जीवन चाहे जैसा भी हो, ये आत्म-निर्भर तो हैं ही और अगर आप वहाँ जायेंगे तो देखेंगे कि ग्रामवासियोंमें एक प्रकारका अनुबन्ध-सा है, जिसपर ग्रामीण समाजका ढाँचा खड़ा है। शायद इन्हीं गाँवोंसे उस चीजका जन्म हुआ है जिसे आप जाति-प्रथाका फौलादी नियम कहते हैं। जाति-प्रथा भारतके लिए अन्दर-ही-अन्दर सड़ाँध पैदा कर देनेवाला कीड़ा साबित हुआ है, लेकिन साथ ही इसने इन ग्रामीण लोगोंके लिए एक प्रकारके सुरक्षा-कवचका भी काम किया है। खैर, मुझे जाति-प्रथाकी जटिलता और रहस्य समझानेमें आपका समय नहीं लेना चाहिए।

मैं कोशिश इस बातकी कर रहा हूँ कि आज भारत जैसा है, उसकी जितनी सच्ची तस्वीर मैं आपके सामने रख सकूँ, रखूँ। भारतपर अंग्रेजी हुकूमतने क्या प्रभाव

छोड़ा है, वह हुकूमत आज कैसी है और उसके क्या परिणाम हो रहे हैं, यह सब बतानेमें भी मुझे आपका समय नहीं लेना चाहिए। इस सबपर मैं दूसरी सभाओंमें बोल चुका हूँ और आपके पास इसके सम्बन्धमें कुछ साहित्य भी है। लेकिन भारतके भविष्यके विषयमें आपके पास कोई साहित्य नहीं है। यह पृष्ठभूमि बताये बिना मैं आपके सामने भविष्यका चित्र प्रस्तुत नहीं कर सकता था। अगर मैं भारतके इस कृषक समुदायके बारेमें कुछ और कहूँ तो आशा है, अब आपको आश्चर्य नहीं होगा। कांग्रेसने अपना परम सिद्धान्त बना लिया है कि उसके कार्य और प्रगतिका मापदण्ड उसका प्रमुख रूपसे किसानोंका संगठन बनाना होगा, और हमने यह नियम बना लिया है कि भारतके ऐसे किसी भी हितका हम खयाल नहीं करेंगे तो देशकी आबादीके इन अस्सी प्रतिशत लोगोंकी आधारभूत कल्याण-साधनाके विरुद्ध हो।

अब सवाल यह है कि उस आबादीकी सरकार कैसी होनी चाहिए? भारतका भावी राज्य जिस चीजका सबसे अधिक ध्यान रखेगा वह है इस जनसमुदायका आर्थिक कल्याण। इसलिए आप सहज ही इस निष्कर्षपर पहुँचेंगे कि वह सरकार किसानोंकी बेकारीके इन छः महीनोंमें उन्हें देनेके लिए कोई धन्धा ढूँढ़ेगी। वास्तवमें इस जबरदस्त कामको अपने हाथोंमें लेनेवाले आदमीको सबसे पहले इसी बातकी ओर ध्यान देना चाहिए। प्रयोग और अनुभवकी पद्धतिसे जो उपाय हमारे कामके नहीं हैं उन्हें छोड़ते हुए हम इस निष्कर्षपर पहुँचे हैं कि आपसमें सुसम्बद्ध और एक जैसी इस आबादीके लिए कोई एक मुख्य धन्धा होना चाहिए। वह धन्धा आसान होना चाहिए; उसके लिए ऐसे ही साधन होने चाहिए जिन्हें गाँवोंमें ही बनाया जा सके और ग्रामोद्योगसे जो चीज तैयार की जाये उसकी खपत ग्रामवासियोंके बीच ही हो सकनी चाहिए। अगर आप कोई ऐसा धन्धा उन्हें दे सकें जो ये तमाम शर्तें पूरी करता हो तो उसमें उत्पादन और वितरणकी आत्म-निर्भर प्रक्रिया काम करेगी और किसी बिचौलियेका सहारा लेनेकी जरूरत नहीं होगी। हाथ-कताई और हाथ-बुनाईका प्राचीन धन्धा इसी तरहका था। अब मैं आपको यह सब नहीं बताऊँगा कि यह धन्धा कैसे नष्ट हुआ। लेकिन आप देखते हैं कि कांग्रेसके प्रयत्नोंके परिणामस्वरूप चरखा संघ जितनी शीघ्रतासे कर सकता है, उतनी शीघ्रतासे भारतके हजारों गाँवोंमें प्रवेश कर रहा है। इस तरह हम दो हजार गाँवोंमें प्रवेश कर चुके हैं; इस धन्धेने ग्रामीण लोगोंकी आय लगभग दूनी कर दी है। आप समझ सकते हैं कि किसी गरीबकी दो पैंसकी कमाईमें दो पैंस और जुड़ जानेका मतलब क्या होता है। मैं तो कहूँगा कि इसका मतलब भाग्यका खुल जाना होता है। फिर आप कपड़ेसे सम्बन्धित दूसरे धन्धोंको लें, जिनमें हाथ-कताई और हाथ-बुनाईसे लेकर छपाई-रँगाई और धुलाईतक शामिल हैं। इन तमाम धन्धोंपर विचार करनेपर आप पायेंगे कि कपड़ा तैयार करनेका धन्धा वास्तवमें लोगोंकी आयको बहुत अधिक प्रभावित करता है, और जब हम लोगोंको यह धन्धा दे देंगे तो उसका मतलब यह होगा कि हमने उनके निराशामय जीवनमें थोड़ी आशा, कुछ साहसका संचार किया है और उनकी बुझी आँखोंमें कुछ चमक पैदा कर दी है। अगर आप मेरे साथ चलकर उड़ीसाके गाँवोंका भ्रमण

करें तो आप तिहरी मुसीबतके मारे उस प्रदेशमें जीती-जागती मृत्युको चलते-फिरते देखेंगे। वहाँ आपको मानव-जातिके ऐसे नमूने देखनेको मिलेंगे जो अपनी मर्जीसे नहीं, बल्कि लाचारीके मारे हाड़ और चामके ढाँचे-मात्र रह गये हैं और जिनके अंगोंपर मांसका कहीं कोई नामोनिशान नहीं है। अगर हम उन्हें यह धन्धा देते हैं तो वास्तवमें उनमें नये जीवन, नई आशाका संचार करते हैं।

लेकिन नय राज्यकी प्रवृत्तियाँ यहीं समाप्त नहीं हो जायेंगी। ये लोग सफाईके नियमोंसे सर्वथा अनभिज्ञ हैं और हमें इनके स्वास्थ्यकी, सफाईकी भी देख-भाल करनी है। इसलिए हम उनके बीच डॉ० पुअरके स्वास्थ्य-सम्बन्धी उपायोंको दाखिल करनेकी कोशिश करते हैं। डॉ० पुअरने ग्राम-आरोग्य-शास्त्रपर एक पुस्तक लिखी है। संक्षेपमें कहूँ तो इसमें यह बताया गया है कि मानव-मलसे खाद कैसे तैयार की जाये। मानव-मलके उपयोगके ज्ञानकी दृष्टिसे दुनियामें चीनियोंकी बराबरी कोई नहीं कर सकता, और डॉ० पुअर कहते हैं कि आर्थिक दृष्टिसे लाभकर ढंगसे मानव-मलको ठिकाने लगानेके उपायकी खोजमें उनके शिक्षक चीनी ही थे। हम दो काम करनेकी कोशिश कर रहे हैं—एक तो राष्ट्रका धन बढ़ानेकी और दूसरे, उसका स्वास्थ्य सुधारनेकी। अगर हम लोगोंको मानव-मलको ठिकाने लगानेका यह तरीका सिखा देते हैं तो हम किसी हदतक अपनेको मक्खियोंके उत्पातसे मुक्त कर लेंगे और कुछ हदतक जहरीले मच्छरोंको भी समाप्त कर देंगे। मैं जानता हूँ कि इस उपायसे यह काम पूरी तरह सम्पन्न नहीं हो जायेगा, लेकिन यह सही दिशामें उठाया गया कदम तो है ही।

फिर, इस मलेरिया-ग्रस्त देशमें उन्हें चिकित्सा-सम्बन्धी कुछ सहायता देना भी आवश्यक ही है। भारतमें रोग तो बहुत हैं, लेकिन मलेरिया मुख्यतः अभावकी बीमारी है। ग्रामवासियोंको केवल कुनैनकी गोलियोंके पैकेट दे देनेसे ही यह रोग दूर नहीं हो जायेगा। कुनैन आवश्यक तो है, लेकिन यदि आप उन्हें थोड़ा दूध या फल नहीं देते तो वह बेकार ही है; क्योंकि उनकी पाचन-प्रणाली कोई और चीज ग्रहण करने लायक होती ही नहीं। तो हमसे जहाँ भी बन पड़ता है वहाँ हम उन्हें चिकित्सा-सम्बन्धी साधारण-सी सहायता देनेकी कोशिश कर रहे हैं। यहाँ मैं आपको यह बतानेकी कोशिश नहीं कर रहा हूँ कि हम यह काम कर चुके हैं, मैं तो भावी राज्यकी बात कह रहा हूँ, लेकिन कल्पना-लोकमें विचरण करते रहनेवाले व्यक्तिके रूपमें नहीं, बल्कि एक व्यावहारिक आदमीकी हैसियतसे। हमने छोटे पैमानेपर इसे आजमाकर देखा है, और अगर हम भावी राज्यकी सहायतासे इस प्रवृत्तिमें कई गुना वृद्धि कर सकें तो आप समझ सकते हैं कि बहुत बड़ी पूंजी लगाये बिना भारत क्या हो सकता है। चिकित्सा-सम्बन्धी यह सहायता हम पश्चिमी डाक्टरों द्वारा सिखाये अत्यन्त व्ययसाध्य तरीकेसे नहीं देते, बल्कि उपचारके अपने प्राचीन तरीकोंसे ही हम फिरसे काम लेते हैं। किसी समय प्रत्येक गाँवमें एक वैद्य हुआ करता था। आप कह सकते हैं कि वह तो नीमहकीम था और हमारी इस छोटी-सी कायाका नियमन करनेवाले मोटे-मोटे सिद्धान्तोंसे भी वह सर्वथा अनभिज्ञ था। यह सब सच है; लेकिन तब यह बात भी तो है कि वह ऐसा आदमी था जो उन

लोगोंको थोड़ी-बहुत राहत दे सकता था और चूँकि उसका धन्धा पुश्तैनी था, इसलिए यदि वह बेईमान नहीं होता था तो सचमुच बड़ी कुशलतासे अपने समाजकी एक आवश्यकता पूरी करता था। अगर आप आरोग्य-विज्ञानकी यह प्राथमिक जानकारी उसे दे देते हैं और लोगोंको मलेरियासे छुटकारा दिलानेका यह सीधा-सादा तरीका सिखा देते हैं तो समझिए कि आपने इस दिशामें बहुत-कुछ कर लिया।

मैंने आज आपको जो-कुछ बताया है, उसका अनुमोदन बम्बई प्रान्तके सर्जन-जनरलने भी किया था। जिन दिनों मैं सैसून[1] अस्पतालमें पड़ा हुआ था उन्हीं दिनों जब वे मुझे देखने आये तो उनसे इस विषयपर मेरी चर्चा हुई। इस चर्चाके दौरान मैंने उनसे कहा कि "चिकित्साकी आपकी अंग्रेजी पद्धति तो इस गरीब देशके लिए बड़ी खर्चीली है और अगर आप किसी गाँवमें अपनी पद्धतिसे रोग-निवारण करना चाहें तो उसमें दो-तीन सदियाँ लग जायेंगी।" उन्होंने मेरी बातसे सहमति प्रकट करते हुए पूछा कि "लेकिन तब आप क्या करेंगे?" इसपर मैंने उनको अपनी योजना बताई।

भविष्यका यह चित्र इतनेसे ही पूरा नहीं हो जाता। इस भावी राज्यकी शिक्षाकी समस्या भी होगी। मेरे दिये आँकड़ोंको कोई गलत सिद्ध कर सकेगा, मनमें इसकी तनिक भी आशंका रखे बिना मैं कहता हूँ कि आज भारत पचास या सौ साल पहलेकी बनिस्बत ज्यादा निरक्षर है और यही हाल बर्माका भी है। इसका कारण यह है कि अंग्रेज प्रशासक जब भारतमें आये तो यहाँकी चीजोंको ज्योंका-त्यों स्वीकार करके आगे बढ़नेके बजाय उन्होंने उनका मूलोच्छेद करना शुरू किया। उन्होंने मिट्टी पलटकर जड़ देखना शुरू किया, लेकिन बादमें फिर उस जड़पर मिट्टी नहीं डाली और नतीजा यह हुआ कि वह सुन्दर वृक्ष नष्ट हो गया। ग्राम्य पाठशालाएँ ब्रिटिश प्रशासकोंके प्रयोजनोंके लिए पर्याप्त अच्छी नहीं थीं और इसलिए वे एक नई योजना लेकर सामने आये। उनके अनुसार प्रत्येक स्कूलमें अमुक साज-सामान, उसका अपना एक भवन आदि होना ही चाहिए। मगर ऐसे स्कूल देशमें नहीं थे। एक ब्रिटिश प्रशासक कुछ ऐसे तथ्य-आँकड़े छोड़ गया है जिन्हें देखनेसे पता चलता है कि उन लोगोंने इस सम्बन्धमें जहाँ-जहाँ सर्वेक्षण किया, वहाँ-वहाँ यह पाया कि प्राचीन पाठशालाएँ धीरे-धीरे नष्ट हो गई हैं, क्योंकि उन पाठशालाओंको मान्यता नहीं दी जाती थी, और चूँकि यूरोपीय ढंगपर खोले गये स्कूल आम जनताके लिए बहुत खर्चीले थे, इसलिए वे शिक्षाकी आवश्यकताओंको पूरा नहीं कर सके। मेरी यह चुनौती है कि कोई भी इस देशमें एक सदीके अन्दर अनिवार्य प्राथमिक शिक्षाका कार्यक्रम पूरा करके दिखा दे। मेरा गरीब देश ऐसी व्ययसाध्य शिक्षा-पद्धतिका भार वहन नहीं कर सकता। हमारा राज्य प्राचीन ग्राम-शिक्षककी परम्पराको फिरसे चालू करेगा और इस तरह हर गाँवमें लड़कों और लड़कियों, दोनोंके लिए स्कूलकी व्यवस्था अपने-आप हो जायेगी।

अब एक दूसरी चीजको लें। अंग्रेजोंने कुछ-एक सिंचाई-योजनाओंको पूरा करनेमें करोड़ों रुपये खर्च किये हैं, लेकिन हमारा दावा है कि इस काममें जितनी तेजीसे

१. जनवरी १९२४ में, जब गांधीजी का अपेंडिसाइटिसका ऑपरेशन हुआ था; देखिए खण्ड २३।

प्रगति की जा सकती थी, उतनी तेजीसे वे प्रगति नहीं कर पाये हैं। सैनिक प्रयोजनों-से देश-भरमें तैयार किये गये रेलमार्ग, परिवहन-कार्यमें निस्सन्देह कुछ लाभप्रद सिद्ध हुए हैं, लेकिन सिंचाईके द्वारा देशको जितना लाभ पहुँचाया जा सकता था वैसा कोई लाभ इनसे नहीं हुआ है। सिंचाईकी ये योजनाएँ वास्तवमें इतनी व्ययसाध्य थीं और हैं कि पूरे देशमें इन्हें लागू किया ही नहीं जा सकता। लेकिन सिंचाईके हमारे अपने प्राचीन तरीके हैं: कुछ हिस्सोंमें गहरे कुओंसे की जानेवाली सिंचाई और कुछमें ऐसे कुओंसे की जानेवाली सिंचाई जो बहुत गहरे नहीं हैं। मैं यह स्वीकार करता हूँ कि इस क्षेत्रमें मैं कोरा ही हूँ, लेकिन एक अंग्रेज सज्जन, जो सघन कृषिका प्रयोग कर रहे हैं और इस समय यहाँ हैं, मुझसे कह रहे थे कि वे कविगुरु ठाकुरके गाँवमें काम करते रहे हैं। उस ग्राम्य प्रयोगको वास्तवमें श्री एमहर्स्टने ही जीवन प्रदान किया, और उस प्रयोगके परिणामस्वरूप नहरसे सिंचाईकी व्यवस्था की जा रही है, जिसके लिए ऐसे किसी कौशलकी आवश्यकता नहीं होती जो गाँववालोंको मालूम न हो। उन्होंने बताया है कि अब उन लोगोंने सरकारको यह स्वीकार करने-को विवश कर दिया है कि उनका तरीका ज्यादा अच्छा है। मैं तो इन सज्जन द्वारा नहर-सिंचाईके सम्बन्धमें दिया साक्ष्य ही आपके सामने प्रस्तुत कर रहा हूँ, लेकिन खुद इतना जानता हूँ कि सिंचाईके ऐसे प्राचीन तरीके भी हैं जो जनताकी सामर्थ्यके अनुरूप हैं।

आपको मैंने यह तो बता दिया कि हम निर्माणके कौन-कौनसे कार्य करेंगे, लेकिन हमें कुछ ध्वंसात्मक कार्य भी करने पड़ेंगे। अन्यथा हमारा काम नहीं चल पायेगा, क्योंकि दुर्वह सैनिक और असैनिक (सिविल) व्ययको वहन करनेके लिए भारतसे साल-दर-साल जो राजस्व जबरदस्ती वसूल किया जाता है, यह देश वास्तवमें उतना देने योग्य नहीं है। सैनिक व्यय ६२ करोड़का है; जिस देशके लोगोंकी औसत दैनिक आय केवल दो पैसे हो उसके लिए यह रकम बहुत बड़ी है। इसकी तुलना आप दुनियाके किसी भी देशके सैनिक व्ययसे करके देख लीजिए। आप पायेंगे कि भारत एक दुर्वह भारसे दबा हुआ कराह रहा है। इसलिए हमें तत्काल पुनः सन्तुलन करनेमें जुट जाना होगा, और अगर मेरी चले तो हमें तीन चौथाई सैनिक व्ययसे छुटकारा पा लेना चाहिए। अगर हम सचमुच यह दिखा देते हैं कि हमने अपनी स्वतन्त्रता अहिंसक साधनोंसे प्राप्त की है तो भारतके लोगोंको इस बातकी प्रतीति करानेके लिए कि इसी अहिंसाके बलपर वे अपनी स्वतन्त्रताकी रक्षा भी कर पायेंगे, ज्यादा दलील देनेकी जरूरत नहीं होगी। कांग्रेसको अफगानों अथवा जापानियोंके आक्रमणकी आशंका नहीं सताती — बोलशेविक रूसके आक्रमणकी आशंका तो बिलकुल भी नहीं। कांग्रेसको ऐसा कोई भय नहीं है, और अगर हम अहिंसात्मक असहयोगके पाठको समझ लें तो दुनियाका कोई भी राष्ट्र हमें अपनी इच्छाके आगे झुका नहीं सकता। अगर हम अंग्रेजीका केवल एक शब्द, जिसके पर्याय भारतीय भाषाओंमें भी हैं — सीख लें, तो हमें केवल इतना ही कहना होगा — 'नो' (नहीं), और भारतपर अपनी लोलुप दृष्टि डालनेवाले किसी भी आक्रमणकारीके पाँव वहीं रुककर

रह जायेंगे। हमारा यह निश्चित मत है कि भारतके पास जो शस्त्रास्त्र हैं, उनकी उसे कोई आवश्यकता नहीं है।

असैनिक (सिविल) मामलोंसे सम्बन्धित व्ययके बारेमें मुझे यहाँ भी वह दृष्टान्त देना पड़ेगा जो मैं कई सभाओंमें दे चुका हूँ। यहाँ प्रधान मन्त्रीको औसत राष्ट्रीय आयका पचास गुना वेतन मिलता है; भारतमें वाइसरायको वहाँकी औसत आयका पाँच हजार गुना मिलता है। इस एक उदाहरणसे आप खुद ही यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि यह असैनिक व्यय भारतके लिए क्या अर्थ रखता है। यह सेवा चाहे जितनी सक्षम और कार्यकुशल हो, भारत इसका बोझ नहीं सह सकता। अगर मैं भारतके प्रत्येक गाँवमें चिकित्सा-शास्त्रके विशेषज्ञ भेज सकूँ तो बहुत सम्भव है कि वहाँ कोई रोग न हो, लेकिन चूँकि प्रत्येक गाँवको ऐसा विशेषज्ञ भेजना हमारे बसका नहीं है, इसलिए हमें उन नीमहकीमोंसे ही सन्तुष्ट रहना पड़ेगा जो हमारे गाँवोंमें सुलभ हैं। दुनियाका कोई भी देश अपनी आमदनीसे ज्यादा खर्च नहीं कर सकता; वह वैसी ही सेवाओंका लाभ उठा सकता है जिनका खर्च उठाना उसके लिए शक्य है। अगर मैं प्रत्येक भारतीय ग्रामीणके लिए स्ट्राबेरी और मक्खन चाहूँ तो मैं जानता हूँ कि वह दिवा-स्वप्न देखना ही होगा और यदि मैं प्रत्येक ग्रामवासीको ये चीजें देना चाहूँ तो मैं महामूर्ख समझा जाऊँगा। तो मैं आपसे कहता हूँ कि यह सैनिक और असैनिक (सिविल) व्यय भारतके लिए स्ट्राबेरी और मक्खनके समान है। मैं अपने देशभाइयोंको यह भोजन नहीं दे सकता।

मैं भविष्यका चित्र लगभग पूरा कर चुका हूँ। अगर आपको इसमें कहीं कोई स्थान खाली मिले तो मुझे स्मरण दिलाइए। फिर मैं आपके प्रश्नोंके उत्तर देकर रिक्त स्थानोंकी भी पूर्त्ति कर दूँगा।

प्र० : क्या आप यह स्वीकार नहीं करेंगे कि फसलोंके खराब हो जानेसे जो आर्थिक तबाही होती थी, हमारी यादमें ही ग्रामीण लोगोंकी उसका मुकाबला करनेकी शक्ति बहुत बढ़ गई है और आज जब कि जनसाधारणके अधिक खुशहाल हो जानेके कारण अकाल कष्ट-निवारण नियमोंकी वैसी आवश्यकता नहीं रह गई है, इन नियमोंकी संहिताको और भी निर्दोष-नीरन्ध्र बना दिया गया है?

उत्तरमें श्री गांधीने कहा कि मेरा अनुभव तो यह है कि जनताकी कष्टोंका मुकाबला करनेकी शक्तिमें कोई वृद्धि नहीं हुई है; हुआ यह है कि रेलपथ यातायातके कारण अब लोगोंको दूसरी जगहोंसे अन्न मिल जाता है, जबकि पहले नहीं मिलता था।

सर फिलिप हार्टोग : क्या आप अपने इस कथनकी पुष्टिमें कोई प्रमाण देंगे कि गत पचास वर्षोंमें भारतमें साक्षरता कम हो गई है?

श्री गांधीने कहा कि मेरा प्रमाण पंजाब सरकारकी रिपोर्ट है, और 'यंग इंडिया' में मैंने पंजाबके शिक्षा-सम्बन्धी आँकड़ोंका अध्ययन प्रकाशित किया है।

सर फिलिप हार्टोग : क्या आप इसका कारण बतायेंगे कि पुरुषोंके बीच साक्षरों-की संख्या चौदह प्रतिशत और स्त्रियोंके बीच केवल दो प्रतिशत ही क्यों है और ब्रिटिश भारतकी अपेक्षा कश्मीर और हैदराबादमें अधिक निरक्षरता क्यों है?

श्री गांधीने इसका उत्तर देते हुए कहा कि स्त्रियोंकी शिक्षाकी उपेक्षा की गई है, जो पुरुषोंके लिए बड़ी शर्मनाक बात है। कश्मीरके आँकड़ोंके सम्बन्धमें तो मैं ऐसा कुछ अनुमान ही लगा सकता हूँ कि अगर वहाँ ज्यादा निरक्षरता है तो उसका कारण या तो शासककी उदासीनता है या यह कि वहाँ मुख्यतया मुसलमान रहते हैं, लेकिन मेरा खयाल है कि वास्तवमें दोष दोनोंका बराबर-बराबर ही है।

प्र० : क्या कांग्रेसी ब्राह्मण अस्पृश्योंकी सहायता कर रहे हैं? अगर बात ऐसी है तो अस्पृश्योंके लिए अलग कुएँ खोदनेकी आवश्यकता क्यों पड़ती है? क्या वे ब्राह्मणोंके कुओंको ही इस्तेमाल नहीं कर सकते? क्या अस्पृश्योंके बीच अधिकांश काम करनेका श्रेय साल्वेशन आर्मीवालों और मिशनरियोंको ही नहीं है?

उत्तरमें श्री गांधीने कहा कि जब मैंने यह कहा कि अस्पृश्यता हिन्दू धर्मका अभिशाप है तो आपके इस सवालका उत्तर तो दे ही दिया कि अस्पृश्य लोग ब्राह्मणों-के कुओंका उपयोग क्यों नहीं कर सकते। अगर सभी ब्राह्मणोंमें यह सुधार आ गया होता तब तो कोई कठिनाई ही नहीं रह जाती; लेकिन यह सही है कि जो कार्य-कर्त्ता अस्पृश्योंके लिए कुएँ खोदने और उनकी अन्य सेवाओंमें लगे हुए हैं उनमें ज्यादातर ब्राह्मण ही हैं। वे ऐसा मानते हैं कि इस तरह वे, उनके जातिवालोंने अस्पृश्योंको जो कष्ट दिया है, उसका थोड़ा-सा प्रायश्चित्त करते हैं। साल्वेशन आर्मी-वालों और मिशनरियोंका काम हिन्दू सुधारकों द्वारा किये जा रहे कामसे भिन्न है और इस समय मैं इस मसलेकी चर्चा नहीं करना चाहता।

प्र० : प्रस्तावित सुधारोंका भारतकी आबादीपर क्या असर होगा? अगर स्वास्थ्य-सफाईकी अवस्था सुधर गई तो उससे मृत्यु-दर कम हो जायेगी और आबादी बढ़ेगी, और अगर व्यक्तिगत उद्यमशीलता तथा सार्वजनिक व्ययमें किफायतशारीके परिणामस्वरूप लोगोंका जीवन-स्तर ऊँचा हो जायेगा तो क्या किसी ऐसी व्यवस्थाकी तजवीज है जिससे जन्म-दर इतनी न बढ़े कि जनसंख्यामें बहुत वृद्धि हो जाये और फलतः लोग फिर ऐसी अवस्थामें पहुँच जायें कि किसी प्रकार निर्वाह-भर कर सकें? क्या जन्म-दरपर रोक न लगाना स्थायी सुधारमें बाधक न होगा?

श्री गांधीने उत्तरमें कहा कि यह समस्या केवल भारतके साथ ही तो नहीं है; यह तो एक आधुनिक मान्यता है, जन्म-दरमें स्वाभाविक वृद्धिको मैं बुराई नहीं मानता और अगर कांग्रेसी कार्यकर्त्ता यह दिखा सकें कि स्वास्थ्य-सफाईकी दिशामें तथा अन्य क्षेत्रोंमें उनके किये सुधारोंके परिणामस्वरूप भारतकी जन्म-दरमें वृद्धि हुई है तो मैं उन्हें बधाई ही दूँगा। जन्म-दरमें वृद्धिके परिणामस्वरूप गरीबी बढ़नेसे मुझे भय नहीं लगता। हम अपने देशभाइयोंको ऐसे जीवनकी शिक्षा दे रहे हैं जिसमें जन्म-दरमें होनेवाली स्वाभाविक वृद्धिको एक चीज और विषय-भोगके अतिरेकसे होने वाली वृद्धिको बिलकुल दूसरी चीज माना जाता है, और इस तरहकी शिक्षापर जितना जोर दिया जाये, कम ही होगा। मैंने इस प्रश्नपर बहुत शान्त और

एकाग्र मनसे विचार किया है और इस विषयपर मैं सारे यूरोप और अमेरिकाके विचारकोंसे पत्र-व्यवहार कर रहा हूँ। मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि आधुनिक सुधारकों द्वारा सुझाये सन्तति-निग्रहके तरीके अन्ततः मृत्युपाश साबित होंगे। अगर यह सिद्ध कर भी दिया जाये कि इंग्लैंड, हालैंड, फ्रांस तथा यूरोपके दूसरे हिस्सोंमें और अमेरिकाके कुछ भागोंमें जन्म-दर रोकनेके आधुनिक तरीकोंसे कुछ लाभ हुआ है, तब भी भारतको तो इससे अपरिमित हानि ही होगी, क्योंकि वहाँ आम लोगोंको इन उपायोंका लाभ नहीं दिया जा सकता। जब भारत इन तरीकोंको किसी भी रूपमें समझ ही नहीं सकता तो उसके लिए इनका सुझाव देना दुष्टतापूर्ण बात होगी।

प्र० : क्या आप संक्षेपमें यह बतायेंगे कि भारतमें किस सिद्धान्तके आधारपर एक सबल और सुस्थिर कार्यकारिणीका गठन किया जा सकता है?

इसका उत्तर देते हुए श्री गांधीने कहा, सबल और सुस्थिर कार्यकारिणी बनानेका सबसे अच्छा तरीका सबल और सुस्थिर हृदयवाले व्यक्ति ढूंढ़ निकालना है और भारतमें ऐसे लोगोंकी कमी नहीं है। मैंने प्रश्नके राजनीतिक पहलूपर विचार नहीं किया है, क्योंकि भारतके भविष्यकी मेरी जो कल्पना है, उसमें बहुत अधिक राजनीतिक उपायोंकी गुंजाइश नहीं है? आर्थिक कष्टका इलाज आर्थिक ही है, लेकिन मैं राजनीतिमें इसलिए हाथ-पैर मार रहा हूँ कि राजनीतिमें पड़े बिना आर्थिक समस्याका समाधान नहीं किया जा सकता। अपनी राजनीतिक मान्यताओंका इजहार मैं कई मंचोंसे कर चुका हूँ, और मैंने यह माना था कि आप उन सिद्धान्तोंसे अवगत हैं जिनपर कांग्रेस चलती है, लेकिन अगर आप चाहें तो मैं अपनी राजनीतिक मान्यताएँ आपको फिरसे बतानेको तैयार हूँ। मैं टॉल्स्टॉयके इस विचारसे सहमत हूँ कि उस देशका शासन सबसे अच्छा है जहाँ सबसे कम शासन किया जाता है, और अगर कांग्रेसका बस चला तो राजनीतिवालोंको घरेलू जीवनमें जो-कुछ निजी और पवित्र है, उसपर हाथ नहीं डालने दिया जायेगा, बल्कि उनसे अपनी सीमाके भीतर रहनेकी अपेक्षा की जायेगी।

प्र० : ब्राह्मण सुधारकोंके प्रशस्त दृष्टिकोणसे देश-भरके सवर्ण हिन्दू कहाँतक सहमत हैं?

उत्तरमें श्री गांधीने कहा कि जो अपनेको कांग्रेसी कहते हैं उनमें से तो बहुत अधिक लोग उनके दृष्टिकोणसे सहमत हैं, लेकिन अभी बहुत-कुछ करना शेष है। फसल तो पक चुकी है, लेकिन कटाई करनेवाले मजदूर बहुत कम हैं। ऐसे कुछ-एक हजार लोग हैं, लेकिन जिस दोषने राष्ट्रके ढाँचेको खोखला बना दिया है उससे मुक्त होनेके लिए इस तरहके दसियों हजार लोगोंकी जरूरत है। मैं विश्वासपूर्वक कह सकता हूँ कि अस्पृश्यता तेजीसे दम तोड़ रही है, क्योंकि कुछ लोगोंने अपने जीवन तक होम कर दिये हैं और इस अभिशापको दूर करनेके लिए अपने प्राणोंका कोई

मूल्य नहीं समझा है। अब तो स्थिति यह है कि या तो हिन्दू धर्म खण्ड-खण्ड होकर बिखर जायेगा या फिर चन्द वर्षोंमें ही अस्पृश्यता मिट जायेगी।

इसके बाद अध्यक्षने पूछा कि क्या आप राजनीतिक स्थितिके बारेमें कुछ और कहनेकी कृपा करेंगे।

श्री गांधीने कहा कि कांग्रेस पूर्ण राजनीतिक स्वतन्त्रता, और इसलिए सेना, विदेशी मामलों और वित्तपर सम्पूर्ण नियन्त्रणसे कम किसी भी चीजसे सन्तुष्ट होनेवाली नहीं है। कांग्रेसकी मनोवृत्तिका सही अन्दाज लगानेका सबसे अच्छा तरीका यह है कि आप अपनेको भारतीयोंकी स्थितिमें रखकर सोचें। कल्पना कीजिए कि आप सब भारतमें रह रहे हैं और भारतीय लोग ग्रेट ब्रिटेनमें। अब मान लीजिए ब्रिटिश द्वीपसमूहमें रहनेवाले भारतीय आपसे कहें कि "आप लोग अपना शासन आप चलाने लायक नहीं हैं; हमें यह देखना होगा कि आप अपनी सेनाकी व्यवस्था खुद कर सकते हैं अथवा नहीं या आपके यहाँसे हमारे हट जानेपर चीन, तिब्बत, अफगानिस्तान या रूससे जो आक्रमणकारी आपपर टूट पड़ेंगे उनसे आप अपनी रक्षा कर सकते हैं अथवा नहीं।" इसपर आपका उत्तर यही तो होगा कि "हम अपना हिताहित खुद देख लेंगे या कमसे-कम वैसी कोशिश तो करेंगे।" ज्यादासे-ज्यादा यही तो होगा कि भारतीय लोग एक राष्ट्रके रूपमें दुनियासे मिट जायेंगे। मौजूदा परिस्थितिसे हजारों भारतीयोंको मर्मान्तिक पीड़ा हो रही है और वे विदेशी दासताके जुएको अपने कन्धोंसे किसी भी कीमतपर उतार फेंकनेको कटिबद्ध हैं — चाहे ब्रिटिश सिंह अपने पंजे फटकारकर भारतीयों द्वारा की जानेवाली सविनय अवज्ञाका कितना भी विरोध करे। भारतमें ग्रेट ब्रिटेनके बहुत बड़े आर्थिक हित हैं। लॉर्ड रॉदरमेयरके अनुमानके अनुसार उसकी कीमत एक अरब पौण्ड है। अगर ये हित उचित और न्यायसम्मत हैं तो भारतीय उनकी रक्षा करेंगे, क्योंकि वे जो लड़ाई लड़ रहे हैं, वह बदला लेनेके लिए नहीं, बल्कि भारतके जन्मसिद्ध अधिकारका उपयोग करनेके लिए लड़ रहे हैं। भारतीय अंग्रेजोंकी तरह शस्त्रसज्जित नहीं हैं; वे युद्ध-कला नहीं जानते; उन्हें एक विनम्र जाति कहा जाता है और मुझे इस बातका हर्ष है कि मैं ऐसी जातिमें जन्मा हूँ, लेकिन, अगर उनके हृदय मजबूत हैं तो शारीरिक कमजोरीसे कोई फर्क नहीं पड़ता। भारतीय महिलाओंके हृदय फौलादी हैं। उन्होंने सीना तानकर लाठियोंके प्रहार झेले, उन्होंने भागनेकी बात नहीं सोची, प्रहारोंकी ओर अपनी पीठ नहीं फेरी। ऐसे ही मजबूत हृदय ग्रामवासियोंके हैं, जिन्होंने अंग्रेजी स्कूलोंमें शिक्षा नहीं पाई है; और उनमें भी सबसे बहादुर एक स्त्री है, जो खुद अपनी मातृभाषाका एक अक्षर भी शायद ही पढ़ सकती हो। वे ऐसा इसलिए कर रहे हैं कि अपने देशकी आजादी हासिल कर सकें। भारतके जनसाधारणमें जागृति आ रही है, और अब वह समय बीत चुका है जब उन्हें ऐसा समझाया जा सकता था कि विदेशी सुशासन स्वदेशी कुशासनसे बेहतर है। सर हेनरी कैम्बेल-बैनरमैनने कहा था कि स्व-

शासनका स्थान सुशासन नहीं ले सकता। गलती करनेमें तो ब्रिटेनके लोग लासानी हैं, और लॉर्ड सैलिसबरीने कहा भी था कि अंग्रेज लोग गलतियाँ करते हुए और उनसे सबक लेते हुए सफलताकी मंजिलतक पहुँचनेकी कला जानते हैं। फिर अंग्रेज भारतीयोंको ही गलती करनेके अधिकारसे वंचित क्यों रख रहे हैं? जो अंकुश भारतको अपने उस अधिकारके प्रयोगसे वंचित रख रहा है, उससे वे तंग आ चुके हैं। यद्यपि मेरा धर्म अहिंसा है, फिर भी जिसका उल्लेख सर हेनरी गिडनीने किया, वह विपत्ति अगर आने लगे तो वह खतरा भी उठानेको मैं तैयार हूँ। लेकिन हम कौन-सी गलतियाँ कर सकते हैं? सभी अल्पसंख्यक समुदायोंको सुरक्षा मिलनी चाहिए, लेकिन सुरक्षा देनेके अनेक तरीके हैं। जिस स्वतन्त्रतासे भारत इतने दिनोंतक वंचित रहा, उसे उसको प्राप्त करना ही है — मिले तो ब्रिटेनकी सहायतासे और न मिले तो उसके बिना ही। मैं न केवल ब्रिटेनवालोंसे, बल्कि समग्र मानव-जातिसे यह अनुरोध करता हूँ कि इस राष्ट्रको, जो इतने व्यापक पैमानेपर अहिंसाका प्रयोग कर रहा है जिसका इतिहासमें कहीं कोई उदाहरण नहीं है, दुनियाके सभी राष्ट्रोंका पूर्ण समर्थन प्राप्त होना चाहिए।

अंग्रेजी हुकूमतसे भारतको लाभ हुआ है, यह बात अंग्रेजोंके जाननेकी है या भारतीयोंके? ब्रिटेनवालोंका किया सही है अथवा गलत, इसका निर्णय खुद ब्रिटेन-वाले करेंगे या इस सम्बन्धमें दादाभाई नौरोजी, रानडे, गोखले, सर फीरोजशाह मेहता-जैसे उन लोगोंके साक्ष्यको निर्णायक माना जायेगा जिन्हें इंग्लैंडसे एक प्रकारका मोह और पाश्चात्य सभ्यताका गर्व था, किन्तु जिन्होंने कहा कि यद्यपि अंग्रेजोंका आशय शुभ है, फिर भी उनका शासन कुल मिलाकर भारतके लिए हानिप्रद सिद्ध हुआ है, क्योंकि उन्होंने इस राष्ट्रको पुंसत्वहीन बना दिया है? ब्रिटेनने सौ वर्षोंतक भारतमें शासन किया है और अगर इसके बाद भी उसके वहाँसे हट जानेका परिणाम यही होना है कि वहाँके लोग आपसमें लड़ने लगेंगे तो इसके लिए दोषी कौन है? मैं मानता हूँ कि हम असहाय हैं, और मैं ब्रिटेनकी सहायता भी चाहता हूँ, लेकिन अपनी शर्तोंपर। भारत ऐसे द्वार-रक्षक नहीं रख सकता जो इतना ऊँचा पारिश्रमिक माँगें। अगर भारत अपनी कमाईका ७५ प्रतिशत उन्हींको दे देगा तो शेष पच्चीस प्रतिशतपर वह अपना जीवन कैसे बिता पायेगा? यह तो सामान्य गणितका विषय है। देश आज जिन अनेक बोझोंके नीचे पड़ा कराह रहा है, उन्हींके कारण वह दरिद्र हुआ है, और चूँकि मैं सिवाय उन अवधियोंके, जब मैं जेलमें रहा, १९१६ से १९३१ तक बराबर सारे भारतका दौरा करता रहा हूँ, इसलिए मैं यह दावा कर सकता हूँ कि वहाँके गाँवोंकी दशाकी ब्रिटिश अधिकारियोंकी अपेक्षा मुझे ज्यादा जानकारी है।

अपने देशके लिए संविधान तैयार करनेको मैं प्रस्तुत हूँ, और जब मुझे निरुपाय करनेके लिए मेरे सामने अल्पसंख्यकोंकी समस्या रखी जाती है तो मेरा धीरज समाप्त हो जाता है। अल्पसंख्यक-समस्याका यह हौआ आखिर क्या है? कांग्रेस अनेक राज-

नीतिक संगठनोंमें से एक संगठन-मात्र नहीं है। यही वह संगठन है जो आजादीके लिए मुख्य रूपसे लड़ा है और जिसने कष्ट सहे हैं। सैकड़ों गाँवोंपर जुल्म ढाये गये हैं, उनकी फसलें नष्ट कर दी गईं और हजारों रुपयेकी जमीन जब्त करके बेच दी गई। कांग्रेसके कहनेपर उन लोगोंने यह सब खुशी-खुशी सहा। क्या कोई छोटी-मोटी चीजके लिए ऐसा कष्ट सहन कर सकता है? मैं ब्रिटेनवालोंके चरित्रमें जो-कुछ उत्तम है उसीको जाग्रतकर उन्हें सम्पूर्ण सत्य बतानेको यहाँ आया हूँ। अगर इस अध्यायके अन्तमें मुझसे यही कहा जाता है कि जबतक मुसलमानों और दूसरे तमाम लोगोंसे सारे मतभेदोंको आप मिटा नहीं लेते तबतक कुछ नहीं किया जा सकता, तो मैं तो यहाँसे चला जाऊँगा, लेकिन उसका मतलब यही होगा कि ब्रिटेनने एक और भारी भूल की है।

आपको याद रखना चाहिए कि गोलमेज परिषद्के सभी सदस्य प्रधान मन्त्री द्वारा मनोनीत हैं; उन्हें कॉमन्स सभाके उन निर्वाचित सदस्योंने नहीं चुना है जिन्हें कोई हटा नहीं सकता। वे प्रधान मन्त्रीकी इच्छाका प्रतिनिधित्व करते हैं, और किसीका नहीं। सम्पूर्ण भारतका प्रतिनिधित्व करनेवाला एकमात्र संगठन कांग्रेस ही है। जो लोग लड़े और जेल गये वे सबके-सब हिन्दू ही नहीं थे। उनमें कई हजार मुसलमान और सिख तथा ईसाई भी थे। अगर आप चाहें तो कांग्रेसको बहुसंख्यक समुदाय कह सकते हैं, लेकिन तब कांग्रेसके पास अल्पसंख्यक-समस्याके समाधानकी अपनी योजना है। जो योजना प्रस्तुत की गई है, वह एकताके हकमें एक ठोस योजना है। बहुसंख्यक कांग्रेस जो-कुछ कहती है, हिन्दू संस्थाके रूपमें नहीं कहती। उसमें हिन्दुओंको अल्पसंख्यकोंकी स्थितिमें पहुँचाया जा सकता है। संविधानका निर्माण हिन्दुओंके लिए नहीं, हिन्दुस्तानियोंके लिए करना है। यह कैसे हो सकता है कि कांग्रेस भारतको हिन्दू समाजके अनेक हिस्सों, भारतीय ईसाई समाजके अनेक विभागों, आंग्ल-भारतीयों तथा अन्य समुदायोंके बीच टुकड़े-टुकड़े करके बाँट दे? इन परस्पर विभक्त समूहोंसे कोई राष्ट्र कैसे बन सकता है? और अल्पसंख्यक समुदाय यही चाहते हैं। इन्हें पूर्ण नागरिक, सामाजिक तथा धार्मिक स्वतन्त्रता प्राप्त करनेका पूरा हक है और वे खुले मैदानमें निर्वाचकोंसे अपनी बात कह सकते हैं। लेकिन वे विशिष्ट निर्वाचक-मण्डल क्यों चाहते हैं? आंग्ल-भारतीय समाज आम निर्वाचक-समुदायका विश्वास करनेसे भय क्यों खाता है? इसलिए नहीं कि वे आंग्ल-भारतीय हैं, बल्कि इसलिए कि उन्होंने भारतकी कोई सेवा नहीं की है। पारसीलोग कोई विशेष सुरक्षा नहीं चाहते। इसका कारण सिर्फ यह है कि उन्होंने भारतकी सेवा की है और उन्हें पूरा विश्वास है कि सेवाके बलपर प्राप्त अधिकारके कारण उन्हें योग्य प्रतिनिधित्व मिलेगा ही। दादाभाई नौरोजीकी पौत्रियोंका[1] लालन-पालन यद्यपि बड़े ऐशो-आरामके बीच हुआ, लेकिन उन्होंने भारतकी इतनी सेवा की है कि उनको जनताका प्रतिनिधित्व करनेका

१. पेरीन कैप्टेन और नरगिस कैप्टेन।

अवसर देनेसे कोई भी इनकार नहीं करेगा। अगर दूसरे अल्पसंख्यक समुदायोंके सदस्य भी खुले दरवाजेसे प्रवेश करें और भारतकी सेवा करें तो उन्हें भी चुना जायेगा। यह बड़ी लज्जाका विषय है कि अंग्रेज लोग इतने गरीब देशमें विशेष सुविधाओंका आग्रह करें और ऐसे गरीब लोगोंके विधानमण्डलमें अपने लिए विशेष स्थानोंकी माँग करें। विधानमण्डलमें प्रवेश करनेके लिए उन्हें हिन्दुओं, मुसलमानों, सिखों तथा अन्य सभी लोगोंके मतोंपर क्यों नहीं भरोसा रखना चाहिए? और मुट्ठी-भर अंग्रेजोंके मतोंके बलपर उन्हें विधानमण्डलमें प्रवेश करनेकी जरूरत भी क्या है। अंग्रेजोंके हाथोंमें तो अब भी बहुत सत्ता है। भारतीयोंको उनके संगठनके अद्वितीय कौशल और क्षमता-की, और शायद उनकी पूँजीकी, अब भी जरूरत है। फिर उन्हें अपनी-अपनी सुरक्षा-की चिन्ता क्यों होती है? वे भारतमें सर्वथा सुरक्षित अवस्थामें रह सकते हैं। अगर वे सुरक्षाका पासपोर्ट माँगें तो उसे मैं समझ सकता हूँ, लेकिन अगर वे विधानमण्डल-में प्रवेश करनेकी विशेष सुविधा चाहें तो इस अपराध-कर्ममें मैं नहीं शरीक होऊँगा। उनकी संख्या बीस लाख भी नहीं है। यह ऐसी माँग है जिसे न्यायाधीशोंकी कोई भी मण्डली अस्वीकार कर देगी। जो भी हो, पूरे राष्ट्रको बाँटकर टुकड़े-टुकड़े कर देनेकी किसी योजनामें मेरी सहमति नहीं होगी।

[अंग्रेजीसे]

इन्टरनेशनल अफेयर्स, नवम्बर, १९३१

१३८. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

२१ अक्टूबर, १९३१

चि० प्रेमा,

तेरे पत्र अब आने लगे हैं। लम्बे उत्तर देनेकी इच्छा बहुत है, लेकिन समय नहीं है। इसलिए पत्र-प्राप्तिकी स्वीकृतिसे ही सन्तोष करना।

तू क्यों डरती है? किसी भी ऐसी चीजको जो आवश्यक हो क्या मैं छोड़ सकता हूँ?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२६५) से।

१३९. भाषण: चर्च हाउसमें[1]

लन्दन
२१ अक्टूबर, १९३१

मेरा सब अंग्रेजोंसे आग्रह है कि वे भारतके पक्षका अध्ययन करें और यदि उन्हें लगे कि मेरी स्थिति ठीक है तो वे गोलमेज परिषद्को सफल बनानेके लिए जो भी मदद दे सकते हों अवश्य दें। लेकिन मुझे कोई आशा नहीं दिखाई देती। लॉर्ड सैंकी समय बिता रहे हैं, और आजतक हम सफलताकी ओर जरा भी नहीं बढ़े हैं, यहाँतक कि इस बड़े सवालके भी पहलेसे कुछ अधिक निकट नहीं पहुँचे हैं कि 'भारतको पूर्ण स्वराज्य मिलने जा रहा या नहीं? अपनी प्रतिरक्षा, वित्त-व्यवस्था और विदेशी मामलोंपर उसे पूरा अधिकार मिले या नहीं?' हमने इन विषयोंकी चर्चातक नहीं की है। हम दूसरे, बल्कि तीसरे दर्जेका महत्त्व रखनेवाली बातोंपर विचार करनेमें ही अपना समय खो रहे हैं। कहा जाता है कि साम्प्रदायिक प्रश्न मार्गमें बाधक बना हुआ है; लेकिन इस तरह बाधा डालनेके लिए इसका उपयोग नहीं करना चाहिए था।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ५-११-१९३१

१४०. प्रश्नोत्तर[2]

लन्दन
[२१ अक्टूबर, १९३१के आसपास]

प्र०: क्या यह दुर्भाग्यपूर्ण बात नहीं है कि यद्यपि आप एक बहुत ही सशक्त लोकमतके प्रवक्ता हैं, फिर भी आज आप ऐक्यबद्ध भारतके नता नहीं हैं?

उ०: हाँ, मैं ऐक्यबद्ध भारतका नेता नहीं हूँ। लेकिन उसका कारण यह है कि यहाँ एकता असम्भव है। क्या आप यह नहीं देखते कि यह सरकार द्वारा नामजद सदस्योंसे भरी हुई परिषद् है। अगर हमसे अपने प्रतिनिधि चुननेको कहा गया

१. महादेव देसाईके "लन्डन लेटर" (लन्दनका पत्र) से उद्धृत। सभाकी अध्यक्षता यॉर्कके आर्क-बिशपने की थी और इसमें ३२ बिशप तथा चर्चके अन्य अधिकारियोंने भाग लिया था।

२. यह महादेव देसाईके "लन्दनका पत्र" से लिया गया है। उसमें उन्होंने इसका उल्लेख नहीं किया कि ये प्रश्न कब पूछे गये या किसने पूछे थे, लेकिन इसे उन्होंने "भाषण: चर्च हाउसमें" (देखिए पिछला शीर्षक) के साथ दिया है।

होता तो मैं सिवा राजाओंके, जिनका अस्तित्व ब्रिटिश सरकारकी मर्जीपर कायम है और इसलिए जो उसके सामन्तोंकी हैसियतसे बोलनेके अलावा और किसी तरह बोल ही नहीं सकते, अन्य सभी लोगोंका प्रतिनिधि और प्रवक्ता होता। जिन मुसलमानोंको अभी कुछ ही दिन पहले किसी भी शर्तपर ब्रिटेनके साथ कोई सम्बन्ध रखना सह्य नहीं था, वही आज प्रबलतम राजभक्तोंकी तरह बोल रहे हैं।

प्र० : तो 'डेली हेरॉल्ड' का कहना सच ही है?

उ० : नहीं, मैं समझता हूँ, प्रधान मन्त्रीकी यह बात ठीक है कि सरकार जान-बूझकर परिषद्को विफल करनेकी कोशिश नहीं कर रही है। लेकिन यह हो सकता है कि उसे सिर्फ इस कारणसे परिषद् भंग कर देनी पड़े कि यह क्लेशप्रद खींचतान और ज्यादा दिन जारी रखना शोभनीय नहीं लगता; और जो-कुछ हो रहा है वह ऐसी खींचतान तो है ही। हम ऐसे मुद्दोंपर लगातार बातचीत करते जा रहे हैं जिनका बुनियादी बातोंसे कोई सम्बन्ध ही नहीं है। जब हम यही नहीं जानते कि हमारे पास वित्तके क्या-क्या साधन होंगे, हमारे पास कौन-कौनसे अधिकार होंगे और हमें कितनी बड़ी सेनाका खर्च उठाना होगा तब वित्तके बँटवारेके सम्बन्धमें बहस-मुबाहसा करनेसे क्या लाभ!

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ५-११-१९३१

१४१. पत्र : मिर्जा इस्माइलको

२२ अक्टूबर, १९३१

प्रिय सर मिर्जा,

यदि आप डॉ० अ० को[1] मना सकें तो यह आपकी बड़ी भारी जीत होगी। दक्षिण आफ्रिकामें मैंने खुद वह सब झेला था, जो वे झेलते रहे हैं। इसलिए उनकी सभी बातोंके प्रति मेरी सहानुभूति है। उनके साथ मधुरतम व्यवहार करना चाहिए।

आपका,
मो० क० गां०

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २१८८-१) से।

१. डॉ० भी० अम्बेडकर।

१४२. भेंट : 'स्टेट्समैन' के प्रतिनिधिको

लन्दन
२२ अक्टूबर, १९३१

श्री गांधीने कहा कि अगर सरकार कोई उदार और निश्चयात्मक योजना सामने नहीं रखती तो मुझे भय है कि यह परिषद् विफल हो जायेगी। वैसे अभीतक तो ऐसा कोई संकेत नहीं मिला है कि वह ऐसी कोई योजना पेश करेगी।

अगर परिषद् विफल हो जायेगी तो मुझे इस बातकी पूरी आशंका है कि कांग्रेसके सामने, जितनी जल्दी आवश्यक हो उतनी जल्दी, बहिष्कार और सविनय अवज्ञा फिरसे शुरू कर देनेके अलावा और कोई चारा नहीं रह जायेगा।

श्री गांधीने कहा कि यह आरोप तो सही है कि गोलमेज परिषद्में जो देर होती रही, उसका दोष सरकारपर है, लेकिन मैं यह नहीं कह सकता कि देरका सिलसिला राष्ट्रीय सरकार बननेके साथ ही शुरू हुआ अथवा उससे पहले।

इस प्रश्नके उत्तरमें कि साम्प्रदायिक मसलेके समाधानका सबसे अच्छा तरीका क्या है, श्री गांधीने कहा कि सबसे अच्छा तरीका यह है कि सरकार घोषणा कर दे कि मतभेद दूर हों या न हों, संविधान-निर्माणका कार्य चालू रहेगा और अगर आपसी बातचीतसे इस प्रश्नका हल नहीं निकलता तो तीनों दावेदारोंके दावोंके बारेमें निर्णय करनेके लिए एक न्यायाधिकरण नियुक्त कर दिया जायेगा।

श्री गांधीने कहा कि मेरी समझमें यह बात बिलकुल नहीं आती कि 'डेली हेरॉल्ड' को मेरे और प्रधान मन्त्रीके बीच चल रहे पत्र-व्यवहारकी जानकारी कैसे मिली। इस पत्र-व्यवहारकी जानकारी तो केवल मेरे बहुत नजदीकी सहयोगियोंको ही थी और निश्चय ही किसीने गोपनीयता भंग की।

इस पत्र-व्यवहारमें मैंने श्री मैकडॉनाल्ड पर नीति-परिवर्तनका कोई आरोप नहीं लगाया।

आम चुनावपर अपना मत व्यक्त करते हुए कांग्रेसके नेताने कहा कि चुनाव-सम्बन्धी भाषणों और साहित्यमें भारतका कोई उल्लेख न किया जाना इस बातका सबूत है कि भारतके प्रति सभी दलोंकी नीति एक ही है।

[अंग्रेजीसे]
स्टेट्समैन, २३-१०-१९३१

१४३. संघ-संरचना समितिकी बैठककी कार्यवाहीके कुछ अंश

लन्दन
२२ अक्टूबर, १९३१

अध्यक्ष : . . . जिस कारणसे देशी राज्य अपने मामले संघीय न्यायालयमें पेश करनेको तैयार होंगे वह यह होगा कि अपनी प्रभुसत्ताका प्रयोग करके वे अपने ऊपर उस न्यायालयके न्यायाधिकारको स्वीकार करनेको राजी होंगे और उसे वह अधिकार सौंप देंगे। . . . तत्काल आपके उत्तर देनेके लिए नहीं, बल्कि केवल आपके विचार करनेके लिए मैं आपके सामने यह सुझाव रखनेका साहस करता हूँ कि अगर आप चाहें तो जिस प्रकार आप अपनी प्रभुसत्ताका प्रयोगकरके संघीय न्यायालय-जैसी नई अदालतको अपने ऊपर न्यायाधिकार प्रदान करेंगे उसी प्रकार वह अधिकार प्रिवी कौंसिलको भी प्रदान कर सकते हैं।

श्री गांधी: अगर इजाजत हो तो मैं सर मिर्जा इस्माइलसे एक सवाल पूछना चाहूँगा। सर मिर्जा, क्या आप ऐसा-कुछ भी सोचते हैं कि देशी राज्योंकी प्रजाको किन्हीं खास परिस्थितियोंमें इस संघीय न्यायालयमें अपील करनेका अधिकार हो सकता है?

सर मिर्जा इस्माइल: हाँ महात्माजी, मैं ऐसा अवश्य सोचता हूँ। संविधान अथवा संघीय कानूनोंसे उठनेवाले मामलोंके सम्बन्धमें उन्हें, सामान्यतः, ऐसे सवालोंका निबटारा करनेके अधिकारसे युक्त उच्चतम न्यायाधिकरणके पास अपील करनेका हक होगा। . . .

लॉर्ड पील: . . . सबसे पहले तो देशी राज्योंके अंशदान, ब्रिटिश सरकारको उनके द्वारा दिये इलाकों, तटवर्त्ती राज्यों आदिसे सम्बन्धित प्रश्नोंपर विचार करनेके लिए एक छोटी-सी निष्पक्ष समिति होनी चाहिए। मैं समझता हूँ कि विधेयकके पास हो जानेसे पूर्व तटवर्त्ती राज्योंके सवालका निबटारा हो जाना कोई जरूरी नहीं है, लेकिन दूसरे मामलोंपर — देशी राज्योंके अंशदान और ब्रिटिश सरकारको देशी राज्यों द्वारा दिये इलाकोंके मामलोंपर — विचार किया जाना चाहिए और ध्यानपूर्वक किया जाना चाहिए। इसलिए पहला सुझाव यह है कि वह छोटी-सी निष्पक्ष समिति उन समस्याओंपर विचार करेगी और बेशक, अपनी रिपोर्ट जितनी जल्दी हो सके उतनी जल्दी सौंप देगी। . . .

जो दूसरी समिति नियुक्त करनेका सुझाव दिया गया है वह किसी हदतक मूल प्रस्तावमें बताई गई समितिसे भिन्न है। मूल प्रस्तावमें सुझाई गई समितिको उसके विचारार्थ प्रस्तुत की गई विभिन्न समस्याओंपर विचार करना था और उसे

सिद्धान्तके मामलोंमें कुछ वैकल्पिक सुझाव देनेकी भी स्वतन्त्रता मिलनेवाली थी। लेकिन इस समितिको लेकर कुछ हलके बहुत चिन्तित हो उठे। मैं ऐसा तो नहीं कहूँगा कि उन्हें वित्तीय उप-समितिकी रिपोर्टमें निर्धारित सिद्धान्तोंके ध्वस्त कर दिये जानेकी आशंका थी, लेकिन कमसे-कम ऐसी आशंका उन्हें जरूर होने लगी थी कि इस तरह समितिको बहुत ज्यादा छूट मिल जायेगी। नये सुझावमें समितिके कार्य-क्षेत्रको बहुत कम कर दिया गया है और उसके अधिकार भी सीमित कर दिये गये हैं। ऐसा सुझाव है कि इसे तथ्योंकी जानकारी प्राप्त करनेवाली समिति होना चाहिए और इसकी नियुक्ति भारतमें होनी चाहिए तथा ऐसे अधिकारी इसके सदस्य हों जिन्हें वित्त-व्यवस्थाकी — कहनेकी जरूरत नहीं कि देशी राज्योंकी वित्त-व्यवस्थाकी भी — जानकारी हो। . . .

मुझे उम्मीद है कि ये सुझाव इस समितिके सदस्यों द्वारा व्यक्त विचारोंके अनुकूल होंगे। मैं अपनी बातका सार बहुत थोड़े-से शब्दोंमें प्रस्तुत कर सकता हूँ।

सबसे पहले तो विधेयक तैयार करनेके लिए वित्तीय उप-समिति द्वारा निर्धारित सिद्धान्तोंके आम तौरपर स्वीकार कर लिये जानेकी बात है। फिर इन दो समितियों-की नियुक्तिकी बात है, जिनमें से छोटी समिति तो देशी राज्योंके सवालपर विचार करेगी और दूसरीका काम तथ्योंका आकलन करना होगा। यह दूसरी समिति जल्दी ही काममें लगकर वह सामग्री प्रस्तुत कर सकती है जिसके आधारपर अन्तिम निर्णय लिये जायेंगे। और तीसरी बात यह है कि इस परिषद्के समाप्त होनेसे पहले सर-कारको अपने प्रस्ताव बता देने चाहिए और साथ ही इन समितियोंके लिए अपनी-अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत कर देनेके बाद जिन कुछ-एक मुद्दोंपर निर्णय लेना शेष रह जाये उनके बारेमें सम्बन्धित पक्षोंसे परामर्श करनेके सबसे अच्छे तरीकेके सम्बन्धमें अपनी सिफारिशें भी पेश कर देनी चाहिए। . . .

अध्यक्ष: हम लॉर्ड पीलके बहुत आभारी हैं। निश्चय ही हम सबके बीच कोई सहमति हो सकनेकी दिशामें बहुत अधिक प्रगति हुई है और मेरा खयाल है कि लगभग सारे मतभेद निबट गय हैं। मैं आशा करता हूँ कि इस तथ्यको स्वीकार कर लेनेकी हम सब पूरी कोशिश करेंगे।

सर अकबर हैदरी: महोदय, लॉर्ड पीलकी कही बातोंका मैं पूरा अनुमोदन करता हू। उन्होंने वास्तवमें वही सब कहा है, जो हमारे मनमें था।

डॉ० अम्बेडकर: मैं एक बात कहना चाहूँगा। अभी-अभी लॉर्ड पीलने कहा है कि संघीय वित्त उप-समितिकी रिपोर्टमें निर्धारित सिद्धान्तोंके सम्बन्धमें हम लोग सामान्यतया सहमत हैं। संघ-शासन योजना समितिके अन्य सदस्योंके चाहे जो मत हों, लेकिन जहाँतक खुद मेरी बात है, मैं संघीय वित्त उप-समिति द्वारा निर्धारित सिद्धान्तोंसे निश्चय ही सहमत नहीं हूँ; और मैं अपनी ओरसे इतना कहना चाहूँगा कि इस समितिकी नियुक्तिपर मुझे कोई एतराज नहीं है, बशर्ते कि यह बात साफ

हो जाये कि संघ-सरकारकी भावी वित्त-व्यवस्था ठोस और मजबूत बनायी जा सके, इस खयालसे उक्त सिद्धान्तोंमें संशोधन-परिवर्तन करनेका अधिकार समितिको प्राप्त है।

श्री गांधी : लॉर्ड चान्सलर महोदय, आपकी इजाजत हो तो मैं कुछ बातें कहना चाहूँगा। इस प्रस्तावित समितिके परिणामके बारेमें मेरे मनमें गम्भीर आशंकाएँ हैं, यद्यपि इसके कार्य-क्षेत्रको बहुत मर्यादित कर दिया गया है और इस तरह आपत्तिके लिए कम अवकाश रह गया है। फिर भी, बातचीतके इस अवस्थातक पहुँच जानेपर मैं अपनी आपत्तिके दूर कर दिये जानेपर आग्रह न करूँ, इस खयालसे, जो रास्ता लॉर्ड पीलने बताया है, ठीक उसी रास्तेपर मैं सुझाव देता हूँ कि इस प्रश्नपर बादमें, जब हम बची-खुची बातोंको निबटाकर अपने कामको अन्तिम रूप देने लगेंगे, विचार किया जाये। वे कहते हैं -- और मेरा खयाल है, उनका यह कहना बहुत ठीक है -- कि महामहिमकी सरकार इस समय यह बतानेकी स्थितिमें नहीं है कि कोई समिति या मण्डली, जो एक प्रकारसे गोलमेज परिषद्की प्रतिनिधि ही होगी, प्रस्तावित समितिके निष्कर्षोंपर विचार करे, इसके लिए क्या व्यवस्था की जाये। मैं समझता हूँ, यह बहुत उचित आपत्ति है। इस समिति तथा गोलमेज परिषद्के पूर्णाधिवेशनकी कार्यवाही समाप्त हो जानेपर भी, निस्सन्देह, अनेक मामलोंपर निर्णय लेना शेष रह जायेगा।

जो अफवाह फैली हुई है वह अगर बिलकुल निराधार नहीं है तो हम ऐसी आशा कर सकते हैं कि १० नवम्बर हमारी बैठकका -- यहाँ मेरा मतलब गोलमेज परिषद्की बैठकसे भी है -- अन्तिम दिन होगा, और अगर बात ऐसी हो -- मैं आशा करता हूँ कि बात ऐसी ही होगी -- तो कुछ तफसीलोंके सम्बन्धमें निर्णय लेना शेष रह जायेगा और शायद किन्हीं बुनियादी सिद्धान्तोंके सम्बन्धमें भी। उसके लिए कोई-न-कोई व्यवस्था तो करनी ही होगी। उस हालतमें उस समितिकी नियुक्तिका अनुमोदन करना उचित हो सकता है जिसका सुझाव लॉर्ड पीलने दिया है और जिसकी नियुक्ति, लगता है, महामहिमकी सरकार भी करना चाहती है। अगर ऐसा कर दिया जाये तो फिर मेरे अपनी आपत्तियोंपर आग्रह करनेकी कोई जरूरत नहीं रह जायेगी। लेकिन तब भी मैं अपनी आपत्तियाँ बता देना चाहूँगा।

जैसा कि सदस्योंको ज्ञात है, कांग्रेसकी ओरसे यह माँग या दावा पेश किया गया है कि राष्ट्रीय सरकारसे वित्त और राजस्व-विषयक जो दायित्व अपने सिर लेनेको कहा जायेगा, उनकी निष्पक्ष जाँच कराई जानी चाहिए। कांग्रेसके प्रतिनिधिकी हैसियतसे मैं यदि ऐसा कहूँ कि इन दायित्वोंका बँटवारा कर दिया जाये और इनके बँटवारेके लिए विशेषज्ञोंकी एक समिति बुलाई जाये तो यह तो उलटी गंगा बहाना होगा, क्योंकि मैं जानता हूँ कि किसी-न-किसी अवस्थामें मैं खुद इन दायित्वोंके खिलाफ ही आपत्ति करूँगा। यदि इस समितिको यह मालूम होगा कि ये दायित्व जितने भारी आज प्रतीत होते हैं उतने भारी नहीं हैं तो उनका बँटवारा दूसरे ढंगसे होगा; या अगर ये दायित्व बहुत सख्त हैं और उनमें एक रुपया भी इधर-उधर नहीं किया जा सकता तो बँटवारेके स्वरूपपर भी इसका प्रभाव पड़ेगा। इसलिए उस

समितिकी कार्यवाहीके परिणामोंके बारेमें मेरे मनमें बहुत ही गम्भीर आशंकाएँ हैं और उस हालतमें कांग्रेसकी ओरसे मेरे लिए जो कार्रवाई करना उचित हो जायेगा उसके विषयमें भी मेरे मनमें ऐसी ही आशंकाएँ हैं।

मेरी दूसरी आपत्ति यह है कि यद्यपि उस समितिका कार्य-क्षेत्र सीमित होगा; फिर भी वास्तवमें वह वह काम करेगी जो राष्ट्रीय सरकार या संघ-सरकारको करना चाहिए। अगर महामहिमकी सरकार इस सम्बन्धमें आश्वस्त न हो कि संघ-सरकार राजस्वके उन साधनोंसे, जिन्हें संयुक्त साधन माना जायेगा, अपने दायित्वोंका निर्वाह कर पायेगी, तो निश्चय ही राष्ट्रीय सरकारके सिरपर आनेवाले उचित दायित्वोंका निर्वाह कर सकनेकी उसकी क्षमताके प्रति उसे आश्वस्त करानेके और भी तरीके हैं। मेरी विनम्र सम्मतिमें, इस तरहकी समितिके द्वारा यह काम नहीं किया जा सकता।

राजस्वके सर्वसामान्य साधनोंके सम्बन्धमें मोटे तौरपर अपनी सहमति व्यक्त करते समय निश्चय ही मेरे मनमें यह बात थी कि मुझे नमक-कर — इसका उल्लेख मैं केवल एक उदाहरणके तौरपर कर रहा हूँ — के पूर्णरूपसे उठा लिये जानेकी माँग स्वीकार करवा सकना चाहिए; लेकिन अन्य करोंके सम्बन्धमें भी मुझे अपने-आपको बाँध नहीं लेना चाहिए। मैं जानता हूँ कि ऐसा मैं कानूनन नहीं कर रहा हूँ; लेकिन अगर समिति कोई सिफारिश करती है या अगर उसमें बताये गये करोंकी अपरिवर्त्तनीयताके आधारपर कोई अनुमान लगाया जाता है तो इस मामलेमें भी मुझे मानना चाहिए कि मैं यहाँ जिस उद्देश्यका प्रतिनिधित्व कर रहा हूँ, उसके साथ मैंने न्याय नहीं किया।

इसलिए इन तीन कारणोंसे इस समितिकी नियुक्तिपर सहमति देनेके सम्बन्धमें मेरे मनमें गम्भीर आशंकाएँ हैं; क्योंकि उसपर सहमति देकर तो मैं प्रसंग आनेपर बुनियादी ढंगके एतराज पेश करनेकी सुविधासे वंचित हो जाऊँगा। इसलिए कांग्रेसके प्रतिनिधिके रूपमें मुझे जिस बातसे सन्तोष होगा वह यह है कि इस मामलेको पूरी तरहसे राष्ट्रीय सरकारके जाँचने-परखने और निर्णय करनेके लिए छोड़ दिया जाये। इस समय तो महामहिमकी सरकारके लिए इतना काफी होना चाहिए कि वह स्थिति-को जान ले और पूरी तरहसे आश्वस्त महसूस करे, और वह आश्वस्त महसूस करे, इसके लिए उसे कानूनी अथवा अन्य प्रकारका जो भी आश्वासन चाहे, वह प्राप्त करनेका अधिकार है। लेकिन इस नाजुक मामलेको (मेरे लिए यह नाजुक मामला ही है) राष्ट्रीय सरकारके निर्णयार्थ छोड़ देना चाहिए। अगर यह समिति इस मुद्देपर तत्काल कोई मत प्रकट करना चाहे तो उक्त कारणोंसे मुझे भी अपनी आपत्तियोंको स्वीकार किये जानेका आग्रह करना ही पड़ेगा। अन्यथा इस खयालसे कि हम इस मामलेमें सर्वसम्मत निर्णय ले सकें, मैं यह सुझाव दूँगा कि अभी इस मामलेको छोड़ दिया जाये ताकि जबतक हम अपने प्रयत्न समाप्त करें तबतक अपना-अपना मन स्थिर करनेकी दृष्टिसे ज्यादा अच्छी स्थितिमें पहुँच सकें। . . .

सर तेजबहादुर सप्रू : मैं यह मान लेता हूँ कि लॉर्ड महोदयका कहना यह है कि तथ्योंका आकलन करनेवाली यह समिति रिपोर्टमें निर्धारित सिद्धान्तोंके अनुसार केवल तथ्योंका आकलन ही करेगी ?

लॉर्ड पील : हाँ, ऐसा ही है।

सर तेजबहादुर सप्रू : जब बात ऐसी है तो फिर मुझे कोई आपत्ति नहीं है, लेकिन श्री गांधी और श्री जिन्नाकी तरह मैं भी चाहूँगा कि अन्तिम निर्णयपर पहुँचनेके लिए अपनाये तरीकेके बारेमें मेरी शंका दूर कर दी जाये, क्योंकि श्री जिन्ना द्वारा यह सवाल उठाये जानेके बाद मैं यह मानता हूँ कि रिपोर्ट पेश किये जानेके तुरन्त बाद निर्णय कर लेनेका कोई इरादा नहीं था, बल्कि मंशा यह था कि उसके बाद अस्थायी तौरपर कुछ प्रस्ताव तय किये जायेंगे और वे प्रस्ताव समिति अथवा पूरी परिषद्के सामने रखे जायेंगे अथवा अन्तिम निर्णयपर पहुँचनेके लिए आप कोई अन्य व्यवस्था करेंगे। अगर बात ऐसी हो तो फिर मुझे कोई आपत्ति नहीं है।

श्री गांधी : लेकिन स्पष्ट ही उसमें उन सिद्धान्तोंका तो खयाल रखा ही जायेगा जिनकी रूपरेखा स्वयं लॉर्ड पीलने बताई है।

सर तेजबहादुर सप्रू : जहाँतक दूसरी समितिका सम्बन्ध है, उसपर मुझ कोई आपत्ति नहीं है।

अध्यक्ष : मेरा खयाल है, सभी पक्षोंकी सूझबूझ और सद्भावनाके परिणामस्वरूप अब स्थिति यह बनी है कि हम एक समाधानपर पहुँच गये हैं, जो काम चलानेके लिए अच्छा समाधान है; और इस सुखद परिणामके लिए हम लॉर्ड पील तथा उनके सहयोगियोंके बड़े आभारी हैं। मैं श्री गांधीकी उज्रदारीकी कद्र करता हूँ और समितिकी कार्यवाहीमें उसका उल्लेख किया जायेगा, और इसी तरह मैं डॉ० अम्बेडकरकी आपत्तिकी भी कद्र करता हूँ। फिर भी, इसके कारण हम ऐसा नहीं करने जा रहे हैं कि इस समाधानको, जो हमारे कामके लिए बड़ा सहायक है, स्वीकार न करें। हमने अपने भावी कार्यकी दिशामें एक बहुत बड़ा कदम उठाया है। हम अपनी रिपोर्ट इसी आशयको ध्यानमें रखकर तैयार करेंगे।

जो भी हो, मैं लॉर्ड पील तथा उप-समितिके प्रति अपनी तथा आपकी ओरसे भी व्यक्तिगत रूपसे आभार प्रकट करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबल कान्फरेंस (सेकेंड सेशन) : प्रोसीडिंग्स ऑफ फडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐंड माइनॉरिटीज कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ २५२-५५

१४४. पत्र : सर फिलिप हार्टोगको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, पश्चिमी
२३ अक्टूबर, १९३१

प्रिय मित्र,

आपने अपने पत्रपर — बेशक भूलसे ही — अपने हस्ताक्षर नहीं किये हैं, लेकिन चूँकि पता पूरी तरह लिख दिया गया है, इसलिए मैं आशा कर रहा हूँ कि यह पत्र आपको मिल जायेगा।

आप यह तो मानेंगे ही कि मैं पहलेसे मालूम किये बिना एकदम ही तारीखें नहीं बता सकता था, लेकिन चूँकि आप इस पूरे प्रश्नका अध्ययन खुशी-खुशी करनेको तैयार हैं, इसलिए मैं 'यंग इंडिया' के जिन अंकोंमें ये लेख[1] छपे थे उनका पता लगाकर आपको आवश्यक सन्दर्भ-सामग्री भेज दूँगा। मैं यह पता लगानेकी भी कोशिश करूँगा कि मैंने पंजाबके बारेमें जो निष्कर्ष निकाले हैं, उनके अलावा अन्य प्रान्तोंके सम्बन्धमें क्या सिद्ध किया जा सकता है। फिलहाल तो पंजाब और बर्माके दृष्टान्तोंके आधारपर अन्य प्रान्तोंके सम्बन्धमें निष्कर्ष निकालनेमें मुझे कोई कठिनाई दिखाई नहीं देती। गत दस-पाँच वर्षोंमें पंजाबमें चाहे जितनी प्रगति हुई हो, उससे उस दलीलमें कोई फर्क नहीं पड़ता जो मैंने आपके सामने पेश की है।

कश्मीरके बारेमें तो, जैसा मैंने आपके प्रश्नके उत्तरमें कहा था, मैं अनुमान ही लगा रहा था, लेकिन इस प्रश्नमें चूँकि आपकी इतनी ज्यादा रुचि है, इसलिए मैं वहाँ शिक्षाकी वास्तविक अवस्थाका पता लगानेकी कोशिश करूँगा।

आप जो निश्चयपूर्वक यह मानते हैं कि अगर मेरे तर्कमें कोई दोष होगा या मेरे बताये तथ्य गलत होंगे, तो मैं तत्काल भूल सुधार कर लूँगा, वह बिलकुल सही है, और जहाँ मैं अपनी बातोंकी सचाईके बारेमें और अधिक प्रमाण ढूँढ़नेकी कोशिश करूँगा, वहाँ आपसे भी यह अपेक्षा रखूँगा कि ऐसी सारी जानकारी जो आपके पास हो और जिससे मुझे वास्तविकताको समझनेमें सहायता मिले आप मुझे भेजनेकी कृपा करेंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९३९५) से; सौजन्य : इंडिया ऑफिस पुस्तकालय

१. इन लेखोंमें पंजाब प्रशासनकी रिपोर्टसे पंजाबमें शिक्षाकी स्थितिसे सम्बन्धित आँकड़े उद्धृत किये गये थे; देखिए "भाषण : चैथम हाउसमें", २०-१०-१९३१। सर हार्टोगने गांधीजी के इस दावेके बारेमें सन्देह व्यक्त किया था कि ब्रिटिश भारतमें पिछले पचास वर्षोंमें साक्षरताका अनुपात घटा है।

१४५. भेंट: रायटरके प्रतिनिधिको

लन्दन
२३ अक्टूबर, १९३१

आज एक विशेष भेंटमें रायटरके प्रतिनिधिने श्री गांधीसे लन्दनमें प्रकाशित इस खबरके बारेमें प्रश्न पूछा कि श्री गांधीने पण्डित जवाहरलाल नेहरूको तार भेजा है कि गोलमेज परिषद्से कुछ भी अपेक्षा नहीं की जा सकती।[1] उत्तरमें श्री गांधीने कहा कि तारमें तो मैंने वह बात कही है जो मुझे महसूस होती है, लेकिन यह याद रखना चाहिए कि मैंने वह तार पण्डित जवाहरलालके उस तारके उत्तरमें भेजा था जिसमें उन्होंने संयुक्त प्रान्तमें कृषि-भूमि और लगान वगैरहको लेकर चल रहे झगड़ेका विस्तृत वर्णन किया था और मेरे तारका सम्बन्ध उसीसे था।

रायटरके प्रतिनिधिने जब यह पूछा कि क्या इस तारका ऐसा मतलब निकाला जा सकता है कि वे गोलमेज परिषद्की सफलताकी कोई आशा नहीं रखते तो श्री गांधीने कहा कि स्पष्ट ही इसमें कहीं कोई गलतफहमी है। पण्डित जवाहरलाल नेहरूको भेजे तारका गोलमेज परिषद्से कोई सम्बन्ध नहीं है। और उसका सम्बन्ध केवल संयुक्त प्रान्तकी स्थितिसे है।

जो भी हो, जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मैं तो अपनी ओरसे उसे सफलताका पूरा मौका दे रहा हूँ। मैं जहाँ कहीं सहायता कर सकता हूँ, करनेकी कोशिश कर रहा हूँ और मार्गमें कोई बाधा उपस्थित नहीं कर रहा हूँ। अगर परिषद् विफल हुई तो वह खुद उसीमें मौजूद कमजोरीके कारण होगी और इस कारण कि, जैसा मैंने बताया है, ब्रिटिश सरकार कांग्रेसकी माँगके प्रति कोई अनुकूल प्रतिक्रिया नहीं व्यक्त कर रही है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २४-१०-१९३१

१. देखिए "तार: जवाहरलाल नेहरूको", १६-१०-१९३१ के पश्चात्।

१४६. संघ-संरचना समितिकी बैठककी कार्यवाहीके कुछ अंश

लन्दन
२३ अक्टूबर, १९३१

श्री गांधी : लॉर्ड चान्सलर तथा साथी प्रतिनिधिगण, मुझे इस विषयपर[1] जिसे इस वाद-विवादने बहुत प्राविधिक बना दिया है, बोलनेमें बहुत हिचकिचाहट मालूम हो रही है; परन्तु मैं अनुभव करता हूँ कि आपके प्रति तथा कांग्रेसके प्रति, जिसका मैं प्रतिनिधि हूँ, मेरा एक कर्त्तव्य है। मैं जानता हूँ कि कांग्रेसके संघ-न्यायालयके प्रश्नपर कुछ निश्चित विचार हैं और मुझे लगता है कि वे विचार यहाँ अनेक प्रतिनिधियोंको अप्रिय मालूम होंगे। वे विचार चाहे जैसे भी हों, यह देखते हुए कि वे एक जिम्मेदार संस्थाके विचार हैं, उन्हें आपके सामने रख देना मैं आवश्यक मानता हूँ।

मैं देखता हूँ कि इन वाद-विवादोंका आधार पूरी तरह नहीं तो बहुत हदतक हमारा स्वयं अपने प्रति यह अविश्वास है कि राष्ट्रीय सरकार अपना कारोबार निष्पक्ष रूपसे नहीं चला सकेगी। साम्प्रदायिक उलझन भी हमारी बहसको प्रभावित कर रही है। दूसरी ओर कांग्रेस अपनी सारी नीतिका आधार इस श्रद्धा तथा विश्वासपर रखती है कि जब अधिकार मिलेंगे तब हमें अपनी जिम्मेदारियोंका भी ज्ञान हो जायेगा और साम्प्रदायिक पूर्वग्रह अपने-आप मिट जायेंगे। परन्तु यदि ऐसा न भी हो तो भी जिन बड़ेसे-बड़े खतरोंकी कल्पना की जा सकती है, कांग्रेस उन्हें उठानेके लिए तैयार है, क्योंकि ऐसे खतरे उठाये बिना हम वास्तविक उत्तरदायित्वको सँभालने योग्य न हो सकेंगे। जबतक हमारे दिमागमें यह भाव बना रहेगा कि हमें सलाह तथा नाजुक परिस्थितिमें अपना काम चलानेके लिए किसी बाहरी शक्तिके सहारे रहना है, मेरे विचारसे, तबतक यही समझना चाहिए कि हमें (स्वराज्यके अर्थमें) कोई जिम्मेवारी नहीं दी गई है। यह बात भी उलझनमें डालनेवाली है कि हम बिना यह जाने कि हमारा ध्येय क्या है, इस विषयपर बहस करनेका प्रयत्न कर रहे हैं। यदि प्रतिरक्षा-विभाग स्वराज्य सरकारके मातहत न रहे तो मैं एक राय दूँगा, परन्तु यदि वह हमारे अधिकारमें रहे तो मेरी राय दूसरी होगी। मैं ऐसा मानकर चल रहा हूँ कि यदि हमें वास्तविक जिम्मेदारी मिलनेवाली है तो प्रतिरक्षा-विभाग हर तरहसे हमारे नियन्त्रणमें, राष्ट्रीय नियन्त्रणमें रहेगा।

डॉ० अम्बेडकरने जो शंका उठाई है, उसमें उनके साथ मेरी भी पूर्ण सहानुभूति है। उच्चतम न्यायाधिकरणका निर्णय प्राप्त करना तो बहुत अच्छा है; लेकिन अगर उस न्यायाधिकरणके आदेशका उसकी कचहरीके बाहर कोई महत्त्व ही न हो तो ऐसा न्यायाधिकरण सारे राष्ट्र और सारे संसारके उपहासका पात्र होगा। फिर

१. संघीय न्यायालयपर।

उस आदेशका क्या होगा? श्री जिन्नाने जो कहा वह मेरी समझमें आ गया —— अर्थात् यह कि इस कार्यके लिए सैनिक शक्ति होगी; परन्तु उस हालतमें उस न्यायाधिकरणके आदेशका पालन करवानेवाला ताज होगा। तब मैं कहूँगा कि उच्च न्यायालय अथवा संघ-न्यायालय भी ताजके ही अधीन क्यों न रहे। मेरे विचारसे यदि हमें जिम्मेदारी मिलनी है तो सर्वोच्च न्यायालयको स्वराज्य सरकारके ही मातहत रहना पड़ेगा; और इसलिए उस आदेशको अमलमें लानेकी व्यवस्था भी उसीको करनी पड़ेगी। खुद मुझे तो वैसा कोई भय नहीं है जैसा डॉ० अम्बेडकरको है; परन्तु मेरी समझमें उनकी आपत्ति बहुत उचित है और मैं भी यह मानता हूँ कि जो अदालत न्याय करे उसे यह भी भरोसा होना चाहिए कि जिनपर उसके फैसलोंका असर पड़ता है वे उनको मानेंगे। इसलिए मैं राय दूँगा कि न्यायाधीशोंको यह अधिकार भी होना चाहिए कि वे फैसलोंसे सम्बन्धित बातोंके ठीक नियमनके लिए नियम भी बना सकें। स्वभावतः उन फैसलोंपर अमल करवाना अदालतका काम नहीं होगा, बल्कि वह कार्यकारिणीका काम होगा, परन्तु कार्यकारिणीको इस अदालतके बनाये हुए नियमोंके अनुसार ही कार्य करना होगा।

किसी भी तरह हो, हम कुछ ऐसा मान रहे हैं कि इस न्यायालयके गठनसे सम्बन्धित छोटी-मोटी सभी बातोंकी पूर्त्ति संविधान द्वारा होगी। मैं विनयपूर्वक इस विचारसे अपनी पूर्ण असहमति जाहिर करता हूँ। मेरे विचारसे यह संविधान हमें संघ-न्यायालयका खाका बना देगा और उसका अधिकार-क्षेत्र निश्चित कर देगा, परन्तु बाकी तमाम बातें संघ-सरकारपर छोड़ दी जायेंगी कि वह उनको पूरा कर ले। मैं इस बातको कभी खयालमें नहीं ला सकता कि यह संविधान इन बातोंको भी तय कर देगा कि न्यायाधीशोंको कितने साल नौकरी करनी है, या उनको ७० वर्षकी अथवा ९५ या ९० अथवा ६५ वर्षकी अवस्था होनेपर इस्तीफा देना या अवकाश प्राप्त करना है। मैं मानता हूँ कि ये बातें तो संघ-न्यायालय ही निश्चित करेगा। इसलिए मैं एक बिलकुल नया तरीका पेश करूँगा —— आप उसे चाहे जिस लायक समझें। वह तरीका यह है कि संविधान शुरुआतके तौरपर न्यायाधीशोंकी व्यवस्था कर दे और यह बता दे कि वे एक निश्चित कालतक कार्य करेंगे ताकि स्वराज्य सरकारको उस संघ-न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालयका —— उसे चाहे जो नाम दिया जाये —— बोझ न उठाना पड़े जो देशकी जरूरतोंको पूरा न कर सके।

हम प्रत्येक वाक्यके अन्तमें ताज (क्राउन) शब्द अवश्य ले आते हैं। मुझे साफ बता देना चाहिए कि कांग्रेसकी धारणाके अनुसार तो ताजका कोई सवाल ही नहीं उठता। भारतवर्ष तो पूर्ण स्वाधीनता चाहता है और यदि वह पूर्ण स्वाधीनताका उपभोग करने लगे तो उस स्थितिमें जो कोई भी सर्वोच्च सत्ताधिकारी होगा वही न्यायाधीशोंकी नियुक्ति तथा आज जो अनेक मामले ताजके अधीन हैं, उन सबके लिए जिम्मेवार होगा।

कांग्रेसका यह मूलभूत सिद्धान्त है कि संविधानका रूप चाहे जैसा हो, भारतमें हमारी अपनी प्रिवी कौंसिल हो। प्रिवी कौंसिलको अगर वास्तवमें सबसे अधिक

महत्त्वकी बातोंमें निर्धन लोगोंकी रक्षा करनी है, तो उसके फाटक देशके दीनातिदीन जनोंके लिए भी खुले रहने चाहिए, और मेरे विचारमें यदि यहीं की प्रिवी कौंसिल महत्त्वपूर्ण विषयोंमें हमारी किस्मतका फैसला करती रही तो ऐसा होना असम्भव है। इस सम्बन्धमें भी मैं अपने यहाँके न्यायाधीशोंकी बुद्धिमत्तापूर्ण तथा सर्वथा निष्पक्ष फैसला देनेकी योग्यतामें पूर्ण विश्वास रखनेकी सलाह दूँगा। मैं जानता हूँ कि बड़े-बड़े परिवर्त्तन करनेका मतलब बड़ी-बड़ी जोखिमें उठाना है। यहाँकी प्रिवी कौंसिल एक प्राचीन संस्था है, जिसकी बड़ी प्रतिष्ठा तथा बड़ा मान है और यह ठीक भी है। परन्तु इस प्रतिष्ठाको स्वीकार करते हुए भी मैं कभी यह विश्वास नहीं कर सकता कि हम ऐसी एक निजी प्रिवी कौंसिल नहीं बना सकेंगे जिसे सर्वत्र सम्मानकी दृष्टिसे देखा जाये। मैं नहीं समझता कि चूँकि इंग्लैंडके पास बहुत ही अच्छी संस्थाएँ हैं, इसलिए हमें उनसे बँधे रहना चाहिए। यदि हमें इंग्लैंडसे कुछ सीखना है तो यही कि हम स्वयं भी ऐसी संस्थाएँ स्थापित कर सकें, अन्यथा हम जिस राष्ट्रके प्रतिनिधि होनेका दावा करते हैं, उसकी उन्नतिकी कोई आशा नहीं है। इसलिए मैं आप सबसे प्रार्थना करूँगा कि इस समय हम अपने-आपमें पूर्ण विश्वास रखें। हमारा प्रारम्भ भले ही छोटा हो, परन्तु यदि हमारे हृदयोंमें सचाई और ईमानदारीके साथ फैसले देनेकी शक्ति है तो फिर इस बातसे कोई फर्क नहीं पड़ता कि हमारे देशमें, इंग्लैंडके न्यायाधीश जिस न्याय-परम्पराका दावा करते हैं और जिसपर वे सारे संसारके सामने गर्व करते हैं, वैसी न्याय-परम्परा नहीं है।

ऐसी राय रखते हुए, मैं महसूस करता हूँ कि इस संघ न्यायालयका अधिकार-क्षेत्र अधिकसे-अधिक विस्तृत होना चाहिए और वह केवल उन्हीं मामलोंका फैसला न करे जिनका संघ-कानूनसे सम्बन्ध है। संघ-कानून जरूर रहेंगे, परन्तु उसको इतना अधिकार होना चाहिए कि भारतके किसी भी भागसे आनेवाले मामलेपर वह फैसला दे सके। अब यह प्रश्न है कि देशी नरेशोंकी प्रजाकी क्या स्थिति रहेगी और उनका क्या होगा। इस विषयमें देशी नरेशोंका जो-कुछ कहना हो उसका महत्त्व तो सर्वोपरि होगा ही, फिर भी मैं बड़े सम्मान तथा बड़ी हिचकिचाहटके साथ कहूँगा कि यदि इस परिषद्‌का कुछ फल निकलना है तो मुझे आशा है कि अन्तमें कोई ऐसी बात जरूर होगी जो सारे भारत तथा सारे भारतवासियोंके लिए एक-सी होगी, फिर चाहे वे रियासतोंके रहनेवाले हों या भारतके अन्य भागोंके। यदि हम सबमें कोई समानता है तो स्वभावतः सर्वोच्च न्यायालय उन अधिकारोंका रक्षक हो जिन्हें हम समान रूपसे सबके अधिकार मान सकते हैं। मैं नहीं कह सकता कि ये अधिकार क्या-क्या होने चाहिए। यह देशी नरेश ही बतला सकते हैं कि वे अधिकार क्या हो सकते हैं और क्या नहीं हो सकते। चूँकि देशी नरेश अपने-अपने घरानोंके ही प्रतिनिधि बनकर नहीं आये हैं बल्कि उन्होंने अपनी प्रजाके प्रतिनिधित्वकी भी बड़ी भारी जिम्मेवारी अपने सिरपर ले रखी है, इसलिए मैं विनम्रतापूर्वक लेकिन पूरे जोरसे उनसे यह अनुरोध करूँगा कि वे स्वयं ही कोई ऐसी योजना लेकर आगे आयें जिससे उनकी प्रजाको यह लगे कि यद्यपि इस परिषद्‌में उनका कोई प्रत्यक्ष प्रतिनिधि

नहीं है, फिर भी उनकी इच्छाओंको इन नेक देशी नरेशोंके ही द्वारा पर्याप्त अभिव्यक्ति मिलेगी।

जहाँतक तनख्वाहका सवाल है, आप लोग मेरी बातपर स्वभावतः हँसेंगे, परन्तु कांग्रेसका — जो धनकी दृष्टिसे बौने, बिलकुल ही गरीब लोगोंके राष्ट्रकी प्रतिनिधि है — विश्वास है कि इस सम्बन्धमें वर्त्तमान धनकुबेर इंग्लैंडसे स्पर्द्धा करना असम्भव है। भारतवर्ष, जिसकी औसत आय २ पैंस प्रतिदिन है, वैसी तनख्वाहोंको बरदाश्त नहीं कर सकता जो यहाँ दी जाती हैं। मैं समझता हूँ कि यदि हमें भारतमें स्वराज्य चलाना है, तो हमें इस बातको भूलना पड़ेगा। जबतक ब्रिटेनकी संगीनें वहाँ मौजूद हैं तबतक भले ही इन दीन मनुष्योंको निचोड़कर दस हजार, पाँच हजार या बीस हजार रुपये मासिक वेतन दिया जाता रहे। मगर मैं नहीं समझता कि मेरा देश इतना गिर गया है कि वह भारतकी सचाईके साथ सेवा करनेवाले ऐसे लोग पर्याप्त संख्यामें उत्पन्न न कर सके जो किसी हदतक करोड़ों आम लोगोंसे मिलता-जुलता जीवन व्यतीत करते हुए भी नेकी और सचाईसे भारतकी अच्छी सेवा कर सकें। मैं इस बातको स्वीकार नहीं कर सकता कि कानूनी मेधावाले लोग ईमानदार रहें, इसके लिए कोई बड़ी कीमत देनेकी आवश्यकता है। यहाँ मुझे मोतीलाल नेहरू, चित्तरंजन दास, मनमोहन घोष, बदरुद्दीन तैयबजी आदिकी याद हो आती है, जिन्होंने अपनी कानूनी लियाकत बिलकुल मुफ्त बाँटी और बड़ी वफादारीके साथ अपने देशकी बहुत ही अच्छी सेवा की। आप शायद मुझे ताना दें कि वे लोग इस कारण ऐसा कर सके थे कि वे अपने व्यवसायमें बड़ी मोटी-मोटी फीस लेते थे। मैं इस तर्कको इस कारण नहीं मान सकता कि मनमोहन घोषके सिवा मेरा और सबसे परिचय रहा है। ऐसा नहीं कहा जा सकता कि पासमें अधिक पैसा होनेकी वजहसे इन लोगोंने भारतको आवश्यकता पड़नेपर अपनी प्रतिभाका लाभ उदारतापूर्वक दिया। उसका उनके ऐशो-आरामसे रहनेकी सामर्थ्यसे कोई सम्बन्ध नहीं था। मैंने उनको बड़े सन्तोष से गरीबोंकी जिन्दगी बिताते देखा है। मैं आपको ऐसे कई प्रसिद्ध वकीलोंके नाम बता सकता हूँ जो यदि राष्ट्र-कार्यमें न लग गये होते तो आज देशके विभिन्न हिस्सोंमें उच्च न्यायालयोंके न्यायपीठोंपर आसीन होते। इसलिए मुझे पूर्ण विश्वास है कि जब हम अपने देशका कारोबार खुद चलाने लगेंगे तो हम भारतके करोड़ों लोग जिस दयनीय दशामें पड़े हुए हैं उसका ध्यान रखते हुए देशभक्तिके भावोंसे प्रेरित होकर उसे चलायेंगे।

मैं एक बात और कहकर समाप्त करूँगा। यह देखते हुए कि कांग्रेसके विचारसे यह संघ-न्यायालय अथवा सर्वोच्च न्यायालय — आप इसे दोमें से जो भी नाम दें — देशका सबसे ऊँचा न्यायाधिकरण होगा, और अपने मामले लेकर भारतका कोई भी निवासी उससे आगे नहीं जा सकता, मेरी रायमें उसका अधिकार-क्षेत्र भी अपरिमित होगा। जहाँतक संघीय मामलोंका सम्बन्ध है, उसका अधिकार-क्षेत्र, देशी नरेश जितना चाहेंगे, उसी सीमातक जायेगा। परन्तु मैं यह खयाल कभी नहीं कर सकता कि हमारे यहाँ दो सुप्रीम कोर्ट रहें — एक तो केवल संघ-कानूनोंके लिए और दूसरा

उन अन्य सब बातोंके लिए जो संघ-प्रशासन या संघ-सरकारके अन्तर्गत न आती हों। इस समय जैसी बातें हो रही हैं उससे मुझे लगता है कि संघ-सरकार कमसे-कम विषयोंसे ताल्लुक रखेगी और अधिक महत्त्वपूर्ण बातें संघ-शासनसे बाहर रहेंगी। संघ-शासनसे बाहरकी बातोंपर यदि यह सर्वोच्च न्यायालय फैसला नहीं देगा तो और कौन देगा? इसलिए इस सर्वोच्च न्यायालय अथवा संघ न्यायालयका दोहरा अधिकार होगा और यदि आवश्यकता हो तो तिहरा भी। जितनी अधिक शक्ति हम इस संघ-न्यायालयको देंगे, मैं समझता हूँ इसके प्रति उतने ही अधिक विश्वासका संचार हम संसारमें तथा स्वयं अपने राष्ट्रमें कर सकेंगे।

मुझे खेद है कि मैंने परिषद्का इतना अधिक बहुमूल्य समय लिया, परन्तु मैंने अनुभव किया कि सर्वोच्च न्यायालयके प्रश्नपर बोलनेकी अनिच्छा रखते हुए भी मैं उन विचारोंको आपके सामने रख दूँ जो हम कांग्रेस-जनोंमें से बहुत-से लोग वर्षोंसे रखते चले आये हैं और जिनको हम, यदि हमारा बस चले तो भारतके एक कोनेसे दूसरे कोनेतक फैलाना चाहेंगे। मैं जानता हूँ कि मुझे किन कठिनाइयोंका सामना करना पड़ रहा है। लगभग सारे प्रसिद्ध वकील मेरे खिलाफ हैं, और जहाँतक इस न्यायालयकी तनख्वाहों तथा अधिकारोंका सवाल है, शायद देशी नरेश भी मेरे विरोधी हैं। लेकिन संघ-न्यायालयसे सम्बन्धित बातोंके बारेमें कांग्रेसके तथा अपने दृढ़ विचारोंको यदि मैं आपके सामने न रखता तो कांग्रेसके प्रति तथा आपके प्रति भी अपने कर्त्तव्यसे विमुख हुआ माना जाता।

अध्यक्ष: हम इस बातके लिए महात्मा गांधीके बहुत आभारी हैं कि उन्होंने बहुत साफ शब्दोंमें अत्यन्त निर्भीकतापूर्वक अपना विचार व्यक्त किया। हम यहाँ परस्पर विचारोंका आदान-प्रदान करने और उनके सम्बन्धमें दी गई दलीलोंको सुननेके लिए ही एकत्र हुए हैं, परिषद्का उद्देश्य यही है। मैं उनसे यह कहनेकी इजाजत चाहूँगा कि जब आप जानते हैं कि कोई क्या चाहता है तभी आप उसको सन्तोष देनेकी पूरी कोशिश कर सकते हैं और निस्सन्देह, वह भी आपको सन्तोष देनेकी पूरी कोशिश करेगा। कठिनाई तो उस आदमीके साथ सुलहकी बातचीत करनेमें होती है जो यही नहीं जानता कि वह क्या चाहता है। श्री गांधीने इस प्रकार अपने विचार हमारे सामने रखे, इसके लिए मैं उनका बहुत आभारी हूँ। मेरी इच्छा बराबर यही रहेगी कि मैं उनकी माँगोंको, बल्कि वास्तवमें सबकी माँगोंको, पूरा करनेकी कोशिश करूँ और उसके लिए जहाँतक जाना सम्भव हो, जाऊँ। मुझे पूरा विश्वास है कि संघ-संरचना समितिकी पूरी कार्यवाहीके दौरान यह भावना बनी रहेगी। फिलहाल मैं श्री गांधीको इसके लिए व्यक्तिगत रूपसे धन्यवाद देता हूँ कि उन्होंने इस विषयमें अपने विचार इतने साफ शब्दोंमें और ऐसी निर्भीकतासे व्यक्त किये।

श्री जिन्ना: महात्मा गांधीने मेरी कही बातका एक बार उल्लेख किया था। मैं उसे समझ नहीं पाया।

श्री गांधी : क्या नतीजा होगा, यह बताकर आपने डा० अम्बेडकरको धर्मसंकटमें डाल दिया था और उनके मनमें अपनी ही कही बातोंके स्वाभाविक परिणामोंके बारेमें आशंका पैदा हो गई थी। इसलिए मैंने आपके नामका उल्लेख किया और कहा कि अगर भारतको दो हिस्सोंमें बाँट दिया जाता है जिनमें से एकका शासन ताजकी ओरसे किया जायेगा और दूसरेपर खुद भारतका शासन रहेगा तो हमारे दो पाटोंके बीच पड़ जानेकी सम्भावना है।

श्री जिन्ना : मैंने कोई मत तो व्यक्त किया नहीं था।

श्री गांधी : हाँ, यह तो मैं जानता हूँ कि आपने कोई मत व्यक्त नहीं किया। लेकिन आपने ऐसा कहा कि "मैं मानता हूँ, प्रतिरक्षा ताजके मातहत है।"

श्री जिन्ना : मैंने यह नहीं कहा कि "मैं मानता हूँ।" मैंने यह कहा था कि जहाँतक संघ-संरचना समितिकी रिपोर्ट जाती है, ऐसा समझा जाता है कि प्रतिरक्षा ताजके मातहत है। मैंने कोई मत व्यक्त नहीं किया।

श्री गांधी : हाँ, यह ठीक है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउण्ड टेबल कांफरेंस (सेकेण्ड सेशन) : प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी एण्ड माइनॉरिटीज़ कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ २६७-६८

१४७. भाषण : विद्यार्थियोंकी सभामें[1]

ईटन
[२३ अक्टूबर, १९३१][2]

इंग्लैंडमें आपका स्थान बहुत महत्त्वपूर्ण है। आपमें से कुछ लोग भविष्यमें प्रधान मन्त्री और सेनापति बनेंगे; और अभी जबकि आपके चरित्रका निर्माण हो रहा है इसलिए आपके हृदयमें प्रवेश करना आसान है, और मैं आपके हृदयमें प्रवेश करनेको उत्सुक हूँ। मैं आपके सामने, परम्परासे आपको जिस झूठे इतिहासकी शिक्षा दी जा रही है, उससे भिन्न कुछ तथ्य रखना चाहूँगा। उच्चाधिकारियोंमें मुझे अज्ञान देखनेको मिलता है। मेरा मतलब ज्ञानके अभावसे नहीं है, बल्कि यह है कि उनका ज्ञान गलत तथ्योंपर आधारित है; और चूँकि मैं आपको साम्राज्य-निर्माताओंके रूपमें नहीं, बल्कि एक ऐसे राष्ट्रके सदस्योंके रूपमें देखता हूँ जो दूसरे राष्ट्रोंका शोषण करना छोड़ चुका होगा और शस्त्र-बल नहीं बल्कि नैतिक बलके जोरपर विश्व-शान्तिका

१. महादेव देसाईकी रिपोर्ट "ईटन और ऑक्सफोर्डमें सप्ताहान्त : भावी साम्राज्य-निर्माताओंके बीच"से उद्धृत।

२. गांधीजी ने अपनी डायरीमें लिखा है कि वे इसी तारीखको रातमें ईटन गये और युवकोंके सामने बोले।

संरक्षक बन चुका होगा, इसलिए मैं आपके सामने सच्चे तथ्य रखना चाहता हूँ। तो इसी सन्दर्भमें मैं आपको पहले यह बताता हूँ कि कमसे-कम जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, हिन्दू पक्ष-जैसी[1] कोई चीज नहीं है, क्योंकि अपने देशकी आजादीके मामलेमें मैं उससे अधिक हिन्दू नहीं हूँ जितने कि आप हैं। हिन्दू पक्ष है जरूर, लेकिन उसे हिन्दू महासभाके प्रतिनिधि पेश कर रहे हैं, जो हिन्दुओंका प्रतिनिधित्व करनेका दावा करते हैं, लेकिन मेरे विचारसे वास्तवमें उनका प्रतिनिधित्व नहीं करते। वे समस्याका राष्ट्रीय समाधान चाहते हैं, लेकिन इसलिए नहीं कि वे राष्ट्रवादी हैं, बल्कि इसलिए कि यह बात उनके अनुकूल पड़ती है। इसे मैं विनाशकारी चाल कहता हूँ और चूँकि वे एक बड़े बहुमतका प्रतिनिधित्व करते हैं, इसलिए उनसे मैं अनुनय-विनय कर रहा हूँ कि वे छोटे समुदायोंको, जो-कुछ वे चाहते हैं, वह सब देनेको आगे आयें और फिर देखें कि वातावरण किस प्रकार बात-की-बातमें साफ हो जाता है। हिन्दुओंका विशाल समुदाय क्या महसूस करता है और क्या चाहता है, यह कोई नहीं जानता, लेकिन चूँकि मैं इतने वर्षोंसे उनके बीच घूमते रहनेका दावा करता हूँ, इसलिए मैं समझता हूँ कि वे इन छोटी-मोटी निरर्थक चीजोंकी परवाह नहीं करते, विधानसभाकी सीटों और प्रशासनिक पदोंके रूपमें मिलनेवाले टुकड़ोंके सवालको लेकर वे तनिक भी चिन्तित नहीं हैं। साम्प्रदायिकताका यह हौआ मुख्यतः शहरोंतक ही सीमित है और ये शहर भारत नहीं हैं। ये तो लन्दन तथा अन्य पश्चिमी नगरोंके ऐसे प्रतिरूप-मात्र हैं जो जाने-अनजाने गाँवोंको चूसते हैं और इंग्लैंडके कमीशन एजेंटोंकी तरह काम करके उनके शोषणमें आपके साझेदार बनते हैं। भारतकी आजादीके उस बड़े मसलेके सामने, जिससे ब्रिटिश मन्त्रिगण अपनी आँखें चुरा रहे हैं, यह साम्प्रदायिक प्रश्न कुछ भी नहीं है। मन्त्रिगण भूल जाते हैं कि असन्तुष्ट और विद्रोही भारतको वे ज्यादा दिनोंतक अपने शिकंजेमें नहीं रख सकते। यह सच है कि हमारा विद्रोह अहिंसात्मक है, लेकिन फिर भी यह विद्रोह तो है ही। यहाँ कुछ समयसे जो रोग भारतीय समाजको खोखला बनाता जा रहा है, भारतकी आजादीका सवाल उससे ज्यादा महत्त्वपूर्ण और ध्यान देने योग्य है; और अगर संविधानके प्रश्नका सन्तोषजनक समाधान हो जाता है तो साम्प्रदायिक समस्या तत्काल मिट जायेगी। ज्यों ही विदेशी शासनरूपी पच्चर देशके अंगसे बाहर निकाला जायेगा, परस्पर विभक्त समुदाय निश्चय ही अपने-आप आपसमें जुड़ जायेंगे। इसलिए हिन्दू पक्ष-जैसी कोई चीज है ही नहीं और अगर है तो उसे त्याग देना चाहिए। इस प्रश्नका अगर आप अध्ययन करेंगे तो आप पायेंगे कि इसमें तो कुछ है ही नहीं और जब उसकी चिढ़ पैदा करनेवाली तफसीलोंपर गौर करेंगे तो बहुत सम्भव है कि आप हमारे बारेमें ऐसा समझने लगेंगे कि ये लोग तो टेम्स नदीमें डूब मरने लायक हैं।

आप मेरी इस बातको परम सत्य मानें कि साम्प्रदायिक प्रश्नका कोई महत्त्व नहीं है और इसपर आपको परेशान होनेकी जरूरत नहीं है। लेकिन अगर आप

१. गांधीजीसे कहा गया था कि जिस प्रकार शौकतअलीने मुसलमानोंका पक्ष प्रस्तुत किया था, उसी प्रकार वे भी हिन्दुओंका पक्ष पेश करें।

इतिहासका अध्ययन करना चाहें तो इस महत्तर प्रश्नका अध्ययन करें कि करोड़ों लोगोंने अहिंसाको अपनानेका निश्चय कैसे किया और किस प्रकार उसका दृढ़तासे पालन किया। मनुष्यका अध्ययन उसके पशु-स्वभावको ध्यानमें रखकर न करें, उसको पशु-संसारके नियमोंका पालन करनेवाला प्राणी मानकर न करें, बल्कि उसका अध्ययन उस समस्त गरिमाके धारकके रूपमें करें जो मानवताकी शोभा है। जो साम्प्रदायिक झगड़ोंमें लगे हुए हैं वे तो किसी पागलखानेके निवासियों-जैसे हैं। आप इस बातका अध्ययन करें कि मनुष्य किसीको तनिक भी कष्ट पहुँचाये बिना कैसे अपने देशकी आजादीके लिए अपने प्राणोंकी बलि चढ़ा देता है। मनुष्यका अध्ययन उसके गरिमामय रूपमें करें, अपने उच्चतर स्वभावके नियमों, प्रेमके नियमोंपर चलनेवाले मनुष्यके रूपमें करें, ताकि बड़े होकर आप अपनी विरासतको बेहतर बना सकें। आपका राष्ट्र हमारे राष्ट्रपर शासन करता है, इसमें आपके लिए गौरवकी कोई बात नहीं हो सकती। किसीने भी अपने-आपको बेड़ियोंमें डाले बिना किसी गुलामको बेड़ीमें नहीं डाला है। कोई भी राष्ट्र खुद पराधीन हुए बिना किसी दूसरे राष्ट्रको पराधीन नहीं रख पाया है। आज इंग्लैंड और भारतके बीच जो सम्बन्ध है, वह अत्यन्त पापमय, अत्यन्त अस्वाभाविक सम्बन्ध है, और मैं आपसे अपने उद्देश्यकी सफलताके लिए आशीर्वाद देनेको इसलिए कहता हूँ कि हम स्वभावतः उस स्वतन्त्रताके पात्र हैं जो हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है और हमने जो तपस्याकी है, जो कष्ट सहे हैं, उनके कारण तो इसपर हमारा दोहरा अधिकार हो जाता है। मैं चाहता हूँ कि बड़े होकर आप अपने राष्ट्रकी कीर्तिमें कुछ ऐसा योगदान करें जैसा अबतक किसीने नहीं किया है। इसका तरीका यह है कि आप इसे शोषणके पापसे मुक्त करके मानवताकी प्रगतिमें हाथ बँटायें।

दूसरा सवाल यह था कि अंग्रेजोंके भारतसे चले जानेके बाद वह अपने लोभी लुटेरे राजाओंकी समस्यासे कैसे निबटेगा? गांधीजी ने युवकोंको आश्वस्त करते हुए कहा कि इन राजाओंसे कोई खतरा नहीं है, लेकिन अगर उनपर पागलपन सवार हुआ तो अंग्रेजोंकी बनिस्बत उनसे निबटना कहीं ज्यादा आसान काम होगा। वैसे तो अपनी कमजोरीके कारण ही कोई शरारत करनेकी हिम्मत नहीं करेंगे। गांधीजी ने यह आश्वासन भी दिया कि भारतका गौरव अंग्रेजोंको वहाँसे निकाल बाहर करनेमें नहीं, बल्कि उन्हें शोषकोंके बजाय ऐसे मित्र बनाकर अपने यहाँ कायम रखनेमें होगा जो जरूरत पड़नेपर भारतके सम्मानकी रक्षा करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १२-११-१९३१

१४८. मिर्जा इस्माइलको लिखा पुर्जा

[२३ अक्टूबर, १९३१ या उसके पश्चात्][1]

अगर इस सवालका कोई सन्तोषजनक हल निकल सके तो यह बहुत बड़ी बात होगी।

मो० क० गां०

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २१८८-९) से।

१४९. भाषण: भारतीय मजलिसमें[2]

ऑक्सफोर्ड
२४ अक्टूबर, १९३१

मुसलमान और सिख, ये सब तो बहुत संगठित हैं। लेकिन अस्पृश्योंके साथ ऐसी बात नहीं है। उनमें राजनीतिक जागृति बहुत कम आई है, और उनके साथ इतना बुरा व्यवहार किया जाता है कि मैं उन्हें खुद उन्हींसे बचाना चाहता हूँ। अगर उन्हें पृथक् निर्वाचन-मण्डल प्राप्त हो जायें तो गाँवोंमें, जो हिन्दू कट्टरपंथिताके गढ़ हैं, उनकी जिन्दगी दूभर हो जायेगी। युगोंसे अस्पृश्योंकी उपेक्षा करते आनेका प्रायश्चित्त तो उच्चवर्गीय हिन्दुओंको करना है। यह प्रायश्चित्त सक्रिय समाज-सुधारके द्वारा और सेवाके बलपर अस्पृश्योंके जीवनको अधिक सह्य बनाकर किया जा सकता है। लेकिन इसका तरीका उनके लिए पृथक् निर्वाचक-मण्डलकी माँग करना नहीं है। उनको पृथक् निर्वाचक-मण्डल देकर तो आप अस्पृश्यों और कट्टरपंथियोंमें वैर-वैमनस्यका बीज बो देंगे। आपको यह समझ लेना चाहिए कि मैं केवल मुसल-मानों और सिखोंके सम्बन्धमें ही, एक अनिवार्य बुराईके रूपमें, विशेष प्रतिनिधित्वके प्रस्तावको बरदाश्त कर सकता हूँ। मेरा निश्चित मत है कि अस्पृश्योंके लिए पृथक्

१. यह मिर्जा इस्माइलके २३ अक्टूबरके पत्रपर लिखा गया था। अपने पत्रमें सर मिर्जा इस्माइलने लिखा था: "पिछली रात मैं आगाखाँसे मिला। उन्होंने कहा कि वे सोमवारको मुसलमानोंके प्रतिनिधि-मण्डलसे मिलकर उनके सामने इस मामलेकी चर्चा करेंगे और इसपर उनके क्या विचार हैं, यह मुझे सूचित कर देंगे। . . . मैं इस सम्बन्धमें आशान्वित हूँ कि इस उलझे सवालका कोई सन्तोषजनक समाधान शायद जल्दी ही निकल आयेगा।"

२. महादेव देसाईकी रिपोर्ट "ईटन और ऑक्सफोर्डमें सप्ताहान्त: भावी साम्राज्य-निर्माताओंके बीच" से उद्धृत। देसाई कहते हैं कि अन्य अवसरोंपर गांधीजी ने इस विषयपर जो बातें कहीं, उनके आधारपर इस रिपोर्टको परिवर्धित कर दिया गया है।

निर्वाचक-मण्डलका सुझाव इस शैतान सरकारकी नई कारस्तानी है। आवश्यकता सिर्फ इस बातकी है कि उनके नाम मतदाता-सूचीमें दर्ज कर लिये जायें और संविधानमें उनके लिए मूलभूत अधिकारोंकी व्यवस्था कर दी जाये। अगर उनके साथ अन्यायपूर्ण व्यवहार हो और उनके प्रतिनिधिको जान-बूझकर न चुना जाये तो उन्हें विशेष चुनाव न्यायाधिकरणके पास जानेका अधिकार होगा, जो उन्हें पूरा संरक्षण प्रदान करेगा। इन न्यायाधिकरणोंको चुने हुए उम्मीदवारका चुनाव रद करके जिसे न चुना गया हो, उसे विधान-सभामें स्थान देनेका अधिकार होना चाहिए।

अस्पृश्योंको पृथक् निर्वाचन-मण्डल देनेका मतलब उनकी बेड़ीको स्थायी बना देना होगा। पृथक् निर्वाचक-मण्डल मिल जानेपर भी मुसलमान तो सदा मुसलमान ही रहेंगे। इसी प्रकार क्या आप यह चाहते हैं कि अस्पृश्य सदा अस्पृश्य ही बने रहें? पृथक् निर्वाचन-मण्डल अस्पृश्योंके इस कलंकको स्थायी रूप दे देंगे। आवश्यकता इस बातकी है कि अस्पृश्यताका मूलोच्छेद कर दिया जाये और जिस क्षण आप वैसा कर देंगे, उसी क्षण दम्भी 'उच्च' वर्गवालोंने एक 'निम्न' वर्गपर जो निर्योग्यताएँ लगा रखी हैं वे नष्ट हो जायेंगी। जब आप उस निर्योग्यताको मिटा देंगे तो फिर पृथक् निर्वाचन-मण्डल किसको देंगे? आप यूरोपके इतिहासपर गौर कीजिए। क्या यहाँ मजदूरों अथवा स्त्रियोंके लिए पृथक् निर्वाचन-मण्डलकी व्यवस्था है? अस्पृश्योंको वयस्क मताधिकार देकर आप उन्हें पूरी सुरक्षा प्रदान कर देंगे। कट्टरपंथी हिन्दुओंको भी उनके पास उनसे वोट माँगने जाना पड़ेगा।

आप पूछते हैं कि फिर उनके प्रतिनिधि डॉ० अम्बेडकर उनके लिए पृथक् निर्वाचन-मण्डलकी माँग क्यों करते हैं। डॉ० अम्बेडकरके प्रति मेरे मनमें बड़ा सम्मान है। उन्हें कटु होनेका पूरा अधिकार है। अगर वे हमारा सर नहीं फोड़ देते तो इसीको उनका बहुत बड़ा आत्मसंयम मानना चाहिए। आज उनका मन आशंकाओंसे इतना भरा हुआ है कि वे और-कोई चीज देख ही नहीं सकते। उन्हें प्रत्येक हिन्दू अस्पृश्योंका पक्का विरोधी दिखाई देता है और ऐसा दिखाई देना सर्वथा स्वाभाविक है। मेरे दक्षिण आफ्रिका प्रवास-कालके प्रारम्भिक दिनोंमें मुझपर भी यही गुजरी। वहाँ मैं जहाँ-कहीं भी जाता था, यूरोपीय लोग मेरे पीछे पड़े रहते थे। अपना क्रोध प्रकट करना उनके लिए बिलकुल स्वाभाविक है। लेकिन वे जिस पृथक् निर्वाचन-मण्डलके लिए प्रयत्नशील हैं, उससे उन्हें समाज-सुधारके क्षेत्रमें जो-कुछ मिलना चाहिए वह नहीं मिल सकेगा। हो सकता है, उससे खुद उन्हें सत्ता और पद मिल जाये, लेकिन अस्पृश्योंकी कोई भलाई नहीं होनेवाली है। यह सब मैं प्रमाणपूर्वक कह सकता हूँ, क्योंकि मैं इतने वर्षोंसे उनके सुख-दुःखका साझीदार बनकर उनके बीच रहता आ रहा हूँ।

प्र० : क्या आप इंग्लैंडकी नेकनीयतीमें अब भी विश्वास रखते हैं?

उ० : जिस हदतक मैं मानव-स्वभावकी नेकनीयतीमें विश्वास रखता हूँ, उस हदतक इंग्लैंडकी नेकनीयतीमें भी मेरा विश्वास है। मैं मानता हूँ कि कुल मिलाकर मानव-जातिकी प्रवृत्ति हमें गिरानेकी नहीं, बल्कि उठानेकी है। यह अनजाने किन्तु

निश्चित तौरपर काम करनेवाले प्रेमके नियमका परिणाम है। मानव-जातिका अस्तित्व आज भी कायम है, यह तथ्य इस बातका द्योतक है कि जोड़नेवाली शक्ति अलग करनेवाली शक्तिसे बड़ी है, केन्द्रीकरणकी शक्ति केन्द्रापसारी शक्तिसे कहीं जबरदस्त है। और चूँकि मैं केवल प्रेमका काव्य ही जानता हूँ, इसलिए आपको इसपर कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि मैं अंग्रेजोंका विश्वास करता हूँ। मैं अकसर कटु हो उठा हूँ और अकसर मैंने अपने मनमें कहा है : "इस छद्मावरणका अन्त कब होगा? कब ये लोग गरीबोंका शोषण करना बन्द करेंगे?" तब अनायास ही मेरे मनसे यह उत्तर निकलता है : "इन्हें रोमसे यही चीज तो विरासतमें मिली है।" मुझे तो अपने आचरणका नियमन प्रेमके नियमके अनुसार ही करना है और यह आशा और अपेक्षा रखनी है कि अन्ततः मैं अंग्रेजोंके स्वभावपर असर डाल सकूँगा।

प्र० : भारतके औद्योगीकरणके बारेमें आपका क्या विचार है?

उ० : मुझे तो ऐसी आशंका है कि उद्योगवाद मानव-जातिके लिए अभिशाप सिद्ध होनेवाला है। एक राष्ट्र द्वारा दूसरेका शोषण सदा नहीं चल सकता। उद्योग-वाद तो पूरी तरह आपकी शोषणकी क्षमता, विदेशोंमें आपके मालके लिए बाजार मिलने और प्रतिस्पर्धियोंके अभावपर ही निर्भर है। चूँकि इंग्लैंडके लिए ये बातें दिन-ब-दिन कम होती जा रही हैं, इसलिए यहाँ बेरोजगारोंकी संख्या हर रोज बढ़ती जा रही है। भारतीयों द्वारा किया बहिष्कार तो एक बहुत ही हलका दंश था। और अगर इंग्लैंडका यह हाल है तो भारत-जैसा विशाल देश औद्योगीकरणसे लाभ उठानेकी आशा कैसे रख सकता है? सच तो यह है कि जिस दिन भारत दूसरे राष्ट्रोंका शोषण करने लगेगा — और अगर उसका औद्योगीकरण होता है तो वह शोषण तो करेगा ही — उस दिन वह दूसरे राष्ट्रोंके लिए एक अभिशाप बन जायेगा, दुनियाके लिए एक विपत्ति बन जायेगा। फिर दूसरे राष्ट्रोंके शोषणके लिए मुझे भारतके औद्योगी-करणकी बात क्यों सोचनी चाहिए? क्या आप इस दुःखद स्थितिको नहीं देखते कि हम ३० करोड़ बेरोजगारोंके लिए रोजगार जुटा सकते हैं, लेकिन इंग्लैंड अपने तीस लाख लोगोंके लिए भी कोई काम नहीं ढूँढ़ सकता और आज इंग्लैंडके सामने ऐसी समस्या उपस्थित हो गई है कि जिसने वहाँके बड़ेसे-बड़े बुद्धिमान लोगोंकी बुद्धिको भी चक्कर में डाल रखा है? उद्योगवादका भविष्य अन्धकारमय है। अमेरिका, जापान, फ्रांस और जर्मनी इंग्लैंडके सफल प्रतिस्पर्धी बनकर आगे आ गये हैं। भारतमें जो कुछ थोड़ी-सी मिलें हैं, वे भी उसकी प्रतिस्पर्धी हैं, और जिस प्रकार भारतमें जागृति आई है, उसी प्रकार दक्षिण आफ्रिकामें भी आयेगी, जो प्राकृतिक खनिज तथा मानव-शक्तिकी दृष्टिसे बहुत अधिक साधन-सम्पन्न है। जबरदस्त अंग्रेज जाति आफ्रिकाकी जबरदस्त जातियोंकी तुलनामें बौनी दिखाई देती है। आप कहेंगे कि आखिरकार वे शरीफ जंगली ही तो हैं। वे शरीफ तो जरूर हैं, लेकिन जंगली नहीं हैं और हो सकता है कि कुछ ही वर्षोंमें पश्चिमी राष्ट्रोंके व्यापारिक मालके लिए आफ्रिकाके दरवाजे बन्द हो जायें। और अगर उद्योगका भविष्य पश्चिमके लिए अन्धकारमय है तो क्या भारतके लिए वह और भी अन्धकारमय नहीं होगा?

प्र० : आई० सी० एस० के विषयमें आपका क्या विचार है?

उ० : आई० सी० एस० वास्तवमें इंडियन सिविल सर्विस नहीं, ई० सी० एस०, अर्थात् इंग्लिश सिविल सर्विस है। ऐसा मैं यह जानते हुए कह रहा हूँ कि उसमें कुछ भारतीय भी हैं। जबतक भारत पराधीन राष्ट्र है तबतक इंग्लैंडके हितोंकी सेवा करनेके अलावा वे कुछ कर ही नहीं सकते। लेकिन मान लीजिए भारत आजादी हासिल कर लेता है और सुयोग्य अंग्रेज भारतकी सेवा करनेकी तत्परता बताते हैं, उस हालतमें वे सच्चे राष्ट्रीय सेवक होंगे। आज तो आई० सी० एस० के नामपर वे शोषक सरकारकी ही सेवा करते हैं। स्वतन्त्र भारतमें अंग्रेज या तो साहसिक वृत्तिसे प्रेरित होकर या प्रायश्चित्त करनेके भावसे जायेंगे और इसलिए मोटी-मोटी तनख्वाहें लेकर गरीब भारतपर बोझ बनने तथा जैसी फिजूलखर्ची वे इंग्लैंडमें भी नहीं करते वैसी फिजूलखर्ची करके रहने और यहाँतक कि इंग्लैंडकी आबोहवा भी वहाँ पैदा करनेके बजाय वे थोड़ा-सा वेतन लेकर खुशी-खुशी काम करेंगे और वहाँकी जलवायुकी कठोरताको सहेंगे। हम उन्हें सम्मानित सहयोगियोंकी तरह रखेंगे, लेकिन अगर हमपर अपना प्रभुत्व जमाने और एक उच्चतर जातिकी तरह बरताव करनेकी हलकी-सी इच्छा भी उनमें होगी तो हमें उनकी जरूरत नहीं है।

प्र० : आपका मतलब यह है कि आप लोग पूरी तरहसे स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके योग्य हैं?

उ० : अगर नहीं हैं तो योग्य बननेकी कोशिश करेंगे। लेकिन यहाँ योग्यताका सवाल तो उठता ही नहीं। इसका सीधा-सादा कारण यह है कि जिन्होंने हमसे हमारी स्वतन्त्रता छीनी है उन्हें हमको वह वापस देनी है। मान लीजिए कि आपको अपने किये पर पश्चात्ताप होता है, तो उस पश्चात्तापको व्यक्त करनेका तरीका तो यही है कि हमें आप अपने भाग्यके भरोसे छोड़ दें।

प्र० : लेकिन औपनिवेशिक स्वराज्य क्यों नहीं? बात यह है कि अंग्रेज यह तो समझते हैं कि औपनिवेशिक स्वराज्यका मतलब क्या है। लेकिन वे यह नहीं जानते कि साझेदारी क्या चीज है, जबकि औपनिवेशिक स्वराज्य बहुत-कुछ वही चीज है जो आप चाहते हैं। अगर यह दिया जाता है तो जिस प्रकार आयरलैण्डवासियोंने स्वेच्छासे स्वतन्त्र राज्य (फ्री स्टेट) का दर्जा स्वीकार किया उसी तरह आप भी इसे क्यों नहीं स्वीकार कर लेते? क्या आपकी साझेदारीका इससे कोई ज्यादा मतलब है?

उ० : पहले आप मेरे सामने अपना पक्ष रखिए, उसमें जो-कुछ है, उसकी जाँच करने दीजिए तब अगर मुझे आपके द्वारा प्रस्तुत औपनिवेशिक स्वराज्य पूर्ण स्वराज्य-जैसा ही लगेगा तो उसे मैं तत्काल स्वीकार कर लूँगा। लेकिन इसे सिद्ध करनेका दायित्व तो मैं उनपर ही डालूँगा जो कहते हैं कि औपनिवेशिक स्वराज्य भी वही चीज है जो पूर्ण स्वराज्य है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १२-११-१९३१

१५०. बातचीत : ऑक्सफोर्डमें[1]

ऑक्सफोर्ड
२४ अक्टूबर, १९३१

सर गिलबर्ट मरेका . . . विचार था कि अहिंसक क्रान्ति और राष्ट्रीयता बहुत भयंकर रूप धारण कर रही हैं और इस चीजको लेकर वे बहुत परेशान लग रहे थे। उन्होंने कहा, "आज तो आपके साथ मेरा श्री विन्स्टन चर्चिलसे भी अधिक मतभेद है।"

गांधीजी ने कहा :

आप सभ्यताकी रक्षा करनेके लिए राष्ट्रोंके बीच सहयोग चाहते हैं। मैं भी यही चाहता हूँ, लेकिन सहयोगकी एक पूर्वशर्त यह है कि परस्पर सहयोग करने योग्य राष्ट्र स्वतन्त्र हों। अगर मुझे शान्ति और सद्भावना पैदा करनी है या उसकी पुनःप्रतिष्ठा करनी है और उसमें पड़नेवाले विघ्नोंको रोकना है तो मुझमें वैसा करनेकी सामर्थ्य होनी चाहिए और जब-तक मेरे देशको स्वतन्त्रता नहीं मिल जाती तबतक मैं वैसा नहीं कर सकता। अभी इस समय तो शान्तिकी प्रतिष्ठापनामें भारत-का योगदान उसका यह स्वतंत्रता-आन्दोलन ही है। कारण, जबतक भारत एक पराधीन राष्ट्र है तबतक केवल उसीसे शान्तिको खतरा नहीं है, बल्कि उसका शोषण करने-वाले इंग्लैंडसे भी खतरा है। दूसरे देश इंग्लैंडकी साम्राज्यवादी नीति और उसके द्वारा अन्य राष्ट्रोंका शोषण भले ही बरदाश्त कर लें, लेकिन निश्चय ही उन्हें यह अच्छा नहीं लगता; और वे इंग्लैंडको दिन-प्रतिदिन अधिकाधिक खतरनाक बनते जानेसे रोकनेके लिए खुशी-खुशी सहायता देंगे। बेशक आप यह कह सकते हैं कि भारत खुद भी तो स्वतन्त्र होकर एक खतरा बन सकता है। लेकिन हमें यह मानना चाहिए कि अगर वह अहिंसाके बलपर स्वतन्त्रता प्राप्त कर लेगा तो उसके परिणाम-स्वरूप और फिर शोषणका शिकार होनेके नाते उसे जो कटु अनुभव हुए हैं उनके कारण वह अहिंसाके सिद्धान्तका ठीक पालन करेगा।

मेरे क्रान्तिकी भाषामें बोलनेके सम्बन्धमें जो आपत्ति की जाती है उसका उत्तर, राष्ट्रीयताके सम्बन्धमें पहले ही जो-कुछ कह चुका हूँ, उससे बहुत हदतक मिल जाता है। लेकिन मेरे आन्दोलनके साथ एक बहुत बड़ी शर्त जुड़ी हुई है और वही परेशानी का भी कारण है। बेशक, आप ऐसा कह सकते हैं कि अहिंसात्मक विद्रोह तो हो ही नहीं सकता और न इतिहासमें इसका कहीं उदाहरण मिलता है। लेकिन मेरा कहना

१. महादेव देसाईकी रिपोर्ट "ईटन और ऑक्सफोर्डमें सप्ताहान्त : भावी साम्राज्य-निर्माताओंके बीच" से उद्धृत। बातचीतमें डॉ० गिलबर्ट मरे, डॉ० गिलबर्ट स्लेटर, प्रो० रेजिनाल्ड कूपलैण्ड और डॉ० दत्त शामिल थे।

है कि मेरी आकांक्षा वही उदाहरण कायम करनेकी है और मेरा स्वप्न यही है कि मेरा देश अहिंसाके द्वारा अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त करे। और मैं सारी दुनियाके सामने इस बातको बार-बार दोहराना चाहूँगा कि अहिंसाकी कीमतपर मैं अपने देशकी आजादी नहीं खरीदूंगा। अहिंसाके साथ मैं इतने पूर्ण रूपसे बँधा हुआ हूँ कि उससे रंच-मात्र भी विचलित होनेकी अपेक्षा मैं आत्महत्या कर लेना ज्यादा पसन्द करूँगा। इस सम्बन्धमें मैंने सत्यका उल्लेख नहीं किया है, जिसका कारण सिर्फ यह है कि अहिंसाके अलावा और किसी माध्यमसे सत्यकी अभिव्यक्ति हो ही नहीं सकती। इसलिए अगर आप मेरी इस अवधारणाको स्वीकार कर लेते हैं तो फिर मेरी स्थितिमें कहीं कोई दोष नहीं रह जाता। . . .

आपका यह कहना उचित हो सकता है कि मुझे सँभल-सँभलकर चलना चाहिए, लेकिन अगर आप मूलभूत बातोंपर ही प्रहार करें तब तो आपको मुझे कायल करना होगा कि आपका यह रवैया सही है। और मैं आपको यह बता दूँ कि राष्ट्रीयतासे भी बहिष्कारका कोई सम्बन्ध न हो, ऐसा सर्वथा सम्भव है। यह विशुद्ध सुधारका भी सवाल हो सकता है, क्योंकि बहुत राष्ट्रवादी हुए बिना भी हम आपका कपड़ा न खरीदकर अपनी जरूरतका कपड़ा स्वयं बना सकते हैं। सुधारक बराबर प्रतीक्षा नहीं कर सकता। अगर वह अपने विश्वासपर अमल नहीं करता तो वह सुधारक है ही नहीं। या तो वह बहुत जल्दबाज होगा या बहुत आशंकित अथवा बहुत सुस्त। फिर इस मामलेमें उसे सलाह कौन देगा या उसे अपनी गति निर्धारित करनेके लिए बैरोमीटर कौन देगा? सुधारक तो अपनी प्रशिक्षित अन्तरात्मासे ही निर्देश ले सकता है; और उससे निर्देश लेते हुए उसे सत्य और अहिंसा-रूपी ढालपर भरोसा करके तमाम खतरे उठानेके लिए तैयार रहना होगा। सुधारक इससे भिन्न कुछ नहीं कर सकता।

प्र० : स्वशासनका कठिन कार्य अपने हाथोंमें लेनेके लिए क्या भारत कुछ समय प्रतीक्षा नहीं करेगा? अगर हम अपने सिपाही वहाँ भेजते हैं तो हमें उनकी जानके लिए जिम्मेदार होना होगा और इसलिए जल्दीसे-जल्दी भारतीय सेना तैयार कर लेना क्या आपके लिए ज्यादा अच्छा न होगा? पिछले वर्ष मुसलमानोंने एक स्वरसे कहा कि वे केन्द्रमें दायित्व नहीं चाहते। हम निर्णय कैसे लें?

उ० : इसका मतलब यह कि आप हमपर विश्वास करनेको तैयार नहीं हैं। ठीक, तो मैं कहता हूँ कि आप हमें भूल करनेकी स्वतन्त्रता दीजिए। अगर हम अपना कारोबार आज नहीं सँभाल सकते तो यह कौन बतायेगा कि हम उसे सँभालने योग्य कब होंगे? मैं नहीं चाहता कि गतिका निश्चय आप करें। जाने-अनजाने आप तो विधाताकी हैसियत अख्तियार कर लेते हैं। मैं आपसे उस उच्चासनसे क्षण-भरको नीचे उतरनेको कहता हूँ। हमें आप अपने भरोसे छोड़ दीजिए। मैं नहीं समझता कि आज जो-कुछ हो रहा है, एक पूरा जनसमुद्र जिस प्रकार एक छोटे-से राष्ट्रके कदमोंपर पड़ा है, तब उससे भी कुछ बुरा हो सकेगा।

और आपके सिपाहियोंकी जानोंके लिए जिम्मेदार होनेकी क्या बात चलती है? अगर मैं सभी विदेशियोंके लिए भारतकी सेनामें भरती होनेकी सूचना जारी

करता हूँ और अगर कुछ अंग्रेज भी सेनामें भरती हो जाते हैं तो क्या आप उन्हें रोक लेंगे? अगर वे भरती होंगे तो उनकी जानके लिए जिम्मेदार हमें होना चाहिए — उसी प्रकार जिस प्रकार कोई और सरकार, जिसकी वे सेवा करेंगे, जिम्मेदार होगी। निस्सन्देह स्वशासनकी कुंजी सेनापर अपना नियन्त्रण है।

जहाँतक सर्वसम्मत माँगका सम्बन्ध है, मुझे फिर वही बात कहनी होगी जो मैं पहले भी कई बार कह चुका हूँ — अर्थात् यह कि ऐसी परिषद्से सर्वसम्मत माँगकी आशा ही नहीं रखी जा सकती जिसके सदस्य सरकार द्वारा जहाँ-तहाँसे उठाकर भर दिये गये हों। मेरा कहना यह है कि कांग्रेस सबसे अधिक भारतीयोंका प्रतिनिधित्व करती है। ब्रिटिश मन्त्री इस बातको जानते हैं। अगर वे इस बातको नहीं जानते तो मुझे स्वदेश वापस जाकर जितना सम्भव होगा उतना जबरदस्त लोकमत तैयार करना होगा। हमने प्राणोंका मोह छोड़कर एक लड़ाई लड़ी। एक अत्यन्त नेक अंग्रेजने[1] हमारी परीक्षा ली और पाया कि हम खोटे नहीं हैं। फलतः उन्होंने जेलोंके दरवाजे खोल दिये और कांग्रेससे गोलमेज परिषद्में जानेका अनुरोध किया। हमारे बीच लम्बी बातचीत हुई, समझौतेके लिए सुदीर्घ वार्त्ताएँ हुईं। इस सबके दौरान हमने अधिकसे-अधिक धैर्यसे काम लिया और अन्तमें एक समझौता हुआ जिसके तहत कांग्रेस गोलमेज परिषद्में अपना प्रतिनिधि भेजनेपर सहमत हो गई। मगर सरकारने इस समझौतेके पालनकी अपेक्षा उसका उल्लंघन ही ज्यादा किया। मैं बड़ी हिचकिचाहटके बाद यहाँ आनेको राजी हुआ — और किसी कारण नहीं तो कमसे-कम उस अंग्रेजको दिये अपने वचनके पालनका खयाल करके ही। यहाँ आकर मैं देखता हूँ कि भारत तथा कांग्रेसके विरुद्ध खड़ी ताकतोंका मैंने गलत अन्दाजा लगाया था। लेकिन इससे मैं निराश नहीं हूँ। मुझे वापस जाकर अपने-आपको इस कामके योग्य बनाना है और कष्ट-सहनके जरिये यह सिद्ध करना है कि वास्तवमें सारा देश उस चीजको चाहता है जिसकी वह माँग कर रहा है। हंटरने कहा है कि रणभूमिमें सफलता प्राप्त करना सत्ता हस्तगत करनेका सबसे जल्दीका तरीका है। तो हमने भी एक अलग तरहकी रणभूमिमें सफलता प्राप्त करनेके लिए काम किया। इस रणभूमिमें मैं आपके शरीरके बजाय आपके हृदयको स्पर्श करनेकी कोशिश कर रहा हूँ। अगर मैं इस बार सफल नहीं हुआ तो अगली बार सही।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १२-११-१९३१

१. भारतके वाइसराय लॉर्ड इर्विन।

१५१. प्रश्नोत्तर[1]

ऑक्सफोर्ड
२४ अक्टूबर, १९३१

प्र० : आप भारतको साम्राज्यसे कहाँतक अलग करना चाहेंगे?

उ० : साम्राज्यसे तो पूरी तरह, लेकिन अगर मैं भारतको नुकसान नहीं, लाभ पहुँचाना चाहता हूँ तो ब्रिटिश राष्ट्रसे बिलकुल नहीं। ब्रिटिश साम्राज्य साम्राज्य है तो केवल भारतके कारण ही। यह सम्राट्शाही खत्म होनी चाहिए, और मैं ब्रिटेन का बराबरीका साझेदार, ऐसा साझेदार होना बहुत पसन्द करूँगा जो उसके सुख-दुःखका हिस्सेदार होगा और सभी उपनिवेशोंका भी साझेदार होगा। लेकिन इसे बराबरीकी शर्तोंपर आधारित साझेदारी होनी चाहिए।

प्र० : भारत किस हदतक इंग्लैंडके सुख-दुःखका साथी होगा?

उ० : पूरा-पूरा।

प्र० : क्या आप ऐसा समझते हैं कि भारत अपने भाग्यको इंग्लैंडके साथ अभिन्न रूपसे जोड़ लेगा?

उ० : हाँ, जबतक वह इंग्लैंडका साझेदार रहता है। लेकिन जिस क्षण वह देखेगा कि यह साझेदारी एक बहुत बड़े फरीक और एक बौने फरीकके बीचकी साझेदारी है, या अगर इसका उपयोग दुनियाकी दूसरी जातियोंके शोषणके लिए किया जायेगा तो उसी क्षण वह उस साझेदारीको समाप्त कर देगा। उद्देश्य दुनियाके सभी राष्ट्रोंका समान रूपसे हित-साधन करना है और अगर यह उद्देश्य सिद्ध नहीं हो सकता तो पैबन्द लगाकर कोई अवास्तविक साझेदारी कायम करनेकी अपेक्षा युगों-तक प्रतीक्षा करते रहना मैं ज्यादा पसन्द करूँगा।

प्र० : किसी देशका शोषण किया जा रहा है या उसके साथ केवल व्यापार किया जा रहा है, आप यह कैसे तय करेंगे?

उ० : इसके लिए दो कसौटियाँ है : (१) दूसरे राष्ट्रको हमारा माल खरीदने की इच्छा होनी चाहिए और वह माल उसपर उसकी इच्छाके विरुद्ध थोप न दिया जाये; (२) व्यापारके पीछे नौसेनाका बल नहीं होना चाहिए। और इस सम्बन्धमें मैं यह भी कह दूँ कि जब आपको महसूस हो जायेगा कि भारत-जैसे राष्ट्रोंके साथ इंग्लैंडने कैसा अन्याय किया है तो "ब्रिटैनिया रूल्स द वेव्ज"वाला गीत आप गर्व-पूर्वक नहीं गायेंगे। आज अंग्रेजी पाठ्य पुस्तकोंमें जो बातें गौरव करने लायक मानी

१. महादेव देसाईकी रिपोर्ट "ईटन और ऑक्सफोर्डमें सप्ताहान्त : भावी साम्राज्य-निर्माताओंके बीच" से उद्धृत। ये प्रश्न रेले क्लबमें हुई बातचीतके अन्तमें पूछे गये थे।

जाती हैं उन्हें तब लज्जाजनक मानना पड़ेगा और आपको दूसरे देशोंकी पराजय या अपमानपर गर्वका अनुभव करना छोड़ना होगा।

प्र० : साम्प्रदायिक प्रश्नपर ब्रिटेनका रवैया किस हदतक आपके मार्गमें बाधक है ?

उ० : बहुत हदतक या कहना चाहिए कि आधा-आधा। फूट डालो और राज्य करोवाली नीति, जाने-अनजाने, भारतकी तरह यहाँ भी काम करती रही है। ब्रिटिश अफसरोंने कभी इस पक्षको रिझाया-फुसलाया है तो कभी उस पक्षको। बेशक अगर मैं ब्रिटिश अफसर होता तो शायद मैं भी वही करता और ब्रिटिश शासनको मजबूत करनेके लिए उनकी आपसी फूटका लाभ उठाता। हमारा दोष यह है कि हम आसानीसे उनकी चालमें आ जाते हैं।

प्र० : क्या आप ऐसा समझते हैं कि ब्रिटिश सरकारको साम्प्रदायिक समस्याका कोई हल सुझाना चाहिए ?

उ० : नहीं। लेकिन 'न' कहनेवाला पक्ष केवल मैं ही हूँ। यह बहुत अपमानजनक बात है और न कांग्रेस और न मैं ही इसमें सहमति दे सकता हूँ। भारत सरकार तथा प्रान्तीय सरकारोंके खरीतोंमें सरकारकी ओरसे कुछ बातें स्वीकार की गई हैं, हालाँकि सरकारके सुझाये सभी हलोंपर राजनीतिक उद्देश्योंका रंग चढ़ा हुआ है। जहाँतक हम सबका सम्बन्ध है, करनेको तो सभी पक्ष न्यायकी बात करते हैं, किन्तु पंच-फैसलेके नामसे उन्हें डर लगता है। इससे प्रकट होता है कि अपना-अपना मत-लब साधनेकी चाल खूब चली जा रही है और कौन सही है, कौन गलत है, इस सम्बन्धमें परिमाणका ही भेद है। न्यायाधिकरणपर बखूबी ऐसा भरोसा किया जा सकता है कि वह विभिन्न दावोंके प्रति न्याय करेगा।

प्र० : उस न्यायाधिकरणमें कैसे लोग होने चाहिए, इस सम्बन्धमें क्या आप कुछ बतायेंगे ?

उ० : वे भारतीय उच्च न्यायालयके गैर-हिन्दू और गैर-मुसलमान न्यायाधीश हो सकते हैं या फिर प्रिवी कौंसिलकी न्यायिक समितिके न्यायाधीश।

प्र० : क्या उनका निर्णय स्वीकार किया जायेगा ?

उ० : न्यायालयके निर्णयको स्वीकार करनेके बारेमें किसी तरहके सवालकी गुंजाइश ही नहीं हो सकती। मैं यह स्वीकार करता हूँ कि आपके इस सवालके पीछे कुछ चाल भी है। अगर सरकार न्यायका व्यवहार करे और मेरा सुझाव स्वीकार कर ले तो सारी फिजा ही बदल जाये और न्यायिक समितिकी नियुक्तिसे पूर्व ही सभी समुदाय कोई समाधान ढूँढ़ लें। कारण, अबतक जितनी प्रगति हुई है, उसमें ऐसा बहुत-कुछ है जिससे राजनीतिक दृष्टिकोण रखनेवालोंको संतुष्ट किया जा सकता है, और फिर अपने-अपने दावोंकी कमजोरियाँ तो सबको मालूम ही हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १२-११-१९३१

१५२. प्रश्नोत्तर[1]

[२४ अक्टूबर, १९३१ या उसके प्रश्चात्][2]

प्र० : हिन्दू संयुक्त निर्वाचक-मण्डल क्यों चाहते हैं?

उ० : इसलिए कि वे मूर्ख हैं। मुसलमानोंको तत्काल पृथक् निर्वाचक-मण्डल देकर वे उनकी बोलती बन्द कर सकते हैं और उन्हें यह सोचनेकी स्थितिमें डाल सकते हैं कि पृथक् निर्वाचक-मण्डलमें कहीं कुछ अमंगलकारी बात तो नहीं छिपी हुई है।

प्र० : शराब पीनेवालोंके प्रति आप इतने अनुदार क्यों हैं?

उ० : क्योंकि इस अभिशापके परिमाणस्वरूप कष्ट भोगनेवालोंके लिए मेरे दिलमें दर्द है।

प्र० : क्या आपको क्रोध भी आता है?[3]

उ० : आप श्रीमती गांधीसे पूछकर देखिए। वे आपको यही बतायेंगी कि दूसरोंके साथ तो मेरा व्यवहार सौजन्यपूर्ण होता है, लेकिन उनके साथ नहीं।

मेरे साथ तो मेरे पतिका व्यवहार बहुत अच्छा होता है।

निश्चय ही श्री माइल्सने आपको कुछ घूस दी है।

प्र० : चरखा क्या मध्ययुगीन चीज नहीं है?

उ० : मध्य-कालमें हम बहुतसे ऐसे काम करते थे जो बड़े समझदारी-भरे थे। लेकिन अगर हममें से अधिकांशने आज उन्हें छोड़ दिया है तो मेरी इस समझदारीको आप मेरा अपराध क्यों मानते हैं? वह औजार चाहे जितना मध्यकालीन हो, उसके बलपर दीनहीन ग्रामवासियोंकी आयमें पचास प्रतिशतकी वृद्धि करके मुझे किसी प्रकार-की लज्जाका अनुभव नहीं होता। युद्धके दौरान आप आलू पैदा करते थे और लीसियम क्लबकी फैशनपरस्त स्त्रियोंने पुरुषोंको सिपाहियोंके लिए सीधी-सादी सुई और धागेसे सोनेकी पोशाकें तैयार करनेको आमन्त्रित किया था। क्या यह काम मध्यकालीन नहीं था? मैंने यह मध्यकालीन उपाय लीसियम क्लबकी महिलाओंसे ही सीखा।

प्र० : स्वराज्यके मार्गमें मुख्य बाधा क्या है?

उ० : सत्ता त्यागनेकी ब्रिटिश अधिकारियोंकी अनिच्छा; या अनिच्छुक लोगोंसे सत्ता छीननेकी हमारी असमर्थता। आपको मैंने प्रत्याशित उत्तर नहीं दिया, इससे

१. महादेव देसाईके "लण्डन लेटर" (लन्दनका पत्र) से उद्धृत।

२. यहाँ महादेव देसाईने अलग-अलग तारीखोंपर अलग-अलग लोगोंसे हुई गांधीजी की बातचीतको एक साथ मिलाकर दिया है। लेकिन वे कहते हैं कि पहला सवाल ऑक्सफोर्डके कुछ विद्यार्थियोंने पूछा था। गांधीजी ऑक्सफोर्डमें २४ अक्टूबरको थे।

३. यह प्रश्न श्रीमती यूस्टेस माइल्सने पूछा था।

आपको दुःख हुआ होगा। मैं चाहता हूँ आप इस बातको समझ लें कि हम अपनी एकताके अभावके बावजूद आपसे सत्ता छीन सकते हैं, और जो हाथ आज सत्ता देनेको अनिच्छुक हैं, वे अगर उसके लिए तैयार हो जायें तो हमारे ये मतभेद भी मिट जायेंगे। आप कहते हैं कि ब्रिटेनवाले तो निष्पक्ष प्रेक्षक-मात्र हैं। मैंने भारत सरकारपर हमारे राष्ट्र-रूपी अंगके बीच पच्चर होने और ब्रिटिश सरकारपर परिषद्के लिए मनमाने ढंगसे जैसे-तैसे लोगोंको प्रतिनिधि नामजद कर लेनेका आरोप लगानेकी धृष्टता की है। साम्प्रदायिक समस्याका हमारा अपना एक समाधान है, जो कांग्रेसने प्रबुद्ध मुसलमानोंके साथ ढूँढ़ निकाला है। लेकिन अगर कुछ मुसलमान, जो अपने पक्षमें मुस्लिम बहुमत होनेका दावा करते हैं, सन्तुष्ट नहीं हैं और उसके कारण अगर सरकार यह कहती है कि उसने हमें जो बेड़ियाँ पहना रखी हैं, उन्हें वह नहीं उतारेगी तो मैं कहता हूँ कि हम उन बेड़ियों और अपनी इस फूट दोनोंसे छुटकारा पानेके लिए एक साथ प्रहार करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १२-११-१९३१

१५३. पत्र : मिर्जा इस्माइलको[1]

[२४ अक्टूबर, १९३१के पश्चात्][2]

प्रिय सर मिर्जा,

कतरनके[3] लिए बहुत-बहुत धन्यवाद। इसे मैं पढ़ गया हूँ। मुझे आशा है कि डॉ० अम्बेडकरको आप अपनी बात समझानेमें सफल होंगे। ऑक्सफोर्डमें हुमायूँसे मिलकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। इच्छा हो रही है कि उसके साथ कुछ देर और रहता।

आपका,
मो० क० गां०

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २१८८-५) से।

१. यह मिर्जा इस्माइलके बिना तारीखके उस पुर्जेके उत्तरमें लिखा गया था जिसमें उन्होंने कहा था: "मेरा अनुरोध है कि आप इस कतरनको पढ़ें, विशेषकर उस पैरेको जिसपर मैंने निशान लगा दिया है। इसे पढ़कर लौटा दें तो कृपा हो। इसे मैं डॉ० अम्बेडकर तथा कुछ अन्य लोगोंको, मैं जो-कुछ कहता आया हूँ उसे सिद्ध करनेके लिए, दिखाना चाहता हूँ।"

२. ऑक्सफोर्ड जानेके उल्लेखसे।

३. यह उपलब्ध नहीं है।

१५४. पत्र : मणिबहन पटेलको

२६ अक्टूबर, १९३१

चि० मणि,

तुम्हारे पत्र मिलते रहते हैं। मेरा जवाब नहीं मिलता इससे लिखना बन्द न कर देना। आजकल मुझे पत्र लिखनेका समय ही नहीं मिलता। आज परिषद्‌की बैठकमें ही थोड़ा समय मिल गया है; उसीका उपयोग कर रहा हूँ।

डाह्याभाईकी तबीयत अच्छी हो गई है, यह पढ़कर प्रसन्नता हुई। उससे और यशोदासे मेरा आशीर्वाद कहना।

लक्ष्मीदास[1] और मंजुबहनसे[2] पत्र लिखनेको कहना। मैं मानता हूँ अभी कमसे-कम एक और डाक तो मुझे इंग्लैंडमें मिल ही सकती है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो-४: मणिबहेन पटेलने, पृ० ७९-८०

१५५. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

लन्दन
२६ अक्टूबर, १९३१

भाई वल्लभभाई,

पत्र लिखनेका समय ही नहीं मिलता। आज भी संघ-संरचना समितिमें बैठा लिख रहा हूँ। तुम्हें नाकका इलाज करा ही लेना चाहिए। यहाँ मेरा सब काम परिषद्‌के बाहर ही होता है। भले ही तत्काल इसका कोई नतीजा न निकले, लेकिन मैं मानता हूँ, बादमें इसके बहुत अच्छे नतीजे निकलेंगे। यहाँसे कुछ लेकर आनेकी आशा कम ही है। परन्तु नाक कटाकर नहीं आऊँगा। बहुत-से जिम्मेदार आदमियोंसे मिल रहा हूँ।

नवम्बरके मध्यमें परिषद्‌का काम पूरा हो जानेकी सम्भावना है। लगभग पूरे यूरोपसे निमन्त्रण मिले हैं। इन देशोंमें जानेकी हार्दिक इच्छा है। मैं समझता हूँ, जानेसे लाभ ही होगा। सबसे मिलकर अपना निर्णय तार द्वारा सूचित करो। अगर मेरा उन देशोंका दौरा करना जरूरी मानो तो समझ लो कि मुझे एक महीना और

१. लक्ष्मीदास आसर।

२. मंजुबहन मशरूवाला।

लगेगा। इसलिए मैं वहाँ जनवरीमें ही पहुँच सकूँगा। (इतना लिखनेके बाद मैं कुर्सीपर ही ऊँघने लगा। लिखावटसे तुम देख सकते हो कि कलम आगे नहीं चली।) अगर इतना वक्त दे सको तो दो। वहाँ तो तुम्हें जो ठीक लगे, करो। जवाहरलाल के तारका जवाब[1] तो तुमने देख लिया होगा। यहाँ कुछ भी हो, मेरा यह निश्चित मत है कि वहाँ जब किसी भी प्रश्नपर सरकारसे लड़ना जरूरी लगे तब जरूर लड़ो। वहाँके प्रश्नोंके बारेमें अभी यहाँ कुछ भी हो सकेगा, ऐसा मुझे नहीं दीखता। सोचा था कि बंगालके नजरबन्दोंके लिए कुछ हो सकेगा, मगर मुझे कुछ करनेका अवसर ही नहीं मिला। कह नहीं सकता कि चुनावके बाद कुछ हो सकेगा या नहीं।

मैं देख रहा हूँ कि गुजरातमें सत्ताधारी लोग सब काम समझौतेसे उलटा ही कर रहे हैं। इन सब फैसलोंके खिलाफ लड़ो। रासके बारेमें जो उत्तर आया है, उसे मैं उद्धततासे भरा हुआ मानता हूँ। मुझे पूरा विश्वास है कि इन तमाम मामलोंके सम्बन्धमें हम सरकारसे सफलतापूर्वक निबट लेंगे।

मैं समझता हूँ, अब मैंने काफी लिख दिया।

बापू

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो - २ : सरदार वल्लभभाईने, पृष्ठ १५-१६

१५६. पत्र : लेडी ईव क्रिररको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, पश्चिमी
२७ अक्टूबर, १९३१

प्रिय मित्र,

पत्रका उत्तर देनेमें इतना विलम्ब हो जानेके लिए मैं क्षमा चाहता हूँ। बात यह है कि मेरे पास काम बहुत ज्यादा हो गया है और आपका पत्र उत्तर देनेके लिए बाकी बचे पत्रोंके ढेरमें पड़ा रहा। आज उसे निकाला। अब आपको हस्ताक्षर-युक्त कार्ड भेज रहा हूँ।

हृदयसे आपका,

लेडी ईव क्रिरर
क्लॉन्स्कीग
रॉदरफील्ड
ससेक्स

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८१८४) से।

१. देखिए "तार : जवाहरलाल नेहरूको", १६-१०-१९३१ या उसके पश्चात्।

१५७. पत्र : एवलिन रेंचको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, पश्चिमी
२७ अक्टूबर, १९३१

प्रिय मित्र,

पत्रके लिए धन्यवाद। स्पष्ट है कि आपको पत्र लिखनेवाले भाईने चीजको ठीकसे समझा नहीं। कांग्रेस नरम दल ही है। बहुत ज्यादाकी माँग नहीं की जा रही है। 'स्वतन्त्रता' माँगना तो बहुत ज्यादाकी माँग करना नहीं है। यह तो आत्म-सम्मानपूर्ण, तर्क-सम्मत और सर्वथा संगत माँग ही है। नरमी तरीकेमें है। कांग्रेस किसी भी प्रकारकी हिंसाको त्याज्य मानती है। निस्सन्देह भारतमें एक ऐसा दल है जो स्वतन्त्रता नहीं चाहता, क्योंकि उसे स्वतन्त्रतासे भय लगता है। लेकिन यह तो उनकी मनोरचनाका दोष है। जो उस रोगसे ग्रस्त नहीं हैं, वे स्वभावतः उस चीजको चाहते हैं, जिसके लिए उनका मन व्याकुल है। इसे कोई भी बहुत ज्यादाकी लालसा करना नहीं कहेगा, और न जिस आदमीकी क्षुधा तीव्र है उससे उस चीजसे सन्तुष्ट हो जानेकी अपेक्षा की जायेगी जो ऐसे व्यक्तिको संतुष्ट करती हो जिसकी क्षुधा बिलकुल जाती रही है।

और उस मित्रका इस तरहकी बात करना भी गलत है कि इंग्लैंडके त्यागका जवाब भारत भी समान त्यागके द्वारा दे। यहाँ मुझे डॉ० चामर्सका एक बड़ा ही महत्त्वपूर्ण वाक्य स्मरण हो आता है: "[ऋण-परिशोधके] कर्त्तव्यको उदारता तभी माना जा सकता है जब दाता यह मान ले कि उसने जो ऋण दिया वह दान था।" मैं मानता हूँ कि इंग्लैंडने भारतसे उसका जो-कुछ छीन लिया है, उसे वह सब लौटा देना उसका कर्त्तव्य है। दायित्वके निर्वाहमें त्यागकी बात कहाँ आती है? लेकिन जबतक इंग्लैंड यह मानता है कि वह भारतको जितनी भी स्वतन्त्रता देगा वह उसका त्याग होगा, तबतक दोनों देशोंके मेलजोलके लिए कोई आधार नहीं बन सकता; क्योंकि उस हालतमें इंग्लैंड, भारतका उसपर जो ऋण है, उसका मार्जन नहीं कर सकेगा।

कह नहीं सकता कि मैं अपना आशय स्पष्ट कर पाया या नहीं, न कर पाया होऊँ तो आप अपनी शंका बतायेंगे। मैं फिर उसके समाधानकी कोशिश करूँगा।

हृदयसे आपका,

श्री एवलिन रेंच
९९, गोवर स्ट्रीट, डब्ल्यू० सी० १

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८१८१) से।

१५८. पत्र : ए० कार्लाइल वाल्शको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, पश्चिमी
२७ अक्टूबर, १९३१

प्रिय मित्र,

देखता हूँ, आपके स्वर्गीय पिताकी लिखी पुस्तिकाओंकी[1] प्राप्ति पहले ही सूचित की जा चुकी है। पिछले वर्ष जब मैं जेलमें था, तभी आपके पिताके भारत-प्रेमके बारेमें सुना था।

यद्यपि अब बहुत देर हो चुकी है, फिर भी मैं आपकी माताजी के प्रति आदर-पूर्वक अपनी समवेदना प्रकट करना चाहूँगा। अगर आप मुझसे मिलनेका समय निकाल सकें —मसलन अगले मंगलवारको उपर्युक्त पतेपर सुबहके ९ और ९-३० के बीच — तो आपसे मिलना चाहूँगा।

हृदयसे आपका,

श्री ए० कार्लाइल वाल्श
नॉर्दम
एथनिअम रोड
व्हेटस्टोन, एन० २०

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८१८२) से।

१५९. मिर्जा इस्माइलको लिखा पुर्जा[2]

[२८ अक्टूबर, १९३१के आसपास][3]

इससे काम नहीं चलेगा। मसविदेका सम्बन्ध अन्य बातोंसे भी है। आवश्यकता इस बातकी है कि सभी मामले एक पूर्णरूपेण उत्तरदायी मन्त्रि-मण्डलके अधीन होने चाहिए।

मो० क० गां०

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २१८८-४) से।

१. कार्लाइल वाल्शके पिता वाल्टर वाल्शकी लिखी पुस्तिकाओंमें एक **गांधी एण्ड फ्री इंडिया**, थी।

२. यह मिर्जा इस्माइलके भेजे निम्नलिखित पुर्जेपर लिखा हुआ था: "संक्रमण कालमें सेना तथा विदेशी मामलोंके सम्बन्धमें जो शर्तें और बन्धन भारतके हितमें आवश्यक हों, उनकी व्यवस्था किये जानेकी शर्तोंपर मुसलमान भारतके लिए पूर्ण स्वराज्यकी माँग करनेमें पूरा सहयोग देंगे। सुरक्षित मामलोंके अतिरिक्त सभी मामले विधान-मण्डलके प्रति उत्तरदायी मन्त्रि-मण्डलके अधीन होंगे।"

३. ठीक तारीख मालूम नहीं हो पाई है। लेकिन, संभवतः इसके और अगले शीर्षकके लेखनका समय प्रायः एक ही रहा होगा।

१६०. पत्र : मिर्जा इस्माइलको

[२८ अक्टूबर, १९३१के आसपास][1]

प्रिय सर मिर्जा,

आपका मसविदा दोषपूर्ण है। मेरा तैयार किया मसविदा उन लोगोंके पास ही है। वह इस प्रकार है:

१. पूर्ण स्वराज्य, जिसमें स्वेच्छा और पूर्ण समानताके सिद्धान्तपर आधारित साझेदारीकी भी गुंजाइश है।

२. इसलिए पूर्ण स्वराज्यमें प्रतिरक्षा सेनाओं, विदेशी मामलों और वित्तपर पूर्ण नियन्त्रण भी शामिल है।

३. विशेष आरक्षण या पृथक् निर्वाचक-मण्डलके क्षेत्रमें हर प्रकारके विस्तारका विरोध।

मेरा खयाल है, मसविदेमें यही बातें कही गई हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २१८८-२) से।

१६१. पत्र : अम्तुस्सलामको

२८ अक्टूबर, १९३१

प्रिय अम्तुल,

तुम्हारे पत्र मिलते रहे हैं। लेकिन आश्रमवासियों और दूसरोंके सभी पत्रोंके उत्तर मैं नहीं दे पाया हूँ। मुझे समय नहीं मिल पाता। मैं तुम्हें सविस्तार उत्तर नहीं दे सकता। तुम्हें आवश्यकताके अनुसार दवाई और डाक्टरी सलाह लेनी चाहिए। तुम्हें जल्दी ही अच्छा हो जाना चाहिए। अधिक मत सोचो। सभी बातोंमें केवल ईश्वरपर विश्वास रखो।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २४७) से।

१. इस पत्रमें उल्लिखित मसविदेके बाद मिज इस्माइलने एक और मसविदा भेजा था, जिसे गांधीजी ने ठीक बताया, देखिए "मिर्जा इस्माइलको लिखा पुर्जा", २८-१०-१९३१ या उसके पश्चात्। इससे जान पड़ता है कि यह पत्र २८-१०-१९३१ के पूर्व ही लिखा गया होगा।

१६२. पत्र : सर हेनरी एस० लॉरेन्सको

८८, नाइट्सब्रिज
दक्षिण पश्चिम १
२८ अक्टूबर, १९३१

प्रिय सर हेनरी,

आपके कृपापत्रके लिए धन्यवाद। जहाँतक कांग्रेसका सम्बन्ध है, महिलाओंके मताधिकारके प्रश्नके बारेमें उसकी नीति बिलकुल स्पष्ट है। उन्हें बिना किसी प्रतिबन्धके पुरुषोंके समान अधिकार मिलने चाहिए। आपने जिन अन्य मुद्दोंका उल्लेख किया है, उन सबपर मैं आपसे सहमत हूँ। बड़ी इच्छा हो रही है कि आपका निमन्त्रण स्वीकार कर आपका आतिथ्य प्राप्त करूँ। लेकिन जहाँतक अभी देख पाता हूँ, इसका मौका नजर नहीं आता।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८१९७) से।

१६३. भाषण : मॉण्टेसरी ट्रेनिंग कॉलेजमें[1]

लन्दन
[२८ अक्टूबर, १९३१][2]

मदाम,

आपने मुझे अपनी बातोंसे[3] अभिभूत कर दिया है। मुझे अत्यन्त नम्रतापूर्वक यह स्वीकार करना चाहिए कि आपका यह कहना सर्वथा सत्य है कि कितना ही अधूरा क्यों न हो, मैं अपने अस्तित्वके एक-एक अंशमें प्रेम प्रकट करनेका प्रयत्न कर रहा हूँ। मैं अपने स्रष्टाका, जो मेरी दृष्टिमें सत्य-रूप है, साक्षात्कार करनेके लिए अधीर हूँ और अपने जीवनके आरम्भमें ही मैंने यह शोध कर ली थी कि यदि मुझे सत्यका साक्षात्कार करना हो, तो अपने जीवनको खतरेमें डालकर भी मुझे धर्मका पालन करना चाहिए। और ईश्वरने मुझे बच्चे दिये हैं, इससे मैं यह शोध भी कर सका कि प्रेम-धर्म तो बच्चोंके जरिये ही सबसे अच्छी तरह सीखा और समझा जा सकता है। यदि हम लोग — उनके बेचारे अज्ञानी माता-पिता — बाधक न होते तो बच्चे पूर्ण

१. महादेव देसाईकी रिपोर्ट "मॉण्टेसरी ट्रेनिंग कॉलेजमें" से उद्धृत।

२. गांधीजी की डायरीके अनुसार वे इसी तारीखको मॉण्टेसरी ट्रेनिंग कॉलेज गये थे।

३. मदाम मॉण्टेसरीने गांधीजी का स्वागत करते हुए कहा था, "हम आपका स्वागत मनुष्यके रूपमें नहीं, एक आत्माके रूपमें करते हैं।"

रूपमें निष्कलुष ही रहते। मेरा यह पूर्ण विश्वास है कि बच्चा जन्मसे शरारती -- बुरे अर्थोंमें शरारती -- नहीं होता। यह तो सभी जानते हैं कि बच्चेके विकास-कालमें, जब वह माँके उदरमें रहता है तब और फिर उसके जन्म लेनेके बाद, यदि माता-पिता शुद्धाचारका पालन करें तो बच्चे स्वभावसे ही सत्य और अहिंसाका पालन करेंगे। और अपने जीवनके आरम्भ-कालमें ही जब मुझे यह बात मालूम हुई, तभीसे मैंने जीवनमें धीरे-धीरे किन्तु सुस्पष्ट हेरफेर करना शुरू कर दिया।

मेरा जीवन कितने और कैसे-कैसे तूफानोंमें से होकर गुजरा है, मैं यहाँ उसकी चर्चा नहीं करना चाहता। किन्तु मैं सचमुच पूरी नम्रतासे इस बातकी साक्षी भर सकता हूँ कि जितने अंशमें मैंने मन, वचन और कर्मसे प्रेम प्रकट किया, उतने ही अंशोंमें मैंने "ऐसी शान्तिका अनुभव किया है जिसे 'अगम' कहा गया है।" मुझमें यह ईर्ष्या-योग्य शान्ति देखकर मेरे कई मित्र हैरान हुए हैं और उन्होंने मुझसे यह जानना चाहा है कि यह अमूल्य निधि मुझे कैसे प्राप्त हुई। मैं इस सम्बन्धमें उन्हें इससे अधिक कुछ नहीं बता सका कि यदि मित्रोंको मुझमें इतनी शान्ति दिखाई देती है, तो उसका कारण हमारे जीवनके सबसे महान् नियमका पालन करनेका मेरा प्रयत्न है।

जब सन् १९१५ में मैं भारत पहुँचा, पहले-पहले तभी मुझे आपके कार्योंका पता चला। अमरेलीमें मैंने मॉण्टेसरी प्रणालीपर चलनेवाली एक छोटी पाठशाला देखी। उससे पहले मैं आपका नाम सुन चुका था। मुझे यह जाननेमें जरा भी कठिनाई न हुई कि यह पाठशाला आपकी शिक्षण-पद्धतिके सिर्फ ढाँचेका ही अनुसरण करती थी, तत्त्वका नहीं; और यद्यपि वहाँ थोड़ा-बहुत प्रामाणिक प्रयत्न भी किया जा रहा था, किन्तु साथ ही मैंने देखा कि दिखावा ही अधिक था।

इसके बाद तो मैं ऐसी अनेक पाठशालाओंके सम्पर्कमें आया और जितना अधिक सम्पर्कमें आया, उतना ही अधिक यह समझने लगा कि बच्चोंको यदि प्रकृतिके नियमोंके अनुसार -- प्रकृतिके उन नियमोंके अनुसार नहीं जो पशु-जगत्के लिए हैं बल्कि उन नियमोंके अनुसार जो मनुष्यके गौरवके अनुरूप हैं -- शिक्षा दी जाये तो उसका आधार भव्य और सुन्दर है। बच्चोंको जिस प्रकार शिक्षा दी जाती थी, उससे मुझे सहज ही ऐसा प्रतीत हुआ कि यद्यपि उन्हें अच्छी तरह शिक्षा नहीं दी जाती, फिर भी उसकी मूल पद्धतिकी अवधारणा तो इन आधारभूत नियमोंके अनुसार ही की गई थी। इसके बाद तो मुझे आपके अनेक शिष्योंसे मिलनेका सुअवसर प्राप्त हुआ। उनमें से एकने इटलीकी यात्रा भी की थी और व्यक्तिगत रूपसे आपका आशीर्वाद भी प्राप्त किया था। मैं इन बच्चों और आप सबसे यहाँ मिलनेकी आशा मनमें सँजोये हुए था और इन बच्चोंको देखकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हो रही है। इन बच्चों के सम्बन्धमें मैंने कुछ जाननेका भी प्रयत्न किया है। यहाँ मैंने जो-कुछ देखा है, उसकी एक झलक बर्मिंघममें भी दिखाई दी थी। वहाँ एक पाठशाला है। इस शालामें और उसमें एक अन्तर है। किन्तु वहाँ भी मैंने देखा कि मानव-प्रकृतिको प्रकाशमें लानेका प्रयत्न किया जा रहा है। यहाँ भी मैं वही देखता हूँ। यहाँ बचपनसे ही बच्चोंको

मौनका गुण समझाया जाता है और अपने शिक्षकके संकेत-मात्रसे, सुई गिरे तो उस-तककी आवाज सुनाई दे जाये, इतनी शान्तिसे किस तरह एकके पीछे एक बच्चा सामने आया, यह देखकर मुझे अनिर्वचनीय आनन्द हुआ। उनकी सारी चेष्टाओंमें एक तालबद्धता थी, जिसे देखकर मुझे बड़ी खुशी हुई और जब मैं उनकी इन चेष्टाओंको देख रहा था उस समय मेरा मन भारतके अर्ध-बुभुक्षित गाँवोंके करोड़ों बच्चोंकी ओर चला गया और मनमें उनका खयाल करते हुए मैंने स्वयं अपनेसे यह प्रश्न पूछा, "जो बातें आपकी प्रणालीके अन्तर्गत सिखाई जा रही हैं और जो शिक्षा दी जा रही है, वे बातें उन्हें सिखाना और वह शिक्षा उन्हें देना क्या सम्भव होगा?" भारतके गरीबसे-गरीब बालकोंमें हम एक प्रयोग कर रहे हैं। वह कहाँतक सफल होगा, मैं नहीं जानता। भारतके झोंपड़ोंमें रहनेवाले बालकोंको सच्ची और जीवन-दायिनी शिक्षा देनेका प्रश्न हमारे सामने है, और हमारे पास कोई भौतिक साधन नहीं हैं।

हमें तो शिक्षक त्याग-भावसे जितनी सहायता दे सकते हैं उसीपर निर्भर रहना पड़ता है। लेकिन जब मैं शिक्षकोंकी तलाश करता हूँ तो बहुत कम शिक्षक मिल पाते हैं — खासकर उस ढंगके शिक्षक जिस ढंगके शिक्षक बच्चोंको ठीकसे समझकर, उनकी व्यक्तिगत विशेषताओंका अध्ययन करके उन्हें अपनी ही शक्तिपर इस तरह भरोसा करना सिखाकर मानों यह उनके लिए आनकी बात हो गई हो, उनमें जो अच्छेसे-अच्छे गुण हों, उनको निखार सकें। और आप सच मानिए कि मैं सैकड़ों बच्चों — बल्कि मैं तो कहने जा रहा था कि हजारों बच्चों — के अपने अनुभवसे जानता हूँ कि उनमें अपनी आनके प्रति शायद उससे भी अच्छी जागरूकता है जितनी आपमें या मुझमें है। अगर हम तनिक झुकें और विनम्रतासे काम लें तो जीवनके सबसे बड़े सबक ज्ञानी वयस्कोंसे नहीं, बल्कि अज्ञानी बच्चोंसे ही सीख सकते हैं। ईसा मसीहके मुँहसे जो सबसे ऊँचा या भव्य सत्य निःसृत हुआ वह यही था कि सच्ची बुद्धिमत्ताकी बातें केवल बच्चेके मुँहसे निकलती हैं। मैंने इस बातको लक्षित किया है और स्वयं अनुभवसे भी जाना है कि अगर हम बच्चोंके पास नम्रतापूर्वक और निर्दोष भावसे जायें तो उनसे हमें सच्ची बुद्धिमत्ताकी शिक्षा मिलेगी।

मुझे आपका और समय नहीं लेना चाहिए। इस समय जो चीज मेरे मानसको मथ रही है, मैंने तो वही आपको बताई है। मेरा मतलब मानवीय दृष्टिसे इस बहुत ही नाजुक सवाल से है कि अभी मैंने आपके सामने जिनकी चर्चा की, उन करोड़ों बच्चोंके अच्छेसे-अच्छे गुणोंको कैसे निखारा जाये। लेकिन मैंने यह पाठ अवश्य सीखा है कि जो चीज मनुष्यके लिए असम्भव है, वही ईश्वरके लिए बच्चोंके खेलके समान आसान है, और अगर उस विधातापर हमारी श्रद्धा है जो अपनी सृष्टिकी तुच्छतम वस्तुका भी नियन्ता है, तो मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि सब कुछ सम्भव है और इसी अन्तिम आशाके बलपर मैं जीता हूँ और अपना समय व्यतीत करता हूँ तथा उसकी इच्छाका पालन करनेकी कोशिश करता हूँ। इसलिए मैं फिर कहता हूँ कि जिस प्रकार आप बच्चोंके प्रति अपने प्रेमसे प्रेरित होकर अपनी

इतनी सारी संस्थाओंके जरिये उन्हें वह शिक्षा देनेकी कोशिश कर रही हैं जो उनके अच्छेसे-अच्छे गुणोंको निखार सकती है, मैं आशा करता हूँ कि उसी प्रकार न केवल धनी और सम्पन्न लोगोंके बच्चोंके लिए, बल्कि गरीबोंके बच्चोंके लिए भी उस ढंगकी शिक्षा प्राप्त करना सम्भव होगा। आपने बिलकुल ठीक कहा है कि अगर हमें दुनियामें सच्ची शान्ति स्थापित करनी है और युद्धके खिलाफ सच्चा संघर्ष जारी रखना है तो हमें शुरुआत बच्चोंसे ही करनी होगी और अगर उनका विकास उनकी नैसर्गिक निष्कलुताके वातावरणमें होगा तो हमारे बीच न कोई संघर्ष होगा, और न हमें निरर्थक प्रस्ताव पास करने पड़ेंगे, बल्कि हम प्रेम और शान्तिकी एकके-बाद दूसरी मंजिल तय करते जायेंगे और अन्तमें दुनियाके कोने-कोनेमें उस शान्ति और प्रेमका साम्राज्य स्थापित हो जायेगा जिसके लिए आज, जाने-अनजाने, सारा संसार आकुल है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १९-११-१९३१

१६४. मिर्जा इस्माइलको लिखा पुर्जा

[२८ अक्टूबर १९३१ या उसके पश्चात्][1]

इस मसविदेमें जितना कुछ कहा गया है, वहाँतक तो यह ठीक है, लेकिन आप तो जानते ही हैं कि इसमें सभी मुद्दे नहीं आ पाये हैं। कृपया उन मुद्दोंको भी शामिल कर लें जो उनके पास हों और उनपर विचार करें।

मो० क० गां०

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २१८८-३) से।

१. यह टिप्पणी मिर्जा इस्माइल द्वारा गांधीजीको भेजे गये २८ अक्टूबर, १९३१ के पत्रपर लिखी हुई थी, जिसके साथ उन्होंने एक दूसरा मसविदा भी भेजा था; देखिए "पत्र: मिर्जा इस्माइलको", २८-१०-१९३१ के आसपास।

१६५. भेंट : चार्ल्स पेट्रेख तथा अन्य लोगोंको[1]

लन्दन
[२९ अक्टूबर, १९३१][2]

प्र० : आपके विचारसे भारतके देशी राजा, जमींदार, उद्योगपति और साहूकार किस तरहसे धन इकट्ठा करते हैं ?

उ० : अभी तो जनसाधारणका शोषण करके ही करते हैं।

प्र० : भारतीय मजदूरों और किसानोंका शोषण किये बिना भी क्या ये लोग धनी बन सकते हैं ?

उ० : एक हदतक तो बन सकते हैं।

प्र० : क्या इन लोगोंको ऐसा कोई सामाजिक अधिकार है कि ये उन सीधे-सादे मजदूरों या किसानोंसे ज्यादा अच्छी तरह रहें जिनकी मेहनतकी बदौलत ये अपनी दौलत बढ़ाते हैं ?

उ० : नहीं, ऐसा अधिकार तो नहीं है। मेरा सामाजिक सिद्धान्त यह है कि यद्यपि हम सब जन्मतः समान हैं, अर्थात् हमें अवसरकी समानताका अधिकार है, लेकिन हम सबमें एक-सी योग्यताएँ नहीं हैं। प्रकृतिका नियम ही ऐसा है कि सबमें एक-सी योग्यता होना, सबकी चमड़ीका रंग एक-जैसा होना और सबमें समान मेधाका होना असम्भव है। फलतः यह स्वाभाविक है कि हममें से कुछमें दूसरोंकी अपेक्षा सम्पत्ति अर्जित करनेकी अधिक योग्यता हो। जो कर सकते हैं, वे अधिक सम्पत्ति अर्जित करना चाहते हैं, और वे अपनी योग्यताओंका उपयोग इस उद्देश्यके लिए करते हैं। अगर वे अपनी योग्यताओंका उपयोग सही भावनासे करें तो उससे जनसाधारणको ही लाभ होगा। वे अपनी अर्जित की हुई सम्पत्तिके 'न्यासी' के अतिरिक्त और कुछ नहीं होंगे।

मैं तो कुशाग्रबुद्धि व्यक्तिको अधिक सम्पत्ति अर्जित करनेकी छूट दूँगा और इसके लिए उसे अपनी योग्यताओंका उपयोग करनेसे नहीं रोकूँगा। लेकिन, उसके

१. इस भेंट-वार्ताका विवरण मूलतः २०-२-१९३२ के **ली मांद**में प्रकाशित हुआ था और उसीसे बादमें **लेबर मंथली**में उद्धृत किया गया था। पेट्रेखका कहना है कि उन्होंने तथा उनके भारतीय मित्रोंने गांधीजी के लन्दनसे प्रस्थान करनेके पूर्व उनसे पूछनेके लिए प्रश्नोंकी एक सूची तैयार कर ली थी। बादमें जब भेंट हुई तो जैसे-जैसे गांधीजी जवाब देते जाते थे, वे उन्हें लिखते जाते थे। महादेव देसाईने इस भेंटका विवरण २६-११-१९३१ के **यंग इंडिया**में प्रकाशित अपने "लन्दनका पत्र" में प्रस्तुत किया। दोनों विवरणोंमें कुछ शाब्दिक अन्तर है। हम दोनोंको मिलाकर दे रहे हैं।

२. दोमें से किसी भी साधन-सूत्रमें भेंट-वार्ताकी तारीख नहीं दी गई है, लेकिन महादेव देसाई कहते हैं कि सरोजिनी नायडूके पुत्र बाबा भी मुलाकातियोंमें शामिल थे। गांधीजी की डायरीमें २९ तारीखके इन्दराजोंमें यह भी दर्ज है कि वे बाबा तथा कुछ अन्य युवकोंसे मिले थे।

लाभका अतिरिक्त अंश फिर आम जनताके पास ही आना चाहिए — ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार किसी परिवारके कमाऊ पूतोंकी कमाई पूरे परिवारकी सम्पत्ति होती है। वे अपनी कमाई सम्पत्तिके 'न्यासी'-मात्र हैं, इससे अधिक कुछ नहीं। हो सकता है कि मुझे अन्ततः घोर निराशा ही मिले, लेकिन मैं इसी आदर्शका हिमायती हूँ और मौलिक अधिकारोंकी घोषणामें भी यही अर्थ निहित है।

प्र० : क्या आप बौद्धिक कार्यके लिए अधिक पुरस्कारकी माँग करेंगे?

उ० : आदर्श समाजमें तो कोई भी अपनी बौद्धिक योग्यताके लिए अधिक पुरस्कारकी माँग नहीं कर सकता। जो अधिक कमाता है उसे अपने अतिरिक्त धन-का उपयोग सामाजिक उद्देश्योंके लिए करना चाहिए।

हमने गांधी [जी] से पूछा कि क्या आप ऐसा नहीं मानते कि भारतीय किसानों और मजदूरोंकी गरीबीका एक मुख्य कारण यह है कि उनके श्रमके फलको जमींदार और पूँजीपति हड़प लेते हैं, क्योंकि इन जमींदारों और पूँजीपतियोंके लाभका एक बहुत ही छोटा अंश सरकारी खजानेमें जाता है। उत्तरमें गांधी [जी] ने अपनी सह-मति प्रकट की।

प्र० : क्या आप ऐसा नहीं मानते कि अपनी सामाजिक तथा आर्थिक मुक्ति और परोपजीवी वर्गोंका बोझ ढोनेसे सदाके लिए छुटकारा पानेके लिए किसानों और मजदूरोंका वर्ग-संघर्षमें कूद पड़ना सर्वथा उचित है?

उ० : मैं तो स्वयं ही बिना कोई हिंसा किये उनके लिए क्रान्तिका प्रवर्त्तन कर रहा हूँ।[1]

प्र० : संयुक्त प्रान्तमें लगानमें कमी करवानेके अपने आन्दोलनके बलपर आप किसानोंकी दशा सुधार तो सकते हैं, लेकिन आप इस प्रणालीकी जड़पर ही प्रहार नहीं करते।

उ० : हाँ, नहीं कर रहा हूँ। लेकिन सब-कुछ एक ही साथ तो नहीं किया जा सकता।

प्र० : अगर किसान और मजदूर देशी राजाओं, जमींदारों, पूँजीपतियों तथा उनके मददगार मित्र ब्रिटिश सरकारके खिलाफ क्रान्ति करें तो आपका रवैया क्या होगा? और यह भी बताइए कि स्वतन्त्र भारतमें अथवा प्रोटेक्टोरेटके अधीनस्थ भारतमें या औपनिवेशिक स्वराज्य-प्राप्त भारतमें अथवा चाहे जिस परिस्थितिमें पड़े भारतमें ऐसी क्रान्ति होनेपर आपका रवैया क्या होगा?

उ० : मेरा प्रयत्न यह होगा कि मैं धनी-मानी वर्गोंको समझा-बुझाकर उन्हें उनके पास मौजूद सम्पत्तिके न्यासियोंका स्थान ग्रहण करने पर राजी करूँ। मतलब यह कि वे पैसा तो अपने पास रखेंगे, लेकिन उन्हें उन लोगोंके हित-साधनके लिए काम करना होगा जिनकी बदौलत उन्हें धन मिलता है। इस कामके लिए उन्हें कमीशन मिलेगा।

१. इससे आगेके प्रश्नोत्तर **यंग इंडिया**से लिये गये हैं।

प्र० : आप उनमें यह न्यास-व्यवस्था (ट्रस्टीशिप) लायेंगे कैसे ? लोगोंको केवल समझा-बुझाकर ?

उ० : केवल बातचीतसे समझा-बुझाकर नहीं। मैं अपने साधनपर ध्यान केन्द्रित करूँगा।[1] मुझे अपने समयका सबसे बड़ा क्रान्तिकारी कहा गया है। यह शायद सही नहीं है, लेकिन मैं इतना अवश्य मानता हूँ कि मैं क्रान्तिकारी हूँ — अहिंसक क्रान्तिकारी। मेरा शस्त्र 'असहयोग' है। कोई भी सहयोगके बिना फल-फूल नहीं सकता, चाहे वह सहयोग स्वेच्छासे दिया जाये या लाचारीसे।

प्र० : क्या आप आम हड़तालका समर्थन करेंगे ?

उ० : आम हड़ताल एक प्रकारका असहयोग ही है। जरूरी नहीं कि हड़ताल हिंसात्मक ही हो। अगर ऐसा आन्दोलन हर तरहसे शान्तिपूर्ण और उचित हो तो मैं उसका नेतृत्व करूँगा। इसे रोकना तो दूर रहा, उलटे मैं इसको बढ़ावा दूंगा।

प्र० : पूँजीपतियोंको न्यासी किसने बना लिया है और उनको कमीशन क्यों मिलना चाहिए ?[2]

उ० : उन्हें कमीशन इसलिए मिलना चाहिए कि पैसा उनके हाथोंमें है। उन्हें कोई 'न्यासी' बननेको मजबूर नहीं करता, बल्कि मैं उन्हें न्यासी बननेको आमन्त्रित करता हूँ। जिनके पास सम्पत्ति है, उन सबसे मैं न्यासी बननेको कहता हूँ। मतलब यह कि वे न्यासी इसलिए न बनें कि वे बा-हक़ सम्पत्तिके मालिक हैं, बल्कि इसलिए बनें कि जिन लोगोंका उन्होंने शोषण किया है वे लोग उन्हें सम्पत्तिका स्वामित्व सौंप रहे हैं। मैं इस कमीशनके लिए कोई निश्चित प्रतिशत नहीं तय कर रहा हूँ, बल्कि उनसे उतनेकी ही माँग करनेको कहता हूँ जितनेका वे अपने-आपको पात्र समझते हैं।

उदाहरणके लिए, जिसके पास सौ रुपये होंगे उससे मैं पचास अपने पास रखने और पचास मजदूरोंको दे देनेके लिए कहूँगा। लेकिन जिसके पास करोड़ रुपये होंगे उससे मैं — समझ लीजिए — एक प्रतिशत ही अपने पास रखनेको कहूँगा। तो इस तरह आप समझ सकते हैं कि मेरा कमीशन निश्चित अनुपातमें नहीं होगा, क्योंकि वैसा अनुपात तय करनेसे कुछके साथ अन्याय होगा।

प्र० : महाराजाओं और जमींदारोंने तो अंग्रेजोंसे गठबन्धन कर रखा है और आप उन्हींको 'न्यासी' बनानेको कहते हैं। लेकिन, आपके सबसे अच्छे अनुगामी आम जनताके बीच हैं और वे लोग महाराजाओं और जमींदारोंको शत्रु मानते हैं। अगर आम जनताको सत्ता प्राप्त हो जाये और वह इन वर्गोंका खात्मा कर देना तय करे तो आपका रवैया क्या होगा ?

उ० : इस समय तो आम जनता महाराजाओं और जमींदारोंको शत्रु नहीं मानती। लेकिन उसके साथ जो अन्याय किया जा रहा है, उसका बोध उसे करा

१. यह वाक्य **यंग इंडिया**से लिया गया है।

२. यह प्रश्न **यंग इंडिया**से लिया गया है।

देना जरूरी है। मैं आम जनताको पूँजीपतियोंको शत्रु माननेकी शिक्षा नहीं देता, बल्कि यह माननेकी सीख देता हूँ कि पूँजीपति लोग अपना नुकसान आप कर रहे हैं। मेरे अनुगामियोंने जनतासे कभी यह नहीं कहा है कि अंग्रेज या जनरल डायर बुरे आदमी हैं। उन्होंने उसे यह समझाया है कि वे एक प्रणालीके शिकार हैं और उन्हें व्यक्तियोंका नहीं, बल्कि इस प्रणालीका खात्मा करना चाहिए। यही कारण है कि आज यद्यपि जनता स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए आकुल है, फिर भी ब्रिटिश अफसर उसके बीच निःशंक भावसे रह सकते हैं।

प्र० : अगर आप इस प्रणालीपर प्रहार करना चाहते हैं तब तो ब्रिटिश पूँजी-पतियों और भारतीय पूँजीपतियोंमें कोई अन्तर है नहीं। फिर आप उन करोंके सम्बन्धमें अपने करबन्दीके तरीकेको क्यों नहीं लागू करते जो खुद आपके यहाँके जमींदार आप लोगोंसे माँगते हैं?

उ० : जमींदार तो इस तन्त्रका एक साधन-मात्र है। ब्रिटिश प्रणालीके साथ-साथ उनके खिलाफ भी आन्दोलन चलानेकी कोई जरूरत नहीं है। दोनोंमें स्पष्ट भेद किया जा सकता है। हमने लोगोंसे जमींदारोंको लगान न देनेको कहा है, क्योंकि वे इससे प्राप्त पैसेसे ही सरकारी खजाना भरते हैं। लेकिन, जमींदारोंसे वैसे हमारे अच्छे सम्बन्ध हैं।

प्र० : रवीन्द्रनाथ, बर्नार्ड शॉं तथा अन्य लोगोंके अनुसार रूसमें जमींदारों, पूँजी-पतियों और साहूकारोंके दमन तथा सोवियत शासन-प्रणालीकी स्थापनाके परिणाम-स्वरूप आम जनताकी सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक स्थिति थोड़े ही दिनोंमें बहुत सुधर गई है। यह तो देखा ही जा सकता है कि रूसमें, जो क्रान्तिके समय मुख्यतः एक कृषक देश था, धार्मिक तथा सांस्कृतिक दृष्टिसे वही परिस्थितियाँ मौजूद थीं जो आज भारतमें देखनेको मिलती हैं। इस सम्बन्धमें आपके विचार जाननेकी हमारी बड़ी तीव्र इच्छा है।

उ० : अव्वल तो मैं दूसरोंके विचारोंके आधारपर अपना विचार स्थिर करनेका आदी नहीं हूँ। इसीलिए मैं रूसकी अवस्थाके सम्बन्धमें अपनी कोई राय नहीं बना पा रहा हूँ। इसके अलावा चूंकि मैं यह मानता हूँ — और इसलिए मानता हूँ कि खुद सोवियत नेता भी यही कहते हैं — कि सोवियत प्रणाली बल-प्रयोगपर आधारित है, इसलिए उसके अन्ततः सफल होनेके बारेमें मुझे बहुत अधिक सन्देह है।

प्र० : किसान और मजदूर अपने भाग्यका निर्णय स्वयं करें, इसके लिए उन्हें पूरी सत्ता देनेके लिए आपका ठोस कार्यक्रम क्या है?

उ० : वही कार्यक्रम जिसपर मैं कांग्रेस द्वारा अमल करवा रहा हूँ। मेरा निश्चित मत है कि उसके परिणामस्वरूप किसानों और मजदूरोंकी अवस्था मानवस्मृतिमें पहले कभी भी जैसी रही है, उसकी अपेक्षा लाख दर्जे अच्छी हो गई है। मेरा मतलब उनकी आर्थिक स्थितिसे नहीं है, बल्कि उनमें आई उस असाधारण जागृति

से है जिसने उन्हें बहुत अधिक प्रभावित किया है और जिसके कारण अन्याय और शोषणका प्रतिरोध करनेकी उनकी क्षमता बहुत बढ़ गई है।

प्र०: आप किसानोंको पाँच अरबके ऋणसे कैसे छुटकारा दिलायेंगे?

उ०: ऋणकी ठीक राशि कोई नहीं जानता। अभी जो स्थिति है उसमें तो अगर कांग्रेसको सत्ता प्राप्त हुई तो वह किसानोंके तथाकथित दायित्वोंकी उसी प्रकार जाँच करेगी जिस प्रकारकी जाँचका आग्रह वह उन दायित्वोंके सम्बन्धमें कर रही है जो भावी भारतीय सरकार यहाँसे जानेवाली विदेशी सरकारसे अपने सिर लेगी।

गांधीजी से जो अगला सवाल पूछा गया — अर्थात् यह कि उन्होंने गोलमेज परिषद्में देशी राज्योंकी प्रजाके प्रतिनिधियोंके शामिल किये जानेकी माँग क्यों नहीं की — उसका भी उन्होंने वैसा ही विशिष्ट उत्तर दिया। उन्होंने कहा कि जिस परिषद्के गठनमें कांग्रेसका कोई हाथ ही नहीं था, उसमें किसीके भी शामिल किये जानेकी माँग करना कांग्रेसकी गरिमाके अनुकूल न होता। उन्होंने समझाते हुए कहा:

मैं कांग्रेसकी ओरसे अनुरोध नहीं कर सकता था और कांग्रेस चूंकि अभी कलतक सरकारके खिलाफ बागी रही है इसलिए उसके लिए भी कोई अनुनय-विनय करना शोभनीय नहीं था — किसीके परिषद्में शामिल किये जानेके लिए तो नहीं ही।

प्र०: मशीनसे आपका क्या मतलब है? क्या चरखा मशीन नहीं है? क्या कुछ मशीनें ऐसी होती हैं जिनसे शोषण नहीं किया जा सकता या आप यह मानते हैं कि वास्तवमें उनके इस्तेमालका तरीका ही उन्हें शोषणका साधन बनाता है?

उ०: चरखा और इस प्रकारके दूसरे साधन स्पष्ट ही मशीनें हैं, और इसीसे आप मेरी मशीनोंकी परिभाषा भी समझ सकते हैं। इस बातको मैं खुशी-खुशी स्वीकार करता हूँ कि दुनियाके मजदूरोंके शोषणका कारण मुख्यतः यन्त्र-प्रणालीका गलत ढंगसे उपयोग किया जाना ही है।

प्र०: आप जनसाधारणका शोषण खत्म करनेकी बात कहते हैं, जिसमें पूंजीवादके दमनकी बात भी निहित है। क्या आप पूंजीवादके दमनका इरादा रखते हैं, और अगर रखते हैं तो क्या आप पूंजीपतियोंसे उनका अतिरिक्त धन छीननेको तैयार हैं, ताकि वे फिरसे नया पूंजीवाद आरम्भ न कर सकें?

उ०: अगर मुझे सत्ता प्राप्त होगी तो मैं पूंजीवादको तो अवश्य खत्म कर दूंगा, लेकिन पूंजीको नहीं। जाहिर है कि मैं पूंजीपतियोंको भी खत्म नहीं करूंगा। मेरा निश्चित मत है कि पूंजी और श्रममें सामंजस्य स्थापित करना बिलकुल सम्भव है। मैंने कुछ-एक मामलोंमें ऐसा होते देखा भी है और जो बात एक मामलेपर लागू होती है वह सबपर भी लागू हो सकती है। मैं नहीं मानता कि पूंजी अपने-आपमें कोई बुरी चीज है — उसी तरह जिस तरह मैं मशीन-प्रणालीको अपने-आपमें बुरा नहीं मानता।

इसके बाद हमने धार्मिक मामलोंकी चर्चा शुरू की और गांधी [जी] से पूछा कि क्या आप ऐसा समझते हैं कि हिन्दू-मुस्लिम समस्या-जैसी कोई चीज है। उनका उत्तर स्पष्ट रूपसे स्वीकारात्मक था। इसके बाद हमने पूछा कि क्या यह समस्या जनसाधारणके लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है और अगर है तो क्या आप यह मानते हैं कि इसका उपचार राजनीतिक उपायों द्वारा किया जा सकता है या यह समझते हैं कि आपसी समझौता ही इसका इलाज है।

उ० : मैं नहीं समझता कि जनसाधारणके बीच इस समस्याका कोई अस्तित्व है; और अगर है भी तो बहुत कम। राजनीतिक उपायोंसे इसका समाधान नहीं किया जा सकता लेकिन समझौतेसे किया जा सकता है, क्योंकि जिस सीमातक समझौता जीवनके सिद्धान्तकी जड़ोंको कोई नुकसान नहीं पहुँचाता उस हदतक यह वास्तवमें जीवन-कलाका एक आवश्यक अंग है।

प्र० : अगर संघबद्ध भारतमें, जिसमें देशी राजाओंको अपने-अपने क्षेत्रोंमें स्वशासनका अधिकार प्राप्त होगा, उन राज्योंकी प्रजा भी उन मूलभूत राजनीतिक अधिकारोंकी माँग करे जिनका उपभोग ब्रिटिश भारतके लोग करेंगे और उसके लिए वह सविनय अवज्ञाका सहारा ले तथा उसकी माँगोंको स्वीकार करवानेके लिए जनान्दोलन शुरू हो जाये तो क्या उस आन्दोलनको दबानेमें राजाओंको सहायता देनेके लिए संघकी सेनाको भी बुलाया जायेगा? और उसके सम्बन्धमें आपका रवैया क्या होगा?

उ० : अगर मुझे सत्ता हो तो सविनय अवज्ञाको दबानेके लिए मैं न खुद उस सेनाका उपयोग करूँगा और न किसी औरको करने दूँगा — चाहे सविनय अवज्ञा जिस रूपमें भी और जहाँ भी हो। कारण यह है कि सविनय अवज्ञाको मैं मानव-जीवनका ऐसा स्थायी नियम मानता हूँ जो पूरी तरहसे हिंसाका स्थान ले सकता है — हिंसाका, जो पशु-जगत्का धर्म है।

प्र० : क्या यह सच है कि ब्रिटिश भारतमें आप जो अधिकार अंग्रेजोंसे माँगते हैं वही अधिकार देशी राजाओंसे माँगनेके लिए देशी राज्योंमें शुरू किये गये जनान्दोलनोंका समर्थन करनेसे आपने हाथ खींच लिया?

उत्तरमें गांधी[जी] ने आश्चर्य प्रकट करते हुए इस आरोपको झूठा बताया।

हमने उनसे पूछा कि "स्वतन्त्रता" और "साम्राज्य-सम्बन्धी मामलोंमें बराबरीके स्तर पर सहयोग करने" में उनके विचारसे क्या अन्तर है।

उ० : इन दोनोंमें अन्तर है भी और नहीं भी है। मतलब यह कि साम्राज्यके अन्तर्गत दो स्वतन्त्र राज्य सच्चे अर्थोंमें साझेदार हो सकते हैं और साम्राज्य-रूपी संगठनमें एक-दूसरेसे सहयोग कर सकते हैं। लेकिन, स्पष्ट ही भारत ऐसी स्थितिमें नहीं है। फलतः एक ही साम्राज्यके अन्तर्गत ब्रिटेनके साथ भारतका सम्बन्ध होना ऐसी अवस्था — या कहिए परिस्थिति — है जिसकी तुलना स्वतन्त्रतासे नहीं की जा सकती, क्योंकि तुलना दो समान ढंगकी चीजोंके बीच ही की जा सकती है। इसलिए

अगर ब्रिटेन और भारतके बीच समानताके दर्जेपर कोई सम्बन्ध कायम होना है तो साम्राज्यका अस्तित्व मिटना ही चाहिए।

इसके प्रत्युत्तरमें हमने कहा कि लाहौर कांग्रेसमें तो साम्राज्यके अन्तर्गत बराबरीके दर्जेके सम्बन्धका कोई उल्लेख नहीं किया गया।

गांधी[जी]ने जवाब दिया कि कांग्रेसमें इसका उल्लेख करनेकी कोई जरूरत नहीं थी, लेकिन भाषणोंमें तो इस सवालका जिक्र किया ही गया था।

प्र०: तो क्या सम्बन्धोंके बराबरीके स्तरपर होनेकी बात में ऐसी भी कोई तजवीज है कि भारतमें वाइसराय न रहे?

उ०: "साम्राज्य"की कल्पना तो बिलकुल समाप्त होनी ही चाहिए। लेकिन मैं निश्चयपूर्वक यह नहीं कह सकता कि राजत्वकी कल्पनाको भी समाप्त कर देना चाहिए या नहीं। इस समय मैं यह कहनेकी स्थितिमें बिलकुल नहीं हूँ कि ग्रेट ब्रिटेनका राजा भारतका राजा नहीं रह जायेगा।

प्र०: क्या आप इस बातका खयाल करके चल रहे हैं कि लाहौर कांग्रेसके समयसे, जब कि स्वतन्त्रताके लक्ष्यकी घोषणाने कलकत्तामें स्वीकार किये गये समझौतापरक प्रस्तावका स्थान ले लिया, भारतके नौजवान यह मानते रहे हैं कि वे ऐसे स्वतन्त्र भारतके लिए लड़ रहे हैं जिसमें राजाके लिए कहीं कोई स्थान नहीं होगा? क्या अब भारतके नौजवानोंसे यह कहना कि राजत्व कायम रहेगा, अप्रामाणिक राजनीति नहीं है?

गांधी[जी] इससे तनिक भी विचलित नहीं हुए और उन्होंने कहा कि यहाँ विश्वासघातकी कोई बात ही नहीं है। अगर यह सवाल मुझसे कराचीमें पूछा गया होता तब भी मैं यही जवाब देता।

प्र०: तब यह बताइए कि आपमें और मालवीय[जी]में, जो लाहौर कांग्रेसके प्रस्तावके विरुद्ध थे, क्या अन्तर है?

उ०: अन्तर यह है कि जहाँ मालवीय [जी] साम्राज्यको एक मौका और देना चाहते हैं, मैं बिलकुल नहीं देना चाहता।

प्र०: क्या आप राजा जॉर्ज तथा उनके पूर्वजोंके बारेमें ऐसा मानते हैं कि उन्होंने भारतको जबरदस्ती हथिया रखा है?

उ०: हाँ, मैं यह मानता हूँ कि ग्रेट ब्रिटेन और राजा जॉर्जने भारतको जबरदस्ती हथिया रखा है।

हमने इसके बाद उनसे पूछा कि क्या वे शोषणके विरुद्ध लड़नेवाले देशका कमजोर जातियोंके शोषणपर आधारित साम्राज्यका अंग बने रहना सम्भव मानते हैं।

उ०: नहीं, यह तो असम्भव है। ब्रिटिश शासन-प्रणाली और साथ ही पूँजीवादके निर्मूलनके प्रयत्नमें भी मैं जी खोलकर सहायता दूँगा, लेकिन पूँजी और पूँजीपतियोंके विनाशके प्रयत्नमें नहीं। अगर ब्रिटिश साम्राज्य कमजोर जातियोंका शोषण

बन्द नहीं करता तो हम उसके साथ सहयोग करनेसे इनकार कर देंगे। साम्राज्यवादी शोषणको समाप्त होना चाहिए। सहयोग स्वेच्छापर आधारित होगा और भारतको यह अधिकार होगा कि वह चाहे तो ब्रिटेनसे अपने सम्बन्ध तोड़ सकता है।

प्र० : आपने लॉर्ड इर्विनके साथ युद्ध-विराम समझौता किन कारणोंसे किया था? क्या इसका कारण — जैसा कि हमें बताया गया है — यह था कि कांग्रेस-आन्दोलन एक ही पक्षके सहारे चल रहा था और अगर समझौता न किया गया होता तो उसके बिलकुल कुचल दिये जानेका बहुत बड़ा खतरा था? और क्या इसका मतलब यह है कि कांग्रेसको और आपको यह डर था कि ब्रिटिश सरकारकी हिंसात्मक कार्रवाई आप सबको कहीं कुचल न दे? क्या अहिंसाके सिद्धान्तके हकमें यह ज्यादा अच्छा न होता कि आपमें से जो लोग उस सिद्धान्तमें विश्वास रखते हैं वे संघर्ष जारी रखते और ब्रिटिश सरकारके सामने किसी भी तरह झुकनेको तैयार न होते? उससे अगर आन्दोलनमें रुकावट भी आती तो उसकी पराजय ही उसकी विजय होती।

उ० : हमारे आन्दोलनके ठप हो जानेकी सम्भावनाके सम्बन्धमें जो-कुछ कहा जाता है, बिलकुल गलत है। आन्दोलनके शिथिल पड़नेके कोई लक्षण नहीं दिखाई दे रहे थे। यह सम्भव है, बल्कि ऐसा हुआ भी हो, कि कहीं-कहीं उत्साहमें कुछ कमी आई हो, लेकिन मुझे इसके बारेमें कुछ मालूम नहीं हुआ, क्योंकि तब मैं जेलमें था। लेकिन, जब सत्याग्रहियोंमें कुछ भी पस्ती दिखाई दे रही हो, उस समय कोई समझौता करना सत्याग्रहके नियमोंके बिलकुल खिलाफ होगा। दरअसल तो उसी समय वे कोई समझौता करनेको तैयार नहीं होते। मुझे ऐसा कोई भय नहीं था कि आन्दोलन कमजोर पड़ रहा है और जब मैंने सुलहकी बात रखी, न तब मेरे मनमें ऐसा कोई खयाल था। युद्ध-विरामकी बात अपनी ही खूबियोंके कारण स्वीकार की गई और जब उपयुक्त शर्तें सामने रखी जायें तब समझौता न करना सत्याग्रहके सिद्धान्तोंके खिलाफ है।

अगर हमने कष्ट-सहनके भयसे युद्ध-विराम स्वीकार किया होता तो आपकी राय सही होती, लेकिन अगर कोई सत्याग्रही अपने साथियोंको अकारण ही कष्ट-सहनकी स्थितिमें डाले तो वह अपने आदर्शसे च्युत हुआ माना जायेगा। अगर हमने किसी अधम अथवा स्वार्थमय उद्देश्यसे प्रेरित होकर युद्ध-विराम स्वीकार किया होता तो आपका कहना बिलकुल सही होता।

[अंग्रेजीसे]

लेबर मंथली, मार्च १९३२ और **यंग इंडिया**, २६-११-१९३१

१६६. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

लन्दन

३० अक्टूबर, १९३१

श्री विलियर्स[1] तथा श्री डुर्नोकी[2] हत्या करनेके प्रयत्नोंके विषयमें सुनकर मुझे बहुत दुःख हुआ है। हमारा काम बहुत कठिन है, लेकिन इस तरहकी नासमझी-भरी कार्रवाइयोंसे वह और भी कठिन हो जाता है। मेरा यह निश्चित विश्वास है कि ऐसे आक्रमणोंसे कोई लाभ नहीं होता, उल्टे हानि ही होती है, क्योंकि इनसे दोनों पक्षोंमें प्रतिशोधकी भावना बढ़ती है। मैं जानता हूँ कि इसपर मुझे दूसरे पक्षकी ओरसे लगातार की जानेवाली उत्तेजनात्मक कार्रवाइयोंका स्मरण दिलाया जायेगा — जैसे कि चटगाँवकी वह घोर बर्बरता जिसपर कविवर रवीन्द्रनाथ ठाकुरका भी मन क्रोधसे भर उठा था और हिजलीके नजरबन्द शिविरमें अन्धाधुन्ध गोलियाँ बरसाया जाना।

लेकिन मैं कहना यह चाहता हूँ कि आपको बड़ीसे-बड़ी उत्तेजनाका कारण होनेपर भी अहिंसाकी भावनाको कायम रखना चाहिए। हमारी सफलताका मार्ग अहिंसा ही है।

काश, ये अधीर युवक कांग्रेसके कार्यक्रमको सफल बनानेमें सहायता देकर मुक्तिके दिनको निकट लाते — मुक्ति, जो मेरे जानते उन्हें भी उतनी ही प्रिय है जितनी कि कांग्रेसको!

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ३१-१०-१९३१

१६७. भाषण : कॉमनवेल्थ ऑफ इंडिया लीगकी सभामें[3]

लन्दन

३० अक्टूबर, १९३१

उन्होंने कहा कि भारतकी वास्तविक स्थितिके सम्बन्धमें अंग्रेजोंके बीच बहुत अधिक अज्ञान है। यहाँ भारतके इतिहासके सम्बन्धमें भी बहुत-सारा झूठ फैलाया गया है। मेरे विचारसे अंग्रेज लोग भारतके इतिहासपर जो पुस्तकें पढ़ते हैं, उनमें से

१. कलकत्ताके यूरोपीय संघके अध्यक्ष ई० विलियर्सपर २९ अक्टूबरको उनके कार्यालयमें ही गोली चलाई गई थी, जिससे उन्हें मामूली चोट पहुँची थी।

२. ढाकाके जिलाधीश

३. सभा सेन्ट्रल हॉल, वैस्टमिन्स्टरमें हुई थी और उसकी अध्यक्षता हॉरैबिनने की थी।

अधिकांशमें एकांगी दृष्टिकोण पेश किया गया होता है। उदाहरणके लिए कलकत्ताकी "काली-कोठरीकी दुर्घटना" को लीजिए। अब पता चला है कि यह अधिकांशतः मनगढ़न्त ही थी। काल-कोठरीकी दुर्घटना-जैसी कोई बात हुई ही नहीं। भारतीय इतिहासकारों तथा अन्य निष्पक्ष लेखकोंने पाया है कि उतने सारे लोगोंको उस कमरेमें रखा ही नहीं जा सकता था।

आधुनिक इतिहाससे भी मैं अनेक दृष्टान्त दे सकता हूँ, और जिन बातोंको किसी समय परम सत्य माना जाता था, परवर्ती शोधोंसे प्रकट हुआ है कि वास्तवमें वे कपोल-कल्पनाएँ ही थीं। इसलिए कॉमनवेल्थ लीग-जैसी संस्थाओंका यह कर्त्तव्य है कि वे भारतके अतीत और वर्त्तमान दोनोंके सम्बन्धमें सही ज्ञान प्राप्त करें।

देखता हूँ, भारतमें आज जो-कुछ हो रहा है, उसके सम्बन्धमें भी चुप्पी लगाये रहनेकी एक साजिश चल रही है। चटगाँवमें बर्बरता — या कहना चाहिए नृशंसता — बरती गई है। चटगाँव बंगालका एक महत्त्वपूर्ण बन्दरगाह और शहर है। उसकी आबादी बहुत अधिक है और वहाँ बहुत बड़े-बड़े व्यापारियोंके कारोबार थे और हैं। बंगालके एक किशोरने, जिसकी उम्र लगभग १६ साल थी, एक अधिकारीकी हत्या कर दी। इसका बदला लेनेके लिए दुकानें लूटी गईं और ऐसे नृशंस कृत्य किये गये कि कविगुरु ठाकुरका मन भी आक्रोशसे भर उठा।

आपमें से बहुत-से लोगोंको मालूम होगा कि उनका स्वास्थ्य आजकल ठीक नहीं रहता और उनका शरीर जर्जर हो गया है अतः सामान्यतः वे कभी आश्रमसे बाहर नहीं निकलते, बल्कि शान्तिनिकेतनमें अपने ढंगके एक अनोखे महाविद्यालय और विद्यालयका संचालन करते हुए और तरह-तरहके प्रयोग करते हुए अपना समय पुस्तकोंके बीच बिताते हैं तथा अपने सपनोंकी दुनियामें खोये रहते हैं। उनके लिए बाहर जाना बहुत कठिन है, लेकिन इस प्रसंगपर तो उन्हें बाहर आये बिना चैन ही नहीं मिल सकता था।

चटगाँवके बाद हिजलीकी घटनाको लीजिए। यहाँ उन लोगोंको रखा जाता है जिन्हें नजरबन्द कहा जाता है। अब शायद आप जानना चाहेंगे कि नजरबन्दका मतलब क्या होता है। मैं अभी बताता हूँ। नजरबन्द आदमी ऐसा आदमी है जिसे बिना मुकदमा चलाये जेलमें रखा जाता है। उसे यह भी नहीं मालूम रहता कि उसके खिलाफ क्या आरोप हैं। केवल आतंकवादी होने अथवा किसी आतंकवादी संगठनका सदस्य होनेके सन्देहपर उसे नजरबन्द करके रखा जाता है और सो भी अनिश्चित कालके लिए। वह किसी भी तरह साधारण कैदीकी कोटिमें नहीं रखा जा सकता।

ऐसा कहा जाता है कि हिजलीके इन नजरबन्दोंने ठीक — मतलब, जिसे वहाँ तैनात गार्ड ठीक समझें, वैसा ठीक — व्यवहार नहीं किया। मैं आपको सिर्फ अख-बारोंमें छपी खबरें या हालमें हुई एक जाँचकी रिपोर्टके रूपमें प्राप्त साक्ष्यका केवल सार-मात्र बता रहा हूँ। उनके अनुचित व्यवहारके लिए उनपर गोली चलाई गई, जिसमें दोकी मृत्यु हो गई और कई घायल हुए।

हिजलीकी नृशंसतापर कविगुरुका मन आक्रोशसे भर उठा है। मैंने आपके सामने केवल उन्हींके नामका उल्लेख इसलिए किया है कि उन्हें सब लोग जानते हैं। उनके अलावा भी बहुत-से ख्यातनाम लोग इस नृशंसतापूर्ण कृत्यकी भर्त्सना करनेके लिए बुलाई गई सभाओंमें शामिल हुए हैं।

लेकिन एक यह देश है! आपको मालूम ही नहीं कि भारतमें क्या-कुछ हो रहा है और जो-कुछ हो रहा है उससे जनमानस किस तरह उद्वेलित है।

आपको तो ब्रिटेनके अखबार केवल इतना बता देते हैं कि वे नजरबन्द लोग बहुत खराब हैं। वे उसी व्यवहारके पात्र हैं जो व्यवहार सरकार कानून और व्यवस्थाके नामपर उनके साथ कर रही है।

अब मैं श्री विलियर्स और श्री डुर्नोकी जान लेनेके प्रयत्नोंके बारेमें आपसे कुछ कहूँगा। यह बात बहुत खेदजनक है और मेरे दृष्टिकोणसे तो कलंक-रूप है तथा मैं जिस चीजको लेकर चल रहा हूँ उसके खयालसे मुझे बहुत ही अटपटी स्थितिमें डालनेवाली है। फिर भी मेरी समझमें नहीं आता कि ऐसी घटनाओंपर इतना शोर क्यों मचाया जाता है। मुझे आपसे साफ-साफ कहना चाहिए कि चटगाँव और हिजली-जैसी घटनाओंको भी आपको, ब्रिटेनकी जनताको, उतना ही महत्त्व देना चाहिए।

आप इस तथ्यको नजरअन्दाज नहीं कर सकते कि भारत सरकार दमन-नीतिपर चल रही है, और परिणामस्वरूप, जिन लोगोंपर पागलपन सवार हो गया है, जो लोग, मुझे कहना चाहिए, अपना सन्तुलन खो बैठे हैं, वे आतंकवादी नीतिका सहारा ले रहे हैं। वे लोग प्रतिशोध लेनेपर उतारू हैं और कुछ लोगोंकी जानें लेनेको कृत-संकल्प हैं।

वे जो-कुछ कर रहे हैं, उसे सर्वथा अनुचित माननेका जितना दावा मैं करता हूँ उससे अधिक कोई नहीं कर सकता। मुझे हिंसासे चिढ़ है — खासकर जब वह मेरे अपने ही लोगों द्वारा की जाये। इससे मेरे प्रयोगमें बाधा पड़ती है। मैं अहिंसाके जिस उद्देश्यको लेकर इतने वर्षोंसे चल रहा हूँ, ऐसी कार्रवाई करना उसमें अविश्वास करना है।

यद्यपि ये नौजवान कांग्रेसमें शामिल नहीं हैं और न उसके कार्यक्रमसे ही सह-मत हैं, फिर भी इस तरहकी परिस्थितिसे मेरी कठिनाई और भी बढ़ जाती है। इससे प्रकट होता है कि कांग्रेस इन लोगोंपर इतना प्रभाव नहीं डाल सकी है कि वे ऐसे पागलपन-भरे कामसे बाज आ जायें।

चटगाँव और हिजलीमें जैसी बातें हुई हैं, वैसी बातें अगर किसी और देशमें होतीं तो वहाँ व्यापक विद्रोह भड़क उठता, लेकिन मेरे देशमें चीजें इतनी तेजीसे नहीं होतीं। इसके दो कारण हैं।

आप विश्वास कीजिए, मैं सचमुच ऐसा मानता हूँ कि मेरे देशवासी इतने पस्त हो गये हैं कि वे हिंसाका मुकाबला कर ही नहीं सकते, और गत दस वर्षोंसे मैं उन्हें जिस अहिंसा-धर्मकी शिक्षा देता आया हूँ, उसने उन्हें दुविधामें डाल दिया है। अहिंसासे लोगोंमें बड़ी जागृति आ गई है। इसीसे सरकार द्वारा की गई ऐसी उत्ते-

जनात्मक कार्रवाइयोंके बावजूद वे शान्त हैं। लेकिन यहाँके अखबार और प्रेस भारत की सही स्थितिका जायजा लेनेकी कोई चिन्ता ही नहीं करते। उन्हें वही करना चाहिए जो रसेलने क्रीमियाकी लड़ाईके समय किया था।[1] दुर्भाग्यवश आज हमारे बीच रसेल-जैसे लोग नहीं हैं, जो इंग्लैंडकी जनताको सही स्थिति बतायें। इसी प्रकार आज ऐसे अखबार भी नहीं हैं जो पूर्ण सत्य और मात्र सत्यको ही प्रकाशित करें। वे तो अपने हितोंके अनुकूल अधूरा विवरण, बिलकुल गलत चित्र पेश करनेपर ही आरूढ़ हैं।

वाइसरायने एक और अध्यादेश स्वीकार किया है। क्या आप जानते हैं कि अध्यादेश क्या होता है? अध्यादेश विधान-सभाकी उपेक्षा करके पास किया जाता है और उसे वाइसराय अपने विशेषाधिकारके बलपर पास करता है। अध्यादेशसे पुलिस को लोगोंको बिना मुकदमा चलाये गिरफ्तार करने और उन्हें नजरबन्द रखनेका विस्तृत अधिकार प्राप्त हो जाता है। यह कुछ इस तरह किया जाता है मानों पुलिस-को पहलेसे जो अधिकार प्राप्त हैं, वे काफी नहीं हैं। खुद मैं समझता हूँ कि इन नये अधिकारोंकी कोई जरूरत नहीं है, लेकिन भारत सरकार तो जब ऐसी कोई आतंकवादी कार्रवाई होती है तब — अनुचित न हो तो कहूँ कि — अपना आपा ही खो बैठती है। इसे प्रतिशोध नहीं, बल्कि दमन कहा जाता है। आज यह शुरू हुआ है और बहुत दिनोंतक चलता रहेगा। लेकिन इस दमनके बावजूद आतंकवादी विचार-धाराके लोग सक्रिय हो उठे हैं। उन्होंने सारा भय त्याग दिया है और अगर मैं ऐसा कहूँ कि वे बेवकूफी-भरी बहादुरी दिखानेपर उतारू हो गये हैं तो अनुचित न होगा। वे कुछ भी करनेसे नहीं डरते। जान तो उन्होंने पहलेसे ही हथेलीपर रख ली है। वे समझते हैं कि देश-सेवाके आगे उनकी जानकी कोई कीमत ही नहीं है।

चटगाँव और हिजली-जैसी घटनाओंको रोकनेका एकमात्र उपाय यही है कि भारतको अपना कार्य-व्यापार खुद सँभालने दीजिए। अगर वह अपने कार्य-व्यापारका कुप्रबन्ध ही करता है तो उसे वह भी करने दीजिए। जिस प्रकार आपको अपने कार्य-व्यापारका कुप्रबन्ध या सुप्रबन्ध करनेका अधिकार है उसी प्रकार उसे भी यह अधिकार है। अभी हालमें आपने ऐसा किया है। आपने अपने कार्य-व्यापारका निरा कुप्रबन्ध ही तो किया। आप जिस आदमीको जहाँ रखना चाहिए उसे वहाँ नहीं रखते, जिसे जहाँ नहीं रखना चाहिए उसे वहाँ रख देते हैं। यह तो ढेंकुलका खेल है। गलती कीजिए तो आप अनुभवसे उसे सुधार भी लेंगे। यह बहुत अच्छा खेल है (जोरोंकी हँसी)। मानव-स्वभाव ही ऐसा है। लेकिन भारतमें क्या स्थिति है? हम अपने कार्य-व्यापारकी व्यवस्था खुद नहीं कर सकते। आज भारत एक बड़ा कैद-खाना बनकर रह गया है। हम सब कैदी हैं। अंग्रेज स्त्री-पुरुष हमारे जेलर हैं।

१. सर विलियम हावर्ड रसेलने **टाइम्स**में प्रकाशित अपनी क्रिमियासे भेजी रिपोर्टमें क्रिमियाई-युद्धके संचालनकी अव्यवस्थाका पर्दाफाश किया था और फ्लॉरेन्स नाइटिंगेलको सैनिकोंकी सेवा करनेकी प्रेरणा दी थी।

आपको अपनी जिम्मेदारी महसूस करनी चाहिए — जिस प्रकार हमें अपने कामका लेखा-जोखा देना है उसी प्रकार आपको भी जेलरके रूपमें अपने कामका हिसाब देना होगा।

तो इससे क्या प्रकट होता है? इससे हमारा अस्वाभाविक सम्बन्ध प्रकट होता है। मुझे आपसे साफ कह देना चाहिए कि इस अस्वाभाविक सम्बन्धको समाप्त करना चाहिए। हम भारतीयोंको केवल अपनी स्वाधीनता प्राप्त करनी है। ईश्वरने चाहा तो देनेवालेकी इच्छा न होनेपर भी हम अपनी स्वाधीनता प्राप्त करके रहेंगे। एक नेक अंग्रेजके प्रयत्नोंसे हमें अपना-अपना दायित्व निभानेके लिए जो कुछ दिनोंका सुअवसर मिला है वह अब शायद जल्द ही समाप्त हो जाये। उसने सोचा कि हम काफी कष्ट भोग चुके हैं और इसलिए हमें जेलकी चारदीवारीसे निकाल दिया। उसने हमसे सुलहकी बातचीत की, जिसके परिणामस्वरूप एक समझौता हुआ; उसी समझौतेके कारण कांग्रेसके लिए गोलमेज परिषद्में आ पाना सम्भव हुआ।

उसने हमारे सामने जो प्रस्ताव रखा उसे अगर मैं स्वीकार नहीं करता तो एक सत्याग्रहीके नाते मेरा यह आचरण गलत होता।

अब मैं आपके सामने कुछ बहुत बड़े सत्य रख रहा हूँ। भारतमें जो स्थिति है उसे समाप्त कर देना बेहतर है, सचमुच बेहतर है। लेकिन आपको बता दूँ कि इसमें आपका कोई दोष नहीं है। यह मेरी अपनी कमियोंका नतीजा है। हमने अभी पर्याप्त कष्ट नहीं सहा है। मैं भारत जाकर अपने देशभाइयोंका एक बार फिर उस अग्नि-परीक्षासे गुजरनेके लिए आह्वान करनेमें सन्तोष मानूँगा।

चटगाँव और हिजलीकी घटनाएँ मेरे लिए प्रकाश-स्तम्भ हैं। वे हमें किसी बातका संकेत दे रही हैं — इस बातका कि मुझे तुरन्त भारत चल देना चाहिए। लेकिन मैं क्रोधमें आकर परिषद्को छोड़कर एकाएक नहीं चला जाऊँगा।

इसका मतलब यह नहीं कि मुझे कभी क्रोध नहीं आता। लेकिन ईश्वरने मुझे क्रोधको दबानेकी पूरी शक्ति दी है। लेकिन चाहे मुझे क्रोध आये या न आये, मैं इन बातोंके कारण यहाँसे तुरन्त चला जानेवाला नहीं हूँ। मैं परिस्थितियोंको देखूँगा, प्रतीक्षा और प्रार्थना करूँगा तथा लोगोंसे अनुनय-विनय करूँगा, लेकिन मैं अपना यह अधिकार सुरक्षित रखता हूँ कि अगर गोलमेज परिषद् विफल हो जाती है, तथा कांग्रेस जो-कुछ माँगती है और जिसे पानेका उसे अधिकार है वह सब नहीं देती तो मैं वही करूँगा जो अभी कुछ ही दिन पहले हमने किया था।

मैं आशा करता हूँ कि समय आनेपर हमें जो-कुछ करना है, उसमें हम कुछ कम नहीं पाये जायेंगे। तब आपकी बारी आयेगी कि आप इंग्लैंडको जगायें।

इसलिए आप आजसे यह समझनेकी कोशिश करें कि कांग्रेसका क्या मतलब है, चटगाँवका क्या मतलब है और हिजली-कांड क्या अर्थ रखता है।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ४-११-१९३१

१६८. तार : वल्लभभाई पटेलको

३१ अक्टूबर, १९३१

सरदार वल्लभभाई
बारडोली (भारत)

बंगालके दमन[1] और अन्य बातोंमे मैं चिन्तित। यहाँ अपनी असहायावस्था महसूस करता हूँ फिर भी अभी यहाँ रहना और उसके बाद यूरोपका दौरा करना जरूरी मानता हूँ। इसका मतलब यह हो सकता है कि मैं जनवरीके मध्यसे पूर्व भारत न लौट सकूँ। सोच-विचारकर अपनी राय भेजिए।[2]

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८२११)से।

१६९. तार : शैलेन्द्रनाथ घोषको[3]

३१ अक्टूबर, १९३१

घोष
३१ यूनियन स्क्वेयर
न्यूयार्क

आपका तार मिला। खेद है कि अमेरिका न आ सकूंगा। श्रीमती घोषके पत्रमें पूरा कारण बता दिया है।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८२०९)से।

१. सन् १९३१ के बंगाल अपराध-कानून अध्यादेश सं० ९ के अन्तर्गत बंगाल सरकारको और अधिक सत्ता देकर दमनकी कार्रवाई (देखिए पिछला शीर्षक) शुरू की गई थी।

२. इसके उत्तरमें वल्लभभाई पटेलने तार द्वारा सूचित किया था कि भारतमें स्थिति बहुत खराब होती जा रही है और गांधीजी का परिषद्के सिलसिलेमें रुके रहना कार्य-समितिकी दृष्टिसे बेकार है। फिर भी, इस बारेमें अन्तिम निर्णय गांधीजी पर ही छोड़ दिया गया था, क्योंकि इंग्लैंडकी परिस्थितिको तो वही ज्यादा अच्छी तरह जानते थे। लेकिन गांधीजी के यूरोपके दौरेके बारेमें कहा था कि उससे बात बिगड़ सकती है और गांधीजी के लिए जल्दी लौट आना वांछनीय है।

३. यह शैलेन्द्रनाथ घोषके ३०-१०-१९३१ के उस तारके उत्तरमें दिया गया था जिसमें उन्होंने गांधीजी को अपनी पत्नीके नाम लिखे पत्रके लिए धन्यवाद देते हुए अमेरिका आनेकी सलाह दी थी।

१७०. भाषण : फ्रेंड्स हाउसमें[1]

लन्दन

३१ अक्टूबर, १९३१

१. संक्षेपमें मुझे कहना चाहिए कि इस शब्दका[2] प्रयोग इसके शब्दकोशवाले अर्थमें ही किया जा रहा है, लेकिन कांग्रेसके प्रादेशपत्रमें कहा गया है कि किसी भी पक्षकी इच्छा होनेपर साझेदारीको समाप्त कर देनेकी बातको इसमें बाहर नहीं माना गया है। किसी प्रकारकी उलझन और अनिश्चितता न रहे इसलिए प्रादेशपत्रमें इस बातका स्पष्ट उल्लेख किया गया है। इसमें तीनों महत्त्वपूर्ण विषयोंपर [जनताके प्रति जिम्मेदार] सरकारका नियन्त्रण भी शामिल है। किन्तु इन विषयोंपर उसका नियन्त्रण उस हदतक मर्यादित रहेगा जिस हदतक भारतके हितकी दृष्टिसे ऐसी मर्यादा लगाना नितान्त आवश्यक समझा जायेगा। ऐसे दो राष्ट्रोंके लिए जिनमें से एक पराधीन रह चुका है और दूसरा उसका शोषण करता रहा है, एक-दूसरेका साझेदार बनना कोई आसान बात नहीं है। अगर हमारा संघर्ष अहिंसात्मक न होता तो स्वाधीनता और साझेदारी, इन दो बातोंके बीच किसी भी तरहसे संगति नहीं बैठाई जा सकती और उस हालतमें पूर्ण सम्बन्ध-विच्छेद आवश्यक होता।

२. कनाडाको ग्रेट ब्रिटेनका साझेदार नहीं माना जाता। वह तो ग्रेट ब्रिटेनका ही एक शाखा-राज्य है। दोनोंकी सभ्यता एक है — जीवन-पद्धति एक है — और वैसे तो कहा जा सकता है अन्ततः सारी मानवता ही एक है, लेकिन हमारी एक अलग सभ्यता है। स्वाधीनताका उल्लेख इसलिए किया गया कि हमारे दिमागमें गुलाम राष्ट्र होनेका कोई भाव न रह पाये। इसके अलावा इसका प्रयोग औपनिवेशिक स्वराज्यके दर्जेसे हमारे दर्जेमें फर्क बतानेके लिए किया गया है। किसी समय तो मैं औपनिवेशिक दर्जेके पक्षमें था, लेकिन जब विधि-विशेषज्ञोंने मेरे विचारके खिलाफ दलील देते हुए यह समझाया कि स्वाधीनता औपनिवेशिक स्वराज्यसे उच्चतर वस्तु है तो मैंने मनमें कहा कि निश्चय ही मैं स्वाधीनतासे कम किसी दर्जेके पक्षमें नहीं हूँ। मैंने उनसे कहा कि अगर औपनिवेशिक स्वराज्य निम्नतर वस्तु है तो मैं स्वाधीनताके पक्षमें हूँ।

३. ब्रिटिश राष्ट्रमण्डलसे तो अलग नहीं, लेकिन अगर भारत वास्तवमें स्वाधीन होना चाहता है तो साम्राज्यसे यह कोई सम्बन्ध नहीं रखेगा। यह साम्राज्य इसलिए है कि इसके अधीन राजे-महाराजे हैं, सामन्त राज्य हैं; ग्रेट ब्रिटेनको इन राजाओं-महाराजाओंपर अपना प्रभुत्व रखना छोड़ना होगा। इसका मतलब साम्राज्य

१. क्वेकरोंके साथ गांधीजी की इस बातचीतका एक संक्षिप्त विवरण महादेव देसाईने **यंग इंडिया,** १९-११-१९३१ के अंकमें प्रकाशित अपने "लन्दनका पत्र" में दिया है।

२. साझेदारी।

और साम्राज्य-भावनाकी समाप्ति है। जो राष्ट्र शोषणमें विश्वास रखता है और अपना व्यापार बलके आधारपर चलाता है, उससे मुझे कोई सरोकार नहीं रखना चाहिए। यहाँ सवाल एक बहुत बड़े सिद्धान्तका है। हम न केवल शोषणसे छुटकारा पानेको आतुर हैं, बल्कि भारतको बहुत अधिक औद्योगिक राष्ट्र बनने और किसी भी राष्ट्र या व्यक्ति-समूहपर अपना प्रभुत्व स्थापित करनेसे रोकनेको भी व्याकुल हैं। राष्ट्रोंके बीच सच्ची और जीवन्त समानता होनी चाहिए, और अगर इस स्थितिके आनेमें अभी वर्षों लगने हैं तो जबतक हम उसे पा नहीं लेते, हम वीरानेमें भटकते रहना पसन्द करेंगे। यह कोई शब्दोंका ढकोसला नहीं, बल्कि मानव-स्वभावकी एक मौलिक आकांक्षा है।

प्र० : अभी कुछ वर्ष तो ग्रेटब्रिटेन गोल्ड कोस्ट-जैसे कतिपय क्षेत्रोंको अधीन रखेगा। क्या आपको इसपर भी आपत्ति है?

उ० : बेशक मुझे आपत्ति होगी। निस्सन्देह भारत ब्रिटेनकी नीतिको प्रभावित करना चाहेगा। मान लीजिए कि वैस्ट कोस्ट या स्वाजीलैंडमें स्वाधीनताकी माँग की जाती है तो भारत यह महसूस करेगा कि . . .।[1] मैं भारतको दमनका साधन नहीं बनने देना चाहता। मैं वह दिन देखनेको आतुर हूँ जब भारत दूसरे राष्ट्रोंकी आक्रामक प्रवृत्तिपर एक अंकुशका काम करेगा। लेकिन मैं तत्काल सम्बन्ध-विच्छेद नहीं करूँगा, यद्यपि मैं यह जानता हूँ कि जुलू और स्वाजी लोगोंको भ्रष्ट किया जा रहा है और उनका शोषण हो रहा है। यह नीति सर्वथा गलत है। इन्हें अपना उपनिवेश कहना गर्वकी बात नहीं होनी चाहिए। ऐसा कहना बेकार है कि जबतक ये ताजके उपनिवेश हैं तबतक हम इनके लिए सब-कुछ करते हैं, और जब इन्हें स्वराज्य मिल जायेगा तो हम कुछ नहीं करेंगे।

प्र० : साझेदारीका मतलब आर्थिक गठ-बन्धन है या इस सम्बन्धका आधार साझेदारोंके लिए एक सामान्य ब्रिटिश ताज होना है?

उ० : यह सवाल मेरे मनको बहुत परेशान करता रहा है। ताज तो है, लेकिन उससे मुझे कहाँतक सम्बन्ध रखना चाहिए, यह मैं नहीं कह सकता। इसपर मुझे मित्रोंसे बातचीत करनी चाहिए। यह बहुत ही वास्तविक और अच्छा प्रश्न है कि भारतको ताजके साथ क्या सम्बन्ध रखना चाहिए। कौंसिलकी क्या परिभाषा की जायेगी, इसमें नैतिक अड़चन कम उपयुक्त भाषाके प्रयोगका सवाल ज्यादा है।

प्र० : आप राष्ट्रोंके बीच सन्धि-सम्बन्धोंकी तरह साझेदारीके समाप्त किये जानेकी बात कहते हैं, लेकिन उसकी समाप्तिकी शर्त क्या होगी?

उ० : यह कि अगर साझेदारी ब्रिटेनके लिए लाभदायक नहीं है तो उसे उससे अलग हो जाना चाहिए। सामान्य सम्बन्धोंका स्वरूप अनुबन्धात्मक सम्बन्धवाला होगा। संवैधानिक साझेदारीके लिए मैंने कोई शर्त निर्धारित नहीं की है। हाँ, इसमें साझेदारीसे अलग होनेसे पहले उसकी सूचना देनेकी बात जरूर शामिल है।

१. मूलमें यहाँ कुछ शब्द स्पष्ट नहीं हैं।

४. अभीतक मैंने [किसीके लिए भी] विशेष सुरक्षाकी व्यवस्थाको स्वीकार नहीं किया है। जब मुझे जवाब देनेके लिए बाध्य किया गया है तो मैंने भारतीय सिविल सेवा तथा सेनाके उन अधिकारियोंके सम्बन्धमें जिन्हें आप वहाँ रहने देंगे, सुरक्षाकी बात कही है। कारण, हम दुनियाके सामने एक साखवाले राष्ट्रके रूपमें जाना चाहते हैं। हम अपने सिर जो जिम्मेदारियाँ ले रहे हैं, उनके सम्बन्धमें हमें अपने-आपको पूरी तरह आश्वस्त कर लेना चाहिए . . .।[1] मेरे बारेमें सरासर झूठी बात कही गई है कि मैं तो कोई भी देनदारी स्वीकार करनेको तैयार ही नहीं हूँ। [भारत सरकार द्वारा चालू किये गये] कर्जोंमें पैसा देनेवाली विधवाओंकी बरबादी आदिका भयावह चित्र पेश किया गया है। यह बिलकुल झूठ है। उस पक्षका तो किसी भी तरह कोई नुकसान किया ही नहीं जा सकता। इन देनदारियोंके सम्बन्धमें साझेदारकी हैसियतसे ग्रेट ब्रिटेनकी ईमानदारी, प्रतिष्ठा बल्कि सब-कुछ कसौटीपर चढ़ा हुआ है। जो-कुछ किसी व्यापारिक पेढ़ीमें होता है, वह सब ब्रिटेन और भारतके बीच भी होना चाहिए। हमें लेनदारोंको इस बातके लिए आश्वस्त कर देना चाहिए कि हम जो देनदारियाँ अपने सिर ले रहे हैं, उन्हें चुकाया जायेगा। एक तीसरी चीजके सम्बन्धमें भी सुरक्षात्मक पूर्वोपायकी बात आती है। वह चीज है भारतमें यूरोपीयोंके मौजूदा हित। . . .[2] प्रत्येक न्यायोचित हितको कानूनन सुरक्षा प्रदान की जायेगी। हमारा जातिगत भेदभाव बरतनेका कोई इरादा नहीं है। हम दक्षिण आफ्रिकामें तथा अन्यत्र भी लड़ते रहे हैं। लेकिन यह एक बात है और विनाशकारी स्पर्धासे राष्ट्रकी रक्षा करना बिलकुल दूसरी बात है। स्वीडनकी दीयासलाईके कारखानोंकी एक व्यावसायिक पेढ़ी है। एक महारोगकी तरह वह अब भारतमें उतर आई है और उससे भारतके कारखानोंकी बरबादीका खतरा पैदा हो गया है। उन व्यापारियोंने बहुत अच्छी शर्तोंपर सरकारसे सौदा कर लिया है। उन्हें बहुत उपयुक्त जमीन मिल गई है और यहाँतक कि वे अण्डमानमें भी प्रवेश कर गये हैं। इसपर मुझे आपत्ति इसलिए नहीं है कि ये स्वीडनके व्यवसायी हैं। यह तो भारतीय व्यवसायियोंकी पेढ़ी होती तब भी इसपर मैं आपत्ति करता। हमारी साझेदारीमें विशेष सुविधा-प्राप्त राष्ट्रके दर्जेसे सम्बन्धित एक धारा रहेगी; लेकिन उसमें जातिगत भेद-भावकी कोई बात नहीं होगी।

५. प्रक्रिया तो स्वभावतः वही होगी जो अलग होनेवाली और शामिल होने-वाली पेढ़ियोंके बीच होती है।[3] . . . अगर ब्रिटेन यह चीज करना चाहता है तो उसे शोभनीय ढंगसे करना चाहिए। सुरक्षात्मक पूर्वोपायोंसे स्वतन्त्रतामें किसी भी तरहकी कमी नहीं आती।

हॉरेस अलेक्जेंडर : शूस्टरका कहना है कि एक रिजर्व बैंक स्थापित करने और नया आन्तरिक ऋण इकट्ठा करनेका आश्वासन दिया जाये।

१. यहाँ कुछ शब्द स्पष्ट नहीं हैं।

२ व ३. यहाँ कुछ वाक्य, जिनका आशय स्पष्ट नहीं है, छोड़ दिये गये हैं।

६. गांधीजी : हमें यह करना पड़ेगा। हम भी रिजर्व बैंक चाहते हैं, लेकिन उसके लिए कोई आरक्षित निधि नहीं है। हमारे पास आरक्षित स्वर्ण-निधि नहीं है। मैं क्या चाहता हूँ, मैंने आपको इसका एक संकेत दे दिया है। स्वेच्छापर आधारित साझेदारी। लेकिन अवधिके बारेमें मैं कुछ नहीं कह सकता।

७. कोई भी चुनावके बलपर नहीं आया — निमन्त्रणपर भी कोई नहीं आया। अगर प्रधान मन्त्री चाहते तो मुझे परिषद्में शामिल होनेसे रोक सकते थे। किसी संसद-सदस्यको बाहर नहीं रखा जा सकता। किसीको बाहर रखनेके लिए किसी भी निश्चित कार्य-विधिकी आवश्यकता नहीं है। यह स्थिति बहुत अटपटी है। मैं एक राष्ट्रके अतिथिके रूपमें आया हूँ और मुझे सँभल-सँभलकर चलना चाहिए और मैं आपको यह नहीं बता सकता कि मैं कितना सँभल-सँभलकर चल रहा हूँ। . . .[1] मेरे सामने एक बहुत बड़ी नैतिक दुविधा है। मुझे राजाके यहाँ एक भोज-समारोहमें निमन्त्रित किया गया है। भारतमें जो-कुछ हो रहा है उससे मेरा मन इतना व्यथित है और मैं इतना आहत महसूस कर रहा हूँ कि उस समारोहमें न जाना ही मुझे अच्छा लगेगा। अगर मैं निर्वाचित प्रतिनिधि होता तो मुझे वहाँ जानेमें कोई संकोच न होता। वैसे तो यह समारोह सामाजिक है, लेकिन इसका असली स्वरूप राजनीतिक है। लेकिन मैं जल्दीमें कोई निर्णय नहीं लेने जा रहा हूँ। मैंने व्हाइट हॉलसे सम्पर्क किया। मैं हर क्षण किसी चीजकी वैधता नहीं, बल्कि उसके नैतिक औचित्यको समझकर ही चलनेवाला आदमी हूँ।

इस परिषद्में सदस्य जहाँ-तहाँसे नामजद करके भर दिये गये हैं। दूसरे प्रतिनिधि वाइसरायके चुने हुए हैं। परिषद्के गठनके सम्बन्धमें उनकी सारी कल्पना ही गलत थी। चुनाव उन्होंने किया और उनके लिए ऐसा निर्णय करना सम्भव नहीं था, जिसमें गलती न हो। मैं आपको बता सकता हूँ कि इस सबके पीछे कितनी चाल रही है, और जो-कुछ हुआ है उसमें कितना जोड़-तोड़ किया गया है। महासभाको हम निश्चय ही अपने बसमें कर लेते। अस्पृश्योंका एकमात्र निर्वाचित प्रतिनिधि मैं ही होता। अगर मैं पृथक् प्रतिनिधित्वकी इस गन्दी योजनाको स्वीकार कर लेता हूँ तो उसका मतलब उनके जन्मसिद्ध अधिकारको बेच देना होगा। मुंजे मेरे मित्र हैं, लेकिन प्रतिक्रियावादी हैं। क्या कांग्रेस कभी भी देशी राज्योंकी प्रजाके अधिकारोंका इस तरह बेच दिया जाना स्वीकार कर सकती थी? राजाओंके लिए यह कहना कि वे अपनी प्रजाका भी प्रतिनिधित्व करते हैं, शैतानी है। राजा लोग यहाँ दो हैसियतोंसे आयें, यह परिषद्के गठनमें एक घातक दोष है। एक देशी-राज्य प्रजा परिषद् है, लेकिन उनको अपने फौलादी नियमोंमें बाँधकर मैंने ही रोक रखा है। उन्हें मैंने ही रोक रखा है और यद्यपि वे बड़े ऊँचे दर्जेके और काफी योग्य लोग हैं हैं, फिर भी मैंने उनसे अपनी वर्तमान स्थितिसे सन्तुष्ट रहनेको कहा है। लेकिन इससे आपको यह तो स्पष्ट हो गया होगा कि परिषद् सर्वथा अप्रातिनिधिक है। आज सम्प्रदायवादियोंकी चर्चा अखबारोंके मुख पृष्ठपर की जाती है। मैं तो मुसल-

१. यहाँ मूलमें कुछ शब्द अस्पष्ट है।

मानों और सिखोंसे वेहिचक कहूँगा कि आप जो ले सकते हैं, ले लीजिए। आज यह एक स्वप्नदर्शीका स्वप्न-मात्र है। इसलिए मैंने तीन सुझाव दिये हैं: (१) मैंने गोलमेज परिषद्के सामने हिन्दुओं, मुसलमानों और सिखों, तीनोंकी समिति द्वारा तैयार की गई कांग्रेसकी योजना रखी है। उन लोगोंने सभी प्रमुख मुसलमानों और प्रमुख सिखोंसे मिलकर यह योजना तैयार की है। (२) यह योजना स्वीकार न हो तो आपसमें पंच-फैसले द्वारा निवटारा कर लिया जाये। (३) यह भी न हो सके तो एक न्यायाधिकरण नियुक्त किया जाये। चौथी चीज — अर्थात् यह कि सरकारसे कोई समाधान सुझानेको कहा जाये — ऐसी है जिसमें मैं कभी शरीक नहीं हो सकता। इसका मतलब तो देशको बेच देना होगा। कारण, ऐसे मामलोंमें कोई भी सरकार ऐसा समाधान नहीं सुझायेगी जो खुद उसके अनुकूल न हो। मैंने कहा कि ज्यादासे-ज्यादा यही किया जा सकता है कि हम इस सवालको लेकर ब्रिटिश न्यायालयमें जायें। न्यायाधिकरणमें गैर-हिन्दू और गैर-मुसलमान न्यायाधीश हों अथवा प्रिवी कौंसिलकी न्यायिक समितिके सदस्य। ये मेरे ठोस वैकल्पिक सुझाव हैं। अगर सरकार साहससे काम नहीं ले सकती तो परिषद्का विफल होना निश्चित है। सरकारने यह कहकर कि साम्प्रदायिक मसलेके हलके विना कुछ नहीं किया जा सकता अपनेको बहुत अटपटी स्थितिमें डाल लिया। साम्प्रदायिक सवालसे सुरक्षा-व्यवस्थाका क्या सम्बन्ध है? कांग्रेसने मामलेके साम्प्रदायिक समाधानकी बात मान लेनेकी मूर्खता की और उससे जो भूल हो चुकी है, उसका मार्जन अब आसानीसे नहीं किया जा सकता। डाकगाड़ीसे कूदकर मैं हवाई जहाजपर कैसे सवार हो सकता हूँ? वह तो अपने विनाशको निमन्त्रण देना होगा।[1] . . .

मैंने आपको मोटे तौरपर यह बता दिया कि कौन-सी चीजें मुझे परेशान कर रही हैं। आप चाहें तो यह सोच सकते हैं कि कांग्रेसको स्वराज्यके लिए किसी भी अल्पसंख्यक समुदायके अधिकारोंका सौदा करनेका हक नहीं है। पृथक् निर्वाचक-मण्डल स्वीकार करना कांग्रेसकी दृष्टिमें मुसलमानों, सिखों, हिन्दुओं और समूचे राष्ट्रके लिए बुरा है। लेकिन सबसे बुरा अस्पृश्योंके लिए है। अस्पृश्योंकी समस्या इससे ऊपर है। मैं, जिसने अस्पृश्योंके सुख-दुःखको अपना सुख-दुःख समझा है और जो उनके जीवनको जानता-समझता है, ऐसा मानता हूँ कि उन्हें पृथक् निर्वाचक-मण्डल देना उनको मार देनेके समान होगा। वे उच्चतर वर्गोंके हाथोंमें हैं। वे लोग उन्हें पूरी तरह दबा सकते हैं और इनसे, जो पूरी तरहसे उनकी दयापर निर्भर हैं, प्रतिशोध ले सकते हैं।

मैं आपके सामने अपनी शर्मनाक स्थितिका भले इजहार कर रहा हूँ। लेकिन मौजूदा परिस्थितियोंमें पृथक् निर्वाचक-मण्डल स्वीकार करके मैं उनके विनाशको आमन्त्रण कैसे दे सकता हूँ? मैं इस अपराधका भागी नहीं बनूंगा। अपनी समस्त योग्यताओंके बावजूद डॉ० अम्बेडकर इस सवालपर अपना विवेक खो बैठे हैं। जहाँ-

१. आगेके कुछ शब्द स्पष्ट नहीं हैं।

कहीं भी हिन्दू धर्म है, वहाँ उन्हें अन्याय ही दिखाई देता है। अगर वे अस्पृश्योंके सच्चे प्रतिनिधि होते तो मैं अलग हो जाता। आज वे इस सवालपर सुसम्बद्ध ढंगसे और विवेकके साथ विचार नहीं कर सकते। मैं उनका अस्पृश्योंका प्रतिनिधि होनेका दावा स्वीकार नहीं करता। उनका प्रतिनिधि मैं हूँ। आप उनसे पूछकर देखिए। हो सकता है, वे मुझे न चुनें, लेकिन डॉ० अम्बेडकर तो कदापि नहीं चुने जायेंगे। कांग्रेसकी योजनामें अल्पसंख्यक समुदायोंके सभी हितोंकी रक्षाकी व्यवस्था है। मैं एक पंक्ति या धारा उसमें और जोड़ना चाहूँगा — न्यायाधिकरणसे सम्बन्धित। मैंने कहा था कि मैं यह धारा जोड़नेका सुझाव रखता हूँ और मैं कोशिश करूँगा कि इसे स्वीकार कर लिया जाये।

अब दूसरे छोरपर बैठे लोगोंकी बात लें। यूरोपीयोंके लिए पृथक् प्रतिनिधित्वकी बातका विरोध मुझे दूसरे कारणोंसे करना चाहिए। वे तो शासक जातिके हैं। उनका इतना बोलबाला रहा है कि उन्होंने एक भारतीय गवर्नरतक की निगहबानी की और उसका जीवन दूभर बना दिया। खुद सिन्हाके सचिवालयके लोग उनपर जासूसी करते थे। यहाँतक कि उनके नौकर भी उनपर जासूसी करते थे। उनका मन इतना व्यथित हुआ कि उसीसे उनका देहावसान हो गया। मैंने उन्हें अपनी सत्ताकी पराकाष्ठा पर देखा था। और जब वे बिलकुल टूट चुके थे तब भी मैं उनसे मिला। मैंने सर ह्यूबर्ट कारसे मुस्कराते हुए कहा था: "आप हमारे मत लेनेके लिए हमारे पास क्यों नहीं आते? आप इस बातके लिए आश्वस्त रह सकते हैं कि श्री एन्ड्रयूज-जैसे लोग भारतीय मतदाताओं द्वारा हर समय, हर स्थानमें चुन लिये जायेंगे।"[१] कारने कहा कि एन्ड्रयूज अंग्रेजोंके ठीक प्रतिनिधि नहीं हो सकते। जिस तरह कोई भारतीय अंग्रेजोंके मानसका प्रतिनिधित्व नहीं कर सकता उसी तरह एन्ड्रयूज भी नहीं कर सकते। इसपर मैंने कहा कि "अगर अंग्रेजोंको भारतमें रहना है तो उन्हें तो भारतीय मानसका ही प्रतिनिधित्व करना चाहिए। दादाभाई नौरोजी, जिन्हें लॉर्ड सैलिसबरी काला आदमी कहते थे, सेन्ट्रल फिन्सबरीके मतदाताओं द्वारा चुने गये थे।"

अब आंग्ल-भारतीयोंकी बात लें। उन्हें जितना कर्नल गिडनी जानते हैं, उससे बहुत ज्यादा मैं जानता हूँ। मैंने उन्हें अपने सामने रोते देखा है। वे मेरे पास आकर कहते हैं, "हम तो दोगले हैं। अंग्रेज लोग हमें इज्जत नहीं देते; भारतीय अपनानेको तैयार नहीं हैं।" मैं कहता हूँ, "आप हमारे पास आइए, अपना नकली रूप उतार फेंकिए, फिर हम आपको अवश्य अपनायेंगे।" मैं एक मोटे-ताजे आंग्ल-भारतीयसे मिला। उसे यह विचार ही असह्य था कि उसकी माँ एक भारतीय स्त्री थी। राष्ट्रीय सरकारके अधीन अगर उन्हें पृथक् निर्वाचक-मण्डल मिल गया तो वे समाजके चाण्डाल और अस्पृश्य बनकर रह जायेंगे। सर हेनरी गिडनीकी स्थिति बहुत अच्छी हो सकती है, लेकिन दूसरोंको भी तो नाइटकी उपाधिसे विभूषित नहीं किया जा सकता। लेकिन अगर वे हमारे पास आयेंगे और अपने उचित व्यवहारके बलपर हमारे देशभाइयोंके

१. यह वाक्य **यंग इंडिया**से लिया गया है।

मताधिकारका लाभ उठाना चाहेंगे तो हम उनका स्वागत करेंगे — कुमारप्पा — जोजेफ कुमारप्पा[1] — अपनी सेवाओंके बलपर गुजरातको अपनी अँगुलीके इशारेसे नचा सकते हैं।

हॉरेस एलेक्जेंडर : तो आप परिषद्का गठन निर्वाचनके आधारपर कराना पसन्द करते। जरा बताइए तो यह काम आप कैसे करते?

गांधीजी : किन लोगोंको बुलाया जायेगा इसके सम्बन्धमें ठीक सिद्धान्त निश्चित किया जाना चाहिए था। जैनों और लिंगायतोंकी ओरसे भी तार आये हैं। अगर इन तथाकथित कृत्रिम समुदायोंको भी सन्तुष्ट करनेकी बात हो तो आप वह कैसे कर सकते हैं?

कांग्रेसकी योजनामें (१) समुदाय-विशेषको अतिरिक्त प्रतिनिधित्व देना; (२) अगर आर्थिक दृष्टिसे सम्भव हो तो सिन्धको एक अलग प्रान्त बनाना; (३) संयुक्त निर्वाचक-मण्डल और वयस्क मताधिकार; (४) अल्पसंख्यक-समुदायोंके लिए सीटोंका आरक्षण और उन्हें अतिरिक्त सीट देना तथा (५) सभी समुदायोंके लिए सुरक्षा एवं अधिकार तथा स्वतन्त्रताकी समुचित व्यवस्था करना, ये तमाम चीजें स्वीकार की गई हैं।

प्र० : क्या यह सच नहीं है कि अगर बहुमतकी समस्याका समाधान न हो सके तो उस हालतमें अधिकांश मुसलमान जिम्मेदारी केन्द्रके हाथोंमें रखनेपर सहमत हैं?

उ० : मेरा कहना है कि चाहे वे परिषद्में शामिल हों या न हों, उसकी कार्यवाही सम्पन्न होनी ही है। अगर ब्रिटिश सरकार सत्ता त्यागना चाहती है, तो उसकी प्रगतिके मार्गमें कांग्रेसको भी बाधक नहीं बनने देना चाहिए। अगर कोई ठीक योजना तैयार की जाती है तो किसी पक्षके उसका विरोध करनेसे क्या फर्क पड़ता है? आखिरकार कांग्रेस तो मुसलमानोंका भी प्रतिनिधित्व करती है। न्यायाधिकरणमें पारसी, ईसाई या इन सभी जातियोंके न्यायाधीश हों, लेकिन हिन्दू या मुसलमान नहीं। यह टालमटोलका खेल मूर्खतापूर्ण, चिढ़ानेवाला और अपमानजनक है।

सर फ्रांसिस यंगहस्बेंड : क्या पार्लियामेंट द्वारा पास किये किसी कानूनमें पेश किये गये ऐसे उपायसे काम चलेगा जिसमें इस बातका संकेत हो कि भारतकी जनता अलग होना चाहती है या नहीं?

उ० : हाँ, चलेगा; लेकिन साझेदारी काफी मजबूत होनी चाहिए और ऐसी नहीं कि विघटनकारी तत्त्व उसे जब चाहें तोड़ दें।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी, १९३१; सौजन्य : नारायण देसाई

१. डॉ० जे० सी० कुमारप्पा।

१७१. पत्र : रेजिनाल्ड रेनॉल्ड्सको[1]

[अक्टूबर/नवम्बर, १९३१]

प्रिय रेजिनॉल्ड,

परिषदमें बैठे-बैठे ही ये दो पंक्तियाँ तुम्हारे प्रश्नके उत्तरमें लिख रहा हूँ। कठिनाईमें पड़े अपने साझेदार राष्ट्रकी सहायता करनी चाहिए, इस दृष्टिसे — बेशक यह मानते हुए कि साझेदारी सम्भव है — मैं लंकाशायरको प्राथमिकता देनेके पक्षमें हूँ। अगर मैं मुसीबतमें पड़े अपने एक साझेदारको प्राथमिकता देता हूँ तो उसपर जापानको क्यों बुरा लगना चाहिए? अगर भारत पराधीन राष्ट्रके बजाय साझेदार बन जाता है तो साम्राज्य रह ही नहीं जायेगा। तुम्हें मेरे सारे कार्योंको अहिंसाके सन्दर्भमें रखकर देखना चाहिए। अहिंसा अनैतिक कार्य-साधक उपायोंका सहारा लेनेकी छूट नहीं देती।

मेरे प्रस्थान करनेसे पहले मुझसे मिलना तो होगा।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४५४१)से; सौजन्य : स्वार्थमोर कॉलेज, फिलाडेल्फिया

१७२. भाषण : पेम्ब्रोक कॉलेजमें[2]

कैम्ब्रिज

[१ नवम्बर, १९३१][3]

साझेदारी बराबरकी शर्तोंपर होनी चाहिए। ऐसा न हो कि सुन्दर शब्दोंमें साझेदारीके बजाय 'पराधीनता' ही दे दी जाये। इसका मतलब यह हुआ कि अगर

१. रेजिनाल्ड रेनॉल्ड्स **टु लिव इन मैनकाइण्ड** में लिखते हैं : "आर्थिक रियायतें देना उचित माननेकी नीतिका विरोध करते हुए मैंने एक और नाजुक प्रश्न पूछा था, जिसके जवाबमें यह पत्र आया। उनकी इस नीतिका कारण मैं भ्रमवश दृढ़ताका अभाव मानता था। उनके पत्रसे स्पष्ट हो गया कि उन्होंने कमजोरीके कारण ये रियायतें देनेकी बात नहीं कही बल्कि इसका कारण तो ब्रिटिश जनताके प्रति उनकी सहानुभूति थी, जिसकी आर्थिक समस्याओंके बारेमें उन्होंने बहुत-कुछ जान लिया था। लंकाशायरके वस्त्र-उद्योग कर्मचारियोंकी अवस्थामें उनकी विशेष रुचि थी।"

२. महादेव देसाईके "लन्दनका पत्र" से उद्धृत। महादेव देसाईके अनुसार यह कई घंटे तक चलनेवाली वार्त्ताका सार है। उस बैठकमें एलिस बार्कर, लाविज डिकिंसन, डॉ० जॉन मरे, डॉ० बेकर और एवलिन रेंच शामिल थे।

३. तारीख गांधीजी की डायरीके अनुसार दी गई है। डायरीके अनुसार यह बैठक उस दिन सुबह हुई थी।

इच्छा हुई तो हम उस आगमें से अवश्य गुजरेंगे जो हमें शुद्ध और सक्षम बनायेगी। मैंने दूसरोंके खूनकी नदियाँ बहानेकी बात नहीं कही है, क्योंकि मैं जानता हूँ कि भारतमें हिंसावादी दल मिटता जा रहा है। लेकिन, मैंने हमारे अपने खूनकी गंगा बहा देनेकी — परिस्थितिका सामना करनेके लिए स्वेच्छापूर्वक पवित्र आत्मबलिदान करनेकी — बात अवश्य कही है। अगर भारतको उस आँचको सहना चाहिए तो उसे सहनेसे उसको लाभ ही होगा। जैसा आप सोचते हैं, उस तरह मैं तो नहीं सोचता कि बहुत ज्यादा साम्प्रदायिक दंगे होंगे। भारतके नव्वे प्रतिशत लोग गाँवोंमें रहते हैं और यह झगड़ा शहरोंमें रहनेवाले दस प्रतिशत लोगोंतक ही सीमित है। इस धीमी, गर्हित और गरिमाविहीन मृत्युके सामने उस रक्तपातको मैं कुछ भी नहीं मानूँगा। बेशक, इसमें यह तथ्य तो निहित है ही कि भारतको उसपर कब्जा जमाये रखनेवाली विदेशी सेना और दुनियाकी सबसे अधिक व्ययसाध्य सिविल सेवाका खर्च उठानेको मजबूर करके उसे भूखों मारा जा रहा है। जापानके पास बहुत बड़ी सेना और बहुत ज्यादा सैनिक साज-सामान हैं, किन्तु वह भी सेनापर उतना खर्च नहीं करता, जितना हमें करना पड़ता है।

आपसे मेरा यही झगड़ा है। मैं जानता हूँ कि हर ईमानदार अंग्रेज भारतको स्वतन्त्र देखना चाहता है। लेकिन उनका ऐसा मानना क्या दुःखकी बात नहीं है कि ब्रिटेनकी सेनाके वहाँसे हटते ही दूसरे देश उसपर टूट पड़ेंगे और देशके अन्दर आपसमें भी भारी मार-काट मच जायेगी? इसके विपरीत, मैं यह मानता हूँ कि आन्तरिक अशान्तिका कारण अंग्रेजोंका वहाँ मौजूद रहना है, क्योंकि आपने 'फूट डालो और राज्य करो' के सिद्धान्तके अनुसार ही भारतपर शासन किया है। आप अपने नेक इरादोंके कारण ऐसा महसूस करते हैं कि 'पटेला मेंढकको चोट नहीं पहुँचाता'। लेकिन, उससे चोट न पहुँचे, यह हो ही नहीं सकता। आप भारतमें हमारे बुलानेसे नहीं बने हुए हैं। आपको इस बातको समझना चाहिए कि सर्वत्र घोर असन्तोष है और हर आदमी कह रहा है कि "हम विदेशी शासन नहीं चाहते।" और आपके बिना हमारा क्या होगा, इसकी इतनी अधिक चिन्ता आप लोगोंको क्यों हो रही है? आप अंग्रेजोंके भारत आनेसे पूर्वके इतिहासको देखें। उसमें आपको हिन्दू-मुस्लिम दंगोंके आजसे ज्यादा उदाहरण नहीं मिलेंगे। सच तो यह है कि मेरे जमानेका इतिहास और भी ज्यादा काला है। सचाई यह है कि ब्रिटिश सेना दंगोंको रोकनेमें असमर्थ है, यद्यपि उसमें दोषी और निर्दोष दोनोंको सजा देनेकी पर्याप्त सामर्थ्य है। औरंगजेबके शासन-कालमें भी हमें दंगोंका कोई हवाला नहीं मिलता। और जहाँतक, विदेशी आक्रमणका सम्बन्ध है, भयंकरसे-भयंकर आक्रमण भी ग्राम्य जीवनको नहीं छू सका। महामारी भारतमें समय-समयपर प्रकट होती रही है। अगर उससे बचनेके लिए — जो हो सकता है, एक प्रकारसे हमारे शुद्धीकरणकी ही प्रक्रिया साबित हो — हम डाक्टरोंकी एक पूरी फौज रखें और उसका खर्च चलानेके लिए अपनेको भूखों मारें, इससे तो अच्छा हम यही समझेंगे कि अगर हमें शुद्ध करनेवाली उस विपत्तिको आना है तो वह आये। बाघों और सिंहों द्वारा यदा-कदा मचाये जानेवाले उत्पातोंको

लीजिए। क्या हम उन हिंस्र पशुओंसे सीधे लड़ लेनेका खतरा उठानेके बजाय उनसे बचनेके लिए करोड़ों रुपये खर्च करके किले बनवायेंगे? माफ कीजिएगा, हमारा राष्ट्र ऐसे कापुरुषोंका राष्ट्र नहीं है जो सदा खतरेसे भागते रहेंगे। विदेशी संगीनोंके बलपर जीवित रहनेसे दुनियासे बिलकुल मिट जाना ही हमारे लिए बेहतर होगा। नहीं, आपको हमपर इतना भरोसा करना ही होगा कि हम अपने झगड़े आपसमें ही निबटा लेना जानते हैं, विदेशी आक्रमणोंका मुकाबला करना हमें आता है। भारतने बहुत-से आक्रमण झेले हैं और उसने ऐसी सभ्यता और संस्कृतिको जन्म दिया है जिससे अच्छी सभ्यता और संस्कृतिका जन्म दुनियामें कभी नहीं हुआ। तो अब उसपर तरस खाने और उसे मुलायम रुईमें लपेटकर रखनेकी कोई जरूरत नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १९-११-१९३१

१७३. भाषण : भारतीय मजलिसमें

कैम्ब्रिज
१ नवम्बर, १९३१

गोलमेज परिषद्में आये प्रतिनिधियोंका रवैया भारतकी जनताके रवैयेका प्रतिरूप नहीं है। अगर गोलमेज परिषद् विफल हुई तो निश्चय ही भारतमें फिरसे सविनय प्रतिरोध आरम्भ किया जायेगा। वह तत्काल शुरू नहीं किया जायेगा। सविनय प्रतिरोध ऐसा आन्दोलन है जिसे फिलहाल समेट लिया गया है। और वह फिरसे तभी शुरू किया जायेगा जब कांग्रेस समुचित विचार-विमर्श करनेके बाद विधिपूर्वक उसे शुरू करनेका निश्चय करेगी।

कैम्ब्रिजमें भारतीय मजलिसकी एक सभामें बोलते हुए श्री गांधीने उक्त विचार व्यक्त किये।

बोलते हुए उन्हें यह भी स्मरण हो आया कि १९०८ में[1] भी उन्होंने मजलिसके सामने भाषण दिया था।

एक प्रश्नके उत्तरमें उन्होंने कहा कि मेरा समाधान तो वही है जो कांग्रेसका है, लेकिन वह चूँकि मुसलमानोंको स्वीकार्य नहीं है, इसलिए मैंने सुझाव दिया है कि मामलेको या तो आपसी पंच-फैसले द्वारा तय कर लिया जाये या उसे एक न्यायाधिकरणके निर्णयार्थ सौंप दिया जाये। अगर ये दोनों वैकल्पिक सुझाव स्वीकार नहीं किये जाते तो समय ही इसका समाधान निकाल सकता है।

१. तात्पर्य शायद १९०९ से है, जब गांधीजी एक शिष्टमण्डलके सदस्यके रूपमें ब्रिटेन गये थे।

भारत इंग्लैंडसे अलग न भी हो तो भी वर्तमान सम्बन्धोंमें आमूल परिवर्तन किया जाये। इंग्लैंडसे भारतका जो लगाव रहे वह सम्पूर्ण रूपसे मानव-जातिके कल्याणके लिए ही रहे। भारतमें अकेले दुनियाके राष्ट्रोंका शोषण करनेकी सामर्थ्य नहीं है, लेकिन ग्रेट ब्रिटेनकी सहायतासे वह वैसा कर सकता है। साझेदारीका मतलब यह भी होना चाहिए कि आगे शोषण न किया जाये और यदि इंग्लैंड इससे बाज न आये तो भारतको उससे सम्बन्ध तोड़ लेना चाहिए। आवश्यकता केवल इस बातकी है कि ब्रिटेनकी शोषणकी नीतिमें परिवर्तन किया जाये। साझेदारी कायम हो जानेके बाद ब्रिटेनको इस बातपर गर्व नहीं कर सकना चाहिए कि उसके पास एक जबरदस्त नौसेना है जो जलमार्गोंकी रखवाली करती है और जलमार्गसे होनेवाले उसके अन्तरर्राष्ट्रीय व्यापारकी रक्षा करती है।

सवाल है कि ब्रिटेनके दक्षिण आफ्रिकी उपनिवेशके बारेमें क्या किया जाये। हमारी साझेदारीकी पूर्व-शर्तके रूपमें मैं दक्षिण आफ्रिकाके साथ ब्रिटेनके सम्बन्धोंमें परिवर्तन किये जानेका आग्रह नहीं रखूँगा। लेकिन, निश्चय ही मैं उन दक्षिण आफ्रिकी जातियोंकी मुक्तिके लिए प्रयत्न करूँगा जिन्हें — मैं अपने अनुभवके आधारपर कह सकता हूँ कि — शोषण-चक्रमें पीसा जा रहा है। लेकिन अगर यह न हो सके तो फिर ब्रिटेनके साथ साझेदारी रखनेसे मेरा कोई मतलब नहीं होगा — भले ही वह साझेदारी भारतके लिए लाभदायक ही क्यों न हो। मेरा निजी विचार पूछें तो कहूँगा कि दुनियाको शोषणसे मुक्त करनेकी सम्भावनासे युक्त साझेदारी मेरे राष्ट्रके लिए गर्वका विषय होगी और मैं उसे सदा कायम रखूँगा। लेकिन भारत शोषणकी किसी भी नीतिको किसी भी तरहसे स्वीकार नहीं कर सकता और खुद मेरी बात पूछें तो मैं कहूँगा कि अगर कांग्रेसने कभी साम्राज्यवादी नीति अपनाई तो मैं उससे भी अपने सम्बन्ध तोड़ लूँगा।

अब सवाल यह है कि क्या कांग्रेस कमसे-कम फिलहाल दक्षिण आफ्रिका या कनाडाके समान दर्जा दे देनेसे सन्तुष्ट नहीं होगी। 'हाँ' कहनेमें जो खतरा है, उसे मैं देख रहा हूँ। यदि आपकी कल्पनामें इससे कोई ऊँचा और श्रेष्ठ दर्जा हो, जिसको पानेके लिए हमें आगे काम करना पड़ेगा तो मैं कहूँगा 'नहीं'। लेकिन अगर यह ऐसा दर्जा है जिससे अधिक ऊँचे दर्जेकी आकांक्षा रखनेकी हमें जरूरत ही नहीं है तो मेरा उत्तर होगा — 'हाँ'। जो दर्जा दिया जाये उसे ऐसा होना चाहिए कि साधारण लोग भी समझ सकें कि वह आजके दर्जेसे बिलकुल भिन्न है। इसलिए मैं ऐसा अन्तरिम काल स्वीकार नहीं करूँगा जिसमें हमें, जो दर्जा हम पाना चाहते हैं, उससे घटिया दर्जेपर ही सन्तुष्ट रहना पड़े। कांग्रेस श्रेष्ठतम दर्जेसे कम किसी भी दर्जेसे सन्तुष्ट नहीं होगी।

लेकिन राजाओंके बारेमें क्या किया जाये? वे तो स्वतन्त्रता नहीं चाहते? मैं जानता हूँ कि वे नहीं चाहते — चाह भी नहीं सकते, क्योंकि वे ब्रिटिश सरकारकी ही बोली तो बोलते हैं। लेकिन उनके अलावा भी ऐसे लोग हैं जो सोचते हैं कि वे ब्रिटेनके संरक्षणके बिना रह ही नहीं सकते। जहाँतक मेरी बात है, सेनाके पूरे निय-

न्त्रणसे कम किसी भी चीजको मैं स्वीकार नहीं कर सकता। अगर देशके अन्य सभी नेता सेनाके प्रश्नपर कोई बीचकी स्थिति स्वीकार कर लें तो मैं कहूँगा कि इस तरहके समझौतेसे मैं अलग ही रहूँगा, लेकिन साथ ही मैं उसका विरोध भी नहीं करूँगा और न कष्ट-सहन करनेके लिए लोगोंका आह्वान ही करूँगा। अगर कोई ऐसा बड़ा कदम उठाया जाता है जिससे अन्ततः और शीघ्र ही अन्तिम लक्ष्यकी प्राप्ति हो जाये तो मैं इससे सहमत तो नहीं होऊँगा, लेकिन इसे बरदाश्त कर लूँगा।

लेकिन, अगर आप यह कहें कि ब्रिटिश फौजी टुकड़ियाँ राष्ट्रीय सरकारके अधीन कभी भी काम नहीं करेंगी तो इसका मतलब मुझे ग्रेट ब्रिटेनके साथ किसी भी प्रकारका सम्बन्ध रखनेके खिलाफ जबरदस्त आपत्ति करनेपर मजबूर करना होगा। हमपर कब्जा रखनेवाली सेना हम नहीं चाहते, उसे हम बरदाश्त नहीं कर सकते। भारतीयकरणकी किसी भी योजनासे हमारा कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं होगा, क्योंकि कमान तो अन्ततक अंग्रेजोंके ही हाथोंमें रहेगी और जिस तरह आज दायित्व सँभालनेकी हमारी क्षमतामें सन्देह किया जाता है उसी तरह तब भी किया जायेगा। सच्चा दायित्वपूर्ण शासन तभी स्थापित हो सकता है जब ब्रिटेनवाले भारत और भारतकी योग्यतामें विश्वास करने लगेंगे। अशान्ति तभी दूर होगी जब ब्रिटेनमें यह जीवन्त विश्वास पैदा हो जाये कि उसने भारतके साथ अन्याय किया है और उस अन्यायके मार्जन-स्वरूप अब उसे भारतीय मन्त्रियोंके अधीन ब्रिटिश सैनिक रखने चाहिए। आपको यह भय है कि भारतीय मन्त्रियोंके मूर्खतापूर्ण आदेशोंके परिणाम-स्वरूप ब्रिटिश सैनिकोंको व्यर्थ ही अपने प्राण गँवाने पड़ सकते हैं। मगर आप बोअर युद्धको याद कीजिए, जब इंग्लैंडमें ब्रिटिश जनरलोंको बेवकूफ कहा गया था और ब्रिटिश सिपाहियोंको शूरवीर। अगर ब्रिटिश जनरलोंसे गलती हुई तो भारतीय मन्त्रियोंसे भी गलती हो सकती है। भारतीय मन्त्री सेनाध्यक्ष तथा अन्य सैनिक विशेषज्ञोंसे तो हर मामलेपर विचार-विमर्श करेंगे ही, लेकिन अन्तिम सत्ता और दायित्व मन्त्रियोंके ही हाथोंमें होगा। तब सेनाध्यक्ष चाहे तो त्यागपत्र दे दे या उनके आदेशोंका पालन करे।

स्वतन्त्रताकी कीमत अपने खूनसे चुकानेका मेरा विचार सुनकर आप चौंक उठते हैं। मैं भारतकी दशाको ठीक-ठीक जाननेका दावा करता हूँ और मैं जानता हूँ कि आज वह तिल-तिलकर मर रहा है। जमीनके लगानकी जबरन वसूलीका मतलब है किसानोंके बच्चोंके मुँहका कौर छीनना। किसान लोग कैसी यातना भोग रहे हैं, उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। उस अवस्थाको सुधारनेके लिए अन्तरिम व्यवस्था करनेसे काम नहीं चलेगा। अन्तरिम व्यवस्थाका जो अर्थ मैं लगाता हूँ, क्या ब्रिटिश सरकार उसका वह अर्थ समझती है? क्या वह ब्रिटिश सैनिकोंको हमारे यहाँ हमारी सहायता करने, अर्थात् केवल हमारे ही हितोंकी रक्षा करनेके लिए रखनेको तैयार है? अगर तैयार है तो हम उन सैनिकोंको रखेंगे और उन्हें अपनी सामर्थ्य-के अनुसार वेतन देंगे। लेकिन अगर ब्रिटिश सरकार ईमानदारीसे ऐसा मानती है कि हम अक्षम हैं और इसलिए नियन्त्रण ढीला नहीं किया जाना चाहिए तो ईश्वरकी

१७५. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको[1]

लन्दन

३ नवम्बर, १९३१

गांधीजी का कार्यक्रम पूर्णतः भारतकी स्थितिपर निर्भर है। इस विषयकी चर्चा करते हुए उन्होंने कहा :

ख्रीष्ट जयन्तीके अवसरपर मैं यूरोपमें या भारतमें रहनेकी आशा करता हूँ। सब-कुछ भारतकी स्थितिपर निर्भर है। अपने ऊपर मेरा कोई अधिकार नहीं है, मैं तो राष्ट्रका स्वेच्छासे बना हुआ दास हूँ।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, ७-११-१९३१

१७६. भाषण : चिल्डरेंस हाउसकी बैठकमें[2]

मंगलवार [३ नवम्बर, १९३१]

उन्होंने कहा कि अगर बच्चोंको सही ढंगका प्रशिक्षण दिया जाये और वैसी शिक्षा दी जाये जैसी देनी चाहिए — अर्थात् वह शिक्षा जो उनमें छिपे उत्तम गुणोंको निखार सके — तो हम भावी पीढ़ीसे बड़ी-बड़ी आशाएँ रख सकते हैं।

आजकी स्थिति सामान्यतया बड़ी अन्धकारपूर्ण है और आशाकी एकमात्र किरण बच्चोंकी ओरसे ही आ रही है। यदि वे हमारी गलतियों, कटुता तथा ईर्ष्या-द्वेषसे सबक लें तो वे दुनियाको बेहतर बना सकते हैं।

[अंग्रेजीसे]

मैंचेस्टर गार्डियन, ४-११-१९३१

१. गांधीजी ने यह वक्तव्य प्रधान मन्त्री रैम्जे मैकडॉनाल्डके साथ ३ नवम्बरको सुबहके १०-१५ से लेकर ११ बजे तक चलनेवाली अपनी बातचीतके बाद दिया था।

२. यह किंग्सले हॉल बस्तीके तत्त्वावधानमें चलाये जानेवाले बो-स्थित चिल्डरेंस हाउसकी वार्षिक बैठक थी। बैठकसे पहले होनेवाले भोज-समारोहमें भी गांधीजी शामिल हुए थे।

१७७. संघ-संरचना समितिकी बैठककी कार्यवाहीके कुछ अंश[1]

लन्दन
४ नवम्बर, १९३१

श्री गांधी: देखता हूँ, यहाँ "क्षेत्र-अभ्यर्पण सन्धियों"का उल्लेख किया गया है। पता नहीं, सर सैम्युअल होर इस सम्बन्धमें कोई जानकारी दे सकेंगे या नहीं। ये सन्धियाँ गुप्त होंगी या खुली?

सर सैम्युअल होर: लॉर्ड रीडिंगका कहना है कि किसी तरहकी कोई गुप्त सन्धियाँ हैं ही नहीं।

सर तेजबहादुर सप्रू: हाँ ऐसा ही है।

श्री गांधी: लेकिन क्या नई सन्धियाँ खुली सन्धियाँ होंगी?

लॉर्ड रीडिंग: मैं समझता हूँ कि ऐसे मामलेमें, अर्थात् जब आप ऐसे अधिकारों पर विचार कर रहे हों जिनका अभ्यर्पण किया जाना हो, संविधानमें रुचि रखने वालों, उसकी रचना करनेवालों, उसमें हिस्सा लेनेवालों और उसमें सहयोग करने वालोंको यह मालूम होना ही चाहिए कि देशी राज्यों और भारत सरकारके बीच होनेवाली सन्धियोंकी शर्तें क्या हैं। . . .

श्री गांधी: क्या यहाँ आप इतना और जोड़ देंगे कि कांग्रेसकी राय यह है, अथवा कांग्रेसकी ओरसे यह मत व्यक्त किया गया है कि संघके सर्वोच्च न्यायालयको अपीलकी अन्तिम अदालत होना चाहिए?[2]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबल कांफरेंस (सेकेंड सेशन): प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐंड माइनॉरिटीज़ कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ ३३७

१. समिति अपनी तीसरी रिपोर्टके अनुच्छेद ५२-६६ पर, जिसका सम्बन्ध संघ-न्यायालयसे था, विचार कर रही थी।

२. समितिने अभी-अभी अनुच्छेद ५८ पर विचार-विमर्श करना समाप्त किया था। इस अनुच्छेदमें कहा गया था कि सलाह लेनेके लिए किसी मामलेको न्यायालयमें पेश करनेका अधिकार केवल गवर्नर-जनरलको होगा जो "इस सम्बन्धमें निस्सन्देह, आम तौरपर अपने मन्त्रियोंकी सलाहपर चलेगा"। शफाअत अहमद खाँ, मुहम्मद शफी, जिन्ना तथा कुछ अन्य प्रतिनिधियोंने "मन्त्रियोंकी सलाहपर" शब्दोंके शामिल किये जानेका विरोध किया था। उनका कहना था कि इससे गवर्नर-जनरलके अधिकार मर्यादित हो जाते हैं। अध्यक्ष इन शब्दोंको निकाल देनेको राजी हो गये थे।

पंजाबके सवालका निबटारा न हो पानेका कारण हिन्दुओं, सिखों और मुसलमानोंका पारस्परिक अविश्वास था। लेकिन मैं आपसे कह दूँ कि पंजाबके सवालको बहुत ज्यादा महत्त्व देनेकी जरूरत नहीं है।[1]

आप ऐसा न समझें कि भारतके हिन्दू, सिख और मुसलमान जनसाधारणको फाजिल मार गया है। अगर बात वैसी होती तो मैं भारतके सबसे बड़े संगठनके प्रतिनिधिके रूपमें यहाँ नहीं होता। लेकिन मूर्खता मौजूदा मण्डलीतक ही सीमित है। मौजूदा मण्डलीसे मेरा मतलब यहाँ इकट्ठे लोगोंसे नहीं, बल्कि गोलमेज परिषद्के प्रतिनिधियोंसे है, जिनमें मैं भी शामिल हूँ।

प्र० : गाँवोंमें रहनेवाले बेरोजगार लोग शहरोंमें जाकर किसी उद्योग-धन्धेमें काम क्यों नहीं करते?

उ० : यह उपाय तो कृषि-सम्बन्धी शाही आयोगने भी नहीं सुझाया।

प्र० : क्या आप यह बतायेंगे कि भारत जानेवाला अंग्रेज भारतीयोंके साथ कैसे सहयोग कर सकता है और किस तरह भारतकी सेवा कर सकता है?

उ० : सबसे पहले तो उसे चार्ली एन्ड्रूयूजसे मिलकर पूछना चाहिए कि उन्होंने क्या किया और भारतकी सेवा करनेके लिए वे किस स्थितिसे गुजरे। उन्होंने अपने जीवनका प्रत्येक क्षण भारतकी सेवाके लिए अर्पित कर दिया है और जो काम कई हजार अंग्रेज कर पाते वह अकेले किया है। इसलिए वहाँ जानेवाला अंग्रेज पहला पाठ उन्हींसे सीखे। इसके अलावा उसे अपने मनमें कुछ सिखानेका खयाल लेकर नहीं बल्कि वह भारतकी सेवा कैसे कर सकता है, यह सीखनेका विचार लेकर जाना चाहिए, और अगर वह अपना काम इस भावनासे शुरू करेगा तो वह भारतीयोंको कुछ सिखायेगा भी जरूर। लेकिन, वैसा करते हुए वह अपने पृथक् अस्तित्वको भूल जायेगा और अपने-आपको भारतीयोंमें विलीन कर देगा। उदाहरणके लिए, हम श्री स्टोक्सको ले सकते हैं, जो शिमलाके पहाड़ी इलाकोंमें काम कर रहे हैं। वे अपने-आपको पूरी तरह भारतीयोंमें मिला दें और इस तरह उनकी सहायता करनेकी कोशिश करें। सच्चा प्रेम क्या नहीं कर सकता? तो जिनके मनमें भारतके प्रति प्रेम है, वे निश्चय ही भारत जायें। वहाँ सचमुच उनकी आवश्यकता है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २-११-१९३१ और **यंग इंडिया**, १९-११-१९३१

१. आगेका अंश **यंग इंडिया**में प्रकाशित महादेव देसाईके "लन्दनका पत्र" से लिया गया है।

१७४. वक्तव्य : संघ-संरचना समितिके समक्ष[1]

लन्दन
२ नवम्बर, १९३१

आज मेरा मौनवार है। इसलिए मैं इस रिपोर्टके मसविदेकी अन्य बातोंके अलावा निम्नलिखित बातोंसे लिखित रूपमें अपनी असहमति प्रकट करूँगा :

मैं इस विचारपर अब भी दृढ़ हूँ कि जो उद्देश्य हमारे मनमें है, उसे पूरा करनेके लिए एक-सदनीय संसद सबसे अच्छी रहेगी। लेकिन, कुछ महत्त्वपूर्ण परिवर्तन कर दिये जाने पर, मैं सर मिर्जा इस्माइलके प्रस्तावका समर्थन करूँगा, बशर्ते कि उनके मनमें जिस संस्थाकी बात है, वह केवल सलाह-मशविरा देनेवाली संस्था ही रहे।

कांग्रेस जमींदारों, यूरोपीयों, भारतीय व्यापारियों तथा श्रमिकोंके हितोंके पृथक् प्रतिनिधित्वके बिलकुल खिलाफ है। इन हितोंके प्रतिनिधियोंको अपने चुनावके लिए सामान्य मतदाताओंसे अनुरोध करना चाहिए।

इसी तरह कांग्रेस सदस्योंकी नामजदगीके भी खिलाफ है। लेकिन विशेषज्ञोंको जरूरी अवसरोंपर सदनमें अपनी बात कहनेकी सुविधा दी जानी चाहिए।

देशी राज्योंसे सम्बन्धित अनुच्छेदोंके बारेमें — विशेषकर देशी राज्योंकी प्रजाके प्रतिनिधित्वके मामलेपर — मैं बहुत-कुछ कहना चाहूँगा। लेकिन, फिलहाल मैं अपनी राय जाहिर नहीं कर रहा हूँ।

अप्रत्यक्ष चुनावके सम्बन्धमें — या यों कहिए कि गाँवोंको इकाइयाँ मानकर उनके प्रतिनिधियों द्वारा चुनावके सम्बन्धमें — मुझे जो प्रस्ताव पेश करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था, उसपर मैं अब भी दृढ़ हूँ। यह योजना वयस्क मताधिकारपर आधारित है, जिसके लिए कांग्रेस प्रतिश्रुत है।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबल कांफरेंस (सेकेंड सेशन): प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐंड माइनॉरिटीज़ कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ ३३४

१. समितिने अपनी तीसरी रिपोर्टके १ से लेकर ५१ तकके उन अनुच्छेदोंपर विचार करनेकी कार्रवाई पूरी कर ली थी जिन्हें कुछ संशोधनोंके साथ स्वीकार कर लिया गया था। गांधीजी के इस लिखित वक्तव्यको मौनवार होनेके कारण लॉर्ड सैंकीने पढ़ा था।

पड़ा। मुझे लगता है कि यह सब-कुछ पूर्वनियोजित ढंगसे किया गया है। मेरा मतलब यह नहीं कि सारी गड़बड़ी योजनापूर्वक फैलाई गई और अंग्रेज सिपाहियोंको एक खास घड़ीमें बुलानेकी योजना थी। ऐसा नहीं है; लेकिन यह फूट डालो और राज्य करो की नीतिका परिणाम है। महाराजा कुछ नहीं कर सकते थे। आप नहीं जानते कि विदेशी शासनमें रहना और पराधीन जाति — निहत्थी पराधीन जाति — होना क्या चीज है। अगर आम लोगोंकी हालत यह है तो देशी राजाओंकी हालत तो इससे भी बदतर है। वे अपने मनकी नहीं कर सकते। उन्हें २१ तोपोंकी सलामियाँ दी जाती हैं, उनके पास राजमहल हैं, लेकिन वे अपने ही राजमहलोंमें कैदी हैं, क्योंकि जहाँ उन्हें अपनी प्रजाको जीवन और मृत्यु देनेका अधिकार है, वहाँ वास्तविक अधिकार कुछ नहीं है। उनके पास सेना है, लेकिन क्या उन्हें, वे जैसा चाहें, उस ढंगसे उसे प्रशिक्षित करनेका अधिकार है? ये राजा आपके शस्त्रागारके कचरेको सोखनेका काम करते हैं। जिन शस्त्रास्त्रोंको आप फेंक देते हैं, ये उन्हींका उपयोग करते हैं। निजाम बहुत धनी हैं। क्या वे 'जत्थों'के खिलाफ जैसा चाहते, वैसा कर सके? ये राजा बिलकुल असहाय हैं; उनपर लगे प्रतिबन्ध उचित हों या अनुचित, वे स्वतन्त्र नहीं, नपुंसक हैं। निर्णायक क्षणोंमें वे जैसा चाहें, वैसा नहीं कर सकते। उन्हें जो अधिकार दिये गये हैं, उनके अलावा सारे अधिकार उनके प्रभु — ब्रिटिश सरकार — के हाथोंमें हैं। यह ऐसी स्थिति है, जिसके खिलाफ मेरा सारा मन-प्राण विद्रोह कर उठता है। [भारतीय सिविल सेवा] आपसमें साँठ-गाँठ किये हुए लोगोंका एक संगठन, दुनियाकी सबसे बड़ी गूढ़ संस्था है; इसलिए इस सिविल सेवाने आपको जिस व्यामोहमें डाल दिया है उसे तोड़ देना चाहिए। मैं तो खुद ही उनकी प्रशंसा करते थकता नहीं था। अगर मैं कभी एक बड़ा राजभक्त था, तो मुझे उस बातपर आनन्दका अनुभव होता था। लेकिन तीस वर्ष बाद मेरी आँखें खुलीं और तब मैंने पाया कि ऊपरसे सोना दिखनेवाली इस चीजके नीचे तो पीतल-ही-पीतल है। इसलिए जब कोई अंग्रेज हमसे कहता है कि आप अपनी रक्षा स्वयं नहीं कर सकते तो वास्तवमें वह भारतमें ब्रिटिश शासनकी ही आलोचना करता है। हम दुनियाके प्राचीनतम राष्ट्रोंमें से हैं — एक अद्वितीय सभ्यताके भण्डारी हैं। बेबिलोन, मिस्र, यूनान — इन तमाम सभ्यताओंके रचयिता आज कहाँ हैं? किन्तु प्राचीन भारत आधुनिक भारतमें जीवित है। जो सभ्यता युगोंसे कायम रही है, जो सभ्यता चंगेज और गजनवीके आक्रमणोंको झेलकर भी जीवित रही, वह भारतकी ही सभ्यता है। जब अंग्रेज भारतमें आये और उन्होंने यहाँके लोगोंको आपसमें लड़ाया, उस समय भारत कोई बहुत बुरी अवस्थामें नहीं था। हम उस लड़ाईको भी झेल ले सकते थे। जिस राष्ट्रने तमाम मुसीबतोंको सफलतापूर्वक झेला है, वह आज बिलकुल पस्त है, हालाँकि वास्तवमें उसे बिलकुल पस्त नहीं कहा जा सकता। मैं एक बहुत बड़े संगठन, दुनियाके सबसे बड़े संगठनके एक विनम्र प्रतिनिधिकी हैसियतसे बोल रहा हूँ। वह एक ऐसा संगठन है जो बिना किसी सेनाके ३० वर्षोंसे लगातार लड़ता आ रहा है। दुनियाके इतिहासमें इस किस्मका कोई दूसरा उदाहरण नहीं मिलता। यह एक रोमांचक कथा है, यद्यपि

मैं यह सब पूरी सचाई और विनम्रताके साथ कह रहा हूँ। यह वह राष्ट्र है जिसने समग्र साम्राज्यको चुनौती दी है। इस मुग्ध करनेवाली कहानीके दूसरे हिस्सेकी ओर — आश्चर्यजनक रचनात्मक कार्योंकी ओर — देखिए। डाक-कर्मचारी संघों, रेलवे कर्मचारी संघोंकी ओर देखिए, जिनमें हजारों सदस्य हैं। हमारे पास ऐसे लोग हैं जिन्होंने अपना सारा जीवन राष्ट्रके लिए अर्पित कर दिया है। उदाहरणके लिए, मालवीयजी। ऐसा कहना कि हम अपना कार्य-व्यापार खुद नहीं सँभाल सकते, इंग्लैंड और भारत दोनोंके लिए कलंककी बात है। आप निश्चय ही जनमतको मोड़ सकते हैं। हमें कष्ट-सहनकी आँचमें से गुजरना पड़ सकता है और जब आप उसके सम्बन्धमें सुनेंगे तो मैं आशा करता हूँ कि आप आजकी इस सभाको याद करेंगे और हमारे उस संघर्षमें अपना उचित योग देंगे। अगर जान-बूझकर, इच्छापूर्वक और सोच-समझकर हमें यह उपहार दिया जाता है तो हम इसे अवश्य स्वीकार करेंगे, संघर्ष अवश्य होगा।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी, १९३१ से; सौजन्य: नारायण देसाई

१८०. पत्र: निक सॉलोमनको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, पश्चिमी
६ नवम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

पत्रके लिए धन्यवाद। हाँ, मैं आपकी बहनसे अकसर मिलता रहता हूँ।

आपने मुझे जो काम दिया है, उसके लिए तो आपको मुझे माफ ही करना पड़ेगा — किसीके कहनेपर सन्देश लिखनेकी कला मुझमें नहीं है। अखबार, वहाँके परिवेश और जीवनके बारेमें जाने बिना मैं यह सोच ही नहीं पाऊँगा कि मुझे क्या लिखना है।

हृदयसे आपका,

श्री निक सॉलोमन
२१४, डिकिंसन एवेन्यू
स्वार्थमोर, फिलाडेल्फिया, सं० रा० अ०

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८२४९) से।

१७८. भाषण : इंडियन मेडिकल एसोसिएशनके समक्ष

लन्दन
४ नवम्बर, १९३१

सचमुच मैं समझ नहीं पा रहा हूँ कि मुझे यहाँ लाया ही क्यों गया। कुछ चिकित्साशास्त्री मित्रोंने मेरे पास आकर कहा कि चूंकि मैं विद्यार्थियोंके समारोहमें गया, इसलिए यह आमन्त्रण भी मुझे स्वीकार करना चाहिए। बल्कि मैं ऐसा कहूँ तो अनुचित नहीं होगा कि मुझे आनेपर लगभग मजबूर किया गया। मेरे पास सिर्फ पाँच मिनटका समय है। मेरे सामने जो योजना[1] प्रस्तुत की गई है उसके सम्बन्धमें कोई राय देनेका असली हक तो आपको ही है। मैं सचमुच इसपर कोई राय नहीं दे सकता।

[अंग्रेजीसे]

मैंचेस्टर गार्डियन, ५-११-१९३१

१७९. भाषण : डाक-कर्मचारी संघकी सभामें

लन्दन
५ नवम्बर, १९३१

मैं तो आपको अपना साथी-सहकर्मी कहकर सम्बोधित करने जा रहा था। कांग्रेस भारतमें सम्पूर्ण जीवन और सारी प्रवृत्तियोंको अपनी कार्य-परिधिमें लानेकी कोशिश कर रही है, इसलिए हमारे यहाँके मजदूर-संघ, डाक-कर्मचारी संघ तथा और भी कई संगठन कांग्रेसके काममें हाथ बँटा रहे हैं। . . .[2] मुझे भारतके डाक-कर्मचारियोंके जीवनकी कुछ जानकारी है। लेकिन उनके सम्बन्धमें कुछ कहनेसे पहले मुझे आपको यह बता देना चाहिए कि यहाँ आना मेरे लिए कितनी खुशीकी बात थी। आपका उत्साह ही — विशेषकर कुष्ठाश्रमके लिए किये आपके कामकी जानकारी — मुझे यहाँ खींच लाई। मैं आपके प्रति सहज ही खिंच गया और यह जानकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई कि डाक-कर्मचारी भारतकी दलित मानवतामें इतनी अधिक रुचि लेते हैं। मुझे तो लगा कि क्या इतनी अच्छी बात सच भी हो सकती है! मेरे यहाँ आनेका मतलब वास्तवमें यह है कि मैं आपके कार्योंके लिए आपकी प्रशस्ति कर रहा हूँ। मैं श्री कार्डिनलको बधाई देता हूँ। भारतमें इस

१. इस योजनाका सम्बन्ध लन्दनके भारतीय अस्पतालसे था।

२. यहाँ कुछ शब्द स्पष्ट नहीं हैं।

सम्बन्धमें[1] किया जानेवाला काम दरअसल इस समस्याकी परिधिको ही छू पाया है। भारतमें जीवनका संयोजन पश्चिमी दुनियासे बिलकुल भिन्न है। हमारे यहाँ दान-दयाका कार्य राज्यकी देख-रेखमें नहीं चलता। लोग खुद ही परमार्थका महत्त्व समझते हैं। इसलिए भारतमें लोगोंकी परमार्थ-वृत्तिको सही दिशा मिल जाती है। मैं यह नहीं कह सकता कि . . .[2] परमार्थ-वृत्तिका बराबर ठीक प्रयोग ही किया जाता है। आप वहाँकी सड़कोंपर कुष्ठ-रोगियोंको अपनी ओर घूरते पायेंगे और उनकी उपेक्षा करके कुष्ठाश्रम तक जाना बहुत कठिन है। कुछ लोग धनी बन गये हैं और कुछ शोषक हैं। इन्हीं परिस्थितियोंमें पश्चिमके कार्यकर्ता वहाँ पहुँचे हैं। यह उन थोड़ी-सी चीजोंमें से एक है जो पश्चिमी दुनियासे भारतके लिए वरदानके रूपमें पहुँची है।

आपके और हमारे डाक-कर्मचारियोंके बीच तुलना नहीं की जा सकती। आपके विभागके अफसरोंसे मिलकर मुझे खुशी होती है, लेकिन हमारे यहाँ इसके मुकाबलेकी कोई चीज नहीं है। हमारे यहाँ उन लोगोंको बहुत कम वेतन (प्रति मास १०/६) दिया जाता है। उनसे काम बहुत लिया जाता है। जिन कुछ-एक विभागोंका ठीक संचालन होता है उनमें एक डाक-विभाग भी है। . . .[3] डाक-कर्मचारियोंके संघ केवल उनकी शिकायतोंको स्वर देनेके लिए ही हैं। मैं उनसे आपकी तरह कुष्ठ-रोगियोंके कल्याणके लिए चन्दा देनेको कहनेका साहस नहीं कर सकता। आप कुष्ठ-रोगियोंके लिए जो नेकीका काम कर रहे हैं, उसके लिए मैं आपको बधाई अवश्य देता हूँ, लेकिन साथ ही मैं चाहूँगा कि आप भारतके अपने सहकर्मियोंमें अधिकाधिक रुचि लें। उनके पास कोई संगठित संस्था नहीं है। वे जीनेके लिए संघर्ष कर रहे हैं — और विदेशी भाषामें अपनी बात ठीक-ठीक कैसे कहें, यह वे नहीं जानते। अगर आप इन सवालोंपर गहराईसे विचार करें तो यह आपके भारत-स्थित सहकर्मियों के प्रति, जो आपके छोटे भाइयोंके समान हैं, उपकारका कार्य होगा। आपमें तरह-तरहके काम करनेकी योग्यता है। ईश्वरने आपको बहुत-कुछ दिया है। उसमें से कुछ उन्हें भी दीजिए।

आप जानते हैं कि डाकघर हमारे लिए क्या करता है। वह हमारे पत्रादिको जाँचनेका काम करता है। मैं यहाँ अपने देशके लिए पूर्ण स्वतन्त्रता — शब्दकोशमें इस शब्दका जो अर्थ होता है उसी अर्थमें पूर्ण स्वतन्त्रता — प्राप्त करने आया हूँ। कुछ लोग मुझपर हँसते हैं। वे कहते हैं — देखो तो इस आदमीको, जो आपसमें ही बुरी तरह विभक्त राष्ट्रके लिए स्वतन्त्रता माँगने चला आया है। ऐसा वे इसलिए कहते हैं कि उन्हें झूठा इतिहास पढ़ाया गया है — यह कि अगर अंग्रेज लोग भारतसे हट जायेंगे तो वहाँ अव्यवस्था फैल जायेगी, घोर अन्धकारका साम्राज्य छा जायेगा। इसका एक उदाहरण दिया जाता है — कश्मीरका उदाहरण। महाराजाको कार्यके बोझसे बहुत अधिक दबे अंग्रेज सिपाहियोंको व्यवस्था कायम करनेके लिए बुलाना

१. कुष्ठके सम्बन्धमें।
२ व ३. यहाँ कुछ शब्द स्पष्ट नहीं हैं।

१८३. प्रश्नोत्तर

लन्दन

६ नवम्बर, १९३१

प्र० : जब आप मुसलमानों और सिखोंको विशेष प्रतिनिधित्व दिये जानेपर राजी हैं तो फिर दलित वर्गोंको देनेसे ही इनकार क्यों करते हैं?

उ० : मेरा बस चले तो मैं मुसलमानों और सिखोंको भी विशेष प्रतिनिधित्व दिये जानेका विरोध खुशी-खुशी करूँगा, लेकिन मुसलमानोंके मामलेमें इस चीजको स्वीकार कर लेनेके पक्षमें मैं १९१६से ही रहा हूँ। एक व्यावहारिक आदमीके नाते मैं यह महसूस करता हूँ कि लखनऊ-समझौतेकी[1] विरासतसे बच पाना असम्भव है, लेकिन दलित वर्गों तथा राष्ट्रके हितचिन्तकके नाते यदि मैं अपेक्षाकृत छोटे अल्पसंख्यक समुदायोंको विशेष प्रतिनिधित्व दिये जानेपर राजी हो जाऊँ तो मैं अपने कर्त्तव्यसे च्युत हुआ माना जाऊँगा। मुसलमानों और सिखोंको दिया गया मेरा वचन अब भी कायम है, लेकिन मैं उनसे यह अपेक्षा जरूर रखता हूँ कि वे यह स्वीकार करें कि जहाँ उन्हें अपने लिए विशेष संरक्षणकी माँग करनेके अलावा कोई चारा नहीं दिखाई देता, वहाँ वे यह महसूस करते हैं कि उनके सिवा औरोंको संरक्षण देना अवांछनीय है। ऐसी स्थिति विशेषकर इसलिए है कि वयस्क मताधिकार, जिसका कि मैं हिमायती हूँ, राष्ट्रकी सेवा करनेवाले सभी वर्गोंके लोगोंको विधान-सभाओंमें प्रवेश करनेकी पूरी सुविधा देता है।

प्र० : चूँकि स्वराज्य तत्काल प्राप्त करना आवश्यक है, इसलिए आप दलित वर्गोंकी माँग स्वीकार क्यों नहीं कर लेते?

उ० : क्योंकि वह स्वराज्य नहीं है। इसे मैं बुनियादी महत्त्वकी बात मानता हूँ। अस्पृश्योंका मुझे पूरा खयाल है, लेकिन मैं समाजको टुकड़ोंमें बाँटनेके लिए तैयार नहीं हूँ। मैं परिषद्के विफल हो जानेसे डरता नहीं हूँ। और चूँकि मुझे लगता है कि इसे विफल ही होना है इसलिए मैं तो ऐसा सोचता हूँ कि हम स्वदेश लौट चलें और स्वराज्य प्राप्त करनेके दूसरे रास्ते ढूँढ़ें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, ९-११-१९३१

१. कांग्रेस और मुस्लिम लीगके दरम्यान विभक्त मतदाता-संघको मानते हुए।

१८४. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

लन्दन
६ नवम्बर, १९३१

पूर्व आफ्रिका-सम्बन्धी रिपोर्टपर अपने विचार व्यक्त करते हुए गांधीजी ने श्री शास्त्रीके निष्कर्षकी पुष्टि की। उनका तात्पर्य यही था कि प्रवासी भारतीयोंकी समस्याका समाधान स्वयं भारतकी स्वतन्त्रता है। गांधीजी ने अपनी अनूठी शैलीमें कहा :

अगर हम केन्द्रमें कुछ कर सकें तो परिधि अपने-आप ठीक हो जायेगी। जब केन्द्र अव्यवस्थित है तब परिधि तो अस्थिर होगी ही।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ७-११-१९३१

१८५. भेंट : 'स्टार'के प्रतिनिधिको

[७ नवम्बर, १९३१के पूर्व]

गांधीजी ने जोरदार शब्दोंमें इस बातका खण्डन किया कि उनके समर्थक उनके भारत लौट आनेके लिए शोर मचा रहे हैं, क्योंकि वहाँ जल्दी ही क्रान्ति भड़क उठने-का खतरा है। उन्होंने कहा, सच तो यह है कि मैं परिषद्में अपना काम पूरा करने तक इंग्लैंडमें ही रहूँगा। उसके बाद भी, सम्भव है, मैं जल्दी-जल्दी यूरोपका दौरा भी कर लेना चाहूँ और मेरे लौटनेमें और भी देर लग जाये। उन्होंने कहा :

उपद्रव और अशान्तिकी खबरें बहुत बढ़ा-चढ़ाकर दी गई हैं और कांग्रेसके रवैयेको भी गलत रूपमें पेश किया गया है। अभी तो मुझे काम पूरा करनेसे पहले लौटनेकी कोई आशंका दिखाई नहीं देती, लेकिन अगर वहाँ मेरी उपस्थिति जरूरी लगी तो मैं बेशक लौट जाऊँगा।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ७-११-१९३१

१८१. पत्र : प्रधान मन्त्रीको[1]

लन्दन

६ नवम्बर, १९३१

प्रिय प्रधान मन्त्री,

हम ऐसी अफवाह सुन-सुनकर बड़े चिन्तित हो रहे हैं कि भारतके राजनीतिक पुनर्गठनके प्रथम चरणके रूपमें प्रान्तीय स्वायत्त शासन दिया जायेगा और संघ-निर्माण तथा केन्द्रमें उत्तरदायी शासनकी स्थापनाका सवाल आगेके लिए छोड़ दिया जायेगा। आज (अर्थात् ६ नवम्बर)की सुबह एक अखबारमें हमने इससे उलटी खबर भी पढ़ी है। लेकिन, यह अफवाह लगातार इतने जोरोंसे फैल रही है कि हमें अपने विचार स्पष्ट रूपसे आपके सामने रख देना आवश्यक लग रहा है।

आजकी परिस्थितिके तकाजेको केवल सर्वांगपूर्ण और व्यापक योजनासे ही पूरा किया जा सकता है। संघीय केन्द्रमें उत्तरदायी शासनकी स्थापना उस योजनाका वैसा ही अभिन्न अंग होनी चाहिए जैसा अभिन्न अंग संघटक इकाइयोंको स्वायत्त शासन दिया जाना होगा। योजनाको टुकड़ोंमें बाँट देने और उसके एक हिस्सेको छोड़कर दूसरेपर तत्काल अमल करनेका मतलब लोगोंके मनमें अनिश्चितताका भाव पैदा करना और सरकारके मन्तव्यके बारेमें सन्देह उत्पन्न करना होगा।

हम अल्पसंख्यक समुदायोंके सवालके महत्त्वको समझते हैं। यह भी ठीक है कि अबतक उसका कोई सन्तोषजनक समाधान नहीं ढूँढ़ा जा सका है। लेकिन उस चीजको उत्तरदायी शासनकी स्थापनाकी पूर्ण और व्यापक योजनाके मार्गमें बाधक नहीं बनने देना चाहिए, क्योंकि ऐसी योजना ही तत्काल समाधानकी अपेक्षा रखनेवाली हमारी समस्याओंका हल पेश करती है।

भवदीय,

मो० क० गांधी

म० मो० मालवीय, वी० एस० श्रीनिवास शास्त्री, तें० ब० सप्रू, पी० सेठना, कावसजी जहाँगीर, मु० रा० जयकर, रामचन्द्र राव, (श्रीमती) सुब्बरायन, ए० रंगस्वामी अय्यंगार, पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास, घ० दा० बिड़ला, जमाल मुहम्मद, एस० के० दत्त, उज्जलसिंह, मुंजे, (श्रीमती) सरोजिनी नायडू, ताम्बे, राजा नरेन्द्रनाथ, रामस्वामी मुदलियार, जाधव, सम्पूरणसिंह, बरुआ, ना० म० जोशी, व० वें० गिरि, चिमनलाल सीतलवाड और शिवराव

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, ११-११-१९३१

१. अनुमान है कि पत्रका मसविदा गांधीजी ने ही तैयार किया था।

१८२. भेंट : जॉर्ज बर्नार्ड शॉसे[1]

लन्दन
[६ नवम्बर, १९३१][2]

श्री बर्नार्ड शॉके मनमें गांधीजी से मिलनेकी इच्छा बहुत दिनोंसे थी और वे बड़े संकोचके साथ मिलने आये। वे गांधीजी के साथ लगभग घंटे-भर रहे। इस बीच उन्होंने न जाने कितने विषयोंपर प्रश्न पूछे — मानव-जाति-शास्त्र, धर्म, समाज, राजनीति, अर्थशास्त्र, किसी भी विषयको नहीं छोड़ा। अपनी बातचीतके दौरान वे अपनी हाजिरजवाबी और व्यंग्योक्तियोंकी फुलझड़ियाँ छोड़ते रहे। उन्होंने कहा, "मैं आपके बारेमें थोड़ी-बहुत बातें जानता था और उनसे मुझे लगा कि आपके और मेरे बीच कहीं कोई भाव-साम्य है। हम दुनियाके उस समुदायके जीव हैं जिसके सदस्योंकी संख्या बहुत कम है।" उनके दूसरे प्रश्न तो सार्वभौमिक महत्त्वके थे, किन्तु वे गोलमेज परिषद्के बारेमें भी एक प्रश्न पूछनेसे बाज नहीं आये। उन्होंने पूछा : "क्या गोलमेज परिषद्की कार्यवाहियोंसे आपका धीरज छूटने नहीं लगता?" गांधीजी को दुःखके साथ स्वीकार करना पड़ा :

यह असाधारण धीरजकी अपेक्षा रखती है। सब-कुछ एक भारी छद्मावरण है और हमारे सामने जो जोरदार तकरीरें की जाती हैं, वे सिर्फ समय बितानेके लिए दी जाती हैं। मैंने उनसे कहा कि आप अपने मनकी बात साफ-साफ क्यों नहीं कह देते और अपनी नीतिकी घोषणा करके हमें निर्णय करनेका अवसर क्यों नहीं देते। लेकिन, शायद अंग्रेजोंकी राजनीतिमें इस बातके लिए गुंजाइश ही नहीं है। उसे तो घुमावदार रास्तेसे ही चलना है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १९-११-१९३१

१. महादेव देसाईके "लन्डन लेटर" (लन्दनका पत्र) से उद्धृत। इस मुलाकातकी कोई और रिपोर्ट उपलब्ध नहीं है।

२. तिथि गांधीजी की दैनन्दिनीसे ली गई है।

१८६. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

रविवार, ८ नवम्बर, १९३१

चि० प्रेमा,

तू यहाँके बारेमें व्यर्थ चिन्ता करती है। अखबारी खबरोंसे कोई अनुमान मत लगाना। यह विश्वास रखना कि मैं देशकी लाज नहीं खोऊँगा। काम लेनेकी मेरी पद्धति औरोंसे भिन्न होनी ही चाहिए। इसलिए दूसरोंके साथ तुलना नहीं की जा सकती। भेद कहाँ है, यह तो मैं पहुँचूँ और बता सकूँ तभी तुझे मालूम होगा। इसलिए अच्छा यह होगा कि यहाँ क्या हो रहा है, इसका विचार करनेमें तू अपना मन बिलकुल न लगाये। मेरी बात समझमें आती है न?

और-कुछ लिखनेका समय नहीं है। इतनेसे ही सन्तोष करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२६६)से।

१८७. पत्र : इन्दु पारेखको

लन्दन
८ नवम्बर, १९३१

चि० इन्दु,

तेरा पत्र मेरे सामने है। आशा है तू अपनी पढ़ाई-लिखाई पर ठीक-ठीक ध्यान दे रहा होगा। मैंने तुझपर जो विश्वास किया है उसे सही सिद्ध करना। आशा है तेरा स्वास्थ्य भी ठीक होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२६१)से।

१८८. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

लन्दन
८ नवम्बर, १९३१

यह पूछनेपर कि अगर कांग्रेसकी अस्सी प्रतिशत माँगें स्वीकार कर ली जायें तो भी क्या कांग्रेस संघर्ष शुरू करेगी, गांधीजी ने कहा :

खुद मुझे तो शत-प्रतिशतसे कम कुछ भी नहीं चाहिए। लेकिन अगर सचमुच अस्सी प्रतिशत दिया जानेवाला है तो सम्भव है कांग्रेस इस बातपर विचार करे कि वह संविधानको कार्यरूप दे अथवा संघर्ष शुरू करे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, ११-११-१९३१

१८९. सन्देश : दीवालीपर[1]

लन्दन
९ नवम्बर, १९३१

सच्ची दीवाली तभी आयेगी जब हमें स्वराज्य प्राप्त होगा। स्मरण रहे कि दीवाली रावणकी सेनापर — अर्थात् हिंसा और असत्यपर — रामकी सेनाकी — अर्थात् अहिंसा और सत्यकी — विजयके वार्षिक उत्सवका प्रतीक है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १०-११-१९३१

१. जब एक संवाददाताने गांधीजी के लिए दीवालीकी शुभकामनाएँ व्यक्त कीं तो उन्होंने कागजके टुकड़ेपर यह सन्देश लिख दिया, क्योंकि उस दिन उनका मौनवार था।

१९०. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको[1]

लन्दन
९ नवम्बर, १९३१

कांग्रेसकी कार्य-समितिके निर्णयका पूर्वानुमान लगाकर मैंने अपने यूरोपके दौरेका कार्यक्रम रद कर दिया है। मेरी दृष्टि बराबर भारतके घटना-क्रमपर लगी रही है, लेकिन मुझे लगता है कि जबतक गोलमेज परिषद्‌के काममें मेरा इंग्लैंडमें रहना जरूरी है तबतक यहाँसे मेरा चल देना गलत होगा। मैं इसी हफ्ते अपने प्रस्थानकी तिथि तय कर लेनेकी आशा करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १०-११-१९३१

१९१. भाषण : फ्रेंड्स हाउसमें[2]

लन्दन
९ नवम्बर १९३१

आपने मुझसे पूछा है कि भारतमें स्वतन्त्रताकी माँग तो की जा रही है लेकिन क्या वहाँ ऐसे लोग पर्याप्त संख्यामें हैं जो देशकी जिम्मेदारी अपने सिर लेनेको तैयार हों। मेरे खयालसे तो प्रश्न सर्वथा उचित है। मैं जितने संक्षेपमें दे सकता हूँ उतने संक्षेपमें इस महत्त्वपूर्ण प्रश्नका उत्तर देनेकी कोशिश करूँगा। मैं आपको बता दूँ कि असली समस्या यह है कि एक ओर कांग्रेस अपनी माँग पेश कर रही है और दूसरी ओर जो जिम्मेदार लोग हैं उनमें उस माँगको पूरा करनेकी अनिच्छा है। कांग्रेस स्वराज्य चाहती है, जिसका मतलब यह है कि वह प्रतिरक्षा, विदेशी मामलों और वित्त-व्यवस्थापर नियन्त्रण, अर्थात् स्वेच्छापर आधारित ऐसी साझेदारी चाहती है जिसे दोनोंमें से कोई भी पक्ष इच्छा होनेपर तोड़ सके। यही कांग्रेसकी माँगका सार है। क्योंकि कांग्रेस ईमानदारीसे ऐसा मानती है कि देशमें ऐसे योग्य लोग हैं जो हुकूमतकी बागडोर विदेशी सरकारके हाथोंसे लेकर खुद सँभाल सकते हैं।

१. उस दिन गांधीजी का मौनवार पड़ता था। इसलिए उन्होंने ऑक्सफोर्डकी यात्रासे लौटनेपर ११ बजे दिनमें लिखित रूपमें यह वक्तव्य दिया था।

२. शामको हुई इस सभाका आयोजन फेलोशिप ऑफ रिकंसिलिएशन (समन्वय बंधुसमाज) ने किया था। हॉल खचाखच भरा हुआ था और सभामें शरीक होनेकी इच्छासे आये बहुत-से लोगोंको निराश लौट जाना पड़ा था।

लेकिन मैंने घूम-फिरकर और बातचीत करके जिम्मेदार लोगोंमें जो-कुछ देखा है, उससे ऐसा कुछ नहीं लगता कि वे अनुकूल प्रतिक्रिया दिखानेको तैयार हैं। इसके विपरीत मैं देखता यह हूँ कि कांग्रेसकी जो माँग सर्वथा उचित है, उसकी स्वीकृति मार्गमें वे बहुत-सी बाधाएँ खड़ी कर रहे हैं। मैं आपसे निस्संकोच कहूँगा कि कांग्रेस सारी भारतीय जनताका प्रतिनिधित्व करनेका प्रयत्न कर रही है और वह उसका प्रतिनिधित्व करनेका दावा करती है। आप जानते हैं कि भारत कलकत्ता, बम्बई या मद्रास-जैसे नगरोंमें नहीं, बल्कि गाँवोंमें बसता है। और देशी राजाओंके न चाहने पर भी कांग्रेस उनका भी प्रतिनिधित्व करनेका दावा करती है। बेशक, वह उनके अधिकारोंको हड़प नहीं जाना चाहती, बल्कि जहाँतक उनके दावे करोड़ों दीन-हीन जनोंकी माँगोंसे असंगत नहीं हैं वहाँतक उनके साथ भी न्याय करना चाहती है। लेकिन साथ ही, कांग्रेस उनका कमसे-कम विरोध भी करती है, क्योंकि यह जन-साधारणकी ओरसे उसका दावा पेश करनेमें लगी हुई है।

चूँकि आप शान्तिके रास्ते ढूँढ़नेके लिए प्रतिश्रुत हैं, इसलिए आपको कांग्रेसकी माँग स्वीकार करनेमें कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए। दिल्लीके समझौतेसे पहलेके पन्द्रह महीनोंका इतिहास आपको यह बताता है कि ये लोग सरकारसे संघर्ष कर रहे थे, लेकिन यह शान्तिपूर्ण संघर्ष था, जिसका कारण केवल यह था कि जनसाधारणने रक्तकी एक बूंद बहाये बिना स्वराज्य प्राप्त करनेकी प्रतिज्ञा की थी। इस संघर्षमें हजारों स्त्रियों और बच्चोंपर लाठियाँ बरसीं। दसियों हजार जेल भेजे गये। भारतकी स्त्रियाँ, मानों जादूके असरसे, एकाएक उठ खड़ी हुईं। उनमें अद्भुत जागृति आई। कांग्रेसके सन्देशके प्रति हजारों गाँवोंने उत्साह दिखाया। पता नहीं क्यों मैं खुद ही यह नहीं सोचता था कि लोग इतना अधिक उत्साह दिखायेंगे। निश्चय ही इसके पीछे ईश्वरका हाथ रहा होगा। ये सभी गाँव और ग्रामीण लोग निहत्थे थे, क्योंकि स्मरण रहे कि मेरे देशमें लोगोंको शस्त्रास्त्र रखनेकी मनाही है।

लेकिन लाठियाँ और संगीनोंसे सुसज्ज लोग यह नहीं महसूस कर रहे थे कि इन महिलाओं और ग्रामीण लोगोंके हाथोंमें एक ऐसा शस्त्र है जिसका कभी नाश नहीं हो सकता और जो उनके शस्त्रास्त्रोंसे बहुत अधिक प्रभावकारी है। उनके शस्त्रास्त्रों और क्रूरतापूर्ण तरीकोंके जवाबमें इनके पास प्रेम, अहिंसा और सत्य-रूपी शस्त्र था।

यद्यपि अंग्रेजीके शब्दकोशमें 'इंडिपेंडेंस' (स्वतन्त्रता) शब्दका एक विशिष्ट अर्थ दिया गया है; किन्तु इन साधारण लोगोंके लिए यह एक व्यापकतर और गहन-तर अर्थ रखता है। वे 'विधान सभा', 'उत्तरदायी सरकार' या 'कौंसिलों' का मतलब नहीं समझते, लेकिन 'स्वराज्य' शब्दका अर्थ वे तुरन्त समझ जाते हैं। आज वे लगान देते हैं, लेकिन वे यह नहीं जानते कि देशकी खातिर क्यों और कितनी राशि खर्च की जाती है। वे यह भी नहीं जानते कि सेनापर ५५ करोड़ रुपये खर्च किये जाते हैं। साथ ही यह भी याद रखिए कि उन्हें सीमावर्ती राज्यों या अफगानों अथवा अन्य किसी देशका कोई भय नहीं है। सच तो यह है कि भारतीय गाँवोंपर

आक्रमणोंका कभी कोई असर ही नहीं होता, क्योंकि भारतपर आक्रमणोंका सिलसिला ईस्ट इंडिया कम्पनीसे ही शुरू नहीं हुआ। इससे पहले भी हमपर आक्रमण हुए थे। ये आक्रमणकारी शहरोंसे आगे नहीं गये। वे दिल्लीसे आगे नहीं बढ़े और जैसा कि आपको भारतके भूगोलसे ज्ञात है, गाँवोंमें रहनेवाली इस देशकी आबादीके मुख्य हिस्सेपर इन आक्रमणोंका कोई असर नहीं हुआ। इसके अलावा आन्तरिक झगड़ोंका असर भी गाँवोंपर नहीं पड़ता। इसलिए उन्हें कोई संरक्षण नहीं चाहिए। आज अधिकांश लोग सर्वथा भुखमरीकी अवस्थामें रह रहे हैं। उन्हें प्रतिदिन दो बार खाना नसीब नहीं होता। उनके पास न अपने लिए रोटी और मक्खन है और न बच्चोंके लिए बूंद-भर दूध।

हमने उनके जीवनको गरिमा प्रदान की है और उनमें यह आत्म-विश्वास पैदा हो गया है कि वे अपनी कमाईसे अपना काम मजेमें चला लेंगे और दुनियाको अपनेसे दूर रखेंगे।[1]

कांग्रेसने राजनीतिको पवित्र बना दिया है। इसने राजनीतिको लगभग धर्ममय (स्पिरिचुअलाइज्ड) बना दिया, यद्यपि मैं इस शब्दके प्रयोगको यहाँ बहुत उपयुक्त नहीं मानता। हम सत्य और अहिंसाके बलपर, अस्पृश्यताको दूर करके और प्रत्येक ग्रामवासीको मनुष्यके उपयुक्त स्थिति प्राप्त करनेका अधिकारी मानकर स्वतन्त्रता प्राप्त करनेको कटिबद्ध हैं। हमारे असहयोग आन्दोलनका मतलब यह है कि दरअसल कोई भी किसीपर अत्याचार नहीं कर सकता। हमारा सारा आन्दोलन नैतिकता पर आधारित है। हम अपने शासकोंकी इच्छाको सर्वोपरि माननेमें विश्वास नहीं रखते। आप जानते हैं कि भारतमें हमारा तरीका क्या है। जब सत्ताधारी कहते हैं कि तुम यह काम करो और वह काम हमें गलत लगता है तो हम कहते हैं, आदेशके लिए धन्यवाद, लेकिन हम यह काम नहीं करेंगे। हम उनसे कहते हैं कि जो हमारे आत्म-सम्मानके विरुद्ध हो, जो हमारी मानवीय गरिमाको ठेस पहुँचाने वाला हो, ऐसा कोई काम हम नहीं करेंगे। इस संघर्षमें करोड़पतियोंने भी अपनी सम्पत्तिपर अपना निजी अधिकार छोड़ दिया है और वे भारतीय ग्रामवासियोंके कल्याणके निमित्त अपनी सम्पत्तिके न्यासी-भर बन गये हैं।

अगर ब्रिटेनके मन्त्री हमारी माँग स्वीकार नहीं करते और हमारे कन्धोंपर गुलामीका जुआ बनाये रखना चाहते हैं तो हमें एक बार फिर उस अग्नि-परीक्षासे गुजरना पड़ सकता है, क्योंकि शायद अब भी हमें कष्ट-सहनकी आवश्यकता शेष है। आपकी सरकारसे हमारे देशको कोई लाभ नहीं हुआ है। इसने सिर्फ हमारे पुंसत्वका हरण किया है। यह बड़ी लज्जाजनक बात है कि हमें अपने-आपको विदेशी दासतासे बचाने, यहाँतक कि अपने आन्तरिक मामलोंको भी सँभालनेमें असमर्थ बना दिया गया है। यह बहुत ही शर्मनाक बात है। और हमने क्या किया है? हमने हर गाँवमें आत्मत्यागी कार्यकर्त्ता तैयार किये हैं। ये हमारे गैर-सैनिक सेवक (सिविल

१. यहाँ गांधीजी का तात्पर्य अखिल भारतीय चरखा संघ द्वारा किये कार्योंसे था।

सर्वेंट्स) हैं और कांग्रेस उनसे जो-कुछ भी करनेको कहेगी, वे करेंगे। उनमें देशका शासन चलानेकी योग्यता है। मेरी ही तरह वे भी जानते हैं कि हमने अपने पीछेके सारे रास्ते बन्द कर दिये हैं और वापस लौटनेकी कोई भी गुंजाइश छोड़े बिना आगे बढ़ रहे हैं — क्योंकि हम करोड़ों आम लोगोंके लिए स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए काम कर रहे हैं।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १२-११-१९३१

१९२. भेंट : जे० एम० सेनगुप्तको

लन्दन

१० नवम्बर, १९३१

ज्यादा बातें मुझे इस हफ्ते मालूम होंगी। मुझे न तो चटगाँव या हिजलीकी घटनाओं-जैसे[1] विशिष्ट सवालोंके बारेमें और न संविधानके सम्बन्धमें ही किसी बात-की आशा है। मैंने हर आदमीसे सम्पर्क बनाये रखा है। मैं यहाँ इसलिए ठहरा हुआ हूँ कि निबटारेका कोई मौका हाथसे न जाने दूँ और परिषद्की विफलताके लिए मुझे दोष न दिया जा सके। अगर इस बातचीतका कोई ठीक नतीजा निकलता है तब तो नजरबन्दोंको रिहा कर ही दिया जायेगा। लेकिन मुझे ऐसी कोई चीज दिखाई नहीं दे रही है जिसके आधारपर मैं कोई आशा बाँध सकूँ।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १३-११-१९३१

१९३. भाषण : लन्दन स्कूल ऑफ इकनॉमिक्समें[2]

लन्दन

१० नवम्बर, १९३१

जिस कामसे मैं यहाँ आया हूँ, उसमें सबसे बड़ी बाधा मैं खुद हूँ। बहुत-से लोग मुझसे कहते हैं कि कांग्रेसकी माँग बहुत ऊँची है। जब मैं अपना दृष्टिकोण समझाने लगता हूँ तो वे मेरी बात ध्यानसे सुनते हैं। जिनपर सरकारकी जिम्मेदारी है वे

१. जे० एम० सेनगुप्तने गांधीजी को बंगालकी स्थितिका हाल सुनाया था।

२. इस भाषणके विषयमें अखबारोंमें छपी खबरोंके अनुसार इस सभामें इतने लोग इकट्ठे हुए थे कि स्कूलके विद्यार्थी-संघके सदस्योंको स्कूलके थियेटरमें स्थान नहीं मिल सका था और गांधीजी ने इंग्लैंडमें जिन सभाओंमें भाषण दिया उनमें सबसे बड़ा अंग्रेज-श्रोतृ-समुदाय शायद यही था। श्रोताओंमें मुख्यत: अंग्रेज विद्यार्थी ही थे।

लोग भी कुछ कम दोषी नहीं हैं, क्योंकि वे दूसरे पक्षकी बात सुननेको तैयार ही नहीं हैं। वैसा वातावरण ही दिखाई नहीं देता जिसमें कोई किसीकी बातको सुनने-समझानेको तैयार हो। कुछ बहुत ही अच्छे अंग्रेज स्त्री-पुरुषोंको लगता है कि स्वतन्त्रताकी परिभाषा करनेके लिए कुछ करना जरूरी है . . .।[1] मैं जेलसे छूटकर इंग्लैंड आया हूँ। मेरे साथ और भी हजारों लोग जेलमें थे। वाइसरायके साथ हुए समझौतेका स्वीकृत उद्देश्य यह था कि गोलमेज परिषद्में कांग्रेसका प्रतिनिधि भी जाये। गोलमेज परिषद्में आम तौरपर वही लोग शामिल होते हैं जो जनताके चुने हुए होते हैं, जो उसमें अपने-अपने अधिकारोंके बलपर जाते हैं। लेकिन इस परिषद्में मैं अपने अधिकारके बलपर नहीं बैठता और सरकारकी इच्छासे ही इसमें शामिल होता हूँ। मनोनीत सदस्योंसे आप बहुत शानदार नतीजेकी उम्मीद नहीं रख सकते। मुझे तो ऐसा एक भी उदाहरण मालूम नहीं है जब मनोनीत सदस्योंकी किसी परिषद्ने सिद्धान्तोंके आधारपर कोई निर्णय किया हो।

हम अपना खून देनेको कमर कसकर निकले हैं। लेकिन यहाँका रवैया इस प्रकार है: 'देखिए इन कृतघ्न लोगोंको, ये ब्रिटिश शासनके वरदानोंको देख ही नहीं पा रहे हैं।' यह मनोवृत्ति केवल अधिकारियोंकी ही नहीं, उन लोगोंकी भी है जो लोकमतको किसी खास दिशामें मोड़ सकते हैं। सर हेनरी कैम्बेल बैनरमैनने कहा था कि सुशासन स्वशासनका स्थान नहीं ले सकता। जिनका ब्रिटिश हुकूमतसे साबका पड़ा है, वे ऐसा नहीं समझते कि ब्रिटिश हुकूमतसे उन्हें कोई लाभ हुआ है। गोखलेने कहा था कि विदेशी हुकूमतने हमें पुंसत्वहीन बना दिया है। उस देशको अचानक अपनी शक्तिका बोध कैसे हो गया है? समस्याके निवटारेके मार्गमें बाधा है, अच्छेसे-अच्छे अंग्रेजोंका घोर अज्ञान। उनमें ऐसा अज्ञान है कि देखकर लगभग हैरान रह जाना पड़ता है। उन्हें जो जानकारी दी गई है, वह गलत है, जो इतिहास पढ़ाया गया है, वह झूठा है। भारतमें जो-कुछ होता है, उसका कोई विवरण यहाँके अखबारोंमें नहीं छपता। चटगाँवकी घटना इतिहासका एक काला पृष्ठ है। अधिकारी पागल हो उठे और वहाँके निहत्थे लोगों पर तबाही बरपा कर दी। हिजलीमें निर्दोष लोगोंको गोलियोंसे उड़ा दिया गया, १६ व्यक्ति गम्भीर रूपसे घायल हो गये। और जहाँतक अंग्रेजोंकी हत्याके प्रयत्नोंका सम्बन्ध है, मैं ऐसे प्रयत्नोंकी तीव्रतम शब्दोंमें भर्त्सना करता हूँ।

लेकिन इस सबका मतलब क्या है? चटगाँव और हिजलीकी घटनाओंसे अंग्रेजों पर किये गये इन आक्रमणोंका बहुत निकटका सम्बन्ध है।

सारा भारत अशान्त है। इसके निश्चित कारण हैं और उन कारणोंसे ब्रिटिश शासनका सम्बन्ध है। भारतकी नैतिक और भौतिक प्रगति? कुल मिलाकर बस शून्य। जरा देखिए कि मुझे कैसी बाधा-दौड़ दौड़नी पड़ रही है। मैं आपको पूरा विश्वास दिलाता हूँ कि मैं कोई समाधान पानेके लिए दिन-रात एक किये हुए हूँ और उसके रास्तेमें कोई बाधा नहीं डाल रहा हूँ। हमने अपने पीछेके रास्ते बन्द कर दिये हैं, अपने वापस लौटनेकी कोई गुंजाइश नहीं छोड़ी है। मैं अस्पृश्योंके लिए, गरीब

१. यहाँ कुछ शब्द स्पष्ट नहीं हैं।

जन-साधारणके लिए स्वराज्य चाहता हूँ। अगर उसके लिए मुझे दस लाख लोगोंकी जानें कुरबान करनी पड़ें तो भी मैं समझूँगा कि हमें सस्तेमें ही आजादी मिल गई। करोड़ों लोग जिस प्रकार तिल-तिल कर मर रहे हैं, उसकी तुलनामें दस लाख लोगोंका स्वेच्छासे बलिदान हो जाना लाख गुना अच्छा है। मैं इस स्थितिको नहीं सह सकता। . . .[१] हमारी केवल एक ही मर्यादा है — यह कि हम अपने हाथ प्रतिपक्षीके रक्तसे अपवित्र नहीं करेंगे और असत्यका सहारा कभी नहीं लेंगे।

हम पर कब्जा कायम रखनेके लिए हमारे देशमें बरकरार एक विशाल सेनाका बोझ उठानेको हम तैयार नहीं हैं। . . .[२] हम अपनी बचतका अधिकांश अपने इन द्वारपालोंको दे देते हैं। आपके यहाँ ऐसे द्वारपाल नहीं हैं, केवल पुलिसके लोग हैं — ऐसी पुलिसके लोग जो दुनियामें अद्वितीय हैं, लासानी हैं। स्वाधीनता और पराधीनतामें यही अन्तर है। सैनिक व्ययको प्रमुखता देनेवाले बजटको समाप्त कर दिया जायेगा। जब मीर आलम खाँने मुझपर आक्रमण किया तो एक अंग्रेजने ही मुझे बचाया और उसकी लड़कीने मुझे "लीड काइंडली लाइट"वाला भजन सुनाया। जो दस हजार मुसलमान जेल गये वे क्या विश्वासघाती हैं? . . .[३] विदेशी शासन-रूपी पच्चरके हमारे बीचसे निकलते ही हम एक हो जायेंगे। यदि अफगानोंका भगवान् उनसे यह कहेगा कि तुम भारतीयोंकी जानें लो तो मैं भी उसी ईश्वरसे सहायताके लिए प्रार्थना करूँगा, हालाँकि वे लोग दिनमें पाँच बार उसकी इबादत करते हैं। यदि ईश्वर चाहेगा तो हम उसे भी चुनौती देंगे। हमें मनुष्यसे डरना छोड़ देना चाहिए।

एक हब्शी छात्र: आप अंग्रेजोंसे भी उतना ही प्रेम करते हैं जितना भारतीयोंसे करते हैं, फिर भी आप ब्रिटिश सरकारसे घृणा करते हैं। लेकिन सरकार भी तो ब्रिटेनकी जनतासे ही बनी है?

गांधीजी: मनुष्य अपनी कार्यपद्धतिसे कहीं बड़ा होता है। किसी मनुष्य द्वारा अपनाया तरीका बुरा हो सकता है, लेकिन उसके बावजूद उस मनुष्यको बुरा कहना उचित नहीं होगा। . . .[४] ब्रिटिश प्रणाली शैतानी प्रणाली है। इसके बावजूद मैं ब्रिटेनवालोंसे अपने भाइयोंकी तरह प्रेम करता हूँ। मेरे एक लड़केने मेरे खिलाफ विद्रोह कर दिया है। लेकिन, फिर भी मैं उस लड़केसे उतना ही प्रेम करता हूँ जितना उसके दूसरे भाइयोंसे करता हूँ। मैं उसके तौर-तरीकेसे घृणा करता हूँ। मैंने पारिवारिक नियमसे ही यह सीखा है कि यदि मुझमें मनुष्यता है तो मुझे ब्रिटेनवालोंसे प्रेम करना चाहिए। फिर भी मैं उनकी प्रणालीसे घृणा करता हूँ और उसे नष्ट करनेके लिए भरसक कोशिश कर रहा हूँ। . . .[५]

अपनी अहिंसात्मक लड़ाईमें हम ईश्वरसे डरकर चलते हैं, कुछ भी गोपनीय नहीं रखते और न मनमें धोखा-धड़ीका कोई खयाल रखते हैं।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी से; सौजन्य: नारायण देसाई

१ से ५. यहाँ कुछ शब्द स्पष्ट नहीं हैं।

१९४. पत्र : जॉन हाइनीज होम्सको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, पश्चिमी
११ नवम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

मेरी बहु-चर्चित अमेरिका-यात्राकी बातके सम्बन्धमें आप मुझे तथा महादेवको बड़ी तत्परतासे पत्र लिखते रहे हैं और दूसरोंको भी लिखनेके लिए प्रेरित करते रहे हैं। लेकिन मैं नहीं जानता कि आपको खुद अपने लिए अथवा दूसरोंके लिए इतनी परेशानी उठानेकी जरूरत थी या नहीं। आपकी निर्णय-बुद्धिके बारेमें तो मेरे मनमें कभी भी कोई शंका नहीं रही, और मैंने प्रत्येक पत्र-प्रतिनिधिसे बिलकुल साफ-साफ कहा है कि जबतक आप मुझे अमेरिका ले जाना तय न करेंगे तबतक मैं नहीं जाऊँगा। आपकी निर्णय-बुद्धिमें विश्वास रखकर चलनेका निश्चय कर लेनेके बाद लोगोंसे अलग-अलग और सामूहिक रूपसे भी मेरा यह कहना क्या बिलकुल उचित नहीं था कि इस मामलेमें मेरे अन्तिम मार्ग-दर्शक आप ही हैं?

बेशक, इससे आपके सिर थोड़ी ज्यादा जिम्मेदारी पड़ गई है, लेकिन आपमें इस जिम्मेदारीको उठानेकी पूरी सामर्थ्य है और इधर मैं दुराग्रही मित्रों तथा संवाददाताओंके साथ दलील करनेकी परेशानीसे बच गया हूँ।

श्री बोमनजी कुछ दिन यहाँ रुके थे, तब मैं उनसे अकसर मिला करता था। अब वे भारतके लिए प्रस्थान कर चुके हैं।

हृदयसे आपका,

परम पूज्य जॉन हाइनीज होम्स, डी० डी०

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८२८३) से।

१९५. पत्र : एच० एच० मॉण्टगोमरीको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, पश्चिमी
११ नवम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके इस लम्बे पत्रको मैं इतने दिनों तक रखे रहा और उत्तरमें मुझे केवल इतना ही लिखनेका समय मिल पा रहा है कि पत्रके लिए और उसमें व्यक्त भावनाओंके लिए मैं आपका आभारी हूँ। चार्ली एन्ड्रयूजने भी यह पत्र पढ़ा। उनके बारेमें आपने जो-कुछ लिखा है उसे पढ़कर वे बड़े प्रसन्न हुए।

हृदयसे आपका,

परम पूज्य बिशप मॉण्टगोमरी
न्यू पार्क
मोविले
काउंटी डोनेगल, आयरलैंड

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८१३१) से।

१९६. पत्र : विविअन बटलर बर्कको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, पश्चिमी
११ नवम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

मैंने उन सज्जनके नाम लिखा आपका पत्र पढ़ा जो मेरे और आपके, दोनोंके मित्र हैं। आपके इससे पहलेके पत्रकी मुझे कोई जानकारी नहीं है।

आपने ठीक ही अनुमान लगाया है कि मेरे लन्दनसे बाहरके कार्यक्रम श्री एन्ड्रयूज निर्धारित करते हैं। मैं आपके विचारसे सहमत नहीं हूँ।[1] श्री एन्ड्रयूजके प्रति मेरे मनमें बहुत अधिक सम्मान है। लगभग बीस वर्षोंसे मैं उन्हें बहुत निकटसे

१. विविअन बटलर बर्कने कहा था कि यह बहुत दयनीय स्थिति है कि गांधीजी के कार्यक्रम सी० एफ० एन्ड्रयूज निर्धारित करते हैं। इसके सम्बन्धमें उन्होंने आइरिश भाषाकी इस आशयकी एक कहावत भी उद्धृत की थी कि "साँड़के सींग और अंग्रेजकी मुस्कराहटका भरोसा कभी मत करो।"

जानता हूँ, और ऐसा एक भी अवसर नहीं आया जब उनकी सलाह माननेके लिए मुझे पश्चात्ताप करना पड़ा हो।[1]

मुझे दुःखके साथ आपको सूचित करना पड़ता है कि भारतसे तत्काल लौटनेका बुलावा आ जानेके कारण मेरी आयरलैंड-यात्राके कार्यक्रमके रद हो जानेकी सम्भावना है। लेकिन किसी तरह कोई सम्भावना निकली तो मैं आयरलैंड आनेकी उम्मीद करता हूँ। अगर आया तो एक निजी मित्रके यहाँ ठहरूँगा।

हृदयसे आपका,

कुमारी विविअन बटलर बर्क
डुगार्ट
वेस्टपोर्ट, काउंटी मेयो

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८२०७)से।

१९७. पत्र : एफ० बी० फिशरको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, पश्चिमी
११ नवम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके अत्यन्त स्नेहपूर्ण पत्र मुझे मिलते रहे हैं। किसी तरह मैं इतना ही लिखनेका समय निकाल पाया हूँ।

अमेरिका जानेके विषयमें तो मेरे मनने यह कहा कि मेरे वहाँ जानेका समय अभी नहीं आया है। वह अब भी यही कहता है। जब वहाँ जानेकी चर्चा पहले-

१. इसके उत्तरमें १४ नवम्बरको विविअन बटलर बर्कने लिखा था कि "... मैं तो श्री एन्ड्रयूजको आपके सम्बन्धमें लिखी रोमाँ रोलाँकी पुस्तकके जरिये ही जानती हूँ। खुद आपके भारतीय अनुयायियोंने ही एक समय मुझे यह बताया था कि वे एन्ड्रयूजका विश्वास नहीं करते। और मुझसे कहा गया है कि आयरलैंड आनेके मेरे निमन्त्रणके अस्वीकार कर दिये जानेका कारण शायद वे ही हों। मुझे ऐसे एक मामलेकी जानकारी है जिसमें भारतके पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके अधिकारके समर्थनमें सतत और साहस-पूर्वक बोलते रहनेवाले चुनिंदा अंग्रेजोंमेंसे एकने जब श्री एन्ड्रयूजको पत्र लिखा तो उनके सचिवने उसके उत्तरमें अपमानजनक बातें लिखीं। ... मैं ईसाई धर्म प्रचारकोंको सहज ही अविश्वासकी दृष्टिसे देखती हूँ — विशेषकर वहाँ जहाँ ईसाई-धर्म या साम्राज्यके हितोंका प्रश्न हो। ऐसे अंग्रेज बहुत ही कम हैं जो न्यायकी खातिर अपने साम्राज्यको ध्वस्त होते देखनेको तैयार हों।"

इसका जवाब गांधीजी के आदेशानुसार इन शब्दोंमें दिया गया : "श्री गांधीको आपका पत्र मिला। आपने श्री एन्ड्रयूजके सम्बन्धमें जो-कुछ लिखा, उसे लिखकर उनके और स्वयं अपने प्रति घोर अन्याय किया है। जब आप इस चीजको महसूस करेंगी तो आपको बहुत पश्चात्ताप होगा।"

पहल चली तो मैंने तय किया था कि जैसा डॉ० हाइनीज[1] कहेंगे, वैसा ही करूँगा। यह तीन साल या इससे भी कुछ पहलेकी बात है और तभी सर्वप्रथम मेरे अमेरिका जानेकी बात चली थी।

और आप जानते ही हैं कि उसके बाद डॉ० हाइनीजसे मेरी मुलाकात भी हुई। वे लन्दनमें मेरी ही प्रतीक्षा कर रहे थे। मैंने उनसे कहा कि मेरे यहाँ आनेके बादसे ही अमेरिकासे जो आग्रहपूर्ण निमन्त्रण आ रहे हैं, उनके बारेमें मैं पूरी तरहसे उन्हींकी सलाहपर चलूंगा।

डॉ० होम्स तथा अन्य अनेक मित्रोंका निश्चित मत है कि अभी मेरा अमेरिका जाना गलत होगा। इसलिए आपका निर्णय जानकर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ है। आप भी मेरे उतने ही प्यारे मित्र हैं जितने कि डॉ० होम्स। इसलिए अब मैं उनके साथ आपकी बातचीतके परिणामकी राह देखूंगा। आप रिचर्ड ग्रेगको भी जानते ही हैं। वे भी डॉ० होम्सकी रायसे सहमत हैं और डॉ० होम्सकी रायके समर्थनमें एक और भी दलील देते हैं कि सर्दीका मौसम मेरे अमेरिका जानेका ठीक समय नहीं होगा।

हृदयसे आपका,

परम पूज्य बिशप फिशर
फर्स्ट मेथाडिस्ट एपिस्कोपल चर्च
एन आरबर मिशिगन

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८२८२) से।

१९८. भेंट : पत्रकारोंको

लन्दन
११ नवम्बर, १९३१

मैं ऐसा नहीं सोचता कि परिषद् निश्चय ही विफल होगी। ऐसा सोचता तो फिर मैं यहाँ ठहरता ही नहीं। हाँ, यह जरूर सोचता हूँ कि अगर कोई चौंकानेवाली बात घटित नहीं होती और अंग्रेजोंके जीवनमें जो-कुछ श्रेष्ठ है वह सब अगर कोई सन्तोषजनक परिणाम प्राप्त करनेकी दिशामें सक्रिय नहीं हो उठता तो परिषद्के विफल हो जानेकी सम्भावना है।

प्र० : अगर परिषद् विफल हुई तो आप दोष किसको देंगे?

उ० : मैं सरकार और परिषद्में आये सभी प्रतिनिधियोंको बराबर-बराबर दोष दूंगा। मैं किसी एक ही पक्षको दोषी माननेको तैयार नहीं हूँ, लेकिन मेरा निश्चित विश्वास है कि अगर राष्ट्रीय सरकार सचमुच चाहे कि परिषद् विफल न हो तो वह विफल नहीं होगी।

१. डॉ० जॉन हाइनीज होम्स।

प्र० : आपको यह जाननेमें कितने दिन लगेंगे कि राष्ट्रीय सरकारमें ऐसी इच्छा है या नहीं ?

उ० : हफ्ते-भरमें जान जाऊँगा। जबतक मुझे इस बातके निश्चित प्रमाण नहीं मिल जाते कि अब और ज्यादा दिन मेरे इंग्लैंडमें रहनेमें कोई लाभ होनेवाला नहीं है, तबतक मैं आशा बनाये रखूँगा। जबतक तनिक भी आशा है तबतक मैं सविनय अवज्ञाकी बात सोचनेवाला नहीं हूँ। और मैं सभी सम्बन्धित लोगोंको पूरा आश्वासन दे सकता हूँ कि इस समय मैं जैसी वार्त्तामें लगा हुआ हूँ वैसी वार्त्ता चलाते रहनेकी जबतक सम्भावना है तबतक परिषद्के सम्बन्धमें कोई सविनय अवज्ञा नहीं की जायेगी। मैं यहाँ अपने मनमें निश्चित संकल्प लेकर आया हूँ कि कोई सम्मानजनक —ग्रेट ब्रिटेन और भारत दोनोंके लिए सम्मानजनक—समाधान प्राप्त करनेके लिए मैं कुछ भी उठा नहीं रखूँगा।

इंग्लैंडमें राज-काजकी देख-रेख करनेवाले प्रशासकोंकी चर्चा करते हुए श्री गांधीने कहा :

. . .[1] लेकिन मुझे ऐसा सन्देह है कि भारतके विषयमें और इन दिनों वहाँ जो-कुछ चल रहा है उसके सम्बन्धमें उनकी जानकारी वास्तविक वस्तु-स्थितिको जिस रूपमें मैं जानता हूँ, उससे मेल नहीं खाती, और उनकी तमाम सद्भावनाओं और शुभेच्छाओंके बावजूद यह एक बहुत बड़ी कठिनाई है। मुझे यह देखकर बहुत दुःख हुआ है कि पता नहीं क्यों, वहाँ घटित होनेवाली गम्भीरतम महत्त्वकी घटनाओंकी खबर भी यहाँके अखबारोंमें नहीं दी जाती और मुझे इसमें सन्देह है कि यहाँके अधिकारी किन्हीं अन्य सूत्रोंसे इनकी जानकारी पा सके होंगे।

चटगाँवमें वहाँके अधिकारियोंके सामने ही जो बर्बरतापूर्ण कृत्य किये गये और जिनके पीछे, मेरे सामने पड़ी रिपोर्टके अनुसार "अगर उनका प्रोत्साहन नहीं तो मूक सहमति तो थी ही", उनके सम्बन्धमें यहाँके अधिकारियोंको, लगता है, कोई जानकारी नहीं है और निश्चय ही, अखबारोंने तो उसकी कोई खबर नहीं ही छापी है। मैं इस तरहके और भी बहुत-से दृष्टान्त दे सकता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

यॉर्कशायर पोस्ट, १२-११-१९३१

१. साधन-सूत्रमें इस वाक्यका प्रारम्भिक अंश कोई संगत और पूर्ण अर्थ नहीं देता। इसलिए उस अंशका अनुवाद यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

१९९. भाषण : गोलमेज परिषद्के प्रतिनिधियोंकी बैठकमें

लन्दन

११ नवम्बर, १९३१

आज शाम गोलमेज परिषद्के प्रतिनिधियोंकी एक बैठकमें महात्मा गांधीने प्रान्तीय स्वायत्त शासनकी अपनी कल्पना विस्तारसे समझाई। उनकी कल्पनाके प्रान्तीय स्वायत्त शासनका मतलब, साइमन रिपोर्ट तथा भारत सरकारके खरीतेमें उसकी जो रूप-रेखा खींची गई है, उससे बिलकुल भिन्न है। महात्मा गांधीका मुख्य आशय यह है कि सभी विषयोंपर जनप्रतिनिधियोंका निर्बाध नियन्त्रण हो। उनके अनुसार गवर्नरको कोई सुरक्षित अधिकार नहीं होना चाहिए और प्रान्तोंकी इतनी पूर्ण स्वायत्तता होनी चाहिए जिससे केन्द्र आन्तरिक अव्यवस्था-जैसे मामलोंमें प्रान्तोंके अनुरोधके बिना कोई हस्तक्षेप न कर सके। इसके अलावा, प्रान्तोंको यह छूट भी होनी चाहिए कि वे चाहें तो केन्द्रीय सरकारको आर्थिक अंशदान देनेसे इनकार कर सकें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १४-११-१९३१

२००. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

[१२ नवम्बर, १९३१के पूर्व][1]

सारी खबर तोड़-मरोड़कर सामने रखी गई है[2] और वह उस चीजसे ठीक उलटी है जिसे स्वीकार करनेको मैं तैयार हूँ। यहाँ तफसीलकी बातोंकी चर्चा करना मेरे लिए अनावश्यक है। इतना कह देना काफी होगा कि तत्त्वतः देखा जाये तो जो-कुछ श्री शास्त्री तथा अन्य मित्र चाहते हैं और जो चीज स्वीकार करनेको मैं तैयार हूँ, उन दोनोंमें कोई अन्तर नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १४-११-१९३१

१. यह वक्तव्य सबसे पहले इसी तारीखके **हिन्दू**में प्रकाशित हुआ था

२. तात्पर्य इस आशयकी अफवाहोंसे है कि गांधीजी प्रान्तीय स्वायत्त शासनकी बात स्वीकार कर लेना चाहते हैं और इस मामलेमें शास्त्री, सप्रू तथा अन्य लोग उनके विचारसे सहमत नहीं हैं।

२०१. भाषण : कॉमनवेल्थ ऑफ इंडिया लीगमें[1]

लन्दन
१२ नवम्बर, १९३१

अध्यक्ष महोदय और भाइयो,

आजकी सुबह आपके बीच आकर मुझे बड़ी खुशी हो रही है। आपने अपने लक्ष्यकी शब्दावलीमें जो परिवर्तन किया है, वह बहुत अच्छा है, लेकिन मेरा सुझाव होगा कि आप एक कदम आगे बढ़कर पूर्ण स्वराज्यको अपना लक्ष्य बनायें। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसका लक्ष्य पहले स्वराज्य था, लेकिन चूँकि स्वराज्यके साथ कुछ चलन सिद्ध अर्थ जुड़ गये, इसलिए अपनी माँगको बिलकुल स्पष्ट बनानेके लिए कांग्रेसने उससे पहले 'पूर्ण' शब्द जोड़ दिया।

मैं बराबर यह मानता रहा हूँ कि कॉमनवेल्थ ऑफ इंडिया लीग-जैसी समिति को कांग्रेससे संयुक्त नहीं होना चाहिए तभी वह अपना स्वतन्त्र अस्तित्व कायम रख सकती है, स्वतन्त्र रूपसे निर्णय ले सकती है। इस तरह अपना स्वतन्त्र अस्तित्व और निर्णयकी स्वतन्त्रता कायम रखकर वह यहाँके जनमतको जितना प्रभावित कर सकती है, उतना भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसकी ही बातोंको दोहरानेवाली संस्था बनकर नहीं कर सकती। मैं समझता हूँ कि ऐसी संस्थाका कांग्रेसकी एक शाखा-मात्रकी स्थिति अपना लेना उसके लिए बहुत घातक होगा। मैंने कांग्रेसको भी बराबर यह सलाह दी है कि वह बाहरकी संस्थाओंको अपनेसे संयुक्त न करे। अतीतमें भारतीय कांग्रेसने इंग्लैंडमें अपनी शाखा स्थापित की थी,[2] लेकिन बादमें पता चला कि यह गलत कदम था। अब वह अमेरिका तथा अन्य देशोंमें अपनी शाखाएँ स्थापित करनेको तैयार नहीं है, आपने अपनेको कांग्रेससे बाहर रखकर निश्चय ही बहुत अच्छा काम किया है।

जहाँतक उस कामका सम्बन्ध है जो आप इस देशमें कर रहे हैं, मेरी राय यह है कि इस परिषद्का कोई नतीजा नहीं निकलनेवाला है। मैंने यह बात कह तो दी है, लेकिन आप क्षण-भरको भी ऐसा न मानें कि मैं कुछ कर ही नहीं रहा हूँ या यह कि परिषद् भारतके लिए संविधान तैयार करनेका जो प्रयत्न कर रही है उसमें बाधा डाल रहा हूँ। मैं अपने देशको फिरसे किसी अग्नि-परीक्षामें नहीं डालना चाहता, लेकिन अगर जरूरी हुआ तो मैं वैसा करूँगा, और मैं जानता हूँ कि इस बारका संघर्ष पिछली बारसे भी बहुत अधिक भयंकर होगा, और इसलिए

१. यह लीगकी कार्यकारिणी समिति तथा संसदीय समितिकी बैठक थी। उपस्थित लोगोंमें लीगके अध्यक्ष हॉरैबिन और उसके मन्त्री वी० के० कृष्ण मेनन भी शामिल थे।

२. कांग्रेसने लन्दनमें ब्रिटिश कमेटीकी स्थापना की थी, जिसे कांग्रेसके नागपुर अधिवेशनमें १९२०के एक प्रस्ताव द्वारा समाप्त कर दिया गया था। देखिए खण्ड १९।

मैं बातचीतके द्वारा कोई सम्मानजनक समाधान ढूँढ़नेका वैसा हर प्रयत्न करूँगा जो मनुष्यके बसमें है। लेकिन याद रखिए कि मुझे जो आदेश दिया गया है, मैं तो उसकी मर्यादाके भीतर ही काम करूँगा। इसका मतलब यह है कि मैं उस आदेशमें विश्वास रखता हूँ और उसमें कही गई बातसे कम कोई भी चीज हमारी दृष्टिमें पर्याप्त नहीं होगी। हमें वित्त-व्यवस्था और सेनाका नियन्त्रण मिलना ही चाहिए। यह बात यहाँके लोगोंको चाहे जितनी अव्यावहारिक प्रतीत हो, लेकिन कांग्रेस मानती है कि वह इन मामलोंको उतनी ही अच्छी तरह — बल्कि उससे भी अच्छी तरह — सँभाल सकती है जितनी अच्छी तरह सरकार सँभालती है।

विनिमय-दरके सम्बन्धमें जोड़-तोड़का सिलसिला लॉर्ड कर्जनसे भी पहले शुरू हो गया था और इस नीतिके कारण देशकी आबादीके ८५ प्रतिशत हिस्सेको भारी नुकसान हुआ है। रुपयेका सम्बन्ध पौंडसे जोड़कर उसका मूल्य एक शिलिंग छः पेंस निर्धारित कर दिये जानेका नतीजा यह हुआ है कि भारतीय किसानोंको अपनी उपज इतने कम मूल्यपर बेचनी पड़ती है कि उससे उसका उत्पादन-व्यय भी नहीं निकलता। इस देशमें इंडिया ऑफिसके सलाहकारोंने भी यह स्वीकार किया है कि अगर रुपयेको पौंडसे बाँधकर न रखा जाये तो भारतीय किसानोंको लाभ होगा। आयात की कीमत जरूर बढ़ेगी, लेकिन भारतकी आम जनता आयातपर इतनी कम निर्भर है कि उसका उसपर कोई असर नहीं होगा। कठिनाई यह है कि ब्रिटेनवालोंमें से ज्यादातर लोगोंको भारतीय परिस्थितियोंका ज्ञान नहीं है और वे भारतके सम्बन्धमें ऐसे दृष्टान्तों के आधारपर निर्णय लेते हैं जिन्हें भारतपर लागू करना बिलकुल गलत है।

रुपयेका मूल्य बढ़ाकर इसलिए रखा गया है कि इस देशके लिए भारतको अपना सामान भेजनेकी ज्यादा गुंजाइश रहे। जब भी रुपयेका मूल्य निर्धारित किया गया है, भारतीय विशेषज्ञोंकी सलाहकी उपेक्षा करके किया गया है। इससे लाभ हुआ है, सरकारको। रुपयेका सम्बन्ध पौंडसे जोड़कर इसने अपनेको दिवालिया होनेसे बचाया है। अगर वित्त-व्यवस्थाका नियन्त्रण भारतीयोंके हाथोंमें हो तो वैसी वित्तीय नीतिका पालन किया जायेगा जो निर्यात करनेवालोंके हकमें नहीं, बल्कि किसानोंके हकमें होगी।

भारत निर्यात करनेवाला देश है, और प्रत्येक दस वर्षमें से नौ वर्ष उसका निर्यात आयातसे अधिक आया है, लेकिन जो बचत हुई उसका उपयोग या तो सिविल सेवाके लोगोंको पेंशन देनेके लिए या ऐसी योजनाओंपर लगाई जानेवाली पूंजीके रूपमें किया गया है जिन्हें मैं अनर्गल योजनाएँ मानता हूँ। सक्खर बाँध एक ऐसी ही योजना है।

इसके बाद महात्मा गांधीने कहा कि यद्यपि सरकारने यह स्वीकार किया है कि इस योजनाके सम्बन्धमें खर्च वगैरहका अनुमान लगानेमें उससे भारी गलतियाँ हुई हैं, फिर भी यहाँके अखबारोंने इस बातको बहुत कम स्थान दिया है। एक अखबारके किसी एक कोनेमें मैंने देखा कि इस सिंचाई-योजनापर अनुमानित व्ययसे दूना खर्च हुआ है। सरकारकी इन बड़ी-बड़ी योजनाओंमें मेरा कोई विश्वास नहीं है, क्योंकि

इनसे छोटे किसानोंको कोई लाभ नहीं होता, बल्कि ये पूँजीवादी प्रणालीको ही सुदृढ़ और व्यापकतर बनानेमें सहायक होती हैं।

इसके बाद महात्मा गांधीने कांग्रेसकी वित्त तथा राजस्व-सम्बन्धी मामलोंपर नियन्त्रणकी माँगको दोहराया। उन्होंने कहा कि भारतको किसी कोमल शिशुकी तरह नरम रुईमें लपेटकर न रखा जाये। उसे गलतियाँ करने — भारी गलतियाँ भी — करने का मौका मिलना चाहिए। लेकिन अपनी तमाम कोशिशोंके बावजूद मैं अधिकारियोंको यह बात समझा नहीं सका। उनका दिमाग तो नीली पुस्तिकाओं और अंग्रेजों अर्थात् विजेताओं द्वारा लिखे भारतके इतिहासोंमें वर्णित तथ्योंसे भरा हुआ है। इस देशके चारों ओर भारतके सम्बन्धमें अज्ञानकी ऐसी दीवार खड़ी कर दी गई है कि मैं तो उसे देख-देखकर हैरान रह जाता हूँ।

उन्होंने आगे कहा :

इसलिए यह जरूरी है कि इंग्लैंडमें रहनेवाले आप लोगोंमें से कुछको इस अज्ञान को दूर करनेका काम अपने हाथमें लेना चाहिए और तेजीसे प्रचार-कार्य शुरू कर देना चाहिए। इस देशमें इतने सारे लोग हमारे लिए काम कर रहे हैं, यह जानकारी उन लोगोंकी व्यथाको कुछ कम कर देगी जो वहाँ भारतमें कष्ट सहन कर रहे हैं। आपकी मैत्रीकी स्मृति हमारे लिए हृदयमें सँजोकर रखनेकी चीज होगी और उससे हमारा उत्साह उसी प्रकार बढ़ेगा जिस प्रकार बोअर युद्धके समय दक्षिण आफ्रिकामें कष्ट-सहन करनेवालोंके उत्साहको एमिली हॉब हाउसने बढ़ाया था। मैं आपसे सहायता करने और अगर हम हतोत्साह हो रहे हों तो शायद इस प्रकारका कोई तार भेजनेकी प्रार्थना करता हूँ कि 'फिक्र मत करो, हम अंग्रेज लोग सब-कुछ देख-समझ रहे हैं और आपकी सफलताके लिए शुभकामनाएँ कर रहे हैं।' मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप कोई भी ऐसी प्रार्थना कीजिए जिससे हमें उत्साह और लोगोंकी सहानुभूति मिले। लेकिन आप यह एक शर्तपर ही कीजिए, तभी कीजिए अगर आप मानते हों कि हमारा पक्ष इसके योग्य है। अगर आप यह समझते हों कि हम बहुत बढ़ा-चढ़ाकर माँग कर रहे हैं तो आप हमसे साफ कह दीजिए और हमारी माँगोंको अस्वीकार कर दीजिए। तब अगर हम यह देखेंगे कि हमारे मित्र हमारा साथ छोड़ रहे हैं तो हम अपनी स्थिति पर दोबारा विचार करनेको मजबूर होंगे और यह सोचेंगे कि हम जो-कुछ माँग रहे हैं वह उचित है या नहीं। लेकिन अन्ततः हमारा भरोसा ईश्वरपर ही है। हम अपनी स्वतन्त्रता दानके रूपमें नहीं, बल्कि अपने प्रयत्नों और कष्ट-सहनके फलके रूपमें चाहते हैं। मैं यहाँ बातचीत करने इसलिए आया कि मैंने सोचा, हमने काफी कष्ट सहन कर लिया है। अगर परिषद् विफल हो जाती है तो मैं यह जान जाऊँगा कि इस देशको अपनी माँगका औचित्य समझानेके लिए भारतको अभी और कष्ट सहन करना चाहिए।

इसके बाद श्री हॉरैबिनने महात्मा गांधीसे पूछा कि लीग जो भारतके बारेमें सही ज्ञानका प्रसार करेगी उसके लिए उसे किन-किन स्रोतोंसे जानकारी मिलेगी।

उत्तरमें महात्मा गांधीने कहा कि कांग्रेसकी साधन-शक्ति बराबर लीगकी सेवामें प्रस्तुत रहेगी। उन्होंने आगे कहा :

आप जो भी जानना चाहें, उसके लिए हमसे कहें; हम आपको तत्काल सभी जानकारी दे देंगे। जरूरी हुआ तो हम तार द्वारा भी आपको जानकारी देनेमें हिचकिचाहट नहीं दिखायेंगे। आपको जिस साहित्यकी आवश्यकता होगी वह साहित्य भी मिल जायेगा। अगर आप चाहें तो आपको हम हर हफ्ते समाचारोंका संकलन भिजवानेकी भी व्यवस्था कर सकते हैं। आप हमसे कहें, हम अवश्य भेजेंगे। अगर हमारी दी गई जानकारीको लेकर अधिकारियोंके साथ आपकी कोई झंझट हो जाये तो आप हमसे हमारे दिये गये समाचारोंको सिद्ध करनेके लिए कहें। आप हमें परखकर देखिए। अगर हम गलत हुए तो हम माफी माँग लेंगे या हमारी ओरसे आप ही इंडिया ऑफिससे माफी माँग लीजिएगा। हम ईमानदारीसे काम लेंगे और न कोई बात बढ़ा-चढ़ाकर कहेंगे और न कोई भ्रामक सूचना देंगे, क्योंकि हमारे संघर्षकी सफलता झूठी या अतिरंजित सूचनाओंपर निर्भर नहीं है। कांग्रेसकी नीति अपनी गलती तत्काल स्वीकार कर लेनेकी और इसके सदस्य अगर कोई बात बढ़ा-चढ़ाकर कहें तो उसका पर्दा फाश करनेकी है।

कुमारी एलेन विल्किसनने महात्मा गांधीसे पूछा कि क्या आप यह ठीक समझते हैं कि भारतके राजनीतिक कैदियोंके लिए यहाँ कोई आन्दोलन छेड़ा जाये। उत्तरमें महात्मा गांधीने कहा कि इसके लिए तो पहले पूरी जानकारी प्राप्त कर लेना आवश्यक है, क्योंकि हर मामला अपने गुण-दोषपर ही निर्भर है।

इस समय अधिकारियोंका पूरा ध्यान इस ओर नहीं दिलाया जा सकता, लेकिन बादमें जब परिषद् विफल हो जाये तब ऐसा आन्दोलन शुरू करनेका ठीक अवसर आयेगा। कांग्रेसके कार्यालय सभी जरूरी जानकारी भेजनेको सदा तत्पर रहेंगे, और आपको इस बातका ध्यान रखना चाहिए कि आप लोगोंको जिस सरकारसे बरतना है वह बहुत ही हठी है।

इसके बाद महात्मा गांधीसे यह सवाल पूछा गया कि उनके विचारसे परिषद्के सफल न हो पानेके कारण क्या हैं? उत्तरमें उन्होंने कहा कि मैं मानता हूँ, इसमें भारतीय और ब्रिटिश सरकार दोनों समान रूपसे दोषी हैं। भारतीय साम्प्रदायिक प्रश्नका कोई समाधान नहीं ढूँढ़ पाये और ब्रिटिश सरकारने प्रारम्भिक अवस्थामें ही परिषद्को गलत दिशामें मोड़ दिया। साम्प्रदायिक प्रश्नको सारी समस्याका केन्द्र-बिन्दु बनाकर सरकारने हिन्दुओं, सिखों तथा मुसलमानोंके लिए अपने-अपने स्वार्थ साधनेके लिए इस परिषद्की गाड़ीको अलग-अलग दिशाओंमें खींचनेके रास्ते साफ कर दिये। सच तो यह है कि साम्प्रदायिक प्रश्न अनेक प्रश्नोंमें से केवल एक है और यह परिषद् साम्प्रदायिक समाधान ढूँढ़नेका कोई अनिवार्य साधन नहीं है। जब सरकारने परिषद् बुलाई तो वह जानती थी कि साम्प्रदायिक नेताओंमें कोई सहमति नहीं हो पाई है, और उसने साम्प्रदायिक प्रश्नको तत्काल सबसे पहले पेश करके फूट और मतभेदके लिए

रास्ता तैयार कर दिया और उस फूट तथा मतभेदको स्थायी बनाये रखनेका भी सामान जुटा दिया। हमें यह भी याद रखना चाहिए कि यह परिषद् जहाँ-तहाँसे नामजद कर लिये गये ऐसे सदस्योंकी परिषद् है जो किसीके प्रति उत्तरदायी नहीं हैं, ब्रिटिश सरकारने जिस चीजको नहीं समझा वह यह है कि जहाँतक स्वराज्यका सम्बन्ध है, कांग्रेस ही राष्ट्र है। अगर सरकारने कांग्रेसको भी अन्य पक्षोंमें से केवल एक पक्ष मान लेनेके बजाय इस चीजको समझ लिया होता तो इतना सारा समय बरबाद न होता।

मुझे पूरा विश्वास है कि आपकी सरकारको अन्ततः कांग्रेसके साथ ही सारा मामला तय करना पड़ेगा। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मैं भले ही सर मुहम्मद शफीका प्रतिनिधि न होऊँ, लेकिन मुसलमानोंका प्रतिनिधि होनेका दावा अवश्य करता हूँ। इसी तरह यद्यपि मैं डॉ० अम्बेडकरका प्रतिनिधि नहीं हूँ, लेकिन दलित वर्गोंका अवश्य हूँ और डॉ० दत्तका प्रतिनिधि न होते हुए भी ईसाइयोंका प्रतिनिधित्व जरूर करता हूँ।

ये लोग पृथक् प्रतिनिधित्व नहीं चाहते। मैं यह दावा करता हूँ कि कांग्रेस भारतके ३३ करोड़ लोगोंका प्रतिनिधित्व करती है। सभी वर्गोंके हित सर्वसाधारणके हितोंके अधीन होने चाहिए। सरकार कांग्रेसके इसी प्रातिनिधिक स्वरूपको स्वीकार नहीं करती और यही सबसे बड़ा दोष है।

फिर महात्मा गांधीसे यह पूछा गया कि क्या वे इस बातको जरूरी नहीं मानते कि परिषद्के विफल हो जानेपर उन्हें अपनी स्थिति या तो किसी सार्वजनिक सभामें या कमसे-कम इस देशके लोगोंकी एक मण्डलीके सामने स्पष्ट कर देनी चाहिए? उत्तरमें उन्होंने कहा कि मैं जिस ढंगसे काम कर रहा हूँ उसी ढंगसे क्यों कर रहा हूँ, इसके कारण बतानेको मैं बहुत उत्सुक हूँ, इंग्लैंडके लोगोंकी किसी मण्डलीके सामने अपनी बात कहनेकी मेरी प्रबल इच्छा है, लेकिन चूँकि मैंने आरम्भमें सरकारसे वादा कर दिया है कि समस्याके समाधानके मार्गमें मैं कोई बाधा नहीं डालूँगा, इसलिए अभी मैं सार्वजनिक रूपसे कुछ नहीं कहना चाहता।

इस देशमें भारतके लिए काम करनेवाले संगठनोंकी बहुलताकी चर्चा करते हुए महात्मा गांधीने कहा कि इन संगठनोंको एक साथ मिला देनेके लिए पूरा प्रयत्न करना चाहिए। सारी शक्तिको कामपर केन्द्रित करना चाहिए और उसका उपयोग एक ही जरियेसे होना चाहिए, तथा इस कामकी जिम्मेवारी अंग्रेज लोगोंपर होनी चाहिए जो भारतीयोंकी सलाह ले सकते हैं। आपको मेरी सलाह है कि आप अपनी संस्थाको यथासम्भव अधिकसे-अधिक व्यापक बनायें और जिस क्षेत्रसे भी सम्भव हो उससे सहायता माँगें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, ४-१२-१९३१

२०२. तार: लॉर्ड इर्विनको

लन्दन
१३ नवम्बर, १९३१

परिषद् विफल हो रही है। अगले गुरुवारको[1] प्रस्थान कर रहा हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १६-११-१९३१

२०३. भेंट: 'न्यूज क्रॉनिकल' के प्रतिनिधिको[2]

१३ नवम्बर, १९३१

प्र०: श्री गांधी, मैं यह जानना चाहता हूँ कि प्रधान मन्त्रीसे जो हिन्दू-मुस्लिम विवादके सम्बन्धमें . . . मध्यस्थता करनेका अनुरोध किया जानेवाला है, उसपर क्या आप हस्ताक्षर करेंगे?

उ०: मेरा खयाल है, मैं हस्ताक्षर नहीं कर सकता। श्री मैकडॉनाल्ड निजी हैसियतसे मध्यस्थ हों, इस पर मुझे कोई आपत्ति नहीं है। यहाँ मुझे गलत न समझें।

लेकिन उनसे प्रधान मन्त्रीकी हैसियतसे मध्यस्थता करनेका मतलब ब्रिटिश सरकारसे मध्यस्थता करनेका निवेदन करना होगा और उससे कांग्रेसके प्रादेशपत्रको दृष्टिमें रखते हुए मैं अटपटी स्थितिमें पड़ जाऊँगा।

और उधर सरकार तुरन्त अपने-आपको ऐसे मामलोंपर सौदेबाजी करनेकी स्थितिमें देखने लगेगी जिनके सम्बन्धमें मेरी समझसे सौदेबाजीकी कोई गुंजाइश ही नहीं है। उदाहरणके लिए हम सेना और वित्तके मामलोंको ले सकते हैं।

श्री गांधीने आगे कहा कि मेरे हस्ताक्षर करनेसे इनकार करनेका मतलब यह नहीं है कि श्री मैकडॉनाल्ड मध्यस्थता करें ही नहीं। उन्होंने कहा:

मैं तो खुद ही अल्पसंख्यक समस्याके ऐसे किसी भी समाधानको स्वीकार कर लूँगा जिसे हिन्दू, मुसलमान और सिख स्वीकार कर लें।

लेकिन, मेरे लेखे अल्पसंख्यक समस्याका इन तीन समुदायोंसे बाहर किसीसे कोई सरोकार नहीं है, और अगर विधान सभाओंमें अन्य अल्पसंख्यक समुदायोंके प्रतिनिधित्वके सम्बन्धमें भी मध्यस्थताकी बात सोची गई तो इसे मैं बरदाश्त नहीं कर सकता। मेरे विचारसे, उसका मतलब उत्तरदायी सरकारको निरर्थक बना देना होगा।

१. गांधीजी वास्तवमें ५ दिसम्बर, १९३१ को लन्दनसे रवाना हुए।
२. प्रतिनिधि उक्त पत्रका वैदेशिक सम्पादक था।

मैंने श्री गांधीसे पूछा कि इस आम भावनाको देखते हुए कि अब परिषद्का सर्वथा विफल हो जाना निश्चित है, क्या आपके मनमें कोई आशा शेष है?

उत्तरमें उन्होंने बताया कि यद्यपि इस समय उन्हें ऐसा कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा है जिससे आशा रखनेका कोई आधार मिले, फिर भी वे सर्वथा निराश नहीं हैं। उन्होंने आगे कहा:

लेकिन खुद मैं और दूसरे लोग भी इस अन्तिम घड़ीमें भी परिषद्को विफलता से बचानेके लिए हर उपायसे काम ले रहे हैं और हर तरहका प्रयत्न कर रहे हैं।

अगर हमें ऐसे ही खाली हाथों लौट जाना पड़ा तो मैं समझता हूँ कि भारतमें अनिवार्यतः इसके जो परिणाम निकलेंगे वे बहुत दुःखद होंगे।

प्र० : लेकिन क्या मैं ऐसा नहीं मान सकता कि लन्दनमें नई योजनापर जहाँतक सहमति हुई है, वहाँतक आप उसे कार्यान्वित करनेको तैयार होंगे?

उ० : मैं तो सहर्ष वैसा करना चाहूँगा, लेकिन तीनों समुदायोंके सहयोगके बिना कुछ नहीं हो सकता। जबतक ऐसे सहयोगका निश्चय नहीं हो जाता तबतक प्रान्तीय विधान सभाओंका अस्तित्व कायम होना असम्भव है।

जबतक केन्द्रमें स्वायत्त शासनका वैधानिक आश्वासन नहीं दिया जाता तबतक प्रान्तीय स्वायत्त शासन असम्भव है। हमें इतना समझ सकनेके पर्याप्त अनुभव प्राप्त हो चुके हैं कि केन्द्रमें पूर्ण उत्तरदायी शासनके बिना प्रान्तोंमें स्वायत्त शासनकी बात चल ही नहीं सकती।

जनता अबतक जिस बातको समझ नहीं पाई है वह यह है कि केन्द्र तथा प्रान्तोंके बीचका सम्बन्ध इतना महत्त्वपूर्ण है कि केन्द्रमें स्वायत्त शासनके अभावमें प्रान्त सर्वथा असहाय होंगे।

प्र० : और प्रस्तावित संविधान सभा, केन्द्रीय सम्मेलन (सेंट्रल कन्वेंशन)के बारेमें आपका क्या कहना है? सुना है कि उसकी चर्चा हुई है। क्या इसका मतलब यह है कि इसपर सरकार तथा भारतीय नेताओंके बीच चर्चा हुई है?

उ० : चर्चा मेरे साथ हुई है। लेकिन, मुझे लगता है कि अब यह चर्चा समाप्त ही हो चुकी है।

जबतक केन्द्रमें उसी अनिवार्य दायित्वके सम्बन्धमें वैधानिक आश्वासन नहीं दिया जाता तबतक मैं ऐसी कोई सभा बुलाये जानेपर सहमत नहीं हो सकता।

मैंने केन्द्रीय स्वायत्त शासनसे अलग चीजके रूपमें प्रान्तीय स्वायत्त शासनपर चर्चा करनेका साहस केवल यह दिखानेके लिए किया है कि जबतक केन्द्रमें स्वायत्त शासन दिये जानेका आश्वासन न हो तबतक स्वायत्त शासन प्राप्त प्रान्तोंकी रचना करना असम्भव है। लेकिन फिर भी मेरे फ्लीट स्ट्रीट स्थित कुछ मित्रोंने ऐसी खबर फैलाई है कि मैंने पहली किस्तके तौरपर प्रान्तीय स्वायत्त शासनकी योजना स्वीकार कर ली है।

ऐसी कोई बात तो मैंने कभी सोची भी नहीं है। हाँ, मैंने यह आश्वासन दिये जानेकी माँग अवश्य की है कि केन्द्रमें उत्तरदायी सरकारकी स्थापना प्रान्तीय सत्ताकी व्यवस्था कर देनेके 'लगभग तुरन्त बाद' हो जायेगी।

'लगभग तुरन्त बाद' मैंने इसलिए कहा है कि मैंने ऐसा माना है कि मेरे सामने जो कुछ-एक कठिनाइयाँ रखी गई हैं, उनको देखते हुए एक छोटा-सा अन्तराल सम्भव है।

मेरे प्रस्तावके अनुसार प्रान्तीय स्वायत्त शासन तथा केन्द्रमें पूर्ण उत्तरदायी शासनकी व्यवस्था एक ही कानूनमें की जायेगी और वही कानून उस तन्त्रकी भी रचना करेगा जो संघीय तथा केन्द्रीय ढाँचेको खड़ा करेगा।

[अंग्रेजीसे]

न्यूज क्रॉनिकल, १४-११-१९३१

२०४. भाषण: अल्पसंख्यक-समस्या समितिकी बैठकमें

लन्दन
१३ नवम्बर, १९३१

प्रधान मन्त्री महोदय तथा प्रतिनिधि बन्धुओ,

मैं अत्यधिक संकोच और लज्जाके साथ अल्पसंख्यकोंके प्रश्नकी चर्चामें भाग ले रहा हूँ। कुछ अल्पसंख्यक समुदायोंकी ओरसे प्रतिनिधियोंको भेजे गये और आज प्रातः ही मिले ज्ञापनको[1] मैं यथेष्ट ध्यान और एकाग्रतासे नहीं पढ़ सका हूँ।

इससे पहले कि उक्त ज्ञापनके सम्बन्धमें मैं कुछ शब्द कहूँ, मैं अत्यन्त आदर और सम्मानके साथ, आपकी अनुमतिसे, इस समितिके सामने पेश किये गये आपके इस विचारसे मतभेद प्रकट करना चाहूँगा कि साम्प्रदायिक प्रश्नको हल करनेकी असमर्थताके कारण संविधान-रचनाके कार्यकी प्रगति रुक रही है, और ऐसा कोई संविधान बनाये जानेसे पहले इस प्रश्नका हल हो जाना अनिवार्य है। इस समितिकी बैठकके आरम्भमें ही मैंने कह दिया था कि मैं इस विचारसे सहमत नहीं हूँ। उसके बाद अब तक मुझे जो अनुभव हुआ है, उससे मेरा वह विचार और दृढ़ हो गया

१. ज्ञापन "मुसलमानों, दलित वर्गों, ऐंग्लो-इंडियनों, यूरोपीयनों और भारतीय ईसाइयोंके काफी बड़े भागकी ओरसे" पेश किया गया था और उसके द्वारा यह माँग की गई थी कि सभी विधान-मण्डलोंमें "इन सम्प्रदायोंका प्रतिनिधित्व पृथक् निर्वाचक-मण्डलोंसे हो . . . शर्त यह रहेगी कि दस वर्ष बीत जानेपर पंजाब और बंगालके मुसलमानों और किसी अन्य प्रान्तके किसी भी अल्पसंख्यक समुदायको संयुक्त निर्वाचक-मण्डल स्वीकार करनेकी स्वतन्त्रता होगी। . . . दलित वर्गोंके बारेमें निर्वाचक-मण्डल २० सालसे पहले संयुक्त निर्वाचक-मण्डलोंमें नहीं बदले जायेंगे। . . ." मुसलमानों, दलित वर्गों, ऐंग्लो-इंडियनों और यूरोपियनोंकी ओरसे विशेष माँगें रखी गई थीं। इस दस्तावेजपर आगा खाँ, डाक्टर अम्बेडकर, रावबहादुर पन्निर्सेल्वम, सर हेनरी गिडनी और सर ह्यूबर्ट कारके हस्ताक्षर थे।

है, और आप मुझे यह कहनेके लिए क्षमा करें कि गत वर्ष इस कठिनाईपर आपने जो जोर दिया और इस वर्ष फिर उसे दोहराया, उसीका यह परिणाम है कि विभिन्न समुदायोंको अपने पूरे बलके साथ अपने-अपने दावे रखनेका प्रोत्साहन मिला।

यदि उन्होंने इसके विपरीत कुछ किया होता तो वह मानव-स्वभावके विरुद्ध होता। सबने यही सोचा कि अपने दावे चाहे जैसे हों, उनपर पूरा-पूरा आग्रह करनेका यही समय है, और मैं इस बातको फिर दोहरानेका साहस करता हूँ कि निःसन्देह इस प्रश्नपर दिये गये जोरके ही कारण इसका उद्देश्य विफल हो गया है। यह प्रोत्साहन मिलनेके कारण ही हम किसी समझौतेपर नहीं पहुँच सके। इसलिए सर चिमनलाल सीतलवाडके इस विचारसे मैं पूर्णतः सहमत हूँ कि यह प्रश्न आधारभूत नहीं है, मध्यविन्दु नहीं है, मध्यबिन्दु तो संविधान-रचना है।

मुझे पूरा विश्वास है कि आपने हम लोगोंको यहाँ ६,००० मील दूरसे अपना घर और कामकाज छुड़ाकर साम्प्रदायिक प्रश्न हल करनेके लिए नहीं बुलाया था। आपने हमें यहाँ संविधान-रचनाकी क्रियामें भाग लेनेके लिए एकत्र किया था, बल्कि आपने सोच-विचारकर यह घोषित किया था कि हम लोग इसीलिए निमन्त्रित किये जा रहे हैं और यह कि आपके इस अतिथिपरायण देशको छोड़नेसे पहले हमें यह निश्चय हो चुकेगा कि भारतकी स्वतन्त्रताके लिए हमने एक सम्मान और प्रतिष्ठायुक्त ढाँचा तैयार कर लिया और अब उसपर केवल कॉमंस सभा और लॉर्ड सभाकी सम्मति मिलना ही शेष रह गया है।

किन्तु इस समय हमारे सामने एक बिलकुल दूसरी ही स्थिति है, वह यह कि क्योंकि हम किसी साम्प्रदायिक समझौतेपर नहीं पहुँच सके हैं, इसलिए संविधान-रचनाका काम नहीं होगा और अन्तिम उपाय और आखिरी रंगआमेजीकी तरह आप संविधान और उससे उद्भावित विषयोंपर सम्राट्-सरकारकी नीतिकी घोषणा कर देंगे। मैं यह महसूस किये बिना नहीं रह सकता कि जो परिषद् इतने हो-हल्लेके साथ शुरू की गई थी और जिसने बहुत-से लोगोंके मन और हृदयमें इतनी आशा जगा दी थी, उसका यह दुःखद अन्त होगा।

इस दस्तावेजपर आते हुए मैं सर ह्यूबर्ट कार द्वारा दिये गये धन्यवादको स्वीकार करता हूँ। उनका यह कहना ठीक है कि इस बोझको अपने कंधोंपर उठाते समय मैंने जो शब्द कहे थे वे यदि न कहे होते और किसी प्रकारका समझौता करनेमें मैं सर्वथा असफल न हुआ होता, तो वे अन्य अल्पसंख्य समुदायोंके साथ मिलकर इस समितिके विचारार्थ और अन्तमें सम्राट्-सरकारकी स्वीकृतिके लिए जो अत्यन्त सराहनीय योजना पेश कर सके हैं, वह न कर सकते।

सर ह्यूबर्ट कार तथा उनके साथियोंको इससे स्पष्टतः जो सन्तोष हुआ है, वह मैं उनसे नहीं छीनूँगा। किन्तु, मेरे विचारमें, उन्होंने जो-कुछ किया है, वह ऐसा ही है जैसा कि मुर्देके पास बैठना और उसकी चीर-फाड़का प्रशंसनीय कार्य करना।

भारतके प्रमुख राजनैतिक संगठनके प्रतिनिधिकी हैसियतसे मैं निःसंकोच सम्राट्-सरकारसे और उन मित्रोंसे जो अपने नामके सामने लिखे अल्पसंख्यक समुदायोंके प्रतिनिधि बनना चाहते हैं या अपनेको उनका प्रतिनिधि मानते हैं, और निःसन्देह सारे

संसारसे यह कह देना चाहता हूँ कि यह योजना उत्तरदायी शासनकी प्राप्तिके लिए नहीं, बल्कि निश्चय ही नौकरशाहीके साथ सत्तामें हिस्सा बँटानेके लिए बनाई गई है।

यदि यही इरादा हो — और सारी दस्तावेजमें यही इरादा समाया हुआ है — तो मैं उनकी सफलता चाहता हूँ और कांग्रेस उससे साफ अलग हो जाती है। कांग्रेस किसी ऐसे सुझावपर, जिसके अधीन स्वतन्त्रता और स्वराज्यका सदाबहार वृक्ष कभी उग न सकता हो, अपनी सहमति प्रकट करनेकी अपेक्षा चाहे जितने वर्ष जंगलमें भटकना स्वीकार करेगी।

मुझे आश्चर्य है कि सर ह्यूबर्ट कार हमें बताते हैं कि उन्होंने जो योजना तैयार की है, वह केवल कुछ ही समयके लिए है, कि उससे राष्ट्रीयताके हमारे ध्येयको कुछ हानि नहीं होगी, प्रत्युत दस वर्ष बाद हम सब एक-दूसरेसे मिलते और एक-दूसरेको गले लगाते दिखाई देंगे। मेरा राजनैतिक अनुभव मुझे इससे सर्वथा विपरीत बात सिखाता है। यदि उत्तरदायी शासनको, जब कभी भी वह आये, शुभ मुहूर्तमें आरम्भ करना हो तो, उसकी वैसी चीर-फाड़ नहीं होनी चाहिए जैसी कि इस योजनाके द्वारा की गई है। यह एक ऐसा तनाव है, जिसे कोई सरकार सह नहीं सकती।

और बात सर ह्यूबर्टके दावेतक ही सीमित नहीं है। प्रधान-मन्त्री महोदय, आपका कहना है कि यह योजना ११॥ करोड़से अधिक लोगों अथवा भारतकी आबादीके लगभग ४६ प्रतिशत भागको मान्य होगी। मुझे आश्चर्य है कि आप यह बात कैसे कह गये और सो भी इस भावसे मानों यह एक निर्विवाद तथ्य हो। यह अंक गलत है, इसका आपको जीता-जागता प्रमाण मिल चुका है। स्त्रियोंकी ओरसे विशेष प्रतिनिधित्वकी माँगका सर्वथा खण्डन आप सुन चुके हैं, और स्त्रियाँ भारतकी आबादीका आधा हिस्सा हैं। इसलिए इस ४६ प्रतिशतमें कुछ कमी हो जाती है। किन्तु केवल इतना ही नहीं है। कांग्रेस नगण्य संस्था हो सकती है, किन्तु मैंने निःसंकोच यह दावा किया है और बिना किसी शर्मके उसे फिर दोहराता हूँ कि कांग्रेस केवल ब्रिटिश भारतकी नहीं, प्रत्युत सम्पूर्ण भारतकी आबादीके ८५ अथवा ९५ प्रतिशत भागकी प्रतिनिधि होनेका दावा करती है।

चाहे जितने प्रश्न उठानेपर भी मैं अपने पूरे बलके साथ इस दावेको दोहराता हूँ कि कांग्रेस अपने सेवाके अधिकारसे भारतके कृषक कहे जानेवाले वर्गकी प्रतिनिधि है। यदि सरकार यह चुनौती दे कि भारतमें लोकमतकी गिनती कर ली जाये, तो मैं उस चुनौतीको स्वीकार कर लूँगा, और तब आप तुरन्त ही देख लेंगे कि कांग्रेस उनकी प्रतिनिधि है या नहीं। लेकिन मैं एक कदम और आगे जाता हूँ। इस समय यदि आप कांग्रेसके रजिस्टरकी जाँच करें, यदि आप भारतकी जेलोंके रजिस्टरोंकी जाँच करें, तो आपको मालूम होगा कि कांग्रेस मुसलमानोंकी बहुत अधिक संख्याकी प्रतिनिधि रही है और है। गत वर्ष कांग्रेसके झण्डेके नीचे हजारों मुसलमान जेल गये थे। आज भी कांग्रेसके रजिस्टरपर कई हजार मुसलमान और इसी तरह कई हजार अछूत और कई हजार भारतीय ईसाई हैं। मैं नहीं जानता कि कोई भी ऐसा समुदाय है जिसके सदस्य कांग्रेसके रजिस्टर पर न हों। नवाब साहब छतारीके प्रति पूर्ण

सम्मान प्रकट करते हुए, मैं यह कहना चाहता हूँ कि जमींदार, मिल-मालिक और लखपति तक उसके सदस्य हैं। मैं स्वीकार करता हूँ कि वे धीरे-धीरे और सावधानीसे कांग्रेसकी ओर आ रहे हैं, किन्तु कांग्रेस उनकी भी सेवा करनेका प्रयत्न करती है। निःसन्देह कांग्रेस मजदूरोंकी भी प्रतिनिधि है ही। इसलिए इस दावेको स्वीकार करनेमें कि इस ज्ञापनमें रखे गये सुझाव साढ़े ग्यारह करोड़से अधिक लोगोंको मान्य हैं, बहुत अधिक संयम और सावधानी बरती जानी चाहिए।

एक शब्द और कहकर मैं इसे समाप्त करूँगा। मुझे आशा है कि साम्प्रदायिक समस्याके सम्बन्धमें जो योजना[1] कांग्रेसने तैयार की है, वह आपके सामने आ चुकी है और सदस्योंमें घुमा दी गई है। मैं साहसपूर्वक यह कह सकता हूँ कि जितनी भी योजनाएँ मैंने देखी हैं, उनमें यह सबसे अधिक व्यावहारिक योजना है। किन्तु मैं इसमें भूल भी कर सकता हूँ। मैं स्वीकार करता हूँ कि विभिन्न समुदायोंके जो प्रतिनिधि इस मेजके सामने बैठे हैं उन्हें यह योजना पसन्द नहीं है। किन्तु भारतमें इन्हीं वर्गोंके प्रतिनिधि इसे पसन्द कर चुके हैं। यह किसी एक दिमागकी उपज नहीं, प्रत्युत एक समितिकी कृति है जिसमें कई महत्त्वपूर्ण दलोंके प्रतिनिधि थे।

इसलिए कांग्रेसकी ओरसे आपके पास यह योजना है; किन्तु कांग्रेसने यह भी सुझाया है कि इस प्रश्नके निर्णयके लिए एक निष्पक्ष पंचायत होनी चाहिए। पंचायतके द्वारा सारे संसारमें लोगोंने अपने मतभेद मिटाये हैं और कांग्रेस भी पंचायती अदालतके किसी भी निर्णयको स्वीकार करनेके लिए हमेशा तैयार है। मैंने स्वयं यह सुझानेका साहस किया है कि सरकार एक न्यायाधिकरण नियुक्त करे जो इस मामलेकी जाँच कर अपना निर्णय दे। किन्तु हममें से किसीको यदि इनमें से कोई भी बात स्वीकार न हो और यदि संविधान-रचना इसी शर्तपर होनी हो कि पहले इस प्रश्नका निपटारा हो जाना चाहिए तो मैं कहूँगा कि इस बातको स्वीकार करनेकी अपेक्षा इस तथाकथित उत्तरदायी सरकारसे दूर रहना ही हमारे लिए कहीं अच्छा है।

मैंने पहले जो कहा है, वही फिर दुहराता हूँ कि कांग्रेस किसी भी ऐसे समाधानको, जो हिन्दू, मुसलमान और सिखोंको मान्य हो, स्वीकार करनेके लिए सदैव तैयार रहेगी। किन्तु अन्य अल्पसंख्यकोंके लिए विशेष रक्षित स्थान अथवा विशेष निर्वाचक-मंडलोंका वह कभी समर्थन नहीं करेगी। मूल अधिकारों और नागरिक स्वतन्त्रता-सम्बन्धी विशेष धाराओं अथवा संरक्षणोंका कांग्रेस सदैव अनुमोदन करेगी। निर्वाचकोंकी सूचीमें शामिल होने और समान निर्वाचक-मण्डलसे मत माँगनेका हर व्यक्तिको अधिकार होगा।

मेरी विनम्र सम्मतिमें सर ह्यूबर्ट कारका सुझाव उत्तरदायी सरकार एवं राष्ट्रीयताके मूलपर ही आघात करनेवाला है। वे कहते हैं कि यदि आप विधानमण्डलमें किसी जीवन्त यूरोपीयको लाना चाहते हैं तो वह यूरोपीयनों द्वारा ही चुना होना चाहिए। यदि भारतको इस प्रकार अलग-अलग कटे, अनेक विशिष्ट वर्गों

१. देखिए पृष्ठ १२८-३३।

द्वारा चुने गये प्रतिनिधि मिलने हैं, तो भारतकी क्या दशा होगी, यह भगवान् ही जाने। वह और केवल वही यूरोपीय सम्पूर्ण भारतकी सेवा कर सकेगा जो केवल यूरोपीयनों द्वारा नहीं, प्रत्युत समान निर्वाचक-मण्डल द्वारा निर्वाचित होगा। स्वयं इस विचारसे ही प्रकट होता है कि उत्तरदायी सरकारको राष्ट्रीय भावनाके — आबादीके ८५ प्रतिशत भाग, अर्थात् किसानोंके — खिलाफ रहनेवाले इन तत्त्वोंके विरुद्ध सदैव लड़ना होगा। मैं तो इस चीजकी कल्पना भी नहीं कर सकता। यदि हमें उत्तरदायी सरकारकी स्थापना करनी है और यदि हमें वास्तविक स्वतंत्रता प्राप्त करनी है, तो मैं यह कहनेका साहस करता हूँ कि इन तथाकथित विशिष्ट वर्गोंके प्रत्येक व्यक्तिका यह गौरवपूर्ण अधिकार और कर्त्तव्य होना चाहिए कि वह इस खुले द्वारसे समान निर्वाचक-मण्डलके समर्थनसे और उसके द्वारा चुने जाकर ही, विधानमण्डलोंमें प्रवेश करे। आप जानते हैं कि कांग्रेस बालिग मताधिकारके लिए वचनबद्ध है और बालिग मताधिकारमें सबके लिए निर्वाचक-सूचीमें शामिल होनेका मार्ग खुला रहेगा। इससे अधिककी कोई भी माँग नहीं कर सकता।

अब दो शब्द तथाकथित अछूतोंके बारेमें।

अन्य अल्पसंख्यकोंके दावोंको मैं समझ सकता हूँ, किन्तु अछूतोंकी ओरसे पेश किया गया दावा मेरे लिए 'सबसे अधिक क्रूर' है। इसका अर्थ यह हुआ कि अस्पृश्यता का कलंक सदैवके लिए कायम रहनेवाला है। अछूतोंके वास्तविक हितोंको मैं भारतकी स्वतन्त्रताके लिए भी नहीं बेचूँगा। मैं स्वयं व्यक्तिगत रूपसे अछूतोंके विशाल समुदायका प्रतिनिधि होनेका दावा करता हूँ। यहाँ मैं केवल कांग्रेसकी ओरसे नहीं प्रत्युत स्वयं अपनी ओरसे भी बोल रहा हूँ, और मैं दावेके साथ कहता हूँ कि यदि अछूतोंका मत लिया जाये तो मुझे उनके मत मिलेंगे और मेरा स्थान सबसे ऊपर होगा। मैं भारतके एक छोरसे दूसरे छोर तकका दौरा करके अछूतोंसे कहूँगा कि अस्पृश्यताको, जो उनका नहीं प्रत्युत रूढ़िवादी हिन्दुओंका कलंक है, दूर करनेका उपाय पृथक् निर्वाचक-मंडल और पृथक् रक्षित स्थान नहीं है।

इस समिति और समस्त संसारको यह जान लेना चाहिए कि आज हिन्दू समाज-सुधारकोंका एक ऐसा दल मौजूद है जो अस्पृश्यताके इस कलंकको धोनेके लिए प्रतिज्ञाबद्ध है। हम नहीं चाहते कि हमारे रजिस्टरों और हमारी जनगणनामें अछूत नामकी एक पृथक् जाति लिखी जाये। सिख, मुसलमान और यूरोपीय सदाके लिए सिख, मुसलमान और यूरोपीय रह सकते हैं। किन्तु क्या अछूत भी सदैवके लिए अछूत रहेंगे? अस्पृश्यता जीवित रहे, इसकी अपेक्षा मैं यह अधिक अच्छा समझूँगा कि हिन्दू धर्म डूब जाये। इसलिए, डॉ० अम्बेडकरके प्रति, अछूतोंको ऊँचा उठा देखनेकी उनकी इच्छा तथा उनकी योग्यताके प्रति अपना पूरा सम्मान प्रकट करते हुए भी, मैं अत्यन्त नम्रतापूर्वक कहूँगा कि उन्हे जो भारी अन्याय भोगना पड़ा और शायद जो कटु अनुभव हुए हैं उनके कारण उनका विवेक कलुषित हो गया है। यह बात मुझे दुःखके साथ कहनी पड़ी है, किन्तु यदि मैं न कहूँ तो मैं अछूतोंके हितके प्रति, जो मेरे लिए प्राणोंके समान हैं, सच्चा न रहूँगा। सारे संसारके राज्यके बदले

भी मैं उनके अधिकारोंको नहीं बेचूँगा। अपने उत्तरदायित्वका पूरा ध्यान रखते हुए, मैं यह कहता हूँ कि डॉ० अम्बेडकरका सारे भारतके अछूतोंकी ओरसे बोलनेका दावा उचित नहीं है। इससे हिन्दू धर्ममें जो विभाजन होगा वह मेरे लिए किसी भी तरह सन्तोषकी चीज नहीं हो सकती। अछूत यदि मुसलमान अथवा ईसाई हो जायें तो मुझे उसकी परवाह नहीं। वह मैं सह लूँगा किन्तु गाँवोंमें यदि हिन्दुओंके दो भाग हो जायें, तो हिन्दू समाजकी जो दशा होगी वह मुझसे सही न जा सकेगी। जो लोग अछूतोंके राजनैतिक अधिकारोंकी बात करते हैं, वे भारतको नहीं पहचानते हैं और हिन्दू समाज आज किस प्रकार बना हुआ है, यह नहीं जानते हैं। इसलिए मैं अपनी पूरी शक्तिसे यह कहूँगा कि इस चीजका विरोध करनेवाला यदि मैं अकेला रहूँ, तो भी मैं अपने प्राणोंकी बाजी लगाकर इसका विरोध करूँगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबल कांफरेंस (सेकेंड सेशन) : प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐंड माइनॉरिटीज़ कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ ५४३-४४

२०५. भाषण : वेस्टमिंस्टर स्कूलमें[1]

लन्दन
१३ नवम्बर, १९३१

फिलहाल सम्मेलन असफल हो गया लगता है और अभेद्य अंधकारमें आशाकी कोई किरण दिखाई नहीं देती। पर आपके कुछ महापुरुष विपत्तिको टालनेकी भरसक कोशिश कर रहे हैं। यदि वे असफल रहते हैं और सम्मेलन अन्तमें विफल हो जाता है, जैसा कि मुझे डर है कि वह होगा, तो लाखों लोग अग्नि-परीक्षामें से गुजरनेको तैयार हो जायेंगे, और भयानकसे-भयानक दमनके आगे भी हिम्मत नहीं हारेंगे। हमें यह 'वचन' दिया गया है कि इस बारका दमन पिछले सालके दमनसे दस गुना भयानक होगा। पर मैं ईश्वरसे यही प्रार्थना करूँगा कि मानव-जाति पाशविक शक्तिके इस प्रदर्शनसे बची रहे।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २६-११-१९३१

१. महादेव देसाईके "लन्दनका पत्र" से उद्धृत। इस भाषणकी कोई अन्य रिपोर्ट उपलब्ध नहीं है।

२०६. भेंट : समाचार-पत्रोंको

लन्दन
१४ नवम्बर, १९३१

प्रश्न : प्रधान मन्त्रीकी इस प्रार्थनाके प्रति कि सभी पक्षोंको उनकी मध्यस्थतापर सहमत हो जाना चाहिए, आपका रुख क्या है?

उत्तर : प्रधान मन्त्रीको मध्यस्थता करनेके लिए अपने हस्ताक्षरोंसे प्रार्थना-पत्र भेजा जाये, मैं इससे सहमत नहीं हो सकता। परन्तु मैं यह चीज स्पष्ट कर दूँ कि मुझे श्री मैक्डॉनाल्डके प्रति व्यक्तिगत रूपसे या मध्यस्थताके सिद्धान्तपर कोई आपत्ति नहीं है। इसके विपरीत, मैंने सदा यही कहा है कि सम्बन्धित पक्षोंको मध्यस्थतापर सहमत हो जाना चाहिए। परन्तु मैं प्रधान मन्त्रीसे मध्यस्थताके लिए प्रार्थना करनेमें शामिल नहीं हो सकता, क्योंकि प्रधान मन्त्री, श्री मैक्डॉनाल्डके रूपमें अपनी निजी हैसियतसे नहीं, बल्कि प्रधान मन्त्रीकी हैसियतसे सुझाव देते हैं, जो स्थिति उन्हें मन्त्रि-मण्डलसे प्राप्त है। इसलिए वे सरकारकी ओरसे बोलते हैं, और मैं इस चीजसे सहमत नहीं हो सकता कि सरकार इस प्रश्नका निर्णय करे। आत्मसम्मानकी उच्च भावना रखनेके कारण, मैं सरकारका एहसान लेनेको तैयार नहीं हूँ। कांग्रेसकी राजनीतिक माँगोंके बारेमें मैं समझौता नहीं कर सकता। मैं केवल ऐसे हेर-फेर ही स्वीकार कर सकता हूँ जो साफ-साफ भारतके हितमें हों। इसलिए सरकारका एहसान तो मैं नहीं ले सकता।

प्र० : इसका अर्थ क्या यह है कि प्रधान मन्त्रीकी प्रार्थनाकी कोई अनुरूप प्रतिक्रिया नहीं हो सकती?

उ० : नहीं, हो सकती है। वस्तुतः मित्रगण प्रधान मन्त्रीको एक संयुक्त पत्र लिखनेका विचार कर रहे हैं, जिसमें मुझे शामिल नहीं किया जायेगा। प्रधान मन्त्रीकी मध्यस्थताके लिए मेरी सहमति, वस्तुतः बिलकुल अनावश्यक है, क्योंकि मैं किसी समुदायका नहीं, कांग्रेसका प्रतिनिधित्व करता हूँ; और इसलिए भी कि, कांग्रेस-प्रस्तावकी शर्तोंके अनुसार, मैं किसी भी ऐसे समझौतेको स्वीकार करनेको बाध्य हूँ जो हिन्दुओं, सिखों और मुसलमानोंको मान्य हो। इसलिए यदि प्रधान मन्त्री मैक्डॉनाल्ड मध्यस्थता करते हैं और सिख, हिन्दू और मुसलमान उसे मान लेते हैं तो मैं भी उसे माननेको बाध्य हूँ। एक और तरीका भी है। सभी पक्ष मध्यस्थताको स्वीकार करनेके एक पत्रपर हस्ताक्षर कर सकते हैं, जिसमें वे श्री मैक्डॉनाल्डको मध्यस्थके रूपमें मनोनीत कर सकते हैं; लेकिन मैं यह फिर दोहराता हूँ कि इस तरहकी मध्यस्थता हिन्दुओं, सिखों और मुसलमानोंके बारेमें ही होनी चाहिए। यदि कोई पंच-फैसला अन्य समुदायोंके बारेमें होता है तो मैं उसके प्रति सहनशीलताका रुख अपना नहीं

सकता, क्योंकि मैं भारतकी चीर-फाड़ करने और राष्ट्रके विधान-मण्डलको साम्प्रदायिक अखाड़ेमें परिवर्त्तित करनेके हर प्रयासका विरोध करनेको प्रतिबद्ध हूँ।

प्र० : लेकिन आपने संघीय समितिमें बोलते हुए यह वादा किया था कि छोटे अल्पसंख्यक समुदायोंके प्रतिनिधि यदि खुले दरवाजेसे चुने न जा सकें तो परिपाटी (कनवेंशन) या विनियुक्ति (को-ऑप्शन) द्वारा उन्हें समुचित प्रतिनिधित्व देनेकी व्यवस्था की जायेगी ?

उ० : वह प्रस्ताव मैंने वापस नहीं लिया है। वह अपनी जगह कायम है। छोटे अल्पसंख्यक समुदायोंकी ओरसे रखी गई इस माँगको मैं न्यायोचित मानता हूँ कि यदि वे खुले दरवाजेसे नहीं चुने जाते हैं तो वह दोष अवश्य दूर किया जाना चाहिए। मैं परिपाटी या विनियुक्ति द्वारा उसकी व्यवस्था करनेको तैयार हूँ, परन्तु मैं पथक् निर्वाचक-मंडलों या विशेष आरक्षणके लिए सहमत नहीं हूँगा।

प्र० : क्या ऐसी सम्भावना है कि अन्य प्रतिनिधि प्रधान मन्त्रीसे प्रस्ताव करें ?

उ० : मुझे मालूम नहीं। प्रतिनिधियोंने इस प्रश्नपर विचार किया था, पर वे किसी निर्णयपर नहीं पहुँच सके।

प्र० : अभी या निकट-भविष्यमें क्या साम्प्रदायिक समझौतेकी कोई सम्भावना है ?

उ० : मैं यह कह सकता हूँ कि उसके लिए कोई भी कोशिश उठा नहीं रखी जायेगी। पर मुझे कोई सम्भावना दिखाई नहीं देती।

प्र० : क्या आप भारत लौटकर भी साम्प्रदायिक गतिरोधको दूर करनेकी अपनी कोशिशें जारी रखेंगे ?

उ० : अवश्य। मुझे विश्वास है कि भारतमें हम किसी समझौतेपर पहुँच जायेंगे, यद्यपि, अभी मेरे पास कोई ठोस योजना नहीं है।

प्र० : प्रान्तीय स्वायत्त शासन दाखिल करने और प्रान्तीय विधानमण्डलों द्वारा संविधान-सभाके सदस्योंके चुनावकी व्यवस्था करानेकी यह योजना किसकी है ?

उ० : यह कहना सही है कि सरकारी क्षेत्रोंमें मेरे साथ और अन्य प्रतिनिधियोंके साथ भी इस योजनापर विचार-विमर्श हुआ था। यह योजना सरकारी है या नहीं, मैं कह नहीं सकता। पर यह किसी प्रतिनिधिकी ओरसे नहीं रखी गई है।

प्र० : क्या यह सच है कि आप इस योजनाको थोड़े परिवर्तनोंके साथ स्वीकार कर सकते हैं ?

उ० : नहीं, मैं पहली किस्तके रूपमें प्रान्तीय स्वशासनकी इस योजनाके बिलकुल विरुद्ध हूँ। औरोंमें और मुझमें फर्क सिर्फ यह है कि उन्होंने इस योजनापर विचार-विमर्श करनेसे इनकार कर दिया, जबकि मैंने इस योजनापर विचार-विमर्श करनेकी हिम्मत की।

प्र० : आपकी योजनाकी क्या शर्तें हैं ?

उ० : पहली यह कि प्रान्तीय स्वशासनको मूर्त रूप देनेवाला अधिनियम ही केन्द्रमें दायित्वकी बातको भी मूर्त रूप दे। दूसरी, उसे एक अवधि भी निश्चित

कर देनी चाहिए जिसके अन्दर संघीय संविधान, केन्द्रके दायित्व-सहित, अमलमें आ जाये। मैंने छः मासका सुझाव दिया था। तीसरी, प्रान्तोंको लगभग प्रभुसत्ता प्राप्त होनी चाहिए।

प्र० : संविधान-सभाके पास फिर निर्णयके लिए क्या बचता है?

उ० : संविधान-सभामें विचारके लिए यह विषय रखा जा सकता है कि विधानमण्डल एक सदनवाला हो या दो सदनवाला और संघीय विधानमण्डलकी सदस्य-संख्या कितनी होनी चाहिए। परन्तु मैंने इस विषयमें किसीके भी मनमें कोई सन्देह नहीं रहने दिया था कि केन्द्रके दायित्वके सम्बन्धमें, विशेषकर वित्त, सेना और विदेशी मामलोंके सम्बन्धमें यहाँ और अभी फैसला हो जाना चाहिए।

प्र० : क्या आपने समझौतेकी सभी आशाएँ छोड़ दी हैं?

उ० : नहीं, समझौतेके सभी रास्ते खोजनेमें मैं कोई कोशिश उठा नहीं रख रहा हूँ। बिलकुल आखिरमें ही यदि कोई समझौता हो जाये तो मुझे जरा भी आश्चर्य नहीं होगा।

महात्मा गांधीसे यह पूछा गया कि यदि परिषद् किसी समझौतेपर नहीं पहुँची तो भारतपर उसका क्या असर पड़ेगा।

महात्माजी ने जवाब दिया कि यदि परिषद् यहाँ और अभी किसी समझौतेपर नहीं पहुँची तो उसका अनिवार्य परिणाम सविनय अवज्ञाका, उसके सभी परिणामों-सहित, तुरन्त फिर शुरू हो जाना होगा। क्योंकि, परिषद्की असफलताका अर्थ यह है कि जो भारतीय सुधारक केन्द्रके दायित्वसे प्रतिबद्ध हैं उन्हें अनिश्चित कालतक सरकारसे अपनी माँगोंकी पूर्तिकी आशा नहीं करनी चाहिए। परिषद् असफल रही, यह बात एक बार साफ होते ही सविनय अवज्ञा तुरन्त शुरू हो जानी है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १६-११-१९३१ और १८-११-१९३१

२०७. पत्र : प्रधान मन्त्रीको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
१४ नवम्बर, १९३१

प्रिय प्रधान मन्त्रीजी,

मुझे मालूम है कि प्रतिनिधियोंके हस्ताक्षरोंसे आपको ऐसे पत्र भेजे जा रहे हैं जिनमें आपसे हिन्दू-मुस्लिम-सिख प्रश्नको सुलझानेके लिए कहा गया है। आप देखेंगे कि इनमें से किसी भी पत्रपर मेरे हस्ताक्षर नहीं हैं। गोलमेज परिषद्की सफल परिणतिके इच्छुक कुछ ऐसे लोगोंने, जो हम दोनोंके मित्र हैं, मुझे सुझाव दिया है कि यदि मैं आपको एक पत्र लिखकर यह स्पष्ट कर दूँ कि इन पत्रोंपर मैंने हस्ताक्षर क्यों नहीं किये, तो इससे आपको सहायता मिलेगी।

किसी ऐसे पत्रपर जिसमें हिन्दुओं, मुसलमानों और सिखोंसे सम्बन्धित साम्प्रदायिक प्रश्नको सुलझानेके लिए आपको, व्यक्तिगत रूपसे, एकमात्र पंच नियुक्त किया गया हो, हस्ताक्षर करनेमें मुझे कोई झिझक नहीं होनी चाहिए। परन्तु प्रधान मन्त्रीकी हैसियतसे पंचके रूपमें आपकी नियुक्तिसे सहमत होनेमें मुझे जो झिझक है, उसे आप अच्छी तरह समझ सकते हैं। उसका सीधा-सादा कारण यह है कि यदि मैंने ऐसा किया तो संवैधानिक समस्याके सम्बन्धमें कांग्रेसके दावेको पेश करते हुए मुझे उलझन महसूस होगी। परन्तु मेरी अनिच्छाका अर्थ यह नहीं है कि कांग्रेस आपके पंच-फैसले का किसी भी तरह प्रतिरोध करेगी। वस्तुतः कांग्रेस ऐसा नहीं कर सकती, क्योंकि वह एक प्रस्ताव द्वारा किसी भी ऐसे समाधानको, जो तीनों सम्बन्धित पक्षोंको मान्य हो, स्वीकार करनेके लिए वचनबद्ध है, और यदि इन तीन समुदायोंके प्रतिनिधित्वका दावा करनेवाले लोग इस मामलेको आपके पास निर्णयके लिए भेजते हैं तो कांग्रेस आपके पंच-फैसलेपर आपत्ति नहीं कर सकती।

अन्य अल्पसंख्यकोंके विषयमें स्थिति इससे भिन्न है। कांग्रेस द्वारा जो रुख अपनाया गया है वह आपको मालूम है। जैसा कि मैंने अल्पसंख्यक-समस्या समितिकी पिछली बैठकमें दोहराया था, मेरी रायमें उन्हें इससे सन्तुष्ट हो जाना चाहिए कि उनके नागरिक और धार्मिक अधिकारों और सभी न्यायोचित हितोंकी पूर्ण रक्षा की जायेगी। कानूनके बाहर बहुत-से ऐसे तरीके सुझाये जा सकते हैं जिनसे समान निर्वाचक-मण्डलके जरिये सभी अन्य अल्पसंख्यकोंके योग्य उम्मीदवारोंको निश्चित रूपसे चुना जा सकता है। मैं ऐसा महसूस करता हूँ कि केवल यही सही और न्यायोचित मार्ग है।

किसी भी हालतमें, कांग्रेस पृथक् निर्वाचक-मण्डल या विशेष वैधानिक आरक्षण के सिद्धान्तके किसी भी और विस्तारको कदापि स्वीकार नहीं करेगी।

आपका,

मो० क० गांधी

परम माननीय प्रधान मन्त्री
१० डाउनिंग स्ट्रीट
एस० डब्ल्यू० १

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९३८२)से; सौजन्य : इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी

२०८. पत्र : मेरी ऑस्बर्नको

१६ नवम्बर, १९३१

प्रिय बहन,

आपका पत्र मैंने अभी-अभी ध्यानसे पढ़ा और जो-कुछ आप कहती हैं मैं उस सबका हृदयसे समर्थन करता हूँ। आपने यह ठीक ही कहा है कि विश्व-आत्मासे हम भिन्न नहीं हैं। मैंने देखा है कि उस स्थितिको प्राप्त करनेके लिए हमें भूत-मात्रकी सेवा करनी चाहिए। यह सेवा केवल तभी सम्भव है जब हम अपने-आपको शून्य कर दें। अहम्‌को मिटाना, अर्थात्, आत्म-बलिदान जीवनका नियम है। हम कहीं यह न समझने लगें कि अमुक परिणाम पैदा करनेवाला मैं हूँ — इसलिए हमें यह जान लेना चाहिए कि कोई भी मनुष्य अकेला कोई परिणाम पैदा नहीं कर सकता। इसलिए हमें परिणामोंसे अनासक्त होकर काम करना चाहिए। हमारा काम कर्म करना है, फल ईश्वरके हाथमें है। आप मुझे सही मार्गपर लगती हैं।

आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १२९५)से।

२०९. सन्देश : एफ० बी० फिशरको[1]

लन्दन
१७ नवम्बर, १९३१

भारतके मेरे मित्रोंने, कांग्रेस कार्यकारिणीके सदस्योंने, मुझे तार भेजा है कि परिषद्‌के समाप्त होते ही मैं भारत वापस आ जाऊँ। इसलिए मैं अमेरिका नहीं आ सकता। ऐसा लगता है कि अभी दीर्घकाल तक मैं अमेरिकाको कोई सन्देश नहीं दे सकूँगा। शायद ईश्वर यही चाहता है। यद्यपि मित्रोंसे मिलनेकी मेरी बड़ी इच्छा है, पर अमेरिका आनेका अभी कोई निमित्त नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १९-११-१९३१

१. यह सन्देश बिशप फिशरको, टेलीफोनपर भेजा गया था, जो उस समय शिकागोमें थे।

२१०. संघ-संरचना समितिकी बैठककी कार्यवाहीके कुछ अंश[1]

लन्दन

१७ नवम्बर, १९३१

गांधीजी : लॉर्ड चांसलर और प्रतिनिधि बन्धुओ, मैं जानता हूँ कि इस अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रश्नपर कांग्रेसका दृष्टिकोण रखनेकी मुझपर जबरदस्त जिम्मेदारी है।

मुझे यहाँ इस सुविचारित उद्देश्यसे भेजा गया है कि मैं हर सम्भव उपाय द्वारा एक सम्मानजनक समझौतेकी कोशिश करूँ — वह उपाय चाहे इस मेजपर खुला विचार-विमर्श हो या मन्त्रियों और यहाँके जनमतको प्रभावित करनेवाले सामाजिक व्यक्तियोंके साथ और उन सब लोगोंके साथ, जो भारतपर गहरा असर डालनेवाले प्रश्नोंमें दिलचस्पी रखते हैं, गैरसरकारी सलाह-मशविरे हों। अतः किसी समझौतेपर पहुँचनेके लिए कोई भी कोशिश उठा न रखनेको मैं बाध्य हूँ, यदि और किसी कारण नहीं तो केवल इसी कारण कि कांग्रेस ऐसी नीतिसे बँधी है जो आप सबको मालूम है। कांग्रेस यथासम्भव शीघ्रातिशीघ्र अपने लक्ष्यपर पहुँचनेको कृतसंकल्प है, और इन सब विषयोंपर बहुत ही सुनिश्चित विचार भी रखती है। इससे भी अधिक संगत बात यह है कि उत्तरदायी स्वशासनसे जितने भी दायित्व सिरपर आते हैं, आज वह उन सबको वहन करनेके योग्य है, या अपनेको योग्य समझती है।

स्थिति क्योंकि यह है, इसलिए मैंने सोचा कि इस अत्यन्त महत्त्वपूर्ण विषयपर विचार-विमर्श समाप्त होनेसे पहले इस प्रश्नपर कांग्रेसके दृष्टिकोणको यथासम्भव अधिकसे-अधिक विनम्रताके साथ और संक्षेपमें रखना मेरे लिए अनिवार्य है।

जैसा कि आप सबको विदित है, कांग्रेसकी माँग यह है कि भारतको पूर्ण उत्तर-दायित्व सौंप दिया जाना चाहिए। इसका अर्थ यह है, और उसमें यह कहा भी गया है, कि प्रतिरक्षा और विदेशी मामलोंपर पूर्ण नियन्त्रण होना चाहिए। पर उसमें यह गुंजाइश रखी गई है कि इस सम्बन्धमें थोड़ा-बहुत हेरफेर भी किया जा सकता है। मेरा खयाल है कि हमें यह सोचकर कि इस महत्त्वपूर्ण विषयमें उत्तरदायित्वकी माँग किये बिना भी हमें उत्तरदायी शासन प्राप्त हो जायेगा, अपने-आपको और संसारको धोखा नहीं देना चाहिए। मेरे विचारमें जिस राष्ट्रका अपनी खुदकी प्रतिरक्षा सेनापर और अपनी विदेशी नीतिपर नियन्त्रण न हो, उसे स्वशासित राष्ट्र कहना मुश्किल है। राष्ट्रकी प्रतिरक्षा, उसकी सेना, किसी भी राष्ट्रके लिए उसके अस्तित्वका सार होती है और यदि किसी राष्ट्रकी प्रतिरक्षापर किसी बाहरी अभि-करणका, चाहे वह कितना ही मैत्रीपूर्ण क्यों न हो, नियन्त्रण है तो उस राष्ट्रमें निश्चय ही उत्तरदायी शासन नहीं है। हमारे अंग्रेज शिक्षकोंने हमें बार-बार यही

१. समितिमें प्रतिरक्षापर विचार-विमर्श चल रहा था।

सिखाया है। इसीलिए कुछ अंग्रेजोंने भी जब यह बात सुनी कि हमें उत्तरदायी शासन तो मिलेगा पर अपनी खुदकी प्रतिरक्षा सेनापर हमारा नियन्त्रण नहीं होगा या हम नियन्त्रणका दावा नहीं करेंगे तो उन्होंने मुझे ताना मारा।

इसलिए मैं यहाँ बहुत ही सम्मानके साथ कांग्रेसकी ओरसे सेना, प्रतिरक्षा-सेना और विदेशी मामलोंपर पूर्ण नियन्त्रणका दावा करता हूँ। मैंने यह बात इसलिए भी रखी है कि जब सर तेजबहादुर सप्रू इस विषयपर बोलें तो मुझे इसपर न बोलना पड़े।

बहुत ही सोच-विचारके बाद हम इस निष्कर्षपर पहुँचे हैं। यदि उत्तरदायित्व ग्रहण करते समय ही यह नियन्त्रण हमें प्राप्त नहीं होता तो मैं किसी ऐसे समयकी कल्पना नहीं कर सकता जब हमें, अन्य विषयोंमें उत्तरदायित्व प्राप्त होनेके कारण ही, अचानक अपनी प्रतिरक्षा सेनापर नियन्त्रण रखनेके योग्य समझ लिया जायेगा।

मैं चाहूँगा कि यह समिति कुछ क्षणोंके लिए यह समझनेकी कोशिश करे कि आज इस सेनाका अर्थ क्या है। मेरी रायमें यह सेना, चाहे यह भारतीय हो या ब्रिटिश, आधिपत्य-सेना है। हमारे लिए, कमसे-कम मेरे लिए, यह चीज जरा भी महत्त्व नहीं रखती — मैं यह बात अनुभवसे कह रहा हूँ — कि वे सिख हैं या गुरखा, पठान हैं या मद्रासी या राजपूत। वे चाहे कोई भी हों, जबतक वे एक विदेशी सरकार द्वारा नियन्त्रित सेनामें हैं, मेरे लिए वे विदेशी हैं। सैनिक लोग जब भी मुझसे मिलने आये, चोरी-छिपे आये हैं। मुझसे बात करते भी वे डरते थे, क्योंकि वे सोचते थे कि इसकी शिकायत अधिकारियोंसे कर दी जा सकती है। सैनिकोंको जहाँ रखा जाता है वहाँ जाना हमारे लिए आम तौरपर सम्भव नहीं है। उन्हें भी यही सिखाया जाता है कि वे हमें अपने देशवासी न मानें। उनके और आम असैनिक आबादीके बीच कतई कोई सम्पर्क नहीं है। संसारके किसी और देशमें ऐसी स्थिति नहीं है। इस समितिके आगे अपनी यह गवाही मैं एक ऐसे व्यक्तिकी हैसियतसे दे रहा हूँ जिसने भारतीय जीवनके हर अंगसे, उन सभी लोगोंसे जिनके साथ मैं सम्पर्क स्थापित कर सकता था, सम्पर्क स्थापित करनेकी कोशिश की है। और यह मेरा अकेलेका अपना अनुभव नहीं है, बल्कि लाखों कांग्रेसियोंका अनुभव है कि उनके और हमारे बीच एक मजबूत दीवार खड़ी है।

इसलिए मैं इस चीजसे पूरी तरह अभिज्ञ हूँ कि उस उत्तरदायित्वको वहन करना और साथ ही ब्रिटिश सैनिकोंसे रहित इस सेनापर नियन्त्रण रखना हमारे लिए एक जबरदस्त काम होगा। यह हमारे लिए एक दुर्भाग्यपूर्ण और कष्टकर स्थिति है और मुझे यह कहते दुःख होता है कि यह स्थिति हमारे शासकों द्वारा पैदा की गई है।

फिर भारतीय सेनाका एक ब्रिटिश भाग है। इस ब्रिटिश सेनाका क्या प्रयोजन है? भारतका बच्चा-बच्चा यह जानता है कि भारतीय सेना-समेत यह ब्रिटिश सेना ब्रिटिश हितोंकी रक्षाके लिए है और विदेशी आक्रमणको बचाने या उसका मुकाबला करनेके लिए है। मुझे खेदके साथ ये बातें कहनी पड़ रही हैं, पर मैंने जो जाना और जैसा मेरा अनुभव रहा वह बिलकुल यही है, और इस सचाईको जिस रूपमें

मैंने यहाँ प्रकट किया है और जिस रूपमें मानता आया हूँ, यदि उस रूपमें प्रकट नहीं करता तो यह मेरे ब्रिटिश मित्रोंतक के साथ अन्याय होगा। तीसरे, यह सेना स्थापित सत्ताके विरुद्ध विद्रोहको कुचलनेके लिए है।

तो इस सेनाके मुख्य कार्य ये हैं। इसलिए अंग्रेज जो दृष्टिकोण अपना रहे हैं उसपर मुझे कोई आश्चर्य नहीं है। यदि मैं अंग्रेज होता और मुझमें दूसरे राष्ट्रपर शासन करनेकी महत्त्वाकांक्षा भी होती तो मैं भी बिलकुल यही करता। मैं भारतीयोंको लेकर उन्हें प्रशिक्षण देता और सैनिक बनाता। प्रशिक्षणसे मैं उन्हें अपना वफादार बनाता, इतना वफादार बनाता कि वे मेरे हुक्मपर जिस आदमीपर भी मैं चाहता उसीपर गोली चला देते। जलियाँवाला बागमें जिन्होंने लोगोंपर गोलियाँ चलाईं वे उनके अपने देशवासी नहीं तो और कौन थे? इसलिए यह मेरे लिए आश्चर्यकी बात नहीं है, बल्कि ऐसा तथ्य है जो मेरी आँखोंके बिलकुल सामने है।

ब्रिटिश सेनाका अस्तित्व भी वहाँ इसी प्रयोजनके लिए है; वह इन विभिन्न भारतीय सैनिकोंके बीच सन्तुलन रखती है। वह निस्सन्देह, जैसा कि उसके लिए आवश्यक है, ब्रिटिश अधिकारियोंकी रक्षा करती है, ब्रिटिश लोगोंकी रक्षा करती है। फिर, यदि मैं इस बातको स्वीकार कर लूँ कि भारतपर कब्जा करना ग्रेट ब्रिटेनके लिए ठीक था, और भारतको आज अपने अधीन रखना और कैसी भी बदली परि-स्थितियोंमें बराबर अपने अधीन रखना ग्रेट ब्रिटेनके लिए ठीक है, तो फिर मैं कोई शिकायत नहीं करूँगा।

स्थिति क्योंकि यह है, इसलिए जिस सवालका सर तेजबहादुर सप्रू सामना करनेको तैयार नहीं हैं और पण्डित मदनमोहन मालवीय भी सामना करनेको तैयार नहीं हैं, मेरे लिए उसका जवाब देना कोई कठिन नहीं है। उन दोनोंने कहा है कि विशेषज्ञ न होनेके कारण वे यह नहीं कह सकते कि यह सेना किस हदतक घटाई जा सकती है या घटाई जानी चाहिए। परन्तु मेरे सामने ऐसी कोई कठिनाई नहीं है। मेरे सामने यह कहनेमें कि इस सेनाका क्या होना चाहिए, कोई कठिनाई नहीं है, यानी मैं पूरे जोरके साथ यह कहूँगा कि यदि यह सेना मेरे नियन्त्रणमें नहीं आती है तो इससे पहले कि मैं इन जबरदस्त बाधाओंके बीच, जो हमें विदेशी शासन-की विरासतके तौरपर भोगनी पड़ रही हैं, सरकार चलानेका भार अपने कन्धोंपर लूँ, यह पूरी सेना भंग कर दी जानी चाहिए।

मेरी मूल स्थिति क्योंकि यह है, इसलिए मैं कहूँगा कि आप ब्रिटिश मन्त्रिगण और ब्रिटिश लोग यदि सचमुच भारतका भला चाहते हैं, यदि आप अब हमें सत्ता सौंपनेवाले हैं, तो इसे एक मुख्य शर्त मानिए कि सेना पूर्णतया हमारे नियन्त्रणमें आनी चाहिए। लेकिन यह मैं आपको बता चुका हूँ कि इसमें जो खतरा है मैं उसे जानता हूँ। वह सेना मेरी कमान नहीं मानेगी, मैं इस चीजको अच्छी तरह जानता हूँ। मैं यह जानता हूँ कि ब्रिटिश कमांडर-इन-चीफ़ मेरी कमान नहीं मानेंगे, और सिख, गर्वीले राजपूत — उनमें से कोई भी मेरी कमान नहीं मानेगा। लेकिन मैं, फिर भी ब्रिटिश लोगोंकी सद्भावनाके साथ, उस कमानको प्रयोगमें लानेकी आशा करता

हूँ। मैं आशा करता हूँ कि कमान हस्तान्तरित करते समय वे वहाँ मौजूद होंगे और उन्हीं सैनिकोंको एक नया सबक सिखायेंगे और उन्हें बतायेंगे कि यदि वे सेवा करते हैं तो आखिर अपने देशवासियोंकी ही करते हैं। ब्रिटिश सैनिकोंको भी यह बताया जा सकता है कि 'अब वह समय है जब आपको यहाँ ब्रिटिश हितों और ब्रिटिश लोगोंकी रक्षाके लिए नहीं रहना है, बल्कि भारतकी विदेशी आक्रमण और भीतरी विप्लवसे रक्षाके लिए ऐसे रहना है, मानों आप अपने खुदके ही देशवासियोंकी रक्षा और सेवा कर रहे हों।'

यह मेरा स्वप्न है। मैं जानता हूँ कि यह स्वप्न यहाँ पूरा नहीं होगा। मैं यही महसूस कर रहा हूँ। मेरे सामने जो प्रमाण हैं—इन्द्रियग्राह्य प्रमाण—वे कह रहे हैं कि यह स्वप्न इस परिषद्की बहसोंसे आज और यहाँ पूरा होनेवाला नहीं है। परन्तु मुझे यह स्वप्न फिर भी सँजोये रखना चाहिए। यह ऐसा स्वप्न है जिसे मैं अपने जीवनके अन्ततक सँजोये रखना चाहता हूँ। पर यहाँका वातावरण देखकर मैं यह जानता हूँ कि मैं ब्रिटिश राजनीतिज्ञों या ब्रिटिश जनसाधारणको इस विचार या आदर्शसे अनुप्राणित नहीं कर सकता कि यह उनका भी प्रिय ध्येय हो जाना चाहिए। प्रधान मन्त्रीकी घोषणाका मैं इसी तरह अर्थ लगाऊँगा; लॉर्ड इर्विनकी कामनाओंका मैं इसी तरह अर्थ लगाऊँगा। ग्रेट ब्रिटेनका यह गौरवपूर्ण विशेषाधिकार और कर्त्तव्य होना चाहिए कि वह अब हमें हमारी अपनी प्रतिरक्षाके संचालनके रहस्योंमें दीक्षित करे। हमारे पंख कतर डालनेके बाद यह उसका कर्त्तव्य हो जाता है कि वह हमें पंख दे, जिससे कि हम उड़ सकें, जैसे कि ब्रिटेनवाले उड़ते हैं। वस्तुतः यह मेरी महत्त्वाकांक्षा है, और इसीलिए मैं कहता हूँ कि यदि मैं प्रतिरक्षापर नियन्त्रण प्राप्त नहीं कर सका तो मैं अनन्त कालतक प्रतीक्षा करूँगा। मैं यह मानकर कि यद्यपि मैं अपने देशकी प्रतिरक्षा-व्यवस्थापर नियन्त्रण नहीं रख सकता पर उत्तरदायी शासन आरम्भ करने जा रहा हूँ, अपने-आपको धोखा नहीं दे सकता।

आखिर भारत ऐसा राष्ट्र तो नहीं है जिसे अपनी रक्षा करनेका ढंग कभी ज्ञात न रहा हो। वहाँ सारी सामग्री है। वहाँ मुसलमान हैं, जिन्हें विदेशी हमलेका कोई भय नहीं है; सिख हैं, जो कभी यह सोच भी नहीं सकते कि कोई उनपर विजय प्राप्त कर सकता है; गुरखे हैं, जो राष्ट्रीय भावना विकसित होते ही कहेंगे: 'मैं अकेला भारतकी रक्षा कर सकता हूँ।' फिर वहाँ राजपूत हैं, जिनके बारेमें यह माना जाता है कि उन्होंने ग्रीसकी एक छोटी थर्मोपली नहीं, बल्कि थर्मोपली-जैसी हजार लड़ाइयाँ लड़ी हैं। अंग्रेज कर्नल टॉडने हमें यही बताया है। कर्नल टॉडने हमें विश्वास दिलाया है कि राजपूतानेमें हर दर्रा थर्मोपली रहा है। क्या इन लोगोंको प्रतिरक्षाकी कला सीखनेकी जरूरत है?

मैं यह मानकर चलता हूँ कि यदि मैं उत्तरदायित्वका बोझ अपने कन्धोंपर लूँ तो ये सब लोग मेरा हाथ बँटायेंगे। मुझे यहाँ यह देखकर बड़ा सन्ताप होता है कि हम अभीतक साम्प्रदायिक प्रश्नपर किसी समझौतेपर नहीं पहुँचे हैं। लेकिन साम्प्रदायिक समझौता जब भी होगा, हमें उससे पहले एक-दूसरेपर विश्वास करना

होगा। शासनमें चाहे मुसलमानोंका प्राधान्य हो या सिखोंका या हिन्दुओंका, वे मुसलमान, सिख या हिन्दूकी हैसियतसे नहीं, बल्कि भारतीयकी हैसियतसे शासन करेंगे। यदि हममें एक-दूसरेके प्रति अविश्वास है, तो एक-दूसरेके हाथों मरनेसे बचनेके लिए हम ब्रिटिश लोगोंको रखना चाहेंगे। लेकिन तब हमें उत्तरदायी शासनकी बात नहीं करनी चाहिए।

कमसे-कम मैं इस बातकी कल्पना नहीं कर सकता कि सेनापर नियन्त्रणके बिना भी हमें उत्तरदायी शासन प्राप्त हो सकता है। इसलिए अपने हृदयमें खूब गहरे, मैं यह महसूस करता हूँ कि यदि हमें उत्तरदायी शासन प्राप्त करना है — और कांग्रेस उत्तरदायी शासन चाहती है, कांग्रेसको अपने-आपमें विश्वास है, जनतामें विश्वास है, उन सब बहादुर सैनिक जातियोंमें विश्वास है, और इससे भी बड़ी बात यह है कि कांग्रेसको अंग्रेजोंमें भी विश्वास है कि किसी दिन वे अपना कर्त्तव्य पूरा करेंगे और सम्पूर्ण नियन्त्रण हमें सौंप देंगे — तो हमें ब्रिटिश लोगोंको अपने भारत-प्रेमसे प्रभावित करना होगा, क्योंकि यह प्रेम ही तो भारतको अपने पैरोंपर खड़े होनेके योग्य बनायेगा। यदि ब्रिटिश लोग यह सोचते हैं कि ऐसा कर सकनेके लिए हमें एक शताब्दी चाहिए तो कांग्रेस एक शताब्दीतक जंगलमें भटकेगी और कांग्रेसको भीषण अग्नि-परीक्षामेंसे गुजरना होगा, विपत्ति और गलतबयानीके तूफानमें से गुजरना होगा, और यदि आवश्यक हुआ और ईश्वरकी ऐसी ही इच्छा हुई तो गोलियोंकी बौछारमें से गुजरना होगा। यदि ऐसा होता है, तो उसका कारण यह होगा कि हम एक-दूसरेपर विश्वास नहीं कर पाते हैं, कि अंग्रेज और भारतीय विभिन्न दृष्टिकोण रखते हैं।

यह मेरी मूल स्थिति है। विस्तारमें मैं जाना नहीं चाहता। मैंने यह मामला जितने सशक्त ढंगसे मैं रख सकता था रख दिया है। लेकिन यदि यह एक चीज स्वीकार कर ली जाती है, तो मुझमें इतनी सूझबूझ है कि एकके-बाद-एक ऐसे संरक्षण रख सकूँ और गढ़ सकूँ जो किसी भी निष्पक्ष व्यक्तिको ठीक लगेंगे, पर शर्त यही है कि हमारा समान ध्येय यही होना चाहिए कि वे संरक्षण भारतके हितमें हों। लेकिन मैं इससे भी आगे जाना चाहता हूँ और लॉर्ड इर्विनकी इस बातका समर्थन करता हूँ कि यद्यपि करारके संरक्षणोंके बारेमें यह कहा गया है कि वे भारतके हितमें हैं, पर वस्तुतः वे भारत और इंग्लैंड दोनोंके हितमें माने जाने चाहिए। मेरा यह खयाल है कि लॉर्ड इर्विनने अपना यह मत व्यक्त करते हुए मेरा नाम लिया था और कहा था कि गांधीकी भी यही राय है। उन्होंने ठीक ही कहा था। मैं किसी भी ऐसे संरक्षणकी बात नहीं सोचता हूँ जो केवल भारतके हितमें होगा, और जो साथ ही ग्रेट ब्रिटेनके भी हितमें नहीं होगा, पर शर्त यही है कि हम जिस व्यवस्थाके बारेमें सोच रहे हैं वह साझेदारीकी ही व्यवस्था हो, ऐसी साझेदारीकी जो किसी भी साझेदारकी इच्छासे किसी भी समय समाप्त की जा सकती हो और पूर्ण समानताकी शर्तोंपर हो। जो कारण मैंने आज सेनापर पूर्ण नियन्त्रणकी माँगके लिए दिये हैं, वही कारण विदेशी मामलोंपर हमारे नियन्त्रणके पक्षमें और उसकी माँगके लिए भी हैं। विदेशी मामलोंका वस्तुतः क्या अर्थ है, इससे मैं अच्छी तरह

अभिज्ञ नहीं हूँ और गोलमेज परिषद्की इन रिपोर्टोंमें इस विषयपर जो-कुछ कहा गया है उसपर मुझे अपना अज्ञान जाहिर करना पड़ रहा है; इसलिए मैंने अपने मित्रों श्री अय्यंगार और सर तेजबहादुर सप्रूसे कहा कि वे मुझे विदेशी मामलों और वैदेशिक सम्बन्धोंके अर्थके बारेमें पहला पाठ दें। उनका उत्तर मेरे सामने है। वे कहते हैं कि इन शब्दोंका अर्थ है, अन्तर्राष्ट्रीय मामलोंमें पड़ोसी देशोंके साथ सम्बन्ध, भारतीय रियासतोंके साथ सम्बन्ध, अन्य देशोंके साथ सम्बन्ध, डोमिनियनोंके साथ सम्बन्ध। यदि विदेशी मामले यही हैं, तो मेरा खयाल है कि हम विदेशी मामलोंके सम्बन्धमें अपने दायित्वोंको उठाने और पूरा करनेकी पूरी क्षमता रखते हैं। निस्सन्देह, हम अपने बंधु-बांधवोंके साथ, अपने पड़ोसियोंके साथ, अपने देशवासी भारतीय नरेशोंके साथ सुलह-शान्तिकी शर्तोंके बारेमें वार्त्ता कर सकते हैं। हम अपने पड़ोसी अफगान लोगोंके साथ और समुद्र-पारके जापानियोंके साथ अत्यन्त मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध विकसित कर सकते हैं, और निश्चय ही हम डोमिनियनोंके साथ भी वार्त्ता कर सकते हैं। यदि डोमिनियन हमारे देशवासियोंको वहाँ पूर्ण आत्मसम्मानके साथ रहने नहीं देते हैं, तो हम उनसे निबट सकते हैं।

हो सकता है, मैं मूर्खतावश वैसी बातें कर रहा हूँ, पर आपको यह समझ लेना चाहिए कि कांग्रेसमें मेरे-जैसे हजारों और लाखों मूर्ख नर-नारी हैं, और उनकी ओरसे मैं सादर यह दावा करता हूँ और इस बातको फिर कहता हूँ कि हमने जो संरक्षण सोचे हैं उनके साथ हम अपने दायित्वोंको अक्षरशः पूरा करेंगे। पण्डित मदनमोहन मालवीयने संरक्षणोंका एक खाका रखा है। जो-कुछ उन्होंने कहा है उसके अधिकांशसे मैं पूर्णतया सहमत हूँ। पर केवल वही एक संरक्षण नहीं है। यदि अंग्रेज और भारतीय मिल-बैठकर सोचें, बिना किसी मानसिक संकोचके एक दिशामें बढ़ें, तो मैं पूर्ण विश्वासके साथ कहता हूँ कि हम ऐसे संरक्षण पैदा कर सकेंगे जो भारत और इंग्लैंडके लिए एक-जैसे सम्मानजनक होंगे, और जो प्रत्येक ब्रिटिश व्यक्ति और प्रत्येक ब्रिटिश हितकी सुरक्षाकी गारन्टी करेंगे, जिसके लिए भारत नैतिक रूपसे वचन-बद्ध है।

लॉर्ड चांसलर, मैं इससे आगे नहीं जा सकता। इस बैठकका मैंने जो इतना समय लिया उसके लिए मैं बार-बार क्षमा माँगता हूँ। परन्तु आप यह समझ जायेंगे कि यहाँ रोज बैठकर और दिन-रात इसी बारेमें सोचते हुए मुझमें यही भावना उमड़ती रही है कि यह विचार-विमर्श सफल परिणामपर कैसे पहुँच सकता है। जो भावना मुझे चालित कर रही है उसे आप समझ जायेंगे। वह अंग्रेजोंके प्रति सद्-भावकी भावना है और अपने देशवासियोंके प्रति पूर्ण सेवाकी भावना है।

अध्यक्ष : श्री गांधी, मैंने आपकी अपील बहुत ही दिलचस्पीसे सुनी है और मैं चाहता हूँ कि आप मेरी व्यक्तिगत रूपसे सहायता करनेकी कृपा करें। सबसे पहले, आप जिसे अपना स्वप्न कहते हैं, मैं उससे बहुत प्रभावित हुआ हूँ — बेशक मैं आपके स्वप्नमें भागीदार नहीं बन सकता — और उसके बाद मैं आपके आदर्शोंसे बहुत प्रभावित हुआ हूँ। उनमें मैं — शायद उस ऊँचाईतक तो नहीं जिसपर आपने उन्हें

रखा है, पर —— बहुत हदतक भागीदार बन सकता हूँ। भारतमें शान्ति और सुखका राज्य हो, इसके लिए मैं उतना ही उत्सुक हूँ जितने कि आप हैं। और इस सालके शुरूमें लॉर्ड इर्विन और आप जिन शर्तोंपर पहुँचे थे उन्हें अमलमें लानेके लिए मैं उतना ही उत्सुक हूँ जितने कि आप और लॉर्ड इर्विन हैं। उन शर्तोंके दूसरे अनुच्छेदमें कहा गया है :

> "जिस योजनाकी रूप-रेखा यहाँ प्रस्तुत है संघ उसका आवश्यक अंग है; उसी तरह प्रतिरक्षा, विदेशी मामलों, अल्पसंख्यकोंकी स्थिति, भारतका वित्तीय ऋण और दायित्वोंका पालन-जैसे विषयोंके लिए, भारतके हितमें, भारतीय उत्तरदायित्व और आरक्षण या संरक्षण भी उसका अंग हैं।"

मैं चाहूँगा कि आप यह विश्वास करें कि उस कार्यक्रमको प्रयोगमें लानेके लिए मैं आप-जितना ही उत्सुक हूँ। आपकी सद्भावनापर मुझे सन्देह नहीं है। मैं चाहता हूँ आप भी मेरी सद्भावनापर सन्देह न करें।

अपने विचार प्रकट करते हुए आपने कहा है कि आप आशा करते हैं कि हम आपको आत्म-रक्षाका सबक सिखा सकते हैं। (आपने जिन विषयोंकी चर्चा की है, मैं उनमें से कुछका केवल सामान्य सार रख रहा हूँ।) आपके देशवासियोंकी वीरता में किसीको भी सन्देह नहीं है। पिछली शताब्दियोंमें वह बहुत-से युद्ध-क्षेत्रोंमें उजागर हो चुकी है। परन्तु मान लीजिए कि यह ठीक है, जैसा कि मैं सोचता हूँ, मान लीजिए आपका यह कहना सही है कि फिलहाल भारतीयोंको आत्म-रक्षाका सबक सीखना है। मैं आपसे सहमत हूँ। मैं सोचता हूँ यह ठीक है। अब मेरे साथ जो मुसीबत है वह मैं आपको बताता हूँ।

यदि यह ठीक है कि फिलहाल भारतीय सेना उसके लिए तैयार नहीं है, तो आप जब हमसे सेनाको हटाने या इतना घटानेको कहते हैं कि वह सुरक्षाके लिए उपयुक्त न रहे, तो मुझसे और हमसे एक भीषण उत्तरदायित्व लेनेको कहते हैं।

जो-कुछ आपने कहा उसके बहुत-से भागसे मुझे अत्यधिक सहानुभूति है। लेकिन श्री गांधी, आप मुझे यह कहनेके लिए क्षमा करें कि मैं जो कठिनाई महसूस कर रहा हूँ, वह उस उत्तरदायित्वकी है, जो मुझे तब वहन करना होगा, यदि मैं एक डिक्टेटर बन जाऊँ और यह कह दूँ कि 'कल मैं प्रत्येक अंग्रेज सैनिकको हटा लूँगा' वह एक भयानक जोखिम होगी, और यदि भारतकी शान्ति और समृद्धिको कुछ हो गया तो मैं अपने-आपको वैसा करनेका निर्णय लेनेके लिए कभी क्षमा नहीं कर सकूँगा, क्योंकि मैं यह मानता हूँ कि पहले यह जानना होगा कि भारतीय अपनी प्रतिरक्षाका संचालन किस तरह करते हैं।

मैं आपके आदर्शोंमें भागीदार होननेकी इच्छा रखता हूँ, किन्तु चूँकि मैं उक्त उत्तरदायित्वको महसूस करता हूँ इसलिए मुझे लगता है कि आप आप मुझसे, जहाँतक वस्तुतः मझे सहमत होना चाहिए, उससे आगे जानेके लिए कह रहे हैं। श्री

गांधी, मैं आपकी इस बातसे सहमत हूँ कि हमें यहाँ जिसपर विचार करना है, वे भारतके हित हैं। परन्तु जब मैं आपसे यह कहता हूँ कि मैं ईमानदारीके साथ यह सोचता हूँ कि सेनाको तुरन्त हटा लेनेकी प्रार्थनाको स्वीकार करना भारतके हितमें नहीं होगा, तो आपको मुझपर कमसे-कम उतना विश्वास तो करना ही चाहिए जितना कि मैं आपपर करता हूँ। यह ऐसा उत्तरदायित्व है जिसे, मेरे खयालमें, भारतके हितोंका सचमुच खयाल रखनेवाला — मुझे इस बातको इस तरह रखनेके लिए आप क्षमा करें — कोई भी राजनीतिज्ञ वहन करना उचित नहीं समझ सकता। ऐसा समय आ सकता है और मुझे आशा है, आयेगा। . . .

गांधीजी : क्या मैं आपकी मात्र-एक भूल सुधार सकता हूँ? मैंने ब्रिटिश सेना को हटा लेनेके लिए नहीं कहा है। मेरे खयालसे मेरी बातोंमें इस आशयका कोई वाक्य नहीं था, और यदि मैंने इस तरहका कोई वाक्य कहा है तो मैं उसे वापस ले लेना चाहूँगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबल कांफरेंस (सेकेंड सेशन): प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी एंड माइनॉरिटीज़ कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ ३८७-८९

२११. भाषण : वीमेन्स इंडियन कौंसिलकी बैठकमें[1]

लन्दन

[१८ नवम्बर, १९३१][2]

गांधीजी ने इस अवसरपर भारतकी महिलाओंके बारेमें प्रचलित विभिन्न ऊट-पटांग धारणाओंको दूर किया और पिछले संघर्षमें उन्होंने जो साहसिक भूमिका अदा की थी उसका स्पष्ट चित्र रखा। उन्होंने कहा :

वे शायद बहुत बातोंमें आपसे श्रेष्ठ हैं। आपको अपना मताधिकार प्राप्त करनेके लिए अकथनीय कष्ट भोगने पड़े हैं। भारतमें महिलाओंको वह माँगते ही मिल गया। सार्वजनिक जीवनमें उनके प्रवेशके मार्गमें कोई बाधा खड़ी नहीं की गई। महिलाएँ कांग्रेसकी केवल प्रधान ही नहीं रही हैं, बल्कि श्रीमती नायडू उसकी सर्वोच्च परिषद्की सदस्य रही हैं। कितने सालोंसे, और पिछले संघर्षके दौरान जब हमारे संगठन गैरकानूनी घोषित कर दिये गये और उनके अधिकारी जेलोंमें डाल दिये गये, तब महिलाएँ ही अगले मोर्चेपर आईं, उन्होंने 'डिक्टेटरों'का स्थान लिया और जेलें भर दीं। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि उन्होंने पुरुषोंके हाथों दुःख नहीं भोगे हैं। उनके अपने कटु

१. महादेव देसाईके "लंडन लेटर" (लन्दनका पत्र) से उद्धृत। यह बैठक अगाथा हैरिसन द्वारा आयोजित की गई थी और मॉर्ले कॉलेजमें हुई थी।

२. **हिन्दुस्तान टाइम्स,** २१-११-१९३१ की एक रिपोर्टके अनुसार बैठक इसी तारीखको हुई थी।

अनुभव रहे हैं, पर मुझे आपसे यह कहनेमें कोई संकोच नहीं है कि मिस मेयोकी पुस्तकमें आपने भारतके विषयमें जो पढ़ा है वह ९९ प्रतिशत झूठ है। मैंने वह पुस्तक आदिसे अन्ततक पढ़ी है और जब मैंने उसे समाप्त किया तो मेरे मुँहसे निकला था कि यह दरअसल नाली-निरीक्षककी रिपोर्ट[1] है। उनकी कही कुछ बातें सच हैं, पर उन्होंने जो सामान्य सिद्धान्त बनाये हैं, वे बिलकुल मिथ्या हैं और पुस्तकके कई कथन उनकी कोरी कपोल-कल्पना हैं।

फिर उन्होंने बताया कि किस तरह पिछले साल वे दल बाँधकर अपने घरोंसे बाहर निकलीं और उनमें ऐसी जागृति दिखाई दी जो आश्चर्यजनक थी। उन्होंने जुलूसोंमें भाग लिया, कानून तोड़ा, पुलिसके खिलाफ अँगुलीतक उठाये बिना और उसे कोसे बिना लाठियाँ खाईं, और समझाने-बुझानेकी अपनी शक्तिका प्रयोग कर शराबियोंकी शराब छुड़ाई और विदेशी कपड़ेके विक्रेताओं और ग्राहकोंका विदेशी कपड़ा छुड़ाया। जो महिला अडिग खड़ी रहकर अपने सिरपर पुलिसकी लाठियाँ झेलती रही और खूनमें तर-बतर हो गई, अपने साथियोंको जिसने अपनी जगहोंसे न हिलनेका आदेश दिया और बोरसदके छोटे-से कस्बेको जिसने थर्मोपलीमें बदल दिया, वह सरोजिनी नायडूकी तरह पढ़ी-लिखी महिला नहीं, बल्कि एक अशिक्षित नारी थी।[2] पिछले सालकी विजयका श्रेय मुख्यतया इन्हीं महिलाओंको है।

प्रश्नोंके लिए समय नहीं बचा था, फिर भी जो एक-दो प्रश्न पूछे गये वे इस बातके द्योतक थे कि गोलमेज परिषद्की कार्रवाईको महिलाएँ कितने चिन्तातुर भावसे देख रही थीं। गांधीजीने कहा :

इन दोनों देशोंके आगे संसारकी भलाईके लिए समानताकी शर्तोंपर एकतासे रहनेका अभी भी अवसर है। संसारकी शान्तिमें सहायक हुए बिना, भारतकी स्वतन्त्रता प्राप्त करके भी मेरी आत्माको सन्तोष नहीं मिलेगा। मैं अपने मनमें यह विश्वास रखता हूँ कि इंग्लैंड जब भारतको अपना शिकार बनाना बन्द कर देगा, तो वह अन्य राष्ट्रोंको भी अपना शिकार बनाना बन्द कर देगा। कमसे-कम भारतका उस खूनी अपराधमें कोई भाग नहीं होगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ३-१२-१९३१

१. देखिए खण्ड ३४, पृष्ठ ५८४-९४।

२. गंगाबहन वैद्य; देखिए खण्ड ४५, पृष्ठ १३८।

२१२. पत्र : सर सैम्युअल होरको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, एस० डब्ल्यू०-१
१९ नवम्बर, १९३१

प्रिय सर सैम्युअल,

भारतमें जो परिस्थिति विकसित हो रही है उसके बारेमें आपको एक समुद्री तारकी प्रति भेजनेके सिवा मैंने अभी तक आपको कोई कष्ट नहीं दिया है।

अभी भी मेरा इरादा वहाँकी परिस्थितिकी समीक्षासे आपको परेशान करनेका नहीं है। लेकिन हमारे आसपासके लोगोंमें इस आशयकी बड़ी ही गर्म अफवाहें हैं कि बंगालमें मार्शल लॉ लगनेवाला है; वहाँ दमन व्यापक स्तरपर शुरू हो गया है; और अधिकारी बंगालकी स्थिति-सम्बन्धी सारी सूचनाओंको दबा रहे हैं।

क्या आप मुझे यह बतानेकी कृपा करेंगे कि इन अफवाहोंमें थोड़ी-बहुत भी सचाई है या नहीं, और यह भी कि बंगालमें अधिकारी वस्तुतः क्या कर रहे हैं? और क्या मैं कांग्रेसके अध्यक्षको बंगालके बारेमें सूचना देनेका तार इस निश्चित आशाके साथ भेज सकता हूँ कि जो जवाब वे भेजेंगे, वह यदि सेंसरके नियमोंको और तरहसे पूरा करता हो तो, सेंसर नहीं होगा?

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

परम माननीय सर सैम्युअल होर
भारत-मन्त्री,
इंडिया आफ़िस, एस० डब्ल्यू०-१

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९३८३) से; सौजन्य: इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी

२१३. पत्र : सर फिलिप हार्टोगको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, एस० डब्ल्यू०-१
१९ नवम्बर, १९३१

प्रिय सर फिलिप,

आपके इसी १७ तारीखके पत्रके लिए मैं आपका बहुत ही आभारी हूँ।

चैथम हाउसकी सभामें मैंने जो बयान दिया था[1] उसे वापस लेनेका मेरा अभी इरादा नहीं है। आपने जिस रिकॉर्डका उल्लेख किया है उसे खोजनेका फिलहाल तो मेरे पास समय है नहीं। परन्तु मैं यह वादा करता हूँ कि मैं इस बातको भूलूँगा नहीं, और यदि मुझे ऐसा लगा कि चैथम हाउसके अपने बयानकी पुष्टि मैं नहीं कर सकता तो उसे वापस ले लेनेका मैं चैथम हाउसके भाषणसे भी कहीं अधिक प्रचार करूँगा।

इस बीच मैं उन सन्दर्भोंको, जो आपको चाहिए, ढूँढ़नेकी कोशिश कर रहा हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

सर फिलिप हार्टोग, के० बी० ई०
५, इन्वर्नेस गार्डेन्स, डब्ल्यू० ८

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९०४३-ए०)से; सौजन्य : इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी

१. अर्थात्, भारतमें साक्षरताका अनुपात ब्रिटिश शासनमें गिर गया है। सर फिलिप हार्टोगने इस बयानकी सचाईपर सन्देह प्रकट किया था। १७ नवम्बरके अपने पत्रमें उन्होंने कहा था कि उन्होंने **यंग इंडिया**के लेखों और पंजाब प्रशासनकी रिपोर्टकी जाँच की है और गांधीजी के तर्कके समर्थनमें उन्हें वहाँ कुछ नहीं मिला। अन्तमें उन्होंने कहा था : "...क्या मैं यह सुझाव रख सकता हूँ कि आपको अपना बयान अब वापस ले लेना चाहिए...?" देखिए "पत्र : सर फिलिप हार्टोगको" २३-१०-१९३१।

२१४. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको[1]

लन्दन
१९ नवम्बर, १९३१

नरेशोंके संघमें शामिल होनेके बारेमें मैं न केवल उदासीन नहीं हूँ, बल्कि वे ऐसा करें इसके लिए सबसे अधिक उत्सुक हूँ। जहाँतक मेरा वश है, मैं नरेशोंको संघमें शामिल होनेको राजी करनेकी हर तरहसे कोशिश करूँगा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २०-११-१९३१

२१५. संघ-संरचना समितिकी बैठककी कार्यवाहीके कुछ अंश

लन्दन
१९ नवम्बर, १९३१

गांधीजी : लॉर्ड चांसलर और मित्रो, श्री बेंथलने जो अत्यन्त सौम्य वक्तव्य दिया है, उसके लिए मैं उनका अभिनन्दन करता हूँ किन्तु मुझे लगता है, यदि इस सराहनीय वक्तव्यमें उन्होंने दो भावनाओंका समावेश कर उसे बिगाड़नेकी कोशिश न की होती तो अच्छा होता। उनके द्वारा व्यक्त की गई एक भावनाका अर्थ लगभग यह है कि यूरोपीय अथवा अंग्रेज लोग जो माँग करते हैं, उसका कारण यह है कि उन्होंने भारतको कई लाभ पहुँचाये हैं। यदि वे यह राय न प्रकट करते तो अच्छा होता। किन्तु जब वह प्रकट की गई तो सर पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास द्वारा उसके शिष्टतापूर्ण प्रत्युत्तरपर और, जैसा कि हमने सुना, अब सर फीरोज सेठना द्वारा उस प्रत्युत्तरके समर्थनपर लॉर्ड रीडिंगको आश्चर्य प्रकट करनेकी कोई आवश्यकता नहीं थी। जिस बड़ी संस्थाके वे प्रतिनिधि हैं, उसकी ओरसे उन्होंने उक्त वक्तव्यमें जो धमकी दी है, यदि वह भी न दी होती तो अच्छा होता। उन्होंने कहा है कि यूरोपीय राष्ट्रीय माँगोंका समर्थन इसी शर्तपर करेंगे कि भारतीय राष्ट्रवादी उनके द्वारा व्यक्त की गई यूरोपीयोंकी माँगोंको स्वीकार कर लें। साथ ही यूरोपीयोंके समर्थनकी एक शर्त यह भी है कि राष्ट्रवादी लोग उस पृथकतावादी प्रवृत्तिको स्वीकार कर लें जिसका इस वक्तव्यमें तो जिक्र नहीं किया गया है, किन्तु दुर्भाग्यसे जिसकी झलक हमें कुछ ही दिन पहले पृथक् निर्वाचक-मण्डलकी माँगमें मिल चुकी

१. साधन-सूत्रके अनुसार, गांधीजी ने यह वक्तव्य इस "निराधार" समाचारका खण्डन करनेके लिए दिया था कि उन्होंने प्रधान मन्त्रीसे अपनी भेंटमें कहा है कि वे नरेशोंको संघमें शामिल करना नहीं चाहते हैं।

है। इसके सिवा, यह समर्थन पानेके लिए राष्ट्रवादियोंको यूरोपीय समुदायका उस पृथकतावादी गठजोड़में शामिल होना भी बरदाश्त करना पड़ेगा जिसके विषयमें मुझे उस दिन दुःखके साथ बोलना पड़ा था। पिछली परिषद्में स्वीकृत प्रस्तावको समझानेका मैंने प्रयत्न किया है। यद्यपि आप उससे परिचित हैं, फिर भी मैं उसे पुनः पढ़ देना चाहता हूँ, क्योंकि उसके सम्बन्धमें मुझे कुछ बातें कहनी होंगी।

ब्रिटिश व्यापारी वर्गके कहनेसे यह सिद्धान्त सामान्यतः स्वीकार कर लिया गया है कि भारतमें व्यापार करनेवाले ब्रिटिश व्यापारी-वर्ग, फर्मों और कम्पनियोंके अधिकारों और जन्मतः भारतीय प्रजाजनोंके अधिकारोंमें कोई भेद-भाव नहीं होना चाहिए।

शेष प्रस्ताव पढ़नेकी मुझे आवश्यकता नहीं है।

सर तेजबहादुर सप्रू और श्री जयकरके प्रति अत्यन्त सम्मान और आदरभाव रखते हुए भी, मुझे अत्यन्त दुःखके साथ इस अति व्यापक प्रस्तावसे मतभेद प्रदर्शित करना पड़ रहा है। इसलिए, कल जब सर तेजबहादुर सप्रूने तुरन्त यह बात स्वीकार कर ली कि यह प्रस्ताव अस्पष्ट है और इसमें सुधारकी गुंजाइश है तो मुझे प्रसन्नता हुई। यदि आप इस प्रस्तावका ध्यानपूर्वक अध्ययन करें तो आप देखेंगे कि इसका स्वरूप कितना व्यापक है। भारतमें व्यापार करनेवाले ब्रिटिश व्यापारी-वर्ग, फर्मों और कम्पनियोंके अधिकारों और जन्मतः भारतीय प्रजाजनोंके अधिकारोंमें कोई भेद-भाव नहीं होगा। यदि मैंने इसको सही-सही समझा है तो यह भयानक वस्तु है, और कमसे-कम मैं इस तरहके प्रस्तावसे, भारतकी भावी सरकारको तो क्या, कांग्रेसको भी बाँध नहीं सकता।

इसमें किसी तरहकी सीमा ही नहीं बाँधी गई है। ब्रिटिश व्यापारी-वर्गके बिलकुल वे ही अधिकार होंगे जो जन्मतः भारतीय प्रजाजनोंके होंगे। इसलिए न केवल जातीय भेदभाव अथवा वैसी कोई और बात नहीं होगी, बल्कि ब्रिटिश व्यापारी-वर्ग जन्मतः भारतीय प्रजाजनोंके समान ही पूरे अधिकार भोगेगा। मैं पूरे बलके साथ यह कहना चाहता हूँ कि मैं इस सूत्रका भी समर्थन नहीं कर सकता कि सभी जन्म-जात भारतीय प्रजाजनोंके भी अधिकारोंकी समानताकी गारन्टी हो। इसका कारण मैं आपको अभी बताता हूँ।

मैं समझता हूँ, आप इस बातको तुरन्त स्वीकार कर लेंगे कि भारतकी भावी सरकारको (सर फीरोज सेठनाके हाल ही के सराहनीय शब्दोंमें) परिस्थितियोंको समान करनेके लिए लगातार वह काम करना पड़ेगा जिसकी मौजूदा सरकारने उपेक्षा की, अर्थात् जिन लोगोंको प्रकृतिने अथवा स्वयं सरकारने कृपा करके धन और अन्य सुविधाएँ प्रदान की हैं, उनके विरुद्ध और भूखों मरते भारतीयोंके पक्षमें उसे बराबर भेदभाव करना पड़ेगा। शायद भावी सरकारको मजदूरोंके लिए मुफ्त घरोंकी व्यवस्था करना आवश्यक होगा। उस समय भारतके धनिक लोग यह कह सकते हैं कि यद्यपि हमें इस प्रकारके घरोंकी आवश्यकता नहीं है, फिर भी यदि आप उनके लिए घरोंकी व्यवस्था करते हैं तो हमें भी उसके बदलेमें सहायता दें। वह निःसन्देह मजदूरोंके

पक्षमें भेद-भाव होगा। और इस सूत्रके अनुसार, धनिक लोग यह कह सकते हैं कि वह उनके विरुद्ध भेद-भाव है।

इसलिए मैं साहसपूर्वक यह कहता हूँ कि जब हम इस सम्मेलनमें भारतके भावी संविधानकी रचनामें सम्राट्-सरकारकी उस हदतक सहायता करनेकी कोशिश कर रहे हैं जिस हदतक कि वह हमारी सहायता स्वीकार करे, तब इस अति व्यापक सूत्रको हम स्वीकार नहीं कर सकते।

किन्तु यह कह चुकनेके बाद, मैं ब्रिटिश व्यापारियों और यूरोपीय फर्मोंकी इस उचित माँगसे सर्वथा सहमत हूँ कि उनके साथ किसी प्रकारका जातीय भेद-भाव नहीं होना चाहिए। दक्षिण आफ्रिकाकी महान् सरकारसे मुझे उसके रंगभेद और भारतीयोंके प्रति भेदभाव-मूलक कानूनके विरोधमें २० वर्षसे अधिक समयतक लड़ना पड़ा था। इसलिए, भारतमें अभी मौजूद अथवा भविष्यमें आना चाहनेवाले ब्रिटिश मित्रोंके विरुद्ध उसी प्रकारके भेदभावका मैं कभी समर्थन नहीं कर सकता। मैं यह बात कांग्रेसकी ओरसे भी कह रहा हूँ। कांग्रेसका भी यही मत है।

इसलिए इस सूत्रके बजाय, मैं एक ऐसा सूत्र सुझाता हूँ, जिसके लिए मुझे वर्षों जनरल स्मट्सके साथ लड़नेका सुख और सौभाग्य प्राप्त हुआ था। उसमें सुधार हो सकता है; किन्तु मैं उसे इस समिति और विशेषत: यूरोपीय मित्रोंके आगे केवल विचारार्थ पेश कर रहा हूँ। "राज्यके जन्मत: भारतीय नागरिकोंपर जो प्रतिबन्ध लगाया नहीं गया है, ऐसा कोई प्रतिबन्ध भारतमें कानूनके अनुसार रहनेवाले अथवा प्रवेश करनेवाले किसी भी व्यक्तिपर केवल" — 'केवल' शब्दपर मैं जोर देता हूँ — "जाति, रंग अथवा धर्मके कारण नहीं लगाया जायेगा।" मैं समझता हूँ कि यह सबके लिए सन्तोषप्रद सूत्र है। कोई भी सरकार इससे आगे नहीं जा सकती। मैं इस सूत्रके गर्भित अर्थपर संक्षेपमें अपने विचार प्रकट करना चाहता हूँ। मैं खेदके साथ यह कहता हूँ कि गत वर्षके सूत्रसे लॉर्ड रीडिंगने जो अर्थ निकाला था, अथवा निकालना चाहा था, उससे यह गर्भित अर्थ भिन्न है। इस सूत्रसे एक भी ब्रिटिश तो क्या यूरोपीयतक के साथ, उसके ब्रिटिश अथवा यूरोपीय होनेके कारण, कोई भेद-भाव नहीं होगा। मैं यहाँ ब्रिटिश अथवा अन्य यूरोपीय अथवा अमेरिकी या जापानीके बीच कोई भेदभाव करना नहीं चाहता हूँ। ब्रिटिश उपनिवेशोंने मुख्यत: रंग और जाति-भेदपर आधारित प्रतिबन्धक कानून बनाकर मेरी विनम्र सम्मतिमें, अपनी कानून-संहिताओंको जिस प्रकार दूषित किया है, मैं उसका अनुकरण नहीं करूँगा।

मुझे यह विचार प्रिय है कि स्वतन्त्र भारत समस्त संसारको एक दूसरी ही तरहका पाठ पढ़ायेगा, एक दूसरे ही प्रकारका उदाहरण उसके सामने रखेगा। मैं यह कभी नहीं चाहूँगा कि भारत सर्वथा एकाकी जीवन व्यतीत करे और इस प्रकार अपने चारों ओर गढ़-कोट खड़े कर ले और अपनी सीमामें किसीको प्रवेश अथवा व्यापार न करने दे। किन्तु इतना कह चुकनेके बाद, जैसा कि मैं पहले कह चुका हूँ, परिस्थितियोंको [सबके हितमें] समान करनेके लिए की जाने योग्य कई बातें

मेरे मनमें हैं। मुझे भय है, पूँजीपतियों, जमींदारों, तथाकथित ऊँची जातियों और उसके बाद अन्तमें वैज्ञानिक विधिसे ब्रिटिश शासकोंने दलितों और पतितोंको जिस कीचड़में डुबो दिया है, उससे उन्हें निकालनेके लिए भारत आगामी अनेक वर्षोंतक कानून बनानेमें संलग्न रहेगा। यदि हमें इन लोगोंको कीचड़में से निकालना है तो अपना घर व्यवस्थित करनेके लिए इन लोगोंका विचार पहले करना और जिस बोझके नीचे ये कुचले जा रहे हैं, उससे इन्हें छुटकारा दिलाना भी राष्ट्रीय सरकारका आवश्यक कर्त्तव्य होगा। और यदि जमींदार, धनिक अथवा विशेषाधिकार-भोगी लोग -- वे चाहे यूरोपीय हों या भारतीय -- यह पायें कि उनके साथ भेद-भावपूर्ण बरताव हो रहा है तो मैं उनके प्रति सहानुभूति प्रकट करूँगा; किन्तु मुझसे सहायता हो सकती होगी तो भी मैं उनकी सहायता नहीं करूँगा, क्योंकि मैं तो उस प्रक्रियामें उनकी और सहायता चाहूँगा; बिना उनकी सहायताके मैं इन लोगोंको कीचड़में से बाहर नहीं निकाल सकूँगा।

आप चाहें तो अछूतोंकी दशापर नजर डाल सकते हैं। कानूनको उनकी सहायताके लिए आना है और उनके लिए मीलों क्षेत्र अलग निकालना है। आज उनके पास जरा भी जमीन नहीं है। आज वे तथाकथित ऊँची जातियोंकी दयापर, और, मैं कह सकता हूँ, सरकारकी दयापर जीवित हैं। वे आज एक जगहसे दूसरी जगह खदेड़े जा सकते हैं, और इसकी न तो वे शिकायत कर सकते हैं, न कानूनकी सहायता ही प्राप्त कर सकते हैं। इसलिए विधानमण्डलका पहला काम यह देखना होगा कि स्थितिको कुछ हदतक समान करनेके लिए, इन लोगोंको मुक्त हस्तसे अनुदान दिये जायें।

ये अनुदान किनकी जेबोंसे आयेंगे? ईश्वरकी जेबसे तो आयेंगे नहीं। राज्यके लिए ईश्वर आकाशसे रुपयोंकी वर्षा नहीं करेगा। स्वभावतः यह रकम धनिक-वर्गोंके पाससे ही आयेगी, जिनमें यूरोपीय भी शामिल हैं। क्या वे कहेंगे कि यह भेद-भाव है? वे यह देख सकेंगे कि उनके साथ यह भेद-भाव उनके यूरोपीय होनेके कारण नहीं है, बल्कि इसलिए है कि उनके पास पैसा है और दूसरोंके पास नहीं है। इस-लिए यह धनिकों और गरीबोंकी लड़ाई होगी। और यदि डर इसी बातका हो और यदि ये सब वर्ग करोड़ों मूक मानवोंके सिरपर बन्दूक तानकर कहें कि जबतक तुम हमारी मिल्कियत और हमारे अधिकारोंकी अक्षुण्णताका निश्चित वचन नहीं दे देते तबतक तुम्हें स्वराज्य नहीं मिलेगा तो मुझे भय है कि राष्ट्रीय सरकारका जन्म ही न हो सकेगा।

मैं समझता हूँ कि कांग्रेसका ध्येय और जो सूत्र मैंने बताया है उसका गर्भित अर्थ क्या है, इसका मैंने काफी संकेत दे दिया है। वे यह चीज कभी नहीं पायेंगे कि क्योंकि वे अंग्रेज, यूरोपीय, जापानी अथवा किसी अन्य जातिके हैं, इसलिए उनके साथ भेद-भाव किया जाता है। जिस आधारपर उनके साथ भेद-भाव किया जायेगा, वही आधार जन्मतः भारतीय नागरिकोंके साथ भेद-भावका भी होगा। इसलिए मेरे पास जल्दीमें तैयार किया हुआ एक और सूत्र है; जल्दीमें तैयार किया हुआ इसलिए

कि उसे मैंने यहीं, लॉर्ड रीडिंग और सर तेजबहादुर सप्रूका भाषण सुनते-सुनते तैयार किया है। यह दूसरा सूत्र जो मेरे पास है, वह वर्त्तमान अधिकारोंके सम्बन्धमें है :

> किसी भी वर्त्तमान न्यायार्जित हितमें, जो आम तौरपर राष्ट्रके सर्वोच्च हितोंके विरुद्ध नहीं है, इस तरहके हितोंपर लागू होनेवाले कानूनके सिवा और किसी तरह हस्तक्षेप नहीं किया जायेगा।

यहाँ भी मेरे दिमागमें जो-कुछ है, वह मैं संक्षेपमें बताऊँगा। आज ब्रिटिश सरकारपर जो दायित्व हैं, आगामी सरकारके उन्हें ग्रहण करनेसे सम्बन्धित कांग्रेस-प्रस्तावमें जो बात आप देखते हैं, निश्चय ही वह मेरे मनमें भी है। जिस प्रकार हमारी यह माँग है कि इन दायित्वोंको अपने ऊपर लेनेसे पूर्व एक निष्पक्ष न्यायाधिकरण द्वारा इनकी जाँच होनी चाहिए, उसी तरह आवश्यकता होनेपर वर्त्तमान अधिकारोंकी भी न्यायिक जाँच होनी चाहिए। इसलिए प्रश्न दायित्वोंको अस्वीकार करनेका नहीं है, बल्कि उन्हें उनकी जाँच करके स्वीकार करनेका है। यहाँ हममें कुछ लोग ऐसे हैं जिन्होंने यूरोपीयों द्वारा भोगे जा रहे विशेषाधिकारों तथा एकाधिकारोंका अध्ययन किया है। किन्तु अकेले यूरोपीयोंकी बात नहीं है। भारतीयोंमें भी ऐसे लोग हैं — मेरे ध्यानमें निश्चय ही अनेक ऐसे भारतीय हैं — जो आज ऐसी भूमिपर कब्जा किये हुए हैं जो उन्हें राष्ट्रकी किसी सेवाके बदलेमें नहीं मिली है। मैं यह भी नहीं कह सकता कि वह उन्हें सरकारकी सेवाके बदलेमें मिली है, क्योंकि मैं यह नहीं मानता कि उससे सरकारको कुछ लाभ पहुँचा है, बल्कि वह उन्हें किसी अधिकारीकी सेवाके बदलेमें दी गई है। यदि आप मुझसे कहें कि राज्य इन रियायतों और विशेषाधिकारोंकी जाँच नहीं करेगा तो मैं आपसे फिर कहूँगा कि तब अकिंचनोंकी ओरसे, जिनसे उनके अधिकार छीन लिये गये हैं उनकी ओरसे, शासनतन्त्र चलाना असम्भव हो जायेगा। इसलिए आप देखेंगे कि इसमें यूरोपीयोंके सम्बन्धमें कुछ भी नहीं कहा गया है। दूसरा सूत्र भी यूरोपीयोंपर उतना ही लागू होता है जितना भारतीयोंपर, या यों कहिए जितना सर पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास और सर फीरोज सेठनापर लागू होता है। यदि इन्होंने सरकारी अधिकारियोंकी सेवा करके रियायतें हासिल की होंगी, मीलों जमीन प्राप्त की होगी, तो यदि शासनकी लगाम मेरे हाथमें हुई तो मैं तुरन्त इन्हें उससे बेदखल कर दूँगा। ये भारतीय हैं इसलिए मैं इनका लिहाज नहीं करूँगा। उतनी ही तत्परतासे मैं सर ह्यबर्ट कार अथवा श्री बेन्थलको भी बेदखल कर दूँगा, फिर चाहे वे कितने ही प्रशंसनीय क्यों न हों और मेरे प्रति कितना ही मैत्रीभाव क्यों न रखते हों। वे भले ही मुझे पचास भोज दें, किन्तु इससे उन्हें बेदखल करनेमें मेरे लिए कोई बाधा नहीं होगी। मैं आपको यह विश्वास दिला देना चाहता हूँ कि कानून किसी भी व्यक्तिके प्रति पक्षपात नहीं करेगा। यह विश्वास दिलानेके बाद, इससे आगे मैं नहीं जा सकता। इसलिए 'न्यायार्जित' शब्दका वास्तविक गर्भित अर्थ यह है कि प्रत्येक हित निष्कलंक और सीजरकी पत्नीके समान सन्देहसे परे होना चाहिए। इसलिए जब ये सारी

बातें उस सरकारकी नजरमें आयेंगी तो हम इनकी जाँचकी अपेक्षा रखेंगे। इसके बाद 'राष्ट्रके सर्वोच्च हितोंके विरुद्ध न हो', ये शब्द आते हैं। मेरे विचारमें कई एकाधिकार ऐसे हैं जो निस्सन्देह न्यायतः प्राप्त हैं, किन्तु जो राष्ट्रके सर्वोच्च हितोंके विरुद्ध पैदा किये गये हैं। मैं आपको एक उदाहरण देता हूँ, जिससे आपका कुछ मनोरंजन होगा, किन्तु जो किसी व्यक्ति या वर्गके पक्ष-विपक्षमें नहीं है। इस नई दिल्ली नामधारी सफेद हाथीको लीजिए। इसपर करोड़ों रुपये खर्च हुए हैं। मान लीजिए कि भावी सरकार इस निर्णयपर आती है कि यह सफेद हाथी जब अपने पास है तो इसका कुछ उपयोग होना चाहिए। कल्पना कीजिए कि पुरानी दिल्लीमें प्लेग अथवा हैजा फैला है और हमें गरीबोंके लिए अस्पतालोंकी जरूरत है। इस स्थितिमें हम क्या करें? क्या आप समझते हैं कि राष्ट्रीय सरकार अस्पताल या ऐसी ही चीजें बनवा सकेगी? नहीं, ऐसा कुछ नहीं होगा। हम उन इमारतोंपर अधिकार करेंगे, इन प्लेगग्रस्त रोगियोंको उनमें रखेंगे और उनका अस्पतालकी तरह उपयोग करेंगे; क्योंकि मेरे खयालसे वे इमारतें राष्ट्रके सर्वोच्च हितोंके विरुद्ध हैं। वे भारतके करोड़ों लोगोंकी प्रतिनिधि नहीं हैं। वे यहाँ इस मेज़के पास बैठे धनिक लोगोंकी प्रतिनिधि हो सकती हैं — वे भोपालके नवाब साहब अथवा सर पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास, सर फीरोज सेठना अथवा सर तेजबहादुर सप्रूकी प्रतिनिधि हो सकती हैं। किन्तु जिन लोगोंके पास रातको सोनेके लिए स्थान नहीं है और खानेके लिए रोटीका टुकड़ा नहीं है, उनकी वे प्रतिनिधि नहीं हो सकतीं। इसलिए यदि राष्ट्रीय सरकार इस निर्णयपर पहुँचती है तो, चाहे किसीके भी हित उससे सम्बद्ध हों, वे इमारतें ले लीं जायेंगी, और मैं आपको बता देना चाहता हूँ कि वे बिना किसी मुआवजेके ले ली जायेंगी। क्योंकि यदि आप इस सरकारसे मुआवजा दिलाना चाहेंगे तो उसका अर्थ होगा माधोको देनेके लिए ऊधोसे छीनना, और वह एक असम्भव बात होगी।

आपके सामने यह कड़वी गोली रखनेके लिए मैं आपका मनोरंजन करनेकी कोशिश कर रहा हूँ, क्योंकि कांग्रेस जैसी सरकारकी कल्पना करती है वैसी सरकार यदि स्थापित होनेवाली हो तो आपको यह कड़वी गोली निगलनी ही होगी। आपको धोखा देनेकी मेरी जरा भी इच्छा नहीं है। यहाँसे कुछ ले जानेके लिए, आपको यह विश्वास दिलाकर कि सब बातें सर्वथा ठीक होंगी, मैं आपको धोखा देना नहीं चाहता हूँ। कांग्रेसकी ओरसे मैं सारी बाजी आपके सामने रख देना चाहता हूँ। मैं मनमें किसी तरहकी कोई बात छिपाकर रखना नहीं चाहता हूँ। इसके बाद यदि कांग्रेसकी नीति आपको स्वीकार हो तो मुझे अत्यन्त आनन्द होगा। किन्तु यदि आपको वह स्वीकार नहीं है, यदि आज मुझे ऐसा महसूस होता है कि मैं आपके हृदयको छू नहीं सकता और अपनी बात आपसे मनवा नहीं सकता, तो जबतक आप सबका हृदय-परिवर्त्तन नहीं हो जाता और आप भारतके करोड़ों लोगोंको यह अनुभव करनेका मौका नहीं देते कि अन्तमें उन्हें राष्ट्रीय सरकार मिल गई है, तबतक कांग्रेसको भटकते रहना और आपके मत-परिवर्त्तनका प्रयत्न करते रहना होगा।

इस प्रस्तावकी अन्तिम दो पंक्तियोंके बारेमें अबतक किसीने एक शब्द भी नहीं कहा है। ये पंक्तियाँ हैं :

यह स्वीकार किया गया है कि भारतमें यूरोपीय समुदायको फौजदारी मुकदमोंमें जो अधिकार हैं, वे कायम रहने चाहिए।

मुझे यह स्वीकार कर लेना चाहिए कि इसके सभी गर्भित अर्थोंका मैं अध्ययन नहीं कर सका हूँ। मुझे यह कह सकनेमें खुशी है कि कुछ दिनोंसे सर ह्यूबर्ट कार, श्री बेन्थल और कई मित्रोंके साथ मैं मित्रतापूर्ण — सर्वथा मित्रतापूर्ण — और गैर-सरकारी बातचीत कर रहा हूँ। मैं उनके साथ इसी विषयकी चर्चा कर रहा था, और मैंने उनसे पूछा कि इन दोनों बातोंका क्या अर्थ है। उन्होंने कहा कि दूसरे समुदायोंके लिए भी यही बात है। मैं यह चीज निश्चित रूपसे नहीं जान सका कि दूसरे समुदायोंके लिए भी यही बात होनेका क्या अर्थ है। मेरा खयाल है, इसका यह अर्थ है कि दूसरे समुदाय भी अपनी जूरीकी माँग कर सकते हैं। इसका सम्बन्ध जूरीके जरिये होनेवाले मुकदमोंसे है। मुझे भय है कि मैं इस सूत्रका समर्थन नहीं कर सकता।

श्री जिन्ना : श्री गांधी, क्या मैं आपकी भूल सुधार सकता हूँ? यह केवल जूरीसे ही सम्बन्धित नहीं है, बल्कि न्यायाधिकरणों, यूरोपीयों और भारतीयोंके मुकदमोंकी सुनवाई करनेवाले न्यायाधिकरणोंसे भी इसका सम्बन्ध है और अन्य कई भेद भी हैं। अकेली जूरीकी ही बात नहीं है।

गांधीजी : मुझे यह पता नहीं था। इसीलिए मैंने कहा कि मैंने इसका अध्ययन नहीं किया है। इसमें यदि कुछ और हो तो मेरे अज्ञानके लिए आप मुझे क्षमा करें। किन्तु मैं ऐसे आरक्षणोंका समर्थन नहीं कर सकता। मेरा खयाल है कि राष्ट्रीय सरकारको ऐसे प्रतिबन्धोंसे जकड़ रखना सम्भव नहीं है। भावी भारतीय राष्ट्र बननेवाले आजके सभी समुदायोंको सद्भावसे श्रीगणेश करना चाहिए, परस्पर विश्वाससे श्रीगणेश करना चाहिए, अन्यथा श्रीगणेश करना ही नहीं चाहिए। यदि हमसे कहा जाये कि हमें उत्तरदायी शासन नहीं मिल सकता, तो वह स्थिति समझमें आ सकती है। किन्तु हमसे कहा जाता है कि ये सब आरक्षण और संरक्षण रहने ही चाहिए। वह स्वतन्त्रता और उत्तरदायी शासन नहीं होगा, वह तो केवल संरक्षण होगा। ये संरक्षण सारी सरकारको खा जायेंगे। मैं आज प्रातः इससे मिलती-जुलती किसी उपमाकी खोजमें था और इस निर्णयपर पहुँचा कि यदि ये सब संरक्षण दिये जानेवाले हों और यहाँकी सब बातें ठोस रूप धारण करनेवाली हों और हमसे कहा जाये कि हमें उत्तरदायी शासन मिलनेवाला है, तो वह वैसा ही उत्तरदायी शासन होगा जैसा कि जेलमें कैदियोंको प्राप्त होता है। जेलकी कोठरियोंमें ताला लगते और जेलरके रवाना होते ही कैदियोंको पूर्ण स्वतन्त्रता मिल जाती है। १० अथवा ७ वर्ग फुटकी कोठरीके अन्दर कैदियोंको पूर्ण स्वतन्त्रता होती है। जिसमें जेलर अपने अधिकारोंकी आरामसे रक्षा कर रहे हों, वैसी पूर्ण स्वतन्त्रता मैं नहीं चाहता।

इसलिए अपने यूरोपीय मित्रोंसे मैं अपील करता हूँ कि उन्हें अपने अधिकारों के संरक्षणका यह विचार छोड़ देना चाहिए। मैं यह सुझाव देनेका साहस करता हूँ कि मैंने जो दो सूत्र पेश किये हैं, वे स्वीकार कर लिये जायें। इन्हें आप जिस तरह चाहें काट-छाँटकर ठीक कर सकते हैं। यदि इनकी शब्द-योजना सन्तोषजनक न हो तो खुशीसे दूसरे शब्द सुझाइए। किन्तु मैं यह कहनेका साहस करता हूँ कि इन निषेधात्मक सूत्रोंसे बाहर, जिनमें आपके विरुद्ध कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाया गया है, आप नहीं जा सकते — क्या मैं कहूँ कि इससे अधिक माँगनेका आप साहस नहीं कर सकते। यह तो हुआ वर्त्तमान हितों और भावी व्यापारके सम्बन्धमें।

श्री जयकर कल मूल उद्योगोंके सम्बन्धमें बातचीत कर रहे थे और उसमें उन्होंने जो भावनाएँ व्यक्त की हैं मैं उनसे अपनी पूरी सहमति प्रकट करना चाहता हूँ। कांग्रेस उद्योगोंको कितना महत्त्व देती है, मैं समझता हूँ, यह बताकर आपका समय खर्च करनेकी आवश्यकता नहीं है। कांग्रेसकी धारणा यह है कि मूल उद्योगोंको यदि राज्य अपने अधिकारमें न भी ले तो कमसे-कम उनके संचालन, प्रबन्ध और विकासमें तो उसकी आवाज प्रमुख होनी ही चाहिए।

भारत-जैसे अविकसित देशके बारेमें इंग्लैंड-जैसे अत्यन्त विकसित उद्योग-प्रधान द्वीपकी तरह नहीं सोचना चाहिए। मेरे विचारमें आज जो बात ग्रेट ब्रिटेनके लिए हितकारी है, वही भारतके लिए विष-रूप है। भारतको अपना ही अर्थशास्त्र, अपनी ही नीति, अपनी ही उद्योग-पद्धति और अन्य सब अपना ही विकसित करना है। इसलिए मूल उद्योगोंका जहाँतक सम्बन्ध है, मुझे भय है कि अकेले ब्रिटिश लोगोंको ही नहीं, अन्य अनेकोंको यह लगेगा कि उनके साथ न्याय नहीं हो रहा है। किन्तु राज्यके खिलाफ 'न्याय' का क्या अर्थ है, मैं नहीं जानता।

और तटीय व्यापारके बारेमें भी यही बात है। कांग्रेसकी राष्ट्रीय तटीय व्यापारको विकसित करनेकी इच्छाके साथ पूरी-पूरी सहानुभूति है। किन्तु यदि तटीय व्यापार-सम्बन्धी विधेयकमें यूरोपीयोंके विरुद्ध कुछ भेद-भाव किया गया होगा तो मैं यूरोपीयोंका साथ दूँगा और उस विधेयक या प्रस्तावका, जो अंग्रेजोंके विरुद्ध उनके अंग्रेज होनेके कारण भेद-भाव करता है, विरोध करूँगा। किन्तु वहाँ विशाल स्वार्थ पैदा हो गये हैं। बंगालमें मैंने नदी-मार्गोंसे काफी सफर किया है और वर्षों पहले इरावतीपर भी सफर किया है। इसलिए इस व्यापारके सम्बन्धमें मैं कुछ जानता हूँ। इन विशाल कार्पोरेशनोंने रियायतों, विशेषाधिकारों, सरकारी कृपा द्वारा, आप उन्हें कुछ भी कहिए, जो कम्पनियाँ खड़ी कर ली हैं और जो व्यापार जमा लिया है, उसका कोई जरा भी मुकाबला नहीं कर सकता।

चटगाँव और रंगूनके बीच नई उगती एक कम्पनीके सम्बन्धमें आपमें से कुछने सुना होगा। इस कम्पनीके डायरेक्टर, कठिनाइयोंसे जूझते बेचारे मुसलमान, रंगूनमें मुझसे मिले और कहने लगे कि क्या मैं उनके लिए कुछ कर सकता हूँ। उनके लिए मेरे हृदयमें पूरी-पूरी सहानुभूति थी; किन्तु कुछ किया नहीं जा सकता था। क्या हो सकता था? उनके मुकाबलेमें जबरदस्त ब्रिटिश इंडिया स्टीम नेवीगेशन कम्पनी

खड़ी है। उसने इस उगती हुई कम्पनीको दबानेके लिए दरमें कमी कर दी है, और लगभग कुछ भी किराया लिये बिना मुसाफिरोंको ले जाती है। मैं इस प्रकारके एकके-बाद-एक अनेकों उदाहरण दे सकता हूँ। इसलिए प्रश्न यह नहीं है कि यह ब्रिटिश कम्पनी है। इस व्यवसायको हड़पनेके विचारसे स्थापित कोई भारतीय कम्पनी होती तो वह भी ऐसा ही करती। मान लीजिए कोई भारतीय कम्पनी अपनी पूँजी बाहर ले जाती है — जैसा कि आज भी बहुत-से भारतीय, जो अपनी पूँजी भारतमें लगानेके बजाय भारतसे बाहर लगाते हैं, कर रहे हैं। मान लीजिए, भारतीयोंका कोई विशाल कार्पोरेशन इस भयसे कि राष्ट्रीय सरकार सही नीतिपर नहीं चल रही है, अपनी रकम सुरक्षित रखनेके लिए अपना सब मुनाफा ले जाकर किसी दूसरे देशमें लगाता है। एक कदम और आगे बढ़िए और मान लीजिए कि ये भारतीय डायरेक्टर अपने कारोबारको अतिशय वैज्ञानिक, सम्पूर्ण और त्रुटिरहित ढंगसे संगठित करनेके लिए, जितना सम्भव हो सके, यूरोपीय कौशलका उपयोग करें और कठिनाइयोंसे जूझती इन कम्पनियोंको अस्तित्वमें ही न आने दें तो मैं अवश्य अपनी आवाज उठाऊँगा और चटगाँवकी-जैसी कम्पनीकी रक्षाके लिए कानून बनवाऊँगा।

कुछ मित्र इरावतीमें अपने जहाजतक नहीं चला सके। उन्होंने इस बातका विश्वास दिलानेके लिए कि यह बात सर्वथा अशक्य हो गई, मुझे सुनिश्चित प्रमाण दिये। उन्हें लाइसेंस नहीं मिल सके, और व्यक्ति जिन साधारण सुविधाओंको पानेका अधिकारी है, वे तक नहीं मिल सकीं। हममें से हरएक जानता है कि पैसा कितना-कुछ खरीद सकता है, प्रतिष्ठा कितना-कुछ खरीद सकती है, और जब ऐसी प्रतिष्ठा बन जाये जो सब नन्हें पौधोंको सुखा डालती हो तो, ४२ वर्ष पूर्व कहे हुए सर जॉन गोर्स्टके शब्दोंमें, ऊँचे वृक्षोंको उड़ा देना पड़ता है। ऊँचे वृक्ष इन नन्हें पौधोंको सुखा दें, यह नहीं होने देना चाहिए। तटीय व्यापारके सम्बन्धमें वास्तविक माँग यही है। सम्भव है, इस विधेयककी भाषा अटपटी हो। वह कोई बात नहीं, किन्तु मेरा खयाल है, इसका सार-तत्त्व बिलकुल सही है।

अब अन्तिम बात नागरिकताके सम्बन्धमें है। नेहरू-रिपोर्टमें आपको इसकी व्याख्या मिलेगी। स्वभावतः स्थितियाँ ज्यों-ज्यों पैदा होती गईं, नेहरू-समितिको उनका विचार करना पड़ा, और इसलिए मूल वर्णनमें पीछेसे कई परिवर्त्तन किये गये। किन्तु इस समितिको यह समझ लेना चाहिए कि नेहरू-रिपोर्ट अब पिछड़ गई है। मुझे यह कहते दुःख होता है; पर वास्तविकता यही है। स्वयं स्वर्गीय पण्डित मोती-लाल नेहरूको भी यही कहना पड़ा था। इसका कारण यह नहीं है कि हम नेहरू-रिपोर्टको पीछे डालना चाहते थे। नेहरू-रिपोर्ट निस्सन्देह अनेक स्थितियोंके बीच एक समझौता है। उस समितिका सदस्य न होते हुए भी, जो-कुछ होता था उसकी पूरी खबर मुझे मिलती रहती थी, क्योंकि उस समय मैं भारतमें था और उस समितिके सदस्योंके सम्पर्कमें था। इसलिए वह रिपोर्ट और वह समिति किस तरह अस्तित्वमें आई, इसका कुछ इतिहास मैं जानता हूँ। उस समितिके इतिहासके विस्तारमें जाकर मैं आपको उबाना नहीं चाहूँगा। किन्तु आप देखेंगे कि उस रिपोर्टका आधार

यह विचार है कि हमें औपनिवेशिक दर्जा मिलेगा। किन्तु कांग्रेस इससे कई कदम आगे बढ़ गई है। हिन्दू-मुस्लिम-सिख प्रश्नके सम्बन्धमें, तथा इसी तरह अन्य अनेक बातोंके सम्बन्धमें कांग्रेसको उस रिपोर्टको भुला देना पड़ा है। यद्यपि नेहरू-रिपोर्ट, और उससे पहले नेहरू-समिति, कांग्रेसकी ही कृति है, किन्तु इससे मैं यह नहीं कह सकता कि उसमें प्रत्येक बातको हम अब स्वीकार कर सकेंगे। इससे आगे मैं अभी जाना नहीं चाहता। 'नागरिक'की व्याख्या करना अत्यन्त दुष्कर कार्य है। कांग्रेसकी आजकी मनोदशाको, जैसा मैं उसे समझता हूँ, देखते हुए कांग्रेस क्या उचित समझेगी अथवा मुझे क्या उचित प्रतीत होगा, यह मैं आज इसी क्षण कहनेकी जिम्मेदारी नहीं ले सकता। यह बात ऐसी है, जिसमें मैं सर तेजबहादुर सप्रू तथा अन्य मित्रोंके साथ बातचीत करना और उनके मनकी बात जानना चाहूँगा, क्योंकि मुझे यह स्वीकार कर लेना चाहिए कि इस चर्चासे मैं इस बातकी तहतक नहीं पहुँच सका हूँ। मैंने कांग्रेसकी स्थिति बिलकुल स्पष्ट कर दी है कि हमें जातीय भेद-भावकी जरा भी आवश्यकता नहीं है। किन्तु इस स्थितिको स्पष्ट कर देनेके बाद 'नागरिक' शब्दकी व्याख्याके विषयमें कांग्रेसके मतका तुरन्त निर्णय देना मेरे लिए आवश्यक नहीं रह जाता। इसलिए नागरिक शब्दके विषयमें मैं इतना ही कहूँगा कि अभी इस व्याख्याके सम्बन्धमें अपना मत मैं स्थगित ही रखूँगा।

इतना कहनेके बाद एक बात कहकर मैं अपना वक्तव्य समाप्त करता हूँ। यूरोपीय मित्रोंको सन्तोष दे सकनेवाला एक सर्वसम्मत सूत्र खोज निकालनेके बारेमें मैं निराश नहीं हुआ हूँ। मैं समझता हूँ कि जिस बातचीतमें भाग लेनेका मुझे सौभाग्य मिला, वह अभी भी जारी रहेगी। मेरी उपस्थितिकी आवश्यकता होगी तो उस छोटी समितिकी बैठकमें मैं अभी भी हाजिर हूँगा।

विचार उसे बढ़ाने, उसकी अनौपचारिकता थोड़ी कम करने और एक सर्व-सम्मत आधार खोज निकालनेका ही है।

मैंने जो-कुछ कहा उसके बावजूद, एक सर्वसम्मत सूत्र खोज निकालनेके बारेमें मैं निराश नहीं हूँ। किन्तु यह आशा प्रकट करनेके बाद, मैं फिर कहता हूँ कि जहाँतक मैं समझ सकता हूँ, मैं कोई ऐसी विस्तृत योजना सोच नहीं सकता जो संविधानमें शामिल की जा सके। संविधानमें तो इस-जैसा कोई सूत्र ही शामिल हो सकता है और वही सब अधिकारोंका आधार हो सकता है।

आप देखेंगे कि इसमें प्रशासकीय ढंगसे कुछ करनेकी कल्पना नहीं है। संघ-न्यायालय और सर्वोच्च न्यायालयके सम्बन्धमें अपनी आशा मैं प्रकट कर चुका हूँ। मेरे लिए संघ न्यायालय ही सर्वोच्च न्यायालय है; वही अपीलका अन्तिम न्यायालय है, उससे आगे कोई अपील नहीं हो सकेगी। वही मेरी प्रिवी कौंसिल है और वही स्वतन्त्रताका आधार-स्तम्भ है। यह वह अदालत है जहाँ सब व्यक्ति जरा भी शिकायत होने पर जा सकते हैं। ट्रांसवालके एक महान् कानून-विशेषज्ञने — ट्रान्सवाल तथा दक्षिण आफ्रिकाने सामान्यतः बहुत बड़े-बड़े कानून-विशेषज्ञ पैदा किये हैं — जिनके पास मैं अपनी युवावस्थामें सहायताके लिए जाया करता था, एक अत्यन्त कठिन मुकदमेके

सम्बन्धमें एक बार मुझसे कहा था, "यद्यपि इस समय भले ही आशा न हो, किन्तु मैं तुमसे कहता हूँ, अपने जीवनमें मैंने एक बात सदा नजरके सामने रखी है, अन्यथा मैं वकील हो ही नहीं सकता था, और वह यह कि कानून हम वकीलोंको सिखाता है कि ऐसा कोई भी अन्याय नहीं है जिसका अदालतमें कुछ भी इलाज न मिलता हो, और जो न्यायाधीश यह कहें कि कोई इलाज नहीं है, उन न्यायाधीशोंको तुरन्त ही न्यायासनसे उतार देना चाहिए।" लॉर्ड चांसलर, आपके प्रति पूरा सम्मान रखते हुए, मैं यही बात कहता हूँ।

इसलिए मैं चाहता हूँ कि हमारे यूरोपीय मित्र इस बातका विश्वास रखें कि जिस तरह हम, सम्राट्के सलाहकार मन्त्रियोंकी कृपा यदि न हो तो, खाली हाथ लौटनेकी अपेक्षा रखते हैं, उस तरह भावी संघ न्यायालय उन्हें खाली हाथ नहीं लौटायेगा। मैं अभी भी आशा कर रहा हूँ कि हम अपनी बात उन्हें सुना सकेंगे और उनका सद्भाव जाग्रत कर सकेंगे; और तब हम अपनी जेबोंमें कुछ ठोस चीज लेकर जानेकी आशा कर सकेंगे। किन्तु हम अपनी जेबोंमें कुछ ठोस चीज लेकर चाहे जायें या न जायें, पर मुझे आशा है कि यदि मेरे स्वप्नोंका संघ न्यायालय स्थापित होता है, तो यूरोपीय और प्रत्येक व्यक्ति, सभी अल्पसंख्यक, यह विश्वास रख सकते हैं कि मुझ-जैसा अदना व्यक्ति भले ही उन्हें निराश करे, पर वह न्यायालय उन्हें निराश नहीं करेगा।

अध्यक्ष: श्री गांधी, इस भाषणके लिए हम आपके बहुत ही आभारी हैं। यदि आप लोग मुझे यह कहनेकी अनुमति दें तो कहूँ कि अपने आदर्शोंको उन्होंने जिस उत्कटता और गम्भीरतासे रखा है, उससे हर कोई अवश्य प्रभावित होगा और मैं उन्हें सचमुच बहुत धन्यवाद देता हूँ। ये इन दो सूत्रोंको मुझे देनेकी कृपा करें।

सर तेजबहादुर सप्रू: मैं महात्मा गांधीसे उनके अपने भाषणके एक अंशको समझानेके लिए कहना चाहता हूँ, क्योंकि उसके सम्बन्धमें मेरे मनमें कुछ सन्देह है। क्या वे यह सुझाव देते हैं कि भावी राष्ट्रीय सरकारको प्रत्येक व्यक्तिके स्वामित्वके अधिकारकी जाँच करनी चाहिए, और यदि ऐसा है तो वह स्वामित्वका अधिकार किसी खास मियादके अन्दर मिला होना चाहिए या नहीं? इस अधिकारकी जाँचके लिए वे कैसा तन्त्र स्थापित करना चाहते हैं, और वे कुछ मुआवजा देना चाहेंगे या राष्ट्रीय सरकार उनके अथवा बहुमतके विचारके अनुसार जिस मिल्कियतको अनुचित रूपसे प्राप्त की गई समझेगी, उसे जब्त कर लेगी?

गांधीजी: यदि आप मुझे अनुमति दें तो मैं निश्चय ही इन प्रश्नोंका, जो बहुत ही वाजिब हैं, उत्तर दूँगा। वस्तुतः मैं [इस सम्बन्धमें] अपने विचार प्रकट कर चुका हूँ। जहाँतक मैं समझता हूँ, आशय यह नहीं है कि यह काम प्रशासनको करना चाहिए; जो-कुछ भी होगा, खुलेआम होगा — उसमें कहीं कोई बेईमानी नहीं होगी।

न्यायतन्त्र द्वारा ही वह होगा। ये सब दावे . . .

सर तेजबहादुर सप्रू: यही मैं जानना चाहता हूँ। वह न्यायतन्त्र कैसा होगा?

गांधीजी : अभी इस समय तो मैंने किसी सीमाका विचार नहीं किया है। मैं समझता हूँ कि अन्यायके विरुद्ध कोई सीमा नहीं है।

सर तेजबहादुर सप्रू : इसलिए आपकी राष्ट्रीय सरकारके आधीन कोई भी स्वामित्व-अधिकार सुरक्षित नहीं है न?

गांधीजी : हमारी राष्ट्रीय सरकारके आधीन इन सब बातोंका निर्णय अदालत करेगी। यदि इन बातोंके सम्बन्धमें कोई शंका है तो मैं समझता हूँ प्रत्येक उचित शंकाका समाधान किया जा सकता है। मुझे यह कहनेमें जरा भी हिचकिचाहट नहीं है कि सामान्यतः यह सूत्र स्वीकार कर लिये जाने योग्य है। जहाँ यह शिकायत हो कि अवैध अधिकार प्राप्त किये हैं, वहाँ अदालतको उन अधिकारोंकी जाँचकी छूट होनी चाहिए। मैं आज यह नहीं कहूँगा कि शासन-सूत्र हाथमें लेकर मैं एक भी अधिकार अथवा एक भी स्वामित्व-अधिकारकी जाँच नहीं करूँगा।

अध्यक्ष : मैं समझता हूँ, आपमें से प्रत्येक जो-कुछ दूसरेने कहा है उसपर बहुत ही सावधानीसे विचार करेगा और हम जो-कुछ आप दोनोंने कहा है उसपर विचार करेंगे।

पं० मदनमोहन मालवीय : महात्मा गांधीके इस बहुत ही विस्तृत भाषणके बाद मैं समितिका ज्यादा समय लेना नहीं चाहूँगा। मैं कुछ बातें बिलकुल साफ कर देना चाहता हूँ। हम सब इसपर सहमत हैं कि भारतमें व्यापार करनेवाले यूरोपीयोंके विरुद्ध भेद-भाव नहीं किया जायेगा और उनके साथ कोई अन्याय नहीं होगा। उनके साथ न्यायसंगत और उचित व्यवहार होगा। इस बातपर सभी सहमत हैं।

अध्यक्ष : आप हमारी अगली बैठकमें अपना भाषण जारी रखें तो कैसा हो?

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबल कांफरेंस (सेकेंड सेशन): प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐंड माइनॉरिटीज़ कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ ४२५-२९

२१६. पत्र : डब्ल्यू० ट्यूडर ओवेनको[1]

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, एस० डब्ल्यू० १
२० नवम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। अगले बुधवारको ५ बजे शामको शायद मुझे फुरसत रहेगी। अगर यह समय आपके लिए ठीक रहे तो कृपया तार द्वारा सूचित करें।

अगर हम मिल सकें तो उन पुरानी याददाश्तोंको ताजा करना मेरे लिए खुशीकी बात होगी।

हृदयसे आपका,

श्री डब्ल्यू० ट्यूडर
ब्रॉडहर्स्ट
लिटिल कॉमन
बेक्सहिल-ऑन-सी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८३२८)से।

२१७. भाषण : लन्दन शाकाहारी मण्डलकी सभामें

लन्दन
२० नवम्बर, १९३१

जब मुझे इस सभामें आनेका निमन्त्रण मिला तो मैं कितना प्रसन्न हुआ, यह बतानेकी जरूरत नहीं। यह स्वाभाविक था, क्योंकि निमन्त्रण पाकर शाकाहारियोंके साथ बनाई गई अपनी सुखद मैत्रीकी स्मृतियाँ मेरे मनमें ताजा हो आईं।[2] अपने दाहिनी ओर श्री हेनरी सॉल्टको देखकर मैं विशेष रूपसे सम्मानित अनुभव करता हूँ। श्री सॉल्टकी पुस्तक 'ए प्ली फॉर वेजिटेरियनिज्म' (शाकाहारकी हिमायत)से ही मैं यह समझ सका कि अपनी वंशानुगत आदत तथा अपनी माँके द्वारा कराई गई प्रतिज्ञाके पालनकी बातको अलग रख दूँ तो भी मेरे लिए शाकाहार क्यों ठीक है। उनकी पुस्तकसे मैंने जाना कि शाकाहारियोंका यह नैतिक कर्त्तव्य क्यों है कि वे

१. ये पहले भारत सरकारके अधिकारी थे, और उसके बाद भरतपुरके नाबालिग महाराजाके संरक्षक नियुक्त हुए।

२. देखिए खण्ड १।

उसी सृष्टिके प्राणियोंका मांस खाकर न जियें जिस सृष्टिके वे स्वयं भी अंग हैं। इसलिए सभामें श्री सॉल्टको देखकर मुझे और भी प्रसन्नता हो रही है।

मैं शाकाहारके अपने विभिन्न अनुभव बतानेमें आपका समय नहीं लेना चाहता, और न उस भारी कठिनाईके बारेमें ही कुछ कहना चाहता हूँ जिसका सामना मुझे पक्का शाकाहारी बने रहनेके लिए इसी लन्दनमें करना पड़ा था। इस सबके बजाय, मेरे मनमें शाकाहारके सम्बन्धमें जो विचार बने हैं, उन्हींमें से कुछका जिक्र मैं आपके सामने करना चाहता हूँ। आजसे चालीस वर्ष पूर्व मैं शाकाहारियोंके साथ खूब मिला-जुला करता था। उन दिनों लन्दनका शायद ही कोई ऐसा निरामिष उपाहारगृह बचा हो जहाँ मैं न गया होऊँ। कुछ तो उत्सुकतावश और कुछ लन्दनमें निरामिष उपाहारगृहोंकी सम्भावनाओंका अध्ययन करनेके लिए मैंने आवश्यक तौरपर उनमें से एक-एकको देखना तय किया। इसलिए स्वभावतः मैं बहुत-से निरामिषाहारियोंके सम्पर्कमें आया। खानेकी मेजोंपर मैंने देखा कि बातचीत घूम-फिरकर आहार और रोगों पर ही आ जाती थी। मैंने यह भी पाया कि निरामिषाहार पर आरूढ़ रहनेको प्रयत्नशील निरामिषाहारी लोगोंको स्वास्थ्यकी दृष्टिसे अपने व्रतपर डटे रहना कठिन लग रहा था। मुझे नहीं मालूम कि आजकल आपमें ऐसी चर्चाएँ होती हैं या नहीं, लेकिन उन दिनों मैं स्वयं निरामिषाहारियोंके बीच और निरामिषाहारियों तथा सामिषाहारियोंके बीच चलनेवाली ऐसी चर्चाओंमें अकसर शामिल हुआ करता था। मुझे डॉ० डेन्समोर तथा स्वर्गीय डॉ० टी० आर० एलिन्सनके बीच हुई ऐसी ही एक चर्चा स्मरण हो आती है। उन दिनों निरामिषाहारियोंको केवल आहार और रोगपर ही बातचीत करनेकी आदत थी। मुझे लगता है कि यह तो कोई काम करनेका बहुत खराब तरीका है। मैं यह भी देखता हूँ कि जो किसी रोगसे रुग्ण होनेके कारण — अर्थात् विशुद्ध रूपसे स्वास्थ्यके खयालसे — निरामिषाहारी बनते हैं, उन्हींमें ज्यादातर लोग ऐसे होते हैं जो पीछे हट जाते हैं। इससे मैंने यह समझा कि पक्का निरामिषाहारी रहनेके लिए आदमीके पास नैतिक आधार अवश्य होना चाहिए।

सत्य-शोधके प्रयत्नमें मेरे लिए यह बहुत बड़ी खोज थी। अपने प्रयोगोंके दौरान कम उम्रमें ही मैंने यह जान लिया कि विकास-पथकी एकके-बाद-एक मंजिल तय करते जानेमें स्वार्थका आधार सहायक नहीं हो सकता। इसके लिए कोई उच्च उद्देश्य आवश्यक है। मैंने यह भी पाया कि स्वास्थ्यपर कोई निरामिषाहारियोंका ही इजारा नहीं है। मैंने ऐसे बहुत-से लोग देखे जिनका निरामिषाहार या सामिषाहार किसी पर कोई आग्रह नहीं था। सामिषाहारियोंका स्वास्थ्य मैंने आम तौरपर अच्छा देखा है। मैंने यह भी देखा कि कई निरामिषाहारियोंके लिए निरामिषाहारी रह पाना मुश्किल पड़ रहा था, क्योंकि उन्होंने भोजनको ही अपना भगवान् बना लिया था और वे ऐसा सोचते थे कि निरामिषाहारी बन जानेके बाद तो वे चाहे जितना मसूर, सेम और पनीर खा सकते हैं। कहनेकी जरूरत नहीं कि ऐसे लोग अपना स्वास्थ्य ठीक नहीं रख पाते थे। इस प्रकार जाँच-पड़ताल करते हुए मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि आदमीको कम खाना चाहिए और यदा-कदा उपवास भी करना

चाहिए। कोई भी स्त्री या पुरुष कम या जितनेकी शरीरको आवश्यकता हो सिर्फ उतना ही नहीं खाता। हम बड़ी आसानीसे जीभके लालचमें फँस जाते हैं, और इसलिए जब कोई चीज सुस्वादु लगती है तो कौर-दो कौर ज्यादा खा लेनेमें हिचकते नहीं हैं। लेकिन, इस हालतमें आप स्वास्थ्य-रक्षा नहीं कर सकते। इसलिए मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा कि आप चाहे कुछ भी खायें, स्वास्थ्य-रक्षा करनेके लिए यह आवश्यक है कि आप अपने आहारकी मात्रामें और जितनी बार आप खाते हैं, उसमें कमी कर दें। संयमसे काम लीजिए; गलती ही करनी हो तो ज्यादा खानेकी नहीं, बल्कि कम खानेकी गलती कीजिए। मैं जब मित्रोंको अपने साथ खानेको बुलाता हूँ तो मैं, जिस चीजकी उनको जरूरत होती है, उसके अलावा और कुछ भी लेनेका आग्रह उनसे नहीं करता। इसके विपरीत, मैं उनसे कहता हूँ कि जो चीज न खाना चाहें, मत खाइए।

मैं जो बात आपके ध्यानमें लाना चाहता हूँ वह यह है कि अगर निरामिषाहारी लोग दूसरोंको भी निरामिषाहारी बनाना चाहते हैं तो उन्हें सहिष्णुतासे काम लेनेकी जरूरत है। तनिक विनयसे काम लीजिए। जो लोग हमसे सहमत न हों, हमें उनकी नैतिक भावनाको जगाना चाहिए। यदि कोई निरामिषाहारी बीमार हो जाता है और डाक्टर उसे गोमांसका रसा (बीफ-टी) लेनेकी सलाह देता है तो भी उसे लेने पर मैं उसको निरामिषाहारी नहीं मानूँगा। निरामिषाहारी इससे कहीं अधिक ठोस तत्त्वोंका बना होता है। क्यों? इसलिए कि निरामिषाहार शरीरके विकास-निखारके लिए नहीं, बल्कि आत्माकी उन्नतिके लिए है। मनुष्य केवल हाड़-मांसका पुतला ही तो नहीं है। हमें चिन्ता तो मनुष्यकी आत्माकी है। इसलिए निरामिषाहारियोंके पास इस सिद्धान्तका नैतिक आधार होना चाहिए कि मनुष्य मांसाहारीके रूपमें नहीं जन्मा है, बल्कि उसका जन्म तो धरतीसे पैदा होनेवाले फल-मूलपर जीनेके लिए हुआ है। मैं जानता हूँ कि गलतियाँ तो हम सबसे होंगी ही। यदि मुझसे बनता तो मैं दूध छोड़ देता, लेकिन बनता ही नहीं। यह प्रयोग मैंने अनेक बार किया है। मगर एक बार सख्त बीमार हो जाने पर अपनी खोई हुई शक्ति मैं तब तक प्राप्त नहीं कर सका जबतक कि फिर दूध लेना शुरू न कर दिया। यह मेरे जीवनका एक बहुत ही दुःखद प्रकरण रहा है। लेकिन मेरे निरामिषाहारका आधार शारीरिक नहीं, बल्कि नैतिक रहा है। यदि कोई चिकित्साशास्त्रकी दृष्टिसे भी ऐसा कहे कि आप गोमांसका रसा अथवा बकरेका मांस नहीं लेंगे तो जीवित नहीं रह पायेंगे तो उस हालतमें मैं मरना ही पसन्द करूँगा। यही मेरे निरामिषाहारका आधार है। यदि अपनेको निरामिषाहारी कहनेवाले हम सभी लोगोंके इस व्रतका आधार यही हो जाये तो यह मेरे लिए बहुत खुशीकी बात होगी। ऐसे हजारों मांसाहारी थे जिन्होंने मांसाहार छोड़ दिया। यदा-कदा अपने सगे-सम्बन्धियोंको नाराज करनेका खतरा उठाकर भी यदि हम अपने जीवनमें वैसा परिवर्त्तन करें, समाजमें प्रचलित रीति-रिवाजोंसे भिन्न रीति-रिवाजोंको अपनायें तो हमारे पास उसका कोई सुनिश्चित कारण होना चाहिए। सारी दुनियाके लिए भी आपको किसी नैतिक सिद्धान्तका त्याग

नहीं करना चाहिए। इसलिए निरामिषाहारी मण्डल अथवा निरामिषाहारके सिद्धान्तकी घोषणाका केवल नैतिक आधार ही है और होना चाहिए। मैंने घूम-घूमकर दुनियाको खूब देखा है, मगर जो-कुछ देखा है, उसके आधारपर मैं यह नहीं कह सकता कि सामान्यतया निरामिषाहारियोंका स्वास्थ्य सामिषाहारियोंकी अपेक्षा कोई बहुत ज्यादा अच्छा होता है। मैं ऐसे देशका निवासी हूँ जो अपनी आदत अथवा आवश्यकताके कारण मुख्यतः निरामिषाहारी है। मगर अपने यहाँके अनुभवोंके आधारपर मैं यह नहीं कह सकता कि निरामिषाहारसे आदमीमें सहनेकी ज्यादा शक्ति, अधिक साहस अथवा बहुत अधिक आरोग्य आ जाता है। कारण, यह तो बिलकुल विशिष्ट ढंगकी और व्यक्तिगत चीज है। निरामिषाहारके बाद भी आरोग्यके सभी नियमोंके ध्यान-पूर्वक पालनकी जरूरत होती है।

इसलिए मैं समझता हूँ कि निरामिषाहारियोंको निरामिषाहारके शारीरिक परिणामोंपर जोर नहीं देना चाहिए, बल्कि नैतिक परिणामोंकी शोध करनी चाहिए। जहाँ हम अबतक यह नहीं भूल पाये हैं कि अनेक दृष्टियोंसे हममें और पशुओंमें समानता है, वहाँ इस बातको हम काफी महसूस नहीं करते कि कुछ ऐसी भी चीजें हैं जो हमें पशुओंसे भिन्न कोटिमें बैठाती हैं। बेशक, पशुओंमें भी गाय, बैल आदि निरामिषाहारी हैं, बल्कि हमसे अच्छे निरामिषाहारी हैं; लेकिन जिस कारणसे ये पशु निरामिषाहारी हैं, उससे कोई बहुत ऊँची बात है जिसके कारण निरामिषाहारी बनना हमारा धर्म हो जाता है। इसलिए मैंने सोचा कि आपके सामने कुछ-एक मिनट बोलनेका जो सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है, उसका उपयोग मैं, बस, निरामिषाहारका नैतिक आधार समझानेके लिए ही करूँ। और मैं अपने तथा हजारों मित्रों और साथियोंके अनुभवोंके आधारपर यह कहूँगा कि जहाँतक निरामिषाहारका सम्बन्ध है, उन लोगोंने अपने इस व्रतपर आरूढ़ रहनेके लिए जो नैतिक आधार अपनाया है, उससे उन्हें सन्तोष प्राप्त होता है।

और अन्तमें मैं आप सबको इस बातके लिए धन्यवाद देता हूँ कि आप यहाँ आये और आपने मुझे निरामिषाहारियोंसे रूबरू मिलनेका मौका दिया। मैं यह नहीं कह सकता कि आजसे बयालीस वर्ष पूर्व आपसे मिला करता था। मेरा खयाल है, अब लन्दनके निरामिषाहारी मण्डलमें नये-नये लोग आ गये हैं। ऐसे बहुत कम लोग हैं जो श्री सॉल्टकी तरह यह दावा कर सकें कि इस मण्डलसे उनका सम्बन्ध चालीस वर्षोंसे अधिक पुराना है। और अब मैं चाहूँगा कि अगर आप कोई सवाल पूछना चाहते हों तो पूछिए, क्योंकि अभी कुछ मिनट और मैं आपके बीच हूँ।

इसपर श्री गांधीसे यह पूछा गया कि उन्होंने अपने दैनिक आहारमें केवल पाँच ही चीजें क्यों शामिल रखी हैं। उत्तरमें उन्होंने कहा :

इसका निरामिषाहारसे कोई सम्बन्ध नहीं है। . . . इसका कारण कुछ और है। बात यह थी कि लोग मुझे बड़ा लाड़-प्यार देते थे। तब मेरी कुख्याति भी कुछ ऐसी थी कि जब मित्र लोग निमन्त्रित करते तो मेरे सामने तरह-तरहके व्यंजन परोस देते थे। मैं उनसे कहता था कि मैं तो सेवा करने आया हूँ और मुझसे

पूछें तो कहूँगा कि यदि मैं इस तरहके लाड़-प्यारको स्वीकार करूँगा तो यह मेरे लिए तिल-तिल कर मरनेकी बात होगी। सो अपने आहारमें केवल पाँच ही वस्तुओंको शामिल रखकर मैंने दोहरा उद्देश्य साधा। और मैंने अपने खानेका धंधा सूर्यास्तसे पूर्व ही समाप्त कर देनेका नियम बना लिया है। इस तरह मैंने अपनेको कई मुसीबतोंसे बचा लिया है। स्वास्थ्यपर इस चीजके प्रभावके सम्बन्धमें कई खोजें हुई हैं। आहार-शास्त्रियोंका कहना है कि हमारी खोजोंके आधारपर हम उत्तरोत्तर इसी निष्कर्षपर पहुँच रहे हैं कि आहार सादा होना चाहिए और अगर कोई स्वस्थ रहना चाहता है तो उसे एक वारमें एक ही चीज खानी चाहिए तथा कई वस्तुओंके हानिकर मिश्रणसे बचना चाहिए। अतः मैं आहारमें ज्यादा चीजोंको शामिल करनेके बजाय पहलेसे जितनी चीजें शामिल हों, उनमें भी कमी करते जाना अधिक पसन्द करता हूँ, क्योंकि इस विषयपर हर डाक्टरकी एक अलग ही राय है।

इसके अलावा, मैं यह समझता हूँ कि अपने आहारको केवल पाँच वस्तुओं तक सीमित रखना मेरे लिए नैतिक तथा भौतिक, दोनों दृष्टियोंसे लाभदायक सिद्ध हुआ है — भौतिक दृष्टिसे इसलिए कि भारत-जैसे गरीब देशमें बकरीका दूध हमेशा नहीं मिल सकता और फल तथा अंगूर पैदा करना भी मुश्किल है। फिर, मैं गरीबोंसे मिलने-जुलनेवाला आदमी ठहरा। अगर मैं उनसे बाहरसे मँगाये डिब्बाबन्द अंगूरकी आशा करूँ तो वे मुझे फौरन अपने यहाँसे भगा देंगे। इस प्रकार अपने आहारमें केवल पाँच ही वस्तुएँ शामिल रखकर मैं मितव्ययिताके नियमका भी पालन कर रहा हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २०-२-१९४९

२१८. पत्र: जे० आर० ग्लॉर्नी बॉल्टनको

८८, नाट्सब्रिज
लन्दन, एस० डब्ल्यू०-१
२१ नवम्बर, १९३१

प्रिय श्री बॉल्टन,[१]

आपका पत्र बहुत ही हृदयस्पर्शी था। आपका पत्र मैंने टाइम्समें पहले ही देख लिया था और मुझे लगा था कि यही चीज चाहिए थी। जहाँतक मैं समझ सकता हूँ, इस परिषद्से कुछ निकलनेवाला नहीं है। इसलिए संघर्ष जब फिर शुरू होगा तो बहुत-से अंग्रेज स्त्री-पुरुषोंके सामने यह प्रश्न आयेगा कि क्या वे अपने देशकी तुलनामें औचित्यको प्राथमिकता दे सकते हैं। मैं अभी भी किसी समझौते

१. बॉल्टन दो बार भारत आये थे और बादमें, १९३४ में, उन्होंने **द ट्रेजडी ऑफ गांधी** नामक पुस्तक लिखी थी।

पर पहुँचने और इस तरह टकरावको, जो पिछले सालसे सम्भवतः अधिक कटु ही रहेगा, रोकनेकी जी-जानसे कोशिश कर रहा हूँ।

हृदयसे आपका,

श्री० जे० आर० ग्लॉर्नी बॉल्टन
९ किंग्स बेंच वॉक
ई० सी०-४

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८३२९) से।

२१९. पत्र : हेनरी लॉरेंसको

८८, नाइट्सब्रिज
एस० डब्ल्यू०-१
२१ नवम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

बोलकर लिखवाये गये इस पत्रके लिए क्षमा करें। जो मिथ्या धारणा पैदा हो गई है,[1] उसके लिए मुझे बहुत ही खेद है। दलित वर्गोंके लिए मुझे किसी पत्रकी आवश्यकता नहीं थी। दलित वर्गोंके प्रश्नको मैं दूसरे सामान्य प्रश्नोंसे अलग रखना चाहता हूँ। वह खुद अपने आधारपर खड़ा है। पर जब श्री डेविसने उनकी चर्चा चलाई तो मुझे बहसपर आपत्ति नहीं थी। मैं एक ऐसा छोटेसे-छोटा पत्र चाहता था, जिसमें अंग्रेजोंकी कार्रवाई की, अव्वल तो, अन्य अल्पसंख्यकोंके साथ गठजोड़ करने और, दूसरे पृथक् निर्वाचिक-मण्डल और विशेष आरक्षणकी माँग करनेके लिए निन्दा हो। इस सिलसिलेमें मैं बालिग मताधिकार तकको बीचमें लाना नहीं चाहता था, क्योंकि मेरे विचारसे बालिग मताधिकार किसी भी नगण्य अल्पसंख्य समुदायकी सहायता नहीं करता। अंग्रेजोंके बारेमें मेरा तर्क यह था कि उन्हें समान निर्वाचक-मण्डलको अपील करके ही विधानमण्डलोंमें पहुँचने और सेवाके अधिकारसे ही सफल होनेकी आशा करनी चाहिए। लेकिन श्री डेविसका खयाल था कि बालिग मताधिकारकी पृष्ठभूमिके बिना कोई भी इस सुझावपर ध्यान नहीं देगा। मुझे इसपर

१. इसी तारीखके एक पत्रमें सर हेनरी लॉरेंसने कहा था: "...डेविसने फोनपर मुझे आपका सन्देश दिया, जिसमें मुझसे, आपकी अपीलके समर्थनके रूपमें, बालिग मताधिकारकी वकालत करते हुए **टाइम्स**को एक पत्र लिखनेके लिए कहा गया था। इस तरहका पत्र मैंने तैयार कर लिया। ... श्री डेविसने तब मुझे बताया कि आप मेरे पत्रके समर्थनमें एक पत्र लिखेंगे निदान मैं दोनों पत्र **टाइम्स**से स्वीकृत करानेके लिए लन्दन पहुँचा। अब वे मुझसे कहते हैं कि जबतक मैं पृथक् निर्वाचक-मण्डलके समर्थक यूरोपीयोंकी निन्दा न करूँ, आप पत्र लिखनेको तैयार नहीं हैं। ...आपके मनमें क्या है, क्या आप ठीक-ठीक बतानेकी कृपा करेंगे? ..."

कोई आपत्ति नहीं हो सकती थी। परन्तु स्वयं मेरे लिए किसी ऐसे पत्रके बारेमें कुछ लिखना, जिसमें अंग्रेजोंकी कार्रवाईका उल्लेख न हो, सम्भव न था। उस हालतमें भी मुझे बहुत सतर्क रहना पड़ता, जिसका सीधा-सादा कारण यह है कि सम्मेलनका एक प्रतिनिधि होते हुए मैं समाचार-पत्रोंके प्रचारमें भाग लेना नहीं चाहता हूँ। जितना सम्भव है, मैं इससे बचा ही हूँ। मुझे जो-कुछ कहना होता है, मैं गोलमेज परिषद्में कहता हूँ। यदि आप अन्य अल्पसंख्यकोंके साथ अंग्रेजोंके गठजोड़के बारेमें कुछ कह नहीं सकते, या यदि आप उस गठजोड़का समर्थन करते हैं, तो मुझे कुछ नहीं कहना है, और उस हालतमें यदि आपको कोई मत व्यक्त करना ही पड़े, तो मैं आपसे उस गठजोड़के समर्थनके सिवा और कोई मत व्यक्त करनेकी आशा नहीं कर सकता। पता नहीं, मैं अपनी स्थिति ठीकसे स्पष्ट कर पाया हूँ या नहीं।

हृदयसे आपका,

सर हेनरी लॉरेंस
बोअर्स हिल्स
ऑक्सफोर्ड

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८३३२) से।

२२०. प्रश्नोत्तर[1]

लन्दन
[२२ नवम्बर, १९३१]

प्र० : क्या परिषद्की असफलता निश्चित है?

उ० : ऐसा कहना अकृतज्ञता होगी। पर मुझे सफलताका बहुत ही कम आधार दीखता है।

प्र० : सरकारने जब विचार-विमर्श होने दिया है, तो आपके खयालमें क्या वह अब कुछ नहीं करेगी? क्या सरकारमें परिवर्तनसे कुछ अन्तर पड़ेगा?

उ० : मुझे उनसे यह अपेक्षा थी कि वह निश्चय ही बेहतर ढंगसे काम करेगी, परन्तु उसने सत्ता हस्तान्तरित करनेका इरादा किया है या नहीं, मुझे नहीं मालूम। जहाँतक दो पार्टियोंका सम्बन्ध है, मेरा खयाल है, भारतके लिए यह केवल नाम-मात्रका अन्तर है। वस्तुतः, मुझे इस बातकी खुशी ही है कि मेरा एक बहुत भारी कंजर्वेटिव बहुसंख्यासे वास्ता पड़ रहा है, क्योंकि मैं यहाँसे कोई चीज चुराकर ले जाना नहीं चाहता हूँ। मैं कोई बड़ी और अच्छी चीज चाहता हूँ, जिसे गरीब लोग

१. महादेव देसाईके "लन्दन लेटर" (लन्दनका पत्र) से उद्धृत। देसाई कहते हैं कि ये प्रश्न एक प्रमुख नेताके पुत्र द्वारा रखे गये थे। २५ नवम्बरके **हिन्दुस्तान टाइम्स**में रैंडॉल्फ चर्चिलसे गांधीजी की २२ नवम्बरकी भेंटकी एक संक्षिप्त रिपोर्ट छपी थी। चर्चिल तब हर्स्ट प्रेसके प्रतिनिधि थे।

आसानीसे देख सकें और समझ सकें। इसलिए यह बहुत ही अच्छा है कि मुझे एक शक्तिशाली पार्टीसे लड़ना है और जो मैं चाहता हूँ वह एक शक्तिशाली पार्टीसे जीतना है। मैं जो चाहता हूँ वह टिकाऊ चीज है। मैं नाता तोड़ना नहीं, बल्कि बदलना चाहता हूँ। भारत और इग्लैंडका सम्बन्ध, बराबरकी साझेदारीका आधार, केवल तभी रह सकता है जब दोनोंमें से हर-एक पक्ष दुर्बलताकी भावनासे नहीं, बल्कि शक्तिकी भावनासे समान कार्य करे। इसलिए मुझे यह अनुभूति प्रिय होगी कि हम कंजर्वेटिव शासनके दौरान उस दलके अनुयायियोंको यह विश्वास दिला सकें कि हम न तो अयोग्य विरोधी हैं और न अयोग्य साझेदार ही हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ३-१२-१९३१

२२१. पत्र : सैम्युअल होरको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, एस० डब्ल्यू-१
२४ नवम्बर, १९३१

आज प्रातः मुझे कांग्रेसके प्रधान सरदार वल्लभभाई पटेलका एक तार मिला, जो इस पत्रके साथ संलग्न है। उसमें जो-कुछ कहा गया है, वह अपने-आपमें इतना स्पष्ट है कि उसकी अतिरिक्त व्याख्याकी जरूरत नहीं है। तार शीघ्र समझमें आ जाये, इसलिए मैं नीचे उसे फैलाये दे रहा हूँ:

> **हिजली और चटगाँवमें जो अन्याय हुआ उसे दूर करनेके लिए अभी तक कुछ नहीं हुआ है। ऑर्डिनेंसके अधीन अन्धाधुन्ध गिरफ्तारियाँ हो रही हैं। नजरबन्दोंकी संख्या हजारतक पहुँचनेवाली है। बीसियों व्यक्ति रोज गिरफ्तार किये जाते हैं, जिनमें बहुत-से कांग्रेसी कार्यकर्त्ता भी होते हैं। हिजली और चटगाँवके अत्याचारोंका विरोध करनेपर कितने ही राजद्रोहके मुकदमे चला दिये गये हैं। हाल ही में ढाकामें छोटे पैमानपर चटगाँवकी पुनरावृत्ति हुई है, जहाँ पुलिसने निर्दोष स्त्री-पुरुषों और बच्चोंको खुल्लम-खुल्ला अपमानित किया और उनके साथ दुर्व्यवहार किया। बंगालके यूरोपीय और अधिक दमनकी लगातार माँग कर रहे हैं। आम विश्वास यह है कि सरकार इसपर सहमत हो गई है। चारों ओर रोष फैला है, जो नौजवानोंको दुःसाहसिकताकी ओर धकेल रहा है। संयुक्त प्रान्तकी स्थिति तो आपको मालूम ही है। आन्ध्रमें कई कांग्रेसी नेता सुरक्षा या राजद्रोहकी धाराओंके अधीन गिरफ्तार कर लिये गये हैं। सरकारकी अपनी ही समिति और विरोधी विधानमण्डलकी सर्वसम्मत रायके बावजूद, कृष्णा और गोदावरी जिलोंमें लगानकी जो वृद्धि हुई है, यह कार्रवाई**

उसके खिलाफ उठ रहे आन्दोलनको रोकनेके लिए की गई है। वहाँकी स्थिति गम्भीर होती जा रही है। इमाम साहबको रोज बुखार हो जाता है, थूकमें खून नहीं आता अतः अभी चिन्ताकी कोई बात नहीं है।

अन्तिम वाक्य एक मित्रकी बीमारीके बारेमें हैं। क्या मैं इस तारको प्रकाशित कर सकता हूँ?

परम माननीय सर सैम्युअल होर
इंडिया आफिस, एस० डब्ल्यू-१

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८३३९)से।

२२२. भेंट : 'इको डी' पेरिसके प्रतिनिधिको

[२४ नवम्बर, १९३१][1]

पूर्ण स्वराज्यसे कम किसी चीजको स्वीकार न करनेपर जोर देते हुए, महात्मा गांधीने कहा कि यदि गोलमेज परिषद् विफल रही तो वे पुनः संघर्ष आरम्भ कर देंगे। वे मानते हैं कि भले ही एकके-बाद-एक सभी नेता गिरफ्तार कर लिये जायें, परन्तु राष्ट्रीय आन्दोलन जारी रहेगा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, २६-११-१९३१

२२३. मिर्जा इस्माइलको लिखा पुर्जा[2]

[२५ नवम्बर, १९३१][3]

क्या आप आज रात ९-३०का समय रख सकते हैं?

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २१८८-८)से।

१. यहाँ तारीख **अमृतबाजार पत्रिका**, २५-११-१९३१ के अनुसार दी गई है। भेंटकी रिपोर्ट इस पत्रमें भी छपी थी।

२. यह मिर्जा इस्माइलकी इस जिज्ञासाके उत्तरमें था कि वे और डॉ० अम्बेडकर गांधीजी से किस समय मिल सकते हैं।

३. "दैनन्दिनी, १९३१" के अनुसार, गांधीजी मिर्जा इस्माइल और अम्बेडकरसे इसी तारीखको मिले थे।

२२४. भेंट: 'न्यू लीडर' के प्रतिनिधिको

लन्दन

[२५ नवम्बर, १९३१][1]

प्र० : परिषद् यदि भंग हो जाती है तो भारतमें क्या-कुछ हो सकता है, क्या आप बता सकते हैं ?

उ० : विस्तारसे तो नहीं। भविष्य जैसा मुझे अब लग रहा है, उसके अनुसार तो झगड़ा अपने तीव्रतम रूपमें फिर शुरू होगा।

प्र० : लेकिन आपके खयालसे क्या प्रतिरोधकी मनोवृत्तिको आप फिर जगा सकेंगे ? कोई आन्दोलन जब बन्द कर दिया जाता है, तो उसे फिर चेताना क्या सदा अधिक कठिन नहीं होता ?

उ० : मुझे इस विषयमें किसी तरहका कोई सन्देह नहीं है। जिस आन्दोलनको मैंने बन्द किया उसे फिर चेतानेमें मुझे कभी कठिनाई नहीं हुई। पर मुझे अपने भीतर शक्ति महसूस होनी चाहिए। १९२२ में हमने जब बारडोलीमें संघर्ष खत्म किया[2] तो मेरे मित्र घबरा रहे थे, और १९३१ में हमने संघर्ष फिर चेता दिया। पर वह बिलकुल ठीक समय था। और उसका स्थगित करना अच्छा ही सिद्ध हुआ। बीचके सालोंमें हम बेकार नहीं बैठे रहे। लोग हमारे विचारोंको हृदयंगम कर रहे थे। हमारा रचनात्मक कार्य चालू रहा और जनसाधारणपर, जिसने आन्दोलनके अर्थ और उसकी भावनाको आत्मसात कर लिया, इसका असर पड़ा और बहुत ही शानदार प्रतिक्रिया हुई।

प्र० : मुझे मालूम हुआ है, जवाहरलाल नेहरू यह कह रहे हैं कि लोगोंको रोके रखना अब मुश्किल है।

उ० : वह सब बहुत अच्छा है। मैं यथासम्भव अधिकसे-अधिक स्पष्ट रूपसे यह कह सकता हूँ कि यदि लोगोंमें स्वतःस्फूर्त भावना नहीं है तो मैं संघर्ष शुरू करना नहीं चाहूँगा। परन्तु यहाँ इतनी दूर भी मैं यह महसूस कर रहा हूँ कि लोग बिलकुल तैयार हैं। वे केवल संकेतकी प्रतीक्षामें हैं।

प्र० : क्या किसानों और कस्बोंके लोगोंके बारेमें भी यही बात है ?

उ० : हाँ, मुझे किसानोंपर ही अधिकाधिक निर्भर रहना है।

प्र० : क्या वे आन्दोलनमें मुख्यतया आर्थिक या राजनीतिक उद्देश्यसे भाग लेते हैं ?

१. तारीख **हिन्दुस्तान टाइम्स,** २८-११-१९३१ से ली गई है, जिसमें इस भेंटकी संक्षिप्त रिपोर्ट छपी थी। **बॉम्बे क्रॉनिकल,** २८-११-१९३१ में भी इस भेंटकी रिपोर्ट प्रकाशित हुई थी।

२. देखिए खण्ड २२।

उ० : उनकी आर्थिक कठिनाइयोंने उन्हें राजनीतिक परिस्थितिकी समझ दे दी है। वे यह समझते हैं कि जबतक वर्त्तमान राजनीतिक व्यवस्था आमूल नष्ट नहीं हो जाती, उनकी आर्थिक स्थिति सुधरेगी नहीं। भारतमें सरकार धनिकोंकी रक्षक बन गई है। सरकारकी ओटमें धनिकोंने यह षडयन्त्र कर लिया लगता है कि गरीबोंसे जहाँतक उनका बस चले, एक-एक पैसा छीन लिया जाये। करोंका जो निर्मम बोझ किसानोंको वहन करना पड़ रहा है वह जबतक हटेगा नहीं, उनकी स्थिति सुधर नहीं सकती।

प्र० : इस सालके शुरूमें दक्षिण भारत संघर्षमें कमजोर लगता था। आपके खयालसे क्या इस बार आप दक्षिण भारतपर भरोसा कर सकते हैं?

उ० : दक्षिण भारतने पिछले संघर्षमें दृढ़तासे अपना योग दिया था, और सविनय अवज्ञा आन्दोलन जब स्थगित किया गया तब वह शानदार ढंगसे आगे आ रहा था। संघर्ष जब फिर छिड़ेगा तो वह फिर आगे आयेगा। दक्षिण भारत इसी तरहका है। वह धीरे-धीरे बढ़ता है, पर वह सुदृढ़ है। दक्षिणपर मेरा विश्वास पहले भी टूटा नहीं था। खादीके निर्माणमें दक्षिणने सर्वश्रेष्ठ काम किया है, और अछूतोंके बीच उसका काम ठोस रहा है।... परन्तु इस बार कौन-सा प्रान्त सर्वश्रेष्ठ रहेगा, मैं कह नहीं सकता। वैसे सभी प्रान्तोंपर मेरा विश्वास है।

प्र० : क्या आपको यह आशंका है कि भारतकी अधीरता आपको आन्दोलनको अहिंसात्मक मार्गोंपर कायम नहीं रखने देगी?

उ० : नहीं, मैं ऐसा नहीं सोचता। यदि लोग आह्वानका उत्तर देते रहते हैं और आन्दोलनका जनरूप कायम रहता है, तो हिंसाका उसमें कोई स्थान नहीं होगा।

प्र० : मैं आपको किसी अटपटी स्थितिमें डालना नहीं चाहता। पर मैं यह माने बिना नहीं रह सकता कि गोलमेज परिषद्के कुछ मुसलमानोंको भारतके स्वराज्यसे अधिक अपने साम्प्रदायिक दावोंकी चिन्ता रही है।

उ० : मैं वैसा नहीं कहूँगा। मैं यह कहूँगा कि उन्हें मुख्य चिन्ता उस चीजकी रक्षाकी है जिसे वे भारतमें इस्लामके अधिकार समझते हैं। उनके मनमें उसका निश्चय ही बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। परन्तु यही बात हिन्दुओं, मुसलमानों और सिखों, तीनों वर्गोंके साम्प्रदायिक दावोंके बारेमें कहनी पड़ती है।

प्र० : इस सम्मेलनके साम्प्रदायिक 'प्रतिनिधियों' को आप वस्तुतः प्रतिनिधि मानते हैं, या आप यह कहते हैं कि उनके सम्प्रदायोंका अधिकतर भाग कांग्रेसके पीछे है?

उ० : निःसन्देह वे कांग्रेसके पीछे हैं। अन्यथा कांग्रेस अपना काम कर ही नहीं सकती थी। हमें सिखों और मुसलमानों, दोनोंका हार्दिक समर्थन मिला है। कांग्रेस कार्यकारिणीमें पाँच मुसलमान हैं। और वे नगण्य नहीं हैं। वे वस्तुतः प्रतिनिधि मुस्लिम नेता हैं।

प्र० : आपका क्या यह कहना है कि राष्ट्रीय मुस्लिम दल (जो कांग्रेसका समर्थक है) इस परिषद्के अधिकांश मुस्लिम 'नेताओं' से अधिक प्रातिनिधिक हैं?

उ० : बेशक। डॉ० अन्सारी, जो हमारी कार्यकारिणीमें हैं, हमेशा यही दावा करते हैं। शायद यह उतना सच न हो जितना कि डॉ० अन्सारी सोचते हैं, पर यह रोज ज्यादा सच होता जा रहा है। तरुण पीढ़ीके बारेमें, जो संकीर्णतासे हट रही है, यह बात निःसंदेह सच है।

प्र० : तरुण पीढ़ीकी यह प्रवृत्ति केवल संकीर्णताके विरुद्ध विद्रोह है या स्वयं धर्मके ही विरुद्ध विद्रोह है?

उ० : यह कहना कठिन है। वे संशयवादी और नास्तिक हैं यह मैं नहीं कह सकता। मैं केवल यही कह सकता हूँ कि उनमें सहनशीलताकी भावना विकसित हुई है। यह इस्लामके प्रति श्रद्धाकी कमी और धार्मिक प्रवृत्तिके क्षयका द्योतक है या नहीं, मुझे नहीं मालूम।

प्र० : केन्द्रमें उत्तरदायी सरकारके प्रश्नपर यदि गोलमेज परिषद् भंग हो जाती है, तो आपके खयालमें क्या संयुक्त विरोधकी, जैसा कि साइमन कमिशनके मामलेमें हुआ था, पुनरावृत्ति होगी?

उ० : हाँ, मेरा यही खयाल है। 'लिबरल' और 'मॉडरेट' सीधी कार्रवाईके आन्दोलनमें भाग नहीं लेंगे, पर उनकी राय पूरी तरह कांग्रेसकी ओर होगी।

प्र० : प्रान्तोंमें स्वशासनके आधारपर ब्रिटिश सरकारके साथ समझौता होनेकी क्या आपको कोई सम्भावना दिखाई देती है?

उ० : नहीं, मैंने एक फार्मूला सुझाया था पर ब्रिटिश सरकार उसे स्वीकार नहीं करेगी। यदि प्रान्तोंको तुरन्त वास्तविक नियन्त्रण दे दिया जाये और यदि शीघ्र केन्द्रीय उत्तरदायित्वकी पूरी गारंटी दे दी जाये तो समझौतेकी सम्भावना हो सकती है। मैं समयके मामलेमें तो अन्तरालको स्वीकार कर लूँगा, पर कानूनके मामले में नहीं करूँगा। दोनों चीजोंके बारेमें वही कानून होना चाहिए। केन्द्रीय उत्तरदायित्वके बारेमें आश्वस्त हुए बिना, भारतीय राष्ट्रवादी प्रान्तीय स्वायत्त शासन पर दृष्टि भी नहीं डालेंगे। उनका कहना है कि वे पूर्ण स्वाधीनताके लिए बहुत काल तक प्रतीक्षा करते रहे हैं, और कोई ऐसा समझौता स्वीकार करनेकी अपेक्षा, जो केन्द्रीय उत्तरदायित्व न देता हो, वे कुछ समय और प्रतीक्षा कर सकते हैं।

प्र० : श्री ब्रेल्सफोर्डके इस सुझावके बारेमें कि पूर्ण प्रान्तीय स्वायत्त शासनके साथ, केन्द्रीय सरकारके स्वरूपकी समस्याको सुलझानेके लिए, एक राष्ट्रीय संविधान सभाकी व्यवस्था हो, आपका क्या विचार है?

उ० : सांविधिक व्यवस्थाके अधीन उत्तरदायी सरकारकी केवल गारंटीसे काम चल जायेगा। हमें उत्तरदायी सरकार मिलनी ही चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १४-१२-१९३१

२२५. भाषण : संघ-संरचना समितिके समक्ष

लन्दन
२५ नवम्बर, १९३१

लॉर्ड चान्सलर महोदय,

आज हम जो चर्चा कर रहे हैं, उसका श्रेय श्री लीज-स्मिथको है; इसलिए मैं उन्हें बधाई देता हूँ। और आपने इस चर्चाकी अनुमति दी, इसके लिए आपको भी बधाई देता हूँ। मैं समझता हूँ, आजकी बहसके लिए पहल करके श्री लीज-स्मिथने आश्चर्यजनक आशावादिताका परिचय दिया है। इस दम तोड़ती परिषद्में प्राण फूंकने के लिए वे किसी चिकित्सककी तरह आक्सीजन पम्प लेकर आगे आये हैं। मेरा मतलब यह नहीं है कि केन्द्रीय उत्तरदायित्वसे विहीन प्रान्तीय शासन दिये जानेकी अफवाह या आशंकाके कारण हमारी यह परिषद् दम तोड़ रही है। लगभग इन कार्यवाहियोंके आरम्भसे ही मैं अपने विनीत ढंगसे चेतावनीके शब्द कहता रहा हूँ, और परिस्थितिकी अवास्तविकताके बोधसे मेरा मन बहुत परेशान रहा है और मैंने स्पष्ट शब्दोंमें ऐसा कहा भी है। कल सर तेजबहादुर सप्रूको भी इस अवास्तविकताका बोध हुआ। वैसे मैं जानता हूँ कि पिछले कई दिनोंसे उन्हें इस चीजका बोध होता रहा है, और इस जानकारीका कारण यह है कि वे अपने अन्य मित्रों और —यदि मुझे उनके साथियोंकी श्रेणीमें शामिल किया जा सके तो कहूँगा —साथियोंके साथ मुझसे भी अपने मनकी बात कहते रहते हैं। उन्होंने बहुत ऊँचे-ऊँचे सरकारी पदोंपर काम किया है, सो प्रशासनिक मामलोंके अपने सुदीर्घ अनुभवके आधारपर उन्होंने हमें तथाकथित प्रान्तीय स्वशासनके खतरेके खिलाफ आगाह किया है। मुझे अपने किये पर प्रायः पश्चात्ताप नहीं होता। उनके पास यह चेतावनी देनेका कारण था —और विशेष रूपसे मुझको लक्ष्य करके, क्योंकि मैंने इस देशके कई जिम्मेदार लोक-सेवी व्यक्तियोंके साथ प्रान्तीय स्वशासनके प्रश्नपर बातचीत की थी और उनको इस बातका पता चल गया था। अतएव, उन्होंने मुझे पूरी तरह आगाह कर दिया। लॉर्ड चान्सलर महोदय, यही कारण है कि उस दस्तावेजपर आप मेरे हस्ताक्षर नहीं देख रहे हैं जो आपके सामने रखा गया है। इसके बजाय मैंने इसी ढंगके उस कागज पर हस्ताक्षर किये जो प्रधान मन्त्रीके नाम लिखा गया था और आजसे कोई दस दिन पूर्व अखबारोंको प्रकाशनार्थ भेजा गया था। उनसे मैंने कहा था और यहाँ भी यही कहता हूँ कि वे और उनके बाद बोलनेवाले लोग तथा मैं एक ही लक्ष्य तक अलग-अलग रास्तोंसे पहुँचे हैं। जहाँ समझदारोंको पैर रखते भी डर लगता है, वहाँ मूर्ख लोग बेखटके चले जाते हैं। प्रशासनका कोई वास्तविक अनुभव न होनेके कारण मुझे लगा कि जो प्रान्तीय स्वशासन दिया जा रहा है, वह यदि मेरी कल्पना का प्रान्तीय स्वशासन है तो क्यों न मैं इस फलको हाथमें लेकर टटोलूं और देखूं

कि क्या यह सचमुच मेरे कामका है। मुझे अपनेसे भिन्न नीतिके अनुगामी मित्रोंसे खुद उन्हींके मंचपर जाकर मिलने और उनकी समस्याओंको समझनेका शौक है। वहाँ मैं यह पता लगानेकी भी कोशिश करता हूँ कि वे जो बात कह रहे हैं वह ऐसी तो नहीं है जो मुझे दूसरे रास्तेसे वहीं ले जायेगी जहाँ मैं जाना चाहता हूँ। इसी भावनासे और इसी अर्थमें मैंने मित्रोंसे प्रान्तीय स्वशासनकी चर्चा की, लेकिन बातचीत करने पर मुझे यह समझते देर नहीं लगी कि जो प्रान्तीय स्वशासन उनके मनमें है, निश्चय ही वह मेरी कल्पनाका प्रान्तीय स्वशासन नहीं है। अतएव मैंने अपने मित्रोंसे यह भी कह दिया कि यदि वे मुझे अपने भरोसे छोड़ दें तो भी सब-कुछ ठीक-ठीक ही चलेगा। मैंने साफ कह दिया कि प्रान्तीय स्वशासनकी अपनी मूर्खतापूर्ण कल्पनाके पीछे या देशके लिए कुछ प्राप्त करनेकी अधीरताके कारण मैं अपने देशके हितोंको गिरवी रखनेको तैयार नहीं हूँ। मैं बहुत अनिच्छाके बावजूद हजारों मीलका फासला तय करके यहाँ आया हूँ और अपने मनमें कोई दुराव रखे बिना सरकार तथा परिषद्के साथ पूरे हृदयसे सहयोग करनेको आया हूँ। मैंने मन, वचन और कर्मसे सहयोगकी इस भावनाका पालन किया है। सो इतना सब करनेके बाद अब मैं जो चाहता हूँ वह यह कि अपने तईं कुछ भी उठा न रखूँ। खतरनाक स्थलों पर भी पैर रखनेमें मैं हिचकिचाया नहीं हूँ। इसीलिए मैंने प्रान्तीय स्वशासनकी बात करने और मित्रोंके साथ उसकी चर्चा करनेकी हिमाकत की है। लेकिन मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि आप या ब्रिटेनके मन्त्रिगण भारतको वह प्रान्तीय स्वशासन देनेकी बात नहीं सोच रहे हैं जो मेरी-जैसी मनोवृत्तिवाले लोगोंको तुष्ट कर सके, जो कांग्रेसको सन्तुष्ट कर सके और उसे प्रान्तीय स्वशासनको कार्य रूप देने पर राजी कर सके — भले ही केन्द्रीय दायित्व दिये जानेमें अभी विलम्ब ही क्यों न हो।

आप लोगोंका कुछ ज्यादा वक्त तो लूँगा, लेकिन मैं अपना आशय स्पष्ट कर देना चाहूँगा, क्योंकि इस प्रसंगमें भी मैं एक अलग ही ढंगकी तर्क-पद्धतिसे काम ले रहा हूँ और इस बातके लिए बहुत उत्सुक हूँ कि मैं जो-कुछ कह रहा हूँ, उसका कोई गलत अर्थ न लगाये। इसलिए अब यहाँ एक उदाहरण देता हूँ। उदाहरणके तौरपर मैं बंगालको लेना चाहता हूँ, क्योंकि आज वह भारतका एक सबसे अशान्त प्रदेश है। मैं जानता हूँ कि बंगालमें एक आतंकवादी विचारधारा सक्रिय है। अबतक तो शायद सभी समझ गये होंगे कि किसी भी आतंकवादी विचारधारासे मुझे किसी प्रकारकी सहानुभूति नहीं हो सकती। सदाकी भाँति आज भी मेरा दृढ़ विश्वास है कि आतंकवाद किसी भी सुधारकके लिए सबसे बुरा तरीका है। और भारतके लिए तो वह खास तौरपर बहुत बुरा है, क्योंकि भारतकी मिट्टी आतंकवादी प्रवृत्तियोंके फूलने-फलनेके अनुकूल नहीं है। मेरा निश्चित मत है कि जो भारतीय नौजवान उस चीजके लिए, जिसे वे एक सदुद्देश्य मानते हैं, अपने प्राणोंकी बलि चढ़ा रहे हैं वे वास्तवमें अपने प्राण व्यर्थ ही गँवा रहे हैं और वे देशको उस लक्ष्यकी ओर, जो मुझे आशा है, हम सबका समान लक्ष्य है, रंच-मात्र भी आगे नहीं ले जा रहे हैं।

मैं इन सभी बातोंका कायल हूँ, लेकिन अब मान लीजिए कि आज बंगालको प्रान्तीय स्वशासन प्राप्त होता तो उस दशामें वह क्या करता? वह प्रत्येक नजरबन्दको रिहा कर देता। बंगाल — स्वशासित बंगाल — आतंकवादियोंकी जानका गाहक बननेके बजाय प्रेमपूर्वक उनतक पहुँचनेकी कोशिश करता और उनका हृदय-परिवर्तन करनेका प्रयत्न करता। मैं तो उनके पास पूरे विश्वाससे जाता और उन्हें उनकी वृत्तियोंसे विमुख करके बंगालसे आतंकवादको मिटा देता।

लेकिन जिस सत्यको मैं अपने अन्दर महसूस करता हूँ उसे समझानेके लिए मैं कुछ और कहूँगा। यदि बंगाल स्वशासित होता तो वह स्वशासन ही आतंकवादको बंगालसे मिटा देता क्योंकि ये आतंकवादी मूढ़तावश ऐसा मानते हैं कि उनके कार्योंसे स्वतन्त्रता जल्दीसे-जल्दी प्राप्त हो सकती है। जब वह स्वतन्त्रता प्राप्त हो जायेगी तो आतंकवाद अपने-आप मिट जायेगा।

आज हजारकी संख्यामें ऐसे नौजवान हैं, जिनमें से कुछके बारेमें तो मैं शपथपूर्वक कह सकता हूँ कि आतंकवादी विचारधारासे उनका कोई सरोकार नहीं है — ऐसे हजार नौजवान हैं जिनपर कोई मुकदमा नहीं चलाया गया, जिनके अपराध साबित नहीं किये गये, लेकिन जिनमें से सबके-सब केवल सन्देहके कारण गिरफ्तार कर लिये गये हैं। जहाँतक चटगाँवका सम्बन्ध है, श्री सेनगुप्त, जो कलकत्ताके लॉर्ड मेयर, बंगाल विधान-परिषद्के सदस्य और बंगाल प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष रह चुके हैं, यहाँ मौजूद हैं। उन्होंने बंगालके सभी दलोंके सदस्योंके हस्ताक्षरोंसे युक्त चटगाँवके सम्बन्धमें एक रिपोर्ट मुझे दी है। उस रिपोर्टको पढ़कर सचमुच मन दुःखी हो जाता है। इस रिपोर्टको पढ़कर दुःख तो होता है, लेकिन उसका सारांश यही है कि चटगाँवमें 'ब्लैक ऐंड टैंस'[1] सैनिकों द्वारा किये अत्याचारोंकी एक लघु आवृत्ति ही प्रस्तुत कर दी गई — और चटगाँव भारतका कोई कम महत्त्वका स्थान नहीं है।

अब हम देखते हैं कि कलकत्तामें एक ध्वज-प्रदर्शन समारोह किया गया। उस अवसरपर वहाँ पूरी सैनिक शक्तिको संकेन्द्रित करके कलकत्ताकी दस सड़कोंपर उसका प्रदर्शन किया गया। यह सब किसके खिलाफ किया गया, इससे किस उद्देश्यकी सिद्धि होनेवाली है? क्या इससे आतंकवादी लोग डर जायेंगे? मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि वे नहीं डरेंगे। तो क्या इसके द्वारा कांग्रेसियोंको सविनय अवज्ञासे विमुख किया जा सकता है? नहीं, यह भी नहीं हो सकता। कांग्रेस निर्भयताके लिए प्रतिज्ञाबद्ध है। कष्ट-सहन उसका जातीय चिह्न है। कांग्रेसवालों ने सभी तरहके कष्ट सहनेका संकल्प कर रखा है। इसलिए इससे वे डरनेवाले नहीं हैं। हमारे बच्चे इस प्रदर्शनपर हँसेंगे और हमारा उद्देश्य उन बच्चोंको यह सिखाना है कि वे तोपों, बन्दूकों, हवाई सेना आदिको देखकर भयभीत न हों, घबरा न जायें।

तो अब आप समझ गये होंगे कि प्रान्तीय स्वशासनकी मेरी कल्पना क्या है। स्वशासनके अन्तर्गत यह सब असम्भव होगा; मैं एक भी सैनिकको बंगालमें प्रवेश

१. सन् १९२१ में सिन-फेन आन्दोलनको दबानेके लिए रॉयल आयरिश कांस्टैबुलरीमें भरती किये गये भूतपूर्व सैनिक; सेना तथा कांस्टैबुलरीकी पोशाकके रंगोंके अनुसार इन्हें उक्त नाम दिया गया था।

करनेकी इजाजत नहीं दूँगा; जिस सेनाकी कमान हमारे हाथमें नहीं होगी उसका खर्च उठाने के लिए मैं एक पैसा भी नहीं दूँगा। ऐसे प्रान्तीय स्वशासनके अधीन आप ऐसी स्थितिकी तो कल्पना नहीं करेंगे जिसमें मैं नजरबन्दोंको रिहा न कर सकूँ और विधि-पुस्तकसे बंगालका विनियम ३ निकालकर अलग न कर सकूँ। यदि यह प्रान्तीय स्वशासन है तो इसे बंगाल सूबेके लिए ठीक उसी प्रकारकी स्वतन्त्रता समझना चाहिए जिस प्रकारकी स्वतन्त्रताको मैंने नेटालमें विकसित होते देखा। नेटाल एक छोटा-सा उपनिवेश है, लेकिन उसका अपना स्वतन्त्र अस्तित्व है; उसकी अपनी स्वयंसेवक सेना आदि है। आप बंगाल या किसी भी प्रान्तके लिए ऐसी कोई बात तो नहीं सोच सकते। यहाँ तो तब भी केन्द्रका ही आदेश चलेगा, वही शासन करेगा, सब-कुछ वही करेगा। यह मेरी कल्पनाका प्रान्तीय स्वशासन नहीं है। इसीलिए मैंने कहा कि यदि आप ऐसा जीवन्त प्रान्तीय स्वशासन मेरे सामने पेश करेंगे तो मैं उसपर विचार करनेको तैयार हूँ, लेकिन मैं यह भी मानता हूँ कि वह स्वशासन मिलनेवाला नहीं है। यदि वह स्वशासन मिलनेवाला होता तो हमें यहाँ ये लम्बी खिंचनेवाली कार्यवाहियाँ देखनेको न मिलतीं; तब हमने यह सारा-कुछ बिलकुल अलग ढंगसे किया होता।

लेकिन वास्तवमें जो चीज मुझे इससे भी अधिक कष्ट पहुँचा रही है वह यह है: हम सबको यहाँ एक ही उद्देश्यसे बुलाया गया है। मुझको यहाँ विशेष रूपसे उस समझौतेकी रूसे बुलाया गया है जिसमें लिखा हुआ है कि केन्द्रमें वास्तविक दायित्व, समस्त दायित्वके साथ संघ शासन — जिसमें निःसन्देह भारतके हितकी दृष्टिसे आवश्यक सुरक्षात्मक पूर्वोपाय भी शामिल हैं — के सम्बन्धमें विचार करने और उसे प्राप्त करनेके लिए मैं लन्दन जा रहा हूँ। मैं बराबर यह कहता रहा हूँ कि मैं हर आवश्यक सुरक्षात्मक पूर्वोपायपर विचार करूँगा। खुद मैं श्री लीज-स्मिथ या अन्य किसी भी व्यक्तिके इस विचारसे सहमत नहीं हूँ कि संविधान-रचनाके इस कार्यमें इतने वर्ष, यानी तीन वर्ष लग जायेंगे। वे मानते हैं कि प्रान्तीय स्वशासनकी स्थापनामें अठारह महीने लगेंगे। मेरा मूढ़ मन कहता है कि इतना सारा समय लगना जरूरी नहीं है। जब जनता निश्चय कर ले, संसद निश्चय कर ले और मन्त्रिगण तय कर लें तथा जनमत तैयार हो तो इन बातोंमें समय नहीं लगता। जहाँ लोग एकमत होकर प्रयत्नशील हों, वहाँ इन बातोंमें मैंने समय लगते नहीं देखा है। लेकिन मैं जानता हूँ कि यहाँ लोग एक मन होकर प्रयत्न नहीं कर रहे हैं, बल्कि सबके मन अलग-अलग हैं और सभी अलग-अलग दिशाओंमें — शायद एक-दूसरेके विरुद्ध दिशाओंमें — काम कर रहे हैं। इस अवस्थामें मुझे पूरा विश्वास है कि इस बहसके बावजूद न केवल केन्द्रमें उत्तरदायी शासनकी स्थापना नहीं होने जा रही है, बल्कि इस परिषद् का भी कोई ठोस परिणाम नहीं निकलने जा रहा है। यह सोचकर मुझे दुःख होता है, मेरा मन व्यथित हो उठता है कि ब्रिटेनके मन्त्रियोंका, राष्ट्रका और यहाँ आने-वाले इन सारे भारतीयोंका — हम सबका — इतना बहुमूल्य समय नष्ट हुआ; लेकिन मुझे पूरी आशंका है कि श्री लीज-स्मिथके इस आक्सीजन पम्पके बावजूद परिणाम शून्य ही होगा।

इससे मेरा मतलब यह नहीं है कि प्रान्तीय स्वशासन जबरदस्ती हमारे मत्थे मढ़ दिया जायेगा। उस परिणामकी आशंका मुझे सचमुच नहीं है। मुझे जिस चीजका भय है वह इससे भी कुछ अधिक भयंकर है -- यह कि भारतका भयंकर दमन किये जानेके अलावा इसका और कोई परिणाम नहीं निकलनेवाला है। दमनकी मुझे परवाह नहीं है; उससे हमारा लाभ ही होगा। यदि ठीक वक्तपर हमारे खिलाफ दमनकी कार्रवाइयाँ की जाती हैं तो उसे भी मैं इस परिषद्का बहुत अच्छा परिणाम मानूँगा। जो राष्ट्र निश्चित संकल्पके साथ अपने लक्ष्यकी ओर बढ़ रहा हो, दमनसे उसका कभी कोई नुकसान नहीं हुआ है; क्योंकि वह दमन तो उस राष्ट्रमें सचमुच नवजीवनका संचार करनेवाले आक्सीजनका काम करता है -- श्री लीज-स्मिथ द्वारा दिये गये आक्सीजनका नहीं।

लेकिन मुझे डर इस बातका है कि मैंने ब्रिटिश लोगों और ब्रिटिश मन्त्रियोंके साथ सहयोगका जो पतला-सा धागा तैयार किया था वह अब शायद टूटनेवाला है और मुझे शायद एक बार फिर अपने-आपको पक्का असहयोगी और सविनय प्रतिरोधी घोषित करना पड़ेगा -- करोड़ों भारतीयोंको असहयोग और सविनय प्रतिरोधका यह सन्देश फिरसे देना पड़ेगा, चाहे भारतीय आकाशमें जितने भी विमान मँडरायें, वहाँ जितने भी टैंक उतार दिये जायें। इन सबका कोई परिणाम नहीं निकलेगा। हम तो उन्हें यह शिक्षा देते हैं कि जब गोलियोंकी बौछार हो रही हो तो तुम खुशीसे नाचो -- उन्हें आतिशबाजियाँ समझो। हम उन्हें अपने देशकी आजादीके लिए कष्ट सहनेकी शिक्षा देते हैं। मैं निराश नहीं हूँ। मैं ऐसा नहीं सोचता कि यहाँ कुछ नहीं हो रहा है, इसलिए भारतमें अराजकता फैल जायेगी। मैं यह नहीं सोचता। जबतक कांग्रेस शुद्ध रहती है और देशमें चारों ओर अहिंसाकी भावना जोर पकड़ती जाती है तबतक मुझे ऐसा कोई भय नहीं है।

मुझसे अकसर यह कहा गया है कि इन आतंकवादी कार्रवाइयोंके लिए कांग्रेस ही जिम्मेदार है। आपके सामने मैं अपनी समस्त शक्तिसे इस कथनका खण्डन करता हूँ। सच तो यह है कि मेरे पास यह सिद्ध करनेके प्रमाण मौजूद हैं कि कांग्रेसके अहिंसाके सिद्धान्तने ही आजतक आतंकवादी शक्तियोंको नियन्त्रणमें रखा है। मुझे इस बातका दुःख है कि हम लोग पूरी तरह सफल नहीं हो पाये हैं, लेकिन भविष्यमें हम सफल होनेकी आशा रखते हैं। ऐसा नहीं है कि आतंकवाद भारतको स्वतन्त्रता दिला सकता है। मैं ठीक उसी ढंगका, लेकिन उससे पूर्णतर, स्वराज्य चाहता था जिस ढंगका स्वराज्य श्री जयकर चाहते हैं। मैं जनसाधारणके लिए पूर्ण स्वराज्य चाहता हूँ और यह जानता हूँ कि आतंकवादसे जनसाधारणका कोई लाभ नहीं होनेवाला है। जनसाधारण मूक और निरस्त्र है। वे लोग तो किसीको मारना जानते ही नहीं। यहाँ मैं इक्के-दुक्के लोगोंकी बात नहीं कह रहा हूँ, लेकिन भारतके आम लोग इस ओर कभी प्रवृत्त हुए ही नहीं हैं।

मैं सर्वसाधारणके लिए ऐसा ही स्वराज्य चाहता हूँ और इसलिए यह भी जानता हूँ कि आतंकवादसे उसे कोई लाभ नहीं होनेवाला है। कांग्रेस एक ओर जहाँ

ब्रिटिश सत्ता तथा उसके आतंकवाद, अर्थात् कानून-समर्थित आतंकवादका मुकाबला करेगी वहाँ दूसरी ओर वह नौजवानोंके आतंकवाद, मतलब कि गैरकानूनी आतंकके खिलाफ भी जूझेगी। मुझे लगता है कि इन दोनोंके बीचका रास्ता सहयोगका वह रास्ता था जो लॉर्ड इर्विनने ब्रिटिश राष्ट्रके लिए और मेरे लिए खोला था। उन्होंने यह सेतु बनाया था और मैं समझता था कि इसपर से होकर मैं इस कठिन मार्गको निरापद पार कर जाऊँगा। मेरी यात्रा निरापद ही सम्पन्न हुई, मैं यहाँ आ गया हूँ और अपना सहयोग देनेके लिए ही आया हूँ। लेकिन मुझे यह बात साफ-साफ स्वीकार करनी चाहिए कि जो-कुछ श्री लीज-स्मिथने कहा है, और इस पक्षसे सर तेजबहादुर सप्रू तथा श्री शास्त्री और अन्य वक्ताओंने जो बातें कही हैं, उस सबके वावजूद उनके मनमें केन्द्रमें जिस सीमित दायित्वका विचार है, वह मुझे सन्तुष्ट नहीं करेगी।

जैसा कि आप सब जानते हैं, मैं केन्द्रमें ऐसा दायित्व चाहता हूँ, जो मुझे सेना तथा वित्तपर अधिकार दे सके। मैं जानता हूँ कि वह चीज मुझे अभी यहाँ नहीं मिलने जा रही है, और यह भी जानता हूँ कि ऐसा कोई भी अंग्रेज नहीं है जो वह चीज देनेको तैयार हो। इसलिए मैं यह भी जानता हूँ कि मुझे वापस जाकर राष्ट्रको एक बार फिर कष्ट-सहनके लिए आमन्त्रित करना है। इस बहसमें मैंने इसलिए भाग लिया है कि मैं अपनी स्थिति बिलकुल स्पष्ट कर देना चाहता था। प्रान्तीय स्वशासनके बारेमें जो-कुछ मैं निजी बैठकखानोंमें कहता रहा हूँ, वह सब अब मैंने इस पटलपर से खुले आम कह दिया है, और मैंने आपको यह भी बता दिया है कि प्रान्तीय स्वशासनसे मेरा क्या आशय है और वास्तवमें कौन-सी चीज मुझे सन्तुष्ट करेगी। और मैं यह कहकर अपनी बात खत्म करता हूँ कि जिस नौकामें सर तेजबहादुर सप्रू तथा दूसरे लोग बैठे हुए हैं, उसीमें मैं भी हूँ, और मेरा निश्चित मत है कि जबतक केन्द्रमें उत्तरदायित्व नहीं मिलता या जबतक आप केन्द्रको इतना कमजोर कर देनेको तैयार न हों कि प्रान्त उसपर अपने हुक्म चला सके तबतक सच्चा प्रान्तीय स्वशासन असम्भव है। मैं जानता हूँ कि आज आप यह करनेके लिए तैयार नहीं हैं। मैं जानता हूँ कि यह परिषद् संघीय सरकारकी रचना होनेपर कमजोर केन्द्रकी नहीं, बल्कि सशक्त केन्द्रकी कल्पना करती है।

विदेशी अधिकारियों द्वारा प्रशासित सशक्त केन्द्र और सच्चा स्वशासन, ये दोनों परस्पर विरोधी चीजें हैं। इसलिए मुझे लगता है कि सच पूछिए तो प्रान्तीय स्वशासन और केन्द्रीय उत्तरदायित्व दोनों, साथ-साथ ही निभने-बिगड़नेवाली चीजें हैं। लेकिन मैं फिर कहता हूँ कि मैं अपने मनमें कोई दुराग्रह लेकर नहीं बैठा हुआ हूँ। अगर कोई मुझे समझा सके कि वास्तवमें वैसा प्रान्तीय स्वशासन देनेकी बात है जैसे स्वशासनकी कल्पना मैंने की है — उदाहरणके लिए, जैसा मैंने बंगालके सम्बन्धमें कहा है — तो मैं उसे समझने-स्वीकारने को तैयार हूँ।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबल कांफरेंस (सेकेंड सेशन) : प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐंड माइनॉरिटीज कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ ४५३-५४

२२६. संघ-संरचना समितिकी बैठककी कार्यवाहीके कुछ अंश

लन्दन
२५ नवम्बर, १९३१

श्रीमन्[1],

इस महत्त्वपूर्ण विषयपर आपका कलका भाषण मैंने अत्यन्त ध्यानपूर्वक और निस्सन्देह आप जैसे सम्पूर्ण आदरके अधिकारी हैं वैसे आदरके साथ सुना। इस भाषणके सन्दर्भमें मैंने गत वर्षकी संघ-संरचना समितिकी रिपोर्टके वे अनुच्छेद भी पढ़े जो वित्त-व्यवस्थासे सम्बन्धित हैं। यह शायद १८वाँ, १९वाँ और २०वाँ अनुच्छेद है। किन्तु मुझे दुःखके साथ कहना पड़ता है कि इन अनुच्छेदोंमें जो प्रतिबन्ध सुझाये गये हैं उनका मैं समर्थन नहीं कर सकता। जबतक हम ठीक-ठीक यह न जान लें कि हमारे आर्थिक दायित्व क्या-क्या हैं तबतक मेरी, और मैं समझता हूँ कि हम सबकी स्थिति कठिन ही रहेगी।

अब मैं अपनी बात जरा साफ-साफ बता दूँ। यदि 'सेना'को आरक्षित विषयोंमें रखा गया तो स्वभावतः मैं स्थितिपर एक दृष्टिसे विचार करूँगा और यदि उसे हस्तान्तरित विषयोंमें रखा गया तो दूसरी दृष्टिसे विचार करूँगा। एक और कारण है जिससे मुझे अपनी राय प्रकट करनेमें कठिनाई महसूस होती है। वह यह है कि कांग्रेसका दृढ़ मत है कि भावी सरकारको अपने सिर जो आर्थिक दायित्व लेने पड़ सकते हैं, उन्हें वह किसी निष्पक्ष न्यायाधिकरण द्वारा जाँच लिये जानेपर ही स्वीकार करेगी।

मेरे पास चार निष्पक्ष लोगों द्वारा तैयार की गई एक रिपोर्ट है। इन चारमें से दो तो बम्बई उच्च-न्यायालयके भूतपूर्व एडवोकेट जनरल हैं। वे हैं श्री बहादुरजी और श्री भूलाभाई देसाई। तीसरे परीक्षक या समितिके सदस्य प्रोफेसर शाह[2] हैं। ये बहुत दिनोंतक बम्बई विश्वविद्यालयमें प्रोफेसर रह चुके हैं। इनकी ख्याति सारे भारतमें है और भारतीय अर्थशास्त्रपर इन्होंने कई मूल्यवान पुस्तकें लिखी हैं। समिति-के चौथे सदस्य श्री कुमारप्पा[3] हैं। उनके पास यूरोपीय शिक्षण-संस्थाओंकी उपाधियाँ हैं और वित्त-व्यवस्थाके सम्बन्धमें उनके विचारोंका बहुत आदर और प्रभाव है। इन चारों सज्जनोंने एक विस्तृत रिपोर्ट पेश की है। मैं मानता हूँ कि इसमें उन्होंने निष्पक्ष जाँचकी आवश्यकता निर्विवाद रूपसे सिद्ध कर दी है, और यह दिखाया है कि बहुतसे दायित्व वास्तवमें भारतके नहीं हैं।

१. लॉर्ड रीडिंग; लॉर्ड सैंकीके चले जानेपर उन्होंने अध्यक्षका आसन ग्रहण किया था।

२. प्रोफेसर के० टी० शाह।

३. डॉ० जे० सी० कुमारप्पा।

इस सम्बन्धमें मैं अत्यन्त नम्रतापूर्वक एक बात कहना चाहूँगा। वह यह है कि कांग्रेसने यह कभी नहीं कहा है कि वह राष्ट्रीय ऋणके एक पैसेकी भी देनदारीसे इनकार करेगी, और उसके खिलाफ जो ऐसी बातें फैलाई गई हैं, उसके पीछे दुष्टता-की ही वृत्ति रही है। मगर कांग्रेसने जो बात वास्तवमें कही है, वह यह है कि कुछ ऐसे दायित्व, जिन्हें भारतका माना जाता है, वास्तवमें भारतके सिर नहीं पड़ने चाहिए और उनका बोझ ग्रेट ब्रिटेनको उठाना चाहिए। इन जिल्दोंमें आपको इन तमाम दायित्वोंका विवेचन देखनेको मिलेगा। यहाँ इन बातोंको दोहराकर मैं समिति को उबाना नहीं चाहता। जो लोग इन दो जिल्दोंको पढ़ना चाहें वे इन्हें पढ़कर काफी लाभ उठा सकते हैं, बल्कि मैं तो कहूँगा कि अवश्य उठायेंगे। इन्हें पढ़कर शायद वे भी यह जान पायेंगे कि ये दायित्व भारतके सिर कभी नहीं थोपे जाने चाहिए थे। इस परिस्थितिसे मुझे लगता है कि अगर हमें यह मालूम हो कि वास्तविकता क्या है, तो कोई निर्णायक मत देना सम्भव होगा, लेकिन इस शर्तको ध्यानमें रखते हुए मैं यह कहनेका साहस करता हूँ कि संघ-संरचना समितिके अनुच्छेद १८, १९ और २० में जो प्रतिबन्ध या तथाकथित रक्षात्मक पूर्वोपाय सुझाये गये हैं वे भारतको अपने वांछित मार्गपर गति देनेके बजाय उसकी प्रगतिमें बाधक ही साबित होंगे।

श्रीमन्, कल आपने कहा था कि आपके सामने सवाल भारतीय मन्त्रियोंके प्रति विश्वासकी कमीका नहीं है। इसके विपरीत, आपको पूरी आशा है कि भारतीय मन्त्री भी अन्य मन्त्रियोंकी तरह ही अच्छी तरहसे अपना काम करेंगे। लेकिन आपको भारतके बाहर भारतकी साखकी फिक्र है, आपकी चिन्ता यह है कि यदि सुरक्षात्मक पूर्वोपायोंकी व्यवस्था नहीं की गई तो भारतको पूँजी देनेवाले और उचित ब्याजपर भारतमें पैसा लगानेवाले विनियोक्ता असन्तुष्ट हो जायेंगे। और यदि मुझे ठीक याद हो तो आपने आगे यह भी कहा था कि यहाँसे जब भी भारतमें कोई विनियोग किया गया है या भारतको पैसा भेजा गया है तो यह नहीं समझना चाहिए कि वह भारतके भी हकमें नहीं था।

यदि मुझे ठीक स्मरण हो तो आपने इन शब्दोंका प्रयोग किया था — "स्पष्ट ही यह भारतके हितमें था"। आपके यह-सब कहनेके बाद मैं इस बातका इन्तजार कर रहा था कि अब आप इसके उदाहरण देंगे, लेकिन निस्सन्देह आपने यह मान लिया कि इन बातोंको या आपके मनमें जो उदाहरण रहे हों, उन्हें तो हम जानते ही होंगे। लेकिन जब आप बोल रहे थे, उस समय वास्तवमें मेरे मनमें इसके विपरीत दृष्टान्त थे, और मैंने मन-ही-मन कहा, खुद मेरे अनुभवमें ऐसे दृष्टान्त आये हैं, जिनके सम्बन्धमें मैं यह साबित कर सकता हूँ कि भारत और ग्रेट ब्रिटेनके हित एक-से नहीं थे, वे एक-दूसरेके विरुद्ध थे और इसलिए हम ऐसा नहीं कह सकते कि ग्रेट ब्रिटेनसे भारतको जब भी ऋण मिला वह भारतके हकमें ही था।

उदाहरणके लिए, अनेक लड़ाइयोंको ही लीजिए। अफगानिस्तानके साथ हुई लड़ाइयोंको ही देखिए। जब मैं युवक था, मैंने स्वर्गीय सर जॉन केका लिखा अफगानि-स्तानकी लड़ाइयोंका इतिहास बड़े कौतूहलके साथ पढ़ा था, और यह बात अब भी मेरे

स्मृति-पटलपर भली-भाँति अंकित है कि इनमें से अधिकांश लड़ाइयाँ भारतके हितमें नहीं थीं। इतना ही नहीं, बल्कि इन लड़ाइयोंके सम्बन्धमें गवर्नर जनरलने भूलसे काम लिया। स्वर्गीय दादाभाई नौरोजीने, जब हम युवक थे, हमें बताया था कि भारतमें ब्रिटिश अर्थ-नीतिका इतिहास जहाँ भारतके शोषणकी कहानी नहीं है वहाँ वह अव्यवस्था और भूलका इतिहास है।

लॉर्ड चान्सलर महोदयने यह चेतावनी दी और आपने इसका जोरदार समर्थन किया कि इस समय वित्त-व्यवस्था एक बहुत ही नाजुक विषय है, और इसलिए हममें से जो लोग इस चर्चामें भाग लें उन्हें सावधान और सतर्क रहना चाहिए, ताकि वे इसमें गलत तरीकेसे हाथ डालकर भारतके वित्त-मन्त्रीके रास्तेमें मुश्किलें न पैदा कर दें या उनके सामने जो मुश्किलें पहलेसे ही मौजूद हैं, उन्हें और बढ़ा न दें। इसलिए मैं तफसीलसे चर्चा नहीं करना चाहता। लेकिन विनिमय-दरमें वृद्धिके सम्बन्धमें एक बात मुझे कहनी ही पड़ेगी। मेरा मतलब रुपयेका मूल्य १ शिलिंग ४ पेंससे बढ़ाकर १ शिलिंग ६ पेंस कर दिये जानेसे है। यह कदम भारतीयोंकी ओरसे — ऐसे भारतीयोंकी ओरसे जो किसी भी तरहसे कांग्रेससे सम्बद्ध नहीं थे — लगभग एक स्वरसे विरोध किये जानेके बावजूद उठाया गया। ये सब स्वतन्त्र विचारोंवाले लोग थे। इनमें से कुछ अर्थ-नीतिके बहुत बड़े विशेषज्ञ थे और वे जो-कुछ कह रहे थे, अच्छी तरह सोच-समझकर कह रहे थे। यहाँ भी यही पता चलता है कि भारतके हितको विदेशी हितका दास बना दिया गया। इतना जाननेके लिए विशेषज्ञ होनेकी जरूरत नहीं है कि रुपयेका मूल्य कम होना किसानोंके लिए सदा लाभप्रद होता है, या आम तौरपर ऐसा ही होगा। यहाँ दो वित्त-विशेषज्ञोंको यह स्वीकार करते सुनकर मैं बड़ा प्रभावित हुआ कि यदि रुपयेको स्टर्लिंग (ब्रिटिश मुद्रा)से जोड़नेके बजाय निर्बन्ध छोड़ दिया जाता तो कमसे-कम कुछ कालतक तो उससे किसानोंको बड़ा लाभ होता। बल्कि वे तो बिलकुल अन्तिम छोरतक जाकर यहाँतक सोचते थे कि यदि रुपयेको अपने भाग्यके भरोसे छोड़ दिया जाये और फलतः उसकी विनिमय-क्षमता गिरकर उसके वास्तविक मूल्यतक, अर्थात् ६–७ पेंसतक पहुँच जाये तो यह भारतके लिए बहुत बड़ी विपत्तिका विषय होगा; वैसे खुद मैं तो तब भी यह नहीं समझ पाया कि उससे भारतीय किसानोंको सचमुच किसी प्रकारकी हानि होगी।

इस परिस्थितिमें मैं ऐसे रक्षात्मक पूर्वोपायोंका समर्थन नहीं कर सकता, जो भारतीय वित्त-मन्त्रीके दायित्वोंके निर्वाहके मार्गमें — उन दायित्वोंके निर्वाहके मार्गमें जिनकी अवधारणा मुख्यतः रैयतोंके हितोंको ध्यानमें रखकर की गई है — बाधक हों।

लेकिन मैं समितिका ध्यान एक और बातकी ओर आकृष्ट करना चाहता हूँ। श्रीमन्, लॉर्ड चान्सलर महोदय तथा आपके द्वारा दी गई चेतावनीके बावजूद, पता नहीं क्यों, मुझे लगता है कि यदि भारतीय वित्त-तन्त्रका प्रबन्ध ठीक ढंगसे केवल भारतके ही हकमें किया जाये तो विदेशी बाजारमें — अर्थात् लन्दनमें — हमें आजकी जैसी गम्भीर तेजी और मन्दीका सामना नहीं करना पड़े। आपको मैं यह भी बताना

चाहता हूँ कि मैं ऐसा क्यों मानता हूँ। जब सर डेनियल हैमिल्टनके लेखोंसे पहले-पहल मेरा परिचय हुआ तो उनके प्रति मेरा रवैया बहुत ही सन्देह और संकोचसे भरा हुआ था। भारतीय वित्त-व्यवस्थाके बारेमें मैं लगभग कुछ जानता ही नहीं था, यह विषय मेरे लिए बिलकुल नया था। लेकिन वे पूरे उत्साहके साथ मुझसे उन लेखोंको पढ़नेका आग्रह करते रहे जो वे मुझे भेजते जा रहे थे। जैसा कि हम सभी जानते हैं, भारतमें उनके बहुत बड़े-बड़े हित हैं, वे खुद बड़े महत्त्वपूर्ण ओहदोंपर रहे हैं और सुयोग्य वित्त-विशेषज्ञ भी हैं। उन्होंने जो रास्ते सुझाये हैं, उनके मुताबिक आज वे स्वयं ही प्रयोग कर रहे हैं, और जो लोग भारतीय वित्त-व्यवस्थाके प्रति उनके दृष्टिकोणको समझना चाहेंगे उनके सामने उन्होंने एक सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह रखी है कि भारतको अपनी मुद्राके लिए सोने या चाँदी अथवा किसी भी अन्य धातुके मानकी आवश्यकता नहीं है। उसके पास एक अलग किस्मकी धातुका भण्डार है। वह धातु है — भारतके करोड़ों श्रमिक। यह सच है कि भारतके वित्त-तन्त्रके सम्बन्धमें ब्रिटिश सरकारने अपनेको दिवालिया ऐलान नहीं किया है। अभीतक वह इस गाड़ीको चलाती रही है; लेकिन कौन-सा मूल्य चुकाकर, किसके हितोंका बलिदान करके? मेरी नम्र सम्मतिमें, किसानोंके हितोंका बलिदान करके, उन्हींको चूसकर वह इस गाड़ीको चला रही है। यदि अधिकारियोंने वित्तीय समस्यापर रुपयेको दृष्टिमें रखकर सोचनेके बजाय, सर्वसाधारणको दृष्टिमें रखकर सोचा होता तो मेरी विनम्र रायमें वे आजतक भारतके मामलोंकी जैसी व्यवस्था करते आये हैं उससे लाख दर्जे अच्छी व्यवस्था कर पाते। फिर उन्हें विदेशी बाजारकी शरण न लेनी पड़ती। हर आदमी यह स्वीकार करता है और ब्रिटिश वित्त-विशेषज्ञोंने हमें बताया है कि दसमें से नौ साल तो आर्थिक सन्तुलन भारतके पक्षमें ही रहता है।

तात्पर्य यह कि जिस वर्षको आर्थिक क्षेत्रमें भारतका आठ या दस आने सफलताका वर्ष कहा जा सकता है, उस वर्ष भी यही स्थिति रहती है। वास्तवमें आठ आने सफलताका वर्ष भी उसे अनुकूल आर्थिक सन्तुलन प्रदान करके लिए पर्याप्त है। फिर उदार प्रकृतिकी कृपासे भारत धरती मातासे इतना पैदा कर लेता है कि वह उसकी सारी देनदारियोंके भुगतानकी दृष्टिसे पर्याप्त, बल्कि उससे भी अधिक होता है, उसे जितना आयात करना पड़ सकता है उस सबके लिए काफीसे ज्यादा ही होता है। यदि यह सच है, और मैं मानता हूँ कि सच है, तो भारत-जैसे देशको विदेशी पूँजीका सहारा लेनेकी कोई जरूरत नहीं है। लेकिन उसे ऐसी स्थितिमें डाल दिया गया है कि उसको विदेशी पूँजीका सहारा लेना पड़ता है। 'होम चार्ज'के नाम-पर और सुरक्षा सम्बन्धी जबरदस्त खर्च पूरा करनेमें उसका बहुत-सा धन बहकर विदेश चला जाता है और इसी कारण उसको विदेशी पूँजीका सहारा लेना पड़ता है। वह ये खर्च उठानेमें सर्वथा असमर्थ है, फिर भी एक ऐसी राजस्व-नीति द्वारा ये सारे खर्च उससे पूरे करवाये जाते रहे हैं जिसकी घोर निन्दा एक कार्यवाहक कमिश्नर स्वर्गीय रमेशचन्द्र दत्तने भी की है। मुझे मालूम है कि इस विषयपर लॉर्ड कर्जनसे उनका बड़ा विवाद हो गया था, और हम भारतीयोंका निष्कर्ष यह था कि स्वर्गीय रमेशचन्द्र दत्तका पक्ष सही था।

लेकिन मैं एक कदम और आगे जाना चाहूँगा। सभी जानते हैं कि ये करोड़ों किसान सालमें छः महीने बेकार रहते हैं। यदि ब्रिटिश सरकार ऐसा-कुछ करे जिससे ये लोग सालमें छः महीने बेकार न रहें तो कल्पना कीजिए कि वे कितना अधिक धन पैदा करेंगे। फिर हमें विदेशी पूँजीका सहारा लेनेकी कभी जरूरत ही क्यों पड़ेगी? मुझ-जैसे साधारण आदमीको, जो सदा सर्वसाधारणके विषयमें ही सोचता रहता है और जो किसी भी बातके सम्बन्धमें वैसा ही महसूस करना चाहता है जैसा कि वे लोग करेंगे, वित्त-व्यवस्थाकी समस्या इसी रूपमें दिखाई देती है। वे लोग तो यही कहेंगे कि 'हमारे पास पूरी श्रम-शक्ति है और इसलिए हम विदेशी पूँजीका सहारा नहीं लेना चाहते।' जबतक हम श्रम करते हैं, हमारे श्रमसे उत्पादित वस्तुओंको सारी दुनिया चाहेगी। और यह सही है कि आज दुनिया हमारे श्रमसे उत्पादित वस्तुएँ चाहती है। हम उन वस्तुओंका उत्पादन कर सकेंगे जिन्हें दुनिया हमसे स्वेच्छासे और राजी-खुशी खरीदना चाहेगी। अतीतमें युगोंतक भारतकी यही स्थिति रही है। इसलिए श्रीमन्, आपने भारतीय वित्त-तन्त्रके सम्बन्धमें जो भय व्यक्त किया है, वैसा कोई भय मुझे नहीं है। ऐसे विचार रखते हुए मैं वास्तवमें इस भयको ठीक नहीं मानता कि अभी जो बात कहनेकी जरूरत नहीं है, वह बात यदि हमने दबी आवाजमें भी कह दी, या यदि मुझ-जैसा कोई व्यक्ति आज यह कहे कि अगर भारतको केन्द्रमें दायित्व मिलना है तो मैं वित्त-तन्त्रपर पूर्ण अधिकार चाहता हूँ, तो उस हालतमें भारतीय वित्त-व्यवस्था खतरेमें पड़ जायेगी। मेरे विचारसे तो जबतक अपने रक्षकों और अपने खजानेपर हमारा पूरा नियन्त्रण नहीं होता तबतक हम कोई दायित्व सँभाल नहीं सकते और वह दायित्व वास्तवमें दायित्व नहीं होगा।

अब चूँकि मेरे विचार ऐसे हैं, इसलिए मुझे लगता है कि जो रक्षात्मक पूर्वोपाय मैं सुझाऊँगा वे बिलकुल भिन्न प्रकारके होंगे; लेकिन अभी — अर्थात् जबतक मुझे यह मालूम न हो जाये कि राष्ट्रको पूर्ण दायित्व मिलना है, सेना और गैर-सैनिक अमलोंपर उसे पूरा नियन्त्रण प्राप्त होनेवाला है और राष्ट्रको जितने सिपाहियोंकी आवश्यकता होगी, केवल उतने ही सिपाही, और सो भी भारत-जैसे गरीब राष्ट्रको अनुकूल पड़नेवाली शर्तोंपर, लेनेकी पूर्ण स्वतन्त्रता होगी तबतक — मैं कोई पूर्वोपाय सुझानेकी स्थितिमें नहीं हूँ। जबतक ये सारी बातें मुझे मालूम नहीं हो जातीं कोई पूर्वोपाय सुझाना मेरे लिए लगभग असम्भव है। सचाई यह है कि जब इन सारी बातोंका खयाल किया जायेगा तो शायद पूर्वोपायोंकी कोई आवश्यकता ही नहीं रह जायेगी। हाँ, अगर कोई शुरूसे भारतको अपना दायित्व आप सँभालने और देशका प्रशासन शान्तिपूर्ण ढंगसे चलानेकी योग्यतामें अविश्वास रखकर चले तो बात और है। इन परिस्थितियोंमें मैं जिस एक-मात्र खतरेकी कल्पना कर सकता हूँ वह यही होगा कि हमारे दायित्व सँभालते ही देशमें घोर अशान्ति और अव्यवस्था फैल जायेगी। यदि ब्रिटेनवालोंके मनमें यही भय हो तब तो हमारे और उनके बीच सुलह-समझौतेका कोई आधार ही नहीं रह जाता। हम दायित्व इसलिए लेते हैं, हम दायित्व इसलिए

चाहते हैं, दायित्वकी माँग इसलिए करते हैं कि हमें यह विश्वास है कि हम अपने कार्य-व्यापार ठीक ढंगसे सँभाल ले जायेंगे, और मुझे लगता है कि जितने अच्छे ढंगसे ब्रिटिश प्रशासकोंने उसे सँभाला है या वे सँभाल सकते हैं, निश्चय ही उससे अच्छे ढंगसे हम उसे सँभालेंगे। ऐसा मैं इसलिए नहीं कहता हूँ कि ब्रिटिश प्रशासक योग्य नहीं हैं। मैं यह स्वीकार करता हूँ कि वे हमसे बहुत अधिक योग्य हैं, मैं यह भी स्वीकार करता हूँ कि उनमें संगठनकी ऐसी क्षमता है जिसे हमें उनके चरणोंमें बैठकर सीखना है। लेकिन हमारे पक्षमें एक चीज है — यह कि हम अपने देशको जानते हैं, हम अपने लोगोंको जानते हैं और इसलिए हम अपनी सरकार सस्तेमें चला सकते हैं। हम सभी झगड़ोंसे दूर रहेंगे और चूँकि हमें साम्राज्यकी कोई आकांक्षा नहीं है, इसलिए हम अफगानोंके साथ या किसी अन्य राष्ट्रके साथ लड़ाई नहीं करेंगे। इसके बजाय हम उनसे मैत्रीके सम्बन्ध स्थापित करेंगे और उनके लिए हमसे डरनेका कोई कारण नहीं होगा।

भारतीय वित्त-व्यवस्थाके विषयमें सोचते हुए मेरे मनमें ऐसे ही विचार आ रहे हैं। इसलिए आप देखेंगे कि मेरी कल्पनामें भारतीय वित्त-तन्त्रका कोई बहुत बड़ा स्थान नहीं है, और वैसी खतरनाक तसवीर तो मेरे मनमें है ही नहीं जैसी कि आपके, या लॉर्ड चान्सलर महोदय अथवा उन ब्रिटिश मन्त्रियोंके मनमें है जिनसे मुझे इस विषयपर बातचीत करनेका सौभाग्य मिला है। इसलिए, और मैंने जो अन्य कारण बताये हैं उन कारणोंसे भी, मुझे विनम्रतापूर्वक कहना पड़ेगा कि यहाँ जो रक्षात्मक पूर्वोपाय सुझाये गये हैं उनसे मैं सहमत नहीं हो सकता और न उस भयको ही सही मानता हूँ जिससे ब्रिटेनकी जनता या ग्रेट ब्रिटेनके जिम्मेदार लोगोंके मन आक्रान्त हैं।

एक बात मैं कहना चाहूँगा : यह राष्ट्रीय सरकार जो भी देनदारी स्वीकार करेगी, उसके लिए ठीक ढंगकी गारंटी, ऐसी गारंटी जैसी कि कोई राष्ट्र दे सकता है, दी जायेगी और उसके लिए सही ढंगके आश्वासन भी दिये जायेंगे। लेकिन, मेरे विचारसे, वे गारंटियाँ या आश्वासन कभी भी उस ढंगके नहीं होंगे जिस ढंगकी गारंटियों या आश्वासनोंकी चर्चा इन अनुच्छेदोंमें की गई है। अगर हमें ग्रेट ब्रिटेनके प्रति कुछ देनदारियाँ स्वीकार करनी पड़ती हैं, और इसमें सन्देह नहीं कि कुछ स्वीकार करनी ही पड़ेंगी और उनका भुगतान भी करना पड़ेगा, और मान लीजिए हम बादमें गड़बड़ी करते हैं और उन्हें चुकानेके लिए कुछ नहीं करते तो उस हालतमें कोई भी कागजी आश्वासन किसी काम नहीं आयेगा। या मान लीजिए भारतके अपना प्राप्य प्राप्त करनेके बादसे दुर्भाग्यवश एकके-बाद-एक कई मौसम प्रतिकूल होते चले जाते हैं, तो उस हालतमें मैं नहीं समझता कि किसी भी रक्षात्मक पूर्वोपायके बलपर भारतसे जबरदस्ती पैसा वसूल किया जा सकता है। इन आपदामय परिस्थितियोंमें, इन अदृश्य स्थितियोंमें, प्रकृतिके ऐसे प्रकोप होनेकी हालतमें किसी भी राष्ट्रीय सरकारके लिए कोई आश्वासन देना असम्भव है।

इस प्रकरणको मैं और आगे नहीं बढ़ाना चाहता। मैंने सोचा कि भारतीय वित्त-व्यवस्थाके सम्बन्धमें मुझ-जैसे साधारण व्यक्तिके क्या विचार हैं, यह बतानेके लिए मैं समितिका चन्द मिनटोंका समय लूँ।

इन विषयोंकी चर्चा करते हुए मुझे जिस खेदका अनुभव होता रहा है, उसके उल्लेखके साथ मैं अपनी बात समाप्त करता हूँ। मुझे खेद इस बातका है कि मुझे भारतीय मामलोंका इतना अनुभव रखनेवाले इतने सारे प्रशासकों और गोलमेज परिषद्में भाग ले रहे अपने बहुत-से देशभाइयोंके विचारोंके विरुद्ध बातें कहनी पड़ीं। लेकिन, अगर कांग्रेसके प्रतिनिधिकी हैसियतसे मुझे अपना कर्त्तव्य पूरा करना है तो दूसरोंकी नाराजीका खतरा उठाकर भी मुझे उन विचारोंको व्यक्त करना ही है जो कांग्रेसके बहुत-से सदस्योंके साथ-साथ मेरे भी विचार हैं।

अध्यक्ष : श्री गांधी, जब आप बोल रहे थे, उस समय मैं बीचमें आपको टोकना नहीं चाहता था, लेकिन मैं नहीं समझता कि आपने मेरी बातोंको बिलकुल ठीक-ठीक पेश किया। स्पष्ट ही मैं आपको बीचमें टोक नहीं सकता था, क्योंकि उसका मतलब फिरसे पिछली बातोंकी चर्चा करना और जो बातें पहले ही कही जा चुकी हैं उन्हें दोहराना होता। आखिरकार वे सारी बातें कार्यवाहीमें दर्ज तो हैं ही। शायद ये, जो बातें कही गई हैं, उनमें से कुछकी गलत व्याख्या ही हों, और बेशक ऐसे कई आर्थिक और वित्तीय मसले हैं, जिनकी चर्चा नहीं हुई है, लेकिन जिन्हें आपने अपने भाषणके दौरान पेश किया है। उनके सम्बन्धमें मैं यही कहना चाहता हूँ कि आपने उनका उल्लेख अपनी दलीलके लिए ही किया है। मुझे जो-कुछ कहना है, वह सब वित्त-व्यवस्थाके सम्बन्धमें दिये अपने भाषणोंमें मैं कह चुका हूँ, लेकिन मैं नहीं चाहता कि कोई यह मान ले कि इस सबका उत्तर नहीं दिया जा सकता।

गांधीजी : हाँ, हाँ, ऐसा तो है ही।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १७-१२-१९३१ और **इंडियन राउंड टेबल कांफरेंस (सेकेंड सेशन): प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐंड माइनॉरिटीज कमिटी**, खण्ड १, पृष्ठ ४५९-६०

२२७. संघ-संरचना समितिकी बैठककी कार्यवाहीके कुछ अंश

लन्दन

२६ नवम्बर, १९३१

अध्यक्ष : आप कृपया रिपोर्टका मसविदा हाथोंमें ले लें। मेरा खयाल है, इसमें बहुत समय नहीं लगेगा, क्योंकि मैंने जो किया है वह यह है कि विभिन्न सदस्योंसे उनके विचार माँगें हैं और उन्हें एक जगह रख दिया है। जैसा कि हम आम तौरपर करते हैं, मैं इसे पूरा पढ़ देता हूँ और फिर हम अलग-अलग प्रत्येक अनुच्छेदकी चर्चा करेंगे। यह व्यापारिक भेद-भावपर संघ-संरचना समितिकी चौथी रिपोर्ट है।

> १. इस विषयपर समितिको काफी हदतक सहमति पा सकनेकी खुशी है। उसे यह याद है कि गत परिषद्की उसकी रिपोर्टके अनुच्छेद २२ में यह कहा गया था कि इस बातपर आम सहमति है कि व्यापार और वाणिज्यके मामलोंमें समान-व्यवहारका सिद्धान्त स्थापित होना चाहिए और परिषद्की पूरी समितिने १९ जनवरी, १९३१ की अपनी बैठकमें निम्नलिखित अनुच्छेदको अल्पसंख्यक-समस्या से सम्बन्धित उप-समितिकी रिपोर्टके अंगके रूपमें स्वीकार किया था :
>
> "ब्रिटिश व्यापारी वर्गके अनुरोधपर यह सिद्धान्त सामान्यतः स्वीकार कर लिया गया कि भारतमें व्यापार करनेवाले ब्रिटिश व्यापारी वर्ग, फर्मों और कम्पनियों तथा जन्मतः भारतीय लोगोंके बीच कोई भेद-भाव नहीं होना चाहिए और इन अधिकारोंके नियमनके लिए पारस्परिकतापर आधारित एक उपयुक्त करार कर लेना चाहिए।"
>
> बहसके दौरान एकसे अधिक सदस्योंने समितिको यह भी याद दिलाया कि सर्वदलीय परिषद्ने १९२८ में अपनी रिपोर्टमें कहा था कि "भारतमें वैध रूपसे व्यापार करनेवाले किसी समुदायके विरुद्ध कोई भेद-भावपूर्ण कानून बन सकता है, इस बातकी कल्पना भी नहीं की जा सकती।"
>
> २. समिति इस सिद्धान्तको मानती है और फिरसे इसकी पुष्टि करती है कि संघके क्षेत्रके अन्दर वैध रूपसे वाणिज्य और उद्योगमें लगे लोगोंको समान अधिकार और समान अवसर दिये जाने चाहिए और जो मतभेद सामने आये हैं वे मुख्यतया (पूर्णतया नहीं) उस सीमाके बारेमें हैं जिसके भीतर इस सिद्धान्तको काम करना चाहिए और उसे लागू करनेकी सर्वश्रेष्ठ पद्धतिके बारेमें हैं। . . .

गांधीजी : लॉर्ड चान्सलर, मैं चाहूँगा कि उस अनुच्छेदके अन्तमें यह और जोड़ दिया जाये :

"परन्तु, कुछका यह मत है कि भावी सरकारपर सिवा इसके और किसी प्रतिबन्धका भार नहीं डालना चाहिए कि केवल नस्ल, रंग या धर्मके आधारपर कोई भेद-भाव नहीं किया जायेगा।"

अध्यक्ष : मैं निश्चय ही इसे शामिल कर लूँगा। आप इसे किस जगह रखना चाहते हैं?

गांधीजी : दूसरे अनुच्छेदके अन्तमें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबल कांफरेंस (सेकेंड सेशन): प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐंड माइनॉरिटीज कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ ४७२-४

२२८. संघ-संरचना समितिकी बैठककी कार्यवाहीके कुछ अंश[1]

लन्दन
२७ नवम्बर, १९३१

अध्यक्ष : श्रीगांधी दूसरे अनुच्छेदके अन्तमें कुछ जोड़ना चाहते हैं।

गांधीजी : मैं अनुच्छेद २ के अन्तमें[2] "उत्तरदायी शासन" शब्दोंके बाद ये शब्द जोड़ना चाहता हूँ, "और पूर्ण नियन्त्रणमें कमी होनेसे वित्त-मन्त्रीके अपना कर्त्तव्य पूरा करनेमें बाधा आयेगी।"

अध्यक्ष : ये शब्द नोट कर लिये गये हैं।[3]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबल कांफरेंस (सेकेंड सेशन) : प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी, ऐंड माइनॉरिटीज कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ ४८३

१. समितिमें वित्तीय संरक्षणोंसे सम्बन्धित चौथी प्रस्तावित रिपोर्टपर बहस जारी थी।

२. अनुच्छेद इस प्रकार समाप्त होता था : "... कुछ सदस्य फिर ... वित्तीय संरक्षणोंपर अपनी आपत्तिमें और आगे बढ़े, और उन्होंने भारतीय वित्त-मन्त्रीके विधानमण्डलके प्रति पूर्णतया उत्तरदायी रहते हुए, अपने कार्य-भारका प्रशासन करनेके अधिकारोंको किसी भी तरह सीमित करनेकी बातको माननेसे इस आधारपर इनकार कर दिया कि जो संविधान विधानमण्डलको वित्तपर पूण नियन्त्रण प्रदान नहीं करता, उसे उत्तरदायी शासन नहीं कहा जा सकता।"

३. रिपोर्टके संशोधित रूपमें ये शब्द शामिल कर लिये गये थे।

२२९. तार: वल्लभभाई पटेलको

[२८ नवम्बर, १९३१][1]

शनिवारको चलूँगा रविवारको विलेन्यूव पहुँचूँगा। ग्यारह तक वहाँ रहूँगा। बारहको वेनिससे क्राकोविया (जहाज)से रवाना हूँगा।[2]

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ३-१२-१९३१

२३०. गोलमेज परिषद्के पूर्णाधिवेशनकी कार्यवाहीका अंश

लन्दन
२८ नवम्बर, १९३१

सर ह्यूबर्ट कार: लॉर्ड चान्सलर, पिछले सप्ताह या दस दिनोंमें हम परिषद्की तथाकथित असफलताके सम्बन्धमें बहुत-कुछ सुन चुके हैं। इसलिए मुझे अपने साथियोंके और अपने विचारको, जो उस कथनके निश्चित रूपसे विपरीत है, व्यक्त करनेका यह अवसर पाकर खुशी हुई है। हम ऐसा महसूस करते हैं कि पिछले साल जो विचार-विमर्श चलता रहा उससे भारतके भविष्यके लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बहुत-से प्रश्नोंपर बहुत हदतक सहमति हो गई है। यह विचार रखते हुए हम अभी भी मौजूदा कठिनाइयोंकी ओरसे अपनी आँखें नहीं मूँद रहे हैं। पर हमें उन भारी कठिनाइयोंकी भी तीखी स्मृति है जो इस परिषद्के सामने, जब यह पिछले साल पहले-पहल शुरू हुई, आई थीं। . . .

उसके कार्यके बिना महात्मा गांधी इस देशके बहुत-से लोगोंके लिए बहुत-कुछ पौराणिक व्यक्ति ही बने रहते — ऐसे व्यक्ति जो निषिद्ध स्थानोंपर नमक बनाते हैं या सभी तरहका सूत बुनते हैं।

गांधीजी: आपका मतलब है — सभी तरहका सूत कातते हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबल कांफरेंस (सेकेण्ड सेशन): प्रोसीडिंग्स ऑफ द प्लेनरी सेशन्स, पृष्ठ १०३-१०५

१. "दैनन्दिनी, १९३१" में गांधीजी ने वल्लभभाई पटेलको एक तार भेजनेका जिक्र किया है। अनुमान है कि वह तार यही था।

२. वस्तुत: गांधीजी १४ दिसम्बरको ब्रिण्डिसीसे समुद्री जहाजसे रवाना हुए थे।

२३१. भेंट : लन्दनके पत्र-प्रतिनिधियोंको

[३० नवम्बर, १९३१ के पूर्व][1]

गोलमेज परिषद् यदि असफल रहती है तो ब्रिटिश व्यापारपर इसका विनाशकारी प्रभाव पड़ेगा, क्योंकि बहिष्कार बढ़ेगा। इसलिए हर कोई यही सोचेगा कि परिषद् असफल न हो — यह कोशिश स्वयं ब्रिटेनके अपने हितमें है। वैसा हो, इसकी बजाय मैं वाजिब त्यागतक करनेको तैयार हूँ। वैसे यदि हमारी माँगोंका केवल कुछ भाग ही मंजूर होता है तो वह गोलमेज परिषद्की निश्चय ही आंशिक असफलता होगी। उस हदतक वह असफल रहेगी।

प्र० : यदि केवल कुछ भाग मंजूर होता है और बादमें पूरी मात्राका वादा कर लिया जाता है तो क्या आप सन्तुष्ट होंगे?

उ० : दिया क्या जा रहा है, इसपर मुझे विचार करना होगा। जो-कुछ मैं चाहता हूँ वह सब प्राप्त कर सकूँ, यह सम्भव नहीं लगता। परन्तु जो-कुछ मुझे मिलता है वह यदि ऐसा है कि मैं उसका बहुत-कुछ बना सकूँ, तो मैं अपनेको उसके लिए राजी कर सकता हूँ। यदि आवश्यक हो तो मैं समझौता करनेको तैयार हूँ।

भारतको राष्ट्र-संघ (लीग ऑफ नेशन्स)से अपील करनी चाहिए, मैं ऐसा नहीं सोचता। अभी नहीं। अभी हमारी वार्त्ता चल रही है। गोलमेज परिषद् यदि असफल रहती है तो जिनकी सीधी कार्रवाईमें आस्था नहीं है वे भारतके मामलेको राष्ट्र-संघके न्यायाधिकरणके आगे रख सकते हैं। पर मैं ऐसा नहीं करूँगा। मैं सविनय प्रतिरोधकी पद्धतिको पसन्द करता हूँ, क्योंकि वह सबसे स्वच्छ और श्रेष्ठ है। राष्ट्र-संघ इतना शक्तिशाली नहीं है कि वह इस प्रश्नको सुलझा सके। भारत अपने-आपमें एक संसार है। वह संघतक के बसकी चीज नहीं है।

प्र० : श्री गांधी, क्या आप मेरी इस बातसे सहमत हैं कि आप भारतकी भारी मशीनमें सुरक्षा-खटकेकी तरह हैं, देशके अदम्य युवकोंपर आपका प्रभाव उनकी उग्रतापर एक अंकुश-जैसा है, आपको भारतसे निर्वासित करना आपराधिक मूर्खता होगी, क्योंकि जहाँ एक बार आप गये, विद्रोह और विप्लव हो जायेगा?

उ० : मैं आपसे सहमत हूँ। इस तरहकी चीज एक अन्धे आदमीकी कार्रवाई होगी — ऐसे आदमीकी जो भारतकी हालतकी ओरसे आँखें मूँदे हुए है, जो यह समझ नहीं पा रहा है कि यह बेचैनी, स्वराज्यकी यह माँग पूरे देशको किस सीमातक अभिभूत किये हुए है। यदि मुझे भारतसे निर्वासित किया गया तो बहुत-सी अनिष्ट बातें हो सकती हैं। पर मैं ऐसा महसूस करता हूँ कि मेरी अनुपस्थितिमें भी शान्तिके

१. मूलमें तारीखका उल्लेख नहीं है। पर इसकी विषय-वस्तुसे यह लगता है कि भेंट गोलमेज परिषद्में ३० नवम्बरको दिये गये गांधीजी के अन्तिम भाषणसे पहले हुई थी।

लिए मेरा प्रभाव कायम रहेगा। मैं दूर हो सकता हूँ पर मेरी भाव-सत्ता वहाँ रहेगी। संघर्ष जारी रहेगा। वह और तीव्र हो जायेगा। फिर भी मुझे विश्वास है कि वह हिंसात्मक नहीं होगा। मेरे खत्म हो जानेके बाद लोगोंकी उग्रतापर अंकुश रखनेवाला मेरा यह प्रभाव भी मिट जायेगा, यह सोचकर मुझे दुःख होगा। नहीं, मैं निर्वासनका प्रतिरोध नहीं करूँगा। किसी भी सच्चे सत्याग्रहीको अपने ऊपर आये कष्टका प्रतिरोध नहीं करना चाहिए। जो भी दण्ड उसे दिया जाये उसका उसे स्वागत ही करना चाहिए।

दूसरे विषयकी चर्चा करते हुए श्री गांधीने कहा :

मशीन एक महान्, पर भयानक आविष्कार है। एक ऐसी स्थितिकी कल्पना की जा सकती है जब मनुष्य द्वारा आविष्कृत मशीनें अन्तमें सभ्यताको ही निगल जायें। यदि मनुष्य मशीनपर नियन्त्रण रखता है तो वह ऐसा नहीं करेगी। परन्तु यदि मनुष्य मशीनोंपर अपना नियन्त्रण खो देता है और उनके द्वारा अपनेको नियन्त्रित होने देता है, तो वे निश्चय ही सभ्यताको और हर चीजको निगल जायेंगी।

प्र० : पश्चिमकी आपके मनपर क्या छाप पड़ी है? पाश्चात्य सभ्यताकी क्या आप निन्दा करते हैं?

उ० : मैंने इसकी निन्दा की है। यह अत्यधिक जल्दबाज, अत्यधिक भौतिकवादी, अत्यधिक कृत्रिम है। मुझे इससे घृणा है, यह तो मैं नहीं कह सकता। 'घृणा' शब्दका प्रयोग बहुत बुरी बात है। पर मुझे इससे तीव्र अरुचि है। नहीं, मैं अमेरिका नहीं जा रहा हूँ। मुझे भारत लौटना चाहिए। मुझे वहाँ शीघ्र वापस जाना चाहिए। मेरे देशको मेरी जरूरत है।

हाँ, मैं यूरोपके प्रमुख व्यक्तियोंसे मिला हूँ। केवल राजनीतिज्ञोंसे नहीं — कला और साहित्यकी दुनियाके लोगोंसे भी, और हर क्षेत्रके लोगोंसे मिला हूँ। मैं बड़े लोगोंसे मिला हूँ और गरीबसे-गरीब लोगोंसे भी खूब मिला-जुला हूँ। मेरी बर्नार्ड शॉसे भेंट हुई है।

प्र० : उनके बारेमें आपकी क्या राय है?

उ० : मेरा खयाल है वे बहुत अच्छे आदमी हैं।

प्र० : ऐसे तो बहुत लोग हैं।

उ० : मेरा खयाल है, वे बहुत ही प्रत्युत्पन्नमति हैं, मर्मोक्ति और विरोधाभासके प्रेमी हैं, उनमें नटखट बालक-जैसा उछाह और उदार और चिरतरुण हृदय है। वे यूरोपके प्रधान विदूषक हैं।

भारतका सबसे सच्चा मित्र मैं किसे समझता हूँ? तुलनाएँ द्वेषजनक होती हैं। इंग्लैंडमें मुझे भारतके इतने सारे सच्चे मित्र मिले हैं कि किसी एकको छाँटना कठिन है। किसका व्यक्तित्व मुझे सबसे अधिक शक्तिशाली लगा, मैं सचमुच कह नहीं सकता। मुझे सोच-विचारकर बात कहनी चाहिए।

स्वतन्त्र भारतका मेरा स्वप्न? आह! उसे पूरा होनमें अभी सालों लगेंगे। मेरी दृष्टिमें जो स्वतन्त्र भारत है, वह स्वशासित और आत्मनिर्भर होगा, अन्य देशोंके

साथ शान्ति रखेगा और व्यापार व संचारकी उसमें सुव्यवस्था होगी। बड़े नगरोंमें नर-नारी इस तरह व्यस्त और सन्तुष्ट रहेंगे जैसे मधुके छत्तोंमें मधुमक्खियाँ रहती हैं, और परस्पर जुड़े ऐसे गाँवोंकी शृंखला होगी जो अपने घरेलू उद्योगोंके सहारे सुखी होंगे। इस नये स्वतन्त्र भारतमें स्त्रियाँ पुरुषोंके साथ अपनी बराबरकी भूमिका अदा करेंगी।

"इसलिए नये भारतको स्वच्छ नीले आकाशमें अपना झण्डा पूरा फहराते हुए, भविष्य और विश्वका सामना करने दो।"

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २१-१२-१९३१

२३२. गोलमेज परिषद्के पूर्णाधिवेशनकी कार्यवाहीका अंश

लन्दन
३० नवम्बर, १९३१

श्री गजनवी : . . . हम पृथक् निर्वाचक-मण्डलोंकी माँग करते हैं, और हम उनकी माँग करते रहेंगे। वे हमें अब प्राप्त हैं। बीस सालसे भी अधिक समय तक वे हमें प्राप्त रहे हैं, उनके व्यावहारिक रूपका हमें काफी अनुभव है और हम उन्हें अपनी सुरक्षाके लिए सर्वथा आवश्यक मानते हैं। यह अनुभवका परिणाम है, केवल रायका नहीं है। आपकी अनुमतिसे, मैं केवल कुछ वाक्य पढ़ना चाहूँगा, जो सर अब्दुल्ला अल-मैमून सुहरावर्दी द्वारा भारतीय केन्द्रीय समितिकी रिपोर्टके परिशिष्टमें उद्धृत किये गये हैं :

"मुसलमान हिन्दूका स्वाभाविक शत्रु है, मेरा ऐसा विश्वास नहीं है। . . . किसी भी अल्पसंख्यक समुदायके किसी भी न्यायोचित हितको बलिदान करके यदि स्वराज्य मिलना सम्भव हो भी, तो भी मुझे उसे प्राप्त करनेकी इच्छा नहीं है।"

(यंग इंडियामें[1] श्री मो० क० गांधीके शब्द, जो 'स्टेट्समैन', १९-९-१९२९ के समुद्रपारीय संस्करणमें उद्धृत किये गये थे।)

गांधीजी : इस मतकी पुष्टिके लिए 'यंग इंडिया' यहाँ मौजूद है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबल कांफरेंस (सेकेंड सेशन) : प्रोसीडिंग्स ऑफ द प्लेनरी सेशन्स, पृष्ठ २०९

१. सही शब्दावलीके लिए देखिए खण्ड ४१, पृष्ठ ४२४।

२३३. तार : सान्यालको

[३० नवम्बर, १९३१ या उसके पश्चात्][१]

परिस्थिति को ध्यानसे देख रहा हूँ। चाहता हूँ कि युवक अहिंसाका अमूल्य पाठ सीखें।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८३६७) से।

२३४. पत्र : सर सैम्युअल होरको

[१ दिसम्बर, १९३१ या उसके पूर्व][२]

प्रिय सर सैम्युअल,

आपने मुझपर इतना भरोसा किया, इसके लिए मैं आपका आभारी हूँ। मुझे खेद है कि मैं मानपत्र भेंट करनेमें शामिल नहीं हो सकता। कारण आप जानते ही हैं। मुझे महामहिमसे व्यक्तिशः कोई शिकायत नहीं है। लेकिन मानपत्र भेंट करनेके पीछे जो सिद्धान्त है उससे मैं सहमत नहीं हो सकता। इस समस्यासे पार पानेका सर्वोत्तम उपाय यह है कि आप मुझे बतायें कि मानपत्र कब पेश किया जाना है ताकि मैं उस समय अनुपस्थित रह सकूँ। जहाँतक सम्भव हो सके, मैं ऐसा कोई काम नहीं करना चाहता जिससे उस कार्यवाहीकी शोभा नष्ट हो।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०३७५) से; सौजन्य : ब्रिटिश हाई-कमिशन

१. यह श्री सान्यालके ३० नवम्बरको मिले तारके उत्तरमें था, जिसमें गांधीजी से ५ दिसम्बरको बरहमपुरमें होनेवाले विशेष बंगाल प्रान्तीय सम्मेलनके लिए सन्देश भेजनेको कहा गया था।

२. पत्रपर तिथि नहीं है। फिर भी यह स्पष्ट है कि यह १ दिसम्बर, १९३१ या उसके पूर्व लिखा गया होगा; क्योंकि गोलमेज परिषद्का अंतिम अधिवेशन इसी तिथिको समाप्त हुआ था।

२३५. पत्र : गोलमेज परिषद्के अध्यक्षको[1]

[१ दिसम्बर, १९३१ या उसके पूर्व][2]

अध्यक्ष
गोलमेज परिषद्

प्रिय महोदय,

हम, गोलमेज परिषद्में भाग लेनेवाले निम्न हस्ताक्षरकर्त्ता, सम्मेलनकी समाप्तिसे पहले, इस पत्रपर अपने हस्ताक्षर करके, यह व्यक्त करना और व्यक्तिगत रूपसे आपके ध्यानमें लाना चाहते हैं कि गोलमेज परिषद्में भाग लेते हुए इंग्लैंडके अपने प्रवासमें हमें संयुक्त सामाजिक सचिवों, श्री एफ० ए० एम० एच० विन्सेंट, सी० आई० ई०, सी० वी० ई०, एम० वी० ओ० और श्री पी० के० दत्तसे जो शालीन, सम्मानयुक्त और सौजन्यपूर्ण व्यवहार और उत्कृष्ट सेवाएँ प्राप्त हुई हैं, उनकी हम हृदयसे सराहना करते हैं। इन दो अधिकारियोंने अपने (कठिन और विषम कर्त्तव्योंको जिस योग्यतासे पूरा किया उससे, हमारी रायमें, हम सब एक-दूसरेके निकट-सम्पर्कमें आ सके और एक-दूसरेको समझ सके।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी
[और अन्य अनेक]

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९३८४) से; सौजन्य : इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी

२३६. भाषण : गोलमेज परिषद्के पूर्णाधिवेशनमें

लन्दन
१ दिसम्बर, १९३१[3]

प्रधान मन्त्री महोदय और मित्रो,

यदि मैं आपके सामने बोले बिना रह सकता तो अच्छा होता। किन्तु मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि यदि मैं नहीं बोलूँगा तो यह आपके प्रति तथा उसी तरह मेरे

१. यह गांधीजी द्वारा तैयार किया गया था या नहीं, यह निश्चित नहीं है।

२. गोलमेज परिषद्का अन्तिम अधिवेशन १ दिसम्बरको हुआ था, और यह पत्र, जैसा कि इसके मजमूनमें संकेत है, उससे पहले लिखा गया था।

३. अधिवेशन ३० नवम्बरको शुरू हुआ और रातके ११-५० बजे स्थगित कर दिया गया। किन्तु १२-५ बजे रातमें ही फिर दूसरी बैठक भी शुरू कर दी गई।

सिद्धान्तके प्रति अन्याय होगा। सम्भव है कि ये कांग्रेसकी ओरसे कहे गये अन्तिम शब्द हों। मैं किसी भ्रममें नहीं हूँ। मैं नहीं समझता कि इस समय मैं जो-कुछ कहूँगा, उससे मन्त्रि-मण्डलके निर्णयपर कुछ असर पड़ सकता है। निर्णय तो शायद लिया जा चुका हो। लगभग एक पूरे महाद्वीपकी स्वतन्त्रताका प्रश्न केवल दलीलों अथवा सन्धि-वार्त्तासे भी कदाचित् ही हल हो सकता हो। वार्त्ताका भी कुछ अर्थ होता है, और वह भी कुछ काम करती है, किन्तु विशिष्ट परिस्थितियोंमें ही। ऐसी परिस्थितियोंके बिना वार्त्तासे कुछ नतीजा नहीं निकलता। किन्तु मैं इन सब बातोंकी ज्यादा चर्चा नहीं करना चाहता। प्रधान मन्त्री महोदय, आपने इस परिषद्की प्रारम्भिक बैठकमें जो शर्तें पढ़कर सुनाई थीं, मैं तो यथासम्भव उनकी हदमें ही रहना चाहता हूँ। इसलिए सबसे पहले तो मैं इस परिषद्के सामने पेश हुई रिपोर्टोंके सम्बन्धमें ही दो शब्द कहूँगा। आप इन रिपोर्टोंमें आम तौरपर यह कहा गया देखेंगे कि अमुक-अमुक बहुत बड़े बहुमतका विचार है, लेकिन कुछने इसके विपरीत मत प्रदर्शित किया है, इत्यादि। जिन पक्षोंने विरुद्ध मत दिये हैं, उनके नाम नहीं दिये गये हैं। जब मैं भारतमें था, तब मैंने सुना था और मैं यहाँ आया तब भी मुझसे कहा गया था कि बहुमतके सामान्य नियमसे कोई भी निर्णय न किया जायेगा; लेकिन, इस बातका उल्लेख मैं यहाँ यह शिकायत करनेके लिए नहीं करता कि ये रिपोर्टें इस तरह तैयार की गई हैं, मानों सारा काम बहुमतके नियमसे ही किया गया हो। किन्तु इसका उल्लेख मुझे इसलिए करना पड़ा है कि इनमें से अधिकांश रिपोर्टोंमें आप देखेंगे कि किसी-न-किसी ओरसे इनके खिलाफ राय जाहिर की गई है, और दुर्भाग्यवश ज्यादातर मामलोंमें ऐसी राय देनेवाला मैं ही हूँ। प्रतिनिधि-बन्धुओंकी रायसे असहमति प्रकट करना मेरे लिए कोई प्रसन्नताकी बात नहीं थी, किन्तु मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि यदि मैं असहमति प्रकट न करूँ तो मैं कांग्रेसका सच्चा प्रतिनिधि नहीं कहा जा सकता।

एक बात और है, जो मैं इस परिषद्के ध्यानमें लाना चाहता हूँ और वह यह है कि कांग्रेसकी असहमतिका क्या अर्थ है। संघ-संरचना समितिकी एक प्रारम्भिक बैठकमें मैंने कहा था कि कांग्रेस भारतकी ८५ प्रतिशतसे अधिक आबादी, अर्थात् मूक, मेहनतकश और अधपेट खाकर जीनेवाले करोड़ों लोगोंकी प्रतिनिधि होनेका दावा करती है। किन्तु मैंने तो इससे आगे बढ़कर यह भी कहा था कि यदि महाराजागण मुझे क्षमा करें, तो कहूँगा, वह तो अपने सेवाके अधिकारसे राजाओंकी और उसी तरह जमींदारों और शिक्षित वर्गका भी प्रतिनिधि होनेका दावा करती है। मैं उस दावेको फिर पेश करना चाहता हूँ और इस समय उसपर विशेष जोर देना चाहता हूँ।

परिषद्के दूसरे सब पक्ष खास-खास वर्गोंके प्रतिनिधि होकर आये हैं। अकेली कांग्रेस ही सारे भारतकी और सब वर्गोंकी प्रतिनिधि होनेका दावा करती है। वह कोई साम्प्रदायिक संस्था नहीं है, वह सब प्रकारकी साम्प्रदायिकताकी कट्टर शत्रु है। वह जाति, रंग अथवा सम्प्रदायका कोई भेद नहीं करती है; उसके द्वार सबके लिए खुले हैं। सम्भव है कि उसने सदैव अपने सिद्धान्तका पालन न किया

हो। मैंने मनुष्य द्वारा संस्थापित एक भी ऐसी संस्था नहीं देखी, जिसने अपने सिद्धान्तका सदैव और सर्वथा पालन किया हो। मैं जानता हूँ कि कई बार कांग्रेससे चूक हुई है। और सम्भव है कि आलोचकोंकी दृष्टिमें उससे ज्यादातर मौकोंपर चूक ही होती रही हो। किन्तु कटुसे-कटु आलोचकको यह तो स्वीकार करना ही होगा, और उन्होंने स्वीकार किया भी है कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस दिन-प्रति-दिन विकसित होती जानेवाली संस्था है; उसका सन्देश भारतके दूरातिदूर गाँवोंमें पहुँचा है और अवसर आनेपर वह देशके ७,००,००० गाँवोंमें रहनेवाली आम जनतापर अपने प्रभावका परिचय दे चुकी है।

और फिर भी मैं देखता हूँ कि यहाँ कांग्रेसको अनेक पक्षोंमें एक पक्ष गिना जाता है। मैं इसकी परवाह नहीं करता, मैं इसे कांग्रेसके लिए कुछ संकट-रूप नहीं मानता, किन्तु जो कार्य करनेके लिए हम यहाँ इकट्ठे हुए हैं, उसके लिए संकट-रूप अवश्य मानता हूँ। काश, मैं ब्रिटिश राजनीतिज्ञों और ब्रिटिश मन्त्रियोंको यह विश्वास करा सकता कि कांग्रेसमें अपने अंगीकृत कार्यको पूरा करनेकी सामर्थ्य है। कांग्रेस साम्प्रदायिकतासे रहित, एकमात्र अखिल भारतीय राष्ट्रीय संस्था है और वह निश्चय ही उन अल्पसंख्यक समुदायोंका भी प्रतिनिधित्व करती है जिन्होंने अपने दावे यहाँ पेश किये हैं और जिनका कहना है — अथवा यों समझिए कि जिनकी ओरसे हस्ताक्षर करनेवाले लोगोंका कहना है — और मेरे विचारसे ऐसा कहना अनुचित है — कि उनका अनुपात भारतकी कुल आबादीका ४६ प्रतिशत है। मेरा कहना यह है कि कांग्रेस इन सभी अल्पसंख्यक समुदायोंका प्रतिनिधित्व करनेका दावा करती है।

कांग्रेसका यह दावा यदि स्वीकार कर लिया गया होता तो आज स्थिति कितनी भिन्न होती! मैं अनुभव करता हूँ कि शान्तिके लिए और इस परिषद्में बैठे हुए अंग्रेज तथा भारतीय स्त्री-पुरुष सभीके प्रिय उद्देश्यको सिद्ध करनेके लिए मुझे कांग्रेसका दावा कुछ विशेष आग्रहके साथ पेश करना पड़ रहा है। ऐसा मैं इस कारणसे कहता हूँ: कांग्रेस एक सबल संस्था है, वह ऐसी संस्था है, जिसपर समानान्तर सरकार चलाने अथवा चलानेका विचार रखनेका आरोप लगाया गया है, और एक तरहसे मैं इस आरोपका समर्थन कर चुका हूँ। यदि आप यह समझ लें कि कांग्रेसका तन्त्र कैसे काम करता है तो आप उस संस्थाका स्वागत करेंगे जो समानान्तर सरकार चला सकती है और यह सिद्ध कर सकती है कि किसी स्वैच्छिक संस्थाके लिए भी, बिना किसी सैनिक शक्तिके, प्रतिकूल परिस्थितियोंमें भी सरकारका तन्त्र चला सकना सम्भव है। लेकिन नहीं, आप ऐसा-कुछ नहीं कर रहे हैं। यद्यपि आपने कांग्रेसको आमन्त्रित किया है, फिर भी आप उसका अविश्वास करते हैं। यद्यपि आपने उसे आमन्त्रित किया है, फिर भी आप सारे भारतकी ओरसे बोलनेके उसके दावेको अस्वीकार करते हैं। बेशक संसारके इस किनारेपर बैठे हुए आप लोग इस दावेका विरोध कर सकते हैं, और यहाँ मैं इस दावेको साबित भी नहीं कर सकता। फिर भी यदि आप मुझे उसे दृढ़तासे पेश करते हुए देखते हैं, तो इसका कारण यह है कि मेरे सिरपर जबरदस्त जिम्मेदारी मौजूद है।

कांग्रेस बागी मनोवृत्तिका प्रतिनिधित्व करती है। मैं जानता हूँ कि बातचीतके जरिये भारतकी कठिनाइयोंका सर्व-सम्मत हल निकालनेके लिए निमन्त्रित इस परिषद्में 'बागी' शब्दका उच्चार भी न करना चाहिए। एकके-बाद एक अनेक वक्ताओंने खड़े होकर कहा है कि भारतको अपनी स्वतन्त्रता बातचीत और दलीलोंसे ही प्राप्त करनी चाहिए, और ग्रेट ब्रिटेन यदि भारतकी माँगोंको दलीलोंसे ही स्वीकार करेगा, तो इसमें ग्रेट ब्रिटेनका अत्यन्त गौरव समझा जायेगा। किन्तु कांग्रेसका मत सर्वथा ऐसा ही नहीं है। कांग्रेसके पास एक और मार्ग है; वह आपको अप्रिय है।

मैं यह बता दूँ कि मैंने एक भी बैठकसे गैरहाजिर न रहनेका प्रयत्न किया है और मैंने प्रत्येक वक्ताकी बातोंको, मेरे लिए जहाँतक सम्भव था, पूरे ध्यानसे और आदरपूर्वक समझनेका प्रयत्न किया है। और इनमें से कई वक्ताओंको मैंने यह कहते सुना है कि यदि भारतमें अराजकता, विद्रोह और आतंकवादी प्रवृत्ति फैल जाये तो यह बहुत भयंकर बात होगी। मैं इतिहासका विशेष अध्येता होनेका दावा नहीं करता, किन्तु एक स्कूलके विद्यार्थीकी तरह मुझे इतिहासके पर्चेमें भी पास होना पड़ा था, इसलिए मैंने पढ़ा था कि इतिहासके पृष्ठपर स्वतन्त्रताके लिए लड़नेवालोंके रक्तके लाल धब्बे लगे हुए हैं। मेरी जानकारीमें ऐसा एक भी उदाहरण नहीं, जिसमें राष्ट्रोंने अपार कष्ट सहे बिना स्वतन्त्रता प्राप्त की हो। जिन्हें मैं स्वाधीनता या स्वतन्त्रताके अन्ध-प्रेमी मानता हूँ, वे लोग आजतक खूनी खंजर, विषके प्याले, बन्दूककी गोली, भाले तथा संहारके इन सभी शस्त्रास्त्रों और साधनोंका उपयोग करते आये हैं, फिर भी इतिहासकारोंने उसकी निन्दा नहीं की है। मैं हिंसा-वादियोंकी वकालत करनेके लिए खड़ा नहीं हुआ हूँ। श्री गजनवीने हिंसावादियोंकी चर्चा की, और उसमें कलकत्ता नगरनिगमको भी सम्मिलित किया। उन्होंने जब कलकत्ता नगरनिगमकी एक घटनाका उल्लेख किया, तो उससे मुझे चोट पहुँची। वे यह कहना भूल गये कि कलकत्ताके महापौरने, स्वयं वे और नगरनिगम अपने कांग्रेसी सदस्योंके कारण जिस भूलमें फँस गया था, उसका काफी प्रक्षालन किया। जो कांग्रेसी प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूपसे हिंसाको उत्तेजन देते हैं, मैं उनकी वकालत भी नहीं करता। कांग्रेसके ध्यानमें उक्त घटनाके आते ही उसने उसके प्रतिकारका प्रयत्न आरम्भ किया। उसने तुरन्त ही कलकत्ताके महापौरसे इस घटनाका विवरण माँगा और महापौरने अपनी सहज सज्जनताका परिचय देते हुए तुरन्त ही अपनी भूल स्वीकार कर ली और बादमें भूल-सुधारके लिए कानूनन जो-कुछ सम्भव था, वैसा किया। इस घटनापर बोलकर मुझे इस परिषद्का अधिक समय नहीं लेना चाहिए। कलकत्ता नगरनिगमकी ओरसे चलनेवाली चालीस पाठशालाओंके विद्यार्थी जो गीत गाते बताये जाते हैं, उसका भी श्री गजनवीने उल्लेख किया है। उनके भाषणमें और भी ऐसी अनेक भ्रमपूर्ण बातें थीं, जिनके सम्बन्धमें मैं बोल सकता हूँ; किन्तु उनपर बोलनेकी मेरी इच्छा नहीं है। कलकत्ताके महान् नगरनिगमके प्रति मेरे मनमें जो सम्मान है और सत्यके प्रति जो आदर है उसके कारण और फिर जो लोग अपना बचाव करनेके लिए यहाँ उपस्थित नहीं हैं, उनका खयाल

करके ही मैं ये दो प्रकट एवं स्पष्ट उदाहरण यहाँ दे रहा हूँ। मैं एक क्षणके लिए भी यह बात नहीं मानता कि यह गीत कलकत्ता नगरनिगमकी पाठशालाओंमें नगर-निगमकी जानकारीमें सिखाया जाता था। मैं इतना अवश्य जानता हूँ कि गत वर्षके भयंकर दिनोंमें ऐसी कई बातें हुईं जिनके लिए हमें खेद है और जिनके लिए हमने प्रायश्चित्त और पश्चात्ताप किया है। यदि कलकत्तामें हमारे बालकोंको वह गीत गाना सिखाया गया हो, जो श्री गजनवीने यहाँ दोहराया है, तो मैं उनकी ओरसे क्षमा माँगनेके लिए यहाँ मौजूद हूँ। किन्तु इतना मैं चाहूँगा कि इन पाठशालाओंके शिक्षकोंने यह गीत नगरनिगमकी जानकारीमें और उसके प्रोत्साहनसे सिखाया है, यह बात साबित की जाये।

कांग्रेसके विरुद्ध इस प्रकारके आरोप अनगिनत बार लगाये जा चुके हैं और अनगिनत बार कांग्रेस उनका खण्डन कर चुकी है। फिर भी इस अवसरपर मैंने इसका उल्लेख किया है। यह भी मैंने यही बतानेके खयालसे किया है कि स्वतन्त्रताके लिए लोग लड़े हैं, उन्होंने अपने प्राणोंकी आहुति दी है, और जिन्हें वे अपदस्थ करना चाहते थे उन्हें मारा है और उनके हाथों मारे गये हैं। अब कांग्रेस रंगमंचपर आती है; और इतिहासके लिए अपरिचित एक नवीन उपाय —— सविनय अवज्ञा —— खोज निकालती है, और उसका अनुसरण करती रहती है। किन्तु मेरे सामने फिर एक पत्थरकी दीवार आ खड़ी होती है, और मुझसे कहा जाता है कि दुनियाकी कोई भी सरकार इस उपाय, इस पद्धतिको सहन नहीं कर सकती। ठीक है, सरकारकी मर्जी न हो तो वह इसे सहन न करे; खुली बगावतको किसी भी सरकारने सहन नहीं किया है। यह भी स्वाभाविक है कि कोई भी सरकार सविनय अवज्ञाको सहन न करे। लेकिन सरकारोंको इन शक्तियोंके आगे भी झुकना पड़ता है। ब्रिटिश सरकार भी इन शक्तियोंके आगे झुकी है और इसी तरह जबरदस्त डच सरकारको आठ वर्षोंके संघर्षके बाद अनिवार्य स्थितिके सामने झुकना पड़ा था। जनरल स्मट्स एक महान् सेनानायक, महान् राजनीतिज्ञ और लोगोंसे कसकर काम लेनेवाले व्यक्ति हैं, लेकिन वे भी केवल अपने आत्म-सम्मानकी रक्षा करनेके लिए लड़नेवाले निर्दोष पुरुषों और स्त्रियोंको मौतके घाट उतारे जानेकी कल्पना-मात्रसे काँप उठे, और उन्होंने १९०८ में जो चीज कभी न देनेकी प्रतिज्ञा की थी, वही चीज उन्हें इन सविनय प्रतिरोधियोंकी पूरी तरह कसौटी पर कस लेनेके बाद १९१४ में देनी पड़ी, यद्यपि तब उन्हें जनरल बोथाका भी सहयोग-समर्थन प्राप्त था। भारतमें लॉर्ड चेम्सफोर्डको यही करना पड़ा था, बम्बईके गवर्नरको बोरसद और बारडोलीमें यही करना पड़ा था। प्रधान मन्त्री महोदय, आपसे मेरा यह कहना है कि अब इस प्रवाहको रोकनेका समय बीत चुका है, और इसीके बारेमें, उनके सामने आज जो विकल्प है —— कदाचित् अलग रास्ता अपनानेका विकल्प —— उसीके बारेमें सोचकर मेरा मन परेशान है। आशाका कोई आधार दिखाई न देनेपर भी मैं आशा बनाये रखूँगा, अगर मुझसे हो सका तो अपने देशके करोड़ों पुरुषों और स्त्रियोंको, बल्कि बच्चोंको भी, इस अग्नि-परीक्षामें उतारे बिना अपने देशके लिए कोई सम्मानजनक समाधान प्राप्त करने

की मैं हरचन्द कोशिश करूँगा। उन्हें एक बार फिर उस तरहके संघर्षमें उतारना मेरे लिए प्रसन्नता और सन्तोषका विषय नहीं हो सकता, लेकिन अगर हमारे भाग्यमें, पुनः आगकी तपन सहना ही लिखा है तो उसे मैं अत्यन्त प्रसन्नताके साथ स्वीकार करूँगा और मेरे मनको यह परम सन्तोष प्राप्त रहेगा कि मैंने जो ठीक समझा, वही कर रहा हूँ, देशने जो ठीक समझा, वही कर रहा है। इसके अतिरिक्त देशको यह सन्तोष भी प्राप्त रहेगा कि कमसे-कम वह किसीकी जान तो नहीं ले रहा है, इसके बजाय स्वयं अपने प्राणोंकी आहुति दे रहा है; वह ब्रिटेनके लोगोंको सीधा कोई कष्ट नहीं पहुँचा रहा है, बल्कि स्वयं कष्ट सह रहा है। प्रोफेसर गिलबर्ट मरेने मुझसे एक बात कही थी, जिसे मैं कभी नहीं भूलूँगा। उनकी प्रवाहमयी भाषाको ज्योंका-त्यों दोहरा सकना तो कठिन है, फिर भी यहाँ मैं उसका आशय बता रहा हूँ। उन्होंने कहा था: आप क्षण-भरको भी ऐसा न मानें कि जब आपके हजारों देशभाई कष्ट सहते हैं तो अंग्रेजोंको कोई कष्ट नहीं होता। क्या आप हमें इतना हृदय-हीन मानते हैं? नहीं, मैं उन्हें इतना हृदय-हीन नहीं मानता। मैं जानता हूँ कि आपके मनको कष्ट पहुँचेगा; लेकिन मैं आपके हृदयको द्रवित करना चाहता हूँ और इसलिए आपके मनको कष्ट पहुँचाना चाहता हूँ। जब आपका हृदय द्रवित होगा, उस समय बातचीतका उपयुक्त अवसर आयेगा। बातचीत तो बराबर चलती ही रहेगी; और अगर इस बार मैं आपसे बातचीत करनेके लिए इतने मीलोंका फासला तय करके यहाँ आया हूँ तो यही सोचकर आया हूँ कि आपके देशभाई लॉर्ड इर्विनने अपने अध्यादेशोंके जरिये हमारी पर्याप्त परीक्षा ले ली है, उन्हें इस बातके पर्याप्त प्रमाण मिल गये हैं कि भारतके हजारों नर-नारियों और बच्चोंने कष्ट-सहन किया है; और उन्हें इस बातका प्रमाण मिल गया है कि अध्यादेश हो या नहीं, लाठियाँ चलाई जायें या नहीं, इस उमड़ते प्रवाहको कोई चीज रोक नहीं सकती, स्वतन्त्रताके लिए व्याकुल भारतके नर-नारियोंके हृदयोंमें उठती प्रबल भावनाओंको कोई चीज दबा नहीं सकती।

अब भी कुछ समय शेष है, इसलिए मैं चाहता हूँ कि कांग्रेस किस चीजको लेकर चल रही है, उसे आप समझ लीजिए। मेरा जीवन आपके हाथमें है। कार्य-समितिके, अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके सभी सदस्योंका जीवन आपके हाथमें है। किन्तु स्मरण रखिए कि इन करोड़ों मूक मानवोंका जीवन भी आपके ही हाथमें है। मेरा बस चले तो मैं इन प्राणियोंको होम देना नहीं चाहता। इसलिए स्मरण रखिए कि यदि संयोगसे मैं कोई सम्मानपूर्ण समझौता करा सकूँ, तो उसके लिए कितना भी बलिदान क्यों न करना पड़े, मैं उसे बहुत नहीं समझूँगा। जो भावना कांग्रेसके हृदयमें काम कर रही है – अर्थात् यह कि भारतको सच्ची स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए — वह भावना यदि मैं आपमें भर सकूँ, तो आप मुझमें सदा समझौतेकी अधिकसे-अधिक भावना पायेंगे। स्वतन्त्रताको आप कुछ भी नाम दें; गुलाबको दूसरा कोई भी नाम दें, वह उतनी ही सुगन्ध देगा; किन्तु मैं जो चाहता हूँ वह स्वतन्त्रताका असली गुलाब होना चाहिए, नकली नहीं। यदि आपके और उसी तरह कांग्रेसके, इस परिषद्के

और उसी तरह अंग्रेज जनताके मनमें इस शब्दका एक ही अर्थ हो तो आप देखेंगे कि समझौतेके लिए अधिकसे-अधिक गुंजाइश है, और कांग्रेसमें आपको सदा समझौतेकी भावना दिखाई देगी। किन्तु जबतक ऐसा मतैक्य नहीं होता, जबतक जिस शब्दका प्रयोग आप, मैं और सब करते हैं, उसकी एक ही व्याख्या, एक ही फलितार्थ नहीं होता, तबतक कोई समझौता सम्भव नहीं। हम जिन शब्दोंका प्रयोग करते हैं, उनकी हममें से प्रत्येकके मनमें अलग-अलग व्याख्या हो तो समझौता हो ही किस तरह सकता है? प्रधान मन्त्री महोदय, यह असम्भव है। मैं आपसे अत्यन्त नम्रतापूर्वक कहना चाहता हूँ कि उस हालतमें सबको स्वीकार्य कोई सामान्य आधार, कोई ऐसा आधार, जहाँ आप समझौतेकी भावनाका प्रयोग कर सकें, सर्वथा असम्भव है। और मुझे अत्यन्त दुःखके साथ कहना पड़ता है कि इन सब उकता देनेवाले सप्ताहोंमें हम जिन शब्दोंका प्रयोग कर रहे हैं, उनकी कोई भी सर्व-सम्मत व्याख्या मैं अभीतक ढूँढ़ नहीं सका हूँ।

पिछले हफ्ते एक शंकालु सज्जनने मुझे वेस्टमिन्स्टरका कानून दिखाते हुए कहा कि "क्या आपने 'औपनिवेशिक स्वराज्य' शब्दकी परिभाषा पढ़ी है?" मैंने उस परिभाषाको पढ़ा, लेकिन स्वभावतः मुझे यह देखकर कोई परेशानी या अचम्भा नहीं हुआ कि उसमें औपनिवेशिक स्वराज्यकी विशद परिभाषा की गई है, और उसमें न केवल सामान्य ढंगकी परिभाषा की गई है, बल्कि उसके विशिष्ट उदाहरण भी बताये गये हैं। उसमें बहुत साफ-साफ कहा गया है: औपनिवेशिक स्वराज्य-प्राप्त राज्योंमें आस्ट्रेलिया, दक्षिण आफ्रिका, कनाडा आदि शामिल माने जायेंगे; और अन्तमें आयरिश फ्री स्टेटका नाम दिया गया है। मैं नहीं समझता, उसमें मिस्रका भी उल्लेख था। फिर उन्होंने कहा: "क्या आप समझ रहे हैं कि आपके औपनिवेशिक स्वराज्यका मतलब क्या है?" लेकिन, उसका मुझपर कोई असर नहीं हुआ। मेरे औपनिवेशिक स्वराज्य अथवा पूर्ण स्वराज्यका क्या मतलब है, इसकी मुझे कोई परवाह नहीं है। एक तरहसे मेरे मनका बोझ हलका ही हुआ। मैंने कहा कि अब मुझे 'औपनिवेशिक स्वराज्य' शब्द पर विवाद करनेसे छुटकारा मिल गया है, क्योंकि मैं उससे अलग हूँ। मैं पूर्णस्वराज्य चाहता हूँ, लेकिन इसपर भी कई अंग्रेजोंने कहा है: "हाँ, आपको पूर्ण स्वराज्य तो मिल सकता है, लेकिन यह तो बताइए कि पूर्ण स्वराज्यका मतलब क्या है।" फिर हम उसी अलग-अलग परिभाषाओं पर आ गये। इसीलिए मैं कहता हूँ कि कांग्रेसकी माँग पूर्ण स्वराज्यके रूपमें पेश की गई है।

आपके एक बहुत बड़े राजनयिक — उनका नाम बताना मैं उचित नहीं समझता — मुझसे बातचीत कर रहे थे। बातचीतके दौरान उन्होंने कहा: "सच मानिए, मैं नहीं जानता था कि पूर्ण स्वराज्यसे आपका मतलब यह है।" उन्हें जानना चाहिए था, मगर जानते नहीं थे। और वे क्या नहीं जानते थे, यह मैं आपको बता रहा हूँ। जब मैंने कहा कि "मैं साम्राज्यके अन्तर्गत साझेदार नहीं हो सकता" तो उन्होंने कहा, "हाँ, हाँ, यह तो बिलकुल तर्कसंगत बात है।" इस पर मैंने कहा, "लेकिन मैं साझेदार होना चाहता हूँ। मैं जबरदस्तीकी साझेदारीको नहीं चाहता हूँ,

लेकिन ग्रेट ब्रिटेनका साझेदार होना जरूर चाहता हूँ। मैं इंग्लैंडकी जनताके साथ साझेदारीका रिश्ता कायम करना चाहता हूँ। लेकिन साथ ही मैं ठीक उसी तरहकी स्वतन्त्रताका उपभोग करना चाहता हूँ जिस तरहकी स्वतन्त्रता आपके यहाँके लोगोंको प्राप्त है। और मैं इस साझेदारीको केवल भारतके हित-साधनके लिए अथवा दोनों देशोंके पारस्परिक हित-साधनके लिए प्राप्त नहीं करना चाहता हूँ। इसे मैं इसलिए प्राप्त करना चाहता हूँ जिससे दुनियाके सिरसे वह भारी बोझ उतर जाये जो उसे कुचलता जा रहा है।"

यह कोई दस-बारह दिन पहलेकी बात है। और शायद यह बात विचित्र लगेगी कि फिर मुझे एक अन्य अंग्रेज सज्जनका भी पत्र मिला और आप उन्हें भी जानते हैं और उनका भी बहुत आदर करते हैं। उन्होंने जो बहुत-सी बातें लिखी थीं, उनमें एक यह भी थी : "मैं हृदयसे ऐसा मानता हूँ कि मानव-जातिका सुख और शान्ति हमारी मित्रतापर ही निर्भर है।" मानों मैं 'हमारी' शब्दका अर्थ न समझ पाऊँगा, इस तरह उन्होंने आगे स्पष्ट करते हुए कहा, "आपकी और हमारी जनताकी मित्रता," और उन्होंने जो एक और बात कही उसे भी मुझे यहाँ दोहरा देना चाहिए। वह यह थी : "और सभी भारतीयोंमें आप ही ऐसे हैं जिसे सभी अंग्रेज पसन्द करते हैं और समझते हैं।"

वे चापलूसी करनेवाले आदमी नहीं हैं, और मैं नहीं समझता कि यह अन्तिम वाक्य उन्होंने मेरी चापलूसी करनेके लिए लिखा है। मैं इससे तनिक भी फूल उठने-वाला भी नहीं हूँ। इस पत्रमें ऐसी बहुत-सी बातें हैं जो यदि मैं आपको बता सकता तो आप शायद इस वाक्यके मर्मको ज्यादा अच्छी तरह समझ जाते। लेकिन आपको इतना बता दूँ कि इस अन्तिम वाक्यमें उनका आशय व्यक्तिगत रूपसे मुझसे नहीं था। व्यक्तिकी हैसियतसे तो मैं कुछ हूँ ही नहीं और मैं जानता हूँ कि व्यक्तिकी हैसियतसे मैं किसी भी अंग्रेजके लिए किसी कामका नहीं होऊँगा। लेकिन कुछ अंग्रेज मुझे कुछ महत्त्व इसलिए देते हैं कि मैं एक उद्देश्यको लेकर चल रहा हूँ, मैं एक राष्ट्रका, एक प्रभावशाली संगठनका प्रतिनिधित्व करनेकी कोशिश कर रहा हूँ। यही कारण है कि वे ऐसा कहते हैं।

लेकिन, प्रधान मन्त्री महोदय, यदि मैं कोई ऐसा आधार ढूँढ़ सकूँ जिस परसे हमारे कामको आगे बढ़ाया जा सके तो समझौतेके लिए काफी गुंजाइश है। मैं जिस चीजके लिए तरस रहा हूँ, वह है मित्रता। मेरा काम दासोंके स्वामी और अत्याचारीको समूल नष्ट कर देना नहीं है। मैंने जीवनमें जो दर्शन अपनाया है, वह मुझे वैसा करनेकी इजाजत नहीं देता और आज कांग्रेसने उस दर्शनको अपना लिया है — सिद्धान्तके रूपमें तो नहीं, जैसा कि वह मेरे लिए है, लेकिन नीतिके रूपमें उसने अवश्य अपना लिया है, क्योंकि वह मानती है कि पैंतीस करोड़ आबादीवाले राष्ट्र भारतके लिए यही रास्ता सही और सबसे अच्छा है। ३५ करोड़ आबादीवाले राष्ट्रको हत्यारेके खंजर या विषके प्याले, तलवार, भाले या गोलियोंकी जरूरत नहीं है। उसे तो सिर्फ संकल्पकी आवश्यकता है, 'न' कह सकनेकी सामर्थ्यकी जरूरत है, और वह राष्ट्र आज 'न' कहना सीख रहा है।

लेकिन तब वह राष्ट्र करता क्या है? क्या वह अंग्रेजोंको एकदम निकाल देना चाहता है या कि उसके मनमें ऐसी कोई भी इच्छा है? नहीं, ऐसा नहीं है। आज उसका उद्देश्य अंग्रेजोंका हृदय-परिवर्त्तन करना है। मैं इंग्लैंड और भारतके सम्बन्धको तोड़ना नहीं चाहता, लेकिन उस सम्बन्धको एक नया रूप अवश्य देना चाहता हूँ। मैं अपने देशकी उस गुलामीको आजादीका रूप देना चाहता हूँ। आप चाहे पूर्ण स्वराज्य कहें या और कुछ, शब्दोंको लेकर मैं कोई विवाद नहीं करूँगा, और भले ही मेरे देशवासी किसी अन्य शब्दको चुननेपर आपत्ति करें, लेकिन यदि आपके सुझाये शब्दका आशय वही होगा जो हमारी माँगका है तो मैं उनके विरोधको शान्त कर दूँगा। इसीलिए मैंने आपका ध्यान इस बातकी ओर बार-बार दिलाया है कि आप जो सुरक्षात्मक पूर्वोपाय सुझाते रहे हैं, वे सर्वथा असन्तोषजनक हैं। वे भारतके हकमें नहीं हैं।

वाणिज्य तथा उद्योग संघके तीन विशेषज्ञोंने अपने-अपने तरीकेसे, विशेषज्ञोंकी हैसियतसे अपने-अपने अनुभवके आधारपर, आपको बताया है कि जब भारतकी आयका ८० प्रतिशत इस तरह गिरवी रख दिया जायेगा कि वह वापस आ ही न सके तो कोई भी उत्तरदायी मन्त्रिमण्डल प्रशासनकी समस्याओंको हल नहीं कर पायेगा। उन्होंने अपने पुष्कल ज्ञानके आधारपर, जिस तरह मैं बता सकता था, उससे कहीं अच्छी तरह आपको बता दिया है कि इन वित्तीय सुरक्षात्मक पूर्वोपायोंका मतलब भारतके लिए क्या है। उनका मतलब भारतको पूरी तरह अपंग बना देना है। इस परिषद्में सुरक्षात्मक पूर्वोपायोंपर चर्चा हुई है, उन पूर्वोपायोंमें अनिवार्यतः प्रतिरक्षा और सेनाके प्रश्न भी आ जाते हैं। फिर भी जहाँ मैंने यह कहा है कि सुरक्षात्मक पूर्वोपाय जिस रूपमें पेश किये गये हैं, उस रूपमें वे असन्तोषजनक हैं, वहाँ मैंने यह कहनेमें भी संकोच नहीं किया है और न अब इस बातको दोहरानेमें संकोच कर रहा हूँ कि कांग्रेस सुरक्षात्मक पूर्वोपायोंको स्वीकार करनेको वचनबद्ध है, लेकिन ऐसे पूर्वोपायोंको जो भारतके हितमें हों।

संघ-संरचना समितिकी एक बैठकमें मैंने निस्संकोच भावसे इस स्वीकृतिको विस्तारसे समझाया था और कहा था कि सुरक्षात्मक पूर्वोपाय इंग्लैंडके लिए भी लाभदायक होने चाहिए। मैं ऐसे सुरक्षात्मक पूर्वोपाय नहीं चाहता जो केवल भारतके लिए लाभदायक हों और ब्रिटेनके सच्चे हितोंके विरुद्ध हों। भारतके काल्पनिक हितोंकी बलि चढ़ानी होगी। ग्रेट ब्रिटेनके भी काल्पनिक हितोंकी बलि देनी पड़ेगी। इसी तरह भारतके अनुचित हितोंका त्याग करना होगा, और ग्रेट ब्रिटेनके भी अनुचित हितोंका त्याग करना होगा। इसलिए मैं एक बार फिर कहता हूँ कि यदि सभी प्रतिनिधियोंके मनमें एक शब्दका एक ही अर्थ हो तो मैं श्री जयकर, सर तेजबहादुर सप्रू और इस परिषद्में बोलनेवाले अन्य प्रतिष्ठित वक्ताओंकी बातसे सहमत हूँ। उस हालतमें मैं उन सबसे सहमत होऊँगा जिन्होंने कहा है कि इतनी सारी मेहनत करनेके बाद आखिरकार हममें काफी हदतक सहमति हो गई है, लेकिन मेरे लिए निराशा और दुःखका विषय यह है कि मैं इन शब्दोंका वही अर्थ नहीं लगाता जो दूसरे

लोग लगाते हैं। मुझे बहुत आशंका है कि सुरक्षात्मक पूर्वोपायोंमें जो अर्थ श्री जयकर देखते हैं, मैं उससे भिन्न अर्थ देखता हूँ, और जो अर्थ श्री जयकर और मैं देखते हैं वे शायद — उदाहरणके तौरपर कहूँ तो — उस अर्थसे सर्वथा भिन्न है जो सर सैम्युअल होर देखते हैं। वैसे मैं निश्चयपूर्वक कुछ नहीं कह सकता। हमारा आमना-सामना कभी हुआ ही नहीं है। आपके शब्दोंमें कहूँ तो हम कभी यथार्थपर उतरे ही नहीं हैं, और मैं आमना-सामना करनेके लिए, यथार्थपर उतरनेके लिए बहुत उत्सुक हूँ, बल्कि उसके लिए आकुल हूँ। मैं सोचता रहा हूँ: हम सब उत्तरोत्तर अधिकाधिक निकट क्यों नहीं आ रहे हैं, क्यों हम तकरीरबाजी, वाग्मिता-प्रदर्शन, बहस-मुबाहसे और अपनी छोटी-छोटी बातें मनवानेका सन्तोष पानेमें अपना समय बरबाद कर रहे हैं? भगवान् साक्षी है, मैं अपनी आवाज खुद नहीं सुनना चाहता। ईश्वर साक्षी है कि मैं किसी भी बहस-मुबाहसे में भाग नहीं लेना चाहता। मैं जानता हूँ कि स्वतन्त्रता किंचित् अधिक ठोस धातुकी बनी हुई चीज है और मैं यह भी जानता हूँ कि भारतकी स्वतन्त्रता तो बहुत ही ठोस धातुकी बनी हुई वस्तु है। हमारी कुछ ऐसी समस्याएँ हैं जो किसी भी राजनयिकको चक्करमें डाल देंगी। हमारी कुछ ऐसी समस्याएँ हैं, जो दूसरे राष्ट्रोंके सामने नहीं हैं। लेकिन, उनसे मैं घबराता नहीं हूँ, जो भारतीय वातावरणमें पले-बढ़े हैं, उन्हें वे चक्करमें नहीं डाल सकतीं। ये समस्याएँ तो हमारे साथ लगी ही हुई हैं। हमें महामारीसे निबटना है, मलेरियाकी समस्यासे जूझना है। हमें साँपों, बिच्छुओं, बन्दरों, बाघों और शेरोंसे निबटना पड़ता है, लेकिन आपको तो यह सब नहीं करना पड़ता। हमें इन समस्याओंसे इसलिए निबटना है कि हम इन्हींके बीच पले-बढ़े हैं। हम उनसे घबराते नहीं हैं। इन विषैले कीड़ों और विभिन्न जीव-जन्तुओंके अस्तित्वके बावजूद किसी-न-किसी प्रकार हमारा अस्तित्व कायम है। इसी प्रकार हम इन समस्याओंको भी झेल लेंगे और इनमें से कोई-न-कोई रास्ता निकाल ही लेंगे। लेकिन आज हम और आप एक गोलमेज परिषद्में एकत्र हुए हैं और हम कोई ऐसा सर्वग्राह्य सूत्र ढूँढ़ना चाहते हैं जो हमारे उद्देश्यकी पूर्तिमें सहायक हो सके। आप सच मानिए कि वैसे तो मैंने कांग्रेसकी ओरसे जो दावा पेश किया है, और जिसे अब मैं यहाँ दोहराना नहीं चाहता, उसकी एक भी मदको उसमें से हटानेको तैयार नहीं हूँ और संघ-संरचना समितिके समक्ष मुझे जो भाषण देने पड़े उनमें से एक भी शब्द निकालनेको तैयार नहीं हूँ, किन्तु मैं यहाँ समझौतेकी इच्छा लेकर खड़ा हूँ, मैं ब्रिटिश मेधा अथवा श्री शास्त्री, सर तेज-बहादुर सप्रू, श्री जयकर, श्री जिन्ना, सर मुहम्मद शफी और अन्य संविधान-शास्त्रियोंकी मेधासे उत्पन्न एक-एक सूत्रपर विचार करनेको तैयार हूँ। मैं घबराने-वाला नहीं हूँ। जबतक मेरी जरूरत है तबतक मैं यहाँ रहूँगा, क्योंकि मैं सविनय अवज्ञा फिरसे शुरू नहीं करना चाहता। दिल्लीमें जो संघर्ष-विराम हुआ था, उसे मैं स्थायी समाधानका रूप देना चाहता हूँ। लेकिन भगवान्के लिए मुझे, मुझ कमजोर, ६२ वर्षके बूढ़े आदमीको थोड़ा मौका दीजिए। आप उसके लिए और जिस संगठनका वह प्रतिनिधित्व करता है, उसके लिए थोड़ी-सी गुंजाइश निकालिए।

आज भले ही ऐसा दिखता हो कि आप मुझपर विश्वास करते हैं, लेकिन उस संगठनके प्रति आपके मनमें अविश्वास है। आप क्षण-भरको भी मुझे उस संगठनसे अलग रखकर न देखें जिसमें मेरी स्थिति समुद्रमें बूँदके समान है। मैं जिस संगठनमें हूँ, उससे मैं बड़ा नहीं हूँ। मैं उससे बहुत ही छोटा हूँ; और अगर आप मेरे लिए गुंजाइश निकालते हैं, मेरा विश्वास करते हैं, तो आपसे मेरा अनुरोध है कि आप कांग्रेसका भी विश्वास करें। अन्यथा मुझमें विश्वास करना बेकार है। जो अधिकार मुझे कांग्रेसने दिया है, उसके अलावा मेरा और कोई अधिकार नहीं है। कांग्रेस जो-कुछ करने योग्य है, उसे आप वह सब करनेका मौका दें तो आप अपनी आतंकवादी कार्रवाईको तिलांजलि दे देंगे, आपको उसकी जरूरत ही नहीं रह जायेगी। आज आपको आतंकवादियोंका सामना करना पड़ रहा है। आपके अनुशासनबद्ध और संगठित आतंकके साथ-साथ उन आतंकवादियोंकी भी प्रवृत्ति चल रही है। इसका कारण यह है कि आप तथ्योंकी ओर ध्यान नहीं देते या जो बात दिनके उजालेकी तरह साफ दिखती है उसे देखते ही नहीं। ये आतंकवादी अपने खूनसे बहुत ही साफ अक्षरोंमें जो लेख लिख रहे हैं, क्या उसे आप देखनेका कष्ट नहीं करेंगे? क्या आप यह देखनेका कष्ट नहीं करेंगे कि हम गेहूँकी नहीं, आजादीकी रोटी चाहते हैं, और आज ऐसे हजारों लोग हैं जिन्होंने प्रतिज्ञा कर रखी है कि जबतक वह आजादी नहीं मिलती, न खुद चैन लेंगे, न देशको चैन लेने देंगे।

तो मैं आपसे उस स्पष्ट लेखको पढ़नेका अनुरोध करता हूँ। आपसे विनती करता हूँ कि आप अपने धीरजके लिए प्रसिद्ध भारतके लोगोंके धीरजकी परीक्षा न लें। हम एक विनम्र जातिके रूपमें हिन्दुओंकी चर्चा करते हैं, और हिन्दुओंके सम्पर्कमें आकर — चाहे वह सम्पर्क अच्छा रहा हो या बुरा — मुसलमान भी वैसे ही नम्र हो गये हैं। अब मुसलमानोंके उल्लेखसे मुझे सबको चक्करमें डालनेवाली अल्पसंख्यकों की समस्याका ध्यान आता है। आप विश्वास कीजिए, वह समस्या यहाँ भी है, और जो बात मैं भारतमें कहता था उसे यहाँ फिर दोहराता हूँ, उसे मैं भूला नहीं हूँ — अर्थात् यह कि अल्पसंख्यकोंकी समस्याके समाधानके बिना भारतको स्वराज्य नहीं मिल सकता। मैं इस बातको जानता हूँ, इसे महसूस करता हूँ, फिर भी मैं यहाँ कदाचित् इस आशासे आया कि हो सकता है, यहाँ मैं कोई समाधान ढूँढ़ पाऊँ। लेकिन अब भी मैंने यह आशा छोड़ नहीं दी है कि किसी दिन हम अल्पसंख्यकोंकी समस्याका कोई सच्चा और जीवन्त समाधान ढूँढ़ पायेंगे। मैंने अन्यत्र भी कहा है और यहाँ फिर कहता हूँ कि जबतक विदेशी शासन-रूपी पच्चरने एक समुदायसे दूसरे समुदायको, एक वर्गको दूसरे वर्गसे अलग कर रखा है, तबतक कोई सच्चा और जीवन्त समाधान नहीं हो सकता, इन समुदायोंके बीच सच्चा सौहार्द स्थापित नहीं हो सकता। वह अन्ततः और अधिकसे-अधिक एक कागजी समाधान ही होगा। लेकिन ज्यों ही आप उस पच्चरको निकालेंगे, उनका घरेलू बन्धन, घरेलू स्नेह-सौहार्द, एक ही देशमें जन्म लेनेका बोध अपना रंग दिखाने लगेगा। क्या आप ऐसा मानते हैं कि इन सबका कोई असर नहीं होगा?

जब वहाँ ब्रिटिश शासन नहीं था, जब वहाँ कोई अंग्रेज दिखाई नहीं देता था तब क्या हिन्दू, मुसलमान और सिख आपसमें बराबर लड़ ही रहे थे? हिन्दू और मुसलमान इतिहासकारों द्वारा दिये गये विशद और सप्रमाण विवरणोंके आधारपर हम कह सकते हैं कि तब भी हम अपेक्षाकृत शान्तिपूर्वक रह रहे थे। और ग्रामवासी हिन्दुओं और मुसलमानोंमें तो आज भी कोई झगड़ा नहीं है। उन दिनों तो उनके बीच झगड़ेका नामो-निशान तक नहीं था। स्वर्गीय मौलाना मुहम्मद अली, जो खुद ही किसी हदतक इतिहासकार थे, मुझसे अकसर कहा करते थे कि "अगर अल्लाहने मुझे इतनी जिन्दगी बख्शी तो मेरा इरादा भारतमें मुसलमानी हुकूमतका इतिहास लिखनेका है। उसमें दस्तावेजी सबूतोंके साथ यह दिखा दूँगा कि अंग्रेजोंने गलती की है; औरंगजेब उतना बुरा नहीं था जितना बुरा उसे अंग्रेज इतिहासकारोंने दिखाया है; मुगल हुकूमत उतनी खराब नहीं थी जितनी खराब अंग्रेज इतिहासकारोंने बताई है," इत्यादि। ऐसा ही हिन्दू इतिहासकारोंने भी लिखा है। यह झगड़ा पुराना नहीं हैं; यह झगड़ा तो तब शुरू हुआ जब हम गुलामीकी लज्जाजनक स्थितिमें पड़े। मैं यह कहनेकी धृष्टता करता हूँ कि यह अंग्रेजोंके भारत-आगमनके साथ शुरू हुई, और ज्यों ही भारत तथा ब्रिटेनका सम्बन्ध — यह दुर्भाग्यपूर्ण, कृत्रिम और अस्वाभाविक सम्बन्ध — स्वाभाविक रूप लेगा, ज्यों ही उनका सम्बन्ध ऐसी साझेदारीके सम्बन्धका रूप लेगा — पता नहीं, ऐसा कब होगा अथवा होगा भी या नहीं — जिसे दोमें से कोई भी पक्ष इच्छानुसार त्याग सकता हो, तोड़ सकता हो, यह ऐसा रूप कभी लेगा त्यों ही आप देखेंगे कि हिन्दू, मुसलमान, सिख, यूरोपीय, आंग्ल-भारतीय, ईसाई, अस्पृश्य सब इस तरह घुल-मिलकर साथ रहने लगे हैं मानों वे एक ही शरीरके विभिन्न अंग हों।

अब मैं देशी नरेशोंके बारेमें दो शब्द कहकर अपनी बात समाप्त करूँगा। मैंने देशी नरेशोंके बारेमें ज्यादा-कुछ नहीं कहा है और न आजकी रात ही ज्यादा-कुछ कहना चाहता हूँ। लेकिन अगर मैं देशी नरेशोंके सामने — गोलमेज परिषद्के सामने नहीं — अपना दावा पेश न करूँगा तो उनके साथ और कांग्रेसके साथ अन्याय करूँगा। देशी नरेशोंको, वे जिन शर्तोंपर संघमें शामिल होना चाहेंगे, वे शर्तें पेश करनेका पूरा अधिकार है। मैंने उनसे अनुरोध किया है कि वे भारतके दूसरे हिस्सोंमें रहनेवाले लोगोंका रास्ता सुगम बनायें; इसलिए मैं उनके सामने सहानुभूतिपूर्वक और पूरे मनसे विचार करनेके लिए ये सुझाव ही रख सकता हूँ। ये सुझाव चाहे जो हों, लेकिन अगर वे यह मान लें कि पूरे भारतको अमुक मूलभूत अधिकार सामान्य रूपसे प्राप्त हैं और यदि वे उस स्थितिको स्वीकार कर लें तथा न्यायालयमें, जिसके गठनमें उनका भी हाथ होगा, उन अधिकारोंके परखे जानेकी अनुमति दे दें, और फिर वे अपनी प्रजाकी ओरसे प्रतिनिधित्वके भी कुछ तत्त्व — केवल कुछ तत्त्व ही — दाखिल कर दें तो मैं समझूँगा कि अपनी प्रजाको सन्तुष्ट करनेके लिए उन्होंने बहुत-कुछ किया — दुनियाको और सारे भारतको यह दिखा देनेके लिए बहुत-कुछ किया कि उनमें भी लोकतन्त्रकी भावना है, वे निरे स्वेच्छाचारी शासक नहीं बने रहना चाहते, बल्कि वे ग्रेट ब्रिटेनके राजा जॉर्जकी तरह संवैधानिक राजा बनना चाहते हैं।

श्रीमन्, मेरे मित्र सर अब्दुल कयूमने मुझे एक कागज दिया है। उसमें उन्होंने पूछा है: क्या आप सीमा-प्रान्तके बारेमें कुछ नहीं कहेंगे? मैं जरूर कहूँगा और जो कहूँगा वह यह है। भारत जो पानेका पात्र हो और वह सचमुच जो-कुछ प्राप्त कर सके, वह प्राप्त करे, लेकिन उसे चाहे जो भी प्राप्त हो, जब भी प्राप्त हो, सीमा-प्रान्तको तो पूर्ण स्वशासन मिलना चाहिए और आज ही मिलना चाहिए। तब सीमा प्रान्त सारे भारतके सामने एक स्थायी उदाहरणका काम करेगा, और इसलिए कांग्रेसके सारे मत सीमा-प्रान्तके कल ही प्रान्तीय स्वशासन प्राप्त करनेके पक्षमें पड़ेंगे। प्रधान मन्त्री महोदय, अगर आप अपने मन्त्रि-मण्डलको यह स्वीकार करने पर राजी कर सकें कि सीमा-प्रान्त कलसे ही एक पूर्णतः स्वशासित प्रान्त बन जाये तो सीमा-प्रान्तके कबीलोंके बीच मुझे एक सही आधार मिल जायेगा और फिर जब सीमा-पारके लोग भारतपर अपनी लोलुप दृष्टि डालेंगे तो मैं उन कबीलोंको अपनी सहायताके लिए खड़ा कर सकूँगा।

और अब मैं अन्तिम बातपर आता हूँ, जिसकी चर्चा करना मेरे लिए हर्षका विषय होगा। यह शायद आपके साथ बैठकर मेरे वार्त्ता करनेका आखिरी मौका है। ऐसा नहीं कि मैं चाहता हूँ कि यह आखिरी मौका हो। मैं तो यह चाहता हूँ कि मैं आपके साथ आपके कमरोंमें बैठकर आपसे बातचीत करूँ, हाथ जोड़कर आपसे अनुनय-विनय करूँ, और इसपर भी यदि बात न बने तभी अन्तिम कदम उठाऊँ। लेकिन, मुझे अपना सहयोग देते रहनेका सौभाग्य प्राप्त रहता है या नहीं, यह मुझपर निर्भर नहीं है। यह मुख्यतः आपपर ही निर्भर है। लेकिन, शायद आपपर भी निर्भर न हो। यह ऐसी अनेक परिस्थितियोंपर निर्भर है जिनपर शायद न आपका और न हमारा ही कोई बस है। तो अब मैं आपसे राज-दम्पतीसे लेकर जहाँ मैं रह रहा हूँ, उस ईस्ट एंडके गरीबसे-गरीब लोगों तक सबको धन्यवाद देनेके अपने सुखद कर्त्तव्यको पूरा करनेकी इजाजत चाहता हूँ।

लन्दनके ईस्ट एण्डके गरीबोंका प्रतिनिधित्व करनेवाले उस आश्रममें रहते हुए मैं उन लोगोंमें पूरी तरह रम गया हूँ। उन्होंने मुझे अपने एक सदस्य, अपने परिवारके एक विशेष स्नेह-पात्र सदस्यके रूपमें स्वीकार कर लिया है। मैं अपने साथ जो स्मृतियाँ यहाँसे ले जाऊँगा, यह उनमें से एक सबसे मूल्यवान स्मृति होगी। यहाँ भी मैं जितने लोगोंके सम्पर्कमें आया हूँ, सबसे मुझे सच्चा स्नेह ही मिला है। मैं अनेक अंग्रेजोंके सम्पर्कमें आया हूँ। मेरे लिए यह बहुत बड़े सौभाग्यका विषय रहा है। उन्होंने मेरी बातें, जो उन्हें अकसर अप्रिय तो जरूर लगी होंगी फिर भी जो सत्य हैं, सुनी हैं। यद्यपि मुझे उनसे अकसर ये बातें कहनी पड़ी हैं, फिर भी उन्होंने कभी कोई अधैर्य या नाराजगी नहीं दिखाई है। यह सब भूल पाना मेरे लिए असम्भव है। मुझपर चाहे जो आ पड़े, इस गोलमेज परिषद्का दृश्य चाहे जो हो, एक स्मृति मैं अपने मनमें सँजोकर अवश्य ले जाऊँगा — यह कि छोटे-बड़े सभीसे मुझे अतीव शिष्टता और स्नेहका ही व्यवहार प्राप्त हुआ है। मैं मानता हूँ कि यह मानवीय स्नेह प्राप्त करके मेरा इंग्लैंड आना सार्थक हो गया। यद्यपि अंग्रेज स्त्रियों और पुरुषोंको अकसर

इतनी झूठी बातें बताई गई हैं कि आपके अखबारोंमें भी गलत और भ्रामक बातें छपते देखता हूँ, यद्यपि लंकाशायरमें वहाँके लोगोंके पास मुझसे नाराज होनेका कुछ कारण था, फिर भी मुझे कर्मचारियों तकमें कोई नाराजगी या रोष देखनेको नहीं मिला। इससे मानव-स्वभावके प्रति मेरी अदम्य आस्थामें वृद्धि हुई है, वह और भी गहरी हो गई है। लंकाशायरके स्त्री और पुरुष सभी कर्मचारियोंने मुझे गले लगाया। उन्होंने मेरे साथ ऐसा व्यवहार किया, मानों मैं उन्हींमें से एक होऊँ। इस चीजको मैं कभी नहीं भूलूँगा।

मैं यहाँसे हजारों अंग्रेजोंकी मैत्रीका सौभाग्य प्राप्त करके जा रहा हूँ। मैं उन सबको जानता तो नहीं हूँ, लेकिन सुबह-सुबह घूमते हुए मैंने उनकी आँखोंमें उस स्नेहको देखा। मेरे अभागे देशपर चाहे जो आ पड़े, इस आतिथ्य और इस स्नेहकी स्मृति मेरे मनसे कभी नहीं मिटेगी। आपके धैर्यके लिए मैं आप सबको धन्यवाद देता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबल कांफरेंस (सेकेण्ड सेशन) : प्रोसीडिंग्स ऑफ द प्लेनरी सेशन्स, पृष्ठ २६५-७५

२३७. भेंट : पत्रकारोंको[1]

[१ दिसम्बर, १९३१][2]

प्र० : शान्तिवादी और अन्तर्राष्ट्रीयतावादी ईसाई भारतकी सहायता किस तरह कर सकते हैं?

उ० : इसके लिए सबसे पहले तो उन्हें इस प्रश्नका सम्यक् शास्त्रीय अध्ययन करना चाहिए, जिससे वे किसी खास घटनाक्रमको देखकर चक्करमें न पड़ जायें और उनका मन डिग न जाये। कुछ ऐसे लोग हैं जो कभी तो मुझे गले लगाने लगते हैं और कभी दुतकारने लगते हैं। इनकी वृत्तियाँ क्षण-क्षण बदलती रहती हैं। मैं चाहता हूँ कि वे भारतके आन्दोलनमें निहित सत्यको हृदयंगम करें, ताकि उनके विचारमें आसानीसे परिवर्त्तन न आ पाये। ऐसे लोग होंगे, तो आन्दोलनको सुरक्षित समझना चाहिए। अन्यथा समझना चाहिए कि इसकी कहीं कोई जड़ नहीं है। लेकिन

१. "एच० डब्ल्यू० पी० . . . कुछ पत्रकारों" को साथ लेकर गांधीजी से मिले थे। **फ्रेंड**में दी गई उनकी रिपोर्टको **रिकंसिलिएशन**में प्रकाशित दूसरी रिपोर्टसे मिला लिया गया है।

२. एच० डब्ल्यू० पी० फ्रेंड्स हाउसमें २ दिसम्बरको हुई एक बैठकका उल्लेख करते हुए कहते हैं कि भेंट-वार्ता पिछले दिन सुबह गोलमेज परिषद्की अन्तिम बैठकके आरम्भ होनेसे ठीक पहले हुई थी। गोलमेज परिषद्की यह बैठक १ दिसम्बरको हुई थी।

इस प्रकार अध्ययन करनेके बाद उन्होंने सत्यको जिस रूपमें ग्रहण किया हो, उसीके आधारपर उन्हें सामूहिक रूपसे कार्य भी करना होगा।[१]

शान्ति अशान्तिमें से उत्पन्न हो सकती है, क्योंकि अशान्ति-मात्र शान्तिके विरुद्ध ही नहीं होती। हाथ-पर-हाथ धरे बैठे रहनेसे सुधार नहीं हो सकता।

मुझसे कहा गया है कि मैं जो स्वयं कष्ट-सहन करता हूँ, उससे मेरे विरोधियोंकी भावनाओंको चोट पहुँचती है। हाँ, निश्चय ही इस तरह उन्हें चोट पहुँचती है। लेकिन मैं चाहता भी तो यही हूँ। आप यह तो नहीं चाहेंगे कि आपका विरोध इतना जड़ हो कि दूसरोंके कष्ट-सहनका उसपर कोई प्रभाव ही न पड़े। हाँ, इतना जरूर है कि जिस-तिस बातपर कष्ट-सहन नहीं करना चाहिए और कष्ट-सहनका उद्देश्य केवल कष्ट-सहन नहीं होना चाहिए। यह तो बहुत बुरी बात होगी। मैं कष्ट-सहनके लिए तभी आगे आता हूँ जब वैसा करना अत्यावश्यक हो जाता है। जब कष्ट-सहनका ठीक कारण हो तो कष्ट-सहन करना ही चाहिए; यह आवश्यक है।

क्या यह हृदय-परिवर्त्तनकी प्रक्रिया नहीं है? इसके अन्तर्गत अपने विरोधीको तबाह करने और उसे या तो झुक जानेको अथवा मिट जानेको मजबूर करनेके बजाय आप स्वयं ही तबाह होने और कष्ट सहनेको तैयार हो जाते हैं। अगर आपको इस तरह कष्ट सहते देखकर आपके विरोधीकी भावनाको चोट पहुँचती है तो आप यही चाहते भी हैं। इस देशके शान्तिवादी शान्तिके बुनियादी नियमको ही मानकर नहीं चलते। उन्हें दुःख उठानेवालोंके साथ दुःख उठानेको तैयार रहना चाहिए।

मुझसे ऐसा कहा गया है कि कष्ट-सहन करना कोई आवश्यक तो नहीं है। अपना उद्देश्य बातचीतके द्वारा क्यों नहीं पूरा किया जा सकता? मेरा उत्तर यह होता है: 'आजतक दलीलसे किसीको किसी बातकी प्रतीति नहीं हुई है। इसके विपरीत, दलील वहीं काम करती है, जहाँ उसके अनुकूल विश्वास होता है। अगर ऐसा न होता तब तो सभी पुस्तकें सबको समान रूपसे प्रभावित कर सकती थीं। जिन पुस्तकोंका लाखों-करोड़ों लोगोंपर कोई प्रभाव नहीं पड़ा है, उन्होंने मेरे हृदयको स्पर्श किया है। इसका कारण यह था कि मेरे अन्दर वैसा विश्वास पहले से ही विद्यमान था।

मेरे निरामिषाहारको ही लीजिए। मैं जन्मसे ही निरामिषाहारी था। मैं अपनी माताके सामनेकी गई प्रतिज्ञासे इस बातके लिए बँधा हुआ था कि मैं निरामिषाहारी ही रहूँगा। तब मैंने सॉल्ट-कृत 'प्ली फॉर वेजेटेरियनिज्म' पढ़ी और उसमें लिखी बातें मुझे बिलकुल जँच गईं, लेकिन वास्तवमें मुझमें वैसा विश्वास तो पहलेसे ही मौजूद था। ऐसी ही बात रस्किन-कृत 'अनटु दिस लास्ट' के सम्बन्धमें भी हुई। मैं उस जीवन-पद्धतिका पालन करनेकी कोशिश कर रहा था, लेकिन रस्किनकी यह कृति पढ़नेके बाद वह मेरे जीवनमें ही मूर्त्त हो गई। रस्किनने उसे बिलकुल बदल दिया, लेकिन उस चीजकी प्रतीति तो मुझमें पहलेसे ही थी। जिन लोगोंमें ऐसा विश्वास नहीं था, उनपर उसी पुस्तकका कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

१. आगेके तीन अनुच्छेद **रिकंसिलिएशनसे** लिये गये हैं।

प्र० : लेकिन श्री गांधी, जब सत्याग्रह एक सिद्धान्तके रूपमें नहीं, बल्कि केवल एक उपायके रूपमें किया जाये तब वह कैसे सफल हो सकता है ?

उ० : 'सत्याग्रह'का मतलब है सत्यपर आग्रह रखना। जब कोई आदमी सत्य-पर आग्रह करता है तो उसे उससे बल मिलता है। अगर उसके सही बोधके बिना कोई उसका प्रयोग करता है तो मानना चाहिए कि वह सत्याग्रहका नाम व्यर्थ ही ले रहा है। किसी सिद्धान्तसे प्रेरित होकर मैं सड़कपर चलनेसे सम्बन्धित नियमको माननेसे इनकार कर सकता हूँ। कोई दूसरा आदमी इसलिए भी इनकार कर सकता है कि वह नियम उसे असुविधाजनक लगता हो। हम काम तो एक ही कर रहे होंगे, लेकिन जहाँ मेरे कामके पीछे नैतिक बल होगा, वहाँ उसके कामके पीछे ऐसा कोई बल नहीं होगा। इस अवस्थामें मैं तो सविनय प्रतिरोधी होऊँगा, लेकिन वह अपराध करनेवाला प्रतिरोधी होगा। मगर इस खतरेका इलाज भी इसीमें समाया हुआ है, सो इस तरह कि नियमको भंग करनेके कारण अन्ततः कष्ट तो सहना ही पड़ेगा और कलुषित उद्देश्यसे कष्ट-सहन करनेका साहस दिखानेवाले लोग बहुत ज्यादा नहीं होंगे।

अन्तरात्माके आदेशपर आपत्ति करनेवाले सच्चे आपत्तिकर्त्ताका आचरण सही है, क्योंकि उसके पीछे आत्मिक बल है। लेकिन, चाहे आत्मिक बल हो या नहीं, वह आचरण तो सही ही होगा। अन्तर इतना है कि जहाँ एकका आचरण सर्वथा सही है, वहाँ दूसरेका एक सीमातक ही सही है।

प्र० : आप अकसर कहते रहे हैं कि पाश्चात्य सभ्यता शैतानी सभ्यता है। उसमें शैतानके क्या लक्षण हैं ? और क्या इनमें से कोई भी लक्षण भारतीय सभ्यतामें नहीं है ?

उ० : पाश्चात्य सभ्यता भौतिकतावादी है और वह साफ स्वीकार करती है कि वह भौतिकतावादी है। यह वस्तु-जगत्में -- रेलमार्गों, रोगोंपर विजय, वायुपर विजयके क्षेत्रोंमें -- की गई प्रगतिको ही अपनी प्रगतिका मापदण्ड मानती है। पाश्चात्य दृष्टिकोणसे यही सभ्यताकी विजयके चिह्न हैं। कोई भी यह नहीं कहता : 'अब लोग पहलेसे ज्यादा सत्यपरायण या विनयशील हो गये हैं।' मैं इसे अपने निकर्षपर परखता हूँ और इसके लिए 'शैतानी' शब्दका प्रयोग करता हूँ। आप दुनियावी चीजों, बाह्य उपादानोंको बहुत अधिक महत्त्व देते हैं। प्राच्य सभ्यताका असली तत्त्व यह है कि वह आध्यात्मिक है, अभौतिक है। पाश्चात्य सभ्यताकी उपलब्धियोंको देखकर प्राच्य संसारके मनमें लोभ जग सकता है, लेकिन तब भी उसके अन्दर कहीं-न-कहीं यह भाव जरूर रहेगा कि ऐसा करके वह गलत काम कर रहा है। आपका आदर्श यह है कि आप अपनी आवश्यकताएँ जितनी बढ़ायेंगे, आप उतने ही सुधरेंगे, और आप अपने इस विश्वासको कार्य-रूप देनेमें भी कोई कमी नहीं करते। आपकी सभ्यता भौतिक प्रगतिकी मंजिल-दर-मंजिल तय करती चली गई है और इसका कहीं कोई अन्त नहीं है। आप अपनी प्रकृति-विजयपर गर्व करते हैं, किन्तु मुझपर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता। हो सकता है, कलको आप मुझे विमान

द्वारा यहाँसे प्रस्थान करते देखें, लेकिन अगर मैं विमानसे यात्रा करूँगा भी तो मेरे मनमें यह भाव अवश्य रहेगा कि मैं गलत काम कर रहा हूँ। मान लीजिए, लन्दनके ट्यूब रेलमार्ग और बसें आपसे छीन ली जाती हैं। उस हालतमें मैं तो यही कहूँगा, 'भगवान्का शुक्र है कि आज मुझे पैदल चलकर अपने निवास-स्थान बो को जाना पड़ेगा —— भले ही उसमें तीन घंटे लग जायें।'

श्री गांधीसे एक अन्तिम प्रश्न यह पूछा गया कि वे जिस तत्त्वको ढूँढ़ते हैं, वह उन्हें क्या किसी पाश्चात्य धर्मग्रन्थमें मिला है। उत्तरमें उन्होंने तुरन्त कहा :

हाँ, मिला है। उदाहरणके लिए, कुछ वर्ष पूर्व मेरे मित्र हेनरी पोलकने मुझे टॉमस-ए-केम्पिस-कृत 'इमिटेशन ऑफ क्राइस्ट' नामकी पुस्तक दी थी। उसे मैं एक ही बैठकमें पढ़ गया और पढ़ते समय मुझे यही लग रहा था मानों कोई प्राच्य धर्मग्रन्थ पढ़ रहा होऊँ।

प्र० : मतलब कि वह ऐसी पुस्तक है जो सारी दुनियाके लिए समान महत्त्व रखती है?

उ० : हाँ, 'प्राच्य' शब्दका प्रयोग मैंने इसी अर्थमें किया था।

[अंग्रेजीसे]

फ्रेंड्स, ११-१२-१९३१ और **रिकंसिलिएशन**, जनवरी, १९३२ से।

२३८. गोलमेज परिषद्के पूर्णाधिवेशनकी कार्यवाहीके अंश

१ दिसम्बर, १९३१

अध्यक्ष : . . . इस वर्षके आरम्भमें मैंने तत्कालीन सरकारकी नीतिकी घोषणा की थी, और अब वर्त्तमान सरकारने मुझसे आप लोगोंको तथा भारतको यह स्पष्ट आश्वासन देनेको कहा है कि वह नीति अब भी कायम है। उस घोषणाके मुख्य वाक्योंको मैं फिर दोहरा रहा हूँ :

"महामहिमकी सरकारका विचार है कि भारतके शासनका दायित्व केन्द्रीय तथा प्रान्तीय विधान-सभाओंको सौंप दिया जाये, लेकिन संक्रान्ति-कालमें कतिपय दायित्वोंके निर्वाहके लिए तथा अन्य विशेष परिस्थितियोंकी माँगोंको पूरा करनेके लिए जिन पूर्वोपायोंकी व्यवस्था करना जरूरी हो उनकी व्यवस्था की जाये और साथ ही ऐसे पूर्वोपाय भी किये जायें जो अल्पसंख्यक समुदायोंकी राजनीतिक स्वतन्त्रता तथा अधिकारोंको सुरक्षा प्रदान करनेके लिए आवश्यक हों।

"संक्रान्ति-कालकी आवश्यकताओंको पूरा करनेके लिए जिन वैधानिक पूर्वोपायोंकी व्यवस्था की जायेगी, उनके सम्बन्धमें इस बातका खयाल रखना महामहिमकी सरकारका बुनियादी कर्त्तव्य होगा कि सुरक्षित अधिकारोंकी रचना इस प्रकार की जाये और उनका प्रयोग इस तरहसे किया जाये जिससे नये संविधानके माध्यमसे अपना

शासन स्वयं चलानेके लिए पूर्ण दायित्व प्राप्त करनेकी दिशामें भारतकी प्रगतिके मार्गमें कोई बाधा उपस्थित न हो।"

केन्द्रीय सरकारके सम्बन्धमें तो मैंने यह स्पष्ट कर दिया था कि जो शर्तें साफ-साफ तय की जायें, उनके पालन किये जानेका खयाल रखते हुए, महामहिमकी (भूतपूर्व) सरकार विधायिकाके प्रति कार्यकारिणीके दायित्वके सिद्धान्तको स्वीकार करनेके लिए तैयार है, बशर्ते कि विधायिका और कार्यकारिणी दोनोंका गठन अखिल भारतीय संघीय प्रणालीके आधारपर हो। उत्तरदायित्वके सिद्धान्तके साथ यह मर्यादा जुड़ी रहनेवाली थी कि वर्त्तमान परिस्थितियोंमें सुरक्षा तथा परराष्ट्र विभाग गवर्नर-जनरलके सुरक्षित अधिकार-क्षेत्रमें रहें और वित्तीय मामलोंके सम्बन्धमें ऐसी शर्तें लागू करनी ही पड़ेंगी जो भारत-मन्त्रीके अधिकारोंके अधीन स्वीकृत दायित्वोंके निर्वाहके लिए तथा भारतकी वित्तीय सुस्थिरता और साखको अक्षुण्ण बनाये रखनेके लिए आवश्यक हों।

और अन्तमें, हमारा विचार यह था कि गवर्नर-जनरलको अल्पसंख्यक समुदायोंके संवैधानिक अधिकारोंकी रक्षा करनेकी अपनी जिम्मेवारी तथा राज्यमें शान्ति कायम रखनेके अपने अन्तिम दायित्वके निर्वाहके लिए आवश्यक अधिकार दिये जायें।

गत परिषद्के अन्तमें महामहिमकी सरकार भारतको जो नया संविधान देनेका विचार कर रही थी, उसकी मोटी-मोटी बातें यही थीं।

महामहिमकी वर्त्तमान सरकारमें मेरे सहयोगी गत जनवरी महीनेमें तय की गई उपर्युक्त योजनाको अपनी नीतिके रूपमें पूरी तरहसे स्वीकार करते हैं। विशेष रूपसे वे अपना यह विश्वास पुनः व्यक्त करते हैं कि भारतकी संवैधानिक समस्याका एकमात्र आशाजनक समाधान अखिल भारतीय संघकी रचना करना ही है। वे इस योजनाके अनुसार दृढ़तासे काम करना चाहते हैं और उस योजनाको कार्यरूप देनेके मार्गमें आज जो कठिनाइयाँ हैं उनपर विजय पानेके लिए वे भरसक कोशिश करनेकी इच्छा रखते हैं। इस घोषणाको पूर्ण रूपसे प्राधिकृत रूप देनेके लिए, आपके सामने मैं जो वक्तव्य दे रहा हूँ, उसे एक श्वेतपत्र (ह्वाइट पेपर) के रूपमें संसदके दोनों सदनोंमें प्रचारित किया जायेगा और सरकार इसी हफ्ते संसदसे उसपर स्वीकृति देनेका अनुरोध करेगी।

श्री गांधी: प्रधान मन्त्री महोदय और मित्रो, अध्यक्षके प्रति धन्यवादका प्रस्ताव प्रस्तुत करनेका सौभाग्य तथा दायित्व मुझे प्रदान किया गया है, और इस दायित्व तथा गौरव-पदको मैंने अत्यन्त हर्षके साथ स्वीकार किया है। इस समय उस महत्त्वपूर्ण घोषणाके सम्बन्धमें, जिसे हमने अभी सुना है, कुछ कहनेकी आशा हममें से किसीसे नहीं की जाती — मुझसे तो और भी नहीं। अपनी सभाकी कार्यवाहीका शोभनीय तथा शिष्ट ढंगसे संचालन करनेवाला अध्यक्ष सदा धन्यवादका पात्र होता है — चाहे उस सभाके सदस्य सभा द्वारा किये निर्णयों अथवा स्वयं अध्यक्षके निर्णयोंसे सहमत हों या नहीं।

श्रीमन्, मैं जानता हूँ कि आपपर दोहरा कर्त्तव्य-भार था। आपको केवल परिषद्की कार्यवाहीका शोभनीय तथा निष्पक्ष ढंगसे संचालन ही नहीं करना था, बल्कि साथ ही अकसर महामहिमकी सरकारके निर्णयोंसे भी हमें अवगत कराते रहना पड़ा। और अध्यक्षके रूपमें आपने जो अन्तिम कार्य किया है वह यह कि जिन अनेक विषयोंपर इस परिषद्ने विचार-विमर्श किया है उनपर महामहिमकी सरकारके सुचिन्तित निर्णय हमें सूचित किये हैं। यहाँ मैं आपके कर्त्तव्यके उस हिस्सेके सम्बन्धमें कुछ नहीं कहना चाहता। लेकिन मेरे लिए अधिक हर्षका विषय तो, आपने जिस ढंगसे परिषद्की कार्यवाहीका संचालन किया है, वह है। और आपने समयकी पाबन्दीके सम्बन्धमें अकसर हमें जो सबक दिया है, उसके लिए मैं आपको बधाई देता हूँ। अध्यक्ष अकसर अपने इस बुनियादी कर्त्तव्यकी ही उपेक्षा कर देते हैं, और मैं स्वीकार करूँगा कि मेरे देशमें तो यह चीज इतनी आम है कि आदमी ऊब जाता है। हमें समयकी ठीक पाबन्दीका श्रेय प्राप्त नहीं है। अतः, अध्यक्ष महोदय, भारत लौटनेपर अपने देश-भाइयोंको यह बता देना मेरा सुखद तथा आवश्यक कर्त्तव्य होगा कि ब्रिटेनके प्रधान मन्त्रीने समयकी पाबन्दीका कैसा उदाहरण प्रस्तुत किया।

आपने हमें अपने जिस दूसरे गुणका परिचय दिया है, वह है, आपकी परिश्रम करनेकी क्षमता, जिसे देखकर चकित रह जाना पड़ता है। आपका लालन-पालन स्कॉटलैंडकी कठोर जलवायुमें हुआ है, सो स्वभावतः आप नहीं जानते कि विश्राम क्या होता है और न आपने हम लोगोंको ही यह जाननेका अवसर दिया है कि विश्राम क्या होता है। अनुचित न माना जाये तो कहूँ कि आपने लगभग अभूतपूर्व कठोरताके साथ हममें से हर व्यक्तिसे काम लिया है। इन लोगोंमें मेरे मित्र तथा समादृत भाई पण्डित मदनमोहन मालवीय-जैसे वयोवृद्ध व्यक्ति भी शामिल हैं और उतने ही वृद्ध मुझ-जैसे लोग भी आते हैं। आपने स्कॉटलैंडवासीके योग्य निर्ममता दिखाते हुए मेरे मित्र तथा सम्माननीय नेता श्री शास्त्रीसे इतना काम लिया कि उन्हें बिलकुल ही थका डाला। आपने कल हमें बताया कि आप उनकी शारीरिक अवस्थासे परिचित थे, किन्तु कर्त्तव्यके सामने आपने इन व्यक्तिगत संवेदनशीलताकी बातोंकी कोई परवाह नहीं की। इसके लिए आपको जितना सम्मान दिया जाये, अपर्याप्त होगा। आपकी परिश्रम करनेकी इस अद्भुत क्षमताको मैं अपनी स्मृतिमें श्रद्धापूर्वक सँजोकर रखूँगा।

लेकिन इस सम्बन्धमें मैं यह कहनेकी इजाजत चाहता हूँ कि यद्यपि मैं भू-मध्यीय क्षेत्रके बहुत पास पड़नेवाले ऐसे देशका निवासी हूँ जहाँकी आबोहवाको आरामतलबी बढ़ानेवाली आबोहवा माना जाता है, फिर भी शायद वहाँ परिश्रम करनेमें हम भी आपसे होड़ ले सकते हैं। मगर इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। कल आपने जो-कुछ कर दिखाया वह अगर इस बातका एक दृष्टान्त-मात्र था कि आपमें परिश्रम करनेकी कितनी क्षमता है — यहाँतक कि आप लगातार चौबीस-चौबीस घंटे तक परिश्रम कर सकते हैं, जैसा कि यदा-कदा आपकी कॉमन्स सभाने कर दिखाया है — तो बेशक उस होड़में विजयी आप ही होंगे।

इसलिए यह धन्यवाद प्रस्ताव प्रस्तुत करते हुए मुझे अतीव हर्षका अनुभव हो रहा है। लेकिन, एक और भी कारण है—और वह कारण शायद ज्यादा बड़ा है—जिससे मुझे इस दायित्वको अपने ऊपर लेना चाहिए और इस सौभाग्यकी कद्र करनी चाहिए। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मुझे कुछ ऐसी सम्भावना दिखाई देती है—'कुछ' इसलिए कह रहा हूँ कि मैं आपकी घोषणाको एक बार, दो बार, तीन बार, बल्कि जितनी बार जरूरी होगा उतनी बार पढ़ना चाहूँगा, उसके एक-एक शब्दका अर्थ समझूँगा, अगर कोई गूढ़ार्थ छिपा होगा तो उसको भी ग्रहण करना चाहूँगा और तभी इस निष्कर्ष पर आऊँगा—कि हम ऐसी मंजिलपर पहुँच गये हैं, जहाँसे हमारे रास्ते एक-दूसरेसे अलग हो गये हैं। लेकिन इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। इस स्थितिके बावजूद आप हमारे हार्दिक तथा सच्चे धन्यवादके पात्र हैं। हमारे इस समाजमें हमारी यह नियति नहीं है कि यदि हम परस्पर एक-दूसरेका सम्मान करना चाहें तो उसके लिए हम सबमें विचार-सहमति हो ही। हमारे लिए यह सम्भव नहीं है कि हम सदा एक-दूसरेके मतोंका पूरा सम्मान करें और हम एक-दूसरेके विचारों और इच्छाओंको हमेशा स्वीकार करते रहें—इस हदतक कि हमारे पास सिद्धान्त नामकी कोई चीज रह ही नहीं जाये। इसके विपरीत, मानव-स्वभावकी गरिमा इस बातमें निहित है कि हम जीवनमें आनेवाले झंझावातोंका वीरतासे सामना करें। कभी-कभी तो सगे भाइयोंको भी एक-दूसरेसे अलग रास्ते पकड़ने पड़ते हैं। लेकिन अपने झगड़ेके अन्तमें —अपने मतभेदके बाद—वे यदि यह कह सकें कि उनके मनमें कोई दुर्भावना नहीं थी और झगड़ों और मतभेदोंके बावजूद उन्होंने ऐसा आचरण किया जो किसी सज्जनके योग्य था, किसी सच्चे सिपाहीको शोभा देनेवाला था—मतलब कि अगर इस अध्यायके अन्तमें मैं खुद अपने और अपने देशभाइयोंके बारेमें और अगर संभव हो तो आपके और आपके देशभाइयोंके विषयमें ऐसा कह सका तो मैं कहूँगा कि हम जब एक-दूसरेसे अलग भी हुए तो शोभनीय ढंगसे अलग हुए। मैं नहीं जानता—मैं कौन-सी राह पकड़ूँगा, मगर उससे कोई अन्तर नहीं पड़ता। यदि मुझे आपसे ठीक उल्टी दिशामें जाना पड़े तब भी आप मेरे धन्यवादके—मेरे हृदयकी पूरी गहराईसे निकले धन्यवादके पात्र हैं।[1]

अध्यक्ष : . . . इस प्रस्तावको प्रस्तुत करते हुए महात्मा गांधीने मेरे प्रति स्नेह और सौजन्यसे भरे जो शब्द कहे उनके लिए मैं उनका बहुत आभारी हूँ। बस, एक ही बातपर उनसे मेरा झगड़ा है और मैं आशा करता हूँ कि वे इसे कोई बड़ी बात नहीं मानेंगे और न इस सम्बन्धमें उन्हें कोई गलतफहमी होगी। वह बात यह है : मेरी तुलनामें वे अपनेको वृद्ध क्यों कहते हैं? उनके पास तो अभी जीवनके अनेक वर्ष पड़े हुए हैं? पिछली रात १२ बजे जिसने भाषण दिया वह नौजवान था—युवा आदमी था। और जो उस समय अध्यक्षके आसनपर बैठा हुआ उससे

१. धन्यवाद-प्रस्ताव सर्वसम्मतिसे और हर्ष-ध्वनिके बीच स्वीकार किया गया।

काम ले रहा था, वह वृद्ध था। मेरी तुलनामें तो श्री गांधी युवक हैं। मैं नहीं जानता था कि हम दोनोंमें से कौन ज्यादा बूढ़ा दिखता है — लेकिन अगर आप "परिचय-पुस्तिका" (हू इज हू) जैसे दस्तावेजोंको देखें, जिनमें कोई झूठी बात नहीं दी जाती, तो पायेंगे कि प्रकृतिके सामान्य नियमके अनुसार श्री गांधीकी तुलनामें मेरे जीवनका अन्त अधिक निकट है। ("नहीं, ऐसा नहीं है।") सो अगर किसीको अधिवेशनके दीर्घ-काल तक चलते रहनेपर शिकायत होनी चाहिए तो वह उस समय भाषण देनेवाले उस नौजवानको नहीं, . . . बल्कि उस वृद्ध व्यक्तिको होनी चाहिए जिसने आपकी इस परिषद्की अध्यक्षता की, और जिसे आपने गत रातको दो बजे तक जगाये रखा और फिर परिषद्में आपके सामने एक लिखित वक्तव्य देनेके लिए आज सुबह छः बजे ही जग जानेको मजबूर किया। शिकायत होनी चाहिए तो उसीको। लेकिन, मित्रो, मैंने जितना-कुछ किया है वह अगर भारतके हकमें रहा है और यदि उससे आप सबको एक-दूसरेके निकट लानेमें कोई सहायता मिली है तो मुझे उसपर कोई शिकायत नहीं है।

केवल एक बात और है जिसके सम्बन्धमें मैं कुछ कहना चाहूँगा। मुझे इस बातसे बड़ी प्रसन्नता हुई है कि मेरे सामने बैठे मेरे वयोवृद्ध मित्र (सर अब्दुल कयूम)ने इस धन्यवाद प्रस्तावका अनुमोदन किया। उनको और महात्मा गांधीको किसी बातपर एक कर पाना बहुत बड़ी उपलब्धि है। इस सम्बन्धमें इन दोनोंका सहयोग उस सुखद स्थितिका पूर्वानुभव है जो मुसलमानों और हिन्दुओं!

श्री गांधी : नहीं, हिन्दू नहीं!

अध्यक्ष : श्री गांधी असंयत वाणीकी चूकोंको समझते हैं।

श्री गांधी : लेकिन मैं इस चूकको दरगुजर करता हूँ।

अध्यक्ष : वे असंयत वाणीकी — जैसी कि मेरी है — चूकको समझते हैं, और मुझे कहना चाहिए था कि जब मुसलमान और दूसरे समुदाय एक हो जायेंगे। मैं श्री गांधीके विचारोंको समझने लगा हूँ, क्योंकि उन्होंने हमसे बराबर कहा है कि आप लोग अलग-अलग वर्गोंका प्रतिनिधित्व करते हैं और वे एक साथ उन सबका प्रतिनिधित्व करते हैं।

श्री गांधी : बिलकुल ठीक कह रहे हैं आप।

अध्यक्ष : लेकिन आप दो आदमी एक-दूसरेसे सहयोग करनेको आगे आये और मिलकर एक स्कॉटलैंडवासीके प्रति अपना आभार व्यक्त किया, इसके सुपरिणामकी ओर ध्यान दीजिए। तो महात्माजी, हम इसी तरहसे आगे बढ़ें; यही सबसे अच्छा रास्ता है; और किसी दिन आप यह भी समझ सकते हैं कि यही एकमात्र रास्ता है। निश्चय ही यह वह रास्ता है, जिसे अपनाकर हम अपने इस कार्यपर गर्व कर सकते हैं और अपने राजनीतिक कामका सम्बन्ध उन भव्य आध्यात्मिक प्रेरणाओंसे ज़ोड़ सकते हैं जो हम सबके अस्तित्वके मूलमें विद्यमान हैं।

एक और बात भी है। जब महात्माजी भारतमें अध्यक्षका आसन ग्रहण करेंगे और वे मुझे इसकी सूचना देंगे तो मैं वहाँ जाकर देखूँगा कि वे मेरे सुयोग्य शिष्यकी तरह बरत रहे हैं या नहीं और आजकी इस सुबह उन्होंने "समयकी पाबन्दी" के जिस गुणके लिए मेरी मुक्त कण्ठसे प्रशंसा की है, उस पाबन्दीको वे मुस्तैदी और सफलतासे कायम रखवा पाते हैं या नहीं।

तो अब मैं कामना करता हूँ कि आपकी वापसी यात्रा शुभ रीतिसे सम्पन्न हो; लौटकर आपको सुख और समृद्धि प्राप्त हो! और यह स्मरण रखिए कि हम सब एक ही उद्देश्यको पूरा करनेके लिए चुने गये लोग हैं, हम वफादारीके एक ही धागेसे बँधे हुए हैं — भारतके प्रति वफादारीके धागेसे। आप हमारे साथ कन्धेसे-कन्धा मिलाकर खड़े रहना और विचारोंका आदान-प्रदान करते रहना न भूलें; फिर अगर भाग्यने चाहा तो अपने पारस्परिक सहयोगके बलपर हम उन समस्याओंका समाधान ढूँढ़ लेंगे जो आज हमारे सामने हैं और भारतको दुनियाके सामने एक स्वशासित और स्वाभिमानी देशके रूपमें देख सकेंगे।

और अब मैं यह घोषणा करता हूँ कि परिषद् अन्तिम रूपसे स्थगित की जाती है।[1]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउण्ड टेबल कांफरेंस (सेकेण्ड सेशन): प्रोसीडिंग्स ऑफ द प्लेनरी सेशन्स, पृष्ठ २८९-३००

२३९. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

लन्दन
१ दिसम्बर, १९३१

इस समय मैं प्रधान मन्त्रीके वक्तव्य अथवा परिषद्में जो-कुछ हुआ उसको लेकर उतना परेशान नहीं हूँ जितना कि भारतमें जो-कुछ हो रहा है उसके कारण हूँ। अंग्रेजीकी यह कहावत बिलकुल ठीक ही है कि "आनेवाली घटनाएँ अपना आभास पहले ही दे देती हैं।" तो भारतमें और खासकर बंगालमें स्थिति इतनी बुरी हो चली है कि ऐसी आशा रखनेकी कोई गुंजाइश नहीं बच रही है कि परिषद्का कोई बड़ा परिणाम हो सकता है। मेरा तात्पर्य बंगालमें पास किये गये उस ताजा अध्या-देशसे है जिसमें सरकारको उस चीजका मुकाबला करनेके लिए असाधारण अधिकार दिये गये हैं जिसे आतंकवादी प्रवृत्ति कहा गया है और एक हदतक ठीक ही कहा गया है। लेकिन, अतीतके अनुभवोंसे मैं यही निष्कर्ष निकालता हूँ कि सरकार अपना

१. परिषद् दिनके १२-३३ पर समाप्त हुई थी।

संतुलन खो बैठी है जैसा कि उसके साथ किसी भी यूरोपीयकी हत्या अथवा हत्याके प्रयत्न किये जानेपर होता है। अपराधोंसे मुझे सख्त नफरत है, लेकिन इस सम्बन्धमें मेरे मनमें कोई शंका नहीं है कि आतंकवादी प्रवृत्तिके जितनी फैलनेकी आशंका है, उसकी तुलनामें सरकारको दी गई सत्ता बहुत ही अधिक है। अगर मुझपर छोड़ दिया जाये तो मैं इसका मुकाबला साधारण कानूनके अधीन ही कर सकता हूँ।

मुझे कहना चाहिए कि साधारण कानूनके अन्तर्गत भी कार्यकारिणीको बहुत व्यापक अधिकार प्राप्त हैं, और अगर सारी स्थितिपर विचार करनेके बाद हम शुद्ध गणितकी दृष्टिसे भी हिसाब लगाकर देखें तो पायेंगे कि बंगाल जो-कुछ कर रहा है, वह बहुत अधिक बुरा नहीं है। इस हालतमें मूल कारणको दूर करनेकी कोशिश करनेके बजाय भारत सरकार, बल्कि यों कहिए कि भारत सरकार और भारत-मन्त्रीकी सहायतासे बंगाल सरकार रोगके नहीं, केवल उसके लक्षणके उपचारमें ही लगी हुई है। सभी स्वीकार करते हैं कि आतंकवादी आतंकका सहारा केवल आतंक पैदा करनेके उद्देश्यसे ही नहीं लेते। कोई भी बिना किसी उद्देश्यके अपनी जानको खतरेमें नहीं डालता है और मेरा खयाल है, इस बातको सभी स्वीकार करते हैं कि आतंकवादी अपने देशको स्वतन्त्र करानेकी आशासे ही इस तरीकेका सहारा लेते हैं। अगर वह स्वतन्त्रता प्राप्त हो जाये तो निश्चय ही आतंकवादी प्रवृत्ति नहीं रह जानी चाहिए और यूरोपीयों अथवा सरकारी अधिकारियोंकी –– चाहे वे यूरोपीय हों या कोई और –– हत्या करनेके प्रयन्न तो बिलकुल ही नहीं होने चाहिए। इसलिए अगर मेरा बस चले तो जहाँ मैं अपराधको बन्द करवानेके लिए सभी सामान्य कानूनी अधिकारोंका उपयोग करूँ, वहीं दूसरी ओर यह जाननेकी भी कोशिश करूँ कि स्वतन्त्रतासे आतंकवादियोंका आशय क्या है और अगर जाँच-पड़ताल करनेपर उनकी माँगें मुझे सही लगें तो मैं सीधे उनको स्वीकार कर लूँ। फिर देशमें कोई आतंकवादी प्रवृत्ति रह ही नहीं जाये।

स्वर्गीय श्री चित्तरंजन दास तथा उनके समयके और भी कई लोकसेवी जनोंने सरकारको यह उपाय अपनानेकी सलाह दी थी, लेकिन सलाह या तो अनसुनी कर दी गई या उसे पूरा-पूरा स्वीकार नहीं किया गया। लेकिन ऐसे मामलेमें कोई जब भी अपनी गलती महसूस करके अपना कदम वापस ले ले, वह काम समयसे ही किया गया माना जायेगा। मुझे बहुत भय है कि देश जिस पूर्ण स्वतन्त्रताके लिए तड़प रहा है, वह जबतक उसे प्राप्त नहीं होती तबतक आतंकवादी प्रवृत्ति समूल नष्ट नहीं होगी।

कांग्रेसने एक ऐसा तरीका अपनाया है जिससे सविनय प्रतिरोध और उसमें जो-कुछ समाया हुआ है वह चीज पूर्ण रूपसे आतंकवादी प्रवृत्तिका स्थान ले सकती है। और मेरा निश्चित मत है कि कांग्रेसके तरीकेके परिणामस्वरूप आतंकवादी अपराधोंपर बहुत हदतक अंकुश लगा रहा है। लेकिन, अभी मैं कांग्रेसके तरीकेकी सफलताके विषयमें कोई बहुत बड़ा दावा नहीं करता। लेकिन मैं यह आशा करता हूँ कि सरकार फिर चाहे समझदारीसे काम लेना शुरू करे या न करे, कांग्रेस

अपने रास्तेपर चलती रहेगी और इस तरह किसी दिन आतंकवादी प्रवृत्तिको बिलकुल मिटा देगी। लेकिन मैं स्वीकार करता हूँ कि प्रगतिकी रफ्तार बहुत धीमी है। मगर ऐसा तो हृदय-परिवर्त्तनके सभी तरीकोंके सम्बन्धमें सम्भावित है।

लेकिन यह सब कहनेका तात्पर्य यह है कि बंगाल सरकार द्वारा अपनाये गये ये दमनकारी अधिकार, सत्ताके हस्तान्तरण तथा जैसी सच्ची स्वतन्त्रता भारत चाहता है वैसी सच्ची स्वतन्त्रता देनेकी यहाँ जो इच्छा व्यक्त की गई है, उससे संगत नहीं हैं। इसलिए, प्रधान मन्त्रीकी घोषणाका जो अर्थ है, उसको अलग भी रखें तो भी इस अध्यादेश तथा मेरी जानकारीमें भारतमें और भी जो-कुछ हो रहा है उस सबके परिणामस्वरूप मेरा मन आशंकाओंसे भर जाता है और हो सकता है कि अब कांग्रेसके सामने आगे सहयोग करनेका कोई रास्ता ही न रह जाये।

काश, यहाँ सही दिशामें लोकमत तैयार किया जा सकता! बंगालमें जो-कुछ हो रहा है, अगर उसका सच्चा भारतीय विवरण यहाँ प्रकाशमें आये तो मुझे निश्चय है कि उसे किसी भी तरह बरदाश्त नहीं किया जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ३-१२-१९३१

२४०. पत्र : हे० सॉ० लि० पोलकको

लन्दन
२ दिसम्बर, १९३१

प्रिय हेनरी,

यह जानकर दुःख हुआ कि तुम मुझसे बातचीत करनेको नहीं रुके और मकान-मालकिनको दो दिनोंका अतिरिक्त किराया दे दिया। जो शर्तें तय हुई थीं, उनका तुमने खयाल ही नहीं किया। और अब तथ्योंको जाननेकी फिक्र किये बिना तुमने गलीचेके इस्तेमालसे उसमें हुई छीजनका हर्जाना देनेका आग्रह किया है। समृद्धिके बीच तथा धन और शक्तिशाली लोगोंके सम्पर्कमें रहनेके कारण स्पष्ट ही अब तुम गरीबोंका प्रतिनिधित्व करने लायक नहीं रह गये हो। तुमको मालूम होना चाहिए कि मैं जो पैसा खर्च करता हूँ वह मेरा नहीं है। मैं गरीबोंका न्यासी हूँ और मुझे गरीबोंका पैसा इस तरह बरबाद करनेका कोई हक नहीं है। और मेरे हाथमें आनेवाला एक-एक रुपया गरीबोंके उस न्यासमें शामिल हो जाता है। मैंने पहलेके सौदेके बारेमें, जब तुमने मकान-मालकिनको चेक दिया था, तुमसे कुछ नहीं कहा है। मुझे मॉड तथा एन्ड्रयूज दोनोंसे बहुत सख्तीसे बोलना पड़ा था। मैंने उम्मीद की थी कि उस घटनाके बाद मुझसे पूछे बिना कुछ नहीं किया जायेगा। मुझे इस चीजसे

बहुत चोट पहुँची है। अब बताओ कि गलीचेके बारेमें तुम मुझसे क्या करनेको कहते हो।

सस्नेह,

भाई

हे० सॉ० लि० पोलक
डी विअर गार्डेन्स
लन्दन

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८३७३)से।

२४१. भेंट : फिलिप हार्टोगको[1]

लन्दन
२ दिसम्बर, १९३१

गत २० अक्टूबरको रॉयल इंस्टिट्यूट ऑफ इंटरनेशनल अफेयर्समें श्री गांधीने कहा था कि भारतमें पिछले ५० या १०० वर्षोंमें साक्षरतामें कमी आई है।[2] उनको लिखा मेरा पिछला पत्र इसीके सम्बन्धमें था। और उसमें मैंने उनसे मुलाकातका समय भी माँगा था। . . . मैं श्री गांधीसे मिलने शामके ४ बजे ८८, नाइट्सब्रिज पहुँचा और ५ बजेतक वहाँ ठहरा। वे बड़ी-सी अँगीठीके सामने शाल ओढ़े एक सोफेपर लेटे हुए थे। साफ दीख रहा था कि वे बहुत थके हुए हैं, हालाँकि मेरे वहाँ पहुँचने और वहाँसे चलते समय वे सोफेपर से उठे बिना मान हीं नहीं रहे थे। उन्होंने कहा कि मैं तो समझता था कि मुझमें चाहे जितना काम करनेकी शक्ति है, लेकिन अब मेरा शरीर जवाब दे रहा है। इसपर मैंने कहा कि आप शायद बहुत थक गये हैं और अभी बातचीत न करना चाहते हों, लेकिन उन्होंने बताया कि वे मुझसे मिलकर बड़े प्रसन्न थे और साथ ही मुझे पत्र लिखकर भेंटका समय न देनेके लिए हृदयसे क्षमा माँगी।

उन्होंने तुरन्त इस बातको स्वीकार किया कि उस समय उनके पास अपने २० अक्टूबरके वक्तव्योंकी सचाई प्रमाणित करनेको कोई तथ्य-आँकड़े नहीं थे। इसपर मैंने जो दलील दी उसका उत्तर देनेकी कोशिश उन्होंने नहीं की। मैंने कहा कि आपने 'यंग इंडिया' के ८ और २९ दिसम्बर, १९२० के अंकोंमें दौलतराम गुप्तके लिखे जिन लेखोंकी टाइप की हुई प्रतियाँ मुझे दी हैं, उनमें शिक्षा-सम्बन्धी कोई आँकड़ा नहीं है और उनम सबसे बादकी जिस सरकारी रिपोर्टका — अर्थात् डॉ० जी० डब्ल्यू०

१. सर फिलिप हार्टोग द्वारा ली गई भेंट-वार्त्ताकी टीपसे उद्धृत।
२. देखिए "भाषण : चैथम हाउसकी सभामें", २०-१०-१९३१।

लीटनरके 'हिस्ट्री ऑफ इंडिजिनस एजुकेशन इन पंजाब' का — हवाला दिया गया है, वह १८८२ में लिखी गई थी और इसलिए उससे गत २० वर्षोंमें भारतमें शिक्षाके उत्कर्ष अथवा अपकर्षका कोई प्रमाण नहीं मिल सकता। इसपर उन्होंने कहा कि श्री महादेव देसाई (जो उस समय वहाँ मौजूद थे) ब्रिटिश संग्रहालयमें इस विषयमें छानबीन कर रहे हैं। श्री देसाईने स्वीकार किया कि अभीतक उन्हें कोई नई चीज नहीं मिल पाई है। अब श्री गांधीने कहा कि मैं 'यंग इंडिया' में उक्त लेख लिखने-वाले सज्जनसे पूछताछ करूँगा और भारत लौटकर आश्रमके कुछ सुयोग्य मित्रोंसे इसके विषयमें छानबीन करनेको कहूँगा। फिर जो परिणाम सामने आयेगा, आपको तार द्वारा सूचित कर दूँगा। उसमें मैं आपको बता दूँगा कि ऐसी कोई सामग्री मिल पाई या नहीं जिससे आपको विश्वास हो जाये कि मेरी बातें सही थीं। अगर नहीं मिली तो अपनी भूलके लिए मैं पर्याप्त क्षमा-याचना करूँगा और अपनी बातें इस तरह वापस लूँगा जिससे उसकी जानकारी उससे कहीं अधिक लोगोंको हो सके जितने लोग उस सभामें मौजूद थे जिसमें मैंने उक्त वक्तव्य दिये।

इसके बाद मैंने उनको लीटनरकी पुस्तक दिखाते हुए उसके पृष्ठ ३ पर कही हुई इस बातकी ओर उनका ध्यान आकर्षित किया कि पंजाबको पूरे भारतकी शिक्षाकी स्थितिका नमूना नहीं समझना चाहिए, बल्कि आबादी और पढ़नेवाले लोगोंके अनु-पातकी दृष्टिसे वह मध्य प्रान्त और बंगालके निचले हिस्सेसे बहुत पिछड़ा हुआ है। मैंने कहा कि जहाँ श्री गुप्तने पृष्ठ २ पर होशियारपुरके सम्बन्धमें दिये आँकड़ोंको उद्धृत किया है वहाँ पृष्ठ ३ पर कही गई इस बातका कोई उल्लेख ही नहीं किया है। मैंने श्री गांधीजो बताया कि १८८२ में ब्रिटिश भारतकी आबादी मोटे तौरपर २१ करोड़ थी और अब १९३१ में लगभग २७ करोड़ हो गई है, अर्थात् मोटे तौरपर ३० प्रतिशतकी वृद्धि हुई है, जबकि इस अवधिमें ब्रिटिश भारतमें शिक्षा प्राप्त करने-वाले बच्चों और युवकोंकी संख्या लगभग २५ लाखसे बढ़कर १ करोड़ १० लाख हो गई है, अर्थात् चार गुनेसे भी ज्यादा वृद्धि हुई है। इस हालतमें अगर इन ५० वर्षोंमें साक्षरतामें कमी आई हो तो यह बड़े आश्चर्यकी बात होगी।

मैंने यह भी बताया कि दूसरी ओर शिक्षा प्राप्त कर रहे लोगोंकी संख्याके आधारपर साक्षरताके सम्बन्धमें कोई अनुमान लगाना असम्भव है। अपनी 'एजुकेशन इन ब्रिटिश इंडिया' नामक पुस्तकमें हावेलने बताया है कि कई कारणोंसे, जिनमें एक बच्चोंका कम उम्रमें ही स्कूलोंसे हटा लिया जाना भी है, १९ वीं सदीके स्कूल लगभग बेकार ही थे। मैंने इस बातका भी उल्लेख किया कि १९१७-२७ में बंगालमें ३००,००० से अधिक (असली संख्या लगभग ३७०,००० है) बच्चोंके दाखिलेके बावजूद चौथे दर्जेमें पहुँचनेवाले छात्र-छात्राओंकी संख्यामें लगभग ३०,००० की कमी आई है और यह वह दर्जा है जिसमें छात्रोंके पहुँचनेके बाद ही वर्त्तमान परिस्थितियोंमें यह कहा जा सकता है कि उसने साक्षरता प्राप्त कर ली।

मैंने श्री गांधीको बंगालमें साक्षरताकी स्थितिके सम्बन्धमें ऐडमकी 'रिपोर्ट ऑन वर्नाक्युलर एजुकेशन ऑफ १८३५-३८' से भी कुछ आँकड़े दिखाये और उनकी तुलना १९२१ की जनगणनाके आँकड़ों — खण्ड ५, पृष्ठ ३०२ — से की। फिर मैंने उनको उसी खण्डके पृष्ठ २८५ से १९११ और १९०१ के आँकड़े दिखाये, जिससे सिद्ध होता है कि बर्मा, बंगाल और मद्रासमें साक्षरता खूब बढ़ी है, यद्यपि इस अवधिमें पंजाब, बिहार, बम्बई तथा संयुक्त प्रान्तमें बहुत कम या कोई भी प्रगति नहीं हुई। श्री गांधीने क्षमा-याचनाके स्वरमें कहा कि "इन बातोंके सम्बन्धमें मैं बहुत कम जानता हूँ।" इसपर मैंने कहा कि यह स्वाभाविक भी है, क्योंकि आपको बहुत-सी और बातोंका भी तो खयाल रखना पड़ता है।

भेंट-वार्त्ताके लगभग अन्तमें मैंने कहा कि मैं आशा करता हूँ, अब आप अपनी शक्ति शान्तिके ही पक्षमें लगायेंगे। उत्तरमें उन्होंने कहा कि कल मैंने जो-कुछ कहा, वास्तवमें मेरा आशय भी वही था। अर्थात्, मैं प्रधान मन्त्रीकी घोषणाको बार-बार पढ़ूँगा। उन्होंने यह भी कहा कि इस मामलेमें कांग्रेसको कोई सलाह देनेके सम्बन्धमें मेरी व्यक्तिगत जिम्मेदारी कितनी बड़ी है, इसे मैं महसूस करता हूँ। उन्होंने यह भी बताया कि अगले शुक्रवारको सर सैम्युअल होरसे मिलनेके खयालसे मैंने प्रस्थानकी तिथि स्थगित कर दी है, क्योंकि सर सैम्युअलने कहा है कि संसदकी बहसमें व्यस्त रहनेके कारण अभी (बुधवार और गुरुवारको) उनके पास समय नहीं होगा। इसपर मैंने कहा, "मुझे पूरा विश्वास है कि आपको इस बातकी प्रतीति हो गई होगी कि अंग्रेज लोग, इस समय भारतको जो-कुछ दिया जा सकता है, वह देनेकी हार्दिक इच्छा रखते हैं।" उत्तरमें उन्होंने कहा:

हाँ, लेकिन एक बात है कि जो अंग्रेज हृदयसे मानते हैं, लेकिन मैं इस चीजको नहीं समझ सकता। वे मानते हैं कि हममें विशेषज्ञोंकी सहायतासे भी अपना कार्य-व्यापार स्वयं सँभालनेकी योग्यता नहीं है। जब मैं युवा था और मेरे पिता एक राज्यके दीवान थे, उन दिनों मैं एक दूसरे राज्य (जूनागढ़) के दीवानके बारेमें जानता था। वे अपने हस्ताक्षर भी मुश्किलसे कर सकते थे, लेकिन वे बड़े होशियार आदमी थे और उस राज्यके कार्य-व्यापारका संचालन अद्भुत सफलतासे करते थे। वे जानते थे कि उनको किन व्यक्तियोंसे सलाह लेनी चाहिए और वे उन्हींसे सलाह लेते थे। जब मैंने रुपयेकी विनिमय-क्षमताके विषयमें आपके प्रधान मन्त्रीसे बात की तो उन्होंने मुझसे कहा कि विनिमय-दरोंके बारेमें वे कुछ नहीं जानते और यद्यपि प्रधान-मन्त्रीको सब-कुछ अपने ही नामपर करना पड़ता है, लेकिन वास्तवमें उसे विशेषज्ञोंकी सलाहपर निर्भर रहना पड़ता है। हमें अतीतमें अपना शासन आप चलानेका अनुभव है और अब भी हम उतनी ही खूबीसे उसे चला सकते हैं।

भेंट-वार्त्ताका अन्त मैंने यह कहकर किया कि मैं शान्ति-प्रिय आदमी हूँ और किसी विवादमें नहीं पड़ना चाहता, लेकिन 'जर्नल ऑफ इंटरनेशनल अफेयर्स' में मुझे ये तथ्य देने ही पड़ेंगे। इसपर मुझे श्री गांधीकी मूक सहमति मिल गई। मैंने उनके

आनन्दपूर्वक भारत लौटनेकी कामना करते हुए कहा कि आशा है, मेरी बातचीतसे आपको ऊब नहीं हुई होगी। उत्तरमें उन्होंने कहा कि नहीं, आपसे मिलकर सचमुच मैं बड़ा प्रसन्न हुआ और आशा करता हूँ कि आगे आपसे सम्पर्क बनाये रखूँगा। . . .

श्री गांधीने कहा, मैंने ब्रिटिश सरकारपर देशी स्कूलोंको नष्ट करनेका आरोप नहीं लगाया। बल्कि यह कहा था कि प्रोत्साहन न देकर उसने उन्हें स्वभावतः दम तोड़ देनेको छोड़ दिया।

इसके बाद मैंने श्री गांधीको बताया कि मैं उनकी इस बातको स्वीकार कर सकता हूँ कि सार्वत्रिक प्राथमिक शिक्षा अभी बहुत दूरकी चीज है, और मेरी समितिने अनुमान लगाया है कि प्रतिवर्ष १९ करोड़ अतिरिक्त खर्च करनेपर ८० प्रतिशत लड़कों और लड़कियोंको प्राथमिक स्कूलतककी शिक्षा दी जा सकेगी। इसपर श्री गांधीने मुझसे पूछा कि क्या मैं ऐसा समझता हूँ कि अगर बच्चोंको माध्यमिक स्कूलोंतक पढ़नेकी सुविधा न हो तो प्राथमिक स्कूलतक पढ़नेसे कोई खास फायदा होगा। मैंने कहा कि उसके बाद तो वही कदम उठाया जायेगा, और देशी भाषाओंके माध्यमिक स्कूलोंको प्रोत्साहन देना मैं बहुत महत्त्वकी बात समझता हूँ — केवल बच्चोंके लाभके लिए ही नहीं, बल्कि इसलिए भी कि उनसे प्राथमिक स्कूलोंके लिए शिक्षक प्राप्त होंगे। मैंने इस बातपर अपना खेद प्रकट किया कि बंगालको देशी भाषाओंके माध्यमिक स्कूलोंसे चिढ़ है और वह अंग्रेजी पढ़ानेवाले माध्यमिक स्कूलोंपर ही आग्रह रखता है।

इसके बाद हमने लड़कियोंकी शिक्षाकी चर्चा की और मैंने अपनी समितिके इस मतको उद्धृत किया कि शिक्षा-प्रसारकी सभी योजनाओंमें लड़कियोंकी शिक्षाको प्राथमिकता देनी चाहिए। श्री गांधीने इस सम्बन्धमें मुझसे पूर्ण सहमति प्रकट की लेकिन साथ ही कहा कि मैं अपने मनमें सोचता हूँ कि क्या प्राथमिक शिक्षा प्राप्त कर लेनेसे लड़कियाँ आगे चलकर बेहतर माताएँ बन सकेंगी। श्री गांधीने कहा कि अभी मैंने आपकी समितिकी रिपोर्ट नहीं पढ़ी है।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९४०८)से; सौजन्य : इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी

२४२. भेंट : समाचार-पत्रोंके प्रतिनिधियोंको

लन्दन
३ दिसम्बर, १९३१

मध्यरात्रिसे कुछ पहले कोई ४० पत्र-प्रतिनिधि महात्मा गांधीसे मिले। महात्माजी अपने नाइट्सब्रिज कार्यालयके एक छोटे-से कमरेमें अँगीठीके सामने पालथी मारकर बैठे हुए थे और पत्र-प्रतिनिधि भी फर्शपर ही उनके इर्द-गिर्द बैठे हुए थे। उन्होंने उनसे कहा कि मैं प्रधान मन्त्रीके वक्तव्य अथवा कॉमन्स सभामें हुई बहस, किसीके सम्बन्धमें अन्तिम रूपसे कुछ कहनेमें असमर्थ हूँ, लेकिन आपको इस बातके लिए आश्वस्त करता हूँ कि उस वक्तव्य तथा बहस दोनोंको पूरी तरह समझानेके लिए मैं जो-कुछ कर सकता हूँ वह करनेके बाद ही किसी निष्कर्षपर पहुँचूँगा। उन्होंने कहा कि मेरे किसी भी निष्कर्षका तबतक कोई महत्त्व नहीं होगा जबतक कि उसे कांग्रेस कार्य-समितिके सामने पेश नहीं किया जाता और वह उसे स्वीकार नहीं कर लेती।

महात्मा गांधीने सविनय अवज्ञाके सम्बन्धम अपनी घोषणाको दोहराया और प्रधान मन्त्रीके वक्तव्यके बारेमें बनी अपनी इस अस्थायी रायको फिरसे जाहिर किया कि उसका मतलब यह है कि हम ऐसी मंजिलपर पहुँच गये हैं, जहाँसे हम दोनोंके रास्ते अलग हो जाते हैं। किन्तु उन्होंने यह भी कहा कि मैंने जिस प्रकार इसका अध्ययन करनेका वादा किया था, उस प्रकार अभीतक इसका अध्ययन नहीं कर पाया हूँ। महात्मा गांधीने कहा कि एक बार पुनः अग्निपरीक्षासे गुजरनेके लिए पूरे राष्ट्रका आह्वान करना बहुत बड़ी जिम्मेदारीकी बात है। इसलिए मैं गम्भीरतापूर्वक विचार किये बिना सविनय अवज्ञा फिरसे शुरू करनेकी सलाह दूँगा, ऐसी सम्भावना नहीं है, लेकिन बंगाल अध्यादेश जिस दमन-नीतिकी सूचना देता है, उस नीतिपर आग्रह करते रहनेका परिणाम यह हो सकता है कि हमारा सोचा हुआ बिलकुल उलट जाये और राष्ट्रीय स्तरपर सविनय अवज्ञा शुरू हो जाये। महात्मा गांधीने यह घोषणा करते हुए कि इस अध्यादेशका कोई औचित्य नहीं है, आगे कहा :

भारतसे रवाना होते हुए मेरी जो मनःस्थिति थी, आज वह उससे कुछ अधिक निराशापूर्ण नहीं है। अपनी आन्तरिक शक्तिके बलपर हम जितना पानेके पात्र हैं, उससे कुछ भी ज्यादा पानेकी आशा मैंने कभी नहीं की थी। गोलमेज परिषद्की वार्त्ताएँ यह जाननेका एक तरीका साबित हुई हैं कि आज जिनके हाथोंमें सत्ता है, उनकी तुलनामें हममें कितनी शक्ति है। जाहिर है कि हम विफल हो गये हैं। इस-लिए कांग्रेसको फिरसे शक्ति-संचय करनी चाहिए ताकि वह अपना काम करनेके लिए आवश्यक क्षमताका विकास कर सके।

महात्मा गांधीका विचार था कि इंग्लैंड आकर उन्होंने बहुत अच्छा किया। उन्होंने कहा कि मेरा परिषद्के बाहरका काम परिषद्के अन्दरके कामसे ज्यादा महत्त्वपूर्ण साबित हुआ है। अगर सरकार समझौते तथा लोकमतका ध्यान रखकर चलनेकी नीतिका अनुगमन करे और प्रधान मन्त्रीकी घोषणामें कांग्रेसकी माँगोंके स्वीकार किये जानेकी गुंजाइश हो तो मैं वार्त्ता जारी रखनेको तैयार हूँ। उस हालतमें मैं अपने देशभाइयोंको पूरे हृदयसे सहयोग करते रहनेकी सलाह दूँगा। महात्मा गांधीको इस बातके लिए खेद था कि वे श्री चर्चिल तथा कुछ अन्य लोगोंसे नहीं मिल पाये। वे २८ दिसम्बरको भारत पहुँचनेकी आशा रखते हैं।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, ६-१२-१९३१

२४३. बातचीत : हॉरैबिन तथा अन्य लोगोंसे[1]

लन्दन

३ दिसम्बर, १९३१

हॉरैबिन : सरकारके प्रस्ताव ऊपरसे देखनेमें तो इतने सही हैं कि खतरनाक मालूम होते हैं।

गांधीजी : इस घोषणाको पिछले सालकी तुलनामें प्रगतिका सूचक नहीं कहा जा सकता। बल्कि एक महत्त्वपूर्ण मामलेमें तो इसे एक कदम पीछे हटना ही माना जायेगा। सचमुच ऐसा नहीं है कि कोई कदम पीछे हटाया गया है, लेकिन जहाँ गत वर्षके प्रस्ताव[2] अस्थायी थे, इस वर्षके प्रस्तावोंमें परिवर्त्तनकी कोई गुंजाइश नहीं रखी गई है। वे अस्थायी नहीं, बल्कि अन्तिम हैं। पिछले वर्षके प्रस्तावोंकी स्वीकृति संघ-संरचना समितिकी सिफारिशोंपर निर्भर है। मगर ये प्रस्ताव गत वर्षके प्रस्तावों की तुलनामें कड़े, अपरिवर्त्तनीय हैं — उदाहरणके लिए वित्त-सम्बन्धी सुरक्षात्मक पूर्वोपायोंको ले सकते हैं। मुझसे कहा गया कि गत वर्षके निष्कर्ष अन्तिम नहीं थे और इसीलिए मैं यहाँ आया भी। घोषणामें संघ-संरचना समितिके निष्कर्षोंको स्वीकार किया गया है। हर रिपोर्टमें एक-न-एक असहमति दर्ज है, लेकिन उसमें यह नहीं कहा गया है कि असहमति किसने व्यक्त की। यदि प्रत्येक पक्षके समर्थकोंकी संख्याका विचार किया जाये तो कांग्रेसका मत शेष सभी पक्षोंके मतोंके योगसे भी अधिक वजनदार साबित होगा।

प्रतिरक्षा और वित्तको ताजके अधीन रखा गया है। यह स्थिति किसी भी तरह स्वीकार करने योग्य नहीं है। जबतक द्वार-रक्षक और खजानेपर अपना अधि-

१. बातचीत शामके समय हुई थी।

२. पहली गोलमेज परिषद्में रखे गये प्रस्ताव।

कार न हो तबतक कोई भी व्यक्ति अपने घरका मालिक नहीं हो सकता। इसीलिए मैंने कहा कि अगर भारतीय इसे स्वीकार करेंगे तो अपनेको उपहासका पात्र बनायेंगे। यह बहुत ही अपमानजनक स्थिति है। इसमें बेईमानी भी है। सरकारको कहना यह चाहिए था कि हम आपको इन विषयोंका नियन्त्रण सौंपनेको तैयार हैं। लेकिन वह तो संक्रान्तिकालीन सुरक्षात्मक पूर्वोपायोंकी बात कर रही है।

अब आप इस चीजपर, जो-कुछ बंगालमें हो रहा है, उसके प्रकाशमें विचार कीजिए। यह अध्यादेश अत्यन्त आपत्तिजनक है। अत्यन्त आपत्तिजनक तो रौलट अधिनियम भी था, किन्तु यह उससे भी बहुत अधिक आपत्तिजनक है। यह हमें गदरके जमाने और सैनिक-शासनके दिनोंकी याद दिलाता है। दरअसल यह सैनिक-शासनसे भी बदतर है। सैनिक-शासनमें तो किसी निर्णयको विचार करके बदला भी जा सकता है, लेकिन यहाँ नहीं। यह तो कानून समर्थित सैनिक-शासन है। हत्या करनेके प्रयत्नका दण्ड फाँसीपर चढ़ा दिया जाना तय किया गया है। कोई अपील नहीं की जा सकेगी, मुकदमोंकी सुनवाई बन्द कमरोंमें होगी, अनुभवहीन नौजवानोंको मुकदमेकी सुनवाईका अधिकार होगा, और वे चाहें तो पुलिस-अधिकारियोंको भी यह अधिकार दे सकते हैं। जो-कुछ आयरलैंडमें हुआ वह इससे बुरा नहीं था, आम जनतासे फरार लोगोंको अधिकारियोंके हवाले करनेकी अपेक्षा की जायेगी। इसका मतलब तो सारे बंगालको सजा देना होगा। जनताकी ओरसे जो अपराध किये गये, वे निश्चय ही बुरे थे, लेकिन सरकारने सैनिक-शासनके अधीन जो बदला लिया वह तो भयंकर था।

जब मैं उक्त घोषणाको इस अध्यादेशके प्रकाशमें देखता हूँ तो मुझे नहीं लगता कि सरकार सत्ता हस्तान्तरित करना चाहती है। जो थोड़ी जिम्मेदारी दी जानेवाली है, वह तो छाया-मात्र है। जाहिर है कि इन बाधाओंके कारण उनको निभा पाना हमारे लिए मुश्किल होगा और तब इस बातको हमारे खिलाफ हमारी अयोग्यताके एक सबूतकी तरह पेश किया जायेगा। आजकी विधानसभाको ही लीजिए। जिन प्रस्तावोंको सरकार द्वारा मनोनीत सदस्योंने भी लगभग अस्वीकार कर दिया वे प्रस्ताव पास हो गये। बजटके मामलेमें भी ऐसा ही हुआ। आज जब आपको सिर्फ दमन-ही-दमनको झेलना पड़ रहा है तो कलको उत्तरदायी शासन कैसे मिल जायेगा? दक्षिण आफ्रिकामें जब उत्तरदायी शासन आया तो स्वाभाविक रीतिसे आया। लोग जानते थे कि वह आ रहा है। जीवन्त विकासकी हर प्रक्रिया ऐसी ही होती है। यहाँ तो वैसी कोई बात ही नहीं है। लेकिन यह सब कहते हुए मेरे ध्यानमें यह बात जरूर है कि वर्त्तमान प्रस्ताव अस्थायी हैं, इनमें कुछ परिवर्त्तन किये जा सकते हैं और अध्यादेश दो-तीन दिनोंमें रद्द कर दिया जायेगा।

रेंच: मैं तो यही महसूस करता हूँ कि स्थितिमें बहुत बड़ा परिवर्त्तन हुआ है। रॉदरमेयर और चर्चिलका कोई विशेष महत्त्व नहीं है। मैकडॉनाल्डका वक्तव्य, जैसी मैंने आशा की थी उससे अच्छा ही है, टोरी बहुमत जहाँतक गया, वहाँतक जाये, इससे अच्छी स्थितिकी आप कल्पना नहीं कर सकते। आप तीन साल इन्तजार

क्यों नहीं करते? ग्रेट ब्रिटेनको यह दिखानेका मौका तो दीजिए कि वह सचमुच ईमानदार है।

गांधीजी: यहाँ आयरलैंडवाला दृष्टान्त लागू नहीं किया जा सकता। आयरलैंडके मामलेमें भी वार्ता तो चली थी, लेकिन वार्त्ताके दौरान दमनकी कार्रवाई नहीं की गई थी। लेकिन भारतके मामलेमें तो इधर बातचीत चल रही है और उधर दमन सर सैम्युअल होरने साफ कहा: "मुझे आप लोगोंकी योग्यता या क्षमतामें भरोसा नहीं है।" अगर आप यह कहें कि जो-कुछ चर्चिल कहते हैं उसके आधारपर हमारे सम्बन्धमें कोई धारणा कायम न कीजिए तो इस बातको मैं मान लूँगा। लेकिन अगर आप यह कहें कि जो-कुछ मैकडॉनाल्ड या लोथियन कहते हैं, उसके आधारपर हमारे सम्बन्धमें कोई राय कायम मत कीजिए तो यह चीज मेरी समझमें नहीं आ सकती। होर बड़े खरे ढंगके आदमी हैं, बातके पक्के और ईमानदार; लेकिन वे बहुत जिद्दी और सख्त हैं, जिस बातपर अड़ जाते हैं, अड़े ही रहते हैं और भारतीय इतिहासके बारेमें उन्होंने ऐसे अज्ञानका परिचय दिया है कि आश्चर्य होता है। उन्हें लगता है कि भारतमें अंग्रेजी शासन हमारे लिए एक निश्चित वरदान साबित हुआ है। वे मानते हैं कि इस विश्वासके बिना वे इस शासनको चला ही नहीं सकते। दूसरे लोग भी करते तो यही हैं, मगर जो-कुछ होर कहते हैं, वे कहते नहीं।

लास्की: मगर पूरा मन्त्रिमण्डल अध्यादेशको ठीक नहीं मानता। आपकी बातको मैं एक हदतक तो सही मानूँगा।

गांधीजी: नहीं, अगर ऐसी बात है तो मन्त्रिमण्डलके सदस्योंको त्यागपत्र दे देना चाहिए। यह तो मनको क्लेश पहुँचानेवाली स्थिति है। यह बिलकुल असह्य स्थिति है। इसको मिटानेकी कोशिशमें मैं खुदको भी मिटा देनेके लिए तैयार हूँ। अगर इस तरहके मामलेमें आप चुप रहते हैं तो उसका मतलब है कि आप भी अपराध कर रहे हैं।

लास्की: लेकिन इसपर जरा हमारे दृष्टिकोणसे तो सोचकर देखिए — इस दृष्टिकोणसे कि प्रधान मन्त्रीने एक बहुत ही चतुराई-भरा कदम उठाया है। उन्होंने अन्तिम निर्णयकी घड़ी टाल दी। उन्होंने आपके लिए अपना अगला रुख तय करना मुश्किल कर दिया है और इसी तरह हमारे लिए भी। मुझे लगता है कि आपको उनसे अपनी सदाशयताका पूरा प्रमाण देनेको कहनेका अधिकार है। अगर आपकी स्थितिमें मैं होता तो उनसे बंगाल अध्यादेशको पूरा-पूरा बदल देनेको कहता। उनसे बजाय यह कहनेके कि आपने घोर अपराध किया है और हमारा आपसे कोई सरोकार नहीं है, आप उनसे, बंगालमें जो-कुछ हो रहा है, उसका स्पष्टीकरण करनेको कह सकते हैं। इसके अलावा विभिन्न समितियाँ हैं। उनमें सही ढंगके लोगोंको स्थान दिये जानेकी माँग करके आप उनकी सदाशयताको परखनेका आग्रह कर सकते हैं। आपकी स्थितिमें मैं होऊँ तो मैं इन समितियोंमें कांग्रेसको पर्याप्त प्रतिनिधित्व दिये जानेकी माँग करूँ। और तीसरी बात यह कि अगर आपकी जगह मैं होऊँ तो

मैं उनसे कहूँ कि जिन विषयोंके लिए केन्द्रीय सरकार उत्तरदायी है, उनके संचालनमें भारतीयोंको उत्तरोत्तर अधिकाधिक हाथ बँटानेका मौका देकर अपनी सदाशयताका प्रमाण दीजिए। इन विषयोंको ऐसा समझकर चलना कि इनमें किसी ओरसे किसीको दखल देनेकी इजाजत ही नहीं दी जा सकती, भारी भूल है। मैं चाहता हूँ कि एक खास अवधिके अन्दर आप सरकारको यह समझानेकी कोशिश कीजिए कि अगर वह आपको संतुष्ट करनेके लिए तैयार है तो आप गोलमेज परिषद् द्वारा शुरू किये गये काममें सहयोग करते रहेंगे। उसके बाद अगर आपको जरूरी लगे तो सविनय अवज्ञा शुरू कीजिए।

गांधीजी: आपकी कठिनाइयोंका विचार न करूँ तो भी सत्याग्रहीके नाते मैं, जो-कुछ आप कह रहे हैं, उसके अलावा और कुछ कर भी नहीं सकता। कलकी बातचीतमें मैं वही सब करने जा रहा हूँ जो आपने सुझाया है। मैं यह नहीं कहूँगा कि रक्षात्मक पूर्वोपायोंको टुकड़ोंमें बाँटा जा सकता है। कुछ विषयोंको ताजके अधीन बरकरार रखकर उनमें से कुछ चीजें हमें सौंप दी जायें, इसमें मैं कोई लाभ नहीं देखता। फिर भी ऐसे रक्षात्मक पूर्वोपाय सोचे जा सकते हैं जिनसे भारतको और अंग्रेजोंकी जानको निरापद बनाया जा सकता हो। निश्चय ही मैं इस तरहके कुछ उपाय सोच निकालूँगा। मुझे समितिमें इन उपायोंमें परिवर्तन करनेकी सुविधा होनी चाहिए। अगर ऐसा हो तो मैं उनपर विचार करूँगा, लेकिन अगर आप ऐसा सोचते हैं कि यह नहीं हो सकता, तो फिर हमारा इससे कोई सम्बन्ध नहीं हो सकता। जहाँतक हुकूमतमें भारतीयोंके शामिल किये जानेकी बात है, इससे मुझे सन्तोष नहीं होगा। नीतिमें आमूल परिवर्त्तन होना चाहिए। सरकारको लोकमतका खयाल रखकर चलना होगा। उसमें कांग्रेसकी मनोवृत्तिवाले लोगोंको स्थान देना होगा। इस अध्यादेशका लक्ष्य कांग्रेस है। आतंकवादका मुकाबला जरूर करना चाहिए, लेकिन जो हुकूमत खतरे उठानेको तैयार न हो उसे हुकूमत करनेकी बात सोचनी ही नहीं चाहिए और दूसरोंके लिए स्थान खाली कर देना चाहिए। राष्ट्रपति कार्नोट[1] अपनी सुरक्षाके बारेमें आश्वस्त नहीं थे। क्लीवलैण्ड[2] की हत्या कर दी गई, लेकिन इससे अमेरिकाने अपना आपा नहीं खो दिया। आप पूरे राष्ट्रको पुंसत्वहीन बना देनेकी बात कैसे सोच सकते हैं? हत्यारोंके सिर बखूबी काट लीजिए, लेकिन उनके माता-पिताओंके सिर तो न काटिए, गाँवोंको तबाह न कीजिए। उनके प्रति गाँवोंकी मूक सहानुभूति तो होगी ही। उसे आप नहीं रोक सकते। अगर आप उनका दमन करेंगे तो इसका मतलब उन्हें और भी भड़काना होगा। आतंकवादियोंको विवश कर देनेके लिए हर सम्भव कदम हम उठायेंगे। लेकिन ब्रिटेनकी मनोवृत्ति इससे ज्यादा कुछ करनेकी नहीं है। दक्षिण आफ्रिकामें प्रधान मन्त्रीके इस करतबको "मजाक करना"

१. मेरी फ्रैंकाइस सैडी (१८३७-१८९४), फ्रांसीसी गणतन्त्रके चौथे राष्ट्रपति।

२. शायद भूलसे राष्ट्रपति विलियम मैक-किन्लेके स्थानपर यह नाम दे दिया गया है। १९०१ में एक आतंकवादीने राष्ट्रपति मैक-किन्लेकी हत्या कर दी थी।

कहा जायेगा। क्या गोलमोल घोषणा उन्होंने की? मैं इसका अच्छेसे-अच्छा उपयोग करना चाहता हूँ, इसका जो अच्छेसे-अच्छा अर्थ लगाया जा सकता है, वह अर्थ लगाना चाहता हूँ और इसी घोषणासे प्रधान मन्त्रीको बाँध देनेकी कोशिश करना चाहता हूँ। लेकिन सरकार यह समझ ले कि भारत बंगालको धूल चाटते नहीं देख सकेगा। अगर सारी आजमाइशके बाद यही पता चला कि इस घोषणाका अर्थ केवल वही है जो मैं अभी लगा रहा हूँ तो हमारे सामने केवल एक ही रास्ता रह जायेगा।

किंग्सले मार्टिन : होरका मैकडॉनाल्डसे झगड़ा हुआ और उसमें मैकडॉनाल्ड जीत गये। इस बातका खयाल करके भी आपको संयमसे काम लेना चाहिए।

गांधी : भारतकी परिस्थितियाँ जैसी यहाँसे जान पड़ती हैं वैसी ही बनी रहती हैं तब तो संयमकी बात करना बेकार है। दक्षिण आफ्रिकामें हम सोलहसे सोलह हजार हो गये थे।

किंग्सले मार्टिन : कुछ नये नियम बनाना तो आप जरूरी मानते हैं?

गांधीजी : अगर साधारण कानूनसे परिस्थितिका मुकाबला नहीं किया जा सकता हो तो मैं विशेष अधिकार अख्तियार करनेके पक्षमें होऊँगा। मैं चार्ल्स टेगार्टको भी जानता हूँ। उन्होंने तो औचित्यके खयालको बिलकुल ताकपर ही रख दिया था।

नेविन्सन : आप क्या-क्या परिवर्त्तन चाहेंगे?

गांधीजी : मैं तो केन्द्रमें पूर्ण उत्तरदायी सरकार चाहूँगा। केन्द्रीय विषयोंकी हदतक प्रान्त केन्द्रके प्रति उत्तरदायी होंगे, लेकिन शेष बातोंमें पूर्ण स्वायत्तताका उपभोग करेंगे। मैं द्विसदनीय विधायिका नहीं चाहूँगा। हम कॉमन्स सभाकी नकल नहीं करना चाहते।

लास्की : आपका मतलब लॉर्ड सभासे है।

गांधीजी : नहीं, प्रथम सदनको लेकर भी मैं चिन्तित हूँ। अगर आपके यहाँ आयरलैंड, स्कॉटलैंड और इंग्लैंडके लिए अलग-अलग विधानमण्डल होते तो आपकी कॉमन्स सभा अवश्य ही छोटी होती। मैं तो वयस्क मताधिकारके बिना सन्तुष्ट नहीं होऊँगा। अगर वयस्क मताधिकारकी व्यवस्था हो जाती है तो अस्पृश्योंको सहज ही बहुत बड़ा अधिकार प्राप्त हो जायेगा। मेरा मापदण्ड यह होगा कि प्रतिनिधि इस बातको जानें कि वे क्या कह रहे हैं और वे किसी भी तरह भ्रष्ट और बेईमान न बन सकें। लेकिन क्या आपको यह भरोसा है कि लिबरल दल परिवर्त्तन करा सकेगा? मैं मानता हूँ कि उसके इरादे नेक हैं लेकिन अपने इरादोंको कार्यान्वित कर सकनेकी उसकी क्षमतामें मुझे विश्वास नहीं है। जहाँतक भारतका सम्बन्ध है, मतदाता इसे अपने मनकी नहीं करने देंगे। लेकिन इसमें कोई बात नहीं है। अगर गुंजाइश हो तो मैं प्रतीक्षा करनेके लिए तैयार हूँ। मैं आपमें से हर-एकका सक्रिय समर्थन और सहानुभूति चाहता हूँ। मैं आपको सन्तुष्ट करनेकी कोशिश करूँगा, सविनय प्रतिरोध शुरू करनेमें मैं जल्दबाजी नहीं करूँगा। क्योंकि सविनय प्रतिरोधमें सिद्धान्तकी दृष्टिसे जल्दबाजीके लिए स्थान ही नहीं है। किन्तु मैं संक्रान्तिकालमें

बंगालको चूर-चूर होकर बिखरते कैसे देख सकता हूँ? स्मट्सकी शब्दावलीका प्रयोग करूँ तो कहूँगा कि या तो हमें अपनी माँगें मनवानी हैं, अन्यथा लड़ना है।

नेविन्सन : बड़ेसे-बड़े संवैधानिक सुधारके जरिये भी गरीबीको दूर करना कैसे सम्भव है?

गांधीजी : हम इसे दूर करनेकी कोशिश कर रहे हैं। गरीबोंकी आयमें जिससे थोड़ा और जुड़ सके वैसा कोई अन्य साधन हमें बताइए। फिर मैं चरखेको जला दूँगा।

ब्रेल्सफोर्ड : हो सकता है, हम इतनी मूर्खतासे काम ले रहे हों कि यह समझ ही न पायें कि हम कब पराजित हो गये; और हो सकता है, आप इतनी अधिक चतुराई बरत रहे हों कि आप यही न जान पायें कि कब आपको विजय मिली। मैं मैकडॉनाल्डकी बातको वस्तुपरक दृष्टिकोणसे देखनेकी कोशिश कर रहा हूँ। मुसलमानोंकी चुप्पी, तफसीलके सम्बन्धमें मतैव्यका पूरा अभाव तथा और भी बहुत-सी चीजें थीं। इन परिस्थितियोंमें मैकडॉनल्डको कुछ न देनेके बहाने-पर-बहाने मिल सकते थे। आपने संवैधानिक सरकारसे जो-कुछ प्राप्त किया है, वह उससे बहुत अधिक है जो आपको अल्पसंख्यक श्रमिक दलसे मिलता। मैकडॉनल्ड संविधानके सम्बन्धमें अपनी स्थितिको कायम रखे हुए हैं और आतंकवादियोंके सम्बन्धमें भी वे संविधानके ही अनुसार कर रहे हैं। वे लुटेरोंको थोड़ा-कुछ देकर पूरे मालकी रक्षा करना चाह रहे हैं।

प्रान्तीय परिषदोंमें बहुमत प्राप्त कर लेनेके बाद आप गरीबीको दूर करनेकी अपनी नीतिको मजेमें कार्य-रूप दे सकते हैं।

गांधीजी : दुराशयताकी कोई बात नहीं है। ब्रिटेनके दिमागमें जो जड़ता आ गई है, उसे मैं अनुभव करता हूँ। आप कहते हैं : जो मिल रहा है, ले लो। नहीं, आप ऐसा नहीं कह सकते। केन्द्रमें ८० प्रतिशत विषय सुरक्षित विषयोंकी श्रेणीमें रहेंगे। वर्त्तमान योजनाके अधीन प्रान्त बड़ी ही दयनीय स्थितिमें रहेंगे, क्योंकि उनके सिर एक भारी प्रशासन-तन्त्रका बोझ रहेगा। आखिरकार केन्द्रीय राजस्व प्रान्तोंसे ही तो प्राप्त होते हैं — प्रान्तोंसे उसे ४७ करोड़ रुपये मिलेंगे। इतने-सारे बोझोंसे दबे प्रान्त कोई सुधार क्या कर पायेंगे? जबतक आप मुझे स्पष्टीकरणकी सुविधा नहीं देते, मैं इस चीजको स्वीकार नहीं कर सकता।

प्रधान मन्त्रीकी घोषणाके पीछे कोई बेईमानी नहीं है।

देशी राजा तो अब बहुत ज्यादा बँध गये हैं। भोपालके नवाब और हैदरीने शर्तोंकी जाँच करनेका वादा किया है। इस्माइल तथा अन्य लोगोंकी स्थिति भी बहुत ठोस है। सर मनुभाईके साहसपूर्ण वक्तव्यके बाद कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए।

इस्पात उद्योग ऐसा नहीं है, जिसे हाथके श्रमसे चलाया जा सके। मैं मशीनोंके बिलकुल खिलाफ हूँ, ऐसी अफवाह या तो बिना समझे-बूझे, लिखने-बोलनेवाले गैर-जिम्मेदार आलोचक फैलाते हैं या शत्रु लोग। शल्य-चिकित्साके औजार बनानेके लिए मैं जटिलसे-जटिल यन्त्रोंको अपनाना चाहूँगा। लेकिन जहाँतक खाने-कपड़ेका सम्बन्ध है, मैं औद्योगीकरणके बिलकुल खिलाफ हूँ।

रेंच : लोकमतमें भारी परिवर्त्तन हुआ है और ऐसे हलकोंमें हुआ है जिनसे ऐसी अपेक्षा नहीं की जाती थी।

गांधीजी : मैं ब्रिटिश राष्ट्रका प्रेमी हूँ। आपका कोई भी गुण मेरी आँखोंसे छिपा हुआ नहीं है। [लेकिन आप जो चाह रहे हैं उसमें] आप तर्ककी अवज्ञा कर रहे हैं। निश्चय ही मुझे धीरजसे काम लेना चाहिए, लेकिन पत्थरोंकी तरह जड़तापूर्ण धीरजसे नहीं। मुझे इस बातका विश्वास कराइये कि ब्रिटिश अधिकारियोंके मनमें सदाशयता है। क्या आप मुझसे इस आशामें कि सब-कुछ ठीक ही होने जा रहा है, हाथ-पर-हाथ धरे बैठे रहनेकी अपेक्षा करते हैं?

एक ऐसा सम्मेलन होना चाहिए जिसमें सभी मतोंके प्रतिनिधि शामिल हों। केवल उसी पक्षको बुलाना चाहिए जो कुछ निश्चय कर सके। किया कुछ नहीं जाता है, लेकिन लगता है मानों सब-कुछ किया गया। क्या वे नहीं जानते थे कि मैं और सप्रू कभी भी सहमत नहीं होंगे या यह कि यहाँ आनेवाले मुसलमान सहमत नहीं होंगे अथवा यह कि डॉ० मुंजेके लिए यहाँ कोई स्थान नहीं है? आखिरकार हमें अपनी स्वतन्त्रता तो हमारी कमजोरीके कारण नहीं, बल्कि शक्तिके फलस्वरूप ही प्राप्त होगी।

वर्त्तमान घोषणाके अनुसार तो न केन्द्रमें उत्तरदायी शासनकी स्थापना की तजवीज है और न प्रान्तोंमें। ऋणोंके सम्बन्धमें मूलभूत अधिकारोंपर कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाया गया है। एक ऐसी धारा हो सकती है जिसमें सभी अधिकारोंका समावेश हो। मैं तो अपना कोई भी पत्ता यों ही हाथसे फेंक देनेवाला नहीं हूँ।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य : नारायण देसाई

२४४. भेंट : एडमंड डिमिटरको[1]

लन्दन

[५ दिसम्बर, १९३१ के पूर्व][2]

प्र० : मैं तो समझा था कि आप यन्त्र-मात्रके कट्टर दुश्मन हैं। फिर आप घड़ीका उपयोग कैसे करते हैं?[3]

उ० : मुझे यह तो जानना ही पड़ता है कि कब क्या समय हुआ है, और इसलिए मुझे घड़ीका उपयोग भी करना ही पड़ता है। इसके अलावा, मैं इसका

१. एडमंड डिमिटर द्वारा तैयार किये भेंट-वार्ताके विवरणसे उद्धृत।

२. साधन-सूत्रमें भेंट-वार्ताकी तिथि नहीं दी गई है, लेकिन गांधीजी ५ दिसम्बरको इंग्लैंडसे रवाना हुए थे।

३. भेंट-वार्ता शुरू होते ही गांधीजी ने अपनी घड़ी देखी थी।

उपयोग करके अपने सिद्धान्तोंके विरुद्ध आचरण नहीं कर रहा हूँ। मैं यन्त्रका नहीं, बल्कि संगठित यन्त्रवादका शत्रु हूँ। इस प्रणालीको, जो आज आपकी सभ्यताका आधार बन गई है, मैं मानव-समाजपर आ सकनेवाला सबसे बड़ा खतरा मानता हूँ। अगर मैं घड़ीका उपयोग करता हूँ तो इसका मतलब यह नहीं कि मैं उसका गुलाम बन गया हूँ। लेकिन जब यन्त्र एक संगठित संस्थाका रूप लेता है तब तो मनुष्य उसका गुलाम ही बन जाता है और स्रष्टासे वरदानके रूपमें प्राप्त अपने समस्त मूल्योंको खो बैठता है।

प्र० : बीचमें बोलनेके लिए क्षमा कीजिएगा। आप ईश्वरकी बात कहते हैं, लेकिन आपका ईश्वर मेरा ईश्वर तो नहीं है।

उ० : लेकिन, आपका ईश्वर तो मेरा भी है, क्योंकि मैं आपके ईश्वरमें भी विश्वास रखता हूँ — बावजूद इसके कि आप मेरे ईश्वरमें विश्वास नहीं करते।

प्र० : हाँ, ऐसा इसलिए है कि आपके कई ईश्वर हैं।

उ० : हाँ, लेकिन इसका कोई महत्त्व नहीं है। ज्यों ही हम मनुष्यमें विश्वास करने लगते हैं, इन बातोंका रहस्य हमारे सामने खुल जाता है। हममें जो फर्क है वह यही कि मनुष्य और उसकी नियतिके सम्बन्धमें हमारे अलग-अलग मत हैं। आप यूरोपीय लोग कहते हैं कि मनुष्य जन्मसे न तो अच्छा होता है और न बुरा, और वह किस राहपर चलेगा, यह बहुत-कुछ इस बातपर निर्भर करता है कि वह किस स्थानपर रहता है, किन संस्थाओंके सम्पर्क और प्रभावमें आता है, आदि इसके विपरीत मैं यह मानता हूँ कि मनुष्य सदा अच्छा ही होता है और अगर वह सही रास्तेसे भटकता है तो केवल बुरी संस्थाओंके कारण ही भटकता है।

प्र० : इसका मतलब कि आप हमारी संस्थाओंके खिलाफ युद्धकी घोषणा कर रहे हैं?

उ० : नहीं, इस तरहकी तो कोई घोषणा मैं कभी करता ही नहीं। मैं केवल यह कहता हूँ कि हमें मानवीय संस्थाओंको अधिक न्याय-सम्मत बनानेके लिए उन्हें सुधारना चाहिए। सुधार शान्तिपूर्ण उपायोंसे सम्पन्न करने चाहिए और इस मामलेमें मैं उसी प्रक्रियाको अपनानेकी सलाह देता हूँ, जिसका अनुसरण मैंने अपने राजनीतिक संघर्षमें किया है। मैं लड़ाई नहीं करता, क्योंकि मैं मानता हूँ कि मनुष्य स्वभावतः अच्छा है और अगर कोई उसे मैत्री-भावसे कायल करनेकी कोशिश करे तो एक-न-एक दिन वह सत्यको समझ ही जायेगा।

प्र० : क्या आप अंग्रेजोंको अच्छा मानते हैं?

उ० : अवश्य। अगर अंग्रेजोंसे हमारा मतभेद है तो उसका कारण केवल यह है कि उनकी संस्थाएँ बुरी हैं। किसी-न-किसी दिन वे सत्यको समझेंगे और तब अपना आजवाला रुख भी छोड़ देंगे।

प्र० : महात्माजी, क्या आनन्द आपके जीवनका लक्ष्य है?

उ० : नहीं, आनन्द मेरे जीवनका उद्देश्य नहीं है, यह तो उस वस्तुतक पहुँचनेका एक साधन है जो मेरे पथको प्रकाश-स्तम्भकी भाँति आलोकित करता रहा

है। मेरा उद्देश्य बड़ा सीधा-सादा है: मैं भारतको स्वतन्त्र, सशक्त, शान्तिमय और सुखी देखना चाहता हूँ।

[एक मुलाकाती[1]:] **कल मैं भारत रवाना हो रही हूँ। मैं आपसे विदा लेने आई हूँ।**

[गांधीजी:] लन्दनमें आपने क्या किया?

[मुलाकाती:] **बस, स्कूल ऑफ मेडिसिनमें अपना अध्ययन समाप्त किया है।**

[गांधीजी:] भारतमें आप क्या करना चाहती हैं?

[मुलाकाती:] **आपके विचारोंका प्रचार करना चाहती हूँ।**

[गांधीजी:] क्या आपकी सगाई हो चुकी है?

[मुलाकाती:] **नहीं।**

[गांधीजी:] तो सुनिए। आपको जितनी जल्दी हो सके, शादी करके जल्दीसे-ल्दी बच्चे पैदा करने चाहिए।

[डिमिटर:] **आपके विचारसे, किस विश्वविख्यात व्यक्तिने बीसवीं सदीपर सबसे अधिक और अच्छा प्रभाव डाला है?**

उ०: टॉल्स्टॉय। केवल टॉल्स्टॉयने ही।

राजनीतिके सम्बन्धमें बोलते हुए गांधीजी ने निम्नलिखित बातें कहीं:

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, जिसका मैं प्रतिनिधि हूँ, विभिन्न वर्गों या विश्वासोंके लोगों अथवा स्त्री-पुरुषमें कोई भेद नहीं करती। इसने बराबर अपने-आपको अवहेलित-उपेक्षित जनोंके पक्षधरके रूपमें पेश किया है। लेकिन कांग्रेस सबसे पहले भारतमें रहनेवाले उन करोड़ों दीन-दुःखी जनोंका प्रतिनिधित्व करती है जिनकी संख्या भारतकी कुल आबादीका ८५ प्रतिशत है।

उस संस्थाके नामपर मैं भारतके लिए स्वतन्त्रताकी माँग करता हूँ और इसमें इंग्लैंडके साथ स्वेच्छापर आधारित तथा पूर्ण समानताके दर्जेपर सम्बन्ध कायम रखनेकी भी गुंजाइश रखता हूँ। भारतके हितकी दृष्टिसे किसी प्रकारकी संघ-योजना अथवा सर्वस्वीकृत सुरक्षात्मक पूर्वोपायोंसे हमें इनकार नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १७-१२-१९३१

१. यह एक भारतीय लड़की थी, जो उसी समय गांधीजी से मिलने आई थी।

२४५. एक घोषणापत्र[1]

[५ दिसम्बर, १९३१ या उसके पूर्व]

कांग्रेस सुरक्षा-सेनाओं, विदेशी मामलों तथा वित्तपर नियन्त्रणके अधिकार सहित पूर्ण स्वतन्त्रताकी माँग करती है। इसमें वह समानताके स्तरपर ब्रिटेनके साथ साझेदारीकी गुंजाइश रखती है। साझेदारी दोमें से किसी भी पक्षकी इच्छा होनेपर समाप्त की जा सकती है। हाँ, उस साझेदारीमें एक-दूसरेके प्रति अपने दायित्वोंका निर्वाह अथवा उनका पारस्परिक समंजन (ऐडजस्टमेंट) करना आवश्यक होगा।

सुरक्षात्मक पूर्वोपाय

कांग्रेस भारतके हितमें आवश्यक सुरक्षात्मक पूर्वोपायोंको स्वीकार करेगी और वह सारे उचित दायित्व अपने सिर लेनेको तैयार है, बशर्ते कि किसी निष्पक्ष न्यायाधिकरण द्वारा जाँच करवाकर उन दायित्वोंके औचित्य-अनौचित्यका फैसला करा लिया जाये। कांग्रेस अल्पसंख्यकोंकी समस्याके राष्ट्रीय समाधानके लिए प्रतिश्रुत है, लेकिन अगर जरूरत हुई तो वह ऐतिहासिक कारणोंसे एक अनिवार्य बुराईके रूपमें मुसलमानों तथा सिखोंके लिए विधायिकामें स्थानोंके आरक्षणके सिद्धान्तको स्वीकार कर लेगी।

अस्पृश्य

अस्पृश्योंका हित-साधन कांग्रेसका विशिष्ट दायित्व होगा और उनके मामलेपर अलगसे विचार करना और इस तरह इस समय, जबकि इस बुराईको समूल नष्ट कर देनेके लिए हर सम्भव प्रयत्न किया जा रहा है, अस्पृश्यताको कानूनी स्थिति प्रदान करना अन्यायपूर्ण होगा।

कोई भी जातीय भेद-भाव नहीं

जाति, धर्म अथवा रंगके आधारपर किसीपर कोई राजनीतिक निर्योग्यता नहीं लगाई जायेगी और चूँकि कांग्रेस वयस्क मताधिकारकी प्रबल समर्थक है, इसलिए किसी भी वयस्क अल्पसंख्यक समुदायके प्रतिनिधियोंके लिए अपनी राष्ट्र-सेवाके बलपर, विधायिकाके सदस्योंके रूपमें चुना जाना मुश्किल नहीं होना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, ९-१२-१९३१

१. साधन-सूत्रके अनुसार इंग्लैंडसे चलते समय गांधीजी द्वारा तैयार किये इस घोषणापत्रको कॉमनवेल्थ ऑफ इंडिया लीगने जारी किया था। चूँकि इसका कोई और पाठ अन्यत्र कहीं उपलब्ध नहीं है, इसलिए यह कहना मुश्किल है कि यह घोषणापत्र पूरा है अथवा उसका केवल हिस्सा।

२४६. भेंट : समाचार-पत्रोंको[1]

लन्दन
५ दिसम्बर, १९३१

श्री गांधीने कहा कि कॉमंस सभामें हुई बहस केवल सरकारकी ही नहीं, बल्कि केन्द्र तथा प्रान्तोंमें उत्तरदायी सरकारें स्थापित करनेके सिद्धान्तकी स्पष्ट विजय है।

लेकिन मुझे ऐसी आशंका है कि सम्बन्धित प्रस्तावके पास होनेसे भारतीय समस्याके समाधानकी दिशामें कोई बहुत बड़ी प्रगति नहीं हुई है। जो बातें घोषणामें मोटे तौरपर बताई गई थीं और जिनपर बहसमें जोर दिया गया वे वास्तविक उत्तरदायी शासनसे बहुत कम पड़ती हैं। कॉमन्स सभामें पास हुए प्रस्तावने हमें फिर अवास्तविकताकी स्थितिमें डाल दिया है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ६-१२-१९३१

२४७. भेंट : रायटरके प्रतिनिधिको[2]

फोकस्टोन
५ दिसम्बर, १९३१

अंग्रेज मेरी इस बातका विश्वास करें कि अगर मुझे उनसे लड़ना ही पड़ा तो मैं जिस प्रकार अपने कुछ अधिकसे-अधिक प्रिय स्वजनोंके साथ लड़ा हूँ, उसी प्रकार उनके साथ भी घृणासे नहीं, बल्कि प्रेमसे प्रेरित होकर लड़ूँगा। इसलिए राष्ट्रके आत्मसम्मानका ध्यान रखते हुए जहाँतक उचित है वहाँतक उनसे सहयोग करना जारी रखनेका हर सम्भव प्रयत्न करनेको मैं कृतसंकल्प हूँ।

लेकिन मुझे यह स्वीकार करना चाहिए कि मैं बंगाल अध्यादेशपर जितना ही अधिक विचार करता हूँ, मेरे मनमें उतनी ही अधिक आशंकाएँ — अत्यन्त गम्भीर ढंगकी आशंकाएँ — घर करती जाती हैं। वह खण्ड तो बुरा है ही जिसमें हत्याका प्रयत्न करनेपर मृत्यु-दण्डतक की सजा देनेका अधिकार दिया गया है, लेकिन कुछ दूसरे खण्ड इससे भी कहीं बुरे हैं।

कुछ-एक निर्दोष व्यक्तियोंके प्राण ले लिये जायें, यह बात तो हम बरदाश्त कर सकते हैं, किन्तु पूरे राष्ट्रको पुंसत्वहीन बनानेके प्रयत्नको हम शान्त मनसे देखते नहीं रह सकते। इसलिए मैं आशा कर रहा हूँ कि ब्रिटेनके लोग इस अध्यादेशका

१. गांधीजी ने यह भेंट लन्दनसे रवाना होने के ठीक पहले दी थी।
२. गांधीजी ने यह भेंट **मेड ऑफ केंट** नामक जहाजपर सवार होनेके ठीक पहले दी थी।

अध्ययन करेंगे और इसके वापस लिये जानेपर जोर डालेंगे, क्योंकि मेरे विचारसे यह राजनीतिक सत्ताका अमानवीय प्रयोग है।

उन्होंने आगे कहा कि मैंने भारतीयोंसे बराबर यह कहा है कि अपनी स्वतन्त्रता के लिए लड़ते हुए मनमें अंग्रेजोंके प्रति घृणा न रखो। अपनी इस इंग्लैंड-यात्राके बाद तो मैं महसूस करता हूँ कि अपने देशभाइयोंसे अंग्रेजोंके प्रति कटुताका कोई भाव न रखनेका आग्रह करना मेरा और अधिक कर्त्तव्य हो गया है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, ७-१२-१९३१

२४८. भेंट : 'ब्रिस्टल ईवनिंग न्यूज' के प्रतिनिधिको

पेरिस
५ दिसम्बर, १९३१

इंग्लैंडको मेरा आखिरी सन्देश यही होना चाहिए: अलबिदा और खबरदार! मैं यहाँ शान्तिकी खोजमें आया था। अब युद्धकी आशंका लेकर लौट रहा हूँ। मैं युद्ध नहीं चाहता, लेकिन लगता है कि परिस्थितियाँ मुझे उसी ओर ढकेल रही हैं। आश्चर्य नहीं कि भारत लौटनेके महीने-भरके अन्दर मैं जेलमें होऊँ।[1] . . .

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २९-१२-१९३१

२४९. प्रश्नोत्तर[2]

५ दिसम्बर, १९३१

प्र० : [अगर ईसा मसीह आपको आमन्त्रित करते हैं तो आप ईश्वरके घरमें प्रवेश करनेसे इनकार क्यों करते हैं? भारत ईसाई धर्मको स्वीकार क्यों नहीं कर लेता?

उ० : अगर ईसा मसीह मुझे ईश्वरके घरमें प्रवेश करनेका आमन्त्रण दे रहे हों तो कहूँगा कि उस घरमें प्रवेश करने से मैंने कभी भी इनकार नहीं किया है। सच तो यह है कि मैं हर क्षण उसमें प्रवेश करनेको प्रयत्नशील हूँ। अगर ईसा मसीहसे किसी व्यक्तिका नहीं बल्कि अहिंसाका बोध होता है तो भारत अहिंसाकी सुरक्षात्मक शक्तिको स्वीकार कर चुका है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ३१-१२-१९३१

१. साधन-सूत्रमें इससे आगे जो अनुच्छेद दिये गये हैं वे लगभग ज्योंके-त्यों ३० नवम्बरको गोलमेज परिषद्की आम बैठकमें दिये गांधीजी के भाषणसे ही लिये गये हैं।

२. महादेव देसाईके लेख "जीसस आई लव" (ईसा मसीह जिसे मैं प्यार करता हूँ) से उद्धृत। यह सवाल पेरिसमें पूछा गया था।

२५०. भाषण : स्वागत-समारोहमें[1]

पेरिस
५ दिसम्बर, १९३१

गोलमेज परिषद्में शामिल होनेका मुझे कोई दुःख नहीं है। अगर मैं भारतकी माँगमें तनिक भी कमी करनेको तैयार हुआ होता तो मुझे वहाँ जानेपर दुःख-लज्जा का अनुभव होना चाहिए था। मैं ईश्वरका बड़ा आभारी हूँ कि उसने मुझे सही मौकेपर सही बात कहनेकी शक्ति दी और मैंने वहाँ जो-कुछ भी कहा या किया, उसके लिए मैं तनिक भी शर्मिन्दा नहीं हूँ। अब मैं पहलेसे कुछ अधिक शक्ति और समझ लेकर स्वदेश लौट रहा हूँ। कारण, अब मैं जानता हूँ कि मुझे कैसे लोगोंसे निबटना है। मैं जानता हूँ कि अपनी बातको सही सिद्ध कर दिखानेके लिए हमें और भी कष्ट सहने होंगे।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ३१-१२-१९३१

२५१. भाषण : सार्वजनिक सभामें[2]

पेरिस
५ दिसम्बर, १९३१

हमने एक लड़ाई शुरू की थी और बीचमें ही वार्त्ताके लिए एक विराम-सन्धिपर हस्ताक्षर किये थे, लेकिन वार्त्ता सफल नहीं हुई। लेकिन अभी कुछ बिगड़ा नहीं है, क्योंकि मैंने उन लोगोंके चरित्र तथा युद्ध-कलाको समझ लिया है जिनके खिलाफ हमें लड़ना है, और इसलिए भविष्यमें हम गलतियाँ नहीं करेंगे। लड़ाइयोंमें कभी-कभी दुर्भाग्यकी चपेटमें आ जाना साधारण बात है, इसलिए हमें अपनी लड़ाई और अधिक उत्साह तथा संकल्पके साथ जारी रखनी चाहिए और स्वदेशकी स्वाधीनताके लिए कष्ट सहने चाहिए। आप लोगोंसे — पेरिस तथा यूरोपके अन्य स्थानोंमें रहने-वाले आप लोगोंसे — मेरा अनुरोध यह है कि आप दुनियाके सामने सदा, भारत

१. महादेव देसाईके "लेटर फ्रॉम यूरोप" (यूरोपका पत्र) से उद्धृत। स्वागत-समारोहका आयोजन पेरिसमें रहनेवाले भारतीयोंने किया था। देसाईके अनुसार, यह भाषण हिन्दीमें दिया गया था।

२. स्थानीय बुद्धिजीवियों द्वारा दोपहर बाद आयोजित इस सभामें लगभग २,००० लोग एकत्रित थे। प्रवेश टिकटपर दिया जाता था। भाषणका पूरा पाठ उपलब्ध नहीं है। नीचे जो-कुछ दिया जा रहा है वह श्रोतृ-समूहमें उपस्थित भारतीयोंको सम्बोधित करके कहा गया था। सभाके अन्तमें गांधीजी से पूछे गये अधिकांश प्रश्न फ्रांसीसियोंने ही पूछे थे।

तथा भारतके उद्देश्यके लिए जो-कुछ उत्तम है, उसे रखनेकी कोशिश करें। आप बराबर दुनियाका ध्यान भारतके संघर्षके असली स्वरूपकी ओर आकर्षित करनेका प्रयास करें। अभी मैं आपको नहीं बता सकता कि वहाँ हमारे देशके लोगोंकी मनोदशा क्या होगी। लेकिन इतना बता सकता हूँ कि जब मैं वहाँ पहुँचूँगा, वे फिरसे लड़ाई शुरू कर देनेको तैयार बैठे होंगे। हम अपने देशके लिए जो चाहते हैं वह यह कि सेना तथा वित्तपर हमारा अपना नियन्त्रण हो और अगर हम कष्ट सहन करने तथा अहिंसापर डटे रहनेके लिए तैयार हों तो निश्चय ही हम इस चीजको प्राप्त कर सकते हैं। मैं अपने देशभाइयोंसे एक बार फिर कहूँगा कि आप कष्ट-सहन करके इसे प्राप्त कीजिए। अवज्ञाका मतलब हिंसा नहीं, बल्कि और कष्ट सहना है।

प्र० : आपके विचारसे भारत निश्चित रूपसे कब स्वतन्त्र हो जायेगा ?

उ० : मैं कोई सर्वज्ञ तो हूँ नहीं कि इस प्रश्नका उत्तर दे सकूँ या कोई भविष्यवाणी कर सकूँ। भविष्यको तो केवल ईश्वर ही जानता है।

प्र० : अगर भारतको एकाएक स्वतन्त्र कर दिया जाये तो वहाँके अधिकांश लोगोंके अज्ञानको देखते हुए क्या ऐसा नहीं लगता कि वे मुट्ठी-भर बुद्धिजीवियोंकी दयापर निर्भर हो जायेंगे ?

उ० : शायद, लेकिन केवल ऊँची-ऊँची बातें करके लोगोंको बहकानेवाले पश्चिमी दुनियाके-जैसे नेताओंकी सत्ताके अधीन रहनेसे तो यह बात हर हालतमें बेहतर ही होगी कि कुछ समयतक वे बुद्धिजीवियोंके एक दलके नेतृत्वमें रहें।

प्र० : क्या आप लंकाशायरकी कठिनाईको दूर करने के लिए कुछ नहीं करेंगे ?

उ० : बेशक, मैं अपनी ओरसे पूरी कोशिश करूँगा।

प्र० : भारतके स्वतन्त्र हो जानेपर क्या आप आर्थिक प्रतिबन्ध भी लागू करेंगे ? क्या आप फ्रांसके साथ भारतका व्यापार होने देंगे ?

उ० : नहीं, मैं व्यापारिक आदान-प्रदानका विरोध नहीं करूँगा। लेकिन मैं आपको यह बता दूँ कि स्वतन्त्र होनेपर भारत किसी अन्य देशके बजाय पहले इंग्लैंडको व्यापारिक सुविधाएँ देगा। फिर भी, फ्रांसके साथ ऐसे सम्बन्ध रखनेमें उसकी काफी रुचि होगी।

प्र० : मनुष्यका आनन्द उसके ज्ञानमें बसता है या अज्ञानमें ?

उ० : दोनोंमें से किसीमें नहीं। उसका निवास खुद मनुष्यके अन्दर और मनुष्य द्वारा पूर्णतः तथा सत्यको प्राप्त करनेके प्रयत्नमें है।

प्र० : क्या हर आदमीमें पूर्णताको प्राप्त करनेकी सामर्थ्य है ?

उ० : हाँ, पूर्णता तो उनके अन्दर ही है।

प्र० : क्या आप श्री मैकडॉनाल्डकी घोषणासे सन्तुष्ट हैं ?

उ० : मुझे कहना चाहिए कि यद्यपि मैं सन्तुष्ट नहीं हूँ, फिर भी इस तथ्यके बावजूद कि मैं लोगोंको खाली हाथ लौटते दीख सकता हूँ, मेरे मनमें आशा बहुत अधिक है।

प्र० : कुछ वर्ष पहले मैंने आपको यूरोपीय पोशाक पहने देखा था। अब आपने उसका त्याग क्यों कर दिया है?

उ० : मैं गरीब आदमी हूँ, और हजारों भारतीयोंकी तरह मैं यूरोपीय पोशाक नहीं पहनता। इसका पहला कारण तो यह है कि वह महँगी है और दूसरा यह कि मेरे देशकी जलवायुके लिए वह सर्वथा अनुपयुक्त है। अन्तिम बात यह कि भारतीय कपड़े पहननेसे हमारे भारतीय श्रमिकोंको काम मिलता है।

प्र० : मान लीजिए, यूरोपमें युद्धकी-सी स्थिति उत्पन्न हो जाती है और उसके लिए तैयारियाँ होने लगती हैं। उस हालतमें क्या सैनिकों और जनताके असहयोगसे युद्धको टाला जा सकता है?

उ० : हर युद्धमें असहयोग सम्भव है और इसीके द्वारा दुनियामें अखण्ड शान्ति की स्थापना हो सकती है। तब स्त्रियोंको, जिन्हें आम तौरपर पुरुषोंसे कमजोर समझा जाता है, असहयोग तथा अहिंसाको समर्थन-सहायता देकर अपनी शक्तिका परिचय देनेका अवसर मिलेगा।

प्र० : कोई किसीको मार रहा हो तो उससे दो-दो हाथ किये बिना मर जाना क्या उचित होगा?

उ० : दोनों ही हालतोंमें सवाल तो अपने प्राणोंकी बलि देनेका ही होगा। और जिसने अपने प्राणोंकी बलि देनेका निश्चय कर लिया हो, उसके लिए अपने-आपको 'बाहरी' हथियारोंसे लैस करने और खुद मरनेके अलावा दूसरेको भी मारनेसे तो यह बेहतर ही होगा कि वह अहिंसा-धर्मका पालन करते हुए अपना हाथ न उठाये। इस तरहकी आकस्मिक परिस्थिति आनेपर हमें अपने-आपको आन्तरिक शस्त्रसे सज्जित करना चाहिए, क्योंकि आन्तरिक और आध्यात्मिक शक्तियाँ अधिक प्रबल हैं और ये अधिक सुनिश्चित तथा स्थायी जीवन देनेवाली हैं। आप अपने-आपको शस्त्र-सज्जित करके दुनियामें शान्तिकी स्थापना नहीं कर सकते। बाहरी हथियारोंसे — तोपों, बन्दूकों और गैससे — बुरे और अस्थायी परिणाम ही निकल सकते हैं। हम अपने हथियार तभी रखते हैं जब कुछ कालका विराम आवश्यक हो जाता है और जब अपने हथियार उतारकर रखते हैं तब भी हमारे मनमें आगे चलकर फिरसे उन्हें उठा लेनेका ही विचार रहता है। जब हजारों लोग केवल अहिंसाको ही अपना हथियार बना लेंगे तब वे अपने-आपको उन बौद्धिक तथा आध्यात्मिक शक्तियोंसे सज्जित कर लेंगे जो दिन-रात सक्रिय रहती हैं। इस प्रकार वे इस लक्ष्यको प्राप्त करेंगे और अपने प्रति अंग्रेजोंकी सहानुभूति जगानेमें सफल होंगे।

प्र० : यदि भारत स्वतन्त्र हो जायेगा तो सोवियत रूसके प्रति उसका क्या रवैया होगा?

उ० : मैं अपने देशकी समस्याओंमें ही इतना व्यस्त हूँ कि मुझे स्वीकार करना चाहिए, मैं एक प्रकारसे रूसी लोगोंकी समस्याओंसे अनभिज्ञ हूँ। फिर भी, मैं इतना कह सकता हूँ कि भारत स्वतन्त्र होनेपर, रूसमें जो अच्छाई है, उसका अनुकरण

बखूबी कर सकता है। अगर रूसमें कुछ और आध्यात्मिकता आ जाये तो वह हर तरहसे निर्दोष और अच्छा बन जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २६-१२-१९३१

२५२. प्रश्नोत्तर[1]

[५ दिसम्बर, १९३१ या उसके पश्चात्][2]

हम भारतमें जिस तरीकेसे काम ले रहे हैं, उसमें झूठ-फरेब, धोखेबाजी तथा हिंसा और असत्यसे जुड़ी अन्य किसी भी कुप्रवृत्तिके लिए कोई गुँजाइश नहीं है। हर काम खुले आम और साफ-साफ ढंगसे किया जाता है, क्योंकि सत्यको गोपनीयता सह्य नहीं है। आपका व्यवहार जितना अधिक खुला होगा, आपके उतने ही अधिक सत्यनिष्ठ बननेकी सम्भावना रहेगी। जिसने सत्य और अहिंसाको अपने जीवनका आधार बना लिया है, उसके शब्दकोषमें पराजय या निराशा नामका कोई शब्द नहीं है। लेकिन फिर भी अहिंसाका तरीका किसी भी तरहसे निश्चेष्टता या निष्क्रियताका तरीका नहीं है। यह तत्त्वतः एक सक्रिय आन्दोलन है, जिस आन्दोलनमें हमें हिंसक शस्त्रास्त्रोंसे काम लेना पड़ता है, उससे भी बहुत अधिक सक्रिय। सत्य और अहिंसा शायद दुनियाकी सबसे अधिक सक्रिय शक्तियाँ हैं। जिसके हाथमें हिंसक शस्त्रास्त्र होते हैं और जो उन लोगोंको जिन्हें वह अपना शत्रु मानता है, नष्ट करनेको कटिबद्ध रहता है, उसे चौबीस घंटेमें कमसे-कम थोड़े-से विश्रामकी आवश्यकता तो होती ही है और इसलिए उतने समयतक उसे अपने शस्त्रास्त्र भी छोड़ देने पड़ते हैं। इसलिए हर दिन कुछ समयके लिए वह बिलकुल निष्क्रिय रहता है। लेकिन सत्य तथा अहिंसाके मार्गपर चलनेवाले को ऐसा नहीं करना पड़ता, जिसका सीधा-सादा कारण यह है कि ये कोई बाहरी हथियार नहीं है। ये मनुष्यके हृदयमें सतत विद्यमान रहते हैं और चाहे आप सोते हों या जागते, आरामसे घूम रहे हों या शारीरिक श्रमवाला कोई खेल, खेल रहे हों, ये सक्रियरूपसे अपना काम करते रहते हैं, प्रभाव डालते रहते हैं। सत्य और अहिंसाका सर्वांग-कवचधारी योद्धा सदैव सक्रिय रहता है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ३१-१२-१९३१

१. महादेव देसाईके "लेटर फ्रॉम यूरोप" (यूरोपका पत्र) से उद्धृत। पेरिस तथा लासेनमें हुई सभाओं में पूछे गये प्रश्नों के गांधीजी ने जो उत्तर दिये थे उन्हें महादेव देसाईने सार-रूपमें प्रस्तुत किया है। इनमें से अधिकांश प्रश्नोत्तर अगले शीर्षकमें आ जाते हैं। लेकिन यह अन्यत्र कहीं भी उपलब्ध नहीं है।

२. पेरिसमें सभाका आयोजन ५ दिसम्बरको किया गया था और लासेनमें ८ दिसम्बरको।

२५३. बातचीत : रोमाँ रोलाँसे[1]

विलेन्यूव
६ दिसम्बर, १९३१

गांधीजी : मुझे स्कार्पर्लकी[2] बातको शब्दशः लेना होगा। और मैं उनकी उपस्थितिमें लोगोंसे ठीक वही सब कहना चाहूँगा जो मुझे बिना किसी छिपावके साफ-साफ कह देना चाहिए।

रोमाँ रोलाँ : तब तो आपको अपने साथ अमेरिकी रिपोर्टर ले जाने चाहिए।

गांधीजी : पहलेसे ही इस तरहका प्रबन्ध कर रखना मेरे स्वभावके प्रतिकूल होगा।

रोमाँ रोलाँ : वे तो आपको ऐसे लोगोंसे — अमेरिकियों और अंग्रेजोंसे — घेर लेंगे जो फासिस्ट हैं। आपकी आवाजको उस घेरेको तोड़कर इटलीकी जनतातक पहुँचाना चाहिए।

गांधीजी : मैं यह शर्त भी रखूँगा कि मैं उनसे ऐसे विषयोंके सम्बन्धमें कोई बात नहीं करूँगा जिनके विषयमें मुझे तटस्थ होना चाहिए। वहाँ जानेकी मेरी कोई इच्छा नहीं थी, फिर भी जानेका मौका आ गया है। हम यह मानकर चलें कि इटलीके अखबारोंमें मेरे प्रत्येक शब्दको तोड़-मरोड़कर पेश किया जायेगा। जिस इंग्लैंडमें सबको अपने विचार व्यक्त करनेकी पूरी स्वतन्त्रता है, वहाँ भी मेरी बातोंको तोड़-मरोड़कर पेश किया गया और मेरे सन्देशका बहिष्कार किया गया। फ्रांसमें भी 'फिगारो 'में बहुत बेतुकी बातें लिखी गई हैं।

रोमाँ रोलाँ : एक और भी कठिनाई है। आप तो बोलेंगे, लेकिन जब दूसरे लोग आपके खिलाफ बोलेंगे तो आप उसे समझ नहीं पायेंगे।

गांधीजी : मैं तो अपना कर्त्तव्य करूँगा और परिणामको भगवान्के भरोसे छोड़ दूंगा।

रोमाँ रोलाँ : आपका एक कर्त्तव्य यह है कि आप गरीबोंसे अपनी बात कहें।

गांधीजी : मैं समझता हूँ कि इतनी अधिक सावधानी बरतना तो किसीके लिए भी असम्भव है।

रोमाँ रोलाँ : आपके साथ किसी-न-किसीको हमेशा होना चाहिए।

गांधीजी : इसका तात्कालिक परिणाम तो यह होगा कि इटलीके अखबार उसके बारेमें गलत बातें प्रचारित करेंगे, लेकिन अगर कोई अच्छा शब्द कहा जाता है या अच्छा कार्य किया जाता है तो अन्ततः उसका परिणाम अच्छा ही होना चाहिए।

१. गांधीजी की विलेन्यूव यात्राके विवरणके लिए देखिए परिशिष्ट २।
२. गांधीजी को इटली जाकर पोप तथा मुसोलिनीसे मिलनेकी सलाह दी गई थी।

अगर हमें इस बातका विश्वास हो कि मैं प्रलोभनोंके जालमें नहीं फँसूँगा तो हमें यह खतरा उठाना चाहिए।

रोमाँ रोलाँ: वहाँ आप बुद्धिजीवियोंसे — बुद्धिजीवियोंके मुखौटे लगाये लोगों से — मिलेंगे, लेकिन फॉरमिशी, जेंटाइल-जैसे लोगोंसे नहीं मिल पायेंगे।

गांधीजी: मैंने देखा कि इस बातको लेकर आप कितने चिन्तित रहे हैं और मैंने यह भी महसूस किया कि कितना अधिक श्रम करके आपने इस परिस्थितिके सम्बन्धमें अपने निष्कर्ष निकाले हैं। दूसरी ओर मेरी मनोरचना कुछ और ढंगकी है। मैं जिन निष्कर्षोंपर भी पहुँचा हूँ, उनपर ऐतिहासिक अध्ययनके जरिये नहीं पहुँचा हूँ। मेरी मनोरचनामें इतिहासकी भूमिका बहुत कम है। मेरा निन्दक यही कहेगा कि मेरा तरीका प्रयोग और अनुभवका तरीका रहा है और मेरे सारे निष्कर्ष मेरे तथाकथित अनुभवपर आधारित हैं। अपने अनुभवको मैं तथाकथित इसलिए कहता हूँ कि उसके सम्बन्धमें आत्मप्रवंचनाका भी खतरा है। मैं ऐसे कई सिरफिरों को जानता हूँ जो कुछ चीजोंमें इस तरह विश्वास करते हैं, मानों ये उसके अपने अनुभव हों। उदाहरणके लिए, यदि अपनी पत्नी तथा अपने बच्चोंके सम्बन्धमें उसके कुछ विश्वास हैं और यदि वह उन्हें अपना अनुभव कहता है तो उसे उनसे डिगा पाना असम्भव होता है। अब, हो सकता है उसके तथा मेरे अनुभवोंके बीच बहुत कम अन्तर हो फिर भी मेरे अनुभवके पूर्वोदाहरण अवश्य हैं सतोंने अपने अनुभवोंके आधारपर अपनी-अपनी विचार-प्रणालियाँ खड़ी की हैं और आखिर-कार अब तो दुनिया यह मानती ही है कि उन्होंने अपने जो अनुभव लिखे, वे सही थे और यह भी कि ऐतिहासिक तथा विश्लेषणात्मक पद्धतियोंसे भी उनकी कसौटी की जा चुकी है। मेरा अनुभव सर्वथा निराधार नहीं रहा है और अहिंसा तथा असहयोग के सम्बन्धमें मेरा सम्पूर्ण अनुभव ऐसी ही नींवपर खड़ा है, और इसलिए कलके गम्भीर प्रवचनको सुनते हुए मैंने मनमें सोचा कि "इसपर मेरी क्या प्रतिक्रिया हो सकती है?" मेरा उत्तर यह था: "मुझे कहना चाहिए कि मेरा विश्वास ऐसा है और मुझे उसीके अनुरूप काम करना चाहिए।" समस्या बहुत कठिन थी। जहाँ अहिंसा भारतमें सफल हो सकती है, यूरोपमें नहीं भी हो सकती। लेकिन इससे मुझे कोई परेशानी नहीं होती। इसका सीधा-सादा कारण यह है कि मैं समझता हूँ, मुझे यूरोपको अहिंसाका सन्देश समझा सकना चाहिए। हाँ, यह बात जरूर है कि यह सन्देश शायद वह भारतके माध्यमसे धीरे-धीरे ग्रहण करे। हो सकता है, मैं उन्हें यह सन्देश कभी भी न समझा पाऊँ, लेकिन सम्भव है, ईश्वरको मुझसे और भी बहुत-से काम करवाने हों। मैं प्रबुद्ध अंग्रेजों तथा अन्य देशोंके निवासियोंसे मिला हूँ और मैंने उनसे यही कहा है कि जबतक आपमें ऐसी प्रबल आस्था न हो कि सारी दुनियाको अपने खिलाफ खड़ा देखकर भी आपका विश्वास न डिगे तबतक आप आगे कदम न बढ़ायें। अगर आपमें ऐसी आस्था होगी तो प्रसंग आनेपर कठिनाइयोंसे निकलनेका रास्ता आपको स्वतः सूझेगा। इसलिए मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि यूरोपकी रक्षा केवल अहिंसा ही कर सकती है। अन्यथा मुझे सिर्फ विनाश-ही-विनाश दिखाई देता

है। मैं अपने सामने विघटनकी प्रक्रिया चलते देख रहा हूँ। रूसमें जो-कुछ हो रहा है, वह सम्भव है पहेली-जैसा लगता हो। रूसके बारेमें मैं बहुत कम बोला हूँ। लेकिन मेरे अन्तर्मनमें, रूसमें जो-कुछ हो रहा है, उसके प्रति गहरा अविश्वास भरा हुआ है। यह अहिंसाको एक बहुत बड़ी चुनौती जान पड़ती है। इस समय तो वह ठीक काम करता दिखाई देता है, लेकिन उसका आधार भौतिक शक्ति है। कह नहीं सकता कि वह शक्ति उस समाज, उस देशको इस तंग रास्तेपर कबतक रख पायेगी। जो भारतीय रूसी पद्धतिके प्रभावमें हैं, वे बहुत उग्र ढंगकी सहिष्णुताका परिचय दे रहे हैं। परिणाम यह है कि उसके प्रभावमें रहनेवाले लोग आतंकवादी बने हुए हैं। इसलिए रूसके प्रयोगको मैं मूलतः अविश्वासकी दृष्टिसे देखता हूँ। मैंने रूस हो आनेवाले प्रत्येक अंग्रेज तथा अमेरिकीसे जिरह करके देखी है। वे मुझे निष्पक्ष प्रेक्षक-जैसे लगे। अभी कुछ ही दिन पहले लॉर्ड लोथियन और बर्नार्ड शॉ रूस गये थे। लोथियन तो साफ कहते हैं कि वे नहीं जानते कि जोर-जबरदस्ती समाज-को कहाँतक सुधार सकेगी। बर्नार्ड शॉने लिखा तो बहुत उत्साहपूर्वक है, लेकिन उनके साथ हुई बातचीतमें मैंने वह उत्साह नहीं देखा और वास्तवमें इस विषयपर मैं उनसे साफ-साफ और पूरी बात नहीं कहला पाया। इसके विपरीत, भारतीय मामलोंमें उनकी ज्यादा रुचि दिखी। मुझे लगता है कि यूरोपके लिए भी अहिंसा आवश्यक है। अहिंसाके लिए किसी बड़े संगठनकी आवश्यकता नहीं है। चाहे जिस प्रकार हो, यह अपना संगठन आप ही कर लेती है। बस, ऊपर कोई ऐसा व्यक्ति हो जो सच्चा अहिंसावादी हो, जिसमें पर्वतके समान अडिग आस्थाका बल हो। जबतक ऐसा आदमी सामने नहीं आता, हमें ईश्वरसे प्रार्थना करते हुए प्रतीक्षा करते रहना है।

रोमाँ रोलाँ: मैंने आपको रुन्हम ब्राउनको लिखे पत्र भेजे थे। अप्रतिरोधकी नीति तो सुदूर भविष्यमें ही सफल हो पायेगी। लेकिन, यहाँ समस्या तत्काल समा-धानकी अपेक्षा रखती है। बीस वर्षोंमें तो शायद यूरोपीय सभ्यता नष्ट ही हो जाये। बीस वर्षोंमें सब-कुछ तय हो जायेगा। इस बीच हम क्या करें?

गांधीजी: मैंने कुछ इस तरहकी बात कही है। वास्तवमें संसार मूर्ति-पूजक है — मूर्तका, प्रत्यक्षका पुजारी है। इस्लाम भी उसीका पुजारी है और प्रोटेस्टेंट ईसाई सम्प्रदाय भी। वह अपनी पाँचों इन्द्रियोंमें से किसी एकके माध्यमसे कुछ देखना चाहता है। इसीको मैं मूर्ति-पूजा कहता हूँ। वह कोई प्रत्यक्ष प्रमाण चाहता है। अगर भारत अहिंसाकी शक्तिका प्रत्यक्ष प्रमाण दे सका तो बात आसान हो जायेगी। मेरा निश्चित विश्वास है कि भारतको इसमें २० वर्ष नहीं लगेंगे, और अगर भारतने अहिंसाके बलपर सच्ची स्वतन्त्रता प्राप्त कर ली तो दुनिया अहिंसाकी शक्तिको जान जायेगी और तब सारी दुनिया उसे अपना लेगी। मैं विश्व-जनमत इसलिए तैयार करना चाहता हूँ कि इंग्लैंडको गलत काम करनेपर लज्जाका अनुभव हो। लेकिन ऐसा जनमत तैयार होगा या नहीं, दूसरे लोग इस लड़ाईमें शामिल होंगे या नहीं होंगे, यह मैं नहीं कह सकता। लेकिन इतना मैं निश्चित तौरपर जानता हूँ कि

अहिंसाका परिणाम अच्छा ही होगा। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इंग्लैंडके विचारोंमें क्रान्तिकारी परिवर्त्तन हुआ है, हालाँकि इतना परिवर्त्तन पर्याप्त नहीं है। इसका श्रेय मैं अहिंसाको ही देता हूँ। कुछ प्रतिभाशाली अंग्रेज — [उदाहरणके लिए] गिलबर्ट मरे — इससे सहमत नहीं हैं और इस बातको स्वीकार नहीं करते। मैं चाहता भी नहीं कि वे सहमत हों और इस बातको स्वीकार करें। जो बात है वह तो है ही और कोई भी उसे देख सकता है। अहिंसक लड़ाईके परिणामस्वरूप ही तथाकथित गोलमेज परिषद् आयोजित की जा सकी। इसलिए मुझे आशा है कि . . .[1] शेष कठिनाइयोंपर पार पानेमें मुझे कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए। जो अन्तर है, उसे मैं जानता हूँ, लेकिन उसके कारण मैं अपना विश्वास नहीं छोड़ सकता। मुझे तो उन चन्द आत्मत्यागी लोगोंके बलपर ही आगे बढ़ना है जिन्होंने इसके लिए अपने प्राण उत्सर्ग कर दिये हैं। मेरे साथ यही बात दक्षिण आफ्रिकामें हुई। यही भारतमें भी हुई, जहाँ मुझे यह नहीं मालूम था कि मैं ठोस लड़ाई लड़ भी सकूँगा या नहीं। हम वह लड़ाई लड़ सकेंगे। इससे आगे मैं कुछ नहीं कह सकता। आप अगर भारतीय परिस्थितिको ठीक ढंगसे निपटा सके तो यूरोपकी परिस्थिति भी सुधर जायेगी, बल्कि उस दशामें उसका सुधरना अनिवार्य हो जायेगा।

रोमाँ रोलाँ : कुछ मामलोंमें अप्रतिरोधकी नीतिका प्रयोग किया गया है। लेकिन हमारी कठिनाइयाँ दोहरी-तिहरी हैं। भारतीयोंके साथ दुर्व्यवहार किया गया है, लेकिन मैं नहीं समझता कि वैसा दुर्व्यवहार किया गया है जैसा कि इटलीकी जनताके साथ किया जा रहा है। बच्चोंतक से श्रम कराया जाता है, इस तरह लोगोंका शोषण किया जाता है। उन बेचारोंको देनेके लिए कोई सन्देश होना ही चाहिए।

रूसके बारेमें आपको जानना होगा कि वहाँ क्या परिस्थितियाँ हैं। रूसमें अहिंसा क्या कर सकती है? क्या हमें उनसे यूरोपके प्रति अहिंसा बरतनेको कहनेका अधिकार है? क्या हमें उनको यूरोपके सामने झुकनेको मजबूर करना चाहिए?

गांधीजी : जहाँतक यूरोपके श्रमिकोंका सवाल है, मालिकों और मजदूरोंके आपसी सम्बन्ध काफी अच्छे हैं। लेकिन मैंने यह कहा कि उपाय यह नहीं है कि मजदूर पूँजीपतियोंके खिलाफ संघर्ष करें, बल्कि यह है कि वे अपने-आपसे जूझें। तब वे आप ही अपने रोजगार-दाता बन जायेंगे। वे अपने श्रमका उपयोग करनेके लिए पूँजीका मुँह ताकते हैं। अगर पूँजीपति उन्हें अपनी सारी पूँजी दे दें, तब भी वे सुखी नहीं हो पायेंगे और वे पूरे एक सालतक भी उसका उपयोग नहीं कर सकेंगे। इसलिए मैंने उनसे कहा : "आप अपने गृह-उद्योगोंका पुनरुद्धार करें।" वेल्समें लोग इस तरीकेको अपना रहे हैं। स्वस्थ, साहसी और उद्यमी प्रवृत्तिवाले लोगोंमें से अधिकांश बेरोजगार रहें, यह कैसी विडम्बना है। और तेल-कूपोंकी संख्यामें वृद्धि होनेके साथ-साथ यह बेरोजगारी बढ़ती ही जायेगी। उनमें से किसीको भी दान-पर नहीं जीना चाहिए।

१. साधन-सूत्रमें आगेके कुछ शब्द स्पष्ट नहीं हैं।

रोमाँ रोलाँ : यूरोपको खतरा उस विशाल मध्यम वर्गसे है जो दूसरोंको चूसकर खुद एशोआरामकी जिन्दगी बिताता है। युद्धके बाद फ्रांससे कहा गया कि जर्मनी उसे हर्जाना देगा। फ्रांसमें एक एशियाई सेना खड़ी करने, रोम साम्राज्यके दिनोंको पुनः वापस लानेकी तैयारी हो रही है।

भारत सही रास्तेपर है — आप मनुष्य-जातिके हित-साधनके लिए काम कर रहे हैं। फ्रांसमें अभी गरीबी नहीं आई है, हालाँकि जर्मनीमें आ गई है। हमारा कर्त्तव्य शोषितोंका साथ देना है।

गांधीजी : लेकिन क्या यहाँ भी इलाज खुद शोषितोंके ही हाथोंमें नहीं है? अगर वे शोषकोंके साथ सहयोग करना बन्द कर दें तो उन्हें अवश्य ही मुक्ति मिल जायेगी।

जिनमें गहरी धार्मिक भावना नहीं है, वे मोटी-मोटी तनख्वाहों और भौतिक सुख-सुविधाओंके प्रलोभनमें फँस जाते हैं। दुनियाका सबसे बड़ा उद्योग, रसायन-उद्योग है और उसका उद्देश्य है हिंसा। लोगोंको गरीबी और आत्म-त्यागका सन्देश दिये बिना काम नहीं चल सकता।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य : नारायण देसाई

२५४. भेंट : पत्रकारोंको

विलेन्यूव
६ दिसम्बर, १९३१

प्रश्नोंके उत्तर देते हुए उन्होंने [गांधीजी ने] कहा कि मैं लन्दनसे प्रस्थान करनेसे पूर्व जितना कह चुका हूँ, उससे आगे मुझे कुछ नहीं कहना है। उन्होंने जिनेवाके एक अखबारमें छपी लन्दनकी इस खबरको बिलकुल गलत बताया कि अगर भारतीयों की इच्छा पूरी नहीं की गई तो वे हिंसात्मक तरीके अपनायेंगे। उन्होंने कहा कि इस चीजको रोकनेके लिए खुद मैं तो अपने प्राणोंकी आहुति दे देनेको तैयार हूँ।

जब उनसे कॉमन्स सभामें रैम्जे मैकडॉनाल्ड द्वारा दिये वक्तव्यके बारेमें सवाल पूछा गया तो उन्होंने कहा कि कांग्रेसके विचार जाननेके बाद ही मैं उस वक्तव्यपर कोई राय जाहिर करूँगा। भारतके लोगोंको उनका सन्देश यह था कि उन्हें जल्द-बाजीमें किसी निष्कर्षपर नहीं पहुँचना चाहिए, बल्कि जनताके सामने जबतक इस विषयपर मैं वक्तव्य न दूँ तबतक प्रतीक्षा करनी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ८-१२-१९३१

२५५. लॉर्ड इर्विनको लिखे पत्रका अंश

[विलेन्यूव
६ दिसम्बर, १९३१के पश्चात्][1]

अगर भारतमें स्थिति इतनी नहीं बिगड़ जाती कि लड़ाई करना जरूरी हो जाये तो शायद सहयोग करना अब भी जारी रखा जा सकता है। जो भी हो, मैं आपको यह आश्वासन दे सकता हूँ कि वाइसराय महोदयसे बातचीत किये बिना मैं जल्दबाजीमें कुछ नहीं करूँगा।

[अंग्रेजीसे]
हैलिफैक्स, पृष्ठ ३१७

२५६. पत्र : सर सैम्युअल होरको

विलेन्यूव
७ दिसम्बर, १९३१

प्रिय सर सैम्युअल,

हमारे बीच अभी अन्तमें जो बातचीत हुई थी, उसका सार मैं यहाँ लिखित रूपमें दे रहा हूँ। आपने यह कहनेकी कृपा की थी कि न तो प्रधान मन्त्रीकी घोषणा और न कॉमन्स सभामें दिया आपका भाषण सुरक्षात्मक पूर्वोपायों तथा आरक्षित किये जानेवाले विषयोंके सम्बन्धमें अन्तिम निर्णयका सूचक है, और प्रस्तावित कार्यसमितिके हर सदस्यको उनमें से किसी भी बातमें संशोधन सुझाने अथवा उसके रद्द किये जानेका सुझाव देनेका अधिकार होगा और साथ ही राष्ट्रीय सरकारको जिन आर्थिक सौदोंका दायित्व लेना होगा उनकी महत्त्वपूर्ण जाँचपर भी वे आग्रह कर सकते हैं। आपने यह भी कहा था कि आप कार्यसमितिके विचारार्थ जो मुद्दे भेजेंगे वे महज औपचारिकताके निर्वाहके लिए नहीं भेजे जायेंगे, बल्कि कार्यसमितिकी सिफारिशोंको महामहिमकी सरकार अधिकसे-अधिक महत्त्व देगी। मेरे मनपर बातचीतकी यह जो छाप पड़ी है, वह अगर सही हो तो मैं चाहूँगा कि आपको विशेष असुविधा न हो तो हवाई डाकसे पत्र भेजकर इसकी पुष्टि कर दें। भारतमें मेरा पता अहमदाबाद होगा।

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १-२-१९३२

१. साधन-सूत्रके अनुसार यह पत्र विलेन्यूव से लिखा गया था और वहाँ गांधीजी ६ दिसम्बरको पहुँचे थे।

२५७. पत्र : सर सैम्युअल होरको

मार्फत – मोशिए रोमाँ रोलाँ, विलेन्यूव
७ दिसम्बर, १९३१

प्रिय सर सैम्युअल,

मैंने आपसे कहा था कि मैं, सरकारने मेरे लिए पुलिसकी जो व्यवस्था की थी, उसके बारेमें लिखना चाहता हूँ। लिखनेका समय आज मिल पाया है। यों तो इस कामपर जिन गुप्तचरों और सिपाहियोंको लगाया गया था, उन सबने अपना कर्त्तव्य निभाते हुए मेरा बड़ा खयाल रखा और शिष्टतापूर्ण व्यवहार किया, लेकिन प्रतिदिन मेरे सम्पर्कमें आनेवाले सार्जन्ट इवान्स और सार्जन्ट रॉजर्स तो मानों मेरे परिवारके सदस्य ही बन गये थे। वे भ्रातृवत् स्नेह और सावधानीसे मेरी देख-रेख करते थे। मेरे अनुरोधपर आपने उन्हें ब्रिंडिसीतक भेजनेका सौजन्य दिखाया। वे इन विदेशी इलाकोंमें भी असाधारण रूपसे उपयोगी साबित हो रहे हैं। उनकी कुशल-क्षेम जानना मेरे लिए सदा हर्षका विषय होगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९३८५) से; सौजन्य: इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी

२५८. प्रश्नोत्तर[1]

लोजान
८ दिसम्बर, १९३१

प्र० : शान्तिके पक्षमें काम करनेके लिए प्राच्य तथा पाश्चात्य संसारको साथ कैसे लाया जा सकता है?

उ० : यह सवाल मुझसे कोई ५ वर्ष पहले पूछा गया था। तब मैंने यह उत्तर दिया था: मैं तो एक पराधीन राष्ट्रका निवासी हूँ और इसलिए मैं नहीं जानता कि अपने राष्ट्रकी स्वाधीनताके लिए काम करनेके अलावा और किस तरह मैं शान्ति-स्थापनामें सहायता दे सकता हूँ। अगर भारतको शान्तिपूर्ण उपायोंसे स्वाधीनता प्राप्त

१. यद्यपि साधन-सूत्रमें यह नहीं बताया गया है कि ये सवाल किस अवसरपर पूछे गये, लेकिन अनुमानतः ये, लोजानमें गांधीजी जिस पहली सभामें बोले, उसीमें पूछे गये थे।

करनेमें सहायता दी जा सके तो शान्तिके पक्षमें राष्ट्रोंके सहयोगका यह एक बहुत अच्छा उदाहरण होगा। मैंने यह बात अपने देशको सर्वथा अहिंसक तथा सत्यमय उपायोंसे स्वतन्त्र करनेका प्रयत्न करनेके बाद कही है।

प्र० : तो क्या हम यह मानें कि उधर जबकि भारतमें अहिंसाका प्रयोग किया जा रहा है, यहाँ भी राजनीतिक उद्देश्योंके लिए अहिंसाके प्रयोगके लिए आन्दोलन चलाना चाहिए?

उ० : अगर आपको यह विश्वास हो गया हो कि भारतमें अपनाये गये साधन दिन-प्रतिदिन वांछित परिणाम प्रकट कर रहे हैं, और अगर आप इस बातके कायल हों कि भारत यह काम आध्यात्मिक साधनोंके बलपर कर रहा है, तो आप यहाँ भी वैसा ही कीजिए हालाँकि यूरोप [की परिस्थितियों] में अधिक अन्तर है।

मित्रोंने मुझे बताया है कि यूरोपमें अहिंसात्मक उपाय अपनानेके मार्गमें कुछ विशिष्ट कठिनाइयाँ हैं। यूरोपमें बसनेवाली जातियाँ, भारतके विपरीत, लड़ाकू जातियाँ हैं। यहाँ सभी हथियारोंका इस्तेमाल करना जानते हैं। सभी पुरुषोंने एक-न-एक समयमें हथियार चलाये हैं। सो आपके लिए प्रतिशोधमें हाथ न उठानेकी कार्यसाधन-क्षमता और खूबसूरतीको समझना कठिन है। यहाँ मुझसे सर्वत्र यही पूछा जाता है कि गलत काम करनेवाले को सजा क्यों न दी जाये और सो भी ऐसी सजा जो दूसरोंको एक सबक दे सके। इस प्रकार अहिंसा यूरोपके लिए बिलकुल अजूबा चीज है। ऐसे देशके लोगोंके लिए कोई नया रास्ता अख्तियार करना कठिन है। आपके आर्थिक जीवनका गठन ऐसा है कि मोटे तौरपर किसी साधारण आदमीके लिए यह सम्भव ही नहीं है कि वह इस पिटे-पिटाये रास्तेसे निकल सके। अगर वह ऐसा करेगा तो उसको गरीबीका सामना करना पड़ेगा। चौथी कठिनाई यह है कि कैथोलिक मतावलम्बी यूरोपका फौलादी अनुशासन बुद्धिको अपनी इच्छित दिशामें चलनेकी बहुत कम छूट देता है। आपके रास्तेमें ये चार कठिनाइयाँ ऐसी हैं, जिनका सामना हमें भारतमें नहीं करना पड़ता। अगर भारत अहिंसात्मक उपायोंसे स्वतन्त्र हो जाता है तो वह कभी भी युद्ध नहीं करेगा। लेकिन अगर करेगा तो मैं आशा करता हूँ कि ईश्वर मुझे ऐसी शक्ति देगा कि मैं अकेला भी उसका विरोध कर सकूँ।

प्र० : आइन्स्टीनके इस आह्वानके विषयमें आपका क्या विचार है कि सैनिकोंको युद्धमें भाग लेनेसे इनकार कर देना चाहिए?

उ० : मेरा उत्तर केवल एक ही हो सकता है, अगर यूरोप इस तरीकेको उत्साहपूर्वक अपना सके तो मैं यही कहूँगा कि आइन्स्टीनने मेरा तरीका चुरा लिया है। लेकिन अगर आप यह चाहते हों कि मैं इस तरीकेको विस्तारसे समझाऊँ तो मैं तनिक गहराईमें उतरकर इसकी चर्चा करूँगा। जब किसी व्यक्तिके सैनिक सेवा करनेका अवसर आये, उस समय वैसा करनेसे इनकार करनेका मतलब जब बुराई का विरोध करनेका समय लगभग बीत चुका हो तब उसका विरोध करना होगा। रोग जरा गहरा है। मेरा कहना यह है कि जिनके नाम सैनिक सेवा करनेवालों की सूचीमें शामिल नहीं है, वे इस अपराधमें उतना ही अधिक हाथ बँटा रहे हैं। इस-

लिए जो भी स्त्री या पुरुष इस ढंगसे गठित राज्यकी सहायता करता है, वह प्रत्यक्ष रूपसे हो या परोक्ष रूपसे, उस पापमें हिस्सा बँटाता है। इसमें खतरा है और वह दूर नहीं है। यह देखते हुए कि हर आदमी — चाहे वह बूढ़ा हो या नौजवान — राज्य को (करोंके रूपमें) अंश-दान देकर इस पापमें शामिल होता है, मैंने उसी समय — जब कि मैंने नौसेना द्वारा मुहैया किया गेहूँ खाया था, और जब मैं हथियार उठाने के सिवाय सिपाहीके सभी काम कर रहा था — कहा था कि मेरे लिए सबसे अच्छा यही होगा कि मुझे गोलीसे उड़ा दिया जाये, या फिर मुझे सभ्य संसारको छोड़कर जंगलोंमें चले जाना चाहिए और वहाँ प्रकृति जो दे उसीसे अपना उदर-पोषण करना चाहिए। इसी प्रकार, जो लोग सैनिक सेवा देना बन्द करना चाहते हैं वे सारा सैनिक सहयोग देना बन्द करके ही वैसा कर सकते हैं। राज्यको सहारा देनेवाली सम्पूर्ण पद्धतिसे असहयोग करनेकी तुलनामें सैनिक सेवा करनेसे इनकार करना बहुत ही सतही और नकली चीज है। लेकिन जब आपकी सैनिक सेवा करनेकी बारी आती है तो वह इतनी तेजी और इतने प्रभावकारी ढंगसे आती है कि इनकार करनेपर न केवल आपको जेल भेज दिये जानेका खतरा रहता है, बल्कि यह भय भी रहता है कि राज्य आपको कहींका न छोड़े। टॉल्स्टॉय यही कहते थे।

प्र० : क्या हमें राज्यको किसी भी रूपमें स्वीकार ही नहीं करना चाहिए? क्या हमें स्थानीय स्वशासन (जिसमें लोक-कार्य, स्कूल आदि शामिल हैं)का उपयोग करनेसे भी इनकार कर देना चाहिए?

उ० : अब आपने मानव-स्वभावके मर्मको छू दिया है। असहयोगके स्रष्टाके नाते प्रारम्भिक अवस्थामें मेरे सामने भी यह प्रश्न उपस्थित हुआ था और इस विषयपर कोई निश्चय करनेके पूर्व मैंने मनमें कहा, मैं राज्यसे दो तरहसे सहयोग करता हूँ। ऐसा कोई भी राज्य नहीं है — नीरो या मुसोलिनी द्वारा संचालित राज्य भी नहीं — जिसमें कुछ-न-कुछ अच्छी बातें न हों। भारतमें एक ग्रैंड ट्रंक रोड है। राज्य करोड़ों यात्रियोंको सुविधा प्रदान करता है; उसने सुसज्जित अस्पताल और स्कूलोंके लिए राजसी इमारतें बनवाई हैं। इन्हें हम अच्छी चीजें मान सकते हैं। लेकिन मैंने सोचा कि अगर ये तमाम चीजें राष्ट्रको कुचलती हैं तो मुझे इनसे कोई सरोकार नहीं रखना चाहिए। वे मणियुक्त विषधर भुजंगके समान हैं। इस प्रकार मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा कि भारतमें ब्रिटिश हकूमतने राष्ट्रके स्वतन्त्र विकासको अवरुद्ध कर रखा है और इसलिए मैंने हर सुविधाके उपभोगसे इनकार कर दिया। सज्जनताका तरीका उनका उपभोग करनेसे इनकार करना ही था।

आत्मरक्षाकी दलील तो बहुत ही घिसी-पिटी दलील है। आप अपने देश और समाजका संगठन असंगठित समुदायों और राष्ट्रोंका शोषण करनेके लिए करते हैं। यह बुरी चीज है। . . .[1] जो बात आइन्स्टीनने कही है, उसको आजमानेका प्रसंग

१. साधन-सूत्रमें यहाँ कुछ शब्द अस्पष्ट हैं।

सालमें कभी एक-आध बार ही आयेगा और सो भी कुछ ही लोगोंके सामने। लेकिन आपका पहला कर्त्तव्य राज्यसे असहयोग करना है।

प्र० : क्या भारतके लोगों और उन दूसरे देशोंके लोगोंमें, जो स्वतन्त्र हैं, इतना अधिक अन्तर है? अपने राज्यसे झगड़नेसे पहले क्या हम यह नहीं कह सकते कि हमारी स्थिति आपकी स्थितिसे भिन्न है?

उ० : भिन्नता तो है। पराधीन राष्ट्रकी प्रजाकी हैसियतसे मैं शान्ति-स्थापनामें सबसे अच्छा योगदान पराधीनताकी बेड़ीको तोड़कर ही दे सकता हूँ। यहाँ मुझसे यह पूछा गया है कि सैनिक मनोवृत्तिसे छुटकारा पानेका सबसे अच्छा तरीका क्या है। आप जिन सुविधाओंका उपभोग कर रहे हैं उनका उपभोग इसी शर्तपर कर रहे हैं कि आप राज्यको सैनिक सेवा प्रदान करेंगे। तो यहाँ आपको राज्यको सैनिक मनोवृत्तिसे मुक्त करना है। लेकिन आपके पक्षमें बहुत कम लोग हैं। जो राज्य सैनिक हिंसापर आधारित है वह बुरा राज्य है। इसपर आप शायद कहें कि अधिकांश लोग तो ऐसे ही हैं। हाँ, वे हैं। इस तरीकेकी कार्य-साधक क्षमतापर विचार करते हुए मैं स्वाधीन राज्य और पराधीन राज्यके बीचका भेद स्पष्ट कर पाया हूँ। अगर आप शान्तिकामी अल्पसंख्यक समुदायको बहुसंख्यक समुदायमें परिवर्त्तित करना चाहते हैं तो आपको राज्य द्वारा दी गई सुविधाओंको अस्वीकार करना होगा।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य : नारायण देसाई

२५९. भाषण : लोजानकी सभामें[1]

लोजान
८ दिसम्बर, १९३१

भाइयो,

जबसे मैं आपके इस सुन्दर नगरमें आया हूँ, आप सब मुझपर इतना अधिक अनुग्रह करते रहे हैं कि मैं उससे बिलकुल अभिभूत हो गया हूँ। अगर हमारी इस पृथ्वीका सौन्दर्य स्वर्गका निर्माण हो सकता है तो आप सचमुच स्वर्गमें ही रह रहे हैं। मैं एक ऐसे देशका निवासी हूँ, जिसे ईश्वरने मुक्तहस्त होकर प्राकृतिक सुन्दरताका दान दिया है। आपको भारतके बिलकुल छोरपर — त्रावणकोरमें — जैसा दृश्य देखनेको मिलेगा उससे अधिक भव्य दृश्य संसारमें कहीं नहीं मिल सकता। लेकिन जिस समय हमारी रेलगाड़ी धीरे-धीरे आपकी मनोरम झीलकी बगलसे गुजर रही थी और जब

१. साधन-सूत्रमें यह नहीं बताया गया है कि यह कौन-सी सभा थी। लेकिन ३१-१२-१९३१ के **यंग इंडिया**में प्रकाशित अपने "लेटर फ्रॉम यूरोप" (यूरोपका पत्र) में महादेव देसाई कहते हैं कि यह अन्तरात्माके आदेशपर सैनिक सेवाका विरोध करनेवालों की सभा थी और इसका आयोजन एक गिरजा-घरमें पियरे सेरेसोल तथा उनके मित्रोंने किया था। इस भाषण तथा तत्पश्चात् पूछे गये प्रश्नोंके गांधीजी द्वारा दिये उत्तरोंका अनुवाद एडमंड प्रिवेट तथा प्रोफेसर बोवेटने किया।

हम लोग आपके यहाँके स्वच्छ-सुन्दर गाँवोंसे होकर गुजरे उस समय वहाँका लोकोत्तर सौन्दर्य देखकर मैं अपनी सुध-बुध खो बैठा और यहाँ आकर मैंने आपके स्नेहमें निहित सौन्दर्य-रसका जी-भरकर पान किया। आपके साथ हार्दिक संलापके जो भी अवसर आये हैं उनमें आपके पूछे सच्चे जिज्ञासापूर्ण और उपयुक्त प्रश्नोंमें भी मुझे आपके स्नेहकी झाँकी मिली है। और जो बात सबसे बढ़कर है, वह यह कि अब आपने खुदाके इस घरमें अपने प्रश्न-प्रहारोंका सिलसिला एक ऐसे प्रश्नसे शुरू किया है जो लगभग ५० वर्षोंसे मेरे मनपर, मेरे सम्पूर्ण मनपर, छाया रहा है।

आपने मुझसे पूछा है कि मैं ऐसा क्यों मानता हूँ कि ईश्वर सत्य है। अपने बचपन या किशोरावस्थामें मुझे, हिन्दू धर्मशास्त्रोंमें जिन्हें ईश्वरके सहस्रनाम [विष्णु-सहस्रनाम] कहा गया है, उनका जप करना सिखाया गया था। हमारे परिवारके पास धार्मिक शिक्षा देनेवाली जो अनेक छोटी-मोटी वस्तुएँ थीं उनमें एक वह छोटी-सी पुस्तिका भी थी जिसमें ईश्वरके सहस्रनाम दिये गये थे। परन्तु इन सहस्रनामोंमें ही ईश्वरकी सारी नामावली समाप्त नहीं हो जाती। हम मानते हैं — और मेरे विचारसे यही सत्य है — कि जितने प्राणी हैं, उतने ही ईश्वरके नाम हैं, और इसलिए हम यह भी कहते हैं कि ईश्वर अनाम है; और चूँकि उसके अनेक रूप हैं, इसलिए हम उसे अरूप कहते हैं; और वह हमसे कई वाणियोंमें बात करता है, इसलिए हम उसे अवाक् कहते हैं; इत्यादि-इत्यादि। इसी तरह मैंने इस्लामका अध्ययन किया तब मुझे पता लगा कि इस्लाममें भी ईश्वरके अनेक नाम हैं। जो यह कहते हैं कि ईश्वर प्रेम है, उनके स्वरमें स्वर मिलाकर मैं भी कहूँगा कि ईश्वर प्रेम है। लेकिन अपने हृदयकी गहराईमें मैं यही कहता हूँ कि ईश्वर प्रेम-रूप होगा, पर सबसे अधिक तो वह सत्य-रूप है। यदि मनुष्यकी वाणीके लिए ईश्वरका सम्पूर्ण वर्णन करना सम्भव हो तो मैं स्वयं तो इसी निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि ईश्वर सत्य है। किन्तु दो वर्ष पूर्व मैं एक कदम और आगे बढ़ा और मैंने कहा सत्य ही ईश्वर है। ईश्वर सत्य है और सत्य ही ईश्वर है, इन दोनों बातोंके बीचके सूक्ष्म भेदको आप समझते होंगे। इस निष्कर्षपर मैं इतने वर्षोंतक सत्यकी अनवरत और कठिन खोजके बाद पहुँचा हूँ। मैंने पाया कि सत्यतक पहुँचनेका निकटतम मार्ग प्रेमका है। लेकिन मैंने यह भी पाया कि कमसे-कम अंग्रेजी भाषामें प्रेम (लव)के कई अर्थ हैं; और काम-विकारके अर्थमें मानव-प्रेम तो मनुष्यको गिरानेवाली चीज भी है। मैंने यह भी देखा कि अहिंसाके अर्थमें प्रेमके पुजारियोंकी संख्या दुनियामें बहुत थोड़ी है और अपनी खोजमें आगे बढ़ते हुए मैंने इस बातका खण्डन तो नहीं किया कि 'ईश्वर प्रेम हैं' [लेकिन] 'ईश्वर प्रेम है', इस बातको समझना (प्रेमके अनेक अर्थ होनेके कारण) बहुत कठिन है, और काम-विकारके अर्थमें मानव-प्रेम एक गिरानेवाली वस्तु भी बन जाता है। किन्तु सत्यका दोहरा अर्थ होते मैंने कभी नहीं देखा, और नास्तिकोंतक ने सत्यकी आवश्यकता या शक्तिको अस्वीकार नहीं किया है। बात इतनी ही नहीं है। सत्यको खोजनेकी अपनी लगनमें उन्होंने ईश्वरके अस्तित्वतक को अस्वीकार करनेमें संकोच नहीं किया है — और उनके अपने दृष्टिकोणसे यह ठीक भी है। और उन्हींके तर्कके

कारण मेरे मनमें यह बात आई कि ईश्वर सत्य-रूप है, यह कहनेके बजाय मुझे कहना चाहिए कि सत्य ही ईश्वर है। इस सन्दर्भमें मुझे चार्ल्स ब्रैडलॉका नाम स्मरण हो आता है। वे एक महान् अंग्रेज थे और आजसे कोई पचास वर्ष पहले उनका निधन हुआ। वे बड़े उत्साहसे अपनेको नास्तिक कहा करते थे। लेकिन मैं चूँकि किसी हदतक उनके जीवनके विषयमें जानकारी रखता हूँ, इसलिए मैंने उन्हें कभी भी नास्तिक नहीं माना। मैं तो उन्हें ईश्वरसे डरकर चलनेवाला आदमी ही कहूँगा, हालाँकि वे इस बातको स्वीकार नहीं करते और मैं जानता हूँ कि मेरी बात सुनकर उनका चेहरा लाल हो जाता था। मैं तो उनसे यही कहता: नहीं बैडलॉ साहब, नहीं, आप ईश्वरसे डरकर चलनेवाले आदमी नहीं, बल्कि सत्यसे डरनेवाले आदमी हैं। और जिस प्रकार मैंने अनेक युवकोंको निरुत्तर कर दिया उसी प्रकार उन्हें भी यह कहकर निरुत्तर कर देता कि "सत्य ही ईश्वर है।" "ईश्वर सत्य है", ऐसा कहनेमें एक दूसरी कठिनाई यह है कि ईश्वरका नाम करोड़ों लोगोंने लिया है और साथ ही उसके नामपर अवर्णनीय अत्याचार किये हैं। ऐसा नहीं है कि सत्यके नामपर वैज्ञानिक लोग बहुधा क्रूरता नहीं बरतते। मुझे मालूम है कि आज सत्य और विज्ञानके नाम पर पशुओंकी चीर-फाड़के सिलसिलेमें उनके साथ कैसी अमानवीय क्रूरता बरती जाती है। मैं इसे ईश्वरके अस्तित्वको अस्वीकार करना मानूँगा भले ही आप चाहे ईश्वरको सत्य कहें या कोई और नाम दें। सारांश यह कि ईश्वरका वर्णन चाहे जिस नामसे किया जाये, उसमें अनेक कठिनाइयाँ हैं। लेकिन मानव-मस्तिष्ककी क्षमता सीमित है, और जब हम ऐसी सत्ताके विषयमें सोचते हैं जो मनुष्यकी समझसे परे है तब हमें अपने मस्तिष्ककी क्षमताकी उस सीमाके भीतर ही काम करना पड़ता है। किन्तु हिन्दू तत्त्वज्ञानमें एक बात और है। वह कहता है, केवल ईश्वरका ही अस्तित्व है, उसके अतिरिक्त और किसी वस्तुकी सत्ता नहीं है। इस्लामके उस प्रसिद्ध वचनमें जिसे 'कलमा' कहा जाता है इसी सत्यको जोर देकर कहा और समझाया गया है। उसमें साफ-साफ कहा गया है — और मुसलमानोंको हर इबादतके समय उसे दोहराना पड़ता है — केवल अल्लाह ही है, और कुछ नहीं है। यही बात सत्यके साथ भी है, और सत्यके लिए संस्कृतमें जो शब्द है — अर्थात् सत् — उसका शब्दार्थ ही 'जो है' होता है। इन कारणों तथा और भी अनेक कारणोंसे, जो मैं बता सकता हूँ, मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि सत्य ही ईश्वर है। और जब आप सत्यको ईश्वरके रूपमें पाना चाहते हैं तो उसका एकमात्र अनिवार्य साधन प्रेम, अर्थात् अहिंसा है। चूँकि मैं मानता हूँ कि अन्ततः साधन और साध्य समानार्थक शब्द हो जाते हैं, इसलिए मुझे यह कहनेमें संकोच नहीं होगा कि ईश्वर प्रेम है।

प्र० : तो फिर सत्य क्या है?

उ० : प्रश्न तो कठिन है, लेकिन मैंने अपने लिए उसका हल निकाल लिया है — वह यह है कि जो हमारी अन्तरात्मा कहे, वही सत्य है। इसपर आप पूछेंगे कि तब फिर अलग-अलग लोग अलग-अलग और एक-दूसरेके विरुद्ध सत्योंकी कल्पना कैसे करते हैं?

इसका उत्तर यह है कि मानव-मन असंख्य माध्यमोंमें काम करता है और प्रत्येक मनुष्यके मनका विकास एक-सा ही नहीं हुआ है, इसलिए यह परिणाम तो आयेगा ही कि जो एकके लिए सत्य हो वह दूसरेके लिए असत्य हो। इसीलिए जिन लोगोंने ये प्रयोग किये हैं वे इस निष्कर्षपर पहुँचे हैं कि इन प्रयोगोंमें कुछ शर्तोंका पालन करना आवश्यक है। जिस प्रकार विज्ञानके क्षेत्रमें प्रयोग करनेवाले सभी लोगोंके लिए एक सामान्य और अनिवार्य पद्धति है उसी प्रकार आध्यात्मिक क्षेत्रमें प्रयोग करनेकी इच्छा रखनेवालों के लिए भी कुछ शर्तोंका पालन करना आवश्यक है। और चूँकि हर आदमी कहता है कि उसकी अन्तरात्माकी आवाज ही उससे अमुक बात कह रही है, इसलिए आपको उस आवाजको सुनना चाहिए, और तब आप जैसे-जैसे अपनी साधनाके पथपर आगे बढ़ेंगे, आपको अपनी मर्यादाओंका बोध होता जायेगा। इसलिए सतत अनुभवोंके आधारपर हमारा यह विश्वास बना है कि जो लोग लगनके साथ सत्यकी —— ईश्वरकी —— खोज करना चाहते हैं उन्हें कुछ व्रतोंका पालन करना ही चाहिए। वे व्रत हैं : सत्य —— अर्थात् सत्य बोलना और सत्य ही सोचना, ब्रह्मचर्य, अहिंसा, गरीबी और अपरिग्रह। अगर आप इन सुन्दर व्रतोंका पालन नहीं करते तो फिर आपको यह प्रयोग आरम्भ नहीं करना चाहिए। इसके लिए कई और भी नियम निर्धारित किये गये हैं, लेकिन यहाँ मैं उनका विवेचन नहीं करूँगा। लेकिन जिन्होंने ये प्रयोग किये हैं, वे जानते हैं कि हर व्यक्तिका अपनी अन्तरात्माकी आवाज सुन सकनेका दावा उचित नहीं है, और आज जो संसारके सामने इतनी अधिक असत्य बातें रखी जा रही हैं कि वह हैरान है, उसका कारण यही है कि हर आदमी इस प्रयोगके लिए आवश्यक नियमोंका पालन किये बिना अपनी अन्तरात्माकी आवाज सुननेका दावा करता है। इसलिए मैं संपूर्ण विनम्रताके साथ केवल इतना ही निवेदन कर सकता हूँ कि जिसमें विनय नहीं है, वह कभी भी सत्यको प्राप्त नहीं कर सकता। अगर आप सत्य-रूपी सागरकी सतहपर तैरना चाहते हैं तो आपको अपनेको शून्य बना देना होगा, अपना अहं बिलकुल मिटा देना होगा। इस मन्त्रमुग्ध कर लेनेवाले विषयपर आजकी रात इससे आगे कुछ नहीं कहूँगा।

प्र० : ईसाई धर्मके सम्बन्धमें आपका क्या विचार है?

उ० : बड़ा कठिन प्रश्न है। ईसाई धर्म बहुत अच्छा है, लेकिन साथ ही बहुत-से ईसाई खासे बुरे हैं।

आर्थिक संकटको तभी टाला जा सकता है जब लोग गरीबीसे प्रेम करने लगेंगे। यहाँ मैं आपसे 'प्रेम' शब्दपर खास जोर देनेको कहूँगा। अगर लोग सचमुच गरीबीसे प्रेम करने लगें तो कोई आर्थिक संकट नहीं आये। आर्थिक संकट इसीलिए आते हैं कि हम अपने पड़ोसीकी सम्पत्तिको लोभकी निगाहसे देखते हैं। दुनियामें मजबूरीकी गरीबी इसलिए है कि बहुत-से लोगोंके पास, वे जितनेके पात्र हैं, उससे अधिक है। अगर हम यह पवित्र संकल्प ले लें कि हमें अपनी भौतिक सुख-सुविधाके लिए जितनेकी जरूरत है, उससे ज्यादा हम नहीं लेंगे तो दुनियामें गरीबी रह ही न जाये। तब कोई लखपती बिना सोचे-समझे यह नहीं कहेगा कि उसके पास

लाखों रुपये इसलिए हैं कि उसे अपनी भौतिक सुख-सुविधाओंके लिए उनकी जरूरत है। इसके विपरीत, जो गरीब है वह भी बराबर इस बातकी छानबीन करता रहेगा कि उसके पास कहीं कोई ऐसी वस्तु तो नहीं है जो उसके लिए वास्तवमें आवश्यक न हो। जब आप जीवनके प्रति खिलाड़ियोंका-सा दृष्टिकोण अपनाकर प्रतिदिन वैसा ही आचरण करेंगे तो यह देखकर चकित रह जायेंगे कि वास्तवमें आपको कितने कमकी जरूरत है।

इस समय खुदाके इस घरमें होनेके कारण मैं तो यह कहना चाहूँगा कि दूसरोंकी आँखकी फूली देखनेसे पहले आप अपना टेंटर देखिए। अगर आप इतना ही करें कि अपनेको अच्छा बना लें तो मुझे इस बातमें बहुत कम सन्देह है कि दुनिया अपने-आप अच्छी बन जायेगी।

प्र० : यूरोपकी स्त्रियोंको आपका क्या सन्देश है?

उ० : मैं नहीं कह सकता कि उनका कोप-भाजन बने बिना मैं उनको कोई सन्देश दे सकता हूँ। मैं उनसे उन भारतीय महिलाओंके पद-चिह्नोंका अनुसरण करनेको कहूँगा जो गत वर्ष एक-जुट होकर उठ खड़ी हुई थीं। मैं सचमुच ऐसा मानता हूँ कि अगर भारत अहिंसामृतका पान कर सका तो यूरोप उसका पान अपने यहाँकी महिलाओंके द्वारा ही कर सकेगा। स्त्रीको मैं आत्म-त्यागकी प्रतिमूर्ति मानता हूँ, किन्तु दुर्भाग्यवश स्त्रियाँ आज यह नहीं जानतीं कि पुरुषोंकी तुलनामें उनमें कितनी अधिक सामर्थ्य है। टॉल्स्टॉयके शब्दोंमें, वे पुरुषके व्यामोहमें डालनेवाले प्रभावमें पड़ी हुई हैं। अगर वे अहिंसाकी खूबसूरतीको समझ जायें तो फिर वे यह बरदाश्त नहीं करेंगी कि उन्हें पुरुषोंकी तुलनामें कमजोर कहा जाये — अबला माना जाये।

जिन चीजोंका मुझे केवल एक धुँधला-सा आभास था, टॉल्स्टाय और रस्किनने उनके सम्बन्धमें मेरे विश्वासको नई शक्ति प्रदान की।

प्र० : अप्रतिरोध और आपके अहिंसक प्रतिरोधमें क्या अन्तर है?

उ० : अकसर ऐसा कहा गया है कि अहिंसाका सिद्धान्त मैंने टॉल्स्टॉयसे लिया है। इसमें पूरी सचाई तो नहीं है, लेकिन अहिंसाके सम्बन्धमें उनकी रचनाओंसे भी मुझे सबसे अधिक बल मिला है। लेकिन इस बातको टॉल्स्टॉयने स्वयं भी स्वीकार किया है कि अप्रतिरोधकी जिस पद्धतिका संवर्धन और विकास मैंने दक्षिण आफ्रिकामें किया वह उस अप्रतिरोधसे भिन्न है जिसके सम्बन्धमें टॉल्स्टॉयने लिखा है और जिसे अपनानेकी उन्होंने सिफारिश की है। यह बात मैं कोई टॉल्स्टॉयकी प्रसिद्धिको कम करनेके खयालसे नहीं कह रहा हूँ। जो अपने लिए अपने शिक्षक द्वारा तैयार किये गये आधारपर कोई और ढाँचा खड़ा न करे वह योग्य शिष्य नहीं हैं। अच्छा गुरु पानेका पात्र वही है जो अपने गुरुकी दी हुई विरासतमें कुछ वृद्धि भी कर सके। यदि मैं अपने पितासे प्राप्त विरासतमें कुछ और जोड़ नहीं पाता तो मानना चाहिए कि मैं एक अयोग्य पुत्र हूँ। और इसलिए मैंने सदा इसे गर्वका विषय माना है। मैंने टॉल्स्टॉयसे जो-कुछ सीखा है, वह ईश्वरकी कृपासे मुझमें आकर सौ गुना अधिक निखरा है। टॉल्स्टॉय निष्क्रिय प्रतिरोधकी बात बहुत करते थे, लेकिन ट्रान्सवालमें मैंने

जिस अप्रतिरोधके उपायका विकास किया[1] वह किसी भी सशस्त्र व्यक्ति द्वारा ढूँढ़े जा सकनेवाले उपायसे लाख गुना अधिक सक्रिय था, और मुझे यह बताते हुए हर्षका अनुभव हो रहा है कि मेरे कुछ लिखे बिना अपनी ही इच्छासे उन्होंने मुझे एक लम्बा पत्र लिखा था, जिसमें कहा था कि आप जहाँ-कहीं होते हैं, मेरी दृष्टि आप पर ही लगी रहती है। और अगर आप दक्षिण आफ्रिका तथा भारतमें मेरे चलाये आन्दोलनोंका अध्ययन करेंगे तो पायेंगे कि इस चीजका किस तरह असीम विस्तार किया जा सकता है।

प्र० : क्या अप्रतिरोधका मतलब अन्यायके आगे झुक जाना नहीं है?

उ० : निष्क्रिय प्रतिरोधको कमजोर लोगोंका अस्त्र माना जाता है, लेकिन उस प्रतिरोध (रेजिस्टेंस)की अवधारणा — जिसको अंग्रेजीमें कोई सही शब्द न होनेके कारण तथा इस खयालसे कि उसका अर्थ कहीं अप्रतिरोध न लगा लिया जाये, मैंने एक बिलकुल नया नाम दिया, अर्थात् सत्याग्रह — किसी भी तरहसे कमजोर लोगोंके अस्त्रके रूपमें नहीं, बल्कि अधिकसे-अधिक शक्तिशाली लोगोंके अस्त्रके रूपमें की गई है। किन्तु इसका विलक्षण गुण यह है कि इस अस्त्रका प्रयोग कमजोरसे-कमजोर, बूढ़ेसे-बूढ़ा, यहाँतक कि बच्चा भी कर सकता है, बशर्ते कि उसका हृदय सबल हो। और चूँकि सत्याग्रहके द्वारा किये जानेवाले प्रतिरोधका माध्यम स्वेच्छासे कष्ट सहन करना है, इसलिए स्त्रियोंके लिए इसका प्रयोग विशेषरूपसे सम्भव है। गत वर्ष भारतमें वास्तविक अनुभवके आधारपर हमने जाना कि कष्ट सहन करनेमें स्त्रियाँ बहुधा पुरुषोंसे आगे निकल जाती हैं। और इस आन्दोलनमें हजारों बच्चोंने भी बड़ा सुन्दर काम किया। कारण यह था कि स्वेच्छासे कष्ट सहनेका सिद्धान्त तेजीसे फैला और उन्होंने आश्चर्यजनक आत्म-त्याग करके दिखाया। अगर यूरोपकी स्त्रियों और बच्चोंमें मानवताके प्रति प्रेम उमड़ पड़े और वे कहें कि हमारे यहाँके पुरुष शस्त्रीकरण करके गलत काम कर रहे हैं तो वे देखते-देखते पुरुषोंपर विजय पा लें और सैन्यवाद इतनी जल्दी मिट जाये जिसकी कल्पना नहीं की जा सकती। इस सबके पीछे जो भावना काम करती है वह यह है कि स्त्रियों, बच्चों और अन्य लोगों, सभीमें एक ही आत्माका निवास है, सभीमें एक-सी क्षमताएँ और सम्भावनाएँ हैं। सवाल सिर्फ सत्यकी छिपी हुई असीम शक्तिको प्रकट करनेका है। लेकिन मुझे इस मोहक विषयपर भी अधिक चर्चा करनेका लोभ संवरण करना चाहिए।

प्र० : निरामिष आहारका महत्त्व क्या है?

उ० : मेरे लिए तो उसका महत्त्व असीम है, मगर गो-मांस खानेवाले यूरोपके लिए नहीं। फिर भी, मैं यह महसूस करता हूँ कि किसी-न-किसी समय आध्यात्मिक प्रगतिके लिए यह आवश्यक — नितान्त आवश्यक — हो जाता है कि हम अपनी शारीरिक जरूरतोंको पूरा करनेके लिए सृष्टिके प्राणियोंका नाश करना बन्द कर दें।

१. मूलमें ऐसा ही है यद्यपि यह कहना ज्यादा सही होगा कि "टॉल्स्टॉय अप्रतिरोधकी बात बहुत करते थे लेकिन ट्रान्सवालमें मैंने जिस निष्क्रिय प्रतिरोधका विकास किया. . .।"

निरामिषाहारके अपने प्रिय सिद्धान्तपर बोलते हुए मुझे गोल्डस्मिथकी ये पंक्तियाँ याद हो आती हैं:

> **घाटियोंमें मुक्त विचरनेवाले उन भेड़ोंके झुंडोंको मारनेकी बात मैं नहीं सोच सकता; जो सत्ता मुझपर दया बरसाती है, उसीसे मैंने भी इनपर दया करना सीखा है।**

प्र० : शराबके बारेमें आपका क्या विचार है?

उ० : जैसा कि हम कहते हैं, शराबकी ईजाद शैतानने की। इस्लाममें कहा गया है कि जब शैतानने स्त्रियों और पुरुषोंको फुसलाना शुरू किया तो उसने उनको शराबका लालच दिया। मैंने तो देखा है कि इसके कारण लोगोंने केवल अपना धन ही नहीं गँवाया है, बल्कि वे अपना विवेक भी खो बैठे हैं। कुछ समयके लिए पत्नी और माँ, उचित और अनुचितका भेद बिलकुल भूल बैठे हैं। नशेमें धुत बैरिस्टर लोग नालियोंमें जा पड़े और पुलिसके आदमी उन्हें घर पहुँचायें, इस स्थितिपर तनिक विचार करके देखिए। मैंने दो अवसरोंपर जहाजोंके कप्तानोंको पीकर अपन होशहवास खो बैठते देखा है। उनमें अपने-अपने जहाजोंको सँभालनेकी क्षमता नहीं रह गई थी और उनके होशमें आनेतक दूसरोंको काम करना पड़ा। मदिरा और मांस दोनोंके सम्बन्धमें सबसे उत्तम नियम यही है: हमें खाने-पीने और मौज मनानेके लिए नहीं जीना चाहिए, बल्कि अपने शरीरको ईश्वरका मन्दिर बनाने और उसका उपयोग मनुष्यकी सेवा करनेके लिए ही खाना चाहिए। चिकित्साके लिए शराबकी आवश्यकता हो सकती है; जब जीवन चुक गया लगता हो, उस समय उसकी सहायतासे उसे कुछ समय बरकरार रखना सम्भव हो सकता है। मांसाहारके बिना पूर्णतः स्वस्थ रहना सम्भव है। अगर आप किसी सिपाहीमें क्रूरताकी प्रवृत्ति जगाना चाहते हों तो मांसाहारके बिना वैसा नहीं किया जा सकता। आपको शायद मालूम न हो कि जापानने जब पाश्चात्य सभ्यताका अनुकरण आरम्भ किया तो उसने अपने यहाँ गोमांस खाना अनिवार्य कर दिया।

प्र० : सैनिक मामलोंमें असहयोगकी भरपाई क्या असैनिक मामलोंमें सहयोग करनेसे नहीं हो जाती?

उ० : इसे अन्तिम प्रश्न मानना चाहिए। यह अच्छा प्रश्न है। पहली सभामें जहाँ कुछ मित्र लोग इकट्ठे हुए थे हमने इस विषयकी विशद चर्चा की थी। संक्षेपमें, मैं इस बातसे पूरी तरह सहमत हूँ कि ये दोनों सेवाएँ समान कोटिकी हैं। सैनिक मामलोंमें असहयोग और असैनिक मामलोंमें सहयोग दोनों एक साथ नहीं चल सकते। मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध रखे जा सकते हैं। बैशक, 'सैनिक सेवा' उपयुक्त शब्द नहीं है। क्योंकि सैनिक सेवा पर आधारित राज्यको सहारा देकर तो आप अप्रत्यक्ष रूपसे बराबर उसकी सैनिक सेवा कर ही रहे होते हैं। ट्रान्सवालमें यही कानून था। कुछ लोगोंको — भारतीय, बंटू तथा जुलू लोगोंको — कानून बनाकर सैनिक सेवासे वंचित रखा गया था। किन्तु उनसे उसके लिए अनिवार्य रूपसे पैसा लिया जाता था। वे

प्रकारान्तरसे सेवा करते थे। आपको असहयोगके क्षेत्रको विस्तृत करना होगा, लेकिन आप कैसे करेंगे, यह मैं नहीं कहूँगा। राज्यरचित सीमाओंको लाँघकर अपने पड़ोसियों की सेवा करनेका कोई अन्त नहीं है। ये सीमाएँ ईश्वरकी बनाई हुई नहीं हैं।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य : नारायण देसाई

२६०. भाषण : लोजानकी सभामें[1]

लोजान

८ दिसम्बर, १९३१

मुझे मालूम है कि आपके इस महान् महाद्वीपमें मेरे बहुत-सारे मित्र हैं। रोमाँ रोलाँसे मिलनेके लिए विलेन्यूवकी यात्रा करनेको मुझे एक स्टीमर छोड़ना पड़ा। यहाँ भी मैं वही बात कहूँगा जो मैंने पेरिसके नागरिकोंसे कही थी। मैं देख रहा हूँ कि पूरे पश्चिमका हृदय आज रुग्ण है। दुनिया अब जिस फौजी बोझके नीचे कराह रही है, आप उससे थक गये लगते हैं — मैं देख रहा हूँ कि आप अपने साथी इन्सानोंका खून बहाते थक गये हैं। पिछले युद्धने, जिसे झूठमूठ ही महायुद्ध कहा जाता है, आपको और मानव-जातिको बहुत-से बड़े-बड़े सबक सिखाये हैं। उस युद्धमें मानव-स्वभाव किसी भी तरह अपने उज्ज्वल रूपमें सामने नहीं आया। युद्धमें विजयी होनेके लिए किसी भी झूठ और छल-कपटको त्याज्य नहीं समझा गया। एक राष्ट्रके पक्षधरोंने दूसरे राष्ट्रपर गन्देसे-गन्दे आरोप लगाये और जवाबमें दूसरे राष्ट्रने और ज्यादा जहर उगला। किसी भी तरहके जुल्मसे परहेज नहीं किया गया। शत्रुके विनाशके लिए कोई भी हथकंडा अधम या निकृष्ट नहीं माना गया। कलके मित्र आज क्षण-भरमें ही शत्रु बन गये। न किसी तरहका सम्मान सुरक्षित रहा और न कोई चीज बच सकी। इतिहासकार हमें बताते हैं कि पिछले युद्धमें जितना खून बहा है उतना पहले कभी नहीं बहा था। पाश्चात्य सभ्यता तराजूमें तोली गई और पूरी नहीं उतरी, और उस युद्धके घातक प्रभावोंसे आप अभी उबर नहीं पाये हैं। इसके विपरीत, युद्धके दुष्परिणामको आप धीरे-धीरे किन्तु निश्चित तौरपर उत्तरोत्तर अधिकाधिक सघन रूपमें अनुभव कर रहे हैं। ज्यादातर राष्ट्र आज करीब-करीब दिवालियेपनकी स्थितिमें पहुँच गये हैं, जो युद्धका ही सीधा फल है। आप केवल आर्थिक दिवालियेपनके नहीं, बल्कि नैतिक दिवालियेपनके भी शिकार हैं। युद्ध समाप्त हुए अभी इतना समय नहीं बीता है कि उससे विरासतमें जो विभीषिका हमें मिली है उसका हम पूरा अन्दाजा लगा सकें। और यह अनिष्ट केवल यूरोपतक सीमित नहीं है। अपनी हदोंको

१. गांधीजी लोजानमें तीन सभाओंमें बोले थे। साधन-सूत्रसे यह पता नहीं चलता कि यह कौन-सी सभा थी। परन्तु **हिन्दुस्तान टाइम्स**, ११-१२-१९३१ की एक बहुत ही संक्षिप्त रिपोर्टसे यह लगता है कि यह वह सभा थी जो पीपुल्स हॉलमें हुई थी।

तोड़कर यह एशियामें पहुँच गया है और आज किसीको भी यह पता नहीं है कि वह अपने पैरोंपर खड़ा है या सिरके बल।

ऐसे समयमें भारतसे आशाका एक सन्देश आया है। भारत अपनी स्वतन्त्रता अहिंसा और सत्यके द्वारा प्राप्त करनेकी कोशिश कर रहा है। पिछले दस सालोंमें वह इन्हीं साधनोंको प्रयोगमें लानेके लिए प्रयत्नशील रहा है। दसियों हजार लोग इस आन्दोलनमें भाग ले चुके हैं। जिन्होंने इस आन्दोलनका अध्ययन किया है वे इस निष्कर्षपर पहुँचे हैं कि यह दृढ़ गतिसे आगे बढ़ रहा है। मेरा कहना यह है कि यदि भारत इस तथ्यका प्रत्यक्ष प्रदर्शन कर देता है कि भारत बूँद-भर भी रक्त बहाये बिना स्वतन्त्रता प्राप्त कर सकता है, तो यह दुनियाके लिए एक बड़ा सबक होगा। आप युद्धका एक नैतिक विकल्प खोजनेकी कोशिश कर रहे हैं। यह सम्भव है कि भारतने जो पद्धति अपनाई है वह युद्धका सही विकल्प साबित हो। मैं जानता हूँ कि अभी इस पद्धतिके बारेमें कुछ भी निश्चित रूपसे कहना जल्दबाजी होगी। परन्तु आज रात मेरा आपसे निवेदन यह है कि आपको भारतीय आन्दोलन और भारतीय तरीकोंका अध्ययन करना चाहिए। मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप इस आन्दोलनका अध्ययन पक्षपाती मित्रोंकी तरह नहीं, बल्कि निष्पक्ष आलोचकोंकी तरह करें। इसके प्रति अपना रुख अच्छे शिक्षार्थीका-सा रखिए, आन्दोलनका निष्पक्षतासे अध्ययन कीजिए और यदि आप इस निष्कर्षपर पहुँचें कि यह ईमानदारीके साथ अहिंसा और शान्तिपूर्ण उपायोंसे चलाया जा रहा है तो फिर सम्पूर्ण हृदयसे इस आन्दोलनमें कूद पड़िए। मुझे इस बातमें कतई सन्देह नहीं है कि आप ऐसा कर सकते हैं। आप यूरोपके जनमतको — विश्वके जनमतको — नये साँचेमें ढाल सकते हैं, जिससे कि वह दुर्निवार बन जाये। अहिंसात्मक आन्दोलन, स्वभावतः, अनुकूल जनमत तैयार करता है, वह अपनी बात पूरी जनताके आत्मपीड़न द्वारा कहता है। पर मुझे और आगे नहीं बढ़ना चाहिए। मेरी कोशिश अभी आपकी भूखको केवल चेतानेकी रही है। इस सभाकी अवधि ४५ मिनट है और जैसा कि मेरा कायदा है, मैं अपने समयका एक खासा भाग प्रश्नोंके लिए बचाये रखना चाहता हूँ। इसलिए मैं आपको इस बातके लिए आमन्त्रित करता हूँ कि आपको जो भी प्रश्न रखने हों वे आप रखें।

प्र० : [ऐसी खबर है कि आपने कहा है,] यदि आवश्यक हुआ तो भारतकी जनता हिंसाका सहारा लेगी। [क्या यह सही है?]

उ० : मुझे यह कहनेमें कोई झिझक नहीं है कि यह एक निराधार और मनगढ़न्त बात है। यह बहुत ही दुःखकी बात है कि पत्रकार अपनेको इतना गिरा लेते हैं कि झूठका प्रचार करने लगते हैं। मेरा आशय एक क्षणको भी यह नहीं है कि पत्रका सम्पादक झूठका प्रचार कर रहा था। पर रिपोर्टर स्वयं पत्रकार था और दोष उसीका है। लेकिन पत्रकारिताके सम्मानकी खातिर अब मेरा सुझाव यह है कि उस कथनको, जिसे मेरा बताया गया है, सुननेके बाद आपको उस रिपोर्टरसे पत्र-व्यवहार करना चाहिए और उसके साथ वही सलूक करना चाहिए जो कि एक बेईमान नौकरके साथ किया जाता है।

प्र० : श्री गांधी, क्या आपने सचमुच लोगोंको यह सलाह दी थी कि वे फौजमें भरती हों और हवामें गोली चलायें?

उ० : यह एक और मनगढ़न्त बात है। इस तरहका प्रश्न मुझसे पेरिसमें किया गया था और मैंने कहा था कि जो सैनिक फौजमें भरती होकर अपने मनको इस विचारसे सन्तोष देता है कि वह हवामें गोली चला रहा है, वह अपने अहिंसा-धर्म की प्रतिष्ठा नहीं बढ़ाता है। मेरी योजनामें तो ऐसा करनेवाला आदमी असत्य और कायरता दोनोंका दोषी माना जायेगा — कायरताका इसलिए कि वह कैदसे बचनेके लिए फौजमें भरती हुआ और असत्यका इसलिए कि भरती होनेके बाद उसने गोली नहीं चलाई। इससे युद्धके विरुद्ध युद्धके ध्येयको बट्टा लगता है। युद्धके प्रतिरोधियोंका आचरण सीजरकी पत्नीकी तरह सन्देहसे परे होना चाहिए। उनकी शक्ति इस प्रश्नके नैतिक आधारपर पूर्णतया आरूढ़ रहनेमें निहित है। काश, मेरा हिन्दू समाजपर काफी असर होता और मैं उन्हें मुसलमानों और सिखोंके आगे पूर्ण समर्पणकी सलाह दे सकता। जो लोग एक-दूसरेसे भयभीत हों उनसे निबटना सबसे कठिन काम है। हम इतने पौरुषहीन और हताश हो गये हैं कि हिन्दू, मुसलमान और सिख आपसमें एक-दूसरेसे डरते हैं और एक-दूसरेपर सन्देह करते हैं। भय व अविश्वाससे ग्रस्त लोग एक-दूसरेपर चोट करनेसे बाज नहीं आते हैं। हमारी स्थिति ऐसी दयनीय है।

असहयोग और अहिंसाकी पद्धति न केवल उचित है, बल्कि जिसे युद्धके न्याय-विरोधी होनेका विश्वास है, ऐसे हर आदमीका यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वह चाहे अकेला हो तो भी अहिंसात्मक असहयोग करे।

प्र० : यान्त्रिकताके बारेमें आपकी क्या राय है? आप उसे क्यों रोकते हैं?

उ० : यान्त्रिकतासे आपका आशय शायद मशीनपर आधारित इस जबरदस्त गति-विधिसे ही है। मैं जिसे रोकना चाहता हूँ वह मनुष्यपर मशीनका आधिपत्य है। इस समय हर काम मशीनसे करनेकी सनक इतनी बढ़ गई है कि हम मशीनके दास बनते जा रहे हैं। मशीनका उपयोग दो प्रयोजनोंके लिए होता है: (१) सामूहिक विनाशके लिए और (२) बड़े पैमानेपर उत्पादनके लिए। मैंने आपका ध्यान इस तथ्यकी ओर दिलाया कि यह आर्थिक संकट पिछले युद्धके कारण है, परन्तु साथ ही यह बड़े पैमानेपर किया जानेवाला उत्पादन भी इस आर्थिक संकटके लिए कम उत्तरदायी नहीं है।

प्र० : ईश्वर-प्रेम या मानव-प्रेम?

उ० : यह ऐसा प्रश्न है जिसमें आप कोई बात पहलेसे ही मानकर चलनेकी गलती कर रहे हैं। ईश्वर-प्रेम मानव-प्रेमसे भिन्न नहीं है। परन्तु यदि दोनों प्रेमोंमें द्वन्द्व हो तो मैं जानता हूँ कि द्वन्द्व स्वयं उस मनुष्यके भीतर है। इसलिए मैं उसे इस बातके लिए आमन्त्रित करूँगा कि वह अपने भीतर खोज करे। जब आपको मानव-प्रेम ईश्वर-प्रेमसे विच्छिन्न लगता है तो उसके मूलमें आपको कोई अधम उद्देश्य मिलेगा। ईश्वर-प्रेमके बिना सच्चा मानव-प्रेम मैं असम्भव मानता हूँ।

प्र० : पाखण्ड और झूठी बदनामीका कैसे मुकाबला किया जाये ?

उ० : दोनोंकी उपेक्षा करके। यह आन्दोलन ईश्वरकी प्रेरणासे विहीन कभी नहीं रहा है। उस प्रेरणाके बिना मैं अपनेको एक विश्वव्यापी आन्दोलन चलानेके अयोग्य मानता हूँ। आन्दोलनकी किसी भी उपलब्धिके लिए मैंने अपनेको कभी उत्तरदायी नहीं माना है। परन्तु आन्दोलनका यदि कोई बुरा प्रभाव पड़ा है तो उसके लिए मैंने अपनेको सदा उत्तरदायी समझा है, क्योंकि मैं ईश्वरके हाथोंमें एक दुर्बल और दोषमय यन्त्र हूँ। लेकिन मैंने इस आन्दोलनकी खोज नहीं की है; यह सीधे मुझे ईश्वरसे मिला है। अनुभवसे मैं यह बात जानता हूँ कि ईश्वरमें जीवन्त आस्थाके बिना इस आन्दोलनका संचालन असम्भव होगा।

प्र० : जर्मनी आज इतना पीड़ित है, आप वहाँ क्यों नहीं जाते ?

उ० : मुझे वहाँ जाकर बड़ी प्रसन्नता होती, पर कार्यक्रम इसकी अनुमति नहीं देता। मेरा हृदय जर्मनीमें था, जर्मनीमें है। पर मैं लाचार रहा हूँ।

प्र० : क्या मिस्र अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त कर सकता है ?

उ० : निस्सन्देह। यदि भारत स्वाधीन हो जाता है, तो मिस्र अपने-आप स्वाधीन हो जायेगा। भारतका स्वाधीन होना इतनी विराट् और दूरगामी घटना होगी कि हर देशमें नये जीवनकी धड़कन सुनाई देगी। वह महान् और शानदार चीज होगी।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य : नारायण देसाई

२६१. बातचीत : रोमाँ रोलाँसे

विलेन्यूव
९ दिसम्बर, १९३१

गांधीजी : मैकडॉनाल्डकी ईमानदारीमें मेरा विश्वास है भी और नहीं भी है; क्योंकि एक तरहसे वे उस घोषणापर कायम रहना चाहते हैं जो उन्होंने की है, पर उन्हें यह भी जानना चाहिए कि उस घोषणाका अर्थ केन्द्रमें उत्तरदायी शासनकी स्थापना नहीं है, जब कि वे कहते हैं कि उसमें यह चीज है और इस तरह जो बात सच नहीं है उसका हमें विश्वास दिलाना चाहते हैं। एक और अर्थमें भी मुझे वे ईमानदार नहीं लगे — अपनी बातचीतमें उनका रुख खुला नहीं था, टालमटोलका था। इसलिए उनके बारेमें मैं पूर्णतः अच्छी राय कायम नहीं कर सका। अपने कंधोंपर वे ऐसा दायित्व लिये हुए हैं जिसे वे ठीकसे वहन नहीं कर पाते। उनपर कामका बहुत बोझ है और मुझसे निबटना उनके लिए कठिन हो रहा है। मैं उन्हें एक योद्धा लगता हूँ; और दूसरी ओर, मेरी माँग इतनी ऊँची लगती है कि वे मुझे फँसा नहीं पाते। इसीलिए मुझे उनमें ईमानदारीकी कमीका आभास मिलता है। मगर हो सकता है, यह उनकी ईमानदारीकी कमी न होकर उनकी दुर्बलता ही हो।

रोमाँ रोलाँ : भारतके बारेमें उन्होंने काफी सुन्दर लिखा था।

गांधीजी : उनके विचार आज भी अनुकूल हैं। पर तब उनपर कोई दायित्व नहीं था। आज है।

रोमाँ रोलाँ : उनका वक्तव्य ठीक नहीं था। गोलमेज परिषद्के आपके आखिरी भाषणने बहुत-से लोगोंके दिलोंको छुआ है।

गांधीजी : "साफ-साफ बोल्शेविक विचारोंसे प्रेरित असाधारण भाषण।" वह भाषण संघ-संरचना समितिकी उस बैठकमें दिया गया था जिसमें व्यापार-सम्बन्धी भेदभावके बारेमें विचार किया जा रहा था। उससे मेरे मित्रोंमें बेचैनी पैदा हो गई। मैंने कहा था कि मैं या कांग्रेस किसी व्यक्तिके विरुद्ध इसलिए भेदभाव नहीं करेंगे कि वह अंग्रेज है। पर अन्य आधारोंपर भेदभाव होगा, और मैंने उनके आगे यह फार्मूला रखा : कोई भी हित, जो राष्ट्रीय हितके विरुद्ध है या वैध रूपसे अर्जित नहीं है, राज्य द्वारा ले लिया जायेगा, और मैंने कहा कि यह बात भारत-स्थित यूरोपीयोंपर भी लागू होगी। मैंने यह भी कहा कि ऐसा कार्यपालिकाके किसी आदेश द्वारा नहीं, बल्कि संघीय न्यायालयके आदेश द्वारा किया जायेगा।

[यह अध्यादेश] एक अमानवीय दस्तावेज है—रौलट अधिनियमसे भी खराब। भारत सरकारको अपने ही मातहतोंसे जो खतरा है, वह दूसरी तरहकी चीज है। उदार किस्मके निर्देशोंकी, जो विरले ही होते हैं, वह उपेक्षा करती है। परन्तु सभी ध्वंसात्मक निर्देशोंके पालनके लिए वह सदा तैयार रहती है, जब कि केन्द्रीय सत्ता अनुशासनका पालन नहीं करवा पाती। भारतके असैनिक अधिकारी-वर्गको मैंने सबसे बड़ी राजनीतिक गुप्त संसद (फ्रीमेसनरी) कहा है। इस असैनिक अधिकारी-वर्गकी सर्प-कुण्डलीके सामने खुफिया विभाग कुछ नहीं है। . . .

रोमाँ रोलाँ : जर्मन युवा-वर्ग युद्धसे पहलेकी अपेक्षा अब बिलकुल बदल गया है। युद्धसे पहले वहाँके युवकोंका सत्ताके ठोस मूल्यमें विश्वास था। वे उसे अब चूर-चूर होते देख चुके हैं। नया युवक सापेक्षताकी स्थितिमें रह रहा है — इसमें कोई आश्चर्य नहीं है, क्योंकि वे आईन्स्टीनके देशके हैं। जर्मन युवकोंको फ्रांस पुराने मूल्योंका देश लगता है, इसलिए जर्मन युवक नये आदर्शोंका अनुसरण करनेको तैयार हैं। वे फ्रांससे रुष्ट हैं, क्योंकि वह वर्तमानके सिरपर पड़ा अतीतका एक निरर्थक बोझ है। यूरोपके विषयमें हम विजेताको देखकर कोई धारणा नहीं बना सकते।

गांधीजी : भारतीय युवकोंमें चाहे बहुत बड़े बलिदानकी क्षमता न हो, पर वे अप्रतिरोधके प्रभावमें आ रहे हैं।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य : नारायण देसाई

२६२. भाषण : इंटरनेशनल सेनेटोरियममें

विलेन्यूव, जिनेवा
९ दिसम्बर, १९३१

जल्दीमें ही सही, लेकिन मैं यहाँ आ सका, यह मेरे लिए बहुत खुशीकी बात है। आप लोग सुखद परिवेशके बीच स्थित इस सुन्दर भवनमें रह रहे हैं, यह आपके लिए अवश्य ही आनंदका विषय होगा। आपने ठीक ही कहा है कि इस आरोग्यशाला (सेनेटोरियम) को केवल शारीरिक रोग ठीक करनेका काम ही नहीं करना चाहिए, बल्कि अन्तर्राष्ट्रीय सोहार्दको भी बढ़ावा देना चाहिए। हम देखते हैं कि शारीरिक आरोग्यका तो जीवनमें, आखिरकार, गौण महत्त्व ही है। शरीरको हुई क्षतिको तो आदमी सह भी सकता है, लेकिन आत्माको हुई क्षतिको नहीं। इसलिए मुझे यह देखकर बड़ी खुशी होती है कि आप आत्मासे सम्बन्धित चीजोंकी ओर भी ध्यान दे रहे हैं। मेरी यही कामना है कि आप अनेक वर्ष जीकर सेवा-कार्य करें, यहाँ रहनेवाले लोग पूर्ण स्वस्थ जीवनको प्राप्त करें और तत्पश्चात् अन्तर-र्राष्ट्रीय सौहार्द बढ़ानेके लिए उपयोगी काम करें।

प्र० : क्या मनोप्रभाव रोगको ठीक करनेमें सहायक होते हैं?

उ० : मुझे ऐसी आशंका है कि जबतक मानव-जातिका अस्तित्व है, रोग तो उसके साथ लगे ही रहेंगे। अगर मेरी चले तो मैं डाक्टरी इलाजको घटाकर कमसे-कम कर दूँ। यह नियम मैंने न केवल अपने जीवनमें बल्कि अपने सैकड़ों साथियोंके जीवनमें भी लागू किया है। मेरा खयाल है कि हमें जो रोग होते हैं, उनमें से अधिकांशका उपचार स्वास्थ्य-सफाईके नियमोंका पालन करनेसे हो सकता है, और मैं मानता हूँ कि जीवनमें, जो हर कदमपर खतरोंसे भरा हुआ है, हमें गम्भीर खतरोंको भी अपनाना चाहिए। इस बातसे हमें रुग्णावस्थामें बड़ी सान्त्वना मिली है। नियम यह है : हमें ऐसी सेवा-सुविधाकी बात भी मनमें नहीं लानी चाहिए जो दुनियाके सभी हिस्सोंमें रहनेवाले करोड़ों लोगोंको नहीं मिल सकती। उदाहरणके लिए, यहाँके चिकित्साशास्त्रके सौभाग्यशाली प्रोफेसरों और विद्यार्थियोंको तो यह सेवा-सुविधा प्राप्त हो सकती है, लेकिन आपकी तरह रुग्ण करोड़ों लोगोंको नहीं मिलती। यह बात मैं इस आरोग्यशालाकी आलोचना करनेके लिए नहीं कह रहा हूँ, बल्कि इसलिए कह रहा हूँ कि व्यक्तिगत रूपसे मैं ऐसी आरोग्यशालाओंको पसन्द नहीं करता। मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि अगर दुनियाके सभी लखपती लोग अपना सारा धन लगा दें तब भी वह, लोगोंको जिन लाखों आरोग्यशालाओंकी आवश्यकता है, उनके निर्माणके लिए पूरा नहीं पड़ेगा। आरोग्यके नियमोंको हमें इस हदतक कम कर देना चाहिए कि गरीबसे-गरीब लोग भी अपने जीवनमें उनका पालन कर सकें।

मैं रोगको ठीक करनेकी दृष्टिसे मनोप्रभावकी चर्चापर आता हूँ। इस चीजमें बहुत हदतक मेरा विश्वास है। मैं मानता हूँ कि स्वस्थ शरीरमें ही स्वस्थ मनका निवास होता है, और अगर आप लोग, जो कि चिकित्साशास्त्रके छात्र हैं, शरीरमें होनेवाले रोगोंका विश्लेषण करें तो आप पायेंगे कि उनमें से अधिकांशसे बचा जा सकता है और रोग पैदा करने तथा उसे बढ़ानेमें मनका बड़ा हाथ होता है। इसके विपरीत, यदि हम अपने शरीरको ज्यादा लाड़ देनेके बजाय सहनशक्तिका विकास करें तो हम इन रोगोंसे मुक्ति पा सकते हैं। जैसा कि आपमें से कुछ लोगोंको मालूम होगा, एक नीम-हकीमकी तरह मैं इस विषयका अध्ययन और इससे सम्बन्धित प्रयोग पिछले ३५ सालोंसे कर रहा हूँ। इसलिए मैं तो अपने अनुभव घंटोंतक बताता रह सकता हूँ।

प्र० : शारीरिक श्रमका नैतिक महत्त्व क्या है?

उ० : इसको मैं इतना अधिक महत्त्व देता हूँ कि मैंने जो संस्थाएँ स्थापित की हैं, उनमें रहनेवालों के लिए इसे एक पवित्र कर्त्तव्य माना गया है, और जो शारीरिक श्रम नहीं करता, वह चोरीका खाता है। जिसने पर्याप्त शारीरिक श्रम नहीं किया है, वह भोजनका अधिकारी नहीं है और मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि जब आदमी शारीरिक श्रमसे जी चुराता है तो वह अपने नैतिक विकासको रोकता है और मुझे पूरा विश्वास है कि यदि हम शारीरिक श्रमकी महत्ताको स्वीकार कर लें तो बहुत-सी बुराइयाँ अपने-आप मिट जायेंगी। रोटीके लिए श्रमका नियम यह था कि जिसने रोटीके लिए काम किया हो वही उसका अधिकारी है। आप देखते हैं कि जब ईसा मसीहने कहा कि 'तुम अपनी रोटी अपने ललाटके पसीनेसे कमाओगे' तब उन्होंने इस नियमका प्रतिपादन किया था। अगर इस नियमका पालन किया जाये तो दुनियामें बहुत कम व्याधियाँ होंगी और आज धरतीपर जो घृणित चीजें देखनेको मिलती हैं उनमें से बहुत कम रह जायेंगी।

प्र० : क्या यूरोपमें पूरी तरहसे आपके विचारोंके अनुसार जीवन व्यतीत करना सम्भव नहीं है?

उ० : असम्भव तो नहीं है, लेकिन कठिन अवश्य है। लेकिन कोई विचार कितना भी कठिन हो, उसे कार्य-रूप देनेके लिए पूरे साहस और लगनसे प्रयत्न करना आवश्यक है।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य : नारायण देसाई

२६३. भाषण : एक सभामें[1]

जिनेवा

१० दिसम्बर, १९३१

आपके देशके शानदार प्राकृतिक दृश्योंके बारेमें मैंने बहुत-कुछ सुना है, परन्तु जो-कुछ देखा, वह मेरी आशाओंसे भी अधिक निकला। जो प्रेम मुझे यहाँ मिला है, उससे आपके देशके प्राकृतिक दृश्योंको देखनेका आनन्द और बढ़ गया है। काश, मेरे पास अधिक समय होता और मैं अलग-अलग लोगोंसे परिचित हो पाता और आपके इस देशके सुन्दर स्थलोंको देख सकता! परन्तु मुझे आपके सामने अपने इस आनन्दका वर्णन करनेके लिए आपको रोके नहीं रखना चाहिए। मुझे मालूम है कि आप सब लोग, जो इस सभामें आये हैं, मध्याह्न-भोजनके अपने अवकाशसे वंचित हो गये हैं और मुझे आपका यह बहुमूल्य समय अपने आनन्दकी चर्चामें नष्ट नहीं करना चाहिए। मैं आपसे उस चीजकी चर्चा करना चाहता हूँ जिसके लिए मेरा जीवन सर्मापित है और जिसका विशेष रूपसे इतने बड़े पैमाने पर परीक्षण हो रहा है जितने बड़े पैमानेपर संसारमें पहले कभी नहीं हुआ था। मेरा आशय उन साधनोंसे है जो भारतमें स्वाधीनता प्राप्त करनेके लिए अपनाये गये हैं। इतिहास यह दिखाता है कि लोगोंको जब पराधीन कर लिया गया है और उन्होंने पराधीनतासे मुक्त होना चाहा है, तो उन्होंने विद्रोह किया है और शस्त्रोंके उपयोगका सहारा लिया है। दूसरी ओर, भारतमें हमने ऐसे साधनोंका सहारा लिया है जो विशुद्ध रूपसे अहिंसात्मक और शान्तिपूर्ण हैं। बाहरके लोगोंने इस बातकी साक्षी भरी है और मैं यहाँ इसकी साक्षी भरता हूँ कि हम अपने ध्येयकी प्राप्तिमें बहुत हदतक सफल हो गये लगते हैं। मैं जानता हूँ कि अभी परीक्षण चल रहा है। पूर्ण सफलताका मैं अभी दावा नहीं कर सकता। पर मैं आपसे यह कहनेकी हिम्मत करता हूँ कि यह अनुभव इतना आगे बढ़ चुका है कि इसका अध्ययन करना एक योग्य कार्य होगा। मैं यह भी कहता हूँ कि यदि यह परीक्षण पूर्णतया सफल हो जाता है, तो यह विश्व-शान्तिमें, जिसके लिए दुनिया आज प्यासी है, भारतका एक बड़ा योगदान होगा। आपके इस महान् देशमें राष्ट्र-संघका केन्द्रीय कार्यालय है। इस संघसे बड़े विलक्षण कार्य करनेकी अपेक्षा की जाती है। इससे यह अपेक्षा की जाती है कि यह युद्धको समाप्त कर देगा और, अपनी निजी शक्तिसे, परस्पर मतभेद रखनेवाले राष्ट्रोंके बीच मध्यस्थका काम करेगा। परन्तु मुझे सदा ऐसा लगा है कि संघको आवश्यक सत्ता प्राप्त नहीं है। यह यदि बिलकुल

१. यह सभा इंटरनेशनल वीमेंस लीग फॉर पीस ऐंड फ्रीडम (अन्तर्राष्ट्रीय महिला शान्ति-स्वतन्त्रता संघ)के तत्त्वावधानमें मध्याह्न-भोजनके समय विक्टोरिया हॉलमें आयोजित की गई थी और इसमें लगभग २००० लोग उपस्थित थे।

नहीं तो ज्यादातर सम्बन्धित राष्ट्रोंके निर्णयपर निर्भर है, और इसे निर्भर रहना भी है। मैं आपसे यह कहनेकी हिम्मत करता हूँ कि भारतमें हमने जिन साधनोंकी हिमायत की है, वे न केवल इस संघ-जैसे संगठनको, बल्कि विश्वके इस महान् उद्देश्यको लेकर चलनेवाले किसी भी विश्व-संगठनको अपनी बात मनवानेके लिए आवश्यक शक्ति प्रदान करते हैं, परन्तु आपसे इस आन्दोलनकी विभिन्न अवस्थाओंकी चर्चा कर मुझे आपको ज्यादा देर रोके रखना नहीं चाहिए। आपको इस आन्दोलनका केवल परिचय देकर और यह बताकर ही मुझे सन्तोष कर लेना चाहिए कि यदि यह आन्दोलन सफल हो जाता है तो इसके कितने सुन्दर परिणाम होंगे। मेरे पास बहुत-से प्रश्न आये हैं, और मैं आपको अपनी जिज्ञासाएँ शान्त करनेके लिए यथासम्भव अधिकसे-अधिक समय दे सकूँ, इस खयालसे मैंने आपको इस आन्दोलनका बहुत थोड़े समयमें सिर्फ संक्षिप्त परिचय दे दिया है। अबतक मैं दस निमट ले चुका हूँ। मैं केवल थोड़े-से सवाल ले रहा हूँ, जो एम० प्रिवाने छाँटे हैं।

एक प्रश्न यह है कि लन्दनमें मैंने क्या कहा और क्या नहीं कहा।

मेरे मुँहसे यह कहलवाया गया है: "आतंकवाद और हिंसासे मेरी कोई सहानुभूति नहीं है। परन्तु यदि आवश्यक हुआ तो भारत हिंसाका सहारा लेगा, इसे आप चाहे जो नाम दीजिए।"

वह पैरा मैंने सुधारनेके लिए सम्पादकके पास भेजा, लेकिन सुधार करनेके बाद सामने आई वह भी पहली रिपोर्टकी पूरी पुष्टि करती है। परन्तु मैंने देखा कि उन्होंने भाषणोंके वे अंश नहीं छापे जिनसे उन्होंने — जैसा कि वे बताते हैं — ये उद्धरण लिये हैं। गोलमेज परिषद्के मेरे सभी भाषणोंकी सरकारी रिपोर्ट छपी है, और मैं आपसे केवल यही कह सकता हूँ कि उन भाषणोंमें कहीं एक शब्द भी ऐसा नहीं मिल सकेगा जो इस कथनकी पुष्टि करता हो। फिर, यह कहा गया है कि मैंने इसी तरहकी बात कुछ अन्य भाषणोंमें भी कही है। इस बीच मैं आपसे यह निवेदन करता हूँ कि आप मेरी बातपर विश्वास करें कि मैंने इस तरहकी बात कभी नहीं कही है कि यदि आवश्यक हुआ तो जन-साधारण हिंसाका सहारा लेगा। होशोहवासमें रहते हुए इस तरहका बयान देना मैं अपने लिए असम्भव मानता हूँ। अहिंसा नीति नहीं बल्कि धर्म है। मैं ईश्वरसे यही प्रार्थना करूँगा कि वह मुझे इतनी आस्था दे कि मैं हिंसाका किसी भी रूपमें समर्थन करनेकी बजाय अपना जीवन बलिदान कर सकूँ। इस मामलेने क्योंकि कुछ स्थानीय महत्त्व प्राप्त कर लिया है, इसलिए मैं उस संवाददातासे सादर माँग करता हूँ कि वह अपना नाम प्रकट करे और रिपोर्टको फिरसे प्रस्तुत करे। यद्यपि कल मैं आपके क्षेत्रसे बाहर हूँगा, पर मै आपको पूर्ण सन्तोष देनेकी कोशिश करूँगा, फिर चाहे मैं भारतसे बाहर ही क्यों न रहूँ। मैं ऐसा इसलिए करना चाहता हूँ क्योंकि मुझे आपकी सद्भावना चाहिए। मेरे आन्दोलनको और मुझे आपके सामनेकी गई अपनी इस घोषणाके साथ ही जीना या मरना है कि मुझे हर हालतमें विशुद्ध अहिंसा के मार्गपर अडिग

रहना है। साथ ही एक व्यक्तिगत स्पष्टीकरण पर मैंने जो आपके कुछ-एक मिनट लिये हैं, उसके लिए मैं आपसे क्षमा चाहता हूँ।

प्र० : समाचार-पत्रोंने जब यह रिपोर्ट दी कि आपने सैनिकोंको हवामें गोली चलानेकी सलाह दी थी, तो आपने उसका इतना गम्भीर विरोध क्यों किया ?

उ० : मैंने गम्भीर विरोध किया या नहीं, यह मैं नहीं जानता। पर मैंने अपनी स्थिति स्पष्ट की थी। मैं नहीं चाहता कि एक भी सैनिक सेनामें सेवा करनेकी शपथ लेनेके बाद, हवामें गोली चलाकर लोगोंको गुमराह करे। मैं अपनेको एक सैनिक मानता हूँ — शान्तिका सैनिक। अनुशासन और सत्यके मूल्यको मैं जानता हूँ और मैं सैनिक-कर्त्तव्यके निर्वाहके लिए शपथबद्ध किसी सैनिकके लिए इस बातको पौरुष-हीनता समझूँगा कि वह जब हवामें गोली चलाकर आदेशका उल्लंघन करता है तब उसके परिणामोंको ग्रहण न करे। मेरी रायमें यदि कोई सैनिक इस निष्कर्षपर पहुँचता है कि यह कार्य अमानवीय तथा मनुष्यके गौरवको घटानेवाला है, तो उसे हथियार रख देने चाहिए और आज्ञोल्लंघनका दण्ड भुगतना चाहिए।

प्र० : मजदूर हिंसाके बिना न्याय कैसे प्राप्त कर सकते हैं ? यदि पूँजीपति बलप्रयोग करते हैं तो मजदूर दबावका उपयोग क्यों न करें ?

उ० : यह पुराना कानून है, जंगलका कानून — घूँसेका जवाब घूँसा। और मैं आपको बता चुका हूँ कि यह प्रयोग मैं मुख्यतः जंगलके उस कानूनका विकल्प पानेके लिए ही कर रहा हूँ जो मनुष्यकी गरिमाके विरुद्ध है। शायद आपको पता नहीं है कि मैं अहमदाबादके एक मजदूर-संघका प्रधान सलाहकार माना जाता हूँ और यह संघ मजदूर समस्याओंके विशेषज्ञोंकी सराहना प्राप्त कर चुका है। इस मजदूर-संघके द्वारा हम मालिकों और कर्मचारियोंके बीच उठनेवाले सवालोंको सुलझानेके लिए अहिंसाके तरीके काममें लानेकी कोशिश कर रहे हैं। इसलिए जो-कुछ मैं अब आपको बताने जा रहा हूँ वह वास्तविक अनुभवपर आधारित है — बिलकुल उसी क्षेत्रकी बात है जिसके बारेमें यह प्रश्न पूछा गया है। मेरी विनम्र रायमें, मजदूरोंमें यदि एकता हो और वे आत्म-बलिदानको तैयार हों तो वे अपनी रक्षा कर सकते हैं। पूँजीवाद चाहे कितना ही उत्पीड़क क्यों न हो, पर मुझे विश्वास है कि जो लोग मजदूरोंसे सम्बद्ध हैं और उनका मार्गदर्शन कर रहे हैं उन्हें यह पता नहीं है कि मजदूरोंके पास ऐसे साधन हैं जो पूँजीपतियोंके पास कदापि नहीं हो सकते। मजदूर यदि सिर्फ यह समझ लें कि पूँजी श्रमके बिना बिलकुल असहाय है, तो मजदूर आसानीसे अपनी शक्ति प्राप्त कर लेंगे। दुर्भाग्यसे हम पूँजीके इस सम्मोहनकारी संकेत और प्रभावके अधीन हो गये हैं कि पृथ्वीपर पूँजी ही सब-कुछ है। परन्तु क्षण-भर सोचनेसे ही यह स्पष्ट हो जायेगा कि मजदूरोंके पास ऐसी पूँजी है जो पूँजीपतियोंके पास कभी नहीं होती। रस्किनने अपने युगमें यह सिखाया था कि मजदूरोंको अनुपम अवसर प्राप्त है। परन्तु उनकी बात हमारे पल्ले ही नहीं पड़ी इस समय एक अंग्रेज इसी तरहका प्रयोग कर रहा है। वह अर्थशास्त्री और पूँजीपति भी है। परन्तु अपनी आर्थिक शोधोंसे वह उन्हीं निष्कर्षोंपर पहुँचा है जिनपर रस्किन

अन्तःप्रेरणासे पहुँचे थे, और उसने एक महत्त्वपूर्ण संदेशको फिरसे याद दिलाई है। वह कहता है कि यह सोचना कि धातुका एक टुकड़ा पूँजी है, गलत है; यह सोचना भी गलत है कि उत्पादनका अमुक हिस्सा पूँजी है। वह आगे कहता है कि यदि हम मूल स्रोततक जायें तो पायेंगे श्रम ही पूँजी है और जीवन्त पूँजीको अर्थशास्त्रकी शब्दावलीमें बाँधा नहीं किया जा सकता, वह अनन्त है। उसी नियम और सत्यके आधारपर, हम अहमदाबादके मजदूर-संघको चला रहे हैं और सरकारसे लड़ रहे हैं। यह वही नियम है जिसे स्वीकार करनेसे चम्पारनमें १,७००,००० लोगोंको एक युगसे चली आती दासतासे मुक्ति मिली। वह जुल्म किस तरहका था,[1] यह बताकर मुझे आपको अटकाये नहीं रखना चाहिए। पर जिनकी उस समस्यामें दिलचस्पी है, वे हर उस तथ्यका, जो मैंने आपके आगे रखा है, अध्ययन कर सकते हैं। अब मैं आपको यह बताता हूँ कि हमने क्या किया है। अंग्रेजी भाषामें — बल्कि सभी भाषाओंमें — एक बहुत ही सशक्त शब्द है। वह शब्द है — 'नो' (नहीं)। भेदकी बात यह है कि जब पूँजी श्रमसे 'हाँ' कहलवाना चाहती है तो श्रम गरज-कर कहता है 'नहीं'! और श्रम शीघ्र ही यह समझ जाता है कि यदि वह 'नहीं' कहना चाहे तो उसके आगे 'नहीं' कहनेका विकल्प है। उसे डरनेकी जरूरत नहीं है। इस बातसे कि पूँजीके पास बन्दूकें और जहरीली गैस है, जरा भी फर्क नहीं पड़ेगा। यदि श्रम अपने 'नहीं'को अंजाम देकर अपनी गरिमाको प्रतिष्ठित कर दे तो पूँजी इतनेसे ही बिलकुल लाचार हो जायेगी। उस हालतमें श्रमिकको प्रत्याक्रमणकी जरूरत नहीं रह जाती बल्कि वह गोलियों और जहरीली गैसको झेलता हुआ विरोधीके रूपमें खड़ा रहता है और अपने 'नहीं' पर जोर देता रहता है। पर श्रमिक प्रायः असफल क्यों हो जाता है — यह मैं आपको बताता हूँ। जैसा मैंने सुझाया है उस तरहसे पूँजीको असहाय बनानेके बजाय, वह पूँजीपर कब्जा करना और — पूँजीपति शब्दके निकृष्ट अर्थोंमें — स्वयं पूँजीपति होना चाहता है (यह बात मैं खुद श्रमिक होनेके नाते कह रहा हूँ)। इसलिए पूँजीपति, जो ठीक तरह सुरक्षित और संगठित है, श्रमिकमें उसी लक्ष्यकी इच्छा देखकर, श्रमिकके दमनके लिए श्रमिकका ही उपयोग करता है। और यदि हम सचमुच इस सम्मोहन-कारी जादूके वशमें न हों तो हममें से हर स्त्री-पुरुष बिना किसी कठिनाईके इस मूल सचाईको समझ सकेगा। जीवनके विभिन्न क्षेत्रोंमें शानदार सफलताएँ प्राप्त करनेके बाद, मैं यह बात अधिकारके साथ कह रहा हूँ। मैंने आपके आगे जो चीज रखी है वह अतिमानवीय नहीं है, बल्कि हर श्रमिकके वशकी है। आप देखेंगे कि श्रमिकसे जो-कुछ करनेके लिए कहा जा रहा है, वह उससे अधिक और कुछ नहीं है जो स्विस सैनिक आज कर रहे हैं। स्विस सैनिक, निस्सन्देह, अपना नाश अपनी जेबमें लिये फिरता है। मैं चाहता हूँ कि श्रमिक सैनिककी क्रूरताकी, अर्थात् दूसरोंको मौतके घाट पहुँचानेकी योग्यताकी नकल न करके, उसके साहसकी नकल करें। और मैं

१. यह वाक्य **यंग इंडिया,** १०-१२-१९३१ में प्रकाशित महादेव देसाईकी रिपोर्टसे लिया गया है। नीलके खेतोंपर बेगारकी समाप्तिके लिए चलाये गये चम्पारन-संघर्षके ब्योरेके लिए देखिए खण्ड १३-३-१४।

आपसे कहता हूँ कि जो श्रमिक बिना हथियार उठाये मृत्युका वरण करता है, वह सिरसे पाँवतक हथियारोंसे लैस मनुष्यसे कहीं ऊँचे साहसका परिचय देता है। यद्यपि यह एक आकर्षक विषय है, पर मुझे, इच्छा न होते हुए भी, इसे छोड़कर चौथे प्रश्नपर आना चाहिए।

प्र० : निःशस्त्रीकरण मुख्य रूपसे बड़े देशोंपर निर्भर है, फिर स्विट्ज़रलैंड-जैसे छोटे, तटस्थ और अनाक्रामक देशपर उसे क्यों लादा जाये?

उ० : पहली बात तो यह कि आपकी इस तटस्थ धरतीसे मैं केवल स्विट्जरलैंड के आगे नहीं, बल्कि सभी देशोंके आगे अपनी बात रख रहा हूँ। यदि आप इस सन्देशको यूरोपके अन्य भागोंमें ले जायें, तो मैं सारे आरोपसे मुक्त हो जाऊँगा। स्विट्जरलैंड क्योंकि तटस्थ और अनाक्रामक देश है, इसलिए स्विट्जरलैंडको इस सेनाकी जरूरत नहीं है। दूसरे, आपसे यह बात मैंने आपकी अतिथिपरायणता और आपकी विशेष सुविधापूर्ण स्थितिके कारण कही। क्या आपके लिए यह बेहतर नहीं होगा कि आप संसारको निरस्त्रीकरणका पाठ सिखाएँ और यह दिखा दें कि आप इतने वीर हैं कि सेनाके बिना अपना काम चला सकते हैं?

प्र० : सेनाके विकासकी पवित्र परम्पराओंकी आप उपेक्षा क्यों करते हैं? क्या आपको यह नहीं मालूम कि स्विस सेनाकी मात्र उपस्थितिने ही हमें विदेशी सेनाओं द्वारा रौंदे जानेकी विभीषिकासे बचाया था?

उ० : प्रश्नकर्त्ता क्या मुझे यह कहनेके लिए क्षमा करेंगे कि इस प्रश्नमें दोहरा अज्ञान छिपा है? वे इस बातपर दुःख प्रकट करते हैं कि यदि आप सैनिकका पेशा छोड़ देते हैं तो आपको सेवा और बलिदानकी जो शिक्षा मिलती है वह नहीं मिलेगी। किसीको यह न मान बैठना चाहिए कि सेनामें भरती होनेसे छुटकारा मिल जानेका मतलब यह है कि वह किसी और भी कठिन और उदात्त काममें नहीं लगाया जायेगा मैं जब आपसे श्रमके विषयमें बोल रहा था तो मैंने आपको बताया था कि श्रमको सेनाके सभी महान गुण — सहन-शक्ति, मौतको चुनौती और बलिदान — आत्मसात् करने चाहिए। आप यदि अपनेको निरस्त्र करेंगे तो इसका अर्थ यह नहीं है कि आप मौज उड़ायेंगे। सैनिकका पेशा यदि आप छोड़ देते हैं तो यह नहीं होगा कि आप अपने घरोंकी सेवाके कर्त्तव्यसे मुक्त हो जायेंगे। इसके विपरीत, आपकी स्त्रियाँ और बच्चेतक आपके घरोंकी रक्षामें भाग लेंगे। यह बात भी मैं आपसे बिना अनुभवके नहीं कह रहा हूँ। जो छोटी-सी संस्था[1] हम चला रहे हैं, उसमें हम स्त्रियों और बच्चोंतक को संस्थाकी रक्षा करनेकी शिक्षा दे रहे हैं, क्योंकि हम चोरों और लुटेरोंके बीच रह रहे हैं। जैसे ही आप दूसरोंके जीवनकी रक्षाके लिए अपना स्वयंका जीवन देना सीख लेते हैं, हर चीज सहज और सरल हो जाती है। और अन्तमें यह चीज सचमुच भुला दी गई है कि जो सुरक्षा व्यक्तिको सर्वथा निर्दोष और अनपकारी बननेसे प्राप्त होती

१. आशय यहाँ साबरमतीके सत्याग्रह आश्रमसे है।

है, वह अधिकसे-अधिक मात्रामें शस्त्रास्त्र उपलब्ध होनेसे भी प्राप्त नहीं हो सकती। अज्ञानका दूसरा भाग प्रश्नके दूसरे भागमें है। मैं इस कथनको सच माननेसे नम्रतापूर्वक इनकार करता हूँ कि स्विस सेनाकी उपस्थितिने स्विट्ज़रलैंडको युद्धकी लपेटसे बचाया। बेल्जियमकी अपनी सेना थी, पर वह बचा नहीं। आप मेरी इस बातपर यकीन करें कि यदि विरोधी सेनाएँ स्विट्जरलैंडमें से गुजरना चाहतीं तो वे आपसे भी लड़तीं। आप भी बदलेमें लड़ सकते थे, पर अहिंसासे आप कहीं ज्यादा अच्छी तरह लड़ सकते थे।

प्र० : एक तटस्थ देशके लिए क्या यह कायरता नहीं होगी कि वह किसी और देशको अपने क्षेत्रमें से गुजरने दे और तीसरे देशकी पीठमें छुरा भोंकने दे? एक तटस्थ देश, जो निःशस्त्र हो गया है, इस तरहकी कार्रवाईको कैसे रोक सकता है?

उ० : यह जोखिम उठाते हुए भी कि मुझे कल्पना-लोकमें रहनेवाला या मूर्ख समझा जा सकता है, मुझे इसका जवाब उसी ढंगसे देना चाहिए जो मुझे मालूम है। यदि आप अपने देशको किसी सेनाके हाथों तबाह होने देते हैं तो तटस्थ देशके नाते यह आपकी कायरता होगी। पर अभी क्षण-भर पहले मैंने आपको बताया था कि युद्धके सैनिकों और अहिंसाके सैनिकोंमें एक चीज समान है। यदि मैं स्विट्जरलैंडका नागरिक या इस संघीय राज्यका प्रधान होता तो मैं यह करता कि उस सेनाको रसद और परिवहनकी कोई सुविधा न देकर उसे रास्ता देनेसे इनकार कर देता। दूसरे, स्विट्जरलैंडमें फिरसे एक थर्मोपली रचकर आप पुरुषों, स्त्रियों और बच्चोंकी एक जीती-जागती दीवार खड़ी कर सकते थे और उन्हें अपनी लाशोंपर से गुजरनेका निमन्त्रण दे सकते थे। आप कह सकते हैं कि इस तरहकी चीज मानव-अनुभव और मनुष्यकी सहन-शक्तिसे परे है। पर मैं आपको बता सकता हूँ कि पिछले साल हमने जो-कुछ किया उसके बाद यह मानव-अनुभवसे परेकी चीज नहीं रही। हमने दिखा दिया कि यह बिलकुल सम्भव है। स्त्रियोंने जरा भी कायरता दिखाये बिना लाठियाँ खाईं। पेशावरमें हजारों लोगोंने किसी भी तरहकी हिंसाका सहारा लिये बिना गोलियोंकी बौछार सही। सुरक्षित मार्ग चाहनेवाली किसी सेनाके सामने इस तरहके स्त्री-पुरुषोंके खड़े हो जानेकी जरा कल्पना तो कीजिए। आप कहेंगे कि उनके ऊपरसे जाना तो बहुत नृशंसतापूर्ण होगा; पर फिर भी आप अपना कर्त्तव्य पूरा कर देते और अपने-आपको नष्ट हो जाने देते। जो सेना लाशोंके ऊपरसे जानेकी हिम्मत करती है, वह भी उस अनुभवको दोहरा नहीं सकेगी। आप चाहें तो साधारण स्त्री-पुरुषोंमें इस तरहके साहसकी सम्भावनापर अविश्वास कर सकते हैं। पर आपको यह मानना होगा कि अहिंसा अधिक कड़ी धातुकी बनी है। वह कमजोरोंका हथियार कभी नहीं मानी गई बल्कि खूब मजबूत हृदय रखनेवालों का हथियार मानी गई है।

प्र० : अन्तर्राष्ट्रीय रेड क्रॉस विश्वको एक विशिष्ट देन है। आपका इसके बारेमें क्या खयाल है? इसने हजारोंका जीवन बचाया है न?

उ० : मैं यह स्वीकार करते हुए लज्जाका अनुभव करता हूँ कि इस अद्भुत और शानदार संगठनके इतिहासकी मुझे जानकारी नहीं है। यदि इसने लाखों लोगोंको

बचाया है तो मैं इसका अभिवादन करता हूँ। परन्तु इस सम्मान-प्रदर्शनके बाद, क्या मैं यह निवेदन कर सकता हूँ कि इस संगठनको युद्धके बाद सहायता देनेकी बात नहीं सोचनी चाहिए, बल्कि युद्धके बिना सहायता देनेकी बात सोचनी चाहिए। यदि युद्धमें उसके दोषको कम करनेवाली कुछ विशेषताएँ न होतीं, उसके पीछे साहस न होता तो वह घृणित चीज होती, और उसे नष्ट करनेके लिए किसी भाषणकी आवश्यकता न पड़ती। परन्तु जो चीज आपको यहाँ सुझाई जा रही है वह युद्धकी सभी शाखाओंसे, जिसमें रेड क्रॉस संगठन भी आ जाता है, बहुत अधिक महान् है। आप मेरी इस बातपर विश्वास कीजिए कि लाखों लोग ऐसे हैं जो अपनीही गलतीसे कष्टमें पड़े हुए हैं। इस धरतीपर लाखों फटेहाल घर हैं। इसलिए भावी अहिंसात्मक संस्थाएँ जब अन्तर्राष्ट्रीय सेवा प्रारम्भ करेंगी तो उनके लिए करनेको काफी काम होगा। स्विट्जरलैंड इस विषयमें विश्वका मार्ग-प्रदर्शन कर सकता है।

प्र० : क्या आप अलग-अलग संगठनोंके लिए कोई संदेश दे सकते हैं?

उ० : मैं तो यह कहूँगा कि जो प्रश्न पूछे गये हैं उन सबका उत्तर देते हुए यदि मैंने कोई संदेश नहीं दिया है, तो मुझे यह मान लेना चाहिए कि मुझमें कोई और सन्देश देनेकी योग्यता नहीं है।

प्र० : हम तो स्वभावतः ईसाई धर्मके सन्देशका अनुगमन करना चाहेंगे, लेकिन कृपया यह बताइए कि आपके सन्देश और ईसाई सन्देशमें क्या अन्तर है?

उ० : मैं कोई मौलिक सन्देश देनेका कतई दावा नहीं कर रहा हूँ। मेरा सन्देश उतना ही पुराना है जितनी कि यह पृथ्वी और मैं नहीं जानता कि यह ईसाई संदेशसे तनिक भी भिन्न है। यदि आपका आशय अहिंसासे है, तो मुझे यह जानकर दुःख होना चाहिए कि आपने ईसाके 'गिरि-प्रवचन' की शिक्षाको छोड़ दिया है। यूरोपके ईसाई यदि ईसाके सन्देशको अपने जीवनमें लागू करें तो इससे अधिक प्रसन्नताकी बात मेरे लिए कोई नहीं होगी। दूसरा प्रश्न अज्ञानका द्योतक है। यदि मैं इसका बाइबिलकी भाषामें उत्तर दूँ तो कहूँगा — जबतक आप अपनेको मिटा देनेको तैयार नहीं हैं, आप अपनेको बचा नहीं सकते।[१]

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य : नारायण देसाई

१. सेंट मार्क ८/३५ तथा सेंट ल्यूक ९/२४।

२६४. बातचीत : रोमाँ रोलाँसे

[१० दिसम्बर, १९३१ या उसके पश्चात्][1]

प्र० : मनुष्यमें क्रूरता या दुष्टता इसलिए नहीं आती कि वह क्रूर या दुष्ट बनना चाहता है, बल्कि इसलिए आती है कि उसकी रुचि ही विकृत होती है। इस हालतमें समाजको दायित्वकी भावनासे लगभग शून्य इन लोगोंसे बचानेके लिए अप्रतिरोधकी नीति क्या कर सकती है?

उ० : मुझे हिंसाका प्रयोग करनेकी जरूरत तो बिलकुल नहीं होगी। अलबत्ता, उन्हें अंकुशमें रखना होगा। मैं किसी-न-किसी प्रकारकी सामाजिक शक्तिका प्रयोग करूँगा। इसके प्रयोगको मैं हिंसा नहीं कहूँगा। अगर मेरा भाई पागल हो जाता है तो मैं उसके हाथोंमें बेड़ियाँ तो पहना ही दूंगा।

जहाँ हिंसा करनेका मन्तव्य न हो वहाँ हिंसा नहीं होती। इसी तरह वह भी उसमें हिंसाका अनुभव नहीं करेगा। इसके विपरीत जब उसका दिमाग ठीक होगा, वह मुझे धन्यवाद देगा। पागलपनकी अवस्थामें वह हिंसाका अनुभव करेगा, उसका विरोध भी करेगा। मैं इस विरोधका बुरा नहीं मानूंगा, क्योंकि मेरे कार्यके पीछे शुद्ध प्रेमकी प्रेरणा होगी; इसके पीछे तो प्रेममें जो स्वार्थकी भावना होती है वह भी नहीं होगी। अगर मैं उसके हाथ बाँध रहा हूँ तो वह अपनेको चोटसे बचानेके लिए नहीं। अगर मुझे ऐसा लगे कि उसको बचानेकी कोशिश करते हुए खुद मुझको चोट लगेगी तो मैं उस चोटको सहनेके लिए भी सहर्ष तैयार हो जाऊँगा। इसी प्रकारका व्यवहार मैं इन अर्धविक्षिप्त लोगोंके साथ भी करूँगा, मैं उनके साथ रोगी-जैसा व्यवहार करूँगा, उन्हें ऐसे रोगोंका इलाज करनेवाले किसी अस्पतालमें रखूंगा; उनको हृदयहीन जेलरोंकी देख-रेखमें नहीं, बल्कि ऐसे चिकित्सकोंकी देख-रेखमें रखूँगा जिन्होंने उनकी परिस्थितियोंका अध्ययन किया हो। मैं उन्हें स्नेहपूर्ण सेवासे सराबोर कर दूंगा। इसका मतलब यह होगा कि मैं मनुष्यको नहीं, बल्कि उसके दोषोंके लिए जिम्मेवार प्रणालीको सुधारनेका प्रयत्न कर रहा हूँ।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य : नारायण देसाई

1. साधन-सूत्रमें तिथिका उल्लेख नहीं है, लेकिन ये टीपें १० दिसम्बरको नेनेवामें हुई दोनोंकी मुलाकातके बाद ली गई थीं।

२६५. भेंट : सुखोतिना टॉल्स्टॉयको[1]

रोम

[१३ दिसम्बर, १९३१][2]

सुखोतिना टॉल्स्टॉय : आपसे मिलनेकी आशा मैं जाने कबसे लगाये थी। अगर मेरे पिता जीवित होते तो आपके अहिंसामय स्वातन्त्र्य-संग्रामके बारेमें सुनकर बड़े प्रसन्न होते।

गांधीजी : बेशक। और क्या आप उनकी वही पुत्री हैं जिन्होंने मुझे अपने पिताकी ओरसे वह प्रसिद्ध पत्र[3] लिखा था?

वह दूसरी पुत्री थी। उस पत्रको लेकर टॉल्स्टॉयकी सन्तानोंके खिलाफ जाँच-पड़ताल की गई थी।

सु० टॉ० : हम छः भाई-बहन अभी जीवित हैं। हम दो बहनें तो पिताजी के सिद्धान्तोंपर चलते हैं, लेकिन चारों भाई नहीं। आप जानते ही हैं कि पिताजी ने हम सबको आचार-विचारकी पूरी स्वतन्त्रता दे रखी है, और यद्यपि मेरे ये भाई उनका बड़ा सम्मान करते थे, लेकिन उनके सिद्धान्तोंको माननेको तैयार नहीं थे।

मैं रोमाँ रोलाँकी मित्र थी।

गांधीजी : थीं क्यों? क्या अब उनकी मित्र नहीं हैं?

सु० टॉ० : नहीं, दो साल पहलेतक उनसे मेरी बड़ी मैत्री थी। वे मुझे अकसर पत्र लिखा करते थ और मैं भी लिखती थी।

गांधीजी : पर अब क्या हो गया?

सु० टॉ० : अब मैं देखती हूँ कि बोल्शेविज्म और बोल्शेविक तरीकोंसे उनकी सहानुभूति है। मैं बोल्शेविकोंके ध्येयपर आपत्ति नहीं करती, लेकिन उनका यह सिद्धान्त कि साध्य ठीक है तो उसके लिए चाहे जो भी साधन अपनाना उचित है, मुझे बहुत भयंकर लगता है। रोमाँ रोलाँ, जो अहिंसामें विश्वास करते हैं, उनके साथ कैसे सहानुभूति रख सकते हैं?

गांधीजी : मान लीजिए कि आप जो कहती हैं, सच है। लेकिन उस हालतमें आपके लिए क्या यह और भी जरूरी नहीं हो जाता कि आप उन्हें पत्र लिखकर अपनी भावनाओंसे अवगत करायें? दो साल पूर्वतक आप उनकी मित्र रही हैं, इसलिए क्या आपका यह कर्त्तव्य नहीं है कि आप उन्हें साफ-साफ और पूरी तरह सब-कुछ लिखें? आखिरकार वे टॉल्स्टॉयके बाद यूरोपके एक सबसे सत्यनिष्ठ और

१. महादेव देसाईके "लेटर फ्रॉम यूरोप" (यूरोपका पत्र) से उद्धृत।

२. "दैनन्दिनी, १९३१", में इस तिथिके एक इन्दराजसे।

३. देखिए खण्ड ९, पृष्ठ ६०१।

ईमानदार व्यक्ति हैं। आपके पिताकी तरह ही वे वृद्ध, थके हुए और वर्त्तमान युगके छल-फरेबसे दुःखी आदमी हैं और आपके पिताकी ही तरह उनमें बच्चोंका-सा यह भोलापन है कि अगर कोई — चाहे वह बड़ा बुद्धिमान आदमी हो या मूर्ख — उनको उनकी गलती बताये तो वे उसका अन्यथा अर्थ नहीं लगाते हैं।

सु० टॉ० : मैं जानती हूँ कि उनमें ये सारे गुण हैं। युद्धके दिनोंमें वही एक व्यक्ति थे जो बहादुरीके साथ उसके खिलाफ खड़े रहे और आज भी खड़े हैं। मैं यह भी जानती हूँ कि वे मेरे पितापर अबतक लिखी पुस्तकोंमें से सबसे अच्छी पुस्तकके रचयिता हैं। लेकिन पता नहीं क्यों, मुझे एक संकोच-सा हो रहा है, मैंने वास्तवमें उनके नाम एक पत्र लिखा भी, लेकिन उसे भेजा नहीं है। अगर आप कहें तो अब भेज दूँ।

गांधीजी : भेज दीजिए। मैं चाहता हूँ, आप उसे अवश्य भेजें।

सु० टॉ० : लेकिन तब मैं यह लिख दूँगी कि पत्र आपके कहनेपर भेज रही हूँ।

गांधीजी : हाँ, आप वैसा लिख सकती हैं। मैं भी लिखूँगा।[1]

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १४-१-१९३२

२६६. भाषण : महिलाओंकी सभा, रोममें[2]

रोम
[१३ दिसम्बर, १९३१][3]

अहिंसक लड़ाईकी खूबसूरती यह है कि इसमें पुरुषोंकी तरह स्त्रियाँ भी हिस्सा ले सकती हैं। हिंसक लड़ाईमें उस तरह हिस्सा लेना स्त्रियोंके बसमें नहीं है जिस तरह पुरुष ले सकते हैं। हिंसक लड़ाईमें स्त्रियोंको ऐसी सुविधा नहीं है, और भारतमें पिछली अहिंसक लड़ाईमें स्त्रियोंने पुरुषोंसे भी अच्छा काम किया है। कारण सीधा-सादा है। अहिंसक लड़ाई अधिक-से-अधिक कष्टसहनकी अपेक्षा रखती है, और स्त्रियोंसे अधिक शुद्ध और उदात्त कष्ट-सहन और कौन कर सकता है? भारतकी स्त्रियाँ परदेसे निकलकर राष्ट्रका काम करनेको आगे आईं। उन्होंने देखा कि राष्ट्र उनसे, केवल वे अपनी-अपनी गृहस्थीकी देख-रेख करें, इससे कुछ अधिक अपेक्षा रखता है। उन्होंने सरकारी आदेशोंको भंग करके नमक बनाया, उन्होंने विदेशी वस्त्रों तथा शराबकी दुकानोंपर धरना दिया और विक्रेता तथा खरीदार दोनोंको इन चीजोंकी खरीद-बिक्रीसे विमुख करनेकी कोशिश की। रातमें देर-देरतक वे अपने हृदयमें उत्साह और दया लेकर शराबखानोंमें शराबियोंको समझाने-बुझानेमें लगी रहीं। उन्होंने जेल-यात्रा की

१. देखिए "पत्र : रोमाँ रोलाँको", २०-१२-१९३१।
२. महादेव देसाईके "लेटर फ्रॉम यूरोप" (यूरोपका पत्र) मे उद्धृत।
३. "दैनन्दिनी, १९३१", के एक इन्दराजके अनुसार।

और लाठियोंके इतने प्रहार सहे जितने प्रहार सहनेका साहस पुरुषोंमें भी बहुत कमने ही दिखाया। अगर पाश्चात्य संसारकी स्त्रियाँ पशु-वृत्तिकी बननेमें ही पुरुषोंसे होड़ करनेकी कोशिश करना चाहती हैं, तो फिर भारतकी महिलाओंमें उनके सीखने लायक कुछ नहीं है। उन्हें अपने पुत्रों और पतियोंको लोगोंको मारनेके लिए भेजनेमें आनन्दका अनुभव करना और उनकी बहादुरीपर उन्हें बधाई देना छोड़ना पड़ेगा।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १४-१-१९३२

२६७. पत्र : ब्रिस्कोको

१४ दिसम्बर, १९३१

प्रिय श्री ब्रिस्को,

देवदासको लिखा आपका पत्र मिला। मैं आयरलैंड न आ सका और श्री डी वैलेरासे न मिल सका, इसका मुझे दुःख है। मैं वहाँ आनेकी आशा लगाये हुए था, लेकिन भारतसे अत्यावश्यक बुलावा आ जानेके कारण मैं वहाँ आ नहीं सका।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[पुनश्च :]

श्रीमती वडने मेरे लिए जो तकलीफें उठाईं उनके लिए उनसे मेरा धन्यवाद कहें।

मो० क० गां०

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४५२०) से; सौजन्य : आर० ब्रिस्को

२६८. एक ऑटोग्राफ

[१५ दिसम्बर, १९३१ या उसके पूर्व][1]

सत्यनिष्ठ बनो।

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २३३३) से।

१. इसी सफेपर गांधीजी के ऑटोग्राफके नीचे मदनमोहन मालवीयके भी ऑटोग्राफ हैं। उसमें उन्होंने १५ दिसम्बर, १९३१ की तारीख दी है।

२६९. पत्र : देवी वेस्टको

एस० एस० 'पिलसना'
१५ दिसम्बर, १९३१

प्रिय देवी,[१]

मैं बराबर पत्र लिखना चाहता रहा, लेकिन समय ही नहीं मिल पाया। आज हम लाल सागरमें हैं। पहले मैं जो सो नहीं पाया, अब धीरे-धीरे उसकी कसर निकाल रहा हूँ और बीच-बीचमें पत्र लिखता रहता हूँ। मुझे म्युरियलसे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि तुमने उसके पास जाना तय किया है। किंग्सले हॉलके लिए तुम बड़े कामकी सिद्ध होगी और मैं जानता हूँ कि तुम वहाँ सुखी भी रहोगी। मुझे नियमित रूपसे पत्र लिखती रहना।

हमारे दलमें नौ लोग हैं और हम सब डेकपर ही यात्रा कर रहे हैं। मौसम अब भी ठंडा तो है, लेकिन आनन्ददायक है। तुम्हारा बिदाई-पत्र मिला था।

सस्नेह,

भाई

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४४३७)से; सौजन्य: ए० एच० वेस्ट

२७०. तार : क्रॉफ्टको[२]

पोर्ट सईद
१७ दिसम्बर, १९३१

क्रॉफ्ट
इंडिया ऑफिस
लन्दन

तारके लिए धन्यवाद। 'जर्नेल डी' इटालिया' में कही गई बातें बिलकुल झूठ। रोममें पत्र-प्रतिनिधियोंको कोई भेंट नहीं दी। सबसे बादमें जो भेंट दी वह विलेन्यूवमें रायटरके प्रतिनिधिको दी। उसमें मैंने भारतके

१. ऐडा वेस्ट, ए० एच० वेस्टकी बहन।

२. सर सैम्युअल होर (बादमें वाइकाउंट टेम्पलवुड)ने अपनी कृति **नाइन ट्रबल्ड ईयर्स** (कॉलिन्स, १९५४) में लिखा है कि जब उन्होंने गांधीजी द्वारा **जर्नेल डी' इटालियाके** प्रतिनिधिके समक्ष ऐसा वक्तव्य देनेकी गलत खबर पढ़ी तो वे इतने घबराये कि उन्होंने तुरन्त उसकी पुष्टिके लिए गांधीजी को तार भेजा है। उत्तरमें उन्होंने लिखा कि मैंने "ऐसा कोई वक्तव्य नहीं दिया और जिस भेंटकी खबर छापी गई है, वह मनगढ़न्त है।" यहाँ सैम्युअल होरने जिस उत्तरका उल्लेख किया है वह शायद यही तार था।

लोगोंसे जल्दबाजीमें किसी निर्णयपर पहुँचनेसे मना करते हुए मेरे वक्तव्यकी प्रतीक्षा करनेको कहा। मैं उतावलीमें ऐसा कोई कदम नहीं उठाऊँगा जिससे बात बिगड़े और अगर सीधी कार्रवाई करना दुर्भाग्यसे आवश्यक ही हो गया तब भी मैं पहले अधिकारियोंसे पूरी आरजू-मिन्नत करके झगड़ेको टालनेकी कोशिश करके देखूंगा। कृपया इन बातोंको आप अधिक-से-अधिक प्रचारित करें।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९३८९) से; सौजन्य: इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी

२७१. पत्र: अगाथा हैरिसनको

पोर्ट सईद
१७ दिसम्बर, १९३१

प्रिय अगाथा,

यह एक पंक्ति सिर्फ यह बतानेको लिख रहा हूँ कि मैं तुम्हें बराबर याद करता रहा हूँ। ईश्वर करे, तुम्हारा काम आगे बढ़े।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४४९)से।

टाइम्सके अनुसार गांधीजी को 'एक अधिकृत सूत्र' से जो तार भेजा गया वह इस प्रकार था:

"अखबारोंमें खबर छपी है कि जहाजपर चढ़नेके बाद आपने **जर्नेल डी'इटालिया**के प्रतिनिधिके समक्ष एक वक्तव्य दिया, जिसमें इस तरहकी बातें कहीं:

१. गोलमेज परिषद्के परिणामस्वरूप भारतीय राष्ट्र तथा ब्रिटिश सरकारके सम्बन्ध निश्चित रूपसे खराब हो गये हैं।

२. आप तुरन्त इंग्लैंडके खिलाफ संघर्ष शुरू कर देनेका खयाल लेकर भारत लौट रहे हैं।

३. बहिष्कार अब ब्रिटेनके संकटको और भी गम्भीर बना देनेका साधन साबित होगा।

४. हम कर नहीं देंगे, हम किसी भी तरहसे इंग्लैंडके लिए काम नहीं करेंगे, हम ब्रिटिश अधिकारियोंको जनतासे बिलकुल अलग कर देंगे और उनकी राजनीति तथा उनकी संस्थाओंका भी ऐसा ही हाल बना देंगे। हम सभी तरहके ब्रिटिश मालका पूरा बहिष्कार करेंगे।

यहाँ आपके कुछ मित्र सोचते हैं कि निश्चय ही आपकी बातोंको गलत ढंगसे पेश किया गया है; अगर ऐसा हो तो समाचारका खण्डन करते हुए तार भेजना वांछनीय।"

गांधीजी द्वारा किये गये खण्डनके बावजूद **जर्नेल डी'इटालिया**का प्रतिनिधि यही कहता रहा कि मुलाकातका विवरण सच्चा है। गांधीजी को १९३४ में, जब उनसे उक्त भेंटके बारेमें पूछा गया, पुनः इसकी चर्चा करनी पड़ी।

२७२. भेंट : रायटरके प्रतिनिधिको

पोर्ट सईद
१७ दिसम्बर, १९३१

महात्मा गांधी यहाँ दोपहरको पहुँचे। यहाँ उन्होंने कई शिष्टमण्डलोंसे मुलाकात की। इनमें एक वफदवालोंका शिष्टमण्डल भी था। उन्होंने फोटो भी खिचवाये और कई ऑटोग्राफ भी दिये। रायटरके प्रतिनिधिके पूछनेपर उन्होंने 'जर्नेल डी' इटालिया'में छपे उस मुलाकातके विवरणको झूठा बताया जिसमें उनपर यह कहनेका आरोप लगाया गया है कि वे अपने मनमें फिरसे संघर्ष शुरू करनेका खयाल लेकर भारत लौट रहे हैं। उन्होंने कहा कि उन्होंने रोममें किसी भी पत्रकारसे मुलाकात नहीं की थी। उन्होंने आगे कहा :

मैं किसी निष्कर्षपर नहीं पहुँचा हूँ, और स्वभावत: जबतक मैं बम्बई पहुँच कर कार्य-समितिके सदस्योंसे बातचीत न कर लूँ तबतक किसी निष्कर्षपर नहीं पहुँच सकता।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १९-१२-१९३१

२७३. पत्र : मणिलाल और सुशीलाको

अदन पहुँचनेके पहले
१९ दिसम्बर, १९३१

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम दोनोंके पत्र तो नहीं बल्कि कभी-कभी रुक्के अवश्य मिले हैं। क्योंकि मैं नहीं लिख पाता हूँ इसलिए तुम्हें कोई खास उलाहना भी नहीं दे सकता। किन्तु मेरे न लिख पानेके तो निश्चय ही कुछ सबल कारण थे। लन्दनमें न तो सोनेका ठिकाना था और न खानेका। अपना खाना साथ लेकर निकलता था और जहाँ मौका मिल जाता, खा लिया करता था। इस बार पत्र तो शायद ही किसीको लिखा होगा और 'यंग इंडिया' और 'नवजीवन'के लिए लिखनेका काम सर्वथा बन्द ही कर देना पड़ा था। किन्तु तुम्हारे सामने तो लिखने अथवा थोड़ा-सा ही लिखनेका कोई कारण ही नहीं था। किन्तु 'बानियाकी बान न जाये' वाली कहावत तुमपर लागू होती है। वैसे उद्यमीके लिए दूसरी ही कहावत है—'रसरी आवत-जातते सिल पर परत निशान'। तो फिर प्रयत्नसे मनुष्य क्या नहीं कर सकता।

हम आज लाल सागरमें पहुँच चुके हैं। हम नौ आदमी हैं और सभी डेकके यात्री हैं। डेकपर सुविधा तो कोई नहीं होती लेकिन हमें सब सुविधाएँ मिल रही हैं, इसलिए चिन्ता करनेकी बात तो है ही नहीं। यह तो मैंने डेककी [सर्वसाधारण] स्थिति सूचित करनेके विचारसे लिखा है।

मैं २८ वीं तारीखको बम्बई पहुँच जाऊँगा। देखना है, वहाँ क्या होता है। संघर्ष छिड़ जाये तो तुरन्त आ जाना जरूरी मत मानना। संघर्षका रूप देख-समझकर आना। जबतक वहाँका कोई ठीक प्रबन्ध न हो जाये तबतक मत आना। तुम सबकी तबीयत अच्छी है; वह देशमें आकर बिगड़ जाये, यह भी मुझे पसन्द नहीं होगा। तथापि मेरी इच्छा-अनिच्छाका विचार न करके जो कर्त्तव्य जान पड़े उसका पालन करना। क्योंकि कह नहीं सकता कि इसके बाद पत्र-व्यवहारका समय मिल पाता है या नहीं। यह भी हो सकता है कि मुझे वहाँ पहुँचते ही गिरफ्तार कर लिया जाये।

शान्ति पैसा मिल चुकनेके बाद रहेगा, ऐसी बात तो थी भी नहीं। इसलिए उसके चले जानेसे मुझे आश्चर्य नहीं हुआ है। फिलहाल वहाँ काम किस तरह चला रहे हो, सो तुमने नहीं लिखा। वहाँ शास्त्रीजी पहुँचे हैं; उनकी सेवा तो करोगे ही। एन्ड्रयूज और सरोजिनीदेवी तो यहाँ हैं ही।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४७८७) से।

२७४. पत्र : मार्किओनेस विटेलेस्खीको

एस० एस० 'पिलसना'
[१९][1] दिसम्बर, १९३१

प्रिय बहन,

आपका लम्बा पत्र मिला। अगर आप अपने विषयमें कम सोचें और आपके सामने जो कर्त्तव्य है उसमें तत्काल जुट जायें तो आपको शान्ति प्राप्त हो जायेगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २७६८) से।

१. साधन-सूत्रमें यह अंक ११ जैसा लगता है। उस दिन गांधीजी विलेन्यूवमें थे। पत्रपर अदनकी २३ दिसम्बरकी डाककी मोहर लगी हुई है इससे लगता है कि भूलसे १९ के स्थानपर ११ लिखा गया है।

२७५. पत्र : रोमाँ रोलाँको

एस० एस० 'पिलसना'
२० दिसम्बर, १९३१

प्रिय मित्र और भाई,

आपसे मेरा अनुरोध है कि आप टॉल्स्टॉय साहबकी पुत्रीको पत्र लिखकर बोल्शेविज्मके सम्बन्धमें उनकी शंकाओंका समाधान करें।[1] हम सबके प्रति जनरल साहब और श्रीमती मॉरिस, दोनोंका व्यवहार बड़ा स्नेहपूर्ण रहा। घरमें प्रवेश करते ही हमें लगा, मानों हम उन्हींके परिवारके सदस्य हों। मुसोलिनी तो मेरे लिए एक पहेली है। उनके कई सुधार मुझे अच्छे लगे। जान पड़ता है, किसानोंके लिए उन्होंने बहुत किया है। मैं यह स्वीकार करता हूँ कि इस सबमें बड़ी सख्तीसे काम लिया जा रहा है। लेकिन चूँकि हिंसा पाश्चात्य समाजका आधार है, इसलिए मुसोलिनीके सुधार निष्पक्ष अध्ययनके लायक हैं। गरीबोंके लिए उनकी चिन्ता, अति-नागरीकरण का विरोध, पूँजी और श्रमके बीच सामंजस्य स्थापित करनेके उनके प्रयत्न, ये सब मुझे विशेष ध्यान देने योग्य लगते हैं। मैं चाहूँगा कि आप मेरे लाभके लिए इन विषयोंपर प्रकाश डालें। मेरी अपनी बुनियादी आपत्ति यह है कि ये सुधार अनिवार्य कर दिये गये हैं। लेकिन ऐसा तो सभी लोकतान्त्रिक संस्थाओंमें किया जाता है। जो चीज मुझे आकर्षित करती है वह यह कि मुसोलिनीकी कठोरताके पीछे जनताकी सेवा करनेकी इच्छा है। उनके जोरदार भाषणोंके पीछे भी ईमानदारीका एक तत्त्व है और जनताके लिए उत्कट प्रेम भी। मुझे यह भी लगता है कि इटलीके अधिकांश लोग मुसोलिनीकी फौलादी सरकारसे प्रेम करते हैं। मैं यह नहीं चाहता कि आप तुरन्त उत्तर देनेका कष्ट करें, मेरा अनुरोध है कि आप सुविधासे यह काम करें। कहनेकी जरूरत नहीं कि मैं इस विषयपर सार्वजनिक रूपसे कुछ नहीं लिखना चाहता। अभी तो मैंने आपको ऐसा व्यक्ति मानकर जो इस विषयको मुझसे ज्यादा अच्छी तरह और निकटतासे जानता है, आपके सामने केवल ये प्रश्न रख दिये हैं। मैं समझता हूँ कि अगर आप जनवरीसे मार्चके बीच सर्दीके मौसममें यहाँ आयें तो आप यहाँकी आबोहवाको मजेमें बरदाश्त कर सकते हैं और हो सकता है, उससे आपको कुछ लाभ भी हो। आप हवाई जहाजसे भी बखूबी आ सकते हैं, लेकिन मैं यह ज्यादा पसन्द करूँगा कि आप जलमार्गसे आयें। अगर आप इस प्रस्तावको गम्भीरतासे लें तो हम इस सम्बन्धमें एक सुनिश्चित कार्यक्रम भी भेज सकेंगे।

सस्नेह,

आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९४४१)से; सौजन्य : आर० के० प्रभु

१. देखिए "भेंट : सुखोतिना टॉल्स्टॉयसे", १३-१२-१९३१।

२७६. पत्र : कार्ल हीथको

एस० एस० 'पिलसना'
२० दिसम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके मैत्रीपूर्ण बिदाई-पत्रके लिए धन्यवाद। यह विचार मेरे लिए बहुत मूल्यवान होगा कि भारतके पक्षके बहुत-से समर्थकोंमें मैं उन लोगोंको भी गिन सकता हूँ जिनके नाम आपने भेजे हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२६)से।

२७७. भारतीय सेना

[२१ दिसम्बर, १९३१][1]

गोलमेज परिषद्के अन्तिम दिन प्रधान मन्त्री द्वारा की गई घोषणाके पीछे चाहे जितनी ईमानदारी हो, वह राष्ट्रीय माँगको पूरा करनेकी दृष्टिसे सर्वथा अपर्याप्त थी, और इसलिए अगर उसमें कुछ और जोड़ने-घटानेकी गुंजाइश न हो तो वह सर्वथा अस्वीकार्य थी। मगर दुःख तो यह देखकर होता है कि इस सम्बन्धमें अंग्रेज जाति क्या सोचती-समझती है, इसका सही निदर्शन उक्त घोषणामें हुआ है।

उत्तरदायित्वकी सच्ची कसौटी प्रतिरक्षा तथा वित्तके नियन्त्रणका अधिकार है। किन्तु यह घोषणा इन दोनों विषयोंके सम्बन्धमें बहुत साफ है। भारतीयोंको नियन्त्रणका अधिकार नहीं मिलनेवाला है — प्रतिरक्षापर तो बिलकुल नहीं और वित्तपर भी लगभग नहीं ही।

इस विचित्र परिस्थितिका कारण भारतके सम्बन्धमें इंग्लैंडमें फैला घोर अज्ञान है। बहुत-से अच्छेसे-अच्छे अंग्रेज ऐसा मानते हैं कि हम अपनी रक्षा आप नहीं कर सकते और न अपनी वित्त-व्यवस्थाको ही स्वयं सँभाल सकते हैं। अगर बात ऐसी ही है तो निश्चय ही हम जो पूर्ण स्वराज्य चाहते हैं, वह अभी हमसे बहुत दूर है।

लेकिन मेरा दावा है कि हममें अपनी सुरक्षा तथा वित्त-व्यवस्थाको सँभालनेकी पूरी क्षमता है। भारतकी सेना कैसी है? मोटे तौरपर इसमें साठ हजार ब्रिटिश

१. "दैनन्दिनी, १९३१"के एक इन्दराजके अनुसार गांधीजी ने इस तारीखको **इंडियन न्यूज** (जो १९३२ से **इंडिया रिव्यू**के नामसे प्रकाशित होने लगा था)के लिए एक लेख लिखा। शायद यह वही लेख है।

और एक लाख साठ हजार भारतीय सिपाही हैं — सबके-सब किरायेके टट्टू। भारतीय सिपाहियोंका चुनाव यह देखकर किया जाता है कि उनमें कोई राष्ट्रीय भावना न हो। उन्हें एक प्रकारसे ऐसा प्रशिक्षण दिया जाता है जिससे वे अपने-आपको विदेशी समझें, उन साधारण लोगोंको अवहेलनाकी दृष्टिसे देखें जिनसे उनका कोई साम्य नहीं है। इस सारी सेनाका उपयोग बाहरी आक्रमणोंके लिए, भारतमें ब्रिटिश हितों तथा ब्रिटेनवालोंकी जानकी सुरक्षाके लिए किया जाता है।

इस सेनाको मैं भारतके अन्दर राष्ट्रीयताके लिए और भारतके बाहर उसके पड़ोसियोंकी स्वतन्त्रताके लिए खतरा मानता हूँ। ब्रिटेनवालोंके भारत आनेके पूर्व भी तो भारत चाहे जैसे भी हो जीवित था ही और वह अपनी संस्कृतिकी भी रक्षा कर पा रहा था। भारतकी सुरक्षा अपने पड़ोसियोंसे मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध और अहिंसक असहयोगके बलपर किसी भी राष्ट्रके द्वारा अपने शोषणका विरोध करनेकी उसकी क्षमतामें निहित है।

राष्ट्रीय सरकार स्थापित होनेपर उसका पहला काम यह होना चाहिए कि वह इस खतरेको, इस सेनाको खत्म कर दे। अगर इसको कायम रखा जा सकता है तो इसी शर्तपर कि इसको घटाकर इतना कम कर दिया जाये जिससे इसकी ठीक व्यवस्था हो सके और ब्रिटिश सरकार सम्मानपूर्वक शान्तिपूर्ण ढंगसे इसका नियन्त्रण राष्ट्रीय सरकारको सौंप दे। ब्रिटिश सरकारने भारतीय जनताकी उचित आकांक्षाओंको दबानेके लिए यह सेना खड़ी करके उसके प्रति जो अपराध किया है उसका यह न्यूनतम प्रायश्चित्त है।

अगर ब्रिटिश सरकार यह बुनियादी न्याय करनेका अपना स्पष्ट कर्त्तव्य नहीं देख पाती तो राष्ट्रवादी दलको तबतक अपना संघर्ष जारी रखना है जबतक कि कठोर अनुभवसे उसके सामने इसकी आवश्यकता स्पष्ट नहीं हो जाती। भावी भारतीय सेना किरायेके टट्टुओंसे नहीं बल्कि स्वेच्छासे सेवा करनेवाले सच्चे सैनिकोंसे बनी हुई होगी और उसका स्वरूप बहुत-कुछ पुलिस-संगठनवाला होगा।

लेकिन ब्रिटेनके लोगोंको तो ऐसा माननेकी तालीम दी गई है कि भारतकी सेना ब्रिटिश हकूमतकी सबसे बड़ी देन है और भारतको उसके लिए सदा ब्रिटेनका आभारी रहना चाहिए। 'इंडिया रिव्यू' के सम्पादकको इस घोर अज्ञानको दूर करना है। मैं चाहूँगा कि वे इसके लिए परिश्रमपूर्वक उन तथ्यों और आँकड़ोंका अध्ययन करें जो बताते हैं कि भारतीय सेनाका गठन किस तरह किया गया है और किस प्रकार उसके पीछे निहित कल्पनाके अनुसार उसका उपयोग भारत और उसके पड़ोसियोंको लूटनेके लिए किया जाता रहा है।

[अंग्रेजीसे]

इंडिया रिव्यू, १६-१-१९३२

२७८. सिंहावलोकन

[२३ दिसम्बर, १९३१][1]

मैंने जबसे 'यंग इंडिया' के सम्पादक-पदका दायित्व सँभाला है तबसे ऐसा कभी नहीं हुआ कि बीमार अथवा कैद न रहते हुए भी 'यंग इंडिया' या 'नवजीवन' के लिए कुछ-न-कुछ न भेजूँ। लेकिन मेरे इस बारके लन्दन-प्रवासमें ऐसी स्थिति नहीं रही। वहाँ मुझे लगातार एकके-बाद-एक काममें व्यस्त रहना पड़ता था और इतना ज्यादा काम था कि आधी-आधी रातके बाद भी जगे रहना पड़ता था। इसलिए इन पत्रोंके लिए कुछ भी लिख पाना मेरे लिए असम्भव ही रहा। सौभाग्यसे महादेव देसाई मेरे साथ थे और यद्यपि उनपर भी कामका बेहिसाब बोझ था, लेकिन वे 'यंग इंडिया' के लिए पूरी साप्ताहिक खुराक भेज देनेका समय निकाल ही लेते थे।

फिर भी, पाठक मुझसे लन्दन-यात्राके अपने अनुभव और प्रतिक्रियाएँ देनेकी अपेक्षा तो करेंगे ही।

यद्यपि मैं वहाँ बहुत डरता-घबराता गया था, लेकिन मुझे वहाँ जानेका कोई दुःख नहीं है। वहाँ जिम्मेवार अंग्रेज पुरुषों तथा स्त्रियोंसे मेरा सम्पर्क हुआ और साधारण लोगोंसे भी। हमें चाहे फिर एक और मोर्चा लेना पड़े या नहीं, ये अनुभव भविष्यमें अमूल्य महत्त्वके साबित होंगे। आप किसके साथ लड़ रहे हैं या किसके साथ आपका व्यवहार चल रहा है, यह जानना कोई कम महत्त्वकी बात नहीं है।

यह बहुत अच्छा संयोग था कि किंग्सले हॉल सेवाश्रमके प्राण म्युरिअल लेस्टरने मुझे अपनी बस्तीमें ठहरनेका निमन्त्रण दिया और मैंने उस निमन्त्रणको स्वीकार भी कर लिया। किंग्सले हॉल और श्री बिड़लाके आर्य भवन, इन्हीं दो स्थानों में से एकको चुनना था। निर्णय लेनेमें न तो मुझे कोई कठिनाई हुई, न श्री बिड़लाको ही। लेकिन भारतीय भाइयोंने आर्य भवनमें ठहरनेके लिए स्वभावतः मुझपर बहुत जोर डाला। अनुभवसे सिद्ध हो गया कि किंग्सले हॉल मेरे ठहरनेका आदर्श स्थान था। यह लन्दनके गरीबोंकी बस्तीके बीचमें बना हुआ है और केवल उन्हींकी सेवार्थ समर्पित है। म्युरिअल लेस्टरकी प्रेरणापर बहुत-सी स्त्रियों और कुछ पुरुषोंने भी इस सेवाके निमित्त अपनेको समर्पित कर दिया है। इस विशाल भवनके किसी कोनेका भी अन्यथा उपयोग नहीं किया जाता। यहाँ धार्मिक गोष्ठी और पूजा-प्रार्थना होती है, मनोरंजनकी व्यवस्था है, भाषणोंका आयोजन होता है, बिलियर्ड खेलनेकी व्यवस्था है, वाचनालय आदि हैं और ये सब गरीबोंके उपयोगके लिए हैं। यहाँ रहनेवाले लोग अत्यन्त सादा जीवन व्यतीत करते हैं। पूरे आश्रममें एक भी गैर-जरूरी उपस्कर नहीं है। आश्रमवासी छोटे-छोटे कमरोंमें रहते हैं, जिन्हें सेल कहा जाता है। वहाँ हम पाँच लोगोंके रहनेकी व्यवस्था करनेमें भी बड़ी कठिनाई हुई।

1. यह तारीख "दैनन्दिनी, १९३१" में इसी तारीखमें दर्ज इन्दराजसे ली गई है।

लेकिन जहाँ स्नेह होता है वहाँ जगह न होनेपर भी जगह निकल ही आती है। चार आश्रमवासियोंने अपना-अपना कमरा छोड़ दिया और ये कमरे हमें दे दिये गये। बिस्तर वगैरह माँगकर काम चलाना पड़ा। सौभाग्यसे हम सबके पास कम्बल काफी थे, और चूँकि हम लोगोंको फर्शपर बैठनेकी आदत थी, इसलिए जो चीजें माँगकर लाई गई थीं, उनमें से अधिकांश हमने वापस कर दीं। इसमें सन्देह नहीं कि मेरा वहाँ रहना आश्रमवालोंके लिए समय, स्थान तथा अन्य दृष्टियोंसे भी बहुत असुविधाजनक था, लेकिन वहाँके नेक लोग मेरे वहाँसे हटनेकी बात सुननेको तैयार ही नहीं थे। उनकी स्नेहपूर्ण, मूक और अलक्षित सेवाएँ प्राप्त करके मैं धन्य हो गया। लन्दनके ईस्ट ऐंडके गरीब लोगोंके साथ मेरा जीवन्त सम्पर्क मेरे लिए सतत आनन्दका विषय था। कहनेकी जरूरत नहीं कि मैं वहाँ ठीक उसी तरह रहा जिस तरह भारतमें रहता हूँ, और ईस्ट लन्दनकी सड़कोंपर सुबह-सुबहका वह घूमना तो मेरी स्मृतिमें सदा बना रहेगा। इस प्रातर्भ्रमणमें जो लोग मेरे साथ होते थे और जिन्हें म्युरियल आने देती थीं, उनके साथ मेरी अन्तरंग बातचीत होती थी। वहाँ म्युरियल सबको मुझसे बातचीत करनेकी छूट नहीं देती थीं, क्योंकि उन्हें मेरे समयका बड़ा खयाल रहता था। अगर वे ऐसा कुछ सुन लेती थीं कि उनकी अनुपस्थितिमें लोगोंने मेरा वक्त बरबाद किया तो वे बहुत नाराज होती थीं।

ईस्ट लन्दनमें रहते हुए मुझे मानव-स्वभावके सर्वोत्तम पक्षका परिचय मिला और मेरे इस सहज विश्वासकी पुष्टि हुई कि गहराईमें उतरकर देखें तो पूर्वी और पश्चिमी दुनिया-जैसी कोई चीज नहीं है। जब ईस्ट ऐंडके लोग मुस्कराकर मेरा अभिवादन करते थे तो मैं साफ देख सकता था कि उनमें कोई दुर्भावना नहीं है और वे चाहते हैं कि भारत अपनी खोई हुई स्वतन्त्रता पुनः प्राप्त करे। अगर मेरे इंग्लैंडके और भी निकट आनेकी कोई गुंजाइश थी तो इस अनुभवने मुझे उसके और निकट ला दिया है। मेरा झगड़ा व्यक्तियोंसे कभी नहीं होता, वह तो उनके रंग-ढंग और कार्योंसे होता है। लेकिन ईस्ट लन्दनके सीधे-सादे गरीब लोगोंके साथ, जिनमें बच्चे भी शामिल हैं, मेरा निकट-सम्पर्क मुझे इस बातके लिए और भी सचेत कर देनेवाला है कि मैं जल्दबाजीमें कोई कदम न उठाऊँ।

यहाँ मुझे लंकाशायर तथा वहाँके कर्मचारियों और मालिकोंके साथ हुए अपने अत्यल्प सम्पर्कके अनुभवका उल्लेख भी अवश्य करना चाहिए। मुझे यह देखकर सुखद आश्चर्य हुआ कि उनमें कोई पूर्वग्रह नहीं है और वे नये तथ्यों तथा उनपर आधारित निष्कर्षोंको सुनने-समझनेके लिए तैयार रहते हैं। बेशक, यहाँ मेरे लिए पृष्ठभूमि चार्ली एन्ड्रचूजने तैयार कर दी थी। मुझे ग्रेट ब्रिटेनके सबसे निष्पक्ष और सच्चे पत्र 'मैंचेस्टर गार्डियन' के सम्पादक श्री सी० पी० स्कॉटके साथ अपनी अविस्मरणीय भेंटका उल्लेख भी करना ही चाहिए। एक महान् अंग्रेज राजनयिकने मुझे बताया कि 'गार्डियन' दुनियाका सबसे अधिक विवेकशील और ईमानदार पत्र है। इसी प्रकार मैं कैंटरबरी, चिसेस्टर, ऑक्सफोर्ड, कैम्ब्रिज तथा ईटनके समागमोंको भी आसानीसे नहीं भूल सकता। इन सबसे ब्रिटेनवाले मनमें क्या सोचते हैं, इस चीजको मैं इतनी अच्छी तरह समझ

सका जितनी अच्छी तरह किसी और तरीकेसे नहीं समझ सकता था। इन सम्पर्कोंके परिणामस्वरूप कुछ लोगोंसे मेरी स्थायी मैत्री हो गई है। जिन लोगोंके सम्पर्कमें मैं आया उनमें उन दो गुप्तचरों तथा उनके साथियों और उन अनेक सिपाहियोंका भी उल्लेख करना आवश्यक है जिनको मेरे लिए तैनात किया गया था। सार्जेंट इवान्स और सार्जेंट रॉजर्स, ये दोनों गुप्तचर मेरे लिए केवल पुलिस-अधिकारी ही नहीं थे। वे मेरे संरक्षक, मार्गदर्शक और मित्र बन गये। मेरी सुविधाओंका खयाल तो वे स्नेहमयी परिचारिकाओंकी-सी तत्परतासे रखते थे। और मेरे लिए यह बड़ी खुशीकी बात थी कि मेरे अनुरोधपर उन्हें मेरे साथ ब्रिंडिसीतक आने दिया गया।

और यद्यपि सन्त रोमाँ रोलाँके निवास-स्थान विलेन्यूवकी अपनी तीर्थयात्राका उल्लेख मैं अन्तमें कर रहा हूँ, लेकिन महत्त्वकी दृष्टिसे आप इसे अन्तिम स्थानपर न रखें। यदि मैं केवल उनसे तथा छायाकी भाँति सदा उनके साथ रहनेवाली उनकी बहन मेडेलीनसे, जो उनकी दुभाषिया और मित्र भी हैं, मिलनेके लिए ही भारतसे निकल सकता तो केवल इसी उद्देश्यसे वहाँकी यात्रा करता। लेकिन केवल इस कामके लिए मेरा यहाँसे जाना सम्भव नहीं था। किन्तु गोलमेज परिषद्के कारण यह तीर्थयात्रा मेरे लिए सम्भव हो गई और संयोगसे मेरे रास्तेमें रोम भी पड़ा। मैं उस महान् तथा प्राचीन नगर और इटलीके निर्विवाद अधिनायक मुसोलिनीको भी किसी हदतक देख पाया। और वैटिकन क्रूसपर चढ़े ईसा मसीहकी उस सजीव प्रतिमाको नमन करनेके लिए मैं कौन-सा मूल्य नहीं चुका सकता था? मानव-इतिहासकी उस महान् दुर्घटनाके उस जीवन्त दृश्यने मुझे इस तरह बाँध लिया था कि वहाँसे अलग होते हुए मुझे लगभग वियोगका दुःख अनुभव हो रहा था। वहाँ मुझे यह समझते देर नहीं लगी कि व्यक्तिके ही समान राष्ट्रका निर्माण भी शूलीकी पीड़ा, कष्टोंकी आँच सहनेसे ही सम्भव है। सच्चे आनन्दकी प्राप्ति दूसरोंको कष्ट पहुँचानेसे नहीं, बल्कि खुशी-खुशी स्वयं कष्ट सहनेसे ही हो सकती है।

२

इसलिए मैं निराश होकर नहीं, बल्कि और भी आशा लेकर स्वदेश लौटा हूँ। इस आशाका आधार यह तथ्य है कि मैंने इंग्लैंड और यूरोपीय महाद्वीपमें जो-कुछ देखा उससे सत्य और अहिंसामें मेरी आस्था कम होनेके बजाय और भी पुष्ट हुई है। वहाँ मुझे अपनी अपेक्षासे अधिक समान-धर्मी लोगोंसे मिलनेका अवसर प्राप्त हुआ।

गोलमेज परिषद्के सम्बन्धमें मैं तो आपको कुछ नया बता नहीं सकता। उसके गठन तथा उसकी उपलब्धियोंके बारेमें अपने विचार मैंने वहाँ साफ-साफ बता दिये। लेकिन यहाँ मैं एक बात कहना चाहूँगा। वहाँसे मैं अपने मनमें यह धारणा लेकर आया हूँ कि वे जो-कुछ कहते हैं, वही उनके हृदयोंमें भी है, लेकिन वे बहुत अधिक लाचारीके बीच काम कर रहे हैं। मूलभूत बातोंके सम्बन्धमें प्रतिनिधियोंमें जहाँ ऊपरसे मतैक्य दिखाई देता था, वहाँ बहुत ही महत्त्वपूर्ण तफसीलोंके सम्बन्धमें उन्होंने आश्चर्यजनक मतभेदका परिचय दिया। अल्पसंख्यकोंकी समस्या एक भारी गुत्थी बन

गई, जिसमें दोष केवल मन्त्रियोंका ही नहीं था। लेकिन यह तो एक अस्थायी लाचारी थी। उनकी सबसे बड़ी लाचारी इस बातमें थी कि भारतमें ब्रिटिश राज्यकी स्थापनाके समयसे ही उनके भारत-स्थित एजेन्ट उन्हें अक्सर एक-पक्षीय सरासर झूठी बातें बताते रहे हैं और उनके सामने उन्हीं वर्गोंके मत रखते रहे हैं जो राष्ट्र-विरोधी हैं। भारतके सम्बन्धमें उनकी जानकारीका यही स्रोत रहा है और इनकी भेजी जानकारीको मन्त्रियोंने आम तौरपर परम सत्यकी तरह ग्रहण किया है। इसलिए वे हमें अपनी सुरक्षा-व्यवस्था और वित्तीय मामलोंको स्वयं ही सँभालनेमें अक्षम मानते हैं। वे मानते हैं कि भारतके कल्याणके लिए भारतमें ब्रिटिश सेना और ब्रिटिश अधिकारियों का रहना आवश्यक है। दुनियाके किसी अन्य राष्ट्रमें ब्रिटेनसे अधिक आत्म-प्रवंचनाकी क्षमता शायद ही हो।

मैं जो-कुछ लिख रहा हूँ उसकी पुष्टिके लिए मैं पाठकोंसे सर सैम्युअल होरका वह भाषण पढ़नेको कहूँगा जो उन्होंने श्वेत पत्र (ह्वाइट पेपर) पर चल रही बहसके दौरान कॉमन्स सभामें दिया था। मैं जितनी बार भारत-मन्त्रीसे मिला, हर बार उनकी ईमानदारी और साफगोईके सम्बन्धमें मनपर कुछ बेहतर छाप लेकर ही लौटा, हालाँकि मुझे चेतावनीके तौरपर लोगोंने उनके विषयमें इसके विपरीत बातें ही बताई थीं। वे मुझे ब्रिटिश मन्त्रियोंमें सबसे अधिक निष्कपट और स्पष्टवादी आदमी लगे। वे काफी दृढ़ आदमी भी हैं, लेकिन उतने ही सख्त भी। मैं मानता हूँ कि वे निर्ममतापूर्ण दमन-नीति अपनाने और कड़ीसे-कड़ी कार्रवाई करनेकी सलाह या सहमति भी दे सकते हैं। ऐसी सलाह या सहमति देकर भी वे सच्चे दिलसे यही मानेंगे क उन्होंने उस सर्जनकी तरह दयाका कार्य किया है जो आवश्यकता पड़नेपर बहुत ही दृढ़ता और मजबूतीसे अपने रोगीपर शल्य-चिकित्साकी अपनी छुरीका प्रयोग करता है। भारत-मन्त्री सचमुच बहुत ही परिश्रमी और ईमानदार आदमी हैं और वे ज्वरसे पीड़ित रहनेपर भी अपना काम करते रह सकते हैं। किसी भी क्षण उन्हें क्या करना है, इस बातको वे बहुत साफ-साफ जानते हैं। उनके पीछे ब्रिटेनके सभी दलोंके लोग हैं और ब्रिटेनके आधुनिक इतिहासमें ज्ञात काफी बड़ा बहुमत उनके साथ है। इस-लिए उनका भाषण ब्रिटिश ढंगका सबसे अच्छा भाषण है। फिर भी, तथ्य यह है कि कांग्रेसकी माँगोंकी दृष्टिसे इसमें कही बातें सर्वथा अपर्याप्त हैं और इस सन्दर्भमें जिस शब्दावलीका प्रयोग कांग्रेस कर सकती है, उसका प्रयोग करूँ तो कहूँगा कि यह भाषण गलत तथ्योंपर आधारित है, लेकिन दुर्भाग्यसे अन्य ब्रिटिश राजनयिकोंकी तरह वे इन्हें सच मानते हैं।

ब्रिटेनकी इस मनोवृत्तिको बदला कैसे जाये, अर्थात् इन अनिच्छुक लोगोंके हाथोंसे सत्ता छीनी कैसे जाये? ये राजनीतिज्ञ दलीलसे कायल होनेवाले नहीं हैं। ये सब तपे-परखे और अपनी धुनके पक्के सिपाही हैं। ये तथ्योंको, ठोस कार्योंको पसन्द करते हैं और उन्हींकी भाषा समझते हैं। वे खुल्लम-खुल्ला विद्रोहकी भाषा समझेंगे, और अगर ये उसे दबा न सके तो तत्काल यह स्वीकार करेंगे कि हम अपनी रक्षा आप कर सकते ह और अपना कार्य-व्यापार स्वयं सँभाल सकते हैं। और मैं ब्रिटेनसे अपनी इस धारणाको और भी पुष्ट करके लौटा हूँ कि वे अहिंसक विद्रोह

की भाषा भी समझेंगे और शायद ज्यादा जल्दी समझेंगे। लेकिन दुर्भाग्यकी बात यह है कि हमारी सामूहिक अहिंसा-वृत्तिमें उनका विश्वास नहीं है। और इससे भी बड़ी बात यह, कि वे मानते हैं कि बड़े पैमानेपर सामूहिक अहिंसा सम्भव ही नहीं है। उनके इस अविश्वासको किसी दलीलसे दूर नहीं किया जा सकता। विश्वास तो वास्तविक अनुभवसे ही उत्पन्न हो सकता है।

इसी तरह वे यह भी नहीं मानते कि वास्तवमें जो दल अपनेको सौंपे कामको पूरा करके दिखा सके, वह कांग्रेस ही है। जनरल स्मट्स भी उन्हें यह विश्वास नहीं दिला सके कि कांग्रेस ऐसा दल है। उनके भारत-स्थित एजेंटोंसे मिलनेवाली विपरीत जानकारीके रहते हुए वे उन्हें इस बातका विश्वास दिला भी कैसे सकते थे?

इसलिए मुझे लगता है कि एक बार और अग्नि-परीक्षामें से गुजरना आवश्यक है। ब्रिटेनका मन प्रधान मन्त्रीकी घोषणामें बताई चीजोंसे कुछ बहुत अधिक देनेका नहीं है।

३

लेकिन मैं जल्दबाजीमें किसी निष्कर्षपर नहीं पहुँच सकता। यह लेख मैं 'पिलसना' जहाजपर २३ दिसम्बरको लिख रहा हूँ। मुझे भारतकी स्थितिकी कोई जानकारी नहीं है। मुझे नहीं मालूम कि आगे बातचीत चलानेकी क्या सम्भावनाएँ हैं। और न मुझे यह मालूम है कि बंगाल, संयुक्त प्रान्त, गुजरात तथा दक्षिण भारतकी स्थिति शान्तिपूर्ण वार्त्ताकी कितनी गुंजाइश छोड़ती है। हाँ, एक बात जो मेरे नजदीक जितनी स्पष्ट आज हो गई है उतनी पहले कभी नहीं हुई थी। वह यह है कि हमारा असली रण-क्षेत्र लन्दन नहीं, बल्कि भारत है। हमें कायल करना है तो ब्रिटिश मन्त्रियोंको नहीं, बल्कि भारतके गैर-सैनिक ब्रिटिश अधिकारियोंको। सशक्तसे-सशक्त भारत-मन्त्री भी अपने भारत-स्थित एजेंटोंकी सलाहकी बहुत दूरतक उपेक्षा नहीं कर सकता। इंडिया ऑफिस भारतके प्रगति-चक्रमें लगा एक अवरोध है। असली सत्ता वाइसरायके हाथोंमें भी नहीं हैं; वह तो २५० जिलाधीशोंके हाथोंमें है। इन जिलाधीशोंके हाथोंमें इतनी सत्ता है जितनी दुनियाके किसी वास्तविक अधिनायकके हाथोंमें भी नहीं है। अधिनायकोंके पीछे एक जबरदस्त सरकारके पूरे तन्त्रका बल नहीं होता, लेकिन इनके पीछे यह बल है।

लेकिन इस तरह देखनेपर समस्या बिलकुल सरल हो जाती है। प्रत्येक जिलेकी परिस्थितियोंकी कुंजी खुद उसीके हाथमें है। हमें अपनी मुक्ति खुद ढूँढ़नी है और भारतमें ही ढूँढ़नी है — सम्भव हो तो बातचीतके जरिये, और बिलकुल जरूरी हो जाये तो सीधी कार्रवाईके जरिये। मैं जानता हूँ कि मैं उस अग्नि-परीक्षासे गुजरनेके लिए देशका आवाहन हलके मनसे नहीं कर सकता, लेकिन साथ ही अगर मुझे कोई और रास्ता दिखाई नहीं दिया तो सीधी कार्रवाई करनेकी सलाह देनेमें भी मैं संकोच नहीं करूँगा। कोई रास्ता ढूँढ़नेके लिए मैं भरसक कोशिश करूँगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ३१-१२-१९३१

२७९. तार: वल्लभभाई पटेलको[1]

[२३ दिसम्बर, १९३१ या उसके पश्चात्]

सरदार वल्लभभाई
बारडोली

हाँ दोपहर से।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८४०८)से।

२८०. तार: रेवाशंकर झवेरीको[2]

[२३ दिसम्बर, १९३१ या उसके पश्चात्]

मॉरैलिटी[3]
बम्बई

स्विस-दम्पती[4] सहित नौ आदमी।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८४०९)से।

२८१. वक्तव्य: एसोसिएटेड प्रेस ऑफ अमेरिकाको[5]

[२४ दिसम्बर, १९३१][6]

मुझे तो बड़े दिनके अवसरकी चमक-दमक कभी भी जँची नहीं। इस तरहका आमोद-प्रमोद मुझे ईसाके जीवन और उपदेशसे सर्वथा असंगत प्रतीत हुआ है।

१. यह वल्लभभाईके २३ दिसम्बरके निम्नलिखित तारके उत्तरमें भेजा गया था: "आप चूँकि सोमवारको आ रहे हैं, इसलिए सुझाव है कि आप मौनव्रत जरा जल्दी, रविवारसे आरम्भ कर दें।" (एस० एन० १८४०७)।

२. यह सन्देश वल्लभभाई पटेलको भेजे सन्देशके साथ एक ही कागजपर अंकित है। देखिए उपर्युक्त शीर्षक।

३. रेवाशंकर झवेरीका तारका पता।

४. एडमण्ड प्रिवा और उनकी पत्नी।

५. यह वक्तव्य जेम्स मिलको दिया गया था।

६. "दैनन्दिनी, १९३१" में दर्ज इस तारीखके इन्दराजके अनुसार।

अगर अमेरिका इस अवसरका उपयोग अपनी नतिक लाभ-हानिका सच्चा लेखा-जोखा लगानेके लिए करे तथा मानव-जातिकी सेवाके जिस उद्देश्यके लिए ईसा जिये और अन्तमें जिसके लिए उन्होंने अपना बलिदान दिया, उस उद्देश्यके लिए अपनेको सर्मापित करनेपर जोर देकर दुनियाको एक नया रास्ता दिखाये तो यह कितना अच्छा हो।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८४११)से।

२८२. प्रवचन: एस० एस० 'पिलसना' जहाजपर[1]

२५ दिसम्बर, १९३१

मैं आपको यह बताऊँगा कि मुझ-जैसे अन्य धर्मावलम्बीपर, 'नया करार'में ईसा मसीहके जीवनकी कहानी जिस तरह कही गई है, उसकी क्या छाप पड़ी है। बाइबिलसे मेरा परिचय आजसे लगभग पैंतालीस वर्ष पूर्व आरम्भ हुआ; और वह 'नया करार'के माध्यमसे आरम्भ हुआ था तब मैं 'पुराना करार' में रस नहीं ले सका था, हालाँकि उसे एक मित्रसे, जिनसे मेरी भेंट एक होटलमें हुई थी, किये वादेको पूरा करनेके लिए ही सही, मैं पढ़ अवश्य गया था। लेकिन जब मैं 'नया करार' पढ़ने लगा और उसके 'गिरि-प्रवचन' पर आया तो मैं ईसा मसीहके उपदेशों को समझने लगा। 'गिरि-प्रवचन'में मुझे उसी चीजकी प्रतिध्वनि सुनाई दी जो मुझे बचपनमें सिखाई गई थी और जो मुझे मेरे अस्तित्वका अभिन्न अंग-सा प्रतीत होती थी तथा मेरे आसपासके जीवनमें प्रतिदिन आचरणमें उतारी जाती जान पड़ती थी।

मैंने कहा है, जान पड़ती थी। इससे मेरा तात्पर्य यह है कि मेरे इर्द-गिर्द के जीवनमें ठीक उस उपदेशके ही अनुसार आचरण किया जा रहा है, यह देखना मेरे मतलबके लिए जरूरी नहीं था। यह उपदेश था — मनमें प्रतिशोधकी भावना न रखना या बुराईका विरोध न करना। मैंने जितना-कुछ पढ़ा उसमें से जो बात मेरे मनमें जम गई वह यह थी कि ईसा विश्वको लगभग एक नया नियम देने आये थे, हालाँकि उन्होंने कहा था कि मैं कोई नया नियम देने नहीं आया हूँ, बल्कि मूसाके पुराने नियममें ही कुछ जोड़नेको आया हूँ। बहरहाल उन्होंने उस पुराने नियममें कुछ परिवर्तन अवश्य किया और उस परिवर्तनके परिणामस्वरूप 'आँखके बदले आँख निकाल लो, दाँतके बदले दाँत तोड़ दो' के स्थानपर एक नया नियम आरम्भ हुआ कि कोई एक तमाचा लगाये तो उसे दूसरा लगानेको आमंत्रित करो, एक मील चलनेको कहे तो दो मील चलनेको तैयार रहो।

१. महादेव देसाईकी रिपोर्ट "ईसा मसीह जिन्हें मैं प्यार करता हूँ" (जीसस आई लव) से उद्धृत। प्रवचन सुबहके साढ़े चार बजे हुआ था जिसमें आधा दर्जन लोग उपस्थित थे।

मैंने अपने मनमें कहा : "निश्चय ही यह तो वही है, जो हम अपने बचपनमें सीखते हैं। किन्तु यह तो ईसाई धर्म नहीं है।" कारण, तब मैंने यही सुन रखा था कि ईसाई धर्मका अर्थ एक हाथमें ब्रांडी की बोतल और दूसरेमें गोमांस रखना ही है। लेकिन 'गिरि-प्रवचन'ने मेरी इस धारणाको झूठा साबित कर दिया।

जैसे-जैसे सच्चे ईसाइयों अर्थात् ईश्वरसे डरकर चलनेवालोंसे मेरा सम्पर्क बढ़ता गया, मुझे मालूम होता गया कि जो सच्चे ईसाईका जीवन व्यतीत करना चाहता है, उसके लिए सारी ईसाइयतका सार 'गिरि-प्रवचन'में आ जाता है। उसी प्रवचनके कारण ईसा मेरे प्रिय हो गये।

मैं यह बता दूँ कि ऐतिहासिक ईसामें मेरी कभी कोई रुचि नहीं रही है। अगर कोई यह सिद्ध कर दे कि ईसा नामका कोई आदमी कभी हुआ ही नहीं और धर्मग्रन्थमें जिसका वर्णन किया गया है, वह तो लेखककी कल्पनाकी उपज है, तो उससे मेरे लिए कोई फर्क पड़नेवाला नहीं है। क्योंकि 'गिरि-प्रवचन' तो मेरे लिए तब भी सत्य ही रहेगा।

तो सारी कहानीको इस दृष्टिसे पढ़ते हुए मुझे लगा कि अभीतक तो ईसाई धर्मका आचरण नहीं किया जा सका है। हाँ, अगर कोई यह कहे कि जहाँ-कहीं असीम प्रेम और प्रतिशोधकी भावनाका सर्वथा अभाव देखनेको मिलता है वहाँ ईसाई धर्मके ही तो दर्शन होते हैं तो बात दूसरी है। लेकिन तब तो इसे किसी सीमामें नहीं बाँधा जा सकता, किसी ग्रन्थमें दिये उपदेशकी परिधिमें नहीं रखा जा सकता। तब वह ऐसी चीज बन जाता है जिसकी कोई व्याख्या नहीं की जा सकती, जिसका उपदेश किसीको नहीं दिया जा सकता, जिसे मुँहसे बोलकर एक-दूसरेतक नहीं पहुँचाया जा सकता, बल्कि अगर पहुँचाया जा सकता है तो एक हृदयसे दूसरे हृदयतक ही। किन्तु आम तौरपर ईसाई धर्मको इस रूपमें नहीं समझा जाता है।

ईश्वरकी कृपासे ईसाइयोंने — तथाकथित ईसाइयोंने — बाइबिलको किसी-न-किसी तरह नष्ट होनेसे बचा लिया है। ब्रिटिश ऐंड फॉरिन बाइबिल सोसाइटीने कई भाषाओंमें इसका अनुवाद करवाया है। यह सब भविष्यमें कोई सच्चा उद्देश्य साध सकता है। किसी जीवन्त धर्मके जीवनमें शायद दो हजार वर्षोंका कोई महत्त्व न हो। कारण, यद्यपि गानेको तो हमने गाया है "ऊपर बैठे ईश्वरकी जय हो, धरतीपर शान्तिकी जय हो", परन्तु आज न तो ईश्वरकी जय दिखाई देती है और न शान्तिकी।

जबतक यह पिपासा तृप्त नहीं होती, तबतक यही मानना चाहिए कि ईसा धरित्रीपर अवतरित नहीं हुए हैं, अभी हमें उनके अवतारकी प्रतीक्षा करनी है। जब सच्ची शान्ति स्थापित हो जायेगी तब हमें प्रदर्शनोंकी आवश्यकता नहीं रह जायेगी, तब वह हमारे जीवनमें — व्यक्तिगत जीवनमें — ही नहीं, बल्कि सामूहिक जीवनमें भी प्रतिध्वनित होगा। तब हम कह सकेंगे, हाँ, धरित्रीपर ईसा अवतरित हो चुका है। हमने जो भजन अभी गाया है,[१] उसका सच्चा अर्थ मैं यही लगाता हूँ। तब हम

१. प्रवचनसे पहले उपस्थित लोगोंने ईसाके जन्म-दिवसके उपलक्ष्यमें यह भजन गाया था; "व्हाइल शेपर्ड्स वाच्ड देयर फ्लॉक्स बाई नाइट"।

वर्षमें किसी एक विशेष दिनको ईसाका जन्म-दिवस नहीं मानेंगे, बल्कि उसके जन्मको सतत घटित होती रहनेवाली एक ऐसी घटना मानेंगे जो हर मनुष्यके जीवनमें आचरित हो सकेगी।

मैं धर्मके इस मूल तत्त्वका जितना अधिक विचार करता हूँ, एकके-बाद-एक युग तथा एकके-बाद-एक देशमें जन्म लेनेवाले धर्मगुरुओंकी अद्भुत कल्पनाओंके विषय में जितना अधिक सोचता हूँ, मेरे सामने यह बात उतनी ही अधिक स्पष्ट होती जाती है कि उन सबके पीछे वही शाश्वत सनातन सत्य है जिसका वर्णन अभी मैंने किया है। इस सत्यको किसी छाप या घोषणाकी जरूरत नहीं है। वह तो जीवनमें जीनेकी चीज है, ऐसी चीज जो बिना रुके निरन्तर शान्तिकी दिशामें आगे बढ़ती जाती है।

इसलिए जब हम किसीके लिए 'बड़े दिन' की शुभकामनाएँ, उसके अर्थको बिना समझे करते हैं तो वह एक थोथा फार्मूला ही बनकर रह जाता है। और जबतक हम सम्पूर्ण सृष्टिके लिए शान्तिकी कामना नहीं कर सकते तबतक स्वयं अपने लिए उसकी कामना नहीं कर सकते। यह तो यूक्लिडके स्वयंसिद्ध सिद्धान्तकी तरह एक स्वयंसिद्ध बात है कि जबतक हममें चतुर्दिक शान्तिकी उत्कट अभिलाषा नहीं होगी तबतक स्वयं हमको शान्ति नहीं मिल सकती। आप बेशक संघर्षके बीच भी शान्तिका अनुभव कर सकते हैं, लेकिन वह तभी हो सकता है जब आप उस संघर्षको दूर करनेके लिए अपने सम्पूर्ण जीवनको नष्ट कर दें, अपने प्राणोंकी बलि चढ़ा दें।

और इसलिए जिस प्रकार ईसाका चमत्कारपूर्ण जन्म एक शाश्वत घटना है, उसी प्रकार इस झंझावातोंसे भरे जीवनमें शूलीपर चढ़ना, आत्म-बलिदान करना भी एक शाश्वत घटना है। इसलिए हमें आत्मोत्सर्गका विचार किये बिना जन्मका विचार नहीं करना चाहिए। ईसाके समान जीवन व्यतीत करनेका मतलब है सतत बलिदानका जीवन व्यतीत करना। इसके बिना जीवन सतत मृत्यु है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ३१-१२-१९३१

२८३. टिप्पणियाँ

मरहूम इमाम साहब

इमाम साहब अब्दुल कादिर बावजीरके उठ जानेसे मैंने अपना एक पुराना मित्र और साथी खो दिया। हिन्दुस्तानने एक सच्चा सेवक खो दिया और इस्लामने एक हीरा गँवा दिया। इमाम साहबकी बहादुरी और उनके देशप्रेमसे कौन परिचित नहीं है? कमजोर होनेके बावजूद धरासणामें [नमकके भण्डारोंपर] हमलेके समय वे सबसे आगे थे और नाजुक होते हुए भी उन्होंने जेल-यात्रा की थी। इमाम साहब सजग मुसलमान थे। नमाज और रोजे वे कभी चूके नहीं। ट्रान्सवालमें इमामत करनेके कारण वे इमाम कहलाते थे। वे देशकी खातिर फकीर बन गये थे। ट्रान्सवालमें जेल काटनेके बाद वे सकुटुम्ब मेरे पास फीनिक्समें रहने चले आये और वहाँ फकीरी ले ली। मैं जब स्वदेश वापस आया तो वे भी चले आये। उनकी मलय पत्नी भी उनके साथ आई। उनकी एकके बाद दूसरी पत्नी गई, फिर उनकी बड़ी लड़की फातिमा गुजरी और अब इमाम साहब चले गये। उनके पीछे उनकी लड़की अमीना बेगम और उसके पति कुरेशी रह गये हैं। दोनों देशसेवामें लगे हुए हैं। इमाम साहब आश्रमके न्यासियोंमें से एक थे। वे आश्रमके मामलोंमें पूरी तरह रुचि लेते थे, वहाँके नियमोंका पालन करते थे और सबके साथ घुले-मिले थे। मेरे लिए यह एक बड़ी क्षति है; और मेरे हिन्दुस्तान लौटनेके पहले ही उनका चले जाना मेरे दुःखमें वृद्धि ही करता है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २७-१२-१९३१

२८४. भेंट : रायटरके प्रतिनिधिको

एस० एस० 'पिलसना

२७ दिसम्बर, १९३१

जिस प्रकार इधरसे जाते हुए मैं ज्यों-ज्यों लन्दनके निकट पहुँचता जा रहा था, मेरा मन गम्भीर दायित्वकी भावनासे भरता जा रहा था, उसी प्रकार लौटते हुए मैं ज्यों-ज्यों भारतके तटके निकट पहुँचता जाता हूँ, मेरे मनपर अपने दायित्वोंका बोध छाता जा रहा है। अन्तर केवल यह है कि इस बारका दायित्व उस अवसरके दायित्व से हजार गुना अधिक है।

इसलिए मैं जल्दबाजीमें कोई कदम नहीं उठाऊँगा। मैं सारे उपलब्ध उपायोंको आजमाकर देख लेनेके बाद ही, जरूरत होनेपर, भारतको एक बार फिर कष्ट-सहन की आगमें से गुजरनेकी सलाह दूँगा।

मैं ईश्वरसे मार्ग दिखानेके लिए निरन्तर प्रार्थना कर रहा हूँ। मैं जानता हूँ कि अगर मैं अपने सिद्धान्तपर ईमानदारीसे डटा रहा तो वह मुझे निराश नहीं करेगा। राष्ट्रीय प्रयोजनके लिए सत्य तथा अहिंसामें मेरे विश्वासके अगर और भी पुष्ट होनेकी कोई गुंजाइश थी तो ईश्वरकी कृपासे मेरी यूरोप-यात्राके परिणामस्वरूप वह और भी पुष्ट हुआ है। इस जीवनमें मेरा कोई दूसरा लक्ष्य नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २८-१२-१९३१

२८५. सन्देश : अमेरिकाके लिए

[२८ दिसम्बर, १९३१ के पूर्व]

अमेरिकासे कहिए कि हम जिस स्वतन्त्रताके लिए तड़प रहे हैं उस स्वतन्त्रताके प्रतिष्ठापकके नाते वह अपनी प्रार्थनाओंमें हमारे देशके दुःखी जनोंको भुला न दे।

[अंग्रेजीसे]

गृह विभाग, राजनीतिक, फाइल सं० १४१, पृष्ठ १५-१७, १९३२। सौजन्य: भारतीय राष्ट्रीय अभिलेखागार

२८६. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको

एस० एस० 'पिलसना'
[२८ दिसम्बर, १९३१][1]

जबतक एक राष्ट्र दूसरेका शोषण करना बन्द नहीं करता, सच्चा निःशस्त्रीकरण सम्भव नहीं है।

गांधीजी ने आगे कहा कि जबतक राष्ट्र-संघके पास अपनी बात मनवानेके लिए कोई शक्ति नहीं होगी तबतक वह राष्ट्रोंके बीच शान्ति कायम नहीं रख सकता। मंचूरियामें चीन और जापानकी लड़ाईसे यह बात बिलकुल स्पष्ट हो गई है।

प्र० : क्या आप ऐसा मानते हैं कि आपके अहिंसाके सिद्धान्तके प्रयोगसे स्थायी शान्ति कायम की जा सकती है?

उ० : जबतक असली कारणका इलाज नहीं किया जाता तबतक अहिंसाका कोई प्रभाव नहीं होगा और यहाँ वह असली कारण है राष्ट्रोंका लालचीपन। अगर लालच

१. साधन-सूत्रके अनुसार यह भेंट गांधीजी के बम्बई लौटनेसे कुछ ही समय पूर्व दी गई थी।

न हो तो शस्त्रीकरणका कोई प्रसंग ही न आय। अहिंसाका सिद्धान्त सभी प्रकारके शोषणके पूर्ण त्यागकी अपेक्षा रखता है। ज्यों ही शोषणकी प्रवृत्ति समाप्त होगी, शस्त्रीकरणको एक निश्चित और असह्य बोझ माना जाने लगेगा।

गांधीजी का खयाल था कि जब वे पन्द्रह वर्ष पूर्व यूरोप गये थे तबसे भौतिक दृष्टिसे तो उसने काफी प्रगति की है, किन्तु उन्हें इस बातमें सन्देह था कि आध्यात्मिक दृष्टिसे भी उसने कोई प्रगति की है अथवा नहीं।

लेकिन, मैं समझता हूँ, आज जनतामें शान्तिकी ज्यादा ललक है। मैंने सर्वत्र ऐसा लक्षित किया कि अन्दरसे लोगोंमें वर्त्तमान वस्तुस्थितिके प्रति गहरा असन्तोष और विक्षोभ है। मेरी समझसे यह कोई खतरनाक चीज नहीं है, बल्कि एक शुभ लक्षण है। अब देखना है कि यूरोपकी सरकारें इस विक्षोभको सही दिशामें सच्चे कार्य-रूपमें परिणत करती हैं या नहीं।

प्र० : क्या आप ऐसा-कुछ सोचते हैं — जैसा कि हालमें स्पेनमें हुए परिवर्त्तनसे दिखाई पड़ता है — कि इस विक्षोभके परिणामस्वरूप अगले बीस वर्षोंमें राजतन्त्र धीरे-धीरे लुप्त होता जायेगा और उसका स्थान अधिक लोकतन्त्रात्मक ढंगकी सरकारें ले लेंगी?

उ० : जैसा स्पेनमें हुआ उस तरहके आकस्मिक परिवर्त्तनोंमें ऐसा-कुछ देखनेको नहीं मिलता जिसके आधारपर कोई बुद्धिसंगत भविष्यवाणी की जा सके। वैसे भी भविष्यके बारेमें अनुमान लगानेकी मेरी आदत नहीं है।

भारतके राष्ट्रवादी नेताने कहा कि यह एक निर्विवाद सत्य है कि प्रथम कोटिकी शक्तिके रूपमें इंग्लैंड विफल रहा है, किन्तु इंग्लैंडके लोगोंमें मेरा बहुत विश्वास है और इसलिए मुझे लगता है कि वे अपने वर्त्तमान आर्थिक संकटका सदुपयोग करेंगे और अन्य राष्ट्रोंके समक्ष आध्यात्मिक प्रगतिका एक उदाहरण पेश करेंगे।

स्वयं इंग्लैंडके हित तथा दुनियाके हितका भी खयाल करके मैं यह आशा करता हूँ कि इंग्लैंड युद्ध-पूर्व कालकी अपनी भौतिक श्रेष्ठताको पुनः प्राप्त नहीं करेगा, क्योंकि उस श्रेष्ठताका उपयोग अन्य राष्ट्रोंके शोषणके लिए किया जा सकता है।

महात्माजी के खयालसे ब्रिटिश साम्राज्य टूट रहा है, और अन्ततः वह कनाडा, आस्ट्रेलिया, दक्षिण आफ्रिका, न्यूजीलैंड और भारत, इन विभिन्न इकाइयोंमें बँटने जा रहा है; लेकिन उन्हें यह आशा भी है कि ये इकाइयाँ मानव-जातिके कल्याणके लिए स्वेच्छासे एक होकर रहेंगी।

लेकिन हो सकता है, इसमें उनके मनकी इच्छा ही प्रतिध्वनित होती हो।

गांधीजी ने कहा कि यूरोप-भ्रमणसे मेरे मनपर जो सबसे जबरदस्त छाप पड़ी है, वह यह है कि यूरोप, वहाँके लोग आज जो कृत्रिम जीवन जी रहे हैं, उसे ज्यादा दिन कायम नहीं रख सकता, क्योंकि वह जीवन बहुत ही भौतिकतावादी और उलझा हुआ है।

पुरानी सादगीको फिरसे अपनाना ही होगा, सुख-सुविधाओंकी समुचित सीमाका विचार करना ही होगा। शरीर आत्मापर हावी हो गया है। यह यन्त्र-युग यूरोपीय सभ्यताको नष्ट कर रहा है। अत्युत्पादन तथा उत्पादनके उचित वितरणके उपायका अभाव पूँजीवादी समाजके लिए विनाशकारी सिद्ध हो सकता है। मुझे तो एकमात्र समाधान यही दिखाई देता है कि फिरसे हस्तोद्योगको अपनाया जाये और व्यक्तिको कारखानोंकी गुलामीसे छुटकारा दिलाया जाये।

प्र० : क्या आप इंग्लैंड तथा संयुक्त राज्य अमेरिका-जैसे बड़े-बड़े उद्योगवादी देशोंसे भी चरखा अपनानेकी सिफारिश करेंगे?

उ० : मेरा खयाल है, उन देशोंके जीवनमें वह दिन बड़ा महत्त्वपूर्ण होगा जब वे चरखेको अपना लेंगे।

प्र० : दुनिया सुधरती जा रही है या बिगड़ती जा रही है?

उ० : जबतक परमदयालु परमेश्वरमें मेरा विश्वास है तबतक मुझे यही मानना पड़ेगा कि दुनिया सुधरती जा रही है — हालाँकि तथ्य तो इस मान्यताके विपरीत ही दिखाई दे रहे हैं।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १-१-१९३२

२८७. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

२८ दिसम्बर, १९३१

प्रिय जवाहर,

इन्दुने तुम्हारा पत्र मुझे दिया। पता नहीं क्यों, तुम्हारी गिरफ्तारीसे मुझे आश्चर्य नहीं हुआ। मैं अभीतक कमलाके पास नहीं जा सका हूँ। आज रातको जा सकता हूँ, कल तो जरूर ही। तुम्हें यह जानकर प्रसन्नता होगी कि इन्दुके नाम तुम्हारी दूसरी पत्र-माला मैंने पढ़ ली है। मुझे कुछ सुझाव देने थे, परन्तु यह तो शायद तभी होगा जब हम [इन झंझटोंसे मुक्त होकर] निश्चिततताकी स्थितिमें होंगे।

इस बीच तुम्हें और शेरवानीको प्यार।

[अंग्रेजीसे]

ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स, पृष्ठ १०४

२८८. भेंट : समाचार-पत्रोंको

बम्बई
२८ दिसम्बर, १९३१

पत्रकारोंसे थोड़ी देरकी बातचीतमें गांधीजी ने बताया कि मैंने प्रधान मन्त्रीके वक्तव्य तथा पार्लियामेंटमें भारतके सम्बन्धमें हुई बहसका मनोयोगपूर्वक अध्ययन किया है। उन्होंने कहा कि आज रातकी सार्वजनिक सभामें मैं इस विषयकी चर्चा करूँगा। वैसे तो सरकारकी सबसे ताजा कार्रवाई, अर्थात् पण्डित जवाहरलाल और श्री शेर-वानी तथा अब्दुल गफ्फार खाँकी गिरफ्तारीको लोग कांग्रेसको दी गई चुनौती मानेंगे, लेकिन यह घोषणा करना तो कांग्रेस-अध्यक्षका काम है कि इस कार्रवाईका मतलब दिल्लीके समझौतेको तोड़ना है।

जब महामहिमकी सरकार द्वारा परिषद्के कार्यको आगे बढ़ानेके लिए नियुक्त की जानेवाली उप-समितियोंके प्रति गांधीजी का रवैया जाननेकी जिज्ञासा की गई तो उन्होंने कहा कि अभी यह बतानेका समय नहीं आया है। सारी सामग्री मेरे पास नहीं है। यह सोचना तो सरकारका काम है कि अगर वातावरण अनुपयुक्त रहा तो समितियाँ कैसे काम करेंगी।

गांधीजी के विचारसे गोलमेज परिषद् एक वाद-विवाद समिति थी। उसके जिस प्रकार प्रातिनिधिक होनेका दावा किया गया, वैसी प्रातिनिधिक वह नहीं थी। वह सच्चे अर्थोंमें 'गोलमेज' ही नहीं थी।

जब उनसे यह पूछा गया कि क्या अब आप इस बातके कायल हो गये हैं कि विराम-सन्धिपर हस्ताक्षर करना एक भारी भूल थी, तो उन्होंने कहा कि 'नहीं', वह तो एक राजनयिकोचित कार्य था। उन्होंने इस बातको स्वीकार किया कि हालमें बंगाल, संयुक्त प्रान्त तथा सीमान्त प्रदेशमें जो-कुछ हुआ है, वह कांग्रेसको एक चुनौती है। लेकिन कांग्रेस कार्य-समितिके निर्णयसे पूर्व वे उसके सम्बन्धमें कोई कार्रवाई करनेको तैयार नहीं हैं। उन्होंने आगे कहा कि गोलमेज परिषद् एक वाद-विवाद समिति थी। क्या आप ऐसा मानते हैं कि दिल्लीका समझौता अब निष्प्रभाव हो चुका है, इस प्रश्नके उत्तरमें उन्होंने कहा कि यह तो कांग्रेस-अध्यक्ष ही बता सकते हैं।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २८-१२-१९३१, और हिन्दुस्तान टाइम्स, ३०-१२-१९३१।

२८९. भेंट : समाचार-पत्रोंको[1]

बम्बई
२८ दिसम्बर, १९३१

महात्मा गांधीने इस अफवाहका खण्डन किया कि वे वाइसरायसे मुलाकातका समय लेनेकी कोशिश कर रहे हैं और भारतकी परिस्थितियोंके सम्बन्धमें उनसे बात-चीत चला रहे हैं।

महात्माजी ने अपनी बात समझाते हुए कहा कि उन्हें भारतके हालके घटनाक्रम का अध्ययन करनेका समय ही नहीं मिल पाया है और अपने सहयोगियोंसे अबतक उन्होंने जितनी बातें सुनी हैं वे तो किस्से-कहानियोंके ढंगकी ही हैं। इसलिए इस विषयपर वे कोई राय जाहिर करनेको तैयार नहीं थे। लेकिन जब उनसे यह पूछा गया कि देशमें अध्यादेशोंके लागू रहते क्या गोलमेज परिषद्‌की समितियोंके लिए भारतमें अपना काम करना कठिन नहीं होगा तो उन्होंने इससे सहमति प्रकट करते हुए कहा :

हाँ, उस हालतमें तो उनका काम करना बहुत कठिन होगा। लेकिन समिति अपना काम कैसे करेगी, इसकी चिन्ता करना तो सरकारका काम है।

एक पत्रकारने उनसे पूछा कि क्या आप इसे भारतके लिए बहुत विपत्तिकी बात नहीं मानते कि उसे एक बार फिर संघर्षके दौरसे गुजरना पड़े। गांधीजी ने छूटते ही जवाब दिया :

अगर भारतको एक बार फिर अग्नि-परीक्षा सहनी भी पड़ी, तो उसे मैं किसी भी तरहसे उसके लिए विपत्तिकी बात नहीं मानता।

सर प्रभाशंकर पट्टणी : लेकिन आप उस स्थितिको रोकनेके लिए तो भरसक कोशिश करेंगे ?

गांधीजी : स्वभावत: मैं उसे रोकनेकी भरसक कोशिश करूँगा। लेकिन अगर वह अनिवार्य हो जायेगी तो मृत्युको सामने देखकर उदास हो जाना योद्धाके योग्य आचरण तो नहीं होगा। मेरे लिए उस संघर्षका मतलब कैद या लाठियोंकी मार हो सकता है।

एक स्वर : या देश-निकाला।

गांधीजी : कैद और देश-निकाला मेरे लिए एक ही हैं। उनमें कोई फर्क नहीं है।

सरदार वल्लभभाई : हाँ, जलवायुका फर्क हो सकता है।

१. यह भेंट-वार्त्ता मणि भवनमें हुई थी। इसमें वल्लभभाई पटेल, सुभाषचन्द्र बोस और प्रभाशंकर पट्टणी भी मौजूद थे।

गांधीजी : जलवायुके फर्ककी मैं परवाह नहीं करता। (हँसी)

गांधीजी ने पत्रकारोंको बताया कि प्रधान मन्त्रीके वक्तव्यपर उन्होंने खूब ध्यान-पूर्वक विचार किया है और उसमें छिपे सभी अर्थोंको समझनेकी कोशिश की है। लेकिन आजाद मैदानकी सभासे पहले वे उसपर कुछ कहनेको तैयार नहीं थ।

एक पत्रकारने जब कांग्रेस द्वारा युद्ध-विरामकी घोषणाके सम्बन्धमें कहा कि उसे इस बातमें सन्देह है कि वह कोई समझदारीका काम था तो महात्मा गांधीने तत्परतासे उत्तर दिया कि दिल्लीकी युद्ध-विराम सन्धिपर हस्ताक्षर करना राजनयिकोंको शोभा देनेवाला काम था।

इसपर उस पत्रकारने यह दलील दी कि उसकी आड़ लेकर सरकारने देशके हजारों नौजवानोंको जेलोंमें बन्द कर दिया। उत्तरमें गांधीजी ने कहा :

लेकिन जितने नौजवान जेलोंमें हैं उनसे कहीं अधिक बाहर हैं। मैं आपकी बात नहीं मान सकता।

इसके बाद उनसे कई प्रश्न पूछे गये, किन्तु यह कहकर कि अधिकृत तौरपर इनके उत्तर कांग्रेसके अध्यक्ष ही दे सकते हैं, उन्होंने उनका जवाब देनेसे इनकार कर दिया। [उन्होंने कहा] :

मेरी रायका कोई महत्त्व नहीं है। मेरी राय तो व्यक्तिकी ही राय होगी।

एक व्यक्ति : लेकिन अध्यक्ष तो इतने दिनोंसे यही कहते रहे हैं कि देश आपके आनेतक प्रतीक्षा करे। इससे प्रकट होता है कि आपका विचार ही अंतिम होगा।

गांधीजी : अध्यक्षके लिए शायद हो।

प्र० : आप बंगाल क्यों नहीं जाते? क्या आप यह नहीं समझते कि आपका बंगाल जाना ठीक रहेगा?

गांधीजी : हो सकता है, बिलकुल ठीक हो। लेकिन मैं एक प्रतिनिधि हूँ — आप की तरह अपने मनका मालिक नहीं। (हँसी) इस प्रसंगमें तो मेरी इच्छा वही होनी चाहिए जो बंगालकी हो। इस विषयमें मुझे सलाह देनेके लिए सुभाष बाबू यहाँ मौजूद हैं। लेकिन आपने उनको तो मुझसे कुछ कहनेका मौका ही नहीं दिया है।

इसके बाद उनसे यह पूछा गया कि हालमें बम्बईकी एक सभामें श्री एम० आर० जयकर द्वारा व्यक्त किया गया यह विचार सही है कि अगर आपने लॉर्ड इर्विनका १४ अन्य कांग्रेस-प्रतिनिधियोंको अपने साथ लन्दन ले जानेका प्रस्ताव मान लिया होता तो अच्छा होता।

गांधीजी : अपने अनुभवके बाद मुझे पूरा विश्वास हो गया है कि कांग्रेसने केवल मुझको ही भेजनेका निर्णय करके बहुत समझदारीका काम किया।

अगर राष्ट्रके १४-१५ सेवक यहाँ रहनेके बजाय बाहर भेज दिये जाते तो यह बहुत बुरी बात होती। दूसरी दृष्टियोंसे भी केवल एक आदमीको भेजना बहुत अच्छा था। जब आदेश इतना अधिक स्पष्ट था, तो एकसे अधिक एजेंट भेजनेकी कोई जरूरत

ही नहीं थी। हाँ, अगर उसको अपने उस एजेंटपर विश्वास न होता तो बात दूसरी होती। उसने केवल एक आदमीको भेजकर सबसे ज्यादा समझदारीका काम किया — खासकर मुझ जैसे बुद्धिमान आदमीको भेजकर। (हँसी)

एक अन्य रिपोर्टरने गांधीजी से गोलमेज परिषद्के सम्बन्धमें अपनी राय संक्षेपमें जाहिर करनेका अनुरोध किया।

गांधीजी : गोलमेज परिषद्का मेरा अनुभव तो यह है कि उसके जिस अर्थमें प्रातिनिधिक होनेका दावा किया गया है, उस अर्थमें प्रातिनिधिक न होकर वह एक वाद-विवाद समिति ही थी। इसलिए सच्चे अर्थोंमें गोलमेज परिषद् भी नहीं थी।

प्र० : बस, इतना ही!

गांधीजी : लेकिन आप तो संक्षेपमें ही मेरी राय जानना चाहते थे। (हँसी)

प्र० : अस्पृश्य लोग आपसे इतने नाराज क्यों हैं?

गांधीजी : मुझे नहीं मालूम कि वे मुझसे नाराज हैं। मैं यह नहीं मानता कि वे मुझसे नाराज हैं।

प्र० : अस्पृश्यों और दलित वर्गोंके प्रति आपका क्या रवैया है?

गांधीजी : मेरा रवैया यह है कि वे मेरे अभिन्न अंग हैं। वे जियें और पूरी प्रतिष्ठा और आत्म-सम्मानका जीवन व्यतीत करें, इसके लिए मैं सहर्ष अपने प्राणोंकी बलि चढ़ा सकता हूँ। और मेरा रवैया यह है कि मैं स्वयं दलित वर्गका हूँ।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २९-१२-१९३१

२९०. भाषण : सार्वजनिक सभा, बम्बईमें[1]

बम्बई
२८ दिसम्बर, १९३१

जब गांधीजी बोलनेको उठे तो लोग कई मिनटतक हर्ष-ध्वनि करते रहे। बम्बईके नागरिकोंको संबोधित करते हुए महात्माजी ने कहा कि आजकी सुबह आपने मेरा जो स्वागत किया है उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। लेकिन, मैं इसे अपना व्यक्तिगत सम्मान नहीं, बल्कि कांग्रेसके प्रति आपके विश्वासका द्योतक मानता हूँ।

गत रात मैं आपके सामने कुछ और ही तरहकी बातें कहनेकी आशा कर रहा था, लेकिन अब कुछ और तरहकी बातें कहनेका इरादा है। स्पष्ट ही ईश्वरको

१. यह सभा गांधीजी के बम्बई पहुँचनेके कुछ ही घंटे बाद आजाद मैदानमें हुई थी। साधन-सूत्रके अनुसार यह इतनी बड़ी सभा थी जितनी बड़ी सभामें बम्बईमें बोलनेकी किसी नेताने कल्पना भी नहीं की होगी। गांधीजी के बोलनेसे पहले वल्लभभाई ने गांधीजी के स्वदेश लौटनेके उपलक्ष्यमें उनका स्वागत करते हुए एक भाषण दिया था।

वसा मंजूर नहीं था। सुबह जहाजसे उतरते समयतक मुझे यह नहीं मालूम था कि पेशावरमें गोलियाँ चली हैं, न मुझे यही मालूम था कि पण्डित जवाहरलाल और श्रीयुत शेरवानीको जेलमें डाल दिया गया है या उनपर मुकदमा चलाया जानेवाला है। इन्हें मैं लॉर्ड विलिंग्डनकी ओरसे मुझको दिये गये 'बड़े दिन' के उपहार मानता हूँ। मेरे स्वदेश लौटनेपर मुझे उपहार देना उनके लिए स्वाभाविक ही था। सीमा प्रान्तमें खान अब्दुल गफ्फार खाँ, उनके भाई तथा अन्य कई लोगोंको गिरफ्तार कर लिया गया है। और भी बहुत-से लोग जेल भेज दिये गये हैं। उस प्रान्तसे हमें शायद कोई समाचार भी न मिल पाये। सत्याग्रहीके लिए इनसे अच्छे उपहार और क्या हो सकते हैं।

यदि हमने कोई अपराध किया होता और उसके लिए हमें दण्ड दिया गया होता तो वह खेदका प्रसंग अवश्य होता। लेकिन जितनी अच्छी तरह मैं इस बातको जानता हूँ कि मेरे शरीरमें प्राण हैं उतनी ही अच्छी तरह यह भी जानता हूँ कि खान अब्दुल गफ्फार सत्याग्रहके सच्चे पुजारी हैं और उन्होंने उसके मर्मको समझ लिया है। पण्डित जवाहरलाल और श्रीयुत शेरवानीके बारेमें तो मुझे कुछ कहनेकी जरूरत ही नहीं है। उनको आप उतनी ही अच्छी तरह जानते हैं जितनी अच्छी तरह मैं जानता हूँ।

अब हमारे सामने सवाल यह है कि हमारा कर्त्तव्य क्या है। क्या हम सरकारकी कार्रवाईसे संकेत लेकर सत्याग्रह-संघर्ष छेड़ दें, या किसी और उपायको आजमाकर देखें? इस समय मैं आपको अपनी राय नहीं बता सकता।

मैं केवल इतना ही कहूँगा कि यदि भाग्यको यही मंजूर होगा कि हम फिरसे उस अग्नि-परीक्षासे गुजरें और यदि कांग्रेसकी कार्य-समितिने संघर्ष पुनः आरम्भ करनेका निश्चय किया, तो आपसे उसमें शामिल होनेको कहनेमें मुझे कोई संकोच नहीं होगा। लेकिन, अगर सत्याग्रहको बचानेकी कोई सम्भावना है तो मैं उसे बचानेकी भरसक कोशिश करूँगा और आपसे धीरजसे काम लेनेका अनुरोध करूँगा। मेरा खयाल है, वर्षोंके अनुभवके बाद भारतने धीरज रखना सीख लिया है।

मुझे जहाजपर यह जानकर बहुत दुःख हुआ कि ऐसी खबर है कि बंगालमें दो लड़कियोंने एक हत्या कर डाली। सत्याग्रहीके नाते इस बातसे मुझे बहुत दुःख हुआ, क्योंकि हमारा धर्म मारना नहीं, बल्कि मरनेको तैयार रहना है। हमारे संघर्ष का आधार प्रेम है। यदि हम सरकारसे लड़ते भी हैं तो प्रेमास्त्रसे ही लड़ेंगे। उसमें घृणाके लिए कोई अवकाश नहीं है। सो उस घटनाके बारेमें सुनकर मुझे बहुत दुःख हुआ, लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि सरकार बंगालमें जो-कुछ कर रही है, उसका कहीं भी कोई औचित्य है। सरकारको गलत काम करनेवालोंको सजा देनेका पूरा हक है, लेकिन जनताको ऐसे कार्योंके लिए परेशान करना, जिनकी उसपर कोई जिम्मेदारी ही न हो, सरकारको शोभा नहीं देता। संयुक्त प्रान्त या पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्तमें जारी किये गये अध्यादेशोंका कोई औचित्य नहीं हो सकता। हम इनमें से किसीको बरदाश्त नहीं कर सकते।

मैंने आशा की थी कि सरकारके साथ सहयोग करनेका कोई रास्ता शायद निकल आयेगा। अब भी कोई रास्ता निकालनेकी मैं यथाशक्ति कोशिश करूँगा। लेकिन मुझे यह स्वीकार करना होगा कि यहाँ मैंने जो लक्षण देखे हैं उनके कारण मेरी आशा बहुत क्षीण हो गई है। और अगर हमें लड़ना ही पड़ा तो हमें अपना पूरा जोर लगा देनेको तैयार रहना चाहिए। हमारा संघर्ष ऐसा है जिसमें सभी हिस्सा ले सकते हैं। यह लड़ाई खुशी-खुशी कष्ट सहन करनेकी है। यह जान लेनेकी नहीं, बल्कि देनेकी लड़ाई है। इस संघर्षमें बच्चा भी अपना हिस्सा अदा कर सकता है।

पिछले साल हमने लाठियोंके प्रहार सहे थे, लेकिन इस बार हमें गोलियोंकी बौछार सहनेको तैयार रहना चाहिए। मैं नहीं चाहता कि केवल सीमा-प्रान्तके पठान ही गोलियोंकी बौछार सहें। अगर गोलियोंकी बौछार सहनी ही है तो बम्बई और गुजरातको भी अपने हिस्सेकी सहनी चाहिए। लन्दनमें मैंने कहा था कि अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए हमें दस लाख जानें भी देनी पड़ें तो मैं बिना किसी मनःस्तापके वह बलिदान देनेको तैयार रहूँगा। मैं मानता हूँ कि हमें मृत्युके भयसे मुक्त हो जाना चाहिए और जब मृत्युका वरण करना हो तो इस तरह करना चाहिए जैसे हम किसी मित्रको गले लगाते हैं। लेकिन अपने प्राणोंकी बलि चढ़ानेके बावजूद हमें इस बातका ध्यान रखना चाहिए कि किसी अंग्रेजका बाल भी बाँका न होने पाये। हमें यह आशा रखनी चाहिए कि अपने बलिदानके बलपर हम उन अंग्रेजोंका हृदय-परिवर्त्तन कर सकेंगे जो आज हमपर प्रहार करते हैं।

अपनी यूरोप-यात्राके परिणामस्वरूप अहिंसामें मेरा विश्वास बहुत बढ़ गया है। मैं मानता हूँ कि अहिंसामें कठोरसे-कठोर हृदयको भी पिघला देनेकी शक्ति है। कुछ लोग सोचते थे कि अपनी यूरोप-यात्रामें मैं कुछ नई बात सीखूंगा, लेकिन मैं सच कहता हूँ कि मैंने वहाँ कुछ भी नया नहीं सीखा और उसका केवल यही परिणाम निकला कि अहिंसामें मेरी आस्था और भी दृढ़ हो गई।

अपनी लन्दन-यात्रामें मुझे जो दूसरा अनुभव हुआ वह यह कि ब्रिटेनका मन्त्रिमण्डल ऐसा मानता है — और निश्चयही पूरी ईमानदारीसे मानता है — कि हम स्वराज्यके योग्य नहीं हैं। वे मानते हैं कि कांग्रेसी अहिंसाकी बात तो करते हैं, लेकिन सच्चे दिलसे उसमें विश्वास नहीं रखते। इसका कारण यह है कि भारत-स्थित अधिकारियोंसे उन्हें जो विवरण मिलते हैं उनमें यही बताया जाता है कि भारत स्वराज्यके योग्य नहीं है और कांग्रेसका आम जनतापर प्रभाव नहीं है। इसीलिए वे कांग्रेस-संगठनोंको अवध घोषित करते रहे हैं। हमारा काम अंग्रेजोंके दोष निकालना या उनपर नाराज होना नहीं है, बल्कि अपनी खामियोंसे छुटकारा पाना और अहिंसा-धर्मके अनुसार आचरण करना है।

हो सकता है कि आपमें से बहुतोंने अहिंसाको एक कार्य-साधक नीतिकी तरह स्वीकार किया हो, लेकिन जबतक कांग्रेसने इस धर्मको अपना रखा है तबतक हमें उसका दृढ़तासे पालन करना चाहिए। हमें अपने आचरणसे यह सिद्ध करना चाहिए कि हम कांग्रेसी लोगोंका उद्देश्य किसीको हानि पहुँचाना नहीं, बल्कि अपने प्राणोंकी

बाजी लगाकर दूसरोंकी रक्षा करना है। कांग्रेसका उद्देश्य प्राणोंकी बलि देकर स्वतन्त्रता प्राप्त करना है। जो लोग इस विचारसे सहमत न हों वे कांग्रेस छोड़ दें तो अच्छा हो। यदि हम वैसा करेंगे तो हमने जो प्रभाव और प्रतिष्ठा प्राप्त की है उसकी वृद्धि होगी अगर हम उसे गँवा बैठेंगे तो स्वतन्त्रता नहीं प्राप्त कर पायेंगे।

यदि हम अबतक स्वराज्य प्राप्त नहीं कर पाये हैं तो उसका मतलब यह नहीं कि हमें उसके लिए प्रयत्न करना छोड़ देना चाहिए। भारतको केवल अपनी स्वतन्त्रता ही प्राप्त नहीं करनी है; उसे दुनियाको शान्ति और अहिंसाका सन्देश भी देना है। यदि उस लक्ष्यको प्राप्त करनेमें अनेक वर्ष भी लग जायें तो उससे हमें हतोत्साह नहीं होना चाहिए।

मैं लोगोंको यह कहते सुनता हूँ कि अगर कांग्रेस सत्याग्रहका तरीका छोड़ दे तो वह सरकारसे निबट सकती है। मैं यह स्पष्ट कर दूँ कि सत्याग्रह और कांग्रेस अभिन्न हैं। कांग्रेसकी शक्ति सत्याग्रहमें निहित है, और सरकारको अन्ततः कांग्रेसकी बात माननी पड़ेगी। मैंने लन्दनमें यही बात कही थी और आज आपके और सारी दुनियाके सामने यही बात दोहराता हूँ। कांग्रेस केवल हिन्दुओंकी नहीं है। इसे मुसलमानों, सिखों, पारसियों, ईसाइयों, यहूदियों — बल्कि वास्तवमें भारतको अपना घर बना लेनेवाले सभी लोगों — के हित-साधनकी उतनी ही चिन्ता है। कांग्रेसको उन अंग्रेजोंकी भी फिक्र है जिन्होंने भारतको अपना घर बना लिया है। मैंने लन्दनमें कांग्रेसकी ओरसे यह दावा किया था कि वह सारे भारतका प्रतिनिधित्व करती है और आज फिर वह दावा दोहराता हूँ। इसका प्रभाव निश्चय ही बढ़ेगा।

हम लन्दनमें साम्प्रदायिक समस्याको सुलझा नहीं सके। मैं जानता था कि उसे वहाँ सुलझाया ही नहीं जा सकता। इसे कांग्रेस ही सुलझा सकती है और इसके लिए वह जो-कुछ कर सकती है, कर रही है। इसका उपाय सभी वर्गों और सम्प्रदायोंकी सेवा करना है। अगर कांग्रेस सिखों और मुसलमानोंकी सेवा करेगी तो निश्चय ही वे सब उसे अपना कहेंगे।

दो शब्द अस्पृश्योंके बारेमें। मेरा दावा है कि मैं उन्हींमें से एक हूँ। मैं जीवन-भर उनकी सेवा करता आया हूँ। उनकी सेवा मैंने कांग्रेसका कार्य अपनानेसे भी पहले ही शुरू कर दी थी। फिर मैं ऐसा कोई काम कैसे कर सकता हूँ जिससे उनका नुकसान हो? सवर्ण हिन्दुओंने अस्पृश्योंपर इतने अत्याचार किये हैं कि किसी भी अन्य धर्ममें इसका उदाहरण नहीं मिल सकता। इसलिए अगर वे नाराज होकर दस-बीस हिन्दुओंका नुकसान करते हैं तो उससे क्रुद्ध होकर बदलेकी कार्रवाई करना उचित नहीं होगा। मैं अस्पृश्योंको सीटोंके आरक्षण आदि जैसी सुविधा देनेके पक्षमें नहीं हूँ, क्योंकि मैं मानता हूँ, उससे तो अस्पृश्यता स्थायी बन जायेगी। भले ही भारतके भावी विधान मण्डलोंमें केवल अस्पृश्य सदस्य ही हों लेकिन उन्हें बराबरीके दर्जेके लोगोंकी तरह विधान मण्डलोंमें स्थान प्राप्त करने चाहिए। यदि हम उन्हें अपने स्तरतक नहीं उठाते तो हमारी स्वतन्त्रता बेकार होगी। जबतक किसीका भी — चाहे वह पुरुष हो या स्त्री, अस्पृश्य हो या स्पृश्य, गरीब हो या अमीर — शोषण

होता है और उसे देशके अन्य नागरिकोंकी बराबरीका दर्जा नहीं दिया जाता तबतक हम स्वतन्त्रताका उपभोग नहीं कर सकते। यह तो स्वतन्त्रताका मुखौटा लगाये गुलामी होगी। लन्दनमें मैंने जो-कुछ किया वह उनके अधिकारोंकी सुरक्षाके लिए ही किया।

मैं कई विषयोंपर बोलना चाहता था। मैं आपको यह बताना चाहता था कि लन्दनमें गोलमेज परिषद्के सम्बन्धमें मैंने क्या-क्या किया। अगर मैं मुक्त रहा तो किसी और अवसरपर वह सब बताऊँगा या आप किसी और जरियेसे वह सब जान लेंगे।

अभी मुझे आपसे यही कहना है कि अगर संघर्ष हुआ तो हर तरहके बलिदान के लिए तैयार रहिए, लेकिन आप यह प्रतिज्ञा कीजिए कि किसीको हानि नहीं पहुँचायेंगे। एक बार फिर अग्नि-परीक्षासे गुजरनेके प्रसंगको रोकनेके लिए मैं एक मनुष्यके लिए जो-कुछ भी सम्भव है, करूँगा, लेकिन अगर मुझे लगा कि कोई और रास्ता नहीं है तो उसमें से गुजरनेके लिए आपका आह्वान करनेमें भी नहीं हिचकूँगा। चाहे हमें उसमें कितने भी बड़े-बड़े कष्ट क्यों न झेलने पड़ें। ईश्वर हमें स्वतन्त्रताकी खातिर कष्ट सहने और त्याग-बलिदान करनेकी शक्ति दे।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २९-१२-१९३१

२९१. भाषण : वेलफेयर ऑफ इंडिया लीगकी सभामें[1]

बम्बई
२८ दिसम्बर, १९३१

इंग्लैंडसे चलनेके थोड़ी ही देर पहले मुझे श्री डेविडका तार मिला, जिसमें उन्होंने इस सभाकी अध्यक्षता करनेको आमन्त्रित किया था। तार पाकर मुझे लगा कि इस निमन्त्रणको अस्वीकार करना तो मेरे लिए असम्भव है। इसलिए मैंने उत्तरमें तार भेजकर उनसे कहा कि आप सरदार वल्लभभाई पटेलसे मिलकर समय तय कर लें, क्योंकि स्वभावतः मेरे सारे समयपर उनका अधिकार है। और आजकी रात इस समय आपके समक्ष बोलते हुए मुझे बहुत हर्ष हो रहा है।

जब मैंने यह निमन्त्रण स्वीकार किया था, मेरा इरादा आपके सामने उन बातोंकी चर्चा करनेका था जो मैंने इंग्लैंडमें देखीं। लेकिन भारत पहुँचनेपर यहाँकी स्थितिके बारेमें मैंने जो-कुछ सुना है, उससे मेरी सारी योजना उलट-पलट हो गई। मैं आपके सामने और कांग्रेसके सामने, इंग्लैंड तथा यूरोपमें मैंने जो बहुत-सी बातें

१. रातके १० बजे मैजेस्टिक होटलमें हुई इस सभाकी अध्यक्षता सर स्टैनली रीडने की थी। उपस्थित लोगोंमें प्रभाशंकर पट्टणी, फीरोज सेठना, नसरवानजी चोकसी, वल्लभभाई पटेल और कांग्रेस कार्य-समितिके कुछ सदस्य भी थे।

देखीं, उनके सम्बन्धमें बोलना चाहता था। उनमें अच्छाइयाँ भी हैं और बुराइयाँ भी। मैंने कुछ ऐसी चीजें देखीं जिनसे हर तरहसे मुझे आशा बँधी। लेकिन ऐसी चीजें भी थीं जिनसे कोई आशा नहीं बँधती थी। मैंने इंग्लैंड और यूरोपमें जो-कुछ देखा, उसकी चर्चा मैं खुशी-खुशी करता। लेकिन अब चूँकि वास्तविक परिस्थिति मेरे सामने है, इसलिए मुझे मुख्यत: उन्हीं घटनाओंपर बोलना होगा जो आज इस देशकी कल्याण-कामना करनेवाले लोगोंके रूपमें मेरे और आपके सामने चुनौती बनकर खड़ी हैं।

लेकिन मैं आपको एक बातके लिए आश्वस्त कर देना चाहता हूँ। वह यह है कि लन्दनमें या इंग्लैंड अथवा यूरोपमें मैं जहाँ-कहीं भी गया, सर्वत्र मुझे अत्यन्त स्नेह मिला और लगा कि किपलिंगके इस कथनमें कोई सत्य नहीं है कि पूर्व और पश्चिम कभी भी नहीं मिल सकते। अपने इंग्लैंड और यूरोपके तीन मासके प्रवास-कालमें मुझे तो ऐसा कोई अनुभव नहीं हुआ जिससे लगे कि आखिरकार पूर्व, पूर्व है और पश्चिम, पश्चिम। इसके विपरीत, आज मैं इस बातका सबसे अधिक कायल हूँ कि चाहे कोई भी देश हो, मानव-स्वभाव सर्वत्र एक-सा होता है; अगर आप आदमीके पास स्नेह और विश्वास लेकर जायें तो आपको प्रतिदानमें दस गुना, बल्कि हजार गुना भी ज्यादा स्नेह और विश्वास मिलेगा।

यद्यपि मैं यह नहीं कह सकता कि कांग्रेसकी माँगकी दृष्टिसे गोलमेज परिषद् से मैं कुछ भी प्राप्त कर सका हूँ, लेकिन ऐसा भी नहीं समझता कि मेरा इंग्लैंड जाना व्यर्थ गया। इसके विपरीत मैं यह मानता हूँ कि वहाँ मैं जो अनुभव प्राप्त कर सका, उसे प्राप्त करके बहुत अच्छा किया। इस अनुभवने मुझे, गत ३० वर्षोंसे सार्वजनिक प्रश्नोंके सम्बन्धमें मैं जिन तरीकोंसे काम लेता आया हूँ, उनकी कार्य-क्षमताको परखनेका और भी अवसर प्रदान किया है। लेकिन मैं अपने उस अनुभवके बारेमें इससे ज्यादा नहीं कहूँगा, क्योंकि भारतमें उस अनुभवकी प्रतिध्वनि सुननेके बजाय मैं अपने सामने कठोर तथ्योंको उपस्थित पाता हूँ।

मैं यह तो नहीं कह सकता कि गोलमेज परिषद् अथवा प्रधान मन्त्रीकी घोषणा से कोई ऐसी चीज मिली है जो कांग्रेसको निश्चित रूपसे सन्तुष्ट करनेवाली हो, लेकिन यह जरूर कह सकता हूँ कि ब्रिटिश मन्त्रियोंमें मुझे भारतकी परिस्थितियोंको समझनेकी सच्ची कोशिश दिखाई दी, यद्यपि भारतीय दृष्टिकोणकी मेरी जो अव-धारणा है, वह उनके गले नहीं उतर सकी। प्रधान मन्त्रीकी घोषणासे जो आशाएँ बँधी थीं और भारत-मन्त्रीके भाषणसे जिनकी पुष्टि हुई थी, उनके अनुकूल परि-स्थितियाँ देखनेके बजाय मुझे तो भारतको वह सीमित दायित्व दिये जानेके लिए भी अनुकूल वातावरण दिखाई नहीं देता जिसकी चर्चा भारत-मन्त्रीके भाषणमें हुई थी।

मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मुझे जितने मन्त्रियोंसे मिलनेका अवसर प्राप्त हुआ, उनमें भारत-मन्त्रीको मैंने बहुत ही ईमानदार और निश्छल व्यक्ति पाया। उनके मनमें क्या है, यह समझनेमें मुझे कोई कठिनाई नहीं हुई और उनके साथ हुई प्रत्येक मुलाकातमें मैं उनके अधिकाधिक निकट होता गया और जब हम अलग

हुए तो एक-दूसरेके अच्छेसे-अच्छे मित्रके रूपमें अलग हुए। वैसे तो अन्य सभी मन्त्रियोंसे भी मैं उनके प्रति हृदयमें मैत्रीकी भावना लेकर ही अलग हुआ।

लेकिन यहाँ आकर तो बिलकुल दूसरी ही तरहकी वस्तुस्थिति देख रहा हूँ। यहाँ मैं सीमान्त प्रदेशकी समस्या देखता हूँ। एक ओर तो यह घोषणा की जा रही है कि सीमान्त प्रदेशको भी अन्य प्रान्तोंका ही दर्जा दिया जायेगा और दूसरी ओर उस प्रान्तमें एक ऐसा अध्यादेश जारी किया गया है, जिसकी कोई मिसाल मुझे अन्यत्र नहीं मिलती। अगर आपने उसका सम्यक् अध्ययन न किया हो तो अब करनेको कहता हूँ। मैंने भी ध्यानपूर्वक उसका अध्ययन नहीं किया है। मैं अखबारोंमें छपा संक्षिप्त विवरण ही देख पाया हूँ। लेकिन मैं नहीं कह सकता कि अगर यह कानून हो भी तो कोई मानवोचित कानून है।

इसमें जान-मालको सुरक्षा प्रदान करनेकी कोई व्यवस्था नहीं की गई है। इसका प्रकट उद्देश्य सीमान्त प्रदेशके बहादुर लोगोंको सख्तीके साथ दबा देना है। मैं खान अब्दुल गफ्फार खाँ तथा उनके खुदाई खिदमतगारोंके दलको जानता हूँ। लेकिन इन लाल कुरतीवालों -- खुदाई खिदमतगारों -- ने क्या किया है, यह मुझे मालूम नहीं है। मैं अब्दुल गफ्फार खाँकी महानतासे परिचित हूँ। वे एक बहादुर पठान हैं। वे बड़े निश्छल हृदयके सच्चे और ईमानदार आदमी हैं और वे खुदासे डरकर चलते हैं। पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्तके कुछ अधिकारियोंने भी उनकी ईमानदारीकी साक्षी भरी है। लेकिन अब उन्हें अपने लोगोंके एक दलके साथ निर्वासित कर दिया गया है।

और उनका अपराध क्या है? उनका अपराध यह है कि वे अपने प्रान्त, अपने देश भारतकी आजादी चाहते थे, उनका अपराध यह है कि हालमें उस प्रान्तमें नये ढंगकी सरकार स्थापित करनेके उपायोंपर विचार करनेके लिए आयोजित दरबारमें वे उपस्थित नहीं हुए। इसके अलावा उन्होंने कुछ नहीं किया और न उनके उन हजारों अनुगामियोंमें से ही किसीने कुछ किया। वे लाल कुरतियाँ पहनते थे, यह क्या उनका अपराध था? और इस सबके ऊपरसे हमें ये खबरें मिली हैं कि अध्यादेशकी अवज्ञा करनेके कारण उनपर गोलियाँ चलाई गईं। सविनय अवज्ञाके लिए दण्ड दिया जाना चाहिए, क्योंकि अवज्ञाका दण्ड भोगना ही उसकी मुख्य भावना है। सविनय प्रतिरोधी स्वेच्छासे कष्ट और दण्ड सहता है। लेकिन जहाँ सविनय प्रतिरोधी हिंसात्मक कार्रवाई न कर रहे हों, वहाँ भी केवल कानून भंग करनेके कारण उनपर गोलियाँ चलाई जायें, ऐसा मैंने न कहीं सुना है और न देखा है। हमें यह खबर तो मिल ही चुकी है कि लाल कुरतीवालों और दर्शकोंकी भीड़पर सेना द्वारा गोली चलाये जानेके फलस्वरूप चौदह आदमियोंकी मृत्यु हुई। जब सेनाने एक दूसरे अवसर पर लाल कुरतीवालोंके २,००० के दलपर गोलियाँ चलाईं, तब कितने व्यक्ति हताहत हुए, इसकी खबर हमें नहीं मिली है।

सीमा-प्रान्तको स्वशासित प्रान्त बनानेकी दृष्टिसे यह निश्चय ही एक अशुभ आरम्भ है। यह एक अपशकुन है कि इस समय सीमा-प्रान्तके सबसे बहादुर और जीवटवाले लोग निर्वासित कर दिये जायें और बहुत-से लोग मौतके घाट उतार दिये

जायें — सिर्फ इस कारणसे कि उन्होंने अपनी बहादुरीका परिचय देते हुए उस अध्यादेशकी अवज्ञाकी जो कानूनी जामेके अन्दर छिपाकर सैनिक शासन लागू करनेके अलावा और कुछ नहीं है।

अब जरा संयुक्त प्रान्तकी स्थितिका जायजा लूँ। वहाँ क्या देखता हूँ? यह कि जवाहरलाल नेहरू और श्री शेरवानी गिरफ्तार कर लिये गये हैं। उनका अपराध क्या था? पण्डित जवाहरलाल नेहरू उस सम्मेलनमें भाग लेना चाहते थे जिसका आयोजन होनेवाला था। लेकिन, उसमें शामिल होनेके बजाय उन्होंने उसे कुछ दिनोंके लिए स्थगित करवा दिया, क्योंकि सरकारने इस तरहके सम्मेलनोंपर कुछ ऐसी शर्तें लगा रखी हैं, जिनको मानना वे आत्मसम्मानके विरुद्ध समझते हैं, उन्होंने कांग्रेस कार्यसमितिके, जिसकी बैठक अब कल ही यहाँ होने जा रही है, निर्णय लेनेतक के लिए सम्मेलन स्थगित करवा दिया। वे यह जानना चाहते थे कि गोलमेज परिषद्के मेरे अनुभवोंको ध्यानमें रखकर मुझसे और कार्यसमितिसे सलाह-मशविरा करके क्या-क्या करना ठीक होगा। लेकिन सरकारने उनपर यह आदेश जारी करवा दिया कि सरकारी अधिकारियोंसे अनुमति लिये बिना वे इलाहाबाद नगरपालिकाकी हदोंसे बाहर नहीं जा सकते। उन्होंने मजिस्ट्रेटको पत्र लिखकर मेरी अगवानी करनेके लिए बम्बई आनेका अपना इरादा जाहिर किया। लेकिन उन्हें और श्री शेरवानीको गिरफ्तार कर लिया गया है।

किन्तु, इन गिरफ्तारियोंसे मैं चिन्तित नहीं हुआ हूँ। मुझे चिन्तामें तो वह अध्यादेश डाल रहा है जो आज संयुक्त प्रान्तमें लागू है। यह लगभग उसी ढंगका है जिस ढंगका सीमा-प्रान्तवाला अध्यादेश है। लॉर्ड इर्विनको बहुत-से अध्यादेश जारी करनेका श्रेय प्राप्त है। लेकिन लॉर्ड विलिंग्डन तो अबतक तेरह अध्यादेश जारी कर चुके हैं। कठोरताकी दृष्टिसे ये तेरह अध्यादेश लॉर्ड इर्विनके अध्यादेशोंको बहुत पीछे छोड़ जाते हैं।

अब बंगालको लीजिए। मुझसे कहा जा सकता है कि बंगालके अध्यादेशके खिलाफ तो आप शिकायत नहीं कर सकते, क्योंकि वहाँ बड़े-बड़े अपराध किये गये हैं। बंगालके कुछ नौजवान पागल हो उठे हैं और उन्होंने हत्याएँ की हैं। हत्या और हिंसाकी खबरें सुनकर मेरे मनको सदा ही बहुत आघात पहुँचा है। लेकिन अब यह सुनकर तो मेरा मन और भी व्यथित हो उठा है कि लड़कियाँ भी ये आतंकवादी कार्रवाइयाँ करने लगी हैं। लेकिन कुछ लोगोंके होश-हवास खो देनेके कारण पूरे प्रान्तको पुंसत्वहीन बनाना किस तरहसे उचित है? इसका नतीजा तो यह होगा कि सरकारके प्रति सहानुभूति रखनेवाले लोग भी उसकी ओरसे विमुख हो जायेंगे क्योंकि जो अध्यादेश वहाँ लागू है, वह वहाँकी जनताके दैनिक जीवनमें अड़चनें डालता है। मैंने इंग्लैंडके अनेक लोकसेवी-जनोंके साथ इस अध्यादेशपर चर्चा की है और उन सबने इसकी भर्त्सना ही की है।

मैं अपने सामने जिस परिस्थितिको खड़ा पाता हूँ, वह संक्षेपमें यही है। मुझे तो कोई दूसरा रास्ता दिखाई ही नहीं देता।

लेकिन साथ ही मैं बहुत-से अंग्रेज मित्रोंको यह वचन दे चुका हूँ कि कांग्रेसकी माँगकी दृष्टिसे गोलमेज परिषद्से निराश होनेके बावजूद मैं सरकारसे सहयोग करते रहनेकी पूरी कोशिश करूँगा। किन्तु, यहाँ पहुँचनेके बाद मैंने जो-कुछ देखा है, उससे तो मुझे स्वीकार करना पड़ता है कि अपनी आत्मसम्मानकी भावनाको छोड़े बिना सहयोग करनेकी मुझे कोई आशा दिखाई नहीं देती।

अभी तो चारों ओर घोर अंधकार छाया हुआ लगता है, और अब जब कि प्रकाशकी कोई किरण दिखाई नहीं देती तब यदि मैं लोगोंको सहयोग करनेकी सलाह देता हूँ तो मैं स्वयं अपने साथ और राष्ट्रके साथ भी बहुत बड़ा अन्याय करूँगा।

मुझे नहीं मालूम कि वेलफेयर ऑफ इंडिया लीगके आप सदस्योंके इन अध्यादेशोंके बारेमें क्या विचार हैं। लेकिन मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि अगर मैं आत्म-सम्मानकी रक्षा करते हुए सरकारसे सहयोग न कर सका तो उसे इन अध्यादेशोंको वापस लेने या इनमें परिवर्त्तन करनेपर राजी करनेके लिए कुछ भी उठा नहीं रखूँगा।

संयुक्त प्रान्तके गवर्नरने कांग्रेसपर समानान्तर सरकार चलानेका आरोप लगाया है। जबतक समानान्तर सरकारें अहिंसात्मक ढंगसे और जनताके हकमें चलाई जा रही हों तबतक उन्हें चलानेमें क्या बुराई है, यह मैं नहीं समझ पाता। अगर कुछ लोगोंका कोई गैरसरकारी संगठन अस्पताल चलाता हो तो उसमें बुरा क्या है? अगर सरकारी अदालतोंके साथ-साथ पंच-फैसला अदालतें भी चलाई जाती हों, जहाँ कम खर्चपर न्याय मिल सकता है, तो उसमें क्या हर्ज है?

चाहिए तो यह कि सरकार ऐसे प्रयत्नोंका स्वागत करे और इन्हें हर तरहसे प्रोत्साहन दे। अगर कांग्रेस किसानोंकी सहायता और हित-साधनके लिए एक किसान-संगठनके रूपमें चलाई जाती है — जिस रूपमें आज वे वास्तवमें चलाई भी जा रही हैं — तो उसमें बुरा क्या है? अगर मैं गवर्नर होऊँ तो मैं इसका स्वागत ही करूँगा।

यह सच है कि कांग्रेस किसी समय इस सरकारको अपदस्थ करना चाहती है। अगर कांग्रेस सरकारका दायित्व सँभालने योग्य नहीं है तो फिर मानना होगा कि स्वराज्यकी कोई आशा नहीं है। कांग्रेससे यह प्रश्न पूछा गया: "क्या आप देशकी सुरक्षाका दायित्व सँभालनेको तैयार हैं? क्या आप देशकी वित्त-व्यवस्थाकी जिम्मेदारी तथा उसपर जो ऋण आदिका बोझ है उसे अपने सिर लेनेको तैयार हैं?"

मैंने उत्तर दिया: "हाँ, वह तैयार है। बेशक, कांग्रेस सुरक्षाका दायित्व, वित्त-व्यवस्थाकी जिम्मेदारी तथा आप भारतको जितनेका देनदार मानें उतनी देनदारी भी वह अपने सिर लेनेको तैयार है। लेकिन एक ही शर्त है कि जैसा कारोबार और लेन-देनमें होता है, ठीक उसी ढंगसे वह एक निष्पक्ष जाँच-समिति द्वारा सारी देनदारियोंकी जाँच करवा लेना चाहेगी। जबतक कांग्रेस इन विषयोंको सँभालनेकी कोशिश करके नहीं देखेगी, तबतक वह इन्हें सँभालना सीखेगी कैसे और वह प्रगति कैसे कर पायेगी?"

इसलिए अगर कुछ संगठन जनताकी सद्भावनाके आधारपर — उस जनताकी सद्भावनाके आधारपर जिसके सेवक होनेका वे दावा करते हैं — समानान्तर सरकारें चलाते हैं तो उसमें गैरवफादारी या राजद्रोहकी बात कहाँ आती है?

कांग्रेसका गठन ही इस आधारपर किया गया है कि वह किसी दिन वर्त्तमान सरकारका स्थान ले सकती है। यह नींव दादाभाई नौरोजी तथा अन्य अनेक प्रसिद्ध अंग्रेजों तथा भारतीयों द्वारा डाली गई थी। इसलिए अगर वह अपने आधी सदीसे भी अधिक कालके जीवनके बाद भी समानान्तर सरकार नहीं चला सकती तो यह हम सबके लिए बड़ी शर्मनाक बात होती।

कांग्रेसने ऐसा कुछ नहीं किया है जो अनैतिक अथवा अभद्रतापूर्ण हो। यह कोई गुप्त संस्था नहीं है। वह अपनी बात बराबर सबके सामने रख देती है। अगर इतने पर भी सरकार उसपर अविश्वास करे — जैसा वह करती जान पड़ती है — तो मैं यही कह सकता हूँ कि या तो हमें उसको अपनी शक्तिका एहसास करा देना होगा या इस प्रयत्नमें मर मिटना होगा।

मैं वेलफेयर ऑफ इंडिया लीगके आप सदस्योंसे इस सम्बन्धमें मार्ग-दर्शन करनेका अनुरोध करूँगा। मैंने आपके सामने, समझ लीजिए, वह पहेली रख दी है जो मुझे हैरान कर रही है। अगर कांग्रेसका विश्वास नहीं किया जाता तो वह सहयोग कैसे कर सकती है? भारतके कल्याण (वेलफेयर)की लगन आपको भी है और मुझे तथा कांग्रेसको भी है। अगर कांग्रेस कायम है तो केवल भारतके कल्याणके उद्देश्यको लेकर ही कायम है और खुद मेरे जीवनका इसके अलावा और कोई उद्देश्य नहीं है। हो सकता है, इस सम्बन्धमें मेरा और कांग्रेसका रास्ता गलत हो। लेकिन अगर कोई मुझे मेरी गलती दिखा सके और अपनी बातका कायल कर सके तो मैं उसे स्वीकार करने और उसका कायल होनेको बराबर तैयार बैठा हूँ। इसलिए मैं आप सबसे अनुरोध करूँगा कि आप मेरे भाषणको ध्यानमें रखकर परिस्थितिपर विचार करें। अब अगर आप चीजोंको ज्यादा अच्छी तरह समझने और मेरे मार्ग-दर्शनके लिए मेरे भाषणसे सम्बन्धित प्रश्न पूछें तो मैं सहर्ष उनके उत्तर दूँगा।

प्र० : सभी अध्यादेशोंके वापस लिये जाते ही गोलमेज परिषद्की विभिन्न समितियाँ भारतमें अपना काम शुरू कर देंगी। क्या आप उनके काममें सहयोग करेंगे?

उ० : मैं पहले ही बता चुका हूँ कि किस प्रकार इन अध्यादेशोंने सहयोगका रास्ता रोक रखा है। पहली बात तो यह है कि अध्यादेश वापस लिये जाने चाहिए। दूसरे, कांग्रेसको इस बातका विश्वास होना चाहिए कि इन समितियोंके साथ सहयोग करनेसे उसका उद्देश्य पूरा हो सकता है। मैं ऐसी आशा नहीं दिला सकता कि कांग्रेस अपनी माँगोंमें कोई कमी भी कर सकती है। लेकिन अगर कांग्रेसको यह भरोसा हो जायेगा कि इन माँगोंके सम्बन्धमें दलीलों और बातचीतका रास्ता खुला हुआ है तो मैं कांग्रेसको इन समितियोंके कामम सहयोग करनेकी सलाह दूँगा।

प्र० : आपने इन अध्यादेशोंकी निन्दा की है, लेकिन इनकी निन्दा करनेके बजाय पहले आप, जिन प्रान्तोंमें ये अध्यादेश लागू हैं, उन प्रान्तोंमें जाकर वहाँकी

परिस्थितियोंका खुद अध्ययन करनेके बाद यह देखनेकी कोशिश क्यों नहीं करते कि ये उचित हैं अथवा अनुचित ?

उ० : अगर सरकार इजाजत दे तो मैं सहर्ष वैसा करूँगा। मैंने कई बार सीमा-प्रान्त जानेकी कोशिश की है। लेकिन हर मौकेपर सरकार आड़े आई है, या कमसे-कम इतना तो हुआ ही है कि उसने सहयोगके इस कार्यको कोई प्रोत्साहन नहीं दिया है। इस सन्दर्भमें आपको एक और बात बता दूँ, लेकिन इसे आप सरकारकी गोपनीय बातको प्रकट करना न मानिएगा। वह बात यह है कि जिस समय दिल्ली समझौतेपर हस्ताक्षर हुए उस समय भी वाइसरायकी कार्यकारिणीके सदस्योंके दिमाग पर गफ्फार खाँका भूत सवार था। मैंने लॉर्ड इर्विनसे सीमा-प्रान्त जानेकी अनुमति माँगी। लेकिन सीमा-प्रान्तके कमिश्नरसे परामर्श करनेके बाद वे इस निष्कर्षपर पहुँचे कि मुझे वहाँ भेजना बहुत खतरनाक बात होगी। (हँसी) मुझसे कहा गया कि मेरे वहाँ जानेसे उत्तेजना फैल सकती है और मेरी कही बातोंको कबायलियोंके सामने गलत रूपमें पेश किया जा सकता है। (हँसी) फिर मैंने शिमलामें लॉर्ड विलिंग्डनसे भी निवेदन किया, लेकिन सफलता न मिली। मैं अनुमति लिये बिना भी वहाँ जा सकता था, लेकिन मैं सरकारको अटपटी स्थितिमें नहीं डालना चाहता था। अगर सरकार अब भी अनुमति दे दे तो मैं दौड़ा हुआ वहाँ जाऊँ। इसलिए आपमें से जिन लोगोंकी बात सरकार सुनती हो वे अगर मुझे अनुमति दिला दें तो मैं सीधे सीमा-प्रान्त चला जाऊँ, मैं तो कल ही वहाँ चला जाना चाहूँगा।

प्र० : क्या आप सरकारकी शर्तोंपर सीमा-प्रान्त और बंगाल नहीं जाना चाहेंगे ?

उ० : नहीं, उसकी शर्तोंपर तो जा ही नहीं सकता। अगर सरकार मुझे उनकी सेवा करनेकी अनुमति देना चाहती हो तो वह अनुमति मेरी शर्तोंपर मिलनी चाहिए। वहाँ जाकर मैं बहादुर अब्दुल गफ्फार खाँसे यह तो नहीं कह सकता कि आप सीमा-प्रान्त अथवा भारतकी स्वतन्त्रताकी अभिलाषा न कीजिए। अगर आप किसी चिड़िया को उड़ाना चाहते हैं तो आप उसके पर काटकर तो उससे यह नहीं कह सकते कि जाओ, अब उड़ जाओ। लेकिन सरकार यही करना चाहती है। वह मेरे पंख तोड़कर मुझसे उड़नेकी अपेक्षा करती है। अगर सरकार मुझे अपनी सेवा करने देना चाहती है तो उसे मुझे शक्तिशाली भी बनने देना चाहिए।

वास्तवमें मैं परिस्थितिको आसान बना सकता हूँ। सरकार यह जानती है कि अब्दुल गफ्फार खाँ मेरी बात सुनेंगे। मैं पठानोंके बीच रहा-सहा हूँ। मुझे उनका आक्रमण भी झेलना पड़ा है, लेकिन वह आक्रमण सदा उनके और मेरे बीचकी कड़ी का काम करता रहा है। (हँसी) जबतक उन्हें यह विश्वास रहेगा कि मैं उनके उद्देश्यके प्रति कोई घात नहीं कर रहा हूँ तबतक वे मेरी बात अवश्य मानेंगे। कुछ दिन पूर्व वे मेरी ही सलाहपर कमिश्नरसे मिले थे। लेकिन सरकार मेरी सेवाएँ स्वीकार करनेको तैयार नहीं है।

मैं बंगाल भी जाना चाहता हूँ। बंगालके सम्बन्धमें परिस्थिति भिन्न है। वहाँ जानेके लिए मुझे अनुमति माँगनेकी जरूरत नहीं है। लेकिन, वहाँ जाकर मैं सरकारको

अपनी बात लिखूँगा और उसके हितमें अपनी सेवाएँ पेश करूँगा, जैसा कि बंगालकी जनताके हितमें भी करूँगा। उसे स्वीकार करना या न करना सरकारका काम होगा। लेकिन मैं चटगाँव या हिजली तबतक नहीं जाऊँगा जबतक कि बंगाल सरकारसे यह न पूछ लूँ कि मेरे वहाँ जानेसे क्या उसे कोई परेशानी भी होगी। वैसे तो सरकार चाहे या न चाहे, मैं सीमा-प्रान्त भी जा सकता हूँ और चटगाँव तथा हिजली भी। अगर इसपर अधिकारी प्रतिबन्धात्मक आदेश जारी करते हैं तो उसकी मैं सविनय अवज्ञा भी कर सकता हूँ। लेकिन मैं सविनय अवज्ञा करनेका खतरा उठाकर सीमा-प्रान्त या चटगाँव अथवा हिजली नहीं जाऊँगा। अगर मैं वैसा करूँगा तो सरकार बहुत परेशानीमें पड़ जायेगी और उसे मैं परेशानीमें नहीं डालना चाहता। अगर मैं सविनय अवज्ञा करनेका निश्चय भी करूँगा तो सत्याग्रहीके नाते उसके लिए कोई ऐसा आधार खोजूँगा जिससे सरकारको कमसे-कम परेशानी हो और फिर भी उसकी गलती साफ दिखे।

प्र० : अगर आपको यह विश्वास हो जाये कि बंगालमें एक राजद्रोही संगठन है तब भी क्या आप अध्यादेश वापस लेनेको कहेंगे?

उ० : 'राजद्रोह' तो बहुत लोचदार शब्द है। लेकिन मैं आपके प्रश्नके आशय को समझता हूँ। अगर ये संगठन कानून और व्यवस्था भंग करने तथा सरकारके अधिकारोंको हड़प लेनेकी कोशिश कर रहे हों तो निस्सन्देह सरकारका यह कर्त्तव्य है कि वह ऐसी प्रवृत्तियोंके खिलाफ कार्रवाई करे। लेकिन उन प्रवृत्तियोंसे निबटनेके लिए कौन-सा तरीका अपनाया जाता है, इसका बड़ा महत्त्व है। यही सवाल मुझसे इंग्लैंडमें भी पूछा गया था। सवाल यह था "अगर सरकार कांग्रेसके हाथोंमें हो तो आप आतंकवादी प्रवृत्तियोंसे कैसे निबटेंगे?" उत्तरमें मैंने कहा था, "आप मुझे सत्ता दीजिए, फिर मैं दिखा दूँगा कि मैं उससे कैसे निबटता हूँ।" ऐसे संगठनके प्रति मैं बहुत ही सहानुभूतिका रुख रखकर उससे निबटूँगा। ऐसे सामान्य कानून भी हैं जिनसे सभी तरहके अपराधोंसे निबटा जा सकता है। फिर अध्यादेशोंका सहारा क्यों लिया जाये? इससे तो उन लोगोंमें विक्षोभ ही उत्पन्न होता है जिनपर अध्या-देश लागू किये जाते हैं। अपराधोंकी भर्त्सना करनेमें मैं किसीसे भी पीछे रहनेवाला नहीं हूँ, लेकिन ये अध्यादेश तो लोगोंको आतंकवादसे विमुख करनेके बजाय उसे और उत्तेजन ही देते हैं।

बंगालके नौजवानोंने निर्दोष लोगोंकी जानें लीं। इस तरहके कामको कोई भी समाज बरदाश्त नहीं कर सकता। लेकिन पाँचके अपराधके लिए पचास हजारको सजा क्यों दी जाये? अगर मैं भारत-मन्त्री अथवा गवर्नर-जनरल होता तो जिस समय बंगालके गवर्नरने अध्यादेश जारी करनेको कहा था उसी समय उससे त्यागपत्र दे देनेको कहता। लेकिन मैं इतनेपर ही नहीं रुकता। मैं इस असन्तोषके मूल कारणका पता लगाता और सबसे पहले उसीका इलाज करनेकी कोशिश करता।

गवर्नरको चाहिए कि वे प्रमुख नेताओंको अपने गुप्त कक्षमें बुलाकर उनपर पूरा भरोसा करते हुए इस विषयपर खुले मनसे और विस्तारपूर्वक चर्चा करें और ऐसे अपराधोंकी रोक-थामके उपाय निकालें।

यहाँ आवश्यकता पारस्परिक विश्वासकी है। कैंटरबरीके आर्कबिशपने मुझसे कहा था कि भारतकी समस्याके पीछे क्या है, यह मैं समझ गया हूँ और जब उन्होंने कहा कि आप लोगोंमें पारस्परिक विश्वासका अभाव है तो मैं जान गया कि उन्होंने इस समस्याको ठीक ही समझा है।

बंगालकी अपनी शिकायतें हैं। बंगालके नौजवान साहसी, भावुक और देशभक्त हैं और इसलिए कॉमन्स सभामें उनकी बहादुरीकी निन्दा करते हुए जिस तरहके भाषण दिये गये उस तरहके भाषणोंके परिणामस्वरूप वे उग्रतम कार्रवाई करनेपर उतर आये। जैसा कि मैं कह चुका हूँ, अपराधोंकी भर्त्सना करनेमें मैं किसीसे भी — अंग्रेजोंसे भी — पीछे रहनेवाला नहीं हूँ। लेकिन उनसे निबटना तो चाहिए साधारण कानूनोंके अनुसार ही।

कांग्रेसके अहिंसाके सिद्धान्तने आतंकवादी प्रवृत्तियोंको शमित रखनेकी दृष्टिसे बहुत-कुछ किया है। लेकिन जनरल डायरके तरीकोंसे काम चलनेवाला नहीं है। वैसे जनरल डायरसे मेरी कोई शत्रुता या नाराजगी नहीं है। मैं जानता हूँ कि वह ईमानदार आदमी था — वह भारतमें जो-कुछ कर रहा था अपने विश्वासकी प्रेरणापर कर रहा था और अपने कार्योंको उचित मानता था।

लेकिन डायरका तरीका गलत है। भारतमें अंग्रेजोंकी जान डायरवादी तरीकोंसे नहीं बचाई जानी चाहिए।

देशके लिए संविधान तैयार करनेका विचार किया जा रहा है, लेकिन इन अध्यादेशोंने जो वातावरण पैदा कर दिया वह निश्चय ही इस कामके उपयुक्त नहीं है। अगर आप यह सोचते हों कि इन अध्यादेशोंके वातावरणमें तैयार किये गये किसी संविधानको युवा भारत कोई महत्त्व देगा तो यह आपकी कोरी आशा ही है।

यह कहनेसे कोई बात नहीं बनती कि भारतके राजभक्त लोग इन तरीकोंके समर्थनमें सरकारसे हामी भर रहे हैं। मैं आपसे सच कहता हूँ कि जब ये राजभक्त लोग सरकारसे 'हाँ' कह रहे होते हैं तब भी अपने मनमें 'ना' ही कह रहे होते हैं। मैं आम जनताका आदमी हूँ, उसीके बीच, उसके साथ और उसीके लिए जीता हूँ। इसलिए इन अध्यादेशोंके प्रति भारतीय मानसकी क्या प्रतिक्रिया है, इस बातको मैं शिमला या दिल्लीमें रहकर अध्यादेश जारी करनेवाले गवर्नर-जनरल महोदय और उनके सलाहकारोंकी अपेक्षा ज्यादा अच्छी तरह जाननेका दावा करता हूँ।

प्र० : क्या आप अपनी दूसरी सभी प्रवृत्तियाँ छोड़कर पहले आतंकवादी आन्दोलनको ही बन्द करानेकी कोशिश नहीं करना चाहेंगे?

मेरा यह निश्चित विश्वास है कि कांग्रेसके अहिंसात्मक आन्दोलनने आतंकवादी प्रवृत्तियोंपर अंकुश रखनेके लिए बहुत-कुछ किया है। मैं जो-कुछ कह रहा हूँ, सप्रमाण कह रहा हूँ। मैं ऐसे अनेक लोगोंको जानता हूँ जो पहले आतंकवादी थे, लेकिन जिन्हें कांग्रेसके सन्देशने अहिंसाके पक्षमें ला खड़ा किया। आज मैं जिस प्रकार अपने बारेमें विश्वासपूर्वक कह सकता हूँ कि मैं अहिंसक हूँ उसी प्रकार

उनके बारेमें भी कह सकता हूँ कि वे अहिंसक हैं। ये देशभक्त नौजवान आज रचनात्मक कार्योंमें लगे हुए हैं।

प्र० : यदि आपके हाथमें सत्ता हो तो क्या आप किसी अन्य संगठनको एक समानान्तर सरकार चलाने और अपनी सत्ता हड़प लेनेकी छूट देंगे ?

उ० : जब मैंने यह कहा था कि मुझे किन्हीं संगठनों द्वारा समानान्तर सरकार चलाई जानेमें कोई बुराई नहीं दिखाई देती तो मेरा आशय उन संगठनों द्वारा सत्ता हड़प लेनेसे नहीं था। ये मित्र मुझपर ऐसी बात कहनेका आरोप लगा रहे हैं जो मैंने कभी कही ही नहीं। अगर ये संगठन जनताकी भलाईके लिए समानान्तर सरकार चलायेंगे तो निश्चय ही मैं उन्हें प्रोत्साहन दूँगा। जरा देखिए कि अधिनायक मुसोलिनी इटलीमें क्या कर रहा है। देशकी खुशहालीके लिए काम करनेवाली स्वैच्छिक संस्थाओंकी प्रवृत्तियोंमें वह कभी भी हस्तक्षेप नहीं करता।

मैं सहयोग करनेको आतुर हूँ और जबतक उसके सारे रास्ते ढूँढ़कर देख नहीं लूँगा तबतक चैन नहीं लूँगा। मैं आप अंग्रेज पुरुषों और स्त्रियोंसे अनुरोध करता हूँ कि इस समय मैंने आपसे जो-कुछ कहा है, उसपर आप विचार करें और इस देशमें शान्ति और सौहार्दका वातावरण तैयार करनेमें अपना यथोचित योगदान दें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ३१-१२-१९३१

२९२. तार : वाइसरायको

२९ दिसम्बर, १९३१

बंगाल अध्यादेश तो मेरी प्रतीक्षा कर ही रहा था, लेकिन कल यहाँ उतरनेपर मैं इस खबरके लिए तैयार नहीं था कि सीमा प्रान्त और संयुक्त प्रान्त में अध्यादेश लागू कर दिये गये हैं, सीमा प्रान्तमें गोलियाँ चलाई गईं और इन दोनों प्रान्तोंमें महत्त्वपूर्ण जन-नेताओंको गिरफ्तार कर लिया गया है। मैं नहीं जानता कि इन सबको मुझे इस बातका संकेत समझना चाहिए कि हमारे बीच मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध समाप्त हो गये अथवा आप अब भी यह अपेक्षा करते हैं कि मैं आपसे मिलकर इस विषयमें आपका मार्गदर्शन प्राप्त करूँ कि कांग्रेसको मुझे किस प्रकारकी सलाह देनी चाहिए।[1]

[अंग्रेजीसे]

इंडिया इन १९३१-३२

१. इसके उत्तरमें ३१ दिसम्बरको वाइसरायने जो तार दिया उसके लिए देखिए परिशिष्ट ३।

२९३. भाषण : प्रार्थना-सभामें

बम्बई
३१ दिसम्बर, १९३१

अब तो हम एक-दो दिन ही मुक्त हैं। इस बीच हम शान्तिपूर्वक प्रार्थना करें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, ३-१-१९३२

२९४. दैनन्दिनी, १९३१

लन्दन, १४ अक्टूबर, बुधवार

चरखेपर १८० तार। सर सैम्युअल होर द्वारा बुलाये गये लोगोंके साथ सेना सम्बन्धी बातचीत; बेंथलके साथ बातचीत; जिन्नाके साथ बातचीत।

लन्दन, १५ अक्टूबर, गुरुवार

चरखेपर १७६ तार। सर सैम्युअल होरके साथ बातचीत। सप्रू, जयकर आदिके साथ बातचीत; विद्यार्थियोंकी सभा। लतीफीके साथ बातचीत।

लन्दन, १६ अक्टूबर, शुक्रवार

चरखेपर १६२ तार। कांफरेंस, प्रेस द्वारा भोज। मुसलमान, इंडिया ऑफिस, मद्य-निषेध सभा, नवाब साहब। इस समय एक बजा है।

बर्मिंघम, १७ अक्टूबर, शनिवार

चरखेपर १२७ तार। ग्रामोफोनके लिए भाषण रिकार्ड कराया[१]; माडगाँवकर, मॉडको घर लेनेके लिए डाँटा[२]; नॉटिंघम गया; शामको बर्मिंघम; एन्ड्रयूज आये; देवदास नाइट्सब्रिज वापस लौट गया।

बर्मिंघम, १८ अक्टूबर, रविवार

चरखेपर १२९ तार। बिशप बार्न्स; स्टाइनर-शाला, डॉ० पारघी, आश्रम-वासियोंकी सभा[३]।

लन्दन, १९ अक्टूबर, सोमवार

चरखेपर १७८ तार। सुबह बर्मिंघमसे रवाना; शुएब दो-चारबार मिल गया। सरदार उज्ज्लसिंह, राजाओंके साथ बातचीत।

१. यहाँ जिस भाषणके रिकार्ड करानेका उल्लेख है वह "ईश्वर है" शीर्षकसे **यंग इंडिया** ११-१०-१९२८में प्रकाशित लेखका ही एक अंश है। देखिए खण्ड ३७, पृष्ठ ३६१-६५।

२. देखिए "पत्र : एच० एस० एल० पोलकको", २-१२-१९३१।

३. सम्भवतः वुडब्रुक सेट्लमैंटमें हुई सभा; देखिए पाद-टिप्पणी १, पृष्ठ २०३।

लन्दन, २० अक्टूबर, मंगलवार

चरखेपर १७६ तार। अप्टन क्लोज मिलने आये; आर्कबिशप, केंटरबरी, सैम्युअल होर, एमहर्स्ट; चैथम हाउसमें सभा।

लन्दन, २१ अक्टूबर, बुधवार

चरखेपर १६० तार। लॉर्ड इर्विन, पादरियोंकी सभा; कूचबिहारकी रानी।

लन्दन, २२ अक्टूबर, गुरुवार

चरखेपर १५३ तार। सर मिर्जाके साथ बातचीत; बीकानेरके समारोहमें; मालवीयजीके यहाँ सप्रू आदिसे मुलाकात; आज किंग्सले हॉल ८.४५ बजे पहुँचा।

ईटन, २३ अक्टूबर, शुक्रवार

चरखेपर २२१ तार। संघ-संरचना समितिकी बैठकमें बोला; शामको कृषि-प्रदर्शनी देखने गया। बादमें सप्रू आदिसे बातें हुईं। रातको ईटन गया। वहाँ युवकोंसे बातचीत की।

ऑक्सफोर्ड, २४ अक्टूबर, शनिवार

चरखेपर १६२ तार। सुबह ईटनसे रवाना हुआ; ऑक्सफोर्ड पहुँचा। रास्तेमें कर्नल मैडॉकके घर गया। बादमें मोराके चाचाके यहाँ खाना खाया। ऑक्सफोर्डमें स्नातकोंके साथ दो घंटे बिताये। बादमें रातको भारतीय मजलिसमें लाला दुनीचन्दका लड़का मिलने आया।

ऑक्सफोर्ड, २५ अक्टूबर, रविवार

चरखेपर १९९ तार। सुबह थामसनके यहाँ प्रो० मरे, सेडलर आदिसे मुलाकात हुई। बादमें सर हेनरी लॉरेन्स, श्रीमती एलविन, रस्किन सोसाइटी, उसके बाद ऑक्सफोर्डके विद्वानोंके साथ चर्चा; रातको रोड्ज-छात्रवृत्ति पानेवालोंके साथ।

लन्दन, २६ अक्टूबर, सोमवार

चरखेपर १६२ तार। १०.१५ बजे लन्दन पहुँचा। सप्रू आदिसे मुलाकात। कमेटी। रातको नवाब साहबसे मिला। इस वक्त साढ़े बारह बज रहे हैं।

लन्दन, २७ अक्टूबर, मंगलवार

चरखेपर १६५ तार। श्रीमती शेरीडन यहीं सोई थीं। रातको पोलकके घर मेननके साथ बातचीतकी।

लन्दन, २८ अक्टूबर, बुधवार

चरखेपर १८१ तार। मैडम म० . . .[१] से मिला, मैडम मॉन्टेसरी। मीराकी बीमारी।

लन्दन, २९ अक्टूबर, गुरुवार

चरखेपर २१५ तार। आज तीन बजे नहीं उठा गया। एक घंटा देर हुई। बहुत-से लोग मिल गये। मन उद्विग्न रहा। दत्ताके साथ बातें हुईं।

१. सही नाम पढ़ा नहीं जा सका; ये शायद मैडम मॉन्टेसरीकी सम्बन्धी थीं।

मालवीयजी के यहाँ सप्रू आदिसे मिला। शामको स्ट्रैकॉश और सर बेसिल ब्लैकेटसे मिला। रातको बाबा और अन्य युवकोंसे मिला।

लन्दन, ३० अक्टूबर, शुक्रवार

चरखेपर १८२ तार। दोपहरको शाकाहारी भोज, लेटनसे भेंट। कॉमनवेल्थ ऑफ इंडिया लीग।

कैम्ब्रिज, ३१ अक्टूबर, शनिवार

चरखेपर १६२ तार। क्वेकर मित्रोंसे मिला। सरदार उज्ज्लसिंहसे कैम्ब्रिजमें पाँच बजे मिला।

कैम्ब्रिज, १ नवम्बर, रविवार

चरखेपर १९२ तार। सुबह पेम्बरटन कॉलेजमें गया। वहाँ आयोजित सभामें लोज डिकिन्सन, इवलिन रैंच आदि उपस्थित थे। तीन घंटे तक बातचीत होती रही। बादमें कुछ लोगोंसे मिलने गया। एन्ड्रयूजकी पुरानी कोठरी देखी; किंग्ज चैपल देखा। शामको निकलसन मिलने आये। रातको भारतीय मजलिसकी बैठक। ९.३८ बजे मौन शुरू किया।

लन्दन, २ नवम्बर, सोमवार

चरखेपर १८६ तार। १०.३० बजे कैम्ब्रिजसे लन्दन पहुँचा। कमेटीकी बैठक चलती रही। बादमें मालवीयजी के यहाँ गया फिर जीवराज, बोमनजी आदि आये। शाह बो आया।

लन्दन, ३ नवम्बर, मंगलवार

चरखेपर १६१ तार। मैकडॉनाल्ड, अली इमाम; इर्विनका चित्र, मालवीयजी के यहाँ; बालकोंका समारोह, बॉल्डविन, होर, अन्तर्राष्ट्रीय विद्यार्थिगण, बोमनजी।

लन्दन, ४ नवम्बर, बुधवार

चरखेपर १७३ तार। कांफरेंस; सर डेनियल हेमिल्टन, मालवीयजीके यहाँ, डॉक्टर, तुर्कीका जनरल।

लन्दन, ५ नवम्बर, गुरुवार

चरखेपर २२० तार। बादशाहकी पार्टी; डाक-कर्मचारी संघके सदस्योंसे मिला; सिडनी वाल्टन।

लन्दन, ६ नवम्बर, शुक्रवार

चरखेपर १७२ तार। बर्नार्ड शॉ और उनकी पत्नीसे भेंट। सर डार्सी लिन्डसेसे मिला। सर जॉन मेनार्ड, सप्रू आदिसे मुलाकात; मैकडॉनाल्डको पत्र; रातको जायजी साथ आये।

ऑक्सफोर्ड, ७ नवम्बर, शनिवार

चरखेपर २०८ तार। सुबह ११ बजे ऑक्सफोर्ड पहुँचा। मालकम मैकडॉनाल्ड और प्रो० मरेके साथ बातें हुईं। शामको एन्ड्रयूज आये, रातको लॉर्ड लोथियनसे बातें हुईं, कोपलैंड भी उपस्थित थे।

ऑक्सफोर्ड, ८ नवम्बर, रविवार

चरखेपर १७८ तार। पूरे दिन बातचीत। कॉरबेट आये थे। शामको सरोजिनी आ गई। ३.५० बजे मौन शुरू किया।

लन्दन, ९ नवम्बर, सोमवार

चरखेपर १९२ तार। ऑक्सफोर्डसे लन्दन आया। कई पत्र लिखे। पुरुषोत्तमदासकी पार्टी; कॉरबेटके साथ बातचीत; रामेश्वरदासके यहाँ प्रार्थना और भोजन, फ्रेन्ड्स हाउसमें[1] सभा; रेनॉल्ड्ज मिलने आये।

लन्दन, १० नवम्बर, मंगलवार

चरखेपर २०३ तार। सप्रू आदि आये। उनके साथ बातें कीं। कॉरबेट और श्रीमती सुब्रायनसे मिला। लन्दन स्कूल ऑफ इकनामिक्स; हालबर्न रेस्तराँ।

लन्दन, ११ नवम्बर, बुधवार

चरखेपर १६९ तार। सुबह मिर्जा इस्माइल आये। उसके बाद म्युरियलके साथ लेडी एस्टरके यहाँ। ढाई बजे मालवीयजी के यहाँ। उसके बाद श्री व्हिटलेके यहाँ, फिर आठ बजे रेड क्रासकी महिलाओंके यहाँ।

लन्दन, १२ नवम्बर, गुरुवार

चरखेपर १८३ तार। कुमारी मोल्टिनोकी आत्मीय, डॉ० स्टैनली रीड; मालवीयजी के यहाँ हॉरैबिनकी कमेटीसे मुलाकात। होर, मैक्डॉनाल्डको पत्र[2]।

लन्दन, १३ नवम्बर, शुक्रवार

चरखेपर १४७ तार। अल्पसंख्यक कमेटी, स्मट्स, आगाखाँ आदि, श्री वेन आदि, स्मट्स, लैन्सबरी, वेस्टमिंस्टर स्कूल, बिड़ला, 'न्यूज क्रॉनिकल' का प्रतिनिधि। अब आधी रात हो गई है।

लन्दन, १४ नवम्बर, शनिवार

चरखेपर १७१ तार। लॉर्ड इर्विनसे मिला, बादमें बेन और ली-स्मिथसे; फिर आगाखाँ आदिसे। डॉ० मुंजे आदिसे रातको मालवीयजी के यहाँ। आज देर नहीं हुई।

लन्दन, १५ नवम्बर, रविवार

चरखे पर २२१ तार। दस बजे शास्त्रीजी के यहाँ, फिर मालवीयजी के यहाँ, फिर घर। आज थोड़ा सोया। इतालवी महिलासे बातचीत; शामको सर सैम्युअल होरके यहाँ गया; रातको बिड़लाके यहाँ केट, बैन्थल और कारसे मिला।

लन्दन, १६ नवम्बर, सोमवार

चरखेपर १६६ तार। कमेटी। लॉर्ड रीडिंग, कार और बैन्थल।

१. इस सभाका आयोजन फेलोशिप ऑफ रिकन्सिलिएशन द्वारा किया गया था।
२. लेकिन इस पत्रपर दी गई तारीख १४ नवम्बर है।

लन्दन, १७ नवम्बर, मंगलवार

चरखेपर १७८ तार। कमेटी, मुख्य मन्त्री, स्मट्स, कॉरबेट, लोथियन, लेडी एस्टर, वैन्थल वगैरा।

लन्दन, १८ नवम्बर, बुधवार

चरखेपर १६७ तार। रेवरेंड हेज़, फिलिप, कमेटी, महिलाओंकी सभा। लॉयड जॉर्जके साथ साढ़े तीन घंटे। इस वक्त एक बजा है।

लन्दन, १९ नवम्बर, गुरुवार

चरखेपर १८३ तार। कमेटी, ब्रॉकवे, कमेटीमें वर्णभेद और साम्प्रदायिक मतभेदपर भाषण।

लन्दन, २० नवम्बर, शुक्रवार

चरखेपर १६५ तार। फॉली आदि आये। शामको बैन्थल आदिसे मिला। बादमें शाकाहारी सोसाइटीकी सभा और पोस्ट ऑफिस।

लन्दन, २१ नवम्बर, शनिवार

चरखेपर १८३ तार। फिन्डलेटर स्टुअर्ट, पुरुषोत्तमदास, दिनशा मुल्ला, पाठक आदिसे मिला, वल्लभभाईको तार।

लन्दन, २२ नवम्बर, रविवार

चरखेपर १९४ तार। मालवीयजी के यहाँ सभा; सेनगुप्तसे मिला; दोपहरको डेढ़ घंटा सोया। ३.१५ बजे मौन शुरू किया।

लन्दन, २३ नवम्बर, सोमवार

चरखेपर २०७ तार। डेगनहामका किंग्स्ले हॉल देखा। कॉरबेट, पोलक, मॉड चीजमैनसे मिला।

लन्दन, २४ नवम्बर, मंगलवार

चरखेपर १९४ तार। सुबह मैक्डॉनाल्ड, सैंकी और होरसे मिला। शामको डॉ० सप्रू आदिसे मिला; ली-स्मिथसे भी मिला। वल्लभभाईका तार। सख्त सर्दी।

लन्दन, २५ नवम्बर, बुधवार

चरखेपर १६० तार। समितिमें दो भाषण दिये। शामको मिर्जा और डॉ० अम्बेडकर आये। एक कैथोलिक चर्चमें गया था।

लन्दन, २६ नवम्बर गुरुवार

चरखेपर १७१ तार। कमेटी; लॉर्ड इर्विन; दीपचन्द झवेरीके घर गया।

लन्दन, २७ नवम्बर, शुक्रवार

चरखे पर १७४ तार। एन्ड्रयूज दक्षिण आफ्रिकाके लिए रवाना। सेम्युअल होरसे मिला। भंडारीके यहाँ गया, बादमें लैन्सबरीसे मिला।

लन्दन, २८ नवम्बर, शनिवार

चरखे पर १७४ तार। पूर्णाधिवेशन। होरने बादशाहके प्रति आभार व्यक्त करनेवाले प्रस्तावके बारेमें पूछा। मैंने हाजिर रहनेसे इनकार कर दिया। वल्लभभाई और सतीशबाबूको तार।

लन्दन, २९ नवम्बर, रविवार

चरखेपर १६० तार। सर फिन्डलेटर स्टुअर्टसे मिला। रातको लीस्मिथ आये।

लन्दन, ३० नवम्बर, सोमवार

चरखे पर १५७ तार। समितिमें पूरे दिन मेरा भाषण। रातके तीन बजे घर पहुँचा। ८-३० बजे हॉरैबिनके यहाँ सभा।

लन्दन, १ दिसम्बर, मंगलवार

चरखे पर १८४ तार। परिषद् समाप्त। सप्रू आदिके साथ बातचीत। कार और बैन्थलसे बातचीत।

लन्दन, २ दिसम्बर, बुधवार

चरखे पर १६६ तार। आज ज्वर-सा था। क्वेकर लोगोंकी मौन-प्रार्थनामें गया।

लन्दन, ३ दिसम्बर, गुरुवार

चरखे पर १७४ तार। आज रातको हॉरैबिनके यहाँ सभा। दोपहरको लॉर्ड लोथियन, प्रेसवालोंसे मिला। इस समय आधी रात हो चुकी है।

लन्दन, ४ दिसम्बर, शुक्रवार

चरखे पर १७५ तार। मैकडॉनाल्ड और होरसे मुलाकात।

पेरिस, ५ दिसम्बर, शनिवार

चरखे पर १५१ तार। सुबह लन्दन छोड़ा। साथमें इवान्स, रॉजर्स, मॉड, म्युरियल, शामराव हैं। शामको पेरिस पहुँचे। वहाँ काफी भीड़ एकत्र। भारतीयोंकी तरफसे स्वागत।

विलेन्यूव, ६ दिसम्बर, रविवार

चरखे पर १६७ तार। सुबह पेरिस छोड़ा। म्युरियल वहीं रह गई। शामको विलेन्यूव पहुँचे। रोलाँसे भेंट, पत्रकारोंके साथ।

विलेन्यूव, ७ दिसम्बर, सोमवार

चरखे पर १८५ तार। १० से १२-३० तक रोलाँके साथ। बरसातके कारण घूमने नहीं गया पर खूब सोया। बादमें दोपहरको सूरज निकल आया इसलिए घूमने गया। शामको होरको पत्र लिखा। वल्लभभाईका तार; उसका जवाब दिया। सर जगदीश बोसको तार, घोषको तार।

विलेन्यूव, ८ दिसम्बर, मंगलवार

चरखे पर १७० तार। सुबह ढाई घंटे रोलाँके साथ। दोपहरको लोजानमें तीन सभाएँ। रातको बारह बजे वापस आया।

विलेन्यूव, ९ दिसम्बर, बुधवार

चरखेपर १६० तार। एक गरीब महिलाका घर तथा इन्टरनेशनल सेनेटोरियम देखने गया; प्रार्थना रोमाँ रोलाँके यहाँ की। मैडेलिन रोलाँको मैडम कामावाला शाल भेंट किया।

विलेन्यूव, १० दिसम्बर, गुरुवार

चरखे पर २०४ तार। जिनेवामें सभा, रोलाँके साथ बातचीत, शिलों स्कूलमें भाषण, टोमाके साथ बातचीत, अरबोंके साथ बातचीत।

रोम जाते हुए, ११ दिसम्बर, शुक्रवार

चरखे पर १७८ तार। रोलाँके साथ बातें हुई; सर कावसजी मिले। ढाई बजे विलेन्यूव छोड़ा। इन्दुके स्कूलकी लड़कियाँ मिलीं। मिलानमें राज्यकी तरफसे गाड़ी मिली। रास्तेमें जगह-जगह लोगोंकी भीड़ इकट्ठी हो गई थी।

रोम, १२ दिसम्बर, शनिवार

चरखे पर २०४ तार। सुबह ८-३० बजे रोम पहुँचे। इस आशयका पत्र मिला कि पोपसे मुलाकात नहीं हो सकेगी। तीन जने जनरल मोरिसके यहाँ ठहरे, बाकी होटलमें। दोपहरको बैटिकन देखने गया। ६ बजे मुसोलिनी। मॉडको २० पौंड।

ब्रिंडिसी जाते हुए, १३ दिसम्बर, रविवार

चरखे पर १८० तार। सुबह टॉल्स्टॉयकी बेटी आई। नवयुवकोंकी शालाएँ, महिलाओंके लिए सुविधाएँ, फोरम, स्कार्पाके यहाँ समारोह, राजकुमारी मिल गई, अमानुल्लाके सचिव, रातको १०-४० पर रवाना। प्रिवा-दम्पती साथमें हैं।

स्टीमर पर, १४ दिसम्बर, सोमवार

चरखे पर १३७ तार। सुबह ब्रिंडिसी पहुँचे। इवान्स, रॉजर्स लौट गये। १२-३० बजे एस० एस० 'पिलसना' रवाना हुआ। डेक अच्छा नहीं है, इससे थोड़ी असुविधा होगी। ठंड काफी है। विट्ठलभाई साथ हैं।

स्टीमर पर, १५ दिसम्बर, मंगलवार

चरखे पर १७२ तार। कप्तानके साथ थोड़ी बातचीत।

स्टीमर पर, १६ दिसम्बर, बुधवार

चरखे पर १८४ तार। कप्तानके साथ स्टीमर देखा। सर अकबरके साथ बातचीत।

स्टीमर पर, १७ दिसम्बर, गुरुवार

चरखे पर १९० तार। ग्यारह बजे पोर्ट सईद पहुँचे। सिन्धी और मिस्रके लोग लेने आये। किन्तु यह पता चलनेपर कि जहाज स्वेजमें नहीं रुकेगा इसलिए जाना नहीं हुआ। सिन्धियोंने लगभग १,५०० रुपयेकी थैली दी।

स्टीमर पर, १८ दिसम्बर, शुक्रवार

चरखे पर १६२ तार। ५-३० बजे स्वेज छोड़ा, जस्टिस हॉलैंड, लाल काका आदि मिल गये। हॉयलैंड द्वारा सुधारे गये भजन पढ़े।[1]

स्टीमर पर, १९ दिसम्बर, शनिवार

चरखे पर १७० तार। आजसे दायें हाथसे लिखना शुरू किया। आज दिनमें तीन बार सोया। पत्र लिखे। हॉयलैंडकी पुस्तक 'द क्रॉस मूव्स ईस्ट' पढ़ी।

स्टीमर पर, २० दिसम्बर, रविवार

चरखे पर १७१ तार। आज भी दिनमें खूब सोया। थोड़ा पढ़ा। विट्ठलभाईके साथ बातें कीं।

स्टीमर पर, २१ दिसम्बर, सोमवार

चरखे पर १७० तार। अदनके पास पहुँचते जा रहे हैं। आज दिनमें अपेक्षाकृत कम सोना पड़ा। 'इंडियन न्यूज'के लिए लेख[2] लिखा। पत्र लिखे। मुसोलिनीवाला [पत्र] पूरा किया।

स्टीमर पर, २२ दिसम्बर, मंगलवार

चरखे पर १७५ तार। सुबह १२-३० बजे अदन पहुँचे। किनारे उतरे; सभा हुई; सूरजके घर गया। रेजिडेंट कर्नल रालीसे मिला। ४-३० बजे स्टीमरपर लौट आये। लगभग ४,००० रुपये मिले। आज बाईं पसलियोंमें दर्द है। स्टीमर ५ बजे रवाना हुआ।

स्टीमर पर, २३ दिसम्बर, बुधवार

चरखे पर १७१ तार। आज तबीयत अच्छी नहीं लगी। दोपहरको सिर्फ अंजीर खाये, शामको कुछ नहीं खाया। दिनमें अच्छी तरह सोया। 'यंग इंडिया'के लिए लेख[3] पूरा किया। बल्गेरियन चित्रकार चित्र बनाने आया।

स्टीमर पर, २४ दिसम्बर, गुरुवार

चरखे पर १७२ तार। इतालवी पत्रकारकी जर्मन पत्नीके साथ बातें कीं। मिलसको कुछ लिख भेजा। कल रातको श्रीमती काव्राजीके साथ बातें कीं, सुबह दो बजे एरंडीका तेल लिया। पाखाना साफ हुआ।

१. तात्पर्य **आश्रम भजनावलि**में संगृहीत भजनोंका गांधीजी द्वारा किये गये अंग्रेजी अनुवादसे है। उक्त अनुवाद हॉयलैण्डने सुधारा था। देखिए खण्ड ४४, पृष्ठ ३९४की पाद-टिप्पणी १।

२. देखिए "भारतीय सेना", २१-१२-१९३१।

३. देखिए "सिंहावलोकन", २३-१२-१९३१।

स्टीमर पर, २५ दिसम्बर, शुक्रवार

चरखे पर १७१ तार। प्रधान मन्त्रीके गोलमेज परिषद्में हुए भाषणकी जो चर्चा कॉमन्स सभामें हुई उसे पढ़ रहा हूँ। शामको मसानीके साथ बातचीत।

स्टीमर पर, २६ दिसम्बर, शनिवार

चरखे पर १७८ तार। सर अकबर हैदरीके साथ बातचीत हैदराबादकी शहजादीसे मिला। विट्ठलभाईके साथ बातचीत।

स्टीमर पर, २७ दिसम्बर, रविवार

चरखे पर १८२ तार। शफी दाऊदी मिलने आये। १२ बजे मौन लिया। मीराबहनको उसकी अनुदारताके बारेमें कहना पड़ा। मिल्सको सन्देश लिख भेजा।

बम्बई, २८ दिसम्बर, सोमवार

चरखे पर १८४ तार। सुबह बम्बई पहुँचे। जबरदस्त स्वागत, भारी सभा, वेलफेयर लीग आदि।

बम्बई, २९ दिसम्बर, मंगलवार

चरखे पर १८९ तार। सुभाषबाबू, आन्ध्र, कर्नाटक आदिके प्रतिनिधियोंसे बातचीत। कार्यसमिति, वाइसरायको तार, सर फजलीको पत्र।

बम्बई, ३० दिसम्बर, बुधवार

चरखे पर २१४ तार। माटुंगामें स्त्री सेवादल, रघुवीरसिंहके साथ बातचीत, कार्यसमिति, डाक्टरने जाँच की। सर चिनुभाईको देखने गया। जमनादासके साथ बातचीत, काका, जयप्रकाशके साथ बातचीत।

बम्बई, ३१ दिसम्बर, गुरुवार

चरखे पर १७७ तार। वाइसरायका तार आया। जवाब भेजा।[1] प्रस्ताव तैयार किया, रातके डेढ़ बजे पूरा हुआ। उसके बाद कताई की। इस वक्त २-४५ हुए हैं। लालजी सेठ, मोदी मिल गये। आज सुबह प्रार्थना रास्तेमें की, फिर सेविकाओंसे मिलने गया। शामकी प्रार्थना लेडी नॉर्थकोट अनाथालयमें की।

मूल गुजराती (एस० एन० १९३३७)से।

१. देखिए "तार: वाइसरायके निजी सचिवको", १-१-१९३२।

२९५. कांग्रेस कार्य-समितिके प्रस्तावका पाठ[1]

बम्बई
[१ जनवरी, १९३२]

कार्य-समितिने महात्मा गांधीसे यूरोप-यात्राका विवरण सुना और बंगाल, संयुक्त प्रान्त तथा सीमा-प्रान्तमें जारी किये गये असाधारण अध्यादेशों, अधिकारियोंके अनेक कार्यों, जिनमें खान अब्दुल गफ्फार खाँ, श्री शेरवानी और पण्डित जवाहरलाल नेहरू सहित अन्य बहुतसे लोगोंकी गिरफ्तारी भी शामिल है, तथा सीमा-प्रान्तमें निर्दोष लोगोंपर की गई गोलीबारीसे, जिसमें कई लोग मारे गये और बहुत ज्यादा जख्मी हुए, उत्पन्न स्थितिपर विचार किया। कार्य-समितिने महात्मा गांधी द्वारा परमश्रेष्ठ वाइसरायको भेजे तारके उत्तरमें उनसे प्राप्त तार भी देखा। कार्य-समितिका विचार है कि इन अनेक कार्योंके कारण तथा दूसरे प्रान्तोंमें अपेक्षाकृत कम गम्भीर ढंगकी जो और कार्रवाइयाँ की गईं उनके फलस्वरूप एवं परमश्रेष्ठके तारके कारण कांग्रेसके लिए सरकारके साथ सहयोग करना तबतक सर्वथा असम्भव ही जान पड़ता है जबतक कि सरकार अपनी नीतिमें आमूल परिवर्त्तन न करे। इन कार्रवाइयों और इस तारसे ऐसा प्रतीत नहीं होता कि नौकरशाही जनताको सत्ता देनेको तनिक भी इच्छुक है और इन सबका उद्देश्य राष्ट्रके मनोबलको तोड़ना है। इनसे यह भी प्रकट होता है कि जिस कांग्रेससे सरकार सहयोगकी अपेक्षा रखती है उसीमें उसका विश्वास नहीं है। अभी हालमें बंगालमें कुछ व्यक्तियों द्वारा जिस प्रकारकी आतंक-वादी कार्रवाइयाँ की गई, उस प्रकारकी आतंकवादी कार्रवाइयोंकी भर्त्सना करनेमें— वे कार्रवाइयाँ चाहे जिस कारणसे की गई हों — कार्य-समिति किसीसे पीछे नहीं है। लेकिन साथ ही सरकारने अपने हालकी कार्रवाइयों और अध्यादेशोंके रूपमें जिस आतंकवादी वृत्तिका परिचय दिया है, उसकी भर्त्सना भी समिति उतने ही तीव्र स्वरमें करती है। कार्य-समिति मानती है कि कुमिल्लामें दो लड़कियोंने एक व्यक्तिकी हत्या करके राष्ट्रको घोर लज्जाजनक स्थितिमें डाल दिया और उसका यह निश्चित मत है कि ऐसे अपराधोंसे राष्ट्रकी बड़ी क्षति होती है — विशेषकर उस अवस्थामें जब कि वे अपनी सबसे बड़ी प्रतिनिधि संस्था कांग्रेसके जरिये, स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए, अहिंसक मार्गपर चलनेको प्रतिश्रुत हैं। लेकिन कार्यसमितिको उस बंगाल अध्या-देशका तो कोई औचित्य दिखाई नहीं देता जिसका उद्देश्य कुछ लोगोंके अपराधके लिए सारी जनताको दण्डित करना है। इसका असली उपाय ऐसे अपराधोंकी प्रेरणा देने-वाले कारणको दूर करना है। बंगाल अध्यादेशके अस्तित्वका तो कोई औचित्य नहीं

१. इसका मसविदा गांधीजी ने तैयार किया था; देखिए "बातचीत: वेलफेयर ऑफ इंडिया लीगके शिष्टमण्डलसे", २-१-१९३२ और "दैनन्दिनी, १९३१" में ३१ दिसम्बरका इन्दराज। इसका पाठ अगले शीर्षकके साथ वाइसरायको तार द्वारा सूचित किया गया था।

है, लेकिन संयुक्त प्रान्त और सीमा-प्रान्तके अध्यादेशोंका तो और भी कम औचित्य है। कांग्रेस कार्य-समितिका विचार है कि कांग्रेसने संयुक्त प्रान्तमें किसानोंको राहत दिलानेके लिए जो कदम उठाये, वे उचित हैं और उनका औचित्य सिद्ध किया जा सकता है। कार्य-समिति मानती है कि संयुक्त प्रान्तके किसान जिस प्रकारके गम्भीर आर्थिक कष्टमें निश्चित रूपसे पड़े हुए हैं उस प्रकारके आर्थिक कष्टमें पड़े लोगोंको इस बातका निर्विवाद अधिकार प्राप्त है कि यदि वे अन्य संवैधानिक तरीकोंसे राहत प्राप्त कर सफल न हो सकें — जैसा कि संयुक्त प्रान्तके किसान नहीं हो सके — तो वे लगान देना बन्द कर दें। संयुक्त प्रान्त कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष श्री शेरवानी तथा कांग्रेसके कार्यकारी महामन्त्री पण्डित जवाहरलाल नेहरूको, जो महात्मा गांधीसे बातचीत करने और कार्य-समितिकी बैठकमें भाग लेने बम्बई जा रहे थे, गिरफ्तार करके सरकार अपने अध्यादेशकी सीमासे भी आगे निकल गई है, क्योंकि बम्बईमें इन लोगों के उत्तर प्रदेशके लगानबन्दी आन्दोलनमें शामिल होनेका तो कोई सवाल ही नहीं था। जहाँतक सीमा-प्रान्तका सम्बन्ध है, खुद सरकारके ही साक्ष्योंसे लगता है कि वहाँ अध्यादेश जारी करने अथवा खान अब्दुल गफ्फार खाँ और उनके साथियोंको गिरफ्तार करने और बिना मुकदमा चलाये जेलमें बन्द कर देनेका कोई उचित कारण नहीं है। कार्य-समिति उस प्रान्तके निर्दोष और निहत्थे लोगोंपर गोलीबारीको मनमाना और अमानवीय कार्य मानती है और सीमान्तके बहादुर लोगोंको उनके साहस तथा सहन-शक्तिपर बधाई देती है, और कार्य-समितिको इस बातमें कोई सन्देह नहीं है कि अगर सीमा-प्रान्तके बहादुर लोग गम्भीरसे-गम्भीर उत्तेजनाके कारणोंके बावजूद अपनी अहिंसाकी भावना कायम रखते हैं तो उनका रक्त और उनके कष्ट भारतकी स्वातन्त्र्य प्राप्तिमें बहुत सहायक सिद्ध होंगे। कार्य-समिति भारत सरकारको उस घटनाक्रमकी खुली और निष्पक्ष जाँच करानेको आमन्त्रित करती है जिसके कारण उसे ये अध्यादेश जारी करने पड़े, सामान्य न्यायालयों और विधायक तन्त्रको स्थगित करना जरूरी लगा तथा उन अध्यादेशोंके अन्तर्गत उसने और भी जो अनेक कार्रवाइयाँ कीं उन्हें करना आवश्यक प्रतीत हुआ। और अगर एक योग्य जाँच-समिति नियुक्त की जाती है और प्रमाण जुटानेके लिए कार्य-समितिको सारी सुविधाएँ दी जाती हैं तो वह जाँच-समितिके समक्ष सबूत पेश करके जाँचमें मदद देनेको तैयार है। कार्य-समितिने गोलमेज परिषद्के समक्ष प्रधान मन्त्री द्वारा की गई घोषणा तथा संसदमें हुई बहसोंपर विचार किया है और वह उस घोषणाको कांग्रेसकी मांगोंके संदर्भमें सर्वथा असन्तोषजनक और अपर्याप्त मानती है और अपना यह विचार व्यक्त करती है कि पूर्ण स्वतन्त्रतासे कम किसी भी चीजको कांग्रेस सन्तोषजनक नहीं मान सकती। इस स्वतन्त्रतामें सुरक्षा-व्यवस्था, विदेशी मामलों तथा वित्त-व्यवस्थाका पूर्ण नियन्त्रण शामिल है, यद्यपि इनके सम्बन्धमें राष्ट्रके हितमें स्तष्टतः जैसा उचित लगे, उस तरहके सुरक्षात्मक पूर्वोपाय किये जा सकते हैं। कार्य-समितिने लक्ष्य किया है कि गोलमेज परिषद्में ब्रिटिश सरकार कांग्रेसको जाति, धर्म अथवा रंगके भेदभावके बिना सम्पूर्ण राष्ट्रका प्रतिनिधित्व करने और उसकी ओरसे बोलनेके अधि-

कारसे सम्पन्न संस्था माननेको तैयार नहीं थी। साथ ही कार्य-समिति दुःखके साथ इस बातको स्वीकार करती है कि उक्त परिषद्में साम्प्रदायिक एकता प्राप्त नहीं की जा सकी। इसलिए कार्य-समिति इस बातके लिए राष्ट्रका आह्वान करती है कि कांग्रेसकी सम्पूर्ण राष्ट्रका प्रतिनिधित्व करनेकी क्षमता प्रदर्शित करने तथा ऐसा वातावरण तैयार करनेके लिए वह सतत प्रयत्न करे जिससे विशुद्ध राष्ट्रीय दृष्टिकोणसे रचित संविधान राष्ट्रके सभी घटक-समुदायोंको स्वीकार हो सके। इस बीच कार्य-समिति अपना सहयोग देनेके लिए तैयार है, बशर्ते कि परमश्रेष्ठ वाइसराय महोदय अपने तार-पर पुनर्विचार करें, अध्यादेशों तथा सरकारके हालके कार्योंके सम्बन्धमें राहत दी जाये, किसी भी भावी वार्त्तामें कांग्रेसके लिए अपनी पूर्ण स्वतन्त्रताकी माँगपर आग्रह करनेकी पूरी गुंजाइश रहने दी जाये और जबतक पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त न हो तबतक देशका प्रशासन जन-प्रतिनिधियोंकी सलाहसे चलाया जाये। यदि उपर्युक्त बातोंके सम्बन्धमें सरकारने कोई सन्तोषजनक प्रतिक्रिया नहीं दिखाई तो उसे कार्य-समिति इस बातका द्योतक समझेगी कि उसने दिल्लीके समझौतेको रद्द कर दिया है। यदि सरकारने कोई सन्तोषजनक प्रतिक्रिया नहीं दिखाई तो उस अवस्थामें कार्य-समिति राष्ट्रको उदाहरणस्वरूप दिये जा रहे निम्नलिखित विषयोंके सम्बन्धमें उल्लिखित शर्तोंका पालन करते हुए सविनय अवज्ञा — जिसमें लगानबन्दी भी शामिल है — करनेको आमन्त्रित करती है: (१) कोई भी प्रान्त, जिला, तहसील या गाँव तबतक सविनय अवज्ञा करनके लिए बाध्य नहीं है जबतक कि वहाँके लोग इस संघर्षके अहिंसात्मक स्वरूपको उसके समस्त फलितार्थोंके साथ-साथ न समझते हों और जान-मालकी क्षतिकी सीमा तक कष्ट उठानेको तैयार न हों। (२) उत्तेजनाका गम्भीरसे-गम्भीर कारण उपस्थित रहने पर भी मन, वचन और कर्मसे अहिंसाका पालन करना चाहिए और यह तो समझ ही लेना चाहिए कि इस आन्दोलनका उद्देश्य बदला लेना या अत्याचारीको चोट पहुँचाना नहीं बल्कि स्वेच्छासे कष्ट सहन करके और आत्मशुद्धिके द्वारा उसका हृदय परिवर्त्तन करना है। (३) सरकारी अधिकारियों, पुलिस या राष्ट्रविरोधी लोगोंको चोट पहुँचानेके लिए सामाजिक बहिष्कारका तरीका नहीं अपनाना चाहिए और यह चीज अहिंसाकी भावनाके सर्वथा प्रतिकूल है। (४) यह याद रखना चाहिए कि अहिंसक आन्दोलनोंमें आर्थिक सहायताकी गुंजाइश नहीं है; इसलिए किरायेके स्वयं-सेवक नहीं रखे जाने चाहिए, लेकिन जहाँ सम्भव हो वहाँ केवल उनके तथा जेल जानेवाले या मारे जानेवाले गरीब पुरुषों और स्त्रियोंके आश्रितोंके जीवन-यापनका खर्च देनेकी छूट है। लेकिन, कार्य-समिति इस उद्देश्यके लिए काम करनेवाले कार्य-कर्त्ताओंसे कंगाली और तंगीको झेलते हुए भी संघर्ष जारी रखनेकी अपेक्षा करती है। (५) सभी विदेशी कपड़ों — चाहे वे ब्रिटेनके हों या किसी अन्य देशके — का बहि-ष्कार हर हालतमें आवश्यक है। (६) सभी कांग्रेसी पुरुषों और स्त्रियोंसे हाथ-कते और हाथ-बुने खद्दरके उपयोगकी अपेक्षा रखी जाती है, यहाँतक कि देशी मिलोंके बने कपड़े भी उनके लिए त्याज्य होने चाहिए। (७) शराब तथा विदेशी कपड़ेकी दुकानों पर धरना देनेका काम जोरदार ढंगसे चलाना चाहिए। इस कामको मुख्यतः स्त्रियाँ

करें, लेकिन अहिंसाका पूरा पालन होना चाहिए। (८) गैरकानूनी तौरपर नमक बनाना और एकत्र करना फिरसे शुरू कर देना चाहिए। (९) यदि जुलूसों और प्रदर्शनोंका आयोजन किया जाये तो उनमें केवल वही लोग शामिल हों जो लाठियोंके प्रहार या गोलियोंकी बौछार अडिग होकर सह सकते हों। (१०) अहिंसात्मक लड़ाईमें भी अत्याचारियों द्वारा उत्पादित मालका बहिष्कार सर्वथा उचित है, क्योंकि अत्याचारियोंके साथ व्यापारिक सम्बन्धोंको बढ़ावा देना या कायम रखना पीड़ितोंका कर्त्तव्य नहीं है। इसलिए ब्रिटिश माल और पेढ़ियोंका बहिष्कार फिरसे शुरू करना चाहिए और उसे जोर-शोरसे चलाना चाहिए। (११) जहाँ-कहीं सम्भव और उचित माना जाये वहाँ अनैतिक और लोगोंको चोट पहुँचानेवाले नियमों तथा आदेशोंकी सविनय अवज्ञा करनी चाहिए। (१२) अध्यादेशोंके अन्तर्गत जारी किये गये सभी अन्यायपूर्ण आदेशोंकी सविनय अवज्ञा की जाये।

[अंग्रेजीसे]

इंडिया इन १९३१-३२, पृष्ठ २३५-३७

२९६. तार : वाइसरायके निजी सचिवको

बम्बई
१ जनवरी, १९३२

अपने इसी २९ तारीखके तारके उत्तरमें भेजे परमश्रेष्ठके तारके लिए मैं उन्हें धन्यवाद देता हूँ। तार पढ़कर बड़ा दुःख हुआ। कारण, उनकी ओर अत्यन्त मैत्रीपूर्ण भावसे सुलहके लिए जो हाथ बढ़ाया गया उसे उन्होंने इस तरहसे झटक दिया है जो उन-जैसे उच्च पदस्थ व्यक्तिके लिए कदाचित् ही शोभा देनेवाला हो। मैंने तो एक जिज्ञासुकी तरह उनसे कुछ-एक प्रश्नोंपर प्रकाश डालनेका निवेदन किया था ताकि सरकार द्वारा उठाये गये जिन अत्यन्त गम्भीर और असाधारण कदमोंका उल्लेख मैंने किया था उनके सम्बन्धमें उसका क्या कहना है, यह समझ सकूँ। मैंने मित्रताका जो हाथ बढ़ाया उसकी कद्र करनेके बजाय परमश्रेष्ठने यह कहकर उसे ठुकरा दिया है कि पहले मैं अपने सुयोग्य साथियोंके आचरणोंका खण्डन करूँ। यदि मैं ऐसा अशोभनीय आचरण करूँ और उनसे मुलाकातका समय माँगूँ तो भी वे इस बातके लिए तैयार नहीं हैं कि मैं मुलाकातके दौरान राष्ट्रके लिए इतने अधिक महत्त्वपूर्ण इन विषयोंकी चर्चा उनसे करूँ।

मेरे विचारसे, इन अध्यादेशों और कार्योंके सामने संविधानके प्रश्नका कोई महत्त्व ही नहीं रह जाता है, क्योंकि ये अध्यादेश और कार्य ऐसे हैं कि यदि इनका डटकर विरोध नहीं किया गया तो ये राष्ट्रके आत्मसम्मान और मनोबलको बिलकुल नष्ट करके छोड़ेंगे। मैं आशा

करता हूँ कि कोई भी आत्मसम्मानवाला भारतीय इस सन्दिग्ध सम्भावनाका विचार करके कि हमें एक संविधान मिलनेवाला है, राष्ट्रके उत्साहको भंग करनेका खतरा नहीं उठायेगा — विशेषकर इसलिए कि तबतक कहीं ऐसा न हो जाये कि राष्ट्रमें उस संविधानको चलानेकी शक्ति ही न रह जाये। मैं यह भी बता दूँ कि जहाँतक सीमा-प्रान्तका सम्बन्ध है, आपके तारमें तथ्योंका जो विवरण दिया गया है, उससे साफ दिखता है कि लोकप्रिय नेताओंको गिरफ्तार करने, असाधारण अध्यादेश जारी करने, जान-मालको सर्वथा अरक्षित बना देने और निहत्थी तथा अहिंसक भीड़ोंपर उनके विश्वस्त नेताओंकी गिरफ्तारीके विरुद्ध प्रदर्शनका दुस्साहस करनेके कारण गोलीबारी करनेका कोई औचित्य नहीं था। यदि खान साहब अब्दुल गफ्फारने पूर्ण स्वतन्त्रताके अधिकारपर आग्रह किया तो उनकी यह माँग स्वाभाविक थी और यही माँग कांग्रेसने १९२९में लाहौरमें की थी, मगर तब किसीको कोई सजा नहीं दी गई फिर मैंने लन्दनमें ब्रिटिश सरकारके समक्ष पूरे जोरसे यह माँग पेश की थी। इसके अलावा, मैं वाइसराय महोदयको यह भी याद दिला दूँ कि यद्यपि सरकारको यह मालूम था कि कांग्रेसके प्रादेशपत्रमें ऐसी माँग की गई है, फिर भी मुझे कांग्रेसके प्रतिनिधिकी हैसियतसे लन्दन परिषद्में भाग लेनेके लिए आमन्त्रित किया गया। इसी तरह दरबारमें शामिल होनेसे इनकार-भर कर देना मुझे ऐसा अपराध नहीं लगता जिसके लिए किसीको तत्काल जेलमें डाल दिया जाये। यदि खान साहब साम्प्रदायिक विद्वेष फैला रहे थे तो यह बात निस्सन्देह खेदजनक थी। वैसे तो मेरे पास उनका अपना वक्तव्य मौजूद है, जिसमें उन्होंने इससे उलटी बातें कही हैं, लेकिन अगर मान भी लें कि उन्होंने साम्प्रदायिक विद्वेष फैलाया, तो भी उचित तो यह था कि उनपर खुला मुकदमा चलाया जाता, जहाँ वे अपने ऊपर लगाये आरोपकी सफाई दे सकते। संयुक्त प्रान्तके सम्बन्धमें परमश्रेष्ठको निश्चय ही गलत बातें बताई गई हैं, क्योंकि कांग्रेसने किसी लगान-बन्दी आन्दोलनकी घोषणा नहीं की, बल्कि सचाई यह थी कि सरकार तथा कांग्रेसके प्रतिनिधियोंके बीच बातचीत चल ही रही थी कि लगान वसूल करनेका समय आ गया और लगान माँगा जाने लगा। इसलिए कांग्रेसियोंको किसानोंको बातचीतके परिणाम सामने न आने तक लगान न देनेकी सलाह देनी पड़ी, और श्री शेरवानीने कांग्रेसकी ओरसे यह प्रस्ताव किया था कि यदि अधिकारिगण बातचीतके दौरान लगान वसूल करना बन्द रखें तो जनताको दी गई यह सलाह वापस ले लेंगे। मैं यह निवेदन करनेकी धृष्टता करता हूँ कि यह ऐसा मामला नहीं है जिसको उस तरहसे आनन-फानन बरतरफ

कर दिया जाये जैसा कि आपके तारमें किया गया है। संयुक्त प्रान्तमें यह विवाद बहुत समयसे चला आ रहा है और इसका सम्बन्ध उन करोड़ों किसानोंके हिताहितसे है जिनके बारेमें सभी जानते हैं कि वे गरीबीकी चक्कीमें पिसे जा रहे हैं। जनताके कल्याणकी चिन्ता करनेवाली कोई भी सरकार कांग्रेस-जैसी संस्थाके स्वेच्छासे दिये गये सहयोगका स्वागत करती, क्योंकि यह बात निर्विवाद है कि उसका जनसाधारण पर बड़ा प्रभाव है और उसकी एकमात्र आकांक्षा ईमानदारीके साथ जनताकी सेवा करना है। और मैं यहाँ यह भी बता दूँ कि मैं मानता हूँ कि जिस समुदायने असह्य आर्थिक बोझसे छुटकारा पानेके अन्य सभी उपाय आजमाकर देख लिये हैं, उसका यह प्राचीन, स्वाभाविक और कभी न छीना जा सकनेवाला अधिकार है कि वह कर देना बन्द कर दे। मैं इस कथनका स्पष्ट खण्डन करता हूँ कि कांग्रेसका किसी भी तरहसे अव्यवस्था फैलानेका कोई इरादा है।

बंगालके सम्बन्धमें सरकारकी ही तरह कांग्रेस भी हत्याकी घटनाओं की भर्त्सना करती है और ऐसे अपराधोंको समूल नष्ट कर देनेके लिए आवश्यक समझी जानेवाली किसी भी कार्रवाईमें सरकारके साथ हार्दिक सहयोग करनेको तैयार है। लेकिन, जहाँ कांग्रेस आतंकवादी तरीकोंकी भर्त्सना तीव्रतम शब्दोंमें करेगी, वहाँ वह बंगाल अध्यादेश तथा उसके अधीन की गई कार्रवाइयोंके रूपमें सामने आनेवाली सरकारकी आतंकवादी नीतिके साथ भी अपना नाम नहीं जुड़ने देगी, बल्कि उसने अपने ऊपर अहिंसा-धर्मकी जो मर्यादा लगा रखी है उस मर्यादाका पालन करते हुए कानून-समर्थित सरकारी आतंकका विरोध करेगी। मैं आपके तारमें बताई इस बातको हृदयसे स्वीकार करता हूँ कि सहयोग पारस्परिक होना चाहिए, लेकिन आपके तारसे तो मैं अनिवार्यतः इसी निष्कर्षपर पहुँचता हूँ कि परमश्रेष्ठ कांग्रेससे तो सहयोगकी माँग करते हैं, लेकिन वे सरकारकी ओरसे कोई सहयोग देनेको तैयार नहीं हैं। इन मामलोंपर बातचीत करनेसे उनके साफ इनकार कर देनेका मैं और कोई अर्थ लगा ही नहीं सकता हूँ। मैंने यह समझानेकी कोशिश की है कि इन मामलोंके दो पक्ष हैं। जनताके पक्षको जिस रूपमें मैंने समझा है उस रूपमें रख दिया है, लेकिन निश्चित निष्कर्षपर पहुँचनेसे पहले मैं दूसरे, अर्थात् सरकारी पक्षको भी समझ लेनेको उत्सुक था। मेरा इरादा था कि उसके बाद ही मैं कांग्रेसको कोई सलाह दूँ। आपके तारके अन्तिम अनुच्छेदके बारेमें मेरा निवेदन यह है कि अपने साथियों और सहयोगियोंके कार्योंके लिए — चाहे वे लोग सीमा-प्रान्तके रहे हों या संयुक्त प्रान्तके — अपने

नैतिक दायित्वसे इनकार करना मेरे लिए मुनासिब नहीं होगा, लेकिन मैं यह स्वीकार करता हूँ कि उन साथियों और सहयोगियों, तफसीलवार कार्यों और प्रवृत्तियोंकी जानकारी मुझे नहीं थी, क्योंकि तब मैं भारतमें नहीं था; और चूँकि कांग्रेसकी कार्य-समितिको सलाह देना तथा उसका मार्गदर्शन करना मेरे लिए आवश्यक था और चूँकि मैं वस्तुस्थितिकी पूरी जानकारी प्राप्त करना चाहता था, इसीलिए मैंने साफ मनसे और पूरी सदाशयताके साथ परमश्रेष्ठसे मुलाकातका समय माँगा और सोच-समझकर उनसे अपना मार्गदर्शन करनेका निवेदन किया। मैं परमश्रेष्ठपर अपनी यह राय जाहिर किये बिना नहीं रह सकता कि उन्होंने जो उत्तर देनेकी कृपा की है वह उस मैत्रीपूर्ण तथा सदाशयतासे भरे निवेदनका योग्य उत्तर नहीं था और अगर अब भी बहुत देर नहीं हो गई हो तो मैं परमश्रेष्ठसे अपने निर्णयपर पुनर्विचार करनेको कहूँगा और यह निवेदन करूँगा कि वे मुझको एक मित्र मानकर वार्त्ताके विषयोंपर कोई प्रतिबन्ध लगाये बिना मुझसे मिलें। अपनी ओरसे मैं यह वादा कर सकता हूँ कि वे जो भी तथ्य मेरे सामने रखेंगे उनपर मैं खुले दिमागसे विचार करूँगा। मैं बेहिचक और खुशी-खुशी विभिन्न प्रान्तोंमें जाऊँगा और अधिकारियोंकी सहायतासे प्रश्नके दोनों पक्षोंका अध्ययन करूँगा। उसके बाद यदि मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा कि जनताने गलती की थी और कार्य-समितिको तथा मुझे भी गुमराह किया गया तथा सरकार सही थी तो यह सब निस्संकोच और स्पष्ट रूपसे स्वीकार करूँगा और कांग्रेसको तदनुसार सलाह दूँगा। सरकारके साथ सहयोग करनेकी अपनी इच्छा और तत्परताके साथ-साथ मुझे परमश्रेष्ठके सामने अपनी मर्यादाएँ भी रख देनी चाहिए। अहिंसा मेरा सम्पूर्ण धर्म है। मैं मानता हूँ कि सविनय अवज्ञा न केवल जनताका — विशेषकर जब अपने ही शासनमें उसकी आवाजका कोई महत्त्व नहीं हो — स्वाभाविक अधिकार है, बल्कि यह हिंसा अथवा सशस्त्र विद्रोहका प्रभावसम्पन्न विकल्प भी है। इसलिए मैं अपने धर्मसे कभी भी डिग नहीं सकता। इस धर्मका पालन करनेके लिए और जनताका मार्गदर्शन करनेका शायद और मौका मुझे मिले ही नहीं, इस आशयकी उन निर्विवाद खबरोंके आधारपर जिनकी पुष्टि भारत सरकारकी हालकी कार्रवाइयोंसे होती है, कार्य-समितिने मेरी सलाह मानकर प्रस्ताव पास किया है, जिसमें सविनय अवज्ञाकी एक रूपरेखा अस्थायी तौरपर प्रस्तुत की गई है। साथमें मैं प्रस्तावका पाठ भेज रहा हूँ। यदि परमश्रेष्ठ मुझसे मिलना योग्य समझें तो हमारी बातचीत होनेतक इस आशासे कि उसके परिणाम-स्वरूप प्रस्तावको अन्ततः शायद वापस ही ले लेना पड़े, इसके

अनुसार कार्रवाई करना स्थगित रखा जायेगा। मैं यह स्वीकार करता हूँ कि मेरे और परमश्रेष्ठके बीच हुआ पत्रव्यवहार इतना अधिक महत्त्वपूर्ण है कि उसका प्रकाशन रोककर नहीं रखा जा सकता। इसलिए, मैं अपना तार, आपका उत्तर, यह प्रत्युत्तर और कार्य-समितिका प्रस्ताव प्रकाशनार्थ भेज रहा हूँ।[1]

[अंग्रेजीसे]

इंडिया इन १९३१-३२; यंग इंडिया, ७-१-१९३२ भी।

२९७. परिचय-पत्र : प्रिवा-दम्पतिको[2]

१ जनवरी, १९३२

श्री प्रिवा और उनकी धर्मपत्नी हिंदुस्तानके मित्र हैं और आजकलकी हालत देखनेके लिए मेरे साथ आये हैं। प्रत्येक हिंदीसे प्रार्थना है कि इन दंपतिको यथा-संभव सहाय करें और उनसे प्रेम करें।

मोहनदास गांधी

हिन्दीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८७९१) से।

२९८. तार : प्रभाशंकर पट्टणीको

बम्बई

२ जनवरी, १९३२

सर प्रभाशंकर पट्टणी
भावनगर

सम्भवतः कल रात अहमदाबादके लिए प्रस्थान कर दूँगा। आपका वहीं आना शायद बेहतर रहेगा।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९२२)से।

१. वाइसरायके निजी सचिव द्वारा भेजे इस तारके उत्तरके लिए देखिए परिशिष्ट ४।

२. यह परिचय-पत्र अंग्रेजीमें भी दिया गया था।

२९९. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

[२ जनवरी, १९३२][1]

प्रिय जवाहर,

तुम्हारा पत्र पाकर बड़ी खुशी हुई। कोई कारण नहीं कि तुम हम बेचारे बाहरवालों से ईर्ष्या करो। लेकिन हमें तुम्हारे भाग्यसे अवश्य ईर्ष्या है कि तुम्हें सारा गौरव प्राप्त हो रहा है और हम बाहरवालों के हिस्से पड़ा है बेगार करना। लेकिन हम बदला लेनेकी साजिश कर रहे हैं। आशा है तुम्हें कुछ अखबार दिये जाते होंगे। मैं जो-कुछ भी कर रहा हूँ, उसमें सदा तुम्हारा खयाल बना रहता है।

अभी पिछले दिनों मैं कमलासे मिला था। बेशक, उसे खूब आरामकी जरूरत है। मैं एक बार फिर उससे मिलनेकी कोशिश करूँगा और इस बातके लिए आग्रह करूँगा कि जबतक वह पूर्णरूपसे स्वस्थ न हो जाये, कमरेसे बाहर न निकले। आशा है, डॉ० महमूदके[2] सम्बन्धमें की गई कार्रवाईसे तुम सहमत होगे। मेरा निश्चित मत है कि आनन्द-भवनपर लगाया कर चुकानेका वचन पूरा किया जाना चाहिए।[3]

तुम दोनोंको स्नेह,

बापू

[पुनश्च :]

ईश्वर और सरकारकी इच्छा रही तो कल मैं आश्रम जा रहा हूँ। वहाँसे दो-तीन दिनमें लौट आऊँगा।

[अंग्रेजीसे]

ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स, पृष्ठ १०४

३००. पत्र : नारणदास गांधीको

२ जनवरी, १९३२

चि० नारणदास

तुम्हारे पत्र तो मिलते ही रहे हैं, किन्तु मैं तुम्हें किस समय पत्र लिखूं? इस समय रातके ११-३० बज रहे हैं। इस बातकी सम्भावना है कि शायद आज रातको मुझे गिरफ्तार कर लिया जाये; इसलिए तुम्हें यह पत्र लिखने बैठा हूँ। तुम्हें

१. साधन-सूत्रमें तिथि २९ जनवरी बताई गई है, जो स्पष्टतः चूक है। नेहरू स्मारक संग्रहालयमें सुरक्षित मूल पत्रपर तिथि २ जनवरी दी हुई है।

२. श्री सैयद महमूद।

३. यह वाक्य मूलमें इसी प्रकार है।

क्या सीख दूँ? तुमपर मुझे पूर्ण विश्वास है। तुम्हारे सामने जो भी कठिनाइयाँ आयेंगी प्रभु तुम्हें उनका सामना करनेकी शक्ति देगा। मेरे पकड़े जानेके बाद मीरा-बहन वहाँ आ जायेगी। तुम्हें उसका पथ-प्रदर्शन करना है। यदि कहींसे उसकी माँग आये तो उसका निर्णय भी तुम्हें ही करना है। सम्भवतः कुछ ही दिनोंमें प्रभावती भी वहाँ पहुँच जायेगी। लक्ष्मीसे कहना कि उसका पत्र मुझे मिल गया है और उसका निर्णय मुझे पसन्द आया है।

माता-पितासे मेरे दण्डवत् कहना। कितना अच्छा होता यदि मैं उनके दर्शन कर पाता। मुझे ऐसा याद आता है कि आश्रममें जो पुस्तकें हैं उनमें से स्कूलके लिए उपयोगी पुस्तकोंको छोड़कर, शेष विद्यापीठको दे देनेको मैंने कहा था। काका कह रहे थे कि तुम्हारा खयाल कुछ अलग है। जो हो किन्तु विद्यापीठको पुस्तकें दे डालनेको मैं बुद्धिमत्ता मानता हूँ। मेरा विश्वास है कि मासिक पत्र-पत्रिकाएँ वहाँ दे देनेसे वे अधिक उपयोगमें आयेंगी और सुरक्षित भी रहेंगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१)से। सी० डब्ल्यू० ८१९८ भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

३०१. बातचीत : वेलफेयर ऑफ इंडिया लीगके शिष्टमण्डलसे[1]

[बम्बई]
२ जनवरी, १९३२

मेरे तारकी[2] भाषा बहुत ही शिष्ट और मैत्रीपूर्ण थी। मेरे मित्रोंने 'मार्ग-दर्शन' शब्दपर आपत्ति की थी, लेकिन अनुनय-विनय कर मैंने उन्हें मना लिया। आप देख सकते हैं कि वाइसरायने अपने-आपको बिलकुल गलत स्थितिमें डाल लिया है। और अध्यादेशके सम्बन्धमें दलीलें देना इस विषयसे निबटनेका गलत तरीका था। वे यह भूल गये कि मैंने उनसे कोई साधारण नागरिककी हैसियतसे नहीं, बल्कि ऐसे व्यक्तिके रूपमें निवेदन किया था जिसका उनसे बराबर व्यवहार चलता रहता है और जिसके साथ उनको इस भावी योजनापर बात करनी थी कि गोलमेज परिषद्के कार्यको किस प्रकार अच्छेसे-अच्छे ढंगसे सम्पन्न करना चाहिए। उनका यह कहना अप्रासंगिक था कि मैं अध्यादेशोंके सम्बन्धमें बातचीत नहीं कर सकता। दूसरी शर्त — अर्थात् यह कि मुझे अपने साथियोंके रवैयेका खण्डन करना चाहिए — अपमानजनक है। बात यह है कि सरकार अपनी सीमा लाँघ गई है। यह लॉर्ड विलिंग्डनकी भाषा नहीं है। इस उत्तरको तो उनकी ओरसे औरोंने तैयार किया है।

१. महादेव देसाईके लेख "द हिस्टॉरिक वीक" (ऐतिहासिक सप्ताह) से उद्धृत।
२. देखिए "तार : वाइसरायको", २९-१२-१९३१।

यह बहुत बुरी बात है कि भारत सरकार यह जानते हुए भी कि कोई भी गलती होनेपर भारतमें भयावह परिस्थिति उत्पन्न हो सकती है, इस तरहका व्यवहार करे। यदि आपको विश्वास हो कि मित्रताकी भावनासे बढ़ाये मेरे हाथको झटककर और मेरे लिए अपने दरवाजे बन्द करके भारत सरकारने भारी भूल की है तो उसे अपने निर्णयपर पुनर्विचार करने और बिना किसी शर्तके मुझसे बातचीत करनेपर मजबूर करनेके लिए आपको जमीन-आसमान एक कर देना चाहिए। इसपर आप पूछेंगे कि तब मैंने कार्य-समितिसे एक अस्थायी प्रस्ताव क्यों पास करवाया। क्या इसका मतलब भरी पिस्तौल लेकर किसीपर दबाव डालना, धमकी देना नहीं है? मेरा उत्तर यह है कि नहीं, ऐसा नहीं है। कारण, भारत सरकार यह जानती थी कि कांग्रेस ऐसी संस्था है जिसने सविनय अवज्ञाको अपने धर्मकी तरह अपना रखा है। कांग्रेसने ऐसा बहुत-कुछ किया है जिससे देश और सरकारको यह विश्वास हो जाना चाहिए कि अन्यायके निराकरणके लिए चलाये गये आन्दोलनमें कांग्रेस सशस्त्र विद्रोहकी सलाह कभी नहीं देगी, बल्कि वह अहिंसात्मक अवज्ञाका ही परामर्श देगी। स्पष्ट ही, उसने इस तथ्यको नजरअन्दाज कर दिया कि सविनय अवज्ञा एक जायज चीज मान ली गई है। दिल्ली समझौतेमें सविनय अवज्ञाका त्याग नहीं किया गया था; संघर्ष-विरामके दौरान उसे केवल बन्द कर दिया गया था। शिमलामें जब हमारे अन्तिम पत्रोंका — जिन्हें दूसरे समझौतेके हिस्सेके रूपमें प्रकाशित किया गया, उन पत्रोंका — आदान-प्रदान हुआ था तो अपने पत्रमें मैंने कहा था कि यदि सारे प्रयत्न विफल हो गये तो उस हालतमें हम सविनय अवज्ञा करनका अपना अधिकार सुरक्षित रखते हैं।[1] इस प्रकार सरकारका उत्तर, जिसके द्वारा उसने अन्तिम रूपसे अपने दरवाजे बन्द कर लिये हैं, दिल्ली-समझौते और उस शिमला-समझौतेका सीधा उल्लंघन है जिसमें लॉर्ड विलिंग्डन भी शामिल थे। इस प्रकार आपको यह देखना चाहिए कि भारत सरकार कैसी भारी गलत स्थितिमें जा फँसी है। इसलिए आपको मेरा यह सुझाव है कि तार भेजनेके बाद अब आप कुछ और कार्रवाई भी कीजिए और अगर सरकार मुलाकात देने-जैसी छोटी-सी बातपर राजी न हो तो कांग्रेसके पक्षमें आ मिलिए।

मुझे लोगोंको यह कहते सुनकर बड़ा दुःख होता है कि मैं अपने उग्रपंथी साथियोंके दबावमें आ गया। मैं तो स्वयं ही सबसे बड़ा उग्रपंथी हूँ। गत चार वर्षोंसे मेरे साथी मेरे प्रति जैसी वफादारी दिखाते आये हैं, उससे अधिक वफादारी दिखाने वाले साथी मैंने अन्यत्र नहीं देखे हैं, मेरे साथियोंने कभी भी किसी बातके लिए मुझपर जोर नहीं डाला है और हम सबके द्वारा पास किये गये सभी प्रस्तावों और हमारे भेजे सभी तारोंके मसविदे मैंने ही तैयार किये हैं। इन मामलोंमें उन्होंने मुझे विशेषज्ञ माना है और अपनी इच्छानुसार बरतनेकी छूट दे रखी है। हमने काफी देरतक विचार-विमर्श किया और लोगोंकी भावना यह थी कि अस्थायी ढंगका एक प्रस्ताव तो पास कर दिया जाये, लेकिन उसे प्रकाशित न किया जाये। इसपर

1. देखिए खण्ड ४७।

'नहीं' कहनेवाला मैं ही था। यदि उसे मैं दबा रखता तो यह वाइसराय और राष्ट्र दोनोंके प्रति अन्याय होता। मैंने कहा कि जब प्रस्ताव पास हो गया तो वाइसराय साहबको पूरे तथ्य बता देने चाहिए। सविनय अवज्ञा या अहिंसासे जैसा अन्योन्याश्रय सम्बन्ध मेरा है वैसा मेरे साथियोंका नहीं है। यहाँ जिस तरह 'उसीके लिए जियो और उसीके लिए मरो' वाली बात मुझपर लागू होती है उस तरह उनपर लागू नहीं होती। लेकिन, मेरे सामने और कोई रास्ता ही नहीं था। जिसके सामने सशस्त्र विद्रोहकी घोषणा करनेका विकल्प हो वह तो आज जो परिस्थिति है उसमें सुलहकी बात करता रह सकता है, लेकिन जिसके सामने ऐसा विकल्प नहीं है, वह कैसे ऐसा कर सकता है — मैं कैसे सुलहकी बात करता रह सकता हूँ? जो हुआ है, यही है; सविनय अवज्ञा मेरा धर्म है, मैं उसे कैसे छोड़ सकता हूँ? यही कारण है कि यद्यपि राष्ट्रका पैसा खर्च करते हुए मैं बहुत कंजूसीसे काम लेता हूँ, फिर भी मैंने उत्तरसहित प्रस्तावके पूरे पाठको तार द्वारा सूचित करनेका खर्च उठाया।

तार भेजनेके बाद अब आपको जो करना चाहिए वह मुझे वाइसरायके पास भेजना नहीं, बल्कि आपका स्वयं उनसे मिलना है। उनसे आपको सिर्फ इतना ही कहना है कि ऐसे मौकेपर, जबकि एक बहुत बड़ा संवैधानिक कदम उठाया जा रहा है, राज्यका प्रधान जन-प्रतिनिधिसे मिलनेसे इनकार करे, यह बात ठीक नहीं लगती।[1]

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ७-१-१९३२

३०२. सन्देश : खेड़ाके किसानोंको[2]

अहमदाबाद
[३ जनवरी, १९३२के पूर्व]

गुजरातमें झाँकने, आश्रमवासियों और अन्य साथियोंसे मिलने और आपकी कठिनाइयोंमें आपके साथ संवेदना और सहानुभूति प्रकट करनेकी मेरी बड़ी इच्छा थी। परन्तु मुझे डर है कि यह सब सम्भव नहीं होगा।

सत्याग्रहीको जब जेल या कोई उस-जैसी चीज आमन्त्रित कर रही हो तो वह परिवार या मित्रका सपना तक नहीं देख सकता और न उनसे मिलने या विदाई लेनेके लिए प्रतीक्षा ही कर सकता है। अपनी मौजूदा स्थितिमें मैं इसी तरहकी मानता हूँ। इसलिए यदि आपसे भेंट सम्भव न हो तो मेरी इस बातपर विश्वास करना कि ऐसा कर्त्तव्यकी अत्यावश्यक माँगके कारण ही हुआ है। ऐसा लगता है कि संग्राम हमारे सामने खड़ा है और वह इस बार अधिक गम्भीर होगा।

१. गांधीजी से बातचीत करनेके बाद शिष्टमण्डलने अपने अध्यक्षको यह अधिकार दिया कि वे वाइसरायको तार भेजकर बतायें कि गांधीजी के मनमें कोई दुराग्रह नहीं है और इसलिए यह और भी जरूरी हो जाता है कि उन्हें वाइसरायसे मिलकर परिस्थितिपर बातचीत करनेका मौका दिया जाये।

२. साधन-सूत्रके अनुसार यह सन्देश गुजरातीमें था।

उन्हें लड़ाईके प्रहारको सहने और अडिग रहनेके लिए प्रेरित करते हुए, गांधीजी उनसे हँसी-खुशी अपनी जमीन, माल-असबाब और मवेशियोंका त्याग करने, सभी तरहके कष्ट भोगने और लाठी-गोली समेत सभी तरहका उत्पीड़न सहनेका लिए कहते हैं। गांधीजी उनसे यह अपील करते हैं कि इन सबको सहते हुए भी उन्हें तनिक भी उत्तेजित नहीं होना है और अपने उत्पीड़कपर तरस खाना है और उसके लिए शुभकामना करनी है।

प्रसिद्ध गुजराती कवि शामल भट्टका यह वचन उद्धृत करते हुए कि "जो बुराईका बदला भलाईसे देता है, वही वस्तुतः जीता है", गांधीजी आगे कहते हैं :

प्रेमकी इस धाराका आप पान कर चुके हैं और दूसरोंके अनुभव देख चुके हैं। इसलिए आपको उस किसान तकको, जो आपका साथ नहीं दे रहा है या आपके विरुद्ध है, ठेस नहीं पहुँचानी है। आपको उसपर भी तरस खाना है, क्योंकि कर्त्तव्य के मामलेमें यदि उसका मत आपसे नहीं मिलता, तो यह उसका दोष नहीं है।

अपनी बात जारी रखते हुए गांधीजी कहते हैं कि वल्लभभाईको लोगोंने सरदारकी उपाधि दी है, और फिर आगे कहते हैं :

उनकी इज्जत और शक्ति आपके हाथोंमें है। यही नहीं, बल्कि पूरे भारतकी प्रतिष्ठा और इज्जत आपके हाथोंमें है। संघर्ष फिर छिड़ जानेपर, भारत और सारे संसारकी निगाहें आपपर टिकी हैं। इन सब बातोंको याद रखिए और सत्याग्रहीके योग्य शक्तिके लिए ईश्वरसे प्रार्थना कीजिए।

किसानोंसे यह आग्रह करते हुए कि उन्हें अपने धाराला भाइयोंके साथ मेल-मिलापसे रहना चाहिए, गांधीजी अन्तमें कहते हैं :

यह याद रखिए और अपने-आपको ढाढ़स दीजिए। यह विश्वास रखिए कि आपकी जब्त की गई सब जमीन आपको वापस मिलेगी। यह कोई प्रलोभन नहीं है। मैं जब यह कहता हूँ कि सच्चे सत्याग्रहीकी यह सच्ची नींव है, तो इसके एक-एक शब्दपर विश्वास करिए।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ४-१-१९३२

३०३. मन्दिर-प्रवेश सत्याग्रह

[३ जनवरी, १९३२ या उसके पूर्व][1]

पिछले सप्ताह जिन दिनों कार्य-समितिकी बैठक चल रही थी, केरलके कई प्रतिनिधियों और दूसरे कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओंसे भी मन्दिर-प्रवेशसे सम्बन्धित प्रश्नोंपर अनेक बार मेरी बातचीत हुई। मुलाकातियोंने प्रश्नोत्तरके रूपमें इन वार्त्ताओंकी जो रिपोर्टें प्रकाशित कराई हैं, उनमें भूल-सुधार करनेके बजाय मैं नीचे वह सब दे रहा हूँ जिन्हें मैं उनके प्रश्नोंके उत्तर मानता हूँ। पाठक देखेंगे कि उत्तर इस तरहके हैं कि अलगसे प्रश्नोंका उल्लेख करनेकी जरूरत नहीं रह जाती।

१. इस बातको ध्यानमें रखना आवश्यक है कि यद्यपि अस्पृश्यता-निवारणके प्रश्नका राजनीतिक महत्त्व बहुत अधिक है, किन्तु तत्त्वतः और मुख्य रूपसे यह एक ऐसा धार्मिक प्रश्न है जिसका समाधान हिन्दुओंको करना है और इस दृष्टिसे यह उनके लिए राजनीतिक प्रश्नसे भी अधिक महत्त्वपूर्ण है। मतलब यह कि सवर्णोंके अस्पृश्यता-निवारणके कर्त्तव्यको राजनीतिक आवश्यकताओंके सामने भी कभी गौण नहीं बताया जा सकता। इसलिए वर्त्तमान राजनीतिक परिस्थितियोंके कारण अस्पृश्यता को मिटानेके प्रयत्नोंको बन्द कर देना किसी भी तरहसे उचित नहीं होगा।

२. ऐसे धार्मिक और पवित्र कार्यमें सुधारकको सभी तरहके परिणामोंको झेलना पड़ता है, कुछ समयतक सुविधा-प्राप्त वर्गोंकी सहानुभूतिसे वंचित रहनेका खतरा भी उठाना पड़ता है। इसलिए जो लोग यह मानते हों कि अस्पृश्यता एक ऐसा अभिशाप है जिसे किसी भी कीमतपर मिटाना है, वे अपने साथ बहुत ही कम लोगोंके रह जानेके भयसे अपने प्रयत्नमें शिथिलता नहीं लायेंगे।

३. यदि मन्दिरोंके वर्त्तमान पुजारी हड़ताल कर दें और आवश्यक कर्मकाण्ड करनेसे इनकार करें तो उनके स्थानपर तुरन्त नये पुजारी रख लेने चाहिए। और जिस जाति-विशेषने वे पुजारी दिये थे वह यदि दूसरे पुजारी देनेसे इनकार करे तो किसी अन्य जातिका पुजारी ढूँढ़नेमें भी मैं हर्ज नहीं मानता। ध्यान सिर्फ इस बातका रखना चाहिए कि नये पुजारियोंमें आवश्यक योग्यताएँ और निष्ठा हो। मगर जहाँतक मैं जानता हूँ, तथ्य यह है कि अधिकांश पुजारी अपनी जीविकाके लिए इस सेवापर इतने अधिक निर्भर हैं कि वे बहुत दिनोंतक हड़ताल जारी नहीं रख सकते। इस दलीलका मेरी रायपर कोई असर नहीं पड़ता कि पूजा करनेका अधिकार वंशानुगत है, क्योंकि यदि इस अधिकारका भोक्ता, चाहे जिस कारणसे हो, स्वयं ही अपना अधिकार छोड़ दे तो इसके लिए दोषी तो खुद वही है।

१. साधन-सूत्रके अनुसार गांधीजी ने कामके बहुत अधिक दबाव और किसी भी घड़ी गिरफ्तार कर लिये जानेकी आशंकाके बीच यह लेख बोलकर लिखाया था और गिरफ्तारीसे ठीक पहले ४ जनवरीको इसे प्रकाशनार्थ दे दिया।

४. यदि मन्दिरके अधिकारी यह कहें कि हम अस्पृश्योंके लिए एक कोना अलग किये देते हैं तो इसे पर्याप्त नहीं मानना चाहिए। अस्पृश्योंपर लगाया ऐसा कोई प्रतिबन्ध बरदाश्त नहीं किया जा सकता जो अन्य अब्राह्मण हिन्दुओंपर लागू नहीं किया जा सकता। अलबत्ता, उन लोगोंके लिए एक कोना अलग किया जा सकता है जो अस्पृश्योंसे घुलना-मिलना न चाहते हों। उस हालतमें ये लोग अपनी ही इच्छासे अस्पृश्य बन जायेंगे।

५. घेरोंको हमें जबरदस्ती तोड़ना नहीं चाहिए। वह एक तरहकी हिंसा ही होगी। यहाँ यह कहनेसे बात नहीं बनती कि घेरे तो निष्प्राण हैं। घेरे भले ही निष्प्राण हों लेकिन उनको खड़ा करनेवाले हाथ तो प्राणयुक्त थे।

६. उपर्युक्त बातोंसे यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि मन्दिर-प्रवेश सत्याग्रह करनेके लिए सत्याग्रहीका मन्दिरोंमें विश्वास होना आवश्यक है। मन्दिर-प्रवेश एक धार्मिक अधिकार है। इसलिए जिसका मन्दिरोंमें विश्वास न हो, उसके प्रवेशको सत्याग्रह नहीं कहा जा सकता। वाइकोम सत्याग्रहके समय जब श्री जॉर्ज जोज़ेफ जेल गये तो मैंने उन्हें लिखा था कि आपने गलत काम किया है।[1] उन्होंने मेरी बात मान ली, तुरन्त क्षमा-याचना की और वे जेलसे बाहर आ गये। मन्दिर-प्रवेश सत्याग्रह स्पृश्य हिन्दू द्वारा किया जानेवाला प्रायश्चित्त है। उसने पाप किया है और इसलिए उसे अपने साथ इन सहधर्मी अस्पृश्योंको मन्दिरमें ले जानेका प्रयत्न करनेके लिए विरोधियोंको स्वयंको दण्डित करनेको आमन्त्रित करके प्रायश्चित्त करना है। इसलिए गैरहिन्दू लोग तो सत्याग्रहको छोड़कर किसी और तरीकेसे सहायता ही कर सकते हैं। उदाहरणके लिए, गुरुद्वारा आन्दोलनके समय जहाँ अन्य जातियोंने और तरह सिखोंकी मदद की, वहाँ सत्याग्रह केवल अखण्ड पाठमें[2] विश्वास रखनेवाले सिख ही कर सकते थे और केवल उन्होंने ही किया भी।

मेरे विचारसे सत्याग्रह केवल अस्पृश्योंको ही नहीं करना चाहिए। इसका नेतृत्व स्पृश्य सुधारकोंको करना चाहिए। कार्य-साधक नीतिका तकाजा यही है। एक समय ऐसा आ सकता है जब अस्पृश्य स्वयं ही सत्याग्रह करें। इस विचारके पीछे यह भावना काम कर रही है कि पहले स्पृश्य हिन्दुओंके बीच लोकमत काफी सजग और सक्रिय हो जाना चाहिए और तभी सबको सत्याग्रह करना चाहिए। यह ऐसा शस्त्र है जिसकी सफलता लोकमत तैयार करनेपर निर्भर है। इसलिए, इसके उपयोगसे पहले हमेशा सभी जाने-माने प्रचलित तरीकोंको आजमाकर देख लिया जाता है।

७. जो जमीन वास्तवमें निजी हो, उसपर बनाये गये मन्दिरोंमें प्रवेशाधिकारकी माँग नहीं की जा सकती। किन्तु, जब कोई व्यक्ति किसी निजी जमीनपर बनाये मन्दिरके सार्वजनिक प्रयोगकी छूट दे दे, लेकिन अस्पृश्योंके प्रवेशपर रोक लगा दे तो वह मन्दिर निजी मन्दिर नहीं रह जाता।

१. देखिए खण्ड २३, पृष्ठ ४१६-१७।

२. देखिए खण्ड २३, पृष्ठ २३३ और २४६-४८।

८. ऐसा सुझाया गया है कि सत्याग्रह द्वारा मन्दिर-प्रवेशके प्रयत्नको अभी बिलकुल छोड़ दिया जाये और इस कामको कानून बनाकर किया जाये। मैं इस विचारसे सर्वथा असहमत हूँ। कोई कानून बनाये जानेसे पहले आम तौरपर उसके लिए जनमत तैयार किया जाता है और लोकतन्त्रमें तो निश्चय ही यही होता है। मेरे जानते ठीकसे किये गये सच्चे सत्याग्रहके द्वारा जितनी जल्दी लोकमत तैयार किया जा सकता है, उतनी जल्दी और किसी उपायसे नहीं किया जा सकता। और किसी स्थान-विशेषमें सत्याग्रह करनेका उपयुक्त अवसर कौन-सा है, इसका निर्णय तो स्थानीय कांग्रेस कमेटीको ही करना चाहिए।

९. जो लोग यह कहते हैं कि अस्पृश्यतासे सम्बन्धित प्रश्नोंपर गैरहिन्दू लोग भी मत दे सकते ह, उनसे मैं १९२० में कांग्रेसके नागपुर संविधानके स्वीकृत होनेके बाद पास किया गया प्रथम प्रस्ताव देखनेको कहूँगा। उसमें साफ-साफ कहा गया है कि अस्पृश्यता-निवारणकी समस्या ऐसी है जिसके समाधानका भार विशेष रूपसे और केवल हिन्दुओंके सिर ही होना चाहिए। इसलिए एक ऐसी परिपाटी बन गई है कि गैरहिन्दुओंको मत देकर अथवा अन्य प्रकारसे इस धार्मिक समस्यामें हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १४-१-१९३२

३०४. तार: वाइसरायके निजी सचिवको

बम्बई
३ जनवरी, १९३२

आपके इसी तारीखके तारके[१] लिए धन्यवाद। परमश्रेष्ठ और परमश्रेष्ठकी सरकारके निर्णयपर मैं गहरा खेद प्रकट किये बिना नहीं रह सकता। ईमानदारीसे अपना मत व्यक्त करनेको धमकी कहना निश्चय ही गलत है। क्या मैं सरकारको यह याद दिलाऊँ कि दिल्ली-वार्त्ता सविनय अवज्ञाके जारी रहते ही शुरू हुई थी और चलती रही थी और जब समझौता हुआ तो सविनय अवज्ञा बन्द नहीं की गई थी, बल्कि केवल स्थगित कर दी गई थी। लन्दनके लिए मेरे रवाना होनेसे पहले गत सितम्बरमें शिमलामें इस स्थितिपर फिरसे जोर दिया गया था और परमश्रेष्ठ और परमश्रेष्ठकी सरकारने उसे स्वीकार कर लिया था। मैंने यद्यपि यह चीज साफ कर दी थी कि कुछ हालातमें कांग्रेसको सविनय अवज्ञा फिर शुरू करनी पड़ सकती है, फिर भी सरकारने वार्त्ता भंग नहीं की थी। सरकारकी ओरसे यह तो जरूर स्पष्ट कर दिया गया था कि सविनय

१. जाहिर है कि गांधीजी ने यह तार २ जनवरीको लिखना शुरू किया था।

अवज्ञा करनेवालोंको कानूनकी अवज्ञाकी सजा दी जा सकती है पर इससे केवल यही सिद्ध होता है कि सत्याग्रहियोंको सत्याग्रह करते समय उसके परिणामोंका पता होना चाहिए, किन्तु मेरी दलीलपर इससे कोई असर नहीं पड़ता। सरकारको यदि यह रवैया बुरा लगा था तो उसके आगे यह रास्ता खुला था कि वह मुझे लन्दन न भेजती। इसके विपरीत, परमश्रेष्ठने मेरी विदाईपर अपनी शुभकामना प्रकट की थी। यह कहना भी उचित या सही नहीं है कि मैंने कभी यह दावा किया है कि सरकारकी नीति मेरे निर्णयपर निर्भर रहनी चाहिए। परन्तु मैं यह अवश्य निवेदन करता हूँ कि कोई भी लोकप्रिय और वैधानिक सरकार सार्वजनिक संस्थाओं और उनके प्रतिनिधियोंके सुझावोंका सदा स्वागत करेगी और उनपर सहानुभूतिसे विचार करेगी। और अपने उन अधिनियमों या अध्यादेशोंके बारेमें, जिनका जनमत विरोध करता है, उन्हें सभी उपलब्ध सूचनाएँ प्रदान करेगी। मेरा कहना यह है कि मेरे सन्देशोंका, जो-कुछ पिछले अनुच्छेदमें कहा गया है, उसके सिवा और कोई अर्थ नहीं है। समय ही यह बतायेगा कि किसकी स्थिति न्यायोचित थी। इस बीच मैं सरकारको यह विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि कांग्रेसकी ओरसे संघर्षको द्वेषरहित और बिलकुल अहिंसात्मक ढंगसे चलानेकी पूरी-पूरी कोशिश की जायेगी। मुझे यह याद दिलानेकी कतई आवश्यकता नहीं थी कि हमारे कार्योंके सभी परिणामोंके लिए कांग्रेस और उसका यह विनम्र प्रतिनिधि मैं ही उत्तरदायी होंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडिया इन १९३१-३२ तथा **यंग इंडिया**, ७-१-१९३२ भी।

३०५. तार : हॉरैबिनको

[३ जनवरी, १९३२]

मुझे भेजे गये आपके तारके लिए हृदयसे आभारी हूँ। पूरा तार टॉम विलियम्सके पतेपर भेज दिया है। सरकारसे आधी रातको सन्देश मिला है। भेंटके लिए प्रार्थना और सब तरहकी वार्त्ता इस आधारपर अन्तिम रूपसे अस्वीकार कर दी गई है कि कांग्रेस ने समाधान प्राप्त न कर सकनेकी दशामें सविनय अवज्ञाकी धमकी देनेकी हिम्मत की है। वाइसरायके उत्तरमें मुझपर यह आरोप भी लगाया गया है कि मैं अवैध कार्रवाईका डर दिखाते हुए शर्तें थोपना चाहता हूँ। चारों ओरके वातावरणमें मुझे आज सम्मानजनक और सहयोगकी समानतापर आधारित इच्छाका कोई चिह्न दिखाई नहीं देता। वाइसराय यह भूल गये हैं कि दिल्लीके

संघर्ष-विराममें नागरिकोंका सविनय अवज्ञा करनेका अधिकार मूक रूपसे स्वीकार कर लिया गया था, क्योंकि वार्त्ता जब चल रही थी तब सविनय अवज्ञा जारी थी, और वह संघर्ष-विरामके दौरान ही रोकी गई थी। फिर, शिमलामें वर्त्तमान वाइसरायने मेरे इस वक्तव्यको चुनौती नहीं दी थी कि यदि समाधान प्राप्त करनेके अन्य तरीके असफल रहे तो कांग्रेसका सविनय अवज्ञा करनेका अधिकार कायम रहेगा। बेशक इसके साथ कानून की अवज्ञाके लिए सजा की शर्त लगी थी, पर वह तो सत्याग्रहकी पद्धतिमें अन्तर्निहित ही है। किन्तु वाइसरायने उपर्युक्त परिस्थिति उत्पन्न होनेपर हमारे सविनय अवज्ञा करनेकी बात सोचनेके कारण न केवल वार्त्ता भंग नहीं की थी, बल्कि उसे पूरा किया था और मुझे अपनी शुभकामनाओंके साथ लन्दन भेजा था। इसलिए मौजूदा रवैया परिषद्से तुरन्त पहलेके रवैयेसे स्पष्ट रूपसे भिन्न है। सचाई यह है कि सरकार कांग्रेसकी बढ़ती हुई शक्तिको और उसके फलस्वरूप जनतामें आत्मबलके उदयको सहन नहीं कर पा रही है। विरोधी जनमत और अपनी बातपर आग्रह करनेकी उसकी बढ़ती हुई क्षमताके प्रति सरकारकी असहिष्णुता पूर्ववत जारी है। मुझे विश्वास हो गया है कि इस तरहके वातावरणमें स्वाधीनताकी ओर ले जानेवाले स्वतन्त्र संविधानका विकास बिलकुल असम्भव है। कांग्रेस संगठनका दमन और नेताओंकी गिरफ्तारी निकट प्रतीत होती है। फिर भी जहाँतक मैं अन्दाजा लगा सकता हूँ, विशाल जन-समाज हिम्मत नहीं हारेगा, सत्ताका दृढ़तासे प्रतिरोध करेगा, और सरकारके भड़कावेके बावजूद कड़ाईसे अहिंसाका पालन करेगा। मुझे आशा है कि यदि सरकारने तथ्योंका सीधा-सादा विवरण भेजनेपर प्रतिबन्ध नहीं लगाया तो मैं, जबरदस्त अड़चनके बावजूद, आपको तार द्वारा नियमित 'बुलेटिन' भेजता रहूँगा। श्री एलेक्जैंडर और अन्य मित्रोंको कृपया समाचारोंसे बराबर सूचित करते रहें।

गांधी

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ४-१-१९३२

३०६. तार : लॉर्ड इर्विनको

बम्बई
३ जनवरी, १९३२

आप सच मानिए, मैंने भरसक कोशिश की, लेकिन असफल रहा। फिर भी मैं निराश नहीं हूँ, और अगर ईश्वरने चाहा तो मैं उस भावनाको कायम रखूँगा जिस भावनासे, आपके विचारमें, मैं दिल्लीमें उस पवित्र सप्ताहके दौरान प्रेरित था। मैं आपके प्रमाणपत्रको झूठा नहीं साबित होने दूँगा।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ५-१-१९३२

३०७. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको[1]

३ जनवरी, १९३२

परमश्रेष्ठ वाइसराय और सरकारकी ओरसे यह तार प्राप्त करके मुझे हार्दिक दुःख हुआ है। जिस भेंटके लिए हम इतने लालायित थे उसका दरवाजा मेरे लिए लगभग बन्द कर दिया गया है, क्योंकि तारमें भेंटके लिए ऐसी शर्तें रखी गई हैं जिन्हें स्वीकार करके कोई भी स्वाभिमानी व्यक्ति उस बन्द दरवाजेको फिरसे खोलनेकी कोशिश नहीं कर सकता। मैं यह कहे बिना नहीं रह सकता कि इस तरह तो पहली गलतीको साहसके साथ स्वीकार करनेकी बजाय, गलतीपर गलती की गई है। इस तारमें एक ऐसी दलील पेश करते हुए जो मुलाकातके मेरे बार-बारके अनुरोधसे किसी तरह मेल नहीं खाती, मुझे सूचित किया गया है कि सविनय अवज्ञा फिर शुरू करनेकी धमकीके रहते वाइसराय महोदय मुझसे नहीं मिल सकते। इस प्रकार इस तारके द्वारा जान-बूझकर और अन्तिम रूपसे दरवाजा बन्द करके एक और गलती की गई है। वाइसराय और उनकी सरकारने सविनय अवज्ञा फिर शुरू करनेकी तथाकथित धमकीको मुझसे न मिलनेका बहाना बनाकर दिल्ली समझौतेका खुल्लमखुल्ला उल्लंघन किया है।

निश्चय ही उन्हें यह मालूम है कि जिस वार्त्ताके फलस्वरूप समझौता हुआ वह सविनय अवज्ञाके चालू रहते ही हुई थी और समझौतेके अधीन सविनय अवज्ञा अन्तिम रूपसे बन्द कदापि नहीं की गई थी, बल्कि केवल स्थगित कर दी गई थी,

१. यह सन्देश एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको रातको लगभग दो बजे टेलिफोनपर लिखाया गया था।

जिसका उद्देश्य यह था कि गोलमेज परिषद्में कांग्रेसका प्रतिनिधित्व हो सके, और यह चीज साफ थी कि यदि गोलमेज परिषद् राष्ट्रीय माँगको पूरा नहीं कर पाई तो वह फिर शुरू की जा सकती है। इसके साथ मैं दूसरे समझौतेको भी जोड़ना चाहता हूँ जो मेरे लन्दन रवाना होनेसे ठीक पहले शिमलामें हुआ था।[1] मेरे और सरकारके बीच जो पत्र-व्यवहार चला है उसकी जाँचसे यह देखा जा सकता है कि संघर्ष-विरामके बावजूद मैंने, रक्षात्मक कार्रवाईके रूपमें, अपना यह अधिकार सुरक्षित रखा था कि यदि नरम तरीकोंसे शिकायतोंका समाधान नहीं हुआ तो उनके लिए मैं सविनय अवज्ञा कर सकूँगा। यदि सविनय अवज्ञा ऐसा ही घृणित अपराध है तो निश्चय ही सरकार उस आधारपर पत्र-व्यवहार कदापि नहीं कर सकती थी और वाइसरायकी शुभकामनाओंके साथ मुझे लन्दन नहीं भेज सकती थी। परन्तु मैं देख रहा हूँ कि समयके साथ व्यवहार भी बदल गया है।

राष्ट्रको अब सरकारकी चुनौतीका अवश्य जवाब देना चाहिए। परन्तु यह आशा की जाती है कि सभी वर्गों और धर्मोंके लोग जहाँ साहसके साथ और पूरी विनम्रतासे अग्नि-परीक्षासे गुजरेंगे और किसी भी कीमत और कष्टको अत्यधिक नहीं समझेंगे, वहाँ वे बड़ीसे-बड़ी उत्तेजना होने पर भी मन, वचन और कर्मसे खूब कड़ाईके साथ अहिंसाका पालन करेंगे। मैं उनसे यह भी अनुरोध करूँगा कि वे प्रशासकोंसे नाराज न हों। पीढ़ी-दर-पीढ़ी चली आती आदतको छोड़ना उनके लिए आसान नहीं है। हमारी लड़ाई मनुष्योंसे नहीं है, बल्कि उनकी कार्रवाइयोंसे है।

हमें अपनेपर और इसलिए मानव-स्वभावपर विश्वास है और हम यह महसूस करते हैं कि यदि हम काफी समयतक और सही भावनासे कष्ट सहें तो हमारे कष्टोंके परिणामस्वरूप प्रशासकोंमें अवश्य परिवर्तन आयेगा। हर हालतमें हमें यह समझ लेना चाहिए कि कष्ट जितने बड़े होंगे और जितनी ज्यादा देर रहेंगे, हम उस स्वराज्यके उतने ही योग्य बनेंगे जिसके लिए हम यह अग्नि-परीक्षा देने जा रहे हैं। मैं राष्ट्रको अपने उस वचनकी याद दिलाना चाहता हूँ जो मैंने गोलमेज परिषद्के पूर्णाधिवेशनके अन्तमें प्रधान मन्त्रीको दिया था कि यदि हमें संघर्ष फिर शुरू करना पड़ा तो उसमें द्वेषकी भावना नहीं होगी और हम कोई भी अनुचित कार्य नहीं करेंगे। मुझे विश्वास है कि हर भारतीय इस वचनको पूरा करेगा।

अंग्रेजोंसे मैं यह कहना चाहूँगा कि वे उन झूठी रिपोर्टोंसे सावधान रहें जो भारतमें कांग्रेसकी कार्रवाइयोंके सिलसिलेमें सुबह-शाम प्रायः उनके आगे रखी जाती हैं। झूठी सूचना मिलना या सही सूचनाके दमनके कारण बिलकुल सूचना न मिलना हृदयसे-हृदयके सहयोगमें एक बहुत बड़ी बाधा है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ३-१-१९३२

१. देखिए खण्ड ४७।

३०८. पत्र : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको[१]

लैबर्नम रोड
बम्बई
३ जनवरी, १९३२

प्रिय गुरुदेव,

इस समय मैं अपना थका हुआ शरीर लेकर गद्देपर लेटा ही हूँ और एक-आध झपकी ले लेनेकी कोशिश करते हुए आपके बारेमें सोच रहा हूँ। मैं चाहता हूँ कि जो यज्ञाग्नि सुलगाई जा रही है, उसमें आप जो सर्वोत्तम समिधा डाल सकते हैं, वह डालें।

सस्नेह,

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४६३२)से।

३०९. भाषण : प्रार्थना-सभामें[२]

[बम्बई]
३ जनवरी, १९३२

कुछ दिनोंसे आप इन प्रार्थनाओंमें मेरे साथ रहे हैं, और अब जब कि संघर्ष फिरसे शुरू किया जा रहा है और मुझे किसी भी क्षण गिरफ्तार किया जा सकता है, मैं आशा करता हूँ कि आप लोग प्रार्थनाका कार्यक्रम सुबह-शाम नियमित रूपसे जारी रखेंगे। आप इसे अपने लिए प्रतिदिनका एक आवश्यक कर्त्तव्य बना लें। आत्मशुद्धिके यज्ञमें प्रार्थनाकी भूमिका बहुत बड़ी है और आप देखेंगे कि यह आपके लिए कामधेनु का काम करेगी और आपका रास्ता साफ करती रहेगी। आप अपनेको इसमें जितना अधिक लगायेंगे, आप अपने दैनिक जीवनमें निर्भयताका उतना ही अधिक अनुभव करेंगे, क्योंकि निर्भयता आत्मशुद्धिका लक्षण और प्रतीक है। मैं तो किसी भी ऐसे आदमीको नहीं जानता जो आत्मशुद्धिकी राहपर चलते हुए भी भयकी भावनासे ग्रस्त रहा हो। आदमीके मनमें आमतौर पर दो तरहके भय होते हैं — मृत्युका और भौतिक सम्पत्ति गँवानेका। प्रार्थनारत तथा आत्मशुद्धिकी राहपर चलनेवाला आदमी मृत्युका भय

१. यह पत्र गांधीजी ने ३ जनवरीको ४ बजे दिनमें महादेव देसाईको बोलकर लिखाया था। इसके साथ महादेव देसाईने सूचनार्थ जो पत्र भेजा था, उसके अनुसार गांधीजी ने दूसरे दिन "अपनी गिरफ्तारीके कुछ ही क्षण बाद" इसपर अपने हस्ताक्षर किये थे।

२. शामके चार बजे आयोजित।

त्याग देगा और एक वरदानकी तरह उसका वरण करेगा और सारी पार्थिव सम्पत्तिको नश्वर मानते हुए वह उसे सर्वथा महत्त्वहीन समझेगा। उसे यही लगेगा कि जब देश दुःखदारिद्र्यसे ग्रस्त है और जब करोड़ों लोगोंको एक बार भोजन भी नहीं मिलता तब उसे सम्पत्तिशाली रहनेका भला क्या अधिकार है? जिसने ये दो भय छोड़ दिये हों, उसे दुनियाकी कोई भी ताकत पराजित नहीं कर सकती। लेकिन इसके लिए यह आवश्यक है कि प्रार्थना प्रदर्शनकी नहीं, बल्कि हृदयकी वस्तु हो। इसे हमें दिन-प्रतिदिन ईश्वरके अधिकाधिक निकट ले जाना चाहिए, और प्रार्थनारत आदमीकी यह हार्दिक इच्छा पूरी न हो, ऐसा हो ही नहीं सकता। सीधा-सादा कारण यह है कि उसके मनमें कोई अनुचित इच्छा जागेगी ही नहीं। इसलिए आप इस नियमको जारी रखें। इस तरह न केवल आप अपने इस नगरको द्युतिपूर्ण बनायेंगे, बल्कि हमारा देश भी उस प्रकाशसे चमक उठेगा। मुझे आशा है कि मेरी इस छोटी-सी विनतीको आपके हृदयोंमें स्थान मिलेगा।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ७-१-१९३२

३१०. भेंट: 'बॉम्बे क्रॉनिकल' के प्रतिनिधिको

बम्बई
३ जनवरी, १९३२

राष्ट्रसे मैं अपनी गिरफ्तारीके बाद यही करनेको कहूँगा कि वह अपनी नींदसे जागे; और

१. सभी विदेशी वस्त्रोंका तुरन्त त्याग करे और खद्दर अपनाये;

२. सभी मादक औषधियों, द्रव्यों और पेयोंका त्याग करे;

३. हिंसाका नामो-निशान तक मिटा दे और अधिकारियोंकी कार्रवाई चाहे कितनी भी उत्तेजक क्यों न हो, प्रत्येक अंग्रेज स्त्री-पुरुष और बच्चेकी, चाहे वह अधिकारी हो या सामान्यजन, पूरी तरह रक्षा करे;

४. प्रत्येक व्यक्ति सरकारको यथासम्भव अपना हर तरहका सहयोग देना बन्द कर दे; और

५. कार्य-समितिके प्रस्तावका अध्ययन करे और उसके शब्दों और उसकी भावनाको कार्यान्वित करे। और उस प्रक्रियाके दौरान उसपर जो भी मुसीबतें आयें, सब सहे — जान और मालका नुकसान तक।

पूरे भारतके लिए एक नियम निर्धारित करना कठिन है। पर मुझे ऐसा लगता है कि क्योंकि कांग्रेसने अहिंसा द्वारा आत्मशुद्धिकी पद्धति अपनाई है, इसलिए मैं चाहूँगा कि यह आन्दोलन हड़तालसे शुरू किया जाये, अर्थात्, मुनाफेके सब काम स्वेच्छासे रोक दिये जायें और एक प्रार्थनामय उपवास किया जाये और उसके

बाद एक-साथ हर इलाकेमें उस ढंगसे सत्याग्रह शुरू कर दिया जाये जो कि वहाँ सम्भव हो, जैसे कि

(क) विना लाइसेंस नमक बनाना,

(ख) शराव और विदेशी कपड़ेकी दुकानोंपर धरना देना,

(ग) धारा १४४के अधीन जारी किये गये तथा ऐसे ही अन्य आदेशोंको भंग करना, वशर्ते कि ऐसे आदेश शान्ति भंग होनेके किसी खतरेके विना और किसी कानूनी आवश्यकताके कारण नहीं, बल्कि जनताके उत्साहको भंग करने या कांग्रेसको दवानेके लिए — जो जनताका उत्साह भंग करनेका ही एक तरीका है — जारी किये गये हों।

बम्बईको कार्यक्रमकी किन खास मदोंको अंजाम देना है, यह बात श्री के० एफ० नरीमान और उनकी परिषद् पर छोड़ देनी चाहिए।

यह पूछनेपर कि यदि कांग्रेसकी सूचीमें दर्ज सभी कार्यकर्त्ता, जैसा कि सरकारने सोच रखा है, कार्यक्षेत्रसे हटा दिये गये, तो क्या कांग्रेसके आदेशोंको पूरा करनेका काम कठिन सिद्ध नहीं होगा, गांधीजी ने कहा :

कार्य-समितिका प्रस्ताव इसी कठिनाईको दूर करनेके लिए तैयार किया गया था। परिस्थिति इतनी अचानक बदलेगी कि जितनी सुनिश्चित बातें उस प्रस्तावमें कही गई हैं उससे अधिक सुनिश्चित बातें कहना सम्भव नहीं है। कमोवेश जोरदार ढंगके सत्याग्रहके १२ वर्षके अनुभवके बाद अब सम्बन्धित लोगोंसे यह अपेक्षाकी जाती है कि परिस्थितियाँ बदलनेपर क्या कुछ आवश्यक होगा, इसका अन्दाजा वे खुद ही लगा लें। पिछले सालका अनुभव यह बताता है कि प्रायः सभी नेताओंकी गिरफ्तारीके बावजूद, राष्ट्रने आपत्कालीन स्थिति पैदा होनेपर गजबकी सूझबूझ दिखाई थी और सविनय अवज्ञाकी भावनाको ऊँचा रखा था।

उनका ध्यान जब इस सम्भावनाकी ओर खींचा गया कि भारतीयोंके कुछ वर्ग कांग्रेसका विरोध कर सकते हैं, तो महात्माजी ने कहा कि भीतरी विरोध होनेपर कुछ बाधा तो स्वाभाविक रूपसे पड़ेगी ही, परन्तु वे बोले :

प्रशासकों या हमारे अपने लोगों किसीके भी प्रति, चाहे वे हमारे आन्दोलनका विरोध कर रहे हों या उसकी ओरसे उदासीन हों, द्वेष न रखते हुए जो कष्ट-सहन किया जायेगा उसकी आँचमें ये सभी बाधाएँ अपने-आप पिघल जायेंगी।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ४-१-१९३२

३११. सन्देश : भारतीय ईसाइयोंको[1]

बम्बई
३ जनवरी, १९३२

प्यारे ईसाई मित्रो तथा देशभाइयो,

मुझे पूरा विश्वास है कि देश जो संघर्ष छिड़ने जा रहा है, तत्त्वतः शान्तिपर आधारित उस संघर्षमें भारतीय ईसाई, जो अपनेको उस महापुरुषका अनुयायी मानते हैं जिसे वे शान्तिका सम्राट् कहते हैं, भारतकी किसी भी जातिसे पीछे नहीं रहेंगे। मैं यह कहनेका साहस करता हूँ कि इस राष्ट्रीय कार्यमें हाथ बँटाना किसी भी अल्पसंख्यक समुदायके लिए मात्र कागजी सुरक्षा-व्यवस्थाकी अपेक्षा लाख दर्जे अधिक सुरक्षा-व्यवस्था प्रदान करनेवाला कारगर होगा।

मैं खद्दर तथा मद्य-निषेधपर जोर देना चाहूँगा। देशका दौरा करते हुए जब मैं हजारों गरीब ईसाई देशभाइयोंसे मिला, तब मैंने अन्य लोगोंकी ही तरह उनके लिए भी खद्दरकी आवश्यकता महसूस की है। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि हर ईसाईका घर चरखेसे सुशोभित होगा और हर ईसाईके शरीरकी शोभा हमारे देशके गरीब भाइयों और बहनों द्वारा तैयार किया गया खद्दर बढ़ायेगा।

फिर, मद्यपानका अभिशाप भी है। मैं कभी भी यह बात समझ नहीं पाया हूँ कि कोई ईसाई मद्यपान कैसे कर सकता है। जब शैतान ईसा मसीहको फुसलाने गया था तब क्या उन्होंने यह नहीं कहा था : "ऐ शैतान, तू मेरे सामनेसे चला जा।" क्या मदिरा शैतानका ही अवतार नहीं है? कोई ईसाई शैतान और ईसा मसीह दोनोंका भक्त कैसे हो सकता है?

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ४-१-१९३२

३१२. सन्देश : अमेरिकाको[2]

बम्बई
३ जनवरी, १९३२

अब जब कि वह संघर्ष शुरू होने जा रहा है जिसके बहुत ही भयंकर होनेकी सम्भावना दिखाई देती है, मैं अमेरिकावासी अपने बहुत सारे मित्रोंसे यह अपेक्षा करूँगा कि वे इसके दौरको ध्यानसे देखें और उस महान् राष्ट्रके प्रभावका उपयोग अत्याचार-पीड़ित मानवताके लिए करें। यह भारतीय संघर्ष केवल राष्ट्रीय संघर्ष ही

१. यह सन्देश नेशनलिस्ट क्रिश्चियन पार्टी (राष्ट्रवादी ईसाई पार्टी) के मन्त्रीकी मार्फत दिया गया था।
२. यह सन्देश मिल्स नामक एक अमेरिकी संवाददाताकी मार्फत दिया गया था।

नहीं है। इसका एक अन्तर्राष्ट्रीय मूल्य और महत्त्व है। मुझे पूरा विश्वास है कि यदि हमारे देशके भाई और बहन सभी अहिंसाकी भावना कायम रखेंगे तो इसका मतलब यह होगा कि उन्होंने धरतीपर एक नये युगका सूत्रपात कर दिया है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ३-१-१९३२

३१३. दैनन्दिनी, १९३२

बम्बई, १ जनवरी, शुक्रवार

चरखेपर १६० तार। दिन कार्य-समितिमें बिताया। रातमें कपड़े और सोने-चाँदीके व्यापारी मिलने आये, भूलाभाई तथा कुछ अन्य लोग भी।

बम्बई, २ जनवरी, शनिवार

चरखेपर १८९ तार। मोदी, वेलफेयर लीग[1] [के सदस्यों], सर नेस वाडियाको मुलाकात दी। वेणीलालसे मिलने गया। मेहरबाबा मिलने आये। वाइसरायका उत्तर आया।

बम्बई, ३ जनवरी, रविवार

चरखेपर १८० तार। सर फीरोज सेठना, कावसजी जहाँगीर आदि मिलने आये। चैम्बरके सदस्य मिले। उनसे बातचीतकी। उनके कहनेपर अहमदाबाद जाना रद कर दिया।[2]

मूल गुजराती (एस०एन० १९३३७)से।

१. देखिए पृष्ठ ५२६-२८।

२. यह दैनन्दिनी (१ जनवरी, १९३३ तककी) आगेके खण्डोंमें चालू है। जिस कालकी सामग्री जिस खण्डमें दी गई है, उस कालसे सम्बन्धित दैनन्दिनी उस खण्डके अन्तमें दी गई है।

परिशिष्ट

परिशिष्ट १

कपास-उद्योगके प्रतिनिधियोंसे गांधीजी की मुलाकातका विवरण[1]

एजवर्थ
२७ सितम्बर, १९३१

टी० डी० बार्लो: बातचीतमें दोनों ओरसे साफगोई बरती गई और दोनोंका स्वर मैत्रीपूर्ण था। श्री गांधीका मुख्य तर्क यह था कि भारतके ९० प्रतिशत लोग कृषिपर निर्भर हैं और सालमें छः महीने उनके पास कोई काम नहीं होता। इसलिए खद्दर आन्दोलनका जबरदस्त सामाजिक महत्त्व है। श्री गांधीने लोगोंके लिए घरमें ही अपने हाथसे सूत कातनेका काम इसलिए चुना है कि इसमें कोई भारी पूँजीगत खर्च नहीं पड़ता और यह काम सब जगह किया जा सकता है।

श्री गांधी कृषक-जीवनकी अवस्था सुधारनेके लिए प्रयत्नशील हैं और मेरा खयाल है कि इस उद्देश्यको पूरा करनेके लिए अगर उनके सामने कोई और विकल्प रखा जाये तो वे उसे स्वीकार कर लेंगे, लेकिन अभी तक उन्हें इसका स्थान ले सकनेवाला या इससे होड़ करनेवाला कोई और धन्धा नहीं मिल पाया है। इसलिए गृह-कताई-आन्दोलनको छोड़ना उनके लिए असम्भव है।

श्री गांधीने इस बातका खण्डन किया कि यह आन्दोलन खास तौरपर ब्रिटेनके कपड़ेके खिलाफ है। उन्होंने कहा कि जब ५ मार्चको मैंने और लॉर्ड इर्विनने समझौते पर हस्ताक्षर किये तब दोनों पक्षोंको इस बातमें कोई सन्देह नहीं था कि आर्थिक बहिष्कार जारी रहेगा। उनका यह भी खयाल था कि यहाँके मालकी माँगमें कमी आनेका उतना बड़ा कारण बहिष्कार नहीं है जितना कि विश्वकी आर्थिक स्थिति; लेकिन सबसे बड़ा कारण तो व्यापारकी जिन्सोंके दामोंमें आई गिरावट है। उन्होंने यह भी कहा कि यदि ग्रेट ब्रिटेन और भारतके बीच वह व्यवस्था हो जाये जिसे वे उचित और आवश्यक मानते हैं तो उन्हें पूरा विश्वास है कि ऐसा प्रबन्ध किया जा सकता है जिसके अधीन भारत इंग्लैंडके काफी कपड़ेका आयात कर सकता है। लेकिन वे ऐसी कोई आशा दिलानेको तैयार नहीं थे कि लंकाशायरका व्यापार अपना पिछला वैभव फिर प्राप्त कर सकता है।

श्री गांधीने कहा कि कताई-आन्दोलनमें १००,००० कत्तिनें और १०,००० बुनकर सक्रिय हैं और गाँवोंमें आर्थिक तरक्कीके स्पष्ट संकेत देखनेको मिल रहे हैं। उन्होंने

१. देखिए "बातचीत: कपड़ा-उद्योगके प्रतिनिधियोंसे", २६-९-१९३१।

कहा कि जो मिलें अंग्रेजोंकी मिल्कियतमें हैं वे कुल मिलाकर देशी मिलोंसे अधिक अच्छी स्थितिमें हैं। लेकिन देशी मिलोंमें से कुछकी हालत तो दुनियाकी किसी भी मिलकी तरह अच्छी है या उससे बेहतर ही है। लंकाशायरके श्रमिकोंको जिस तरहकी रिहाइशी और दूसरी सुख-सुविधाएँ प्राप्त हैं, उसपर उन्होंने आश्चर्य प्रकट किया। मुझे उम्मीद है कि इस बातचीतमें साफगोई और सौहार्दका जैसा आलम था वह औपचारिक बातचीतके लिए अनुकूल वातावरण तैयार करेगा। यदि गोलमेज परिषद्में कोई सन्तोषजनक व्यवस्था हो जाती है तो लंकाशायरके कष्टोंको अधिकसे-अधिक दूर करनेका कोई उपाय कर सकना बहुत ज्यादा आसान हो जाना चाहिए।

जॉन ग्रे : श्री गांधीने हमें किंचित् विस्तारसे अपनी आर्थिक नीति समझाई। उस नीतिका लक्ष्य भारतमें ग्राम-जीवनका पुनरुद्धार करना है। उन्होंने भारतके ग्राम-वासियोंकी छः महीनेकी बेकारीका कोई ऐसा विकल्प ढूँढ़नेकी आकुल आवश्यकता पर जोर दिया जो उनकी आयमें भी कुछ वृद्धि कर सके। वे खद्दरको एक उद्योगकी तरह कोई विशेष महत्त्व नहीं देते। उसे महत्त्व मुख्यतः इस दृष्टिसे देते हैं कि उससे लोगोंको रोजगारका अवसर मिलेगा और वे अपनी आयमें कुछ वृद्धि कर सकेंगे। लेकिन वे यह महसूस करते हैं कि अभी बहुत दिनोंतक भारत आत्म-निर्भर नहीं होगा और उसे विदेशी कपड़ेकी जरूरत पड़ेगी। उन्होंने हमें भरोसा दिलाया कि वे भारतके लिए जैसी आजादी चाहते हैं, अगर वैसी आजादी उसे मिल गई तो वे भारत और ग्रेट ब्रिटेनके बीच दो मित्र-देशोंकी तरह सहयोगको बढ़ावा देनेके लिए कुछ भी उठा नहीं रखेंगे और हमें किसी-न-किसी प्रकारकी प्राथमिकता दिलानेके लिए काफी दूरतक जायेंगे।

मेरे मनमें एक बातका बहुत ज्यादा डर बना हुआ है और यह चीज मैंने श्री गांधीके सामने बड़ी नम्रताके साथ रखी। उन्होंने स्वातन्त्र्य-संघर्षमें अलग-अलग वर्गों, विभिन्न जातियों और विभिन्न धर्मोंके तरह-तरहके लोगोंको एकताके सूत्रमें बाँध दिया है। लेकिन जब वह उद्देश्य पूरा हो जायेगा तब क्या उन लोगोंपर श्री गांधी का उतना प्रभाव रह जायेगा जितना कि आज है? मेरा खयाल है, स्वतन्त्रताकी लालसाने उनके अनुगामियोंको आपसमें जोड़नेमें सीमटका काम किया है, लेकिन बादमें स्वतन्त्रता मिल जानेपर शायद यह भी पता चल सकता है कि वह सीमेंट ठीकसे जम नहीं पाई, उन्हें स्थायी रूपसे जोड़ नहीं पाई। मेरी समझमें तो श्री गांधी इस बातको ठीकसे समझ नहीं रहे हैं कि यन्त्रोंपर आधारित उद्योगोंके पीछे कैसी जबरदस्त शक्ति खड़ी है या व्यापारी-वर्ग किस एकाग्रतासे अपनी ही समृद्धिकी साधना में सन्नद्ध है। श्री गांधीका उत्तर यह था कि एक बार सार्वत्रिक मताधिकार दे दिये जानेपर गाँव इकाइयोंकी तरह मतदान करेंगे और इस प्रकार वे व्यापारी-वर्गका नियमन और नियन्त्रण कर सकेंगे। लेकिन, मेरा खयाल है, इस सवालसे वे परेशान जरूर हुए। इस मुलाकातके बाद जब वे शामके नाश्तेमें फल और सब्जियाँ वगैरह ले रहे थे, उस समय उनसे फिर मेरी बातचीत हुई और इस बार हमने गरीबीकी चर्चा की।

उन्होंने 'पौरुषहीन नर-कंकालों' से भरे गाँवोंका उल्लेख किया और मैंने स्वीकार किया कि भारतकी गरीबी और लंकाशायरकी गरीबीके बीच कोई बाहरी तुलना नहीं हो सकती। लेकिन मैंने कहा कि यह तो केवल परिमाणका ही अन्तर है। गरीबीके कष्ट और बोझकी दृष्टिसे देखें तो सम्भव है, यहाँकी गरीबी भी उतनी ही सच्ची हो जितनी सच्ची भारतकी गरीबी है। यह सब तो इस बातपर निर्भर है कि कोई किन सुख-सुविधाओंका अभ्यस्त रह चुका है। मैंने उन्हें बताया कि यहाँ एक बार घूम-फिरकर वे जितना देख सकते हैं, गरीबी उससे बहुत अधिक गहरी है, और डारवेन, ब्लैक-बर्न तथा विशेष रूपसे ग्रेट हारवुडमें बेरोजगारीकी कालिमा बहुत घनीभूत हो गई है। लोगोंका कष्ट बहुत बढ़ गया है और इस सबका सीधा कारण यह बताया जाता है कि भारतमें यहाँकी चीजोंकी माँग नहीं रही।

श्री गांधीने तथ्य-आँकड़े देकर यह सिद्ध करनेकी कोशिश की — और बहुत कारगर ढंगसे कोशिश की — कि यहाँकी गरीबीका कारण भारतके बहिष्कारके साथ-साथ विश्वकी परिस्थितियाँ भी हैं। लेकिन मैंने कहा कि भारतके बहिष्कारका असर ज्यादा बुरा है, और वह अपने-आपमें तो बुरा है ही, साथ ही उसका जो नतीजा हुआ है उस दृष्टिसे भी बुरा है, क्योंकि वह असर पूरे उद्योगके बजाय खास तौरसे एक ही औद्योगिक क्षेत्रमें केन्द्रित है। श्री गांधीको यह बात जँचती-सी लगी और उनका रुख बड़ा सहानुभूतिपूर्ण था। मुझे पूरा यकीन है कि वे बड़े दयालु आदमी हैं, लेकिन उनकी दयालुता सबसे पहले और सबसे अधिक भारतीयोंके लिए है। उन्होंने इस बातका खण्डन किया कि वे एक सत्तार्थी राजनीतिज्ञ हैं और उनका खण्डन हमारे मनको बहुत जँचा।

वे हमारे आनेका इन्तजार करते हुए इस तरह बैठे थे मानों चीनियों द्वारा हाथी-दाँतसे बनाई बुद्धकी प्रतिमा हो। उनकी वह छबि बहुत भानेवाली और प्रभावोत्पादक थी। उनका सिर बड़ा सुघड़ है, और यद्यपि वे तसवीरोंमें गंजे दिखते हैं, लेकिन गंजे हैं नहीं। उनके सिरपर बहुत छोटे-छोटे सफेद बाल हैं। उनकी बोलचाल और उनका तौर-तरीका बड़ा आकर्षक है।

जॉन ली: हमने ऐसी कोई अपेक्षा कभी नहीं की थी कि श्री गांधीसे हमारी मुलाकातके फलस्वरूप हमें निकट-भविष्यके लिए कोई आश्वासन मिलेगा। हमने उनके यह कहनेकी आशा नहीं की थी कि वे बहिष्कार समाप्त करने या भारतीय मिलोंके मुकाबले हमें प्राथमिकता देनेको तैयार हैं। हाँ, हम यह जरूर सोचते थे कि वे शायद, गोलमेज परिषद्के सफल हो जाने पर, भविष्यके लिए कोई आश्वासन दें। और एक तरहसे यह आश्वासन उन्होंने दिया भी, लेकिन इस बातपर भी जोर दिया कि देशी खद्दर और, जबतक खद्दरसे देशकी जरूरत पूरी नहीं होने लगती तबतक, भारतीय मिलोंको दी जानेवाली प्राथमिकताको तो हमें बरदाश्त करना ही होगा। उन्होंने हमें यह भरोसा दिलानेकी खास कोशिश की कि बहिष्कार राजनीतिक नहीं, बल्कि विशुद्ध रूपसे आर्थिक कारणोंसे चलाया जा रहा है। लेकिन स्पष्ट कहें तो हमें लगता है कि इन दोनोंके बीच, राजनीतिक बहिष्कार और आर्थिक बहिष्कारके

बीच, भेद करनेवाली जो रेखा खींची जा सकती है वह बहुत सूक्ष्म है। उनसे एक प्रश्न यह पूछा गया: "मिलोंमें काम करनेवाले भारतीय मजदूरोंके कामकी परिस्थितियों और मजदूरीके सम्बन्धमें उनके हितमें कांग्रेस अपने प्रभावका कैसा उपयोग कर सकती है और उसने इस दृष्टिसे अबतक क्या कुछ किया है?" उत्तरमें उन्होंने हमें बताया कि कांग्रेस अबतक अमुक प्रकारके सुधार करवा चुकी है और आगे वह मिल-मजदूरोंकी अवस्थामें सुधार करानेका प्रयत्न जारी रखेगी। हम सब इसी नतीजेपर पहुँचे कि आदर्शवादी दृष्टिकोणसे विचार करें तो श्री गांधीसे झगड़ना हमारे लिए मुनासिब नहीं होगा। खुद मैंने अपने एक सहयोगीसे कहा, "अगर मैं भारतीय होता तो मैं तो गांधीका शिष्य बनना चाहता।"

अलबत्ता, यह बात हमारी समझमें नहीं आती कि वे खेती-बाड़ीमें या सूत तैयार करनेमें उत्पादनके पुराने और अपरिष्कृत उपायोंको फिरसे क्यों अपनाना चाहते हैं। उन्होंने हमें बताया कि वे खुद भी प्रतिदिन एक घंटा तो हमेशा कातते ही हैं। लेकिन यद्यपि उनका कताईका यन्त्र पुराने चरखेसे कुछ सुधरा हुआ है, फिर भी उसपर काम बहुत मन्द गतिसे होता है और वह अपरिष्कृत ढंगका ही है। हमें उनसे यह आश्वासन पाकर बड़ी खुशी हुई कि अगर स्वतन्त्रता-विषयक उनकी समस्त आकांक्षाएँ पूरी हो जाती हैं तो वे भारतमें लंकाशायरके मालको प्राथमिकता दिलानेकी कोशिश खुशीसे करेंगे। हमने यह भी पाया कि उनकी यह बात केवल लंकाशायरके मालपर ही नहीं, बल्कि पूरे ब्रिटेनके मालपर लागू होती थी। अन्य प्रकारकी वस्तुओंका उल्लेख उन्होंने विशेष रूपसे किया। शायद एक बात ऐसी है जिसके सम्बन्धमें अगर कोई कुछ आशा करना चाहे तो अनुचित न होगा। श्री गांधी गाँवोंमें जिस शिक्षाका प्रसार चाहते हैं उसके प्रसारके बाद वे कदाचित् जरूरतका कपड़ा तैयार करनेके इस अपरिष्कृत तरीकेसे सन्तुष्ट नहीं रहेंगे और अपनी शक्ति अन्य दिशाओंमें नियोजित करना चाहेंगे। मतलब यह कि भारतीय गाँवोंके विकासमें हमारे लिए आशाका कुछ आधार हो सकता है।

ऐंड्रू नैस्मिथ: लोग गांधी और उनकी नीतिके सम्बन्धमें चाहे जो सोचें, एक बात स्पष्ट है। उनका अपना एक अलग व्यक्तित्व है, अलग आकर्षण है। यह सोचकर चकित रह जाना पड़ता है कि ऐसे कृषकाय व्यक्तिको, जिसका डील-डौल जरा भी प्रभावोत्पादक न हो, भारतके गाँवोंमें रहनेवाले करोड़ों लोगोंकी निष्ठा, श्रद्धा और प्रेम प्राप्त हो। हमें भारतीय गाँवोंकी अवस्था, भारतके सामाजिक जीवन और उसके साथ अपने सम्बन्धोंसे अवगत कराते हुए उन्होंने तथ्योंका जैसा सन्तुलित निवेदन किया उससे मैं सबसे अधिक प्रभावित हुआ।

वे बिना किसी हाव-भावके स्वरोंके प्रसंगानुकूल उतार-चढ़ावके साथ बोले। उनके अन्तरकी भावनाकी अगर कोई झलक मिलती थी तो स्वरोंके इस उतार-चढ़ावसे ही। मुझे लगा कि यह आदमी ईमानदारीसे ऐसा मानता है कि वह सत्य, अहिंसा और प्रेमकी जिन नीतियोंका प्रतिपादन कर रहा है उनके द्वारा भारतके जीवन-स्तरको ऊपर उठानेके लिए ईश्वरने उसे अपने खास साधनकी तरह चुना है। अपनी

साफगोईका परिचय देते हुए उन्होंने हमारे साथ हुई अपनी लम्बी बातचीतमें कहा कि उनकी और कांग्रेसकी नीतिके लंकाशायरके औद्योगिक और आर्थिक जीवनके लिए जो भयंकर परिणाम हो सकते हैं उनके प्रति वे पूरी तरह सजग हैं। लेकिन जब वे हमारे यहाँके लोगों और भारतीयोंकी सामाजिक अवस्थाओंके बीच तुलना करते हुए दोनोंका अन्तर देखते हैं तो उनका मन यही कहता है कि इस कामको करनेके लिए वे परम शक्तिके आदेशसे बँधे हुए हैं। मैं नहीं समझता कि गांधीने जो-कुछ लंकाशायरमें देखा है और जो-कुछ हमसे जाना है उसकी वजहसे वे अपने उद्देश्योंमें कोई परिवर्तन करेंगे। इसलिए मुझे तो ऐसी कोई आशा दिखाई नहीं देती कि लंकाशायर आगे भी भारतमें पहलेकी तरह बड़े पैमानेपर कपड़ेका व्यापार कर पायेगा।

अगर उनकी आर्थिक नीति और उनके राजनीतिक सिद्धान्त सही हैं और अन्ततः उनको क्रियान्वित कर दिया जाता है तो मुझे लगता है कि लंकाशायरके पूरे ४० प्रतिशत तकुओं और करघोंको फिर कभी नहीं चलाया जा सकेगा। भारतमें ग्राम-जीवनके उद्धारके प्रति भला किसकी सहानुभूति नहीं होगी? किन्तु, साथ ही उसका लंकाशायरपर जो असर होगा उसके विषयमें सोचते हुए मनका भविष्यके प्रति आशंकासे भर उठना भी स्वाभाविक ही है। हमने पूछा कि हाथ-करघेपर बुननेवालों और बम्बईकी मिलोंके बीच झगड़ा हो जाये तब आप क्या करेंगे। उन्होंने बहुत नपे-तुले शब्दोंमें बिलकुल शान्त स्वरमें कहा, "जरूरत होने पर मैं बम्बईकी मिलोंका नाश कर सकता हूँ।" और जिस स्वरमें उन्होंने यह बात कही उससे तो यही लगता था कि वे जैसा मानते हैं, वैसा कर सकते हैं।

एफ० हिंडल: मैं श्री गांधीसे पहले भी, जब मैं १९२६ में श्री टॉम शॉ और अन्य लोगोंके साथ एक व्यापारिक शिष्टमण्डलके सदस्यके रूपमें भारत गया था, मिला था। शनिवारको श्री गांधीने बहुत ही साफगोईके साथ बात की, लेकिन बावजूद इसके कि वे उन ब्रिटिश व्यवसायियोंसे मिल रहे थे जिन्होंने उनकी नीतिके कुप्रभावों को बड़ी गहराईसे महसूस किया है और जो अपनी बात उनके सामने रखनेको कृत-संकल्प थे, बातचीतमें कोई कटुता नहीं थी और वह मुलाकात बहुत आनन्ददायक रही। लेकिन मेरा खयाल है, इस मुलाकातसे हमें इस बातकी प्रतीति तो हो ही गई है कि भारतसे हम फिर पहलेकी तरह बड़े पैमानेपर व्यापार करनेकी आशा नहीं कर सकते। यह कहते हुए मुझे अच्छा नहीं लग रहा है, लेकिन कभी-कभी हमें जी कड़ा करके ऐसे कठोर तथ्योंका भी सामना करना ही पड़ता है। सवाल यह उठता है कि क्या मैं ऐसा समझता हूँ कि उनके यहाँ आनेसे कोई लाभ हुआ हैं। हाँ, हुआ है। उनके आनेसे हमें स्थितिका सही ज्ञान प्राप्त हुआ है, लेकिन इस ज्ञानके साथ कोई आशा नहीं जुड़ी हुई है।

फ्रेड मिल्स: श्री गांधीसे मिलनेके बाद मुझे पूरा विश्वास हो गया है कि वे बहुत ईमानदार आदमी हैं, और वे जो कहते हैं कि उनके मनमें लंकाशायरके प्रति कोई वैर-भाव नहीं है, वह बिलकुल ठीक है। बहिष्कारको वे विशुद्ध रूपसे आर्थिक

साधन मानते हैं और यदि उनकी स्वातन्त्र्य-विषयक आकांक्षाएँ पूरी कर दी जाती हैं तब भी वे उससे विमुख नहीं होंगे। . . .[1]

गरीबीका सवाल बड़ा कठिन है। हमने उनसे कहा कि प्राच्य देशोंमें निम्न जीवन-स्तर एक सामान्य बात है। उन्होंने हमारी यह बात तो मान ली, लेकिन साथ ही कहा कि भारतमें तो ऐसे करोड़ों लोग हैं जिनका जीवन-स्तर इतना निम्न है जितना निम्न जीवन-स्तर प्राच्य देशोंमें भी देखनेको नहीं मिल सकता। हो सकता है, कुछ लोग मानते हों कि श्री गांधी तो बनते हैं। लेकिन मैं उन लोगोंमें से नहीं हूँ। मैं तो आजतक जितने लोगोंसे भी मिला हूँ वे उन सबमें सबसे अधिक विलक्षण हैं और वे अपने मधुर व्यवहारसे आलोचकोंको निरस्त कर देते हैं। उन्होंने ऐसा कुछ नहीं कहा जो हमें अच्छा लग सकता था, लेकिन सारी बातचीत बहुत ही अच्छे ढंगसे हुई। उन्होंने हमारे सभी सवालोंके जवाब काफी विस्तारसे और विनोदपूर्ण ढंगसे दिये। लंकाशायरमें हर आदमीने उनका जैसा स्वागत किया, उसकी उन्होंने बड़ी सराहना की, और कहा कि उन्हें यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि लोगोंने उनके प्रति उस उचित क्षोभका भाव भी प्रदर्शित नहीं किया जिसके लिए उनका मन पहलेसे ही तैयार था।

टी० ऐशर्स्ट: मैं नहीं समझता कि हमने कोई खास प्रगति की है। श्री गांधीने हमारे सामने यह बात साफ कर दी है कि हमारी मदद वे तभी करेंगे जब उनकी माँग पूरी कर दी जायेगी और उनके देशकी जरूरतें भी पूरी हो जायेंगी। आर्थिक और राजनीतिक प्रश्नोंको एक-दूसरेसे अलग कर पाना हमें बहुत कठिन लगा — उसे जितना कठिन मानते श्री गांधी जान पड़े उससे कठिन तो जरूर लगा। सवाल यह उठता है कि क्या श्री गांधी अपने ही देशके मिल-मालिकोंको नियन्त्रणमें रख पायेंगे, और क्या वे अपने मशीनसे बने कपड़ेसे भारतके गाँवोंको भर नहीं देंगे। फिर भी, मैं समझता हूँ, श्री गांधीसे हमारा मिलना अच्छा ही रहा और व्यक्तिगत रूपसे तो वे हमें बहुत अच्छे लगे।

[अंग्रेजीसे]

मैंचेस्टर गार्डियन, २८-९-१९३१

१. यह साधन-सूत्रमें एक वाक्य अधूरा-सा है और उसका अर्थ स्पष्ट नहीं होता। इसलिए उसका अनुवाद नहीं दिया जा रहा है।

परिशिष्ट २

रोमाँ रोलाँका पत्र: एक अमेरिकी मित्रके नाम[1]

दिसम्बर, १९३१

बड़ी इच्छा थी कि जब भारतीय मित्र आये थे, उस समय तुम भी यहाँ होते। वे विला वायोनेतमें ठहरे थे -- पाँच दिन -- रविवारकी रातसे लेकर शुक्रवार, ११ तारीखको तीसरे पहरतक। आँखोंपर ऐनक लगाये, पोपले मुँहवाला वह लघुकाय व्यक्ति सफेद चादरमें लिपटा हुआ था, लेकिन उसकी बगुलेकी-सी पतली टाँगें अनावृत थीं। उसके घुटे हुए सिरपर, जो वर्षामें भीग गया था, कुछ थोड़े-से रूखे बालोंके सिवा कुछ नहीं था। मानों कोई प्यारा-सा कुत्ता हाँफ रहा हो, इस तरह अपना मुँह खोले और एक सूखी हँसी बिखेरते हुए वह मेरे पास आया और आते ही अपना एक हाथ मेरे गिर्द डालकर अपना गाल मेरे कन्धेपर टिका दिया। उसके छोटे धूसर बालोंवाले सिरका स्पर्श मैंने अपने गालोंपर महसूस किया। वह सेंट डोमिनिक और सेंट फ्रान्सिसका आलिंगन था, ऐसा सोच-सोचकर मैं अपने मनको गुदगुदाता हूँ।

उसके बाद आई मीरा -- आकृतिकी सुघड़ताकी प्रतीक, दिमीतरकी तरह आकर्षक व्यक्तित्वकी धनी। अन्तमें आये तीन नौजवान भारतीय। उनमें से एक तो था स्वयं गांधीका पुत्र देवदास -- गोल और दृष्टिको सुख पहुँचानेवाली मुखाकृतिसे सम्पन्न। वह बड़ा ही विनम्र है और अपने नामके वैभवके प्रति बहुत कम सजग। अन्य दो थे गांधीके सचिव या शिष्य -- हृदय और मस्तिष्कके विरल गुणोंसे सम्पन्न युवकद्वय -- महादेव देसाई और प्यारेलाल।

इससे कुछ ही समय पूर्व ठंड लग जानेसे मेरी छाती जकड़ गई थी, इसलिए गांधी प्रतिदिन प्रातःकाल मेरे घर विला ओलगा ही आ जाया करते थे, और तीसरी मंजिलके मेरे उस खास कमरेमें, जिसमें -- तुम्हें याद होगा -- मैं सोता हूँ, बैठकर वे मुझसे देर-देरतक बातें किया करते थे। मीराकी सहायतासे मेरी बहन दुभाषियेका काम करती थी, और मेरी सेक्रेटरी कुमारी कोंडचेफ बातचीतकी टीपें लेती थी। हमारे मॉन्ट्रू-निवासी पड़ोसी श्लेमरने हमारी मुलाकातोंके कुछ बहुत अच्छे फोटो खींचे।

शामके सात बजे दूसरी मंजिलके सैलूनमें प्रार्थना होती थी। रोशनी मद्धिम कर दी जाती थी और भारतीय मित्र दरीपर बैठ जाते थे और श्रद्धालु भक्तोंकी यह छोटी-सी मण्डली तीन सुन्दर प्रार्थनाओंका गान करती थी। पहली प्रार्थना 'गीता' से ली गई है; दूसरी एक स्तोत्र है, जिसे एक प्राचीन संस्कृत ग्रन्थसे लिया गया है और जिसका गांधीने अनुवाद कर दिया है; और तीसरी राम और शिवका गुण-गान करनेवाला एक भजन है, जिसे मीरा अपने गम्भीर और भावपूर्ण स्वरमें गाती थी।

१. देखिए "बातचीत: रोमाँ रोलाँसे", ६-१२-१९३१।

दूसरी प्रार्थना सुबहके तीन बजे की जाती थी और जब वे लोग लन्दनमें थे, और गांधी रातके एक बजेसे पहले नहीं सो पाते थे तब भी वे इसके लिए अपने सहयोगियोंको तीन बजे ही जगा दिया करते थे, जिससे उन्हें परेशानी भी होती थी। इतना कमजोर दिखनेवाले इस लघुकाय व्यक्तिमें परिश्रम करनेकी अद्‌भुत क्षमता है और थकावट शब्द तो जैसे उसके कोषमें हो ही नहीं। भीड़ प्रश्नोंकी बौछार कर रही हो, लेकिन वे सबके उत्तर परम धैर्य और शान्तिसे देते चले जाते हैं। लोजान और जिनेवामें यही देखनेको मिला। श्रोताओंके उतने सारे टेढ़े-मेढ़े प्रश्नोंके उत्तर देते हुए उनके चेहरेपर शिकनतक न आई। वे एक मेजपर बिलकुल शान्त बैठे थे और अपने स्पष्ट और धीर स्वरमें अपने प्रकट और अप्रकट दोनों तरहके विरोधियोंको — और जिनेवामें ऐसे विरोधियोंकी कोई कमी नहीं थी — उत्तर देते चले जा रहे थे — कटु सत्योंसे भरे उत्तर, जिनसे उनके मुँह बन्द होकर रह जाते थे और वे अन्दर-ही-अन्दर घुटनेको मजबूर हो जाते थे।

जब वे रोम पहुँचे तो वहाँके बुर्जुआ लोगों और राष्ट्रवादियोंने पहले तो उनके प्रति एक चतुराई-भरा रुख अपनाये रखा, लेकिन वे जब रोमसे गये तो वे सब लोग क्रोधसे काँप रहे थे। मैं समझता हूँ, अगर वे कुछ दिन और रुके होते तो उनकी सार्वजनिक सभाओंपर पाबन्दी लगा दी गई होती। राष्ट्रीय शस्त्रीकरण और पूँजी तथा श्रमका संघर्ष, इन दोनों प्रश्नोंपर उन्होंने अपनी बातें अधिकसे-अधिक स्पष्ट शब्दोंमें कहीं। इस दूसरी बातके लिए उन्हें प्रेरित करनेमें मेरा बहुत हाथ था।

वे एकके-बाद-एक क्रियागत प्रयोग करते जाते हैं और उसीके साथ उनका चिन्तन निश्चित दिशामें ढलता जाता है और वे एक सीधी लीकपर आगे बढ़ते जाते हैं, लेकिन रुकते कभी नहीं हैं। इसलिए यदि कोई उनके विषयमें, उन्होंने दस वर्ष पहले क्या कहा, इसके आधारपर कोई धारणा बनाना चाहे तो गलती ही करेगा, क्योंकि उनका चिन्तन सतत विकासमान है। तुम्हें एक उदाहरण देता हूँ जो इस चीजको ठीकसे पल्लवित करता है।

लोजानमें उनसे पूछा गया कि ईश्वरसे उनका क्या तात्पर्य है। उन्होंने लोगोंको समझाया कि अपनी युवावस्थामें उन्होंने किस प्रकार, हिन्दू धर्मग्रन्थोंने ईश्वरके जो अनेक उदात्ततम गुण बताये हैं, उनमें से 'सत्य' को ईश्वरके मुख्य तत्त्वका सबसे सच्चा वर्णन करनेवाले शब्दके रूपमें चुना था। तब वे कहा करते थे, "ईश्वर सत्य है।" "लेकिन", जैसा कि उन्होंने आगे कहा, "दो वर्ष पूर्व मैं एक कदम और आगे गया और अब मैं कहता हूँ, 'सत्य ही ईश्वर है।' कारण, सत्यकी शक्तिको स्वीकारनेकी आवश्यकतासे तो नास्तिक भी इनकार नहीं करते। सत्यको पानेकी धुनमें नास्तिकोंने ईश्वरके अस्तित्वसे इनकार करनेमें भी कोई संकोच नहीं किया है और अपने दृष्टि-कोणसे उनका यह आचरण सही भी है।" इस एक ही चीजसे तुम प्राच्य संसारके इस धर्मात्मा पुरुषकी वैचारिक निर्भीकता और स्वतन्त्रताको समझ गये होगे। मुझे तो उनमें विवेकानन्दकी-सी प्रवृत्तियाँ दिखाई दीं।

लेकिन दूसरी ओर राजनीतिका एक भी दाँव-पेंच ऐसा नहीं जिसके लिए वे पहलेसे ही तैयार न लगते हों। और स्वयं उनकी राजनीति यही है कि उनके मनमें

जो भी बातें उठती हैं, उन्हें तनिक भी दुराव-छिपावके बिना वे हर आदमीके आगे रख देते हैं।

आखिरी शामको प्रार्थनाके बाद गांधीने मुझसे बीथोवनकी कोई चीज सुनानेको कहा (वे बीथोवनको व्यक्तिशः तो नहीं जानते, लेकिन यह जानते हैं कि मीराको मेरे सम्पर्कमें वही लाये। और फलतः उनसे भी मीराके सम्पर्कका श्रेय प्रकारान्तरसे बीथोवनको ही है[1] और अन्त में देखें तो हम तीनोंको उनका कृतज्ञ होना चाहिए।) मैंने उन्हें 'फिफ्थ सिंफनी' का 'अन्दान्ते' सुनाया। साथ ही मैंने ग्लककी 'ले शांजेलीजे' भी सुनाई . . .।

अपने देशके भजन आदि उन्हें बहुत अधिक भाव-विभोर कर देते ह। ये भजन हमारे ग्रेगरी-युगीन श्रेष्ठतम मधुर गीतोंसे मिलते-जुलते हैं। गांधीने इन भजनोंका एक संग्रह तैयार कराया है। हमने अपने कला-विषयक विचारोंका भी आदान-प्रदान किया। वे अपनी सत्यकी कल्पनाको कलासे अलग नहीं करते और न वे अपनी सत्यकी कल्पनासे अपनी आनन्दकी कल्पनाको ही अलग करते हैं। उनके विचारसे, सत्यको आनन्द भी उपलब्ध करा सकना चाहिए। मगर यह तो स्वयंसिद्ध ही है कि ऐसी कर्मठ वृत्तियोंवाले व्यक्तिको आनन्द भी बिना श्रम, बिना प्रयत्नके नहीं मिल सकता और न कठिनाइयोंके बिना उसके लिए जीवनका कोई अर्थ है। "सत्यान्वेषीका हृदय तो कमल-सा कोमल और कुलिश-सा कठोर होता है।"

तो मेरे दोस्त, यहाँ मैंने उन चन्द दिनोंके कुछ संकेत-भर दिये हैं जो हमने साथ गुजारे और जिनके अनुभव मैंने इससे बहुत अधिक विस्तारसे लिपिबद्ध कर रखे हैं। अगर तुम्हें कुछ नहीं बता रहा हूँ तो वह यह है कि गांधीके आगमनके फलस्वरूप हमारे दोनों मकानोंपर बिन-बुलाये मेहमानों, निठल्लों और सनकी लोगोंने कैसा बावेला मचाये रखा। टेलीफोन तो लगातार घनघनाता ही रहता था और घात लगाये फोटोग्राफरोंके कैमेरोंके फ्लैश चाहे जिस झाड़ीके पीछेसे बराबर चमक-चमक उठते थे। लेमानके दूधियोंके संघवालोंने मुझे बताया कि जबतक "हिन्दुस्तानका बादशाह" हमारे साथ है तबतक उसके "भोजन" की पूरी व्यवस्थाका दायित्व वे अपने सिर लेना चाहते हैं। कई "ईश-पुत्रों" ने भी हमें पत्र लिखे। किसी इतालवीने महात्माको पत्र लिखकर अगली साप्ताहिक राष्ट्रीय लाटरीके लिए दस शुभ अंक बतानेका आग्रह किया।

मेरी बहन तो इस मुसीबतसे उबरकर स्वास्थ्य-सुधारके निमित्त दस दिनोंके लिए ज्यूरिख गई हुई है। वह कल लौटेगी। और मेरा तो यह हाल है कि मैं अपनी सोनेकी क्षमता बिलकुल खो बैठा हूँ। अगर वह तुम्हें कहीं मिल जाये तो रजिस्टर्ड डाकसे भेज देना।

[अंग्रेजीसे]

बापूज लेटर्स टु मीरा, पृष्ठ १८०-३

१. मीराबहन रोमाँ रोलाँके सुझावपर ही गांधीजी की छत्रछायामें आई थीं।

परिशिष्ट ३

वाइसरायके निजी सचिवका भेजा तार[1]

३१ दिसम्बर, १९३१

परमश्रेष्ठकी इच्छानुसार आपको इसी २९ तारीखके आपके उस तारके लिए धन्यवाद देता हूँ जिसमें आपने बंगाल, संयुक्त प्रान्त और सीमा-प्रान्त-सम्बन्धी अध्यादेशोंका उल्लेख किया है। जहाँतक बंगालका सम्बन्ध है, सरकारके लिए यह जरूरी रहा है और जरूरी है कि अपने अधिकारियों और साधारण नागरिकोंकी कायरतापूर्ण हत्याको रोकनेके लिए वह हर सम्भव कदम उठाये।

परमश्रेष्ठका कहना है कि वे और उनकी सरकार सभी राजनीतिक दलों और जनताके सभी हिस्सोंसे मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध रखना चाहते हैं और विशेष रूपसे संवैधानिक सुधारके उस महान् कार्यमें, जिसे वे यथासम्भव जल्दीसे-जल्दी आगे बढ़ानेको कटिबद्ध हैं, सबका सहयोग प्राप्त करना चाहते हैं। लेकिन सहयोग तो पारस्परिक होना चाहिए और परमश्रेष्ठ तथा उनकी सरकारको संयुक्त प्रान्त और सीमा-प्रान्तमें कांग्रेसकी प्रवृत्तियोंमें भारतकी भलाईके लिए अपेक्षित स्पष्ट सहयोगकी वह भावना कहीं नहीं दिखाई देती। जहाँतक संयुक्त प्रान्तका सम्बन्ध है, निस्सन्देह आपको तो यह मालूम ही होगा कि जहाँ स्थानीय सरकार वर्त्तमान परिस्थितियोंमें यथासम्भव अधिकसे-अधिक राहत देनेके उपाय ढूँढ़ रही थी, वहाँ प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीने लोगोंसे लगानबन्दी आन्दोलन छेड़नेको कहा और अब उस प्रान्तमें कांग्रेसी संस्थाएँ पूरे जोरसे वह आन्दोलन चला रही हैं। कांग्रेसी संस्थाओंकी कार्र-वाईसे मजबूर होकर सरकारको आम अव्यवस्था और वर्गगत तथा साम्प्र-दायिक विद्वेषको फैलनेसे रोकनेके लिए आवश्यक कदम उठाने पड़े, क्योंकि यदि उस आन्दोलनको निर्बाध चलने दिया जाता तो अनिवार्यतः वैसी अव्यवस्था और विद्वेष फैलता।

सीमा-प्रान्तमें अब्दुल गफ्फार खाँ और उनके नियन्त्रणमें काम करनेवाली संस्थाएँ लगातार सरकार-विरोधी प्रवृत्तियाँ चलाती रही हैं और जातिगत विद्वेषको बढ़ावा देनेमें लगी रही हैं। अब्दुल गफ्फार खाँ और उनके साथियोंका सहयोग पानेके लिए मुख्य आयुक्तने तरह-तरहसे प्रस्ताव-निवेदन किये, लेकिन उन लोगोंने सबको ठुकरा दिया और प्रधान मन्त्रीकी घोषणा-को अस्वीकार करते हुए पूर्ण स्वतन्त्रताकी माँग की है। अब्दुल गफ्फार खाँने ऐसे भाषण दिये हैं जिनका मतलब सिवा इसके और कुछ नहीं

१. देखिए "तार: वाइसरायको", २९-१२-१९३१।

हो सकता कि वे विप्लवका प्रचार कर रहे हैं, और उनके अनुगामियोंने कबायली क्षेत्रोंमें उपद्रव भड़कानेकी कोशिश की है। परमश्रेष्ठकी सरकार-की सहमतिसे मुख्य आयुक्तने अधिकसे-अधिक सहिष्णुताका परिचय दिया है और उस प्रान्तमें संवैधानिक सुधारोंको लागू करनेके महामहिमकी सरकारके इरादोंको जल्दीसे-जल्दी अंजाम देनेमें अब्दुल गफ्फारका सहयोग प्राप्त करनेकी कोशिश वे आखिर तक करते रहे हैं। सरकार विशेष कदम उठानेसे बचती रही, लेकिन जब अब्दुल गफ्फार खाँ और उनके साथियोंकी प्रवृत्तियोंके फलस्वरूप और, विशेष रूपसे, सरकारके खिलाफ जल्दी ही संघर्ष छेड़ देनेकी खुली और जोरदार तैयारीके परिणामस्वरूप उस प्रान्त और कबायली क्षेत्रोंकी शान्तिको ऐसा खतरा पैदा हो गया कि इस सम्बन्धमें और ज्यादा विलम्ब करना असम्भव हो गया तब सरकारको यह कदम उठाना ही पड़ा। परमश्रेष्ठको ज्ञात हुआ है कि पिछले अगस्त महीनेमें अब्दुल गफ्फार खाँको उस प्रान्तमें कांग्रेसकी प्रवृत्तियोंके संचालनका दायित्व सौंपा गया और स्वयंसेवकोंके जो संगठन उनके नियन्त्रणमें काम कर रहे थे उन्हें अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने स्पष्ट रूपसे कांग्रेसी संस्थाओंके रूपमें मान्य किया। परमश्रेष्ठकी इच्छा है कि मैं आपके सामने यह बात बिलकुल स्पष्ट कर दूँ कि जो लोग या संस्थाएँ उपर्युक्त कार्रवाइयोंके लिए जिम्मेदार हैं उनसे कोई व्यवहार रखना शान्ति-सुव्यवस्थाके लिए जिम्मेदार व्यक्तिके रूपमें उनके लिए असम्भव है। आप खुद गोलमेज परिषद्के सिलसिलेमें भारतसे बाहर रहे हैं और वहाँ आपने जो रुख अपनाया है उसे देखते हुए परमश्रेष्ठ यह नहीं मानना चाहते कि हालमें कांग्रेसने संयुक्त प्रान्त और सीमा-प्रान्तमें जो-कुछ किया है, उसके लिए आप व्यक्तिगत रूपसे जिम्मेदार हैं या कांग्रेसकी उन कार्रवाइयोंका आप समर्थन करते हैं। यदि बात ऐसी हो तो वे आपसे मिलने और गोलमेज परिषद्में सहयोगकी जो भावना व्याप्त रही उसे कायम रखनेके लिए आप अपने प्रभावका उपयोग किस प्रकार कर सकते हैं, इस सम्बन्धमें आपको अपने विचार बतानेको इच्छुक हैं। लेकिन परमश्रेष्ठ इस बातपर जोर देना अपना कर्त्तव्य मानते हैं कि भारत सरकारने महामहिम की सरकारकी पूर्ण सहमतिसे बंगाल, संयुक्त प्रान्त और सीमा-प्रान्तके सम्बन्धमें जो कदम उठाना उचित समझा है, उनके बारेमें वे आपसे कोई बातचीत करनेको तैयार नहीं होंगे। ये कदम अच्छे शासनके परम-कर्त्तव्य कानून और व्यवस्थाकी रक्षाके उद्देश्यसे उठाये गये हैं और जबतक यह उद्देश्य पूरा नहीं होता तबतक तो उन्हें हर हालतमें कायम ही रखना होगा। आपका उत्तर मिलनेपर परमश्रेष्ठ इस तारको प्रकाशित करना चाहते हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडिया इन १९३१-३२

परिशिष्ट ४

वाइसरायके निजी सचिवका भेजा तार[1]

२ जनवरी, १९३२

परमश्रेष्ठकी इच्छानुसार सूचित करता हूँ कि आपका १ जनवरीका तार मिला और उन्होंने तथा उनकी सरकारने उसपर विचार किया। उन्हें यह देखकर बड़ा दुःख हुआ कि आपकी सलाहपर कांग्रेस कार्य-समितिने एक प्रस्ताव पास किया है, जिसके अनुसार यदि आपके तार और उस प्रस्तावमें उल्लिखित शर्तें पूरी नहीं की जातीं तो सविनय अवज्ञा फिरसे शुरू कर दी जायेगी।

प्रधान मन्त्रीके वक्तव्यमें संवैधानिक सुधारकी नीतिको तेजीसे लागू करनेके महामहिमकी सरकार और भारत सरकारके जिन इरादोंका उल्लेख किया है उनको ध्यानमें रखते हुए वे इस रुखको और भी दुःखद मानते हैं। जिस सरकारको अपने दायित्वोंका निर्वाह करना हो, ऐसी कोई भी सरकार किसी भी राजनीतिक संगठन द्वारा गैरकानूनी कार्रवाईकी धमकीके साथ रखी गई शर्तें स्वीकार नहीं कर सकती, और न भारत सरकार आपके तारमें प्रकारान्तरसे कही गई इसी बातको स्वीकार कर सकती है कि जो कदम सरकारने सभी तथ्योंपर पूरी सावधानी से सम्यक् विचार करने और अन्य सभी उपायोंके विफल हो जानेके बाद उठाये हैं उनकी आवश्यकता थी या नहीं, इसका फैसला वह आपकी रायसे करे।

परमश्रेष्ठ और उनकी सरकारको विश्वास नहीं होता कि आप या कार्य-समिति ऐसा सोच सकती है कि जब आपकी ओरसे सविनय अवज्ञाके पुनः प्रारम्भ कर दिये जानेकी धमकी दी जा रही है तब भी परमश्रेष्ठ आपको मुलाकातके लिए बुला सकते हैं और उस मुलाकातके किसी तरह से लाभ-दायक होनेकी भी आशा कर सकते हैं।

जो कदम उठानेका इरादा कांग्रेसने जाहिर किया है और जिसका मुकाबला करनेके लिए सरकार हर आवश्यक कार्रवाई करनेको कटिबद्ध है उसके सम्भावित परिणामोंके लिए सरकार और परमश्रेष्ठको कांग्रेसको ही जिम्मेदार मानना होगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडिया इन १९३१-३२; यंग इंडिया, ७-१-१९३२ भी।

१. देखिए "तार: वाइसरायके निजी सचिवको", १-१-१९३२।

सामग्रीके साधन-सूत्र

इंडिया ऑफिस रेकर्ड्स: इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी, लन्दनमें सुरक्षित; इन अभिलेखोंमें वे कागज-पत्र शामिल हैं जिनका सम्बन्ध उन भारतीय मामलोंसे है जिनके लिए भारत-मंत्री जिम्मेदार थे।

गांधी स्मारक संग्रहालय, नई दिल्ली: गांधी साहित्य और गांधीजी-सम्बन्धी कागज-पत्रोंका केन्द्रीय अभिलेखागार व पुस्तकालय।

साबरमती संग्रहालय, अहमदाबाद: गांधीजी से सम्बन्धित कागज-पत्रोंका पुस्तकालय और संग्रहालय।

गृह विभागकी राजनीतिक फाइलें: राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्लीमें सुरक्षित।

ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैंडकी मिशनरी संस्थाओंका सम्मेलन: निजी कागज-पत्र।

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी: स्वराज्य आश्रम, बारडोलीमें सुरक्षित।

'अमृतबाजार पत्रिका': कलकत्तासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक; सर्व प्रथम १८६८ में बंगला साप्ताहिकके रूपमें प्रकाशित होना शुरू हुआ; १८९१ से दैनिक बन गया।

'इंटरनेशनल अफेयर्स : रॉयल इंस्टिटयूट ऑफ इंटरनेशनल अफेयर्सकी त्रैमासिक पत्रिका।

'इंडियन न्यूज': लन्दनसे प्रकाशित मासिक पत्रिका; १९३२ से 'इंडिया रिव्यू' नामसे प्रकाशित।

'इंडिया रिव्यू': लन्दनसे प्रकाशित मासिक पत्रिका; पहले 'इंडियन न्यूज' नामसे प्रकाशित।

'ईवनिंग स्टैंडर्ड': 'स्टैंडर्ड' के साध्यकालीन संस्करणके रूपमें लन्दनसे प्रकाशित दैनिक; प्रवेशांक १८७० से।

'क्लिथरो ऐडवर्टाइजर ऐंड टाइम्स': लन्दनसे प्रकाशित दैनिक; प्रवेशांक १८८५ में।

'गिल्डहाउस': लन्दनसे प्रकाशित मासिक — फेलोशिप गिल्डकी मुख-पत्रिका; प्रवेशांक १९२७ में।

'जॉन बुल': लन्दनसे प्रकाशित मासिक पत्रिका।

'ज्यूइश क्रॉनिकल': लन्दनसे प्रकाशित साप्ताहिक; प्रवेशांक १८४१ में।

'टाइम्स': लन्दनसे प्रकाशित प्रात:कालीन दैनिक।

'टेक्स्टाइल मर्क्युरी ऐंड आर्गस': मैंचेस्टरसे प्रकाशित सावधिक पत्रिका; प्रवेशांक मार्च, १९३१ में।

'ट्रिब्यून': अम्बालासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'डेली टेलीग्राफ': लन्दनसे प्रकाशित प्रातःकालीन दैनिक।

'डेली मेल': लन्दनसे प्रकाशित प्रातःकालीन दैनिक; प्रवेशांक १८९६ में।

'डेली वर्कर': लन्दनसे प्रकाशित दैनिक।

'डेली हेराल्ड': लन्दनसे प्रकाशित प्रातःकालीन दैनिक।

'नवजीवन': गांधीजी द्वारा संपादित और अहमदाबादसे प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक।

'न्यूज क्रॉनिकल': लन्दनसे प्रकाशित प्रातःकालीन दैनिक।

'न्यूयॉर्क टाइम्स': न्यूयॉर्कसे प्रकाशित दैनिक।

'पोस्ट': होंस्लोसे प्रकाशित मासिक पत्रिका; यूनियन ऑफ पोस्ट ऑफिस वर्कर्सकी मुख-पत्रिका।

'फ्रेंड': केंटसे प्रकाशित साप्ताहिक; प्रवेशांक १८४३ में।

'बर्मिघम पोस्ट': बर्मिघमसे प्रकाशित प्रातःकालीन दैनिक; प्रवेशांक १८५७ में।

'बॉम्बे क्रॉनिकल': बम्बईसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'बॉरोज ऑफ पॉपलर ऐंड स्टेपनी ईस्ट लंडन एडवर्टाइजर': लन्दनसे प्रकाशित दैनिक।

'मैंचेस्टर गार्डियन': मैंचेस्टरसे प्रकाशित प्रातःकालीन दैनिक।

'यंग इंडिया': गांधीजी द्वारा संपादित और अहमदाबादसे प्रकाशित अंग्रेजी साप्ताहिक।

'यॉर्क शायर पोस्ट': यॉर्कशायरसे प्रकाशित प्रातःकालीन दैनिक।

'रिकंसिलिएशन': मासिक पत्रिका; यह फेलोशिप ऑफ रिकंसिलिएशन, लन्दनकी मुख-पत्रिका थी।

'लेबर मंथली': लन्दनसे प्रकाशित; प्रवेशांक १९२१ म।

'संडे ऑब्जर्वर': लन्दनसे प्रकाशित साप्ताहिक।

'संडे टाइम्स': लन्दनसे प्रकाशित साप्ताहिक।

'स्टटेसमैन': कलकत्ता और नई दिल्लीसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'स्पेक्टेटर': लन्दनसे प्रकाशित साप्ताहिक; १८२८ में प्रवेशांक।

'हरिजन': हरिजन सेवक-संघकी ओरसे प्रकाशित अंग्रेजी साप्ताहिक। प्रवेशांक ११ फरवरी, १९३३ को पूनामें; २७ अक्टूबर, १९३३ को मद्रासको स्थानान्तरित; १३ अप्रैल, १९३५ से फिर पूनासे प्रकाशित; आगे चलकर अहमदाबादसे प्रकाशित।

'हिन्दुस्तान टाइम्स': नई दिल्लीसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हिन्दू': मद्राससे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'इंडियन राउंड टेबल कान्फरेंस (सेकेण्ड सेशन): प्रोसीडिंग्स ऑफ प्लेनरी सेशन्स': हर मेजेस्टीज स्टेशनरी ऑफिस, लन्दन द्वारा प्रकाशित।

'इंडियन राउंड टेबल कान्फरेंस (सेकेण्ड सेशन): प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐंड माइनॉरिटीज कमिटी', खण्ड १: हर मैजेस्टीज स्टेशनरी ऑफिस, लन्दन द्वारा प्रकाशित।

'इंडिया इन १९३१-३२': भारत सरकार केन्द्रीय प्रकाशन शाखा, कलकत्ता।

'दैट स्ट्रेंज लिटल ब्राउन मैन – गांधी': फ्रेडरिक बी० फिशर कृत; आर० लोंग ऐंड आर० आर० स्मिथ, न्यूयॉर्क द्वारा प्रकाशित।

'बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स': जवाहरलाल नेहरू द्वारा सम्पादित; एशिया पब्लिशिंग हाउस, १९५८।

'बापुना पत्रो–२: सरदार वल्लभभाईने' (गुजराती): मणिबहेन पटेल द्वारा सम्पादित, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५२।

'बापुना पत्रो–४: मणिबहेन पटेलने (गुजराती): मणिबहेन पटेल द्वारा सम्पादित, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।

'बापुना पत्रो – ६: गं० स्व० गंगाबहेनने' (गुजराती): काकासाहब कालेलकर द्वारा सम्पादित, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९६०।

'बापूज लेटर्स टू मीरा': नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४८।

'माई ऑटोबायोग्राफी': चार्ली चैपलिन-कृत, बोडले हेड, १९६४।

'हैलीफैक्स': बर्कनहेड-कृत: हैमिश हैमिल्टन, लन्दन।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(१२ सितम्बर, १९३१ से ३ जनवरी, १९३२)

१२ सितम्बर: गांधीजी लन्दन पहुँचे।

समाचार-पत्रोंको भेंटमें कांग्रेसके प्रादेश (मेंडेट) का सार समझाया।

फ्रेंड्स हाउस, लन्दनमें भाषण दिया।

१३ सितम्बर: कोलम्बिया ब्रॉडकास्टिंग सर्विससे अमेरिकाके निमित्त किये गये प्रसारणमें लोगोंके अन्तःकरणसे अपील की।

ब्रिटिश प्रधान मन्त्री और लॉर्ड सैंकीसे मुलाकात की।

१४ सितम्बरके पूर्व: 'टाइम्स' को दिये गये एक सन्देशमें कहा कि शान्ति-स्थापनाके अपने कार्यमें उन्हें हर अंग्रेज स्त्री-पुरुषकी सद्भावनाकी जरूरत है।

१४ सितम्बर: संघ-संरचना समितिकी बैठकमें शामिल हुए, लेकिन मौन-दिवस होनेके कारण बोले नहीं।

१५ सितम्बर: संघ-संरचना समितिमें पूर्ण स्वराज्यकी राष्ट्रीय माँग पेश की।

१६ सितम्बर: लेबर पार्टीके संसद-सदस्योंकी बैठकमें बोलते हुए पूर्ण स्वराज्यकी माँग दोहराई।

१७ सितम्बर: 'टेक्स्टाइल मर्क्युरी' और 'न्यूज क्रॉनिकल' को मुलाकात दी।

संघीय विधान-मण्डलके सदस्योंके चुनावपर संघ-संरचना समितिमें बोले।

१९ सितम्बर: किंग्सले हॉलके स्वागत-समारोहमें बोले।

२१ सितम्बर: किंग्सले हॉल छोड़कर ८८ नाइट्सब्रिजमें रहने चले गये।

२२ सितम्बर: चार्ली चैपलिनसे मुलाकात की।

स्वर्ण मानक समाप्त करनेके सरकारी निर्णयके विषयमें संघ-संरचना समितिकी बैठकमें बोले।

२३ सितम्बर: गिल्डहाउस चर्चमें स्वेच्छासे अपनाई गरीबीपर बोले।

संसद-सदस्योंकी सभामें बोलते हुए पूर्ण स्वराज्यकी अवधारणाका पल्लवन किया।

२४ सितम्बर: आगाखाँ और जिन्नासे बातचीत की।

संघ-संरचना समितिकी बैठकमें शरीक हुए।

२५ सितम्बर: लॉर्ड इर्विनसे भेंट की।

२६ सितम्बर: एजवर्थ और डारवेनमें कपासपर आधारित उद्योगके प्रतिनिधियोंसे बातचीत की।

स्प्रिगफील्ड गार्डन विलेजमें बेरोजगार मजदूरोंके शिष्टमण्डलको मुलाकात दी।

२६/२७ सितम्बर: लंकाशायरकी बेरोजगारीकी समस्यापर बोले।

२७ सितम्बर: वेस्ट ब्रैडफोर्डमें वयस्कोंके स्कूलमें बोले।

वेस्ट ब्रैडफोर्डमें बेरोजगार मजदूरों और क्लिथरो बुनकर-संघके शिष्टमण्डलोंको मुलाकात दी।

संवाददाताओंसे बातचीत की।

२८ सितम्बर: अल्पसंख्यक-समस्या समितिकी बैठकमें शरीक हुए।

२९ सितम्बर: लन्दनमें सर सैम्युअल होरसे बातचीत की।

३० सितम्बर: प्रधान मन्त्रीसे मुलाकात की।

भारतीय व्यापार-मण्डल, लन्दन द्वारा आयोजित स्वागत-समारोहमें भाषण दिया।

१ अक्टूबर: रिट्ज होटलमें आगाखाँ और अन्य मुसलमान नेताओंसे मुलाकात की।

प्रधान मन्त्रीसे बातचीत की।

अल्पसंख्यक-समस्या समितिमें बोलते हुए समितिकी कार्यवाही एक सप्ताह स्थगित रखे जानेका अनुरोध किया।

२ अक्टूबरके पूर्व: 'ज्यूइश क्रॉनिकल' को भेंट दी।

२ अक्टूबर: हेनरी कार्टरसे मद्य-निषेधपर बातचीत की।

कई संस्थाओं द्वारा गांधीजी के जन्म-दिनके उपलक्ष्यमें वेस्टमिन्स्टर पैलेसमें एक प्रीति-भोजका आयोजन।

अल्पसंख्यक-समस्या-सम्बन्धी गोष्ठी, लन्दनमें दलित वर्गोंके लिए विशेष प्रतिनिधित्वका विरोध।

वीमेंस इंडियन एसोसिएशन द्वारा केन्द्रीय यं० मे० क्रि० ए० लन्दनमें आयोजित एक स्वागत-समारोहमें भाषण दिया।

३ अक्टूबर: सी० एफ० एन्ड्रयूजसे मिलने कैंटरबरी गये।

४ अक्टूबर: कैंटरबरीमें।

५ अक्टूबर: अल्पसंख्यक-समस्या-सम्बन्धी गोष्ठीमें बोले।

६ अक्टूबर: फेलोशिप क्लबकी सभामें बोले।

लॉर्ड इर्विनके सम्मानमें आयोजित प्रीति-भोजमें शरीक हुए।

७ अक्टूबर: फ्रेंड्स ऑफ इंडिया, लन्दनकी सभामें बोले।

८ अक्टूबर: अल्पसंख्यक-समस्या समितिमें अल्पसंख्यकोंके सम्बन्धमें कांग्रेसकी नीतिका स्पष्टीकरण किया।

लन्दनमें ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैण्डकी मिशनरी संस्थाओंके सम्मेलनमें भाषण दिया।

९ अक्टूबर या उसके पूर्व: मादाम मॉन्टेसरी और शॉ डेसमंडको मुलाकातें दीं।

९ अक्टूबर: संघ-संरचना समितिकी बैठकमें बोले।

१० अक्टूबर: चिचिस्टरमें।

११ अक्टूबर या उसके पूर्व: एच० एन० ब्रेल्सफोर्डको भेंट दी।

१२ अक्टूबर: नेशनल लेबर क्लबमें कहा कि भारत बिना रक्तपातके पूर्ण स्वराज्य प्राप्त करनेको कृतसंकल्प है।

१३ अक्टूबर: समाचार-पत्रोंके प्रतिनिधियोंको भेंट देते हुए उन्हें साम्प्रदायिक समस्याका मर्म समझाया।

गोवर स्ट्रीट होस्टल, ब्लूम्सबरी, लन्दनमें भारतीय विद्यार्थियोंकी सभामें भाषण दिया।

१४ अक्टूबर या उसके पूर्व: 'आइलैंड', लन्दनके सम्पादक जोजेफ बार्डको मुलाकात दी।

१४ अक्टूबर: साम्प्रदायिक समस्याके हलके बारेमें समाचार-पत्रोंके लिए वक्तव्य जारी किया।

सैम्युअल होर, बेंथल और जिन्नासे बातचीत की।

संघ-संरचना समितिकी बैठकमें बोले।

१५ अक्टूबर: रसेल स्क्वेयर, लन्दनमें इंटरनेशनल स्टूडेंट्स मूवमेंटके छात्रोंकी सभामें भाषण दिया।

सैम्युअल होर, तेजबहादुर सप्रू, एम० आर० जयकर और अन्य लोगोंसे बातचीत की।

१६ अक्टूबर: कैलेंडरसे थोक उत्पादन और जनता द्वारा किये जानेवाले फुटकर उत्पादनपर बातचीत की।

संघ-संरचना समितिकी बैठक और मद्य-निषेधवादी कार्यकर्त्ताओंकी बैठकमें भाषण दिया।

१७ अक्टूबर: नॉटिंघममें नॉटिंघम युनिवर्सिटी कॉलेजमें बोले।

१७ अक्टूबर या उसके पश्चात्: 'स्पेक्टेटर', लन्दनके सम्पादक एवलिन रेंचको मुलाकात दी।

१८ अक्टूबर: सेली ओक, बर्मिंघममें भारतीयोंके सामने बोलते हुए उनसे अनुरोध किया कि वे भारत लौटकर स्वदेशभाइयोंकी सेवा करें।

वुडब्रूक सेट्लमेंट, सेली ओक, बर्मिंघममें भारत द्वारा शान्तिपूर्ण उपायोंसे स्वराज्य प्राप्त करनेके संकल्पके विषयमें बोले।

१९ अक्टूबर: सुबह बर्मिंघमसे प्रस्थान किया।

२० अक्टूबर: संघ-संरचना समितिकी बैठकमें बोले।
चैथम हाउस (लन्दन)में रॉयल इंस्टिट्यूट ऑफ इन्टरनेशनल अफेयर्सके तत्त्वावधानमें आयोजित सभामें "भारत — आज और कल" पर बोले।

२१ अक्टूबर: लॉर्ड इर्विन और कर्नल मैडॉकसे मुलाकात की। संघ-संरचना समितिकी बैठकमें शरीक हुए।

२२ अक्टूबर: 'स्टेट्समैन'के प्रतिनिधिको मुलाकात दी।
संघ-संरचना समितिकी बैठकमें बोले।

२३ अक्टूबर: रायटरके प्रतिनिधिको मुलाकात दी।
संघ-संरचना समितिकी बैठकमें बोले।
तेजबहादुर सप्रू तथा अन्य लोगोंसे बातचीत की।
रातमें ईटन पहुँचे और वहाँ स्कूली छात्रोंकी एक सभामें भाषण दिया।
सुबह ईटनसे ऑक्सफोर्डको प्रस्थान किया।

२४ अक्टूबर: ऑक्सफोर्डमें इंडियन मजलिसकी बैठकमें बोले।
ऑक्सफोर्डमें ही एक परिचर्चामें कुछ प्रश्नोंके उत्तर दिये।

२६ अक्टूबर: संघ-संरचना समितिकी बैठकमें शरीक हुए।

२७ अक्टूबर: संघ-संरचना समितिकी बैठकमें शरीक हुए।

२८ अक्टूबर: मॉन्टेसरी ट्रेनिंग कॉलेज, लन्दनमें बाल-शिक्षापर बोले।

२९ अक्टूबर: चार्ल्स पेट्रेख तथा कुछ अन्य लोगोंको मुलाकात दी।

३० अक्टूबर: सेन्ट्रल हॉल, वेस्टमिंस्टरमें कॉमनवेल्थ ऑफ इंडिया लीगकी सभामें बोले।

३१ अक्टूबर: फ्रेंड्स हाउस, लन्दनमें क्वेकरोंकी सभामें बोले।

१ नवम्बर: पेम्ब्रोक कॉलेज, कैम्ब्रिजमें बोलते हुए भारत और इंग्लैंडके बीच समानता पर आधारित साझेदारीमें अपनी आस्था पुनः व्यक्त की।
इंडियन मजलिसमें बोले।
लन्दन पहुँचे।

२ नवम्बर: संघ-संरचना समितिके समक्ष लिखित वक्तव्य पेश किया।

३ नवम्बर: बो में चिल्डरेंस हाउसकी वार्षिक बैठकमें बोले।

४ नवम्बर: संघ-संरचना समितिकी बैठकमें बोले।
इंडियन मेडिकल एसोसिएशनकी सभामें भाषण दिया।

५ नवम्बर: डाक-कर्मचारी संघकी सभामें बोले।

६ नवम्बर: श्री व श्रीमती जॉर्ज बर्नार्ड शॉ गांधीजी से मिलने आये।

७ नवम्बर: गांधीजी ऑक्सफोर्ड पहुँचे और रैम्जे मैकडॉनाल्ड तथा प्रोफेसर मरेसे उनकी बातचीत हुई।

९ नवम्बर: ऑक्सफोर्डसे लन्दन लौटे।
समाचार-पत्रोंको दिये वक्तव्यमें सूचित किया कि उन्होंने यूरोपीय देशोंकी यात्राका कार्यक्रम रद्द कर दिया है।
फ्रेंड्स हाउस, लन्दनमें फेलोशिप ऑफ रिकंसिलिएशन द्वारा आयोजित सभामें भाषण दिया।

१० नवम्बर: तेजबहादुर सप्रू तथा अन्य लोगोंसे बातचीत की।
जे० एम० सेनगुप्तसे बंगालकी परिस्थितिके बारेमें बातचीत की।
लन्दन स्कूल ऑफ इकनॉमिक्समें बोले।

११ नवम्बर: समाचार-पत्रोंके प्रतिनिधियोंको मुलाकात दी।
गोलमेज परिषद्के सदस्योंकी बैठकमें अपनी प्रान्तीय स्वशासनकी कल्पनाका स्पष्टीकरण किया।

१२ नवम्बर: कॉमनवेल्थ ऑफ इंडिया लीग, लन्दनमें बोले।

१३ नवम्बर: 'न्यूज क्रॉनिकल' के प्रतिनिधिको मुलाकात दी।
अल्पसंख्यक-समस्या समितिकी बैठकमें बोले।
वेस्टमिन्स्टर स्कूलमें बोले।

१४ नवम्बर: लॉर्ड इर्विनसे भेंट की।
समाचार-पत्रोंके प्रतिनिधियोंको मुलाकात दी।

१६ नवम्बर: अल्पसंख्यक-समस्या समितिकी बैठकमें शरीक हुए।

१७ नवम्बर: अमेरिका जानेकी अपनी असमर्थता बताते हुए एफ० बी० फिशरको सन्देश भेजा।
संघ-संरचना समितिकी बैठकमें प्रतिरक्षाके विषयमें बोले।

१८ नवम्बर: मॉर्ले कॉलेज, लन्दनमें वोमेन्स इंडियन कौंसिलकी बैठकमें बोले।

१९ नवम्बर: संघ-संरचना समितिकी बैठकमें "व्यापारिक भेद-भाव" पर बोले।
लन्दन शाकाहारी मण्डलकी सभामें भाषण दिया।

२० नवम्बर: शाकाहारियोंकी सभामें शरीक हुए।

२४ नवम्बर: प्रधान मन्त्री, लॉर्ड सैंकी, सप्रू और लीज-स्मिथसे बातचीत की।

२५ नवम्बर: 'न्यू लीडर' के प्रतिनिधिको मुलाकात दी।
संघ-संरचना समितिकी बैठकोंमें "प्रान्तीय स्वशासन" और "वित्त" के विषयमें अपने विचार व्यक्त किये।
डॉ० अम्बेडकरसे मुलाकात की।

२६ नवम्बर: संघ-संरचना समितिकी बैठकमें शरीक हुए।

२७ नवम्बर: संघ-संरचना समितिकी बैठकमें शरीक हुए।

२८ नवम्बर: गोलमेज परिषद्के पूर्णाधिवेशनकी कार्यवाहीमें भाग लिया।

३० नवम्बरके पूर्व: लन्दनमें समाचार-पत्रोंके प्रतिनिधियोंको मुलाकात दी।

३० नवम्बर: गोलमेज परिषद्के पूर्णाधिवेशनकी कार्यवाहीमें भाग लिया।

१ दिसम्बर: गोलमेज परिषद्के पूर्णाधिवेशनमें समापन-भाषण दिया।
पत्रकारोंको मुलाकात दी।
भारतकी ताजी घटनाओंके सम्बन्धमें अखबारोंके लिए वक्तव्य जारी किया।

२ दिसम्बर: सर फिलिप हार्टोंगको मुलाकात दी।

३ दिसम्बर: समाचार-पत्रोंके प्रतिनिधियोंको मुलाकात दी।
जे० एफ० हॉरैबिन, रेंच, लास्की, किंग्सले मार्टिन, ब्रेल्सफोर्ड और नेविनसनसे बातचीत की।

४ दिसम्बर: प्रधान मन्त्री और भारत-मन्त्रीसे भेंट की।

५ दिसम्बरके पूर्व: एडमंड डिमिटरको मुलाकात दी।
इंग्लैंडसे विदा होनेसे पूर्व एक घोषणापत्र जारी किया।

५ दिसम्बर: रायटर और 'ब्रिस्टल ईवनिंग न्यूज'को विदाई-सन्देश दिये।
पेरिस, रोम आदि होते हुए स्वदेश लौटनेके लिए ब्रिटेनसे प्रस्थान किया।
पेरिसमें भारतीयों द्वारा आयोजित स्वागत-समारोहमें भाषण दिया।
तीसरे पहर एक सार्वजनिक सभामें बोले।

६ दिसम्बर: विलेन्यूवमें रोमाँ रोलाँसे बातचीत की।
समाचार-पत्रोंके प्रतिनिधियोंको मुलाकात दी।

८ दिसम्बर: लोजानमें तीन सभाओंमें भाषण दिये।

९ दिसम्बर: इंटरनेशनल वीमेन्स लीग फॉर पीस ऐंड फ्रीडमके तत्त्वावधानमें विक्टोरिया हॉलमें आयोजित सभामें बोले।

१० दिसम्बर या उसके पश्चात्: रोमाँ रोलाँसे बातचीत की।

११ दिसम्बर: विलेन्यूवसे प्रस्थान किया।
मिलानमें।

१२ दिसम्बर: रोममें। वैटिकन सिटी देखी। मुसोलिनीसे मिले।

१३ दिसम्बर: रोममें। सुखोतिना टॉल्स्टॉयसे बातचीत की।
महिलाओंकी एक सभामें भाषण दिया।

शीर्षक-सांकेतिका

विविध

सांकेतिका

आ

इ

घ

फ

ब

म

य

र

श

स

ह